इतिहास के स्वर

इतिहास के स्वर

[पच्चीस ऐतिहासिक नाटको का सकलन]

लेखक

डा० रामकुमार वर्मा

1969

आत्माराम एण्ड संस

दिल्ली . नई दिल्ली . चण्डीगढ . जयपुर लखनऊ

ITIHAS KE SWAR

(Collection of Historical Plays)

by

Dr. Ram Kumar Verma

Rs. 20.00

प्रकाशक

रामलाल पुरी, सचालक

आत्माराम एण्ड सस,

काश्मीरी गेट, दिल्ली-6

शाखाएं

हौज खास, नई दिल्ली

विश्वविद्यालय क्षेत्र, चण्डीगढ

चौडा रास्ता, जयपुर

17, अशोक मार्ग, लखनऊ

प्रथम सस्करण . १९६९

मूल्य : २० ०० रुपये

मुद्रक

शाहदरा प्रिंटिग प्रेस,

के 18, नवीन शाहदरा, दिल्ली-32

शिल्प-संकेत

किसे अपने देश पर गर्व नही है ? आपको भी है। और जब उस देश का इतिहास आपके सामने आता है तब आप देखते है कि ऐसे कितने महापुरुष हुए है जिन्होने अपने ऐश्वर्य को देश के आत्म-सम्मान की वेदी पर समर्पित कर दिया है । ऐसी कितनी घटनाएँ हुई है जिन्होने देश के इतिहास मे नवीन परिच्छेद जोडे है। साथ ही ऐसे कितने स्वार्थी और स्वकेन्द्रित व्यक्ति हुए है जिन्होने वैभव और अधिकार-लोलुपता मे देश को पतन के गर्त्त मे ढकेलने की चेष्टा की है ।

देश, समाज और व्यक्ति प्राय एक त्रिकोण का रूप ले लेते है जिनकी भुजाएँ परिस्थितियो से घटती-बढती है और प्रत्येक परिस्थिति मे त्रिकोण का रूप भिन्न हो जाता है। जो स्थान त्रिकोण की भुजाओ से घिरता है, वही परिस्थितियो का क्षेत्र बनता है जिसमे घात-प्रतिघात का मनोविज्ञान प्रतिफलित होता है। यह मनोविज्ञान संस्कार और परिस्थितियो से उद्भूत होता है और दोनो की सापेक्ष्य शक्ति मे वह सुखान्त अथवा दु खान्त की दिशा ग्रहण करता है ।

प्रस्तुत नाटक-सग्रह अपने देश के इतिहास का एक सक्षिप्त रेखा-चित्र है जिसमे काल-क्रमानुसार ईस्वी-पूर्व 600 से लेकर ईस्वी सन् 1947 तक की महत्त्वपूर्ण परिस्थितियो और पात्रो के मनोविज्ञान की गतिशील रेखाएँ अकित की गई है। इस महान् देश की गौरव-गाथाएँ क्रान्तिकारिणी है और उनका स्मरण कर मन मे उत्साह की तरगे आन्दोलित होने लगती है। इस देश की सास्कृतिक निष्ठा इतनी सुदृढ और घनीभूत रही है कि गहरी से गहरी विपत्ति मे भी उसने आत्म-विश्वास और आशावाद नही खोया और दासत्व की शृखलाओ से कसे जाने पर भी उसमे स्वच्छन्द चेतना की किरणे अपनी ज्योति फैलाती रही। इस देश की महानता का यही सबसे बडा सकेत है ।

इतिहास का नव-निर्माण

मेरे एकाकी नाटको ने यही सकेत ग्रहण किया है। यह सकेत ध्रुव नक्षत्र की भाँति स्थिर रहेगा, ऐसा मेरा विश्वास है। इस सकेत की अनेकानेक दिशाएँ है जिनमे इतिहास के विविध पार्श्व उद्घाटित हुए है। राजनीति, धर्म और समाज की परिणतियाँ किस सीमा तक जन-जीवन के मोडने मे सहायक या बाधक रही है, इनका लेखा इतिहास-कार ही हमे दे सकता है, किन्तु दुर्भाग्य की बात है कि हमारा इतिहास अधिकतर विदेशी लेखको द्वारा ही लिखा गया जिन्होने यह सिद्ध करने का प्रयत्न किया कि यह देश बौने आदमियो का देश है, जिसमे अज्ञान से उठी हुई स्वार्थपरता और हीन ग्रथियो के अनेक उदाहरण भरे पडे है। जिन व्यक्तियो ने देश की स्वतत्रता के लिए सतत सघर्ष किया वे राजद्रोही और आत्मसेवी सिद्ध किये गये और स्वाधीनता के युद्ध को गदर

ग्रौर विद्रोह की सज्ञा दी गई । हमारे महापुरुष ग्रत्याचारी ग्रौर लुटेरे कहे गये जिससे उनके प्रति हमारे मन मे श्रद्धा के स्थान पर घृणा उत्पन्न हो ग्रौर हम विदेशियो को ही ग्रपना ग्राराध्य मानते रहे । किन्तु ग्रगार-खडो को कितने समय तक रुई मे लपेटा जा सकता है ?

हमारे कवियो ने ग्रपने समकालीन महापुरुषो ग्रौर परिस्थितियो के जो चित्र दिये है वे कितने प्रभावपूर्ण ग्रौर प्रेरणाप्रद है ! ग्रतिशयोक्तियो को घटा देने पर भी पुरुषो ग्रौर घटनाग्रो का जो रूप हमे मिलता है, उसमे कितना नैतिक बल ग्रौर चारित्रिक प्रेरणा है ? इस ग्राधार पर हमारे इतिहास का नव-निर्माण ग्रावश्यक हे । हमारे इतिहास के विविध उपकरणो को एकत्र करने की ग्रावश्यकता हे । न जाने कितने शिलालेख है, दानपत्र है, वशावलियाँ है, ख्याते है, सिक्के है, वास्तु ग्रौर ललित कलाग्रो के रूप है, मूर्ति, चित्र, सगीत ग्रौर काव्यगत उल्लेख है जिनके ग्राधार पर तथ्यो का सयोजन किया जा सकता है ग्रौर इस प्रकार विपत्तियो के घने बादलो मे विद्युत् की भाँति तडप उठने वाली देश की कीर्ति-रेखा चमक उठी है ।

इतिहास का परिवेश

ऐसे इतिहास को लेकर मेरी एकाकी-कला साधना के पथ पर ग्रग्रसर हुई है । पात्रो ग्रौर परिस्थितियो को उनके वास्तविक परिवेश मे उपस्थित करना ही वास्तव मे कलाकार की कसौटी है । इस कसौटी पर मेरे एकाकियो ने कुछ रेखाएँ खीचने का प्रयत्न किया है, वे कहाँ तक ग्रौर कितनी स्पष्ट है, इसका निर्णय तो पारखियो द्वारा ही दिया जा सकता है । इतिहासकार पात्रो ग्रौर परिस्थितियो की वास्तविकता कुछ घटनाग्रो के द्वारा ही देता है । सन्-सवत् की बात छोड दीजिए, इतिहास की शृखला तो व्यक्तियो की गतिविधि ग्रौर घटनाग्रो की कडियो से ही ग्रागे बढती है । ये गतिविधियाँ ग्रौर घटनाएँ कितना सत्य बटोर सकती है ? इतिहास को इतना ग्रवकाश कहाँ कि वह व्यक्तियो के जीवन के प्रत्येक क्षण का लेखा रख सके ग्रौर घटनाग्रो के कारण-कार्य के सूत्रो को जोडकर उत्थान ग्रौर पतन की उलझनो को सुलझा सके ? वह तो कार्य के प्रतिफलन को देखता है ग्रौर प्रमुख घटनाग्रो पर चिह्न बनाकर ग्रागे बढ जाता है । वह तो ऐसा कोषाध्यक्ष है जो बडी सख्या वाले नोटो को ही तिजोरी मे रखता है, थोडे मूल्य के नोटो पर उसकी दृष्टि ही नही जाती । जब नाटककार, ग्रौर विशेषकर एकाकीकार, कोषाध्यक्ष के पद पर बैठता है तो उसके सामने छोटे मूल्य के नोटो द्वारा ही बडी सख्या वाले नोटो के हिसाब की समस्या ग्राती है, भले ही बडी सख्या वाले नोट थोडे ही हो ।

इतिहास की समस्या

यह समस्या इसलिए है कि जितना सत्य इतिहास ने सुरक्षित किया है, उतने सत्य से प्रतिफलित घटना या व्यक्ति की क्रियाशीलता का रूप स्पष्ट नही होता । सत्य

का कोई अश उल्लिखित होने से रह गया है या जान-बूझ कर छोड दिया गया है जिससे घटना तो अकित हो गई है किन्तु घटना को प्रतिफलित करने वाले सूत्र टूट गये है या अदृश्य ही रह गये है। ऐसा लगता है कि जादूगर की तरह इतिहासकार ने सन्-सवत् को मुट्ठी मे बन्द कर काल-क्रम के जादू का डडा घुमाया है और धूल से रुपया वना दिया है।

सत्य का जितना अश छोड दिया गया था, वह क्या है और कितना है, यह समय के प्रवाह मे बह गया। उसके सम्बन्ध मे न इतिहास ने कोई रेखा खीची, न इतिहासकार ने। जिस रात सिद्धार्थ ने 'महाभिनिष्क्रमण' किया, उसके पूर्व दिन मे उन्होने क्या किया होगा ! यशोधरा से कोई बात भी की होगी या राहुल को खिलाया होगा, यह कौन कह सकता है ? इतिहासकार ने तो केवल सिद्धार्थ के अवसाद की बात कहकर रात मे उन्हे महल से बाहर कर दिया। जाते समय उनके मन मे कितना सघर्ष और अन्तर्द्वन्द्व हुआ होगा, इसका लेखा क्या इतिहास के पास है ? सभवत सिद्धार्थ एक-दो बार सोती हुई यशोधरा को देखने के लिए लौटे हो, राहुल के निरीह मुख पर उन्होने एक करुण दृष्टि डाली हो, परिचारिकाओ की गहरी नीद पर व्यग्य-भरी मुस्कान भरी हो ! अपने पिता की चिन्ता पर एक नि श्वास छोडा हो, यह कौन जानता है ! जीवन के मनोविज्ञान पर दृष्टि डालने का अवकाश इतिहासकार के पास कहाँ है ? उसके पास तो घटनाओ को 'रैडी मेड' बनाने का यत्र है। परिस्थितियो के साँचे मे घटनाएँ डाली और उनसे गुड्डे की तरह कटा-छटा व्यक्ति निकल आया।

जीवन्त इतिहास

नाटककार को तो जीवन का जीता-जागता पात्र उपस्थित करना है। उसके पास हृदय है जिसकी धडकने हर्ष और विषाद से बढती-घटती रहती है। जितना सत्य इतिहास ने दिया है, वही एक अधूरा अवलम्ब है जिसके सहारे उसे पात्र के हृदय मे स्पन्दन उत्पन्न करना है। ऐसी स्थिति मे वह अधूरे सत्य की सम्पूर्ण सम्भावनाओ को लेकर छूटे हुए सत्य की निर्मिति—एक प्रकार से पुनर्निर्मिति –अपनी कल्पना के आधार पर करता है। यह कल्पना जितनी अधिक निर्दिष्ट सत्य मे डूबेगी, उतनी ही सशक्त होकर सभावित सत्य के निकट पहुँचेगी और इस प्रकार वह छूटे हुए सत्य की पूर्ति करने मे सक्षम होगी।

यह कल्पना दो प्रकार से नियोजित होगी। पहले तो वह पात्र के क्रिया-कलाप का सश्लेषण कर उसके मनोविज्ञान मे उतरेगी और दूसरे वह उस मनोविज्ञान मे उन सूत्रो का निर्माण करेगी जिन्हे इतिहासकार ने अपनी विहगम दृष्टि मे छोड दिया है। इन दोनो प्रकारो पर कुछ विस्तार से विचार करना आवश्यक होगा।

पहला प्रकार : मनोविज्ञान का रूप

जिस प्रकार किसी फूल का बीज पृथ्वी की उर्वर शक्ति और जल की तरलता

पाकर सजीव हो उठता है और ऊपर उठने के लिए अकुर का हाथ बढा देता है उसी प्रकार घटनाओ की उर्वरता और कल्पना की तरलता से पात्र भी सजीव हो उठता है और उसमे मनोविज्ञान का सचार होने लगता है। इस मनोविज्ञान का प्रतिफलन विशिष्ट प्रकार से होता है। प्रत्येक पात्र मे कुछ-न-कुछ जन्मजात सस्कार होते ही है। ये सस्कार परम्पराओ से चले आते हैं जो उसके रक्त की ध्वनि मे विलीन रहते है। राष्ट्र-परम्परा, वश परम्परा, जाति-परम्परा, वर्ग-परम्परा आदि अनेक परम्पराएँ समष्टि रूप मे या व्यष्टि रूप मे सहज ही उसके मन की प्रवृत्तियो मे अन्तर्निहित रहती हैं जिनका विशिष्ट स्थान उसके मनोविज्ञान मे होता है। दूसरे, वह पात्र परम्परा के अतिरिक्त वाहरी प्रभावो से भी अनुशासित होता है। ये प्रभाव जल-वायु से लेकर मनुष्य के जीवन-भर की परिस्थितियो से उत्पन्न होते है। इस प्रकार सस्कारो
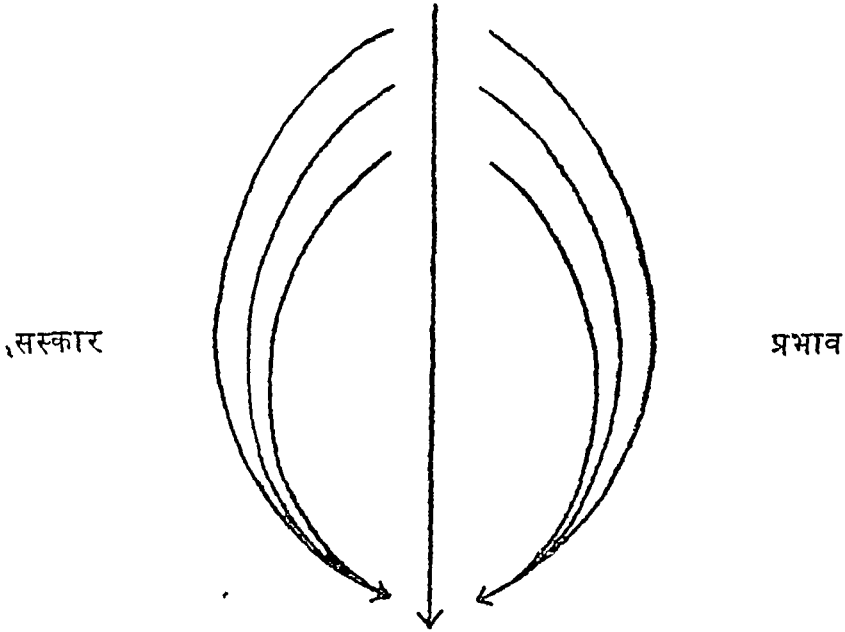
से अन्तरग और परिस्थितियो से वहिरग प्रवृत्तियो के सयोजन मे मनोविज्ञान नाना रूप ग्रहण करता है। परम्परा और प्रभाव का अनुपात ही पात्र के क्रिया-कलाप की दिशा निर्धारित करता है। यदि दोनो समानान्तर चले तो पात्र की मनोवैज्ञानिक स्थिति सघर्पहीन होकर एक ही दिशा का निर्देश करेगी। प्रभाव सस्कार को बल देगे और सस्कार प्रभाव की छाया मे ही विश्राम लेगे। यदि विलासी पिता के पुत्र को विलास के सस्कारो के साथ प्रचुर सपत्ति का ऐश्वर्य प्रभावित करने लगे तो वह और भी विलासी वन जाएगा और जीवन के आरम्भ से अन्त तक उसके मनोभावो की रेखा केवल लवाई मे रहेगी, चौडाई मे नही। वह चरित्र एक ही दिशा मे चलेगा। उसक जीवन का विस्तार सघर्पहीन भूमिका मे ही समाप्त हो जायगा। वह स्थिर पात्र (Static) कहा जायगा। उसका रेखा-चित्र कुछ ऊपर के चित्र-जैसा होगा।

दूसरी ओर यदि सस्कार और प्रभाव विपरीत दिशा मे चले तो जीवन का प्रत्येक क्षण सघर्ष करने में ही व्यतीत होगा। यदि एक कर्मकाण्डी ब्राह्मण अपने छुआ-छूत के सस्कारो को लेकर अछूतो की बस्ती मे बसने को बाध्य हो तो उसका जीना दूभर हो जायगा। पग-पग पर उसे सघर्ष लेना होगा और या तो वह बस्ती से निकल जायगा या जहर खा लेगा। सस्कार और प्रभावो के अनुपात पर पात्र परिवर्तित भी हो सकता है। यदि संस्कार की अपेक्षा प्रभाव प्रवल हुआ तो पात्र अपने सस्कार दवा देगा। ग्रामीण वश का लडका यदि आधुनिकता के प्रभाव मे आ गया तो वह सूट और हैट से सुसज्जित होकर अपनी सीदी-साधी ग्रामीण पत्नी से कहेगा—"यू फूल, यू आर नो गुड, अनलेस यू हैव युवर हेयर कट आफ्टर साधना-स्टाइल।" किन्तु यदि सस्कार प्रवल हुआ तो प्रभाव निर्मूल हो जायगा। डा० राजेन्द्रप्रसाद अपने जीवन की सहजता मे अडिग रहे और राष्ट्रपति-पद का समस्त वैभव उनके चरणो को धोकर प्रभावहीन होता हुआ निकल गया।

पात्र का मनोविज्ञान
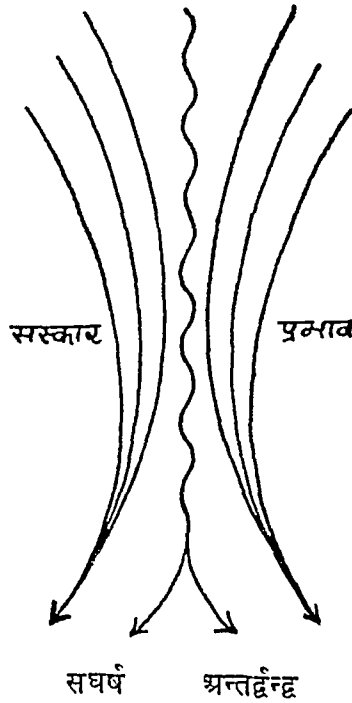
सघर्ष और अन्तर्द्वन्द्व

जब सस्कार और प्रभाव विपरीत दिशा मे चलते है तो बाहरी जगत् मे सघर्ष और अन्तर्जगत् मे द्वन्द्व उपस्थित होता है। इस सघर्ष और अन्तर्द्वन्द्व मे पात्र गतिशील होता है। वह क्रान्ति करता हुआ किसी निश्चित उद्देश्य पर आत्म-वलिदान भी कर सकता है। स्कन्दगुप्त आरभ से ही गुप्त-साम्राज्य का सैनिक राजकुमार था, किन्तु

देश की परिस्थितियो ने उसे प्रकृति का अनुचर और नियति का दास बना दिया। अन्त मे देवसेना की अस्वीकृति से उसने जीवन-भर कौमार-व्रत ही धारण किया। अन्तर्द्वन्द्व से आक्रान्त ऐसा पात्र गतिशील (Dynamic) कहा जायगा। उसका रेखा-चित्र पिछले पृष्ठ पर अंकित प्रकार का होगा।

दूसरा प्रकार : सत्य के सूत्रो का अनुसधान

मनोविज्ञान के नियोजन के साथ ही साथ कल्पना ऐतिहासिक सत्य के सूत्रो का अनुसधान भी करेगी। ऐसे कितने और किस प्रकार के मनोवैज्ञानिक कारण थे जिनसे इतिहास मे उल्लिखित घटना एक विशिष्ट प्रकार से घटी। इतिहास ने घटना के आधारभूत सूत्र छोड दिए है अथवा उनका उल्लेख ही नही किया है। घटना बिना किसी कारण के नही घट सकती। लेकिन जब घटना घटित हो गई तो उसके कारण अवश्य ही होगे जिनकी खोज कल्पना के द्वारा नाटककार को करनी पडती है।

इतिहासकार ने कलिंग-युद्ध के उपरान्त सम्राट् अशोक को बौद्ध तो घोषित कर दिया किन्तु क्रूरता की अग्नि-सीमा से करुणा की अश्रु-सीमा तक आने मे अशोक के मनोविज्ञान ने कितनी मजिले पार की, यह कौन जानता है! जन्मजात सस्कारो से मुक्ति पाने मे प्रभावो की अन्वितियो का चक्रव्यूह वास्तव मे मनोविज्ञान का एक प्रश्न है जिसके समाधान के लिए स्वस्थ और क्रियाशील कारणो की सृष्टि आवश्यक है। घटना अधूरे रूप मे आती है, स्वाभाविक और सभावित कारणो को जोडकर उसे विस्तृत और विश्वसनीय रूप मे उपस्थित करने मे नाटककार की कल्पना क्रियाशील होती है। उसका रेखा-चित्र कुछ इस प्रकार होना चाहिए

सम्पूर्ण घटना का परिकल्पित रूप
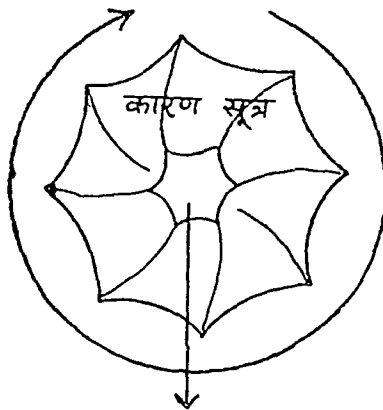
इतिहास से घटना का उपलब्ध रूप

ऐतिहासिक नाटको मे कल्पना सत्य के साथ ही क्रियाशील होती है और टूटे हुए सूत्रो का सयोजन कर उसे सम्पूर्ण रूप देती है। मेरे इन ऐतिहासिक नाटको मे अधूरी घटनाओ को उनके सभावित विकास की दिशा मे अग्रसर करने का कार्य मेरी

कल्पना ने किया है। वह सत्य के समानान्तर चली है जिससे पात्रो के मनोविज्ञान की वास्तविकता स्पष्ट हो सके।

सांस्कृतिक पृष्ठभूमि

मै अपने एकाकियो के शिल्प मे इस बात का अनुभव सदैव करता रहा हूँ कि पात्रो को उनके मनोविज्ञान मे 'स-चेतन' करने के लिए उनके समय की सास्कृतिक पृष्ठ-भूमि अवश्य तैयार कर दी जाय। राजनीति, समाज और परिवार की तत्कालीन मान्यताएँ जब तक उनके समक्ष नही रखी जाएँगी तब तक वे क्रियाशील ही नही हो सकेगे। अत पात्रो के मनोभावो मे जो ऐतिहासिक सत्य प्रतिफलित हुआ है, वह उस वातावरण से सम्बन्ध रखता है जिसमे उन पात्रो ने साँस ली है और जिसने उनके राग-विराग, ईर्ष्या-द्वेष और आशा-निराशा की भूमिका प्रस्तुत की है। अत ऐतिहासिक नाटको मे सास्कृतिक पृष्ठभूमि प्रस्तुत करना मेरी प्रमुख मान्यता है। ऐतिहासिक सामग्री सकलन करने मे मुझे महीनो लगे है जबकि तत्सम्बन्धी एकाकी मैंने एक दिन मे ही लिख लिया है।

एक बात और है। मै पात्रो की स्वाभाविक सत्ता सुरक्षित रखने के लिए उनके वातावरण और मनोभावो के अनुरूप ही भाषा का प्रयोग करता हूँ। इस देश मे मुसल-मानो के प्रवेश के पूर्व के सभी एकाकियो के पात्र विशुद्ध हिन्दी मे ही अपने मनोभाव व्यक्त करते है। मुसलमानो के आगमन के बाद के एकाकियो मे पात्रो के सवादो मे उर्दू-मिश्रित हिन्दी अथवा कही-कही उर्दू का प्रयोग परिस्थिति के अनुसार किया गया है। पात्रो की स्वाभाविक अभिव्यक्ति की दृष्टि से ही ऐसा किया गया है।

नाटको मे कथा-शिल्प का सयोजन भी महत्त्वपूर्ण है। कथावस्तु वास्तव मे एक पौधा है। उस पौधे के बढने की एक निश्चित ऊँचाई है।

कथा-शिल्प

उसमे विशिष्ट रग के फूल लगेगे और उनकी अपनी विशिष्ट सुगध भी होगी। उसके पत्रो का आकार निश्चित है। एक वृन्त मे कितने फूल लगेगे, यह भी प्रकृति-सिद्ध है। वस्तुत वह पौधा प्रकृति का एक कथा-शिल्प है।

नाटक मे कथा-शिल्प आवश्यक है। पश्चिमीय साहित्य के प्रभाव से पात्रगत मनोविज्ञान अधिक उभरा है किन्तु नाटक का रगमच से अधिकाधिक सम्पर्क होने से कथावस्तु का कौशल भी आवश्यक समझा गया है। सस्कृत नाट्यशास्त्र मे कथा-शिल्प के तो बडे सूक्ष्म और आकर्षक विधान प्रस्तुत किए किये थे। कथावस्तु की अवस्थाएँ बीज, बिन्दु, पताका, प्रकरी और कार्य, कथावस्तु की सन्धियाँ—मुख, प्रतिमुख, गर्भ, विमर्श और निर्वहण, अर्थोपक्षेपक के पाँच प्रकार—विष्कम्भक, प्रवेशक, चूलिका, अक्मुख और अकावतार तथा कथावस्तु की परिस्थितियाँ—आरम्भ, प्रयत्न, प्राप्त्याशा, नियप्ताप्ति और फलागम—की व्यवस्था अति सतर्कता के साथ की गई थी। इनमे से

कोई भी ऐसा अग नही था जो कथा के मुख्य उद्देश्य की पूर्ति मे नियोजित न हो।

आधुनिक जीवन अत्यन्त अव्यवस्थित और अशान्त हो गया है। प्रत्येक परि-स्थिति समस्या का रूप लेकर आती है। ऐसी स्थिति मे यह और भी आवश्यक है कि जीवन की परिस्थिति को रगमच पर अत्यन्त स्पष्ट और सुलझे हुए रूप मे रखा जाय। ऐतिहासिक नाटको मे कथावस्तु तो निश्चित-सी रहती है परन्तु उसमे जीवन की प्रबल प्रतिष्ठा के लिए नवीन परिस्थितियो या पात्रो की सृष्टि करनी पडती है। ऐसी परिस्थितियाँ जीवन और उसके मनोविज्ञान के अध्ययन और अधिकार के बिना नही आ सकती। यदि ऐसा अधिकार हो जाय तो ऐतिहासिक नाटक कथावस्तु का एक ज्वलन्त चित्र बन जाता है।

हमारा सामाजिक और राजनैतिक जीवन तो न जाने कितनी विषमताओ से आक्रान्त है। इन विषमताओ का अध्ययन हमे उसी प्रकार करना है जिस प्रकार वनस्पतिशास्त्र का विद्यार्थी सूक्ष्मदर्शक यत्र से फूलो या पत्तो की सूक्ष्म और छोटी-छोटी नसो का अध्ययन करता है। रसवाहिनी शिराएँ कौन-कौन-सी है और किन-किन शिराओ से पत्ते या पाँखुरी का आकार विशिष्ट रूप से निर्मित हुआ है, उसी भाँति हमे सामाजिक और राजनीतिक दृष्टि से समस्याओ का अध्ययन करना है।

जब तक हम घटनाओ और मन -स्थितियो को स्पष्ट नही देखते तब तक कथा-वस्तु अपनी स्वाभाविक गति से अग्रसर नही होती। न जाने कितनी असगत बाते हमारे दृष्टिकोण को धूमिल करने के लिए आती है। अनुभवी नाटककारो की लेखनी समस्या को लेकर निर्विकल्प रूप से आगे बढती है, जिस प्रकार थर्मामीटर का पारा ताप को पाकर अपनी सीधी रेखा मे आगे बढता चला जाता है। अनुभवी नाटककारो की दृष्टि समस्या की रूपरेखा पहचानती है और वह जानती है कि नाटक के किस अग को कितना विस्तार मिलना चाहिए।

कथा-शिल्प के कौशल मे जब पात्रो का मनोविज्ञान उभरता है तो जैसे सत्य नाटक के प्रत्येक वाक्य मे स्पन्दित होने लगता है। मुझे विश्वास है कि आधुनिक भारतीय नाटको मे कथा-शिल्प पर पर्याप्त ध्यान दिया जायगा। तभी उनसे नाटक रगमग पर कचन की भाँति खरे उतर सकेगे।

मेरे इन ऐतिहासिक एकाकियो मे भारतीय सस्कृति का मेरुदण्ड—नैतिक मूल्यो मे आस्था और विश्वास का दृष्टिकोण—प्रस्तुत किया गया है। क्योकि अपने इतिहास की महानता पर मै गर्व करता हूँ। अपने इन प्रयोगो के 'इतिहास-रस' से यदि किसी को थोडी भी प्रेरणा प्राप्त हो तो मै कहूँगा कि हिन्दी मे ऐतिहासिक एकाकी-कला का और भी अधिक विकास होना चाहिए।

—रामकुमार वर्मा

'साकेत',
प्रयाग स्ट्रीट, इलाहाबाद

अभियोग

[शुक और सारिकाओ के शब्द, जो स्वर्ण-पिजरो मे निवास कर रहे है। महादेवी वासवदत्ता सुघोषवती वीणा के तारो मे क्षण-क्षण पर कुछ नये सरगमो का विन्यास कर रही है। दो क्षण रुककर तारो मे नया सरगम, फिर रुककर दूसरा राग निकालने का यत्न करती है। सेविका सुहासिनी का प्रवेश]

सुहासिनी महादेवी की जय हो! महाराज कक्ष मे आ रहे हैं।

वासवदत्ता सुहासिनी तू है! इस स्वर-लहरी मे तो मै ऐसी लीन हो गयी थी कि तुझे देख नही सकी। क्या कहा, आर्य आ रहे है? मै तो बहुत देर से उनकी प्रतीक्षा कर रही हूँ। मै उनके आगमन की ध्वनि अपनी वीणा के तारो से निकालने की चेष्टा कर रही थी।

सुहासिनी महादेवी की जय हो! महाराज यहाँ शीघ्र ही आ जाते, किन्तु वे कक्ष-द्वार के स्वर्ण-पिजर मे बैठी हुई सारिका को देखकर न जाने क्यो रुक गये। अनिमेष नेत्रो से वे सारिका को देखते रहे, फिर उन्होने एक ठडी साँस लेकर दूर क्षितिज की ओर देखा और सिर झुकाकर न जाने किन विचारो मे लीन हो गये।

वासवदत्ता सारिका की ओर अनिमेष दृष्टि से देखते रहे, क्यो? इस कक्ष मे आते समय पहले कभी तो सारिका पर इतना ध्यान नही दिया।

सुहासिनी आपकी सतर्क दृष्टि महाराज को किसी की ओर देखने का अवसर नहीं देती। शका न करे, देवि! वह तो निरीह पक्षिणी है। किन्तु क्या जानूँ, महादेवी, कि आज ही सारिका के प्रति उनके हृदय मे इतनी करुणा कैसे उत्पन्न हो गयी! महाराज का हृदय इतना सवेदनशील है, महादेवी, कि घटना का छोटा-सा अँकुर उनके हृदय मे विशाल वट वृक्ष बन जाता है।

वासवदत्ता मैं जानती हूँ, सुहासिनी! मेरे पिताश्री के यहाँ जब बन्दी होकर आये थे, उस अवस्था मे भी उनके हृदय मे कितनी विशालता थी! उन से वीणा-वादन की शिक्षा ग्रहण करते समय मैं तो उनकी ओर अनिमेष दृष्टि से देखती ही रह जाती थी। (**ठडी साँस लेकर**) जाने दे वह बात। आज बडी पुरानी स्मृति हृदय मे उभर आई।

सुहासिनी मैं समझ गयी, महादेवी, महाराज की अनिमेष दृष्टि का रहस्य। सभव है, उस सारिका के कठ मे उन्होने आपकी वीणा के स्वर सुन लिये हो।

वासवदत्ता क्या तू नही जानती कि एक सारिका कक्ष के बाहर है, दूसरी भीतर। द्वार की सारिका सुखी है, क्योकि आर्य उसके समक्ष है। किन्तु कक्ष की सारिका दुखी है कि आर्य ने अभी तक कक्ष मे प्रवेश नही किया। और वे यह भी जानते है कि इस सारिका के हृदय मे उनके अनुराग का क्षण-प्रति-क्षण कसकता रहता है। मेरी वीणा के ये तार! **(उँगली से दो-तीन तारो को बजाती है।)**

[नेपथ्य मे महाराज के आने की ध्वनि]

सुहासिनी महाराज आ गये! मुझे आज्ञा दीजिए। महाराज की जय! **[प्रस्थान]**

[उदयन का प्रवेश]

वासवदत्ता **(खडी होकर)** स्वागत, आर्य! विन्ध्यभूमि की विजय पर आपको बधाई।

उदयन इस विजय की कल्पना तो तभी साकार हो उठी थी, जब अमात्य यौगधरायण की राजनीति मे तुमने अपने को कल्पना की अग्नि मे समर्पित कर दिया था। तुम्हारे आत्म-त्याग ने ही वत्स-राज्य को इतना विशाल बना दिया है।

वासवदत्ता यदि मै यह निवेदन करूँ, आर्य, कि जिस मात्रा मे यह वत्स-राज्य विशाल होता जा रहा है, उसी मात्रा मे मैं लघु होती जा रही हूँ?

उदयन महादेवी! तुम लघु होती जा रही हो? कैसे? जिसकी सुघोषवती वीणा के स्वरो के लिए ससार की सीमाएँ छोटी हो गयी है, जिसके नाम वासवदत्ता मे इन्द्र का समस्त ऐश्वर्य बिखर गया है, जिसकी कीर्ति-गाथा के सूत्र मे उज्जयिनी और वत्स एक हो गये है, वह लघु कैसे हो सकती है, महादेवी? सूर्य के उदय की सूचना देने वाली ऊषा तो समस्त आकाश को राग-रजित कर देती है, और उदय होता हुआ सूर्य एक छोटी-सी परिधि मे ही सीमित रहता है।

वासवदत्ता आर्य कलाकार है। वे न जाने कितने चित्रो का निर्माण कर सकते है। किन्तु मै यह अनुभव कर रही हूँ, आर्य, कि अब कलाकार के हृदय ने महादेवियो से नही, सारिकाओ से प्रेम करना आरम्भ कर दिया है।

उदयन सारिकाओ से?

वासवदत्ता हाँ, महाराज! सारिकाएँ वन मे निवास करती है, और महादेवियाँ सीमित कक्ष मे। कलाकार सीमाओ से प्रेम नही करता, इसीलिए वह राजकक्ष से दूर रहकर वनप्रान्त मे विचरण करता है। वहाँ नाना प्रकार की सारिकाओ को देखता है। और तब, उन सारिकाओ के समक्ष महादेवी लघु हो जाती है। यह कितनी बडी विडम्बना है। लघु महादेवी **('महा' शब्द पर जोर देकर)**।

उदयन किसी दूत ने तुमसे मेरे आखेट की वार्त्ता कही है?

वासवदत्ता महाराज की वार्त्ता तो धरित्री का कण-कण कहता है।

उदयन व्यर्थ की शकाओ से हृदय को क्षुब्ध न करो, महादेवी। आखेट मे एक दुर्घटना घटित हो गयी।

वासवदत्ता दुर्घटना ! दुर्घटना भी महाराज के लिए सुन्दर घटना हो जाया करती है। आप ही कहे, किस बन्दी को राजपुत्री प्राप्त हुई है ?

उदयन देवि ! तुम्हारा व्यग्य पर्याप्त है। इस आखेट की दुर्घटना, दुर्घटना ही है। तुम्हे तो सारा वृत्त ज्ञात ही हो गया होगा, तुम्हारे समक्ष उसे दोहराने की क्या आवश्यकता ?

वासवदत्ता : किन्तु मै आर्य के ही मुख से सुनना चाहती हूँ।

उदयन महादेवी ! मेरे शब्दवेधी बाण से एक सारिका धराशायी हो गयी।

वासवदत्ता यह कोई नई बात नही है, आर्य ! न जाने कितनी सारिकाएँ आपके मधुर शब्दो के बाण से धराशायी हो चुकी है। (मुस्कान)

उदयन देवि ! इस परिस्थिति मे व्यग्य के लिए स्थान नही है। यह घटना ही ऐसी घटित हो गई। *अमात्य यौगधरायण ने शब्दवेधी बाण चलाने को कहा।* मेरे कृपाण ने बाणो को विश्राम दे ही दिया था, इसलिए इच्छा हुई कि आखेट मे बाणो का ही प्रयोग करूँ। सध्या का समय था। वनप्रान्त मे पक्षियो का कलरव स्पष्ट सुन पड रहा था। उस स्वर मे एक तीव्र स्वर सुन पडा.. ...उसी स्वर को लक्ष्य कर मैने शब्दवेधी बाण छोड दिया। कुछ क्षण पश्चात् ही मेरे बाण ने एक बेचारी सारिका के कण्ठ मे प्रवेश किया।

वासवदत्ता आर्य तो किसी पक्षी पर बाण का प्रयोग नही करते, उनका लक्ष्य दूसरा ही होता है।

उदयन निस्सदेह, महादेवी ! मै शत्रुओ को ही अपना लक्ष्य बनाता हूँ। किन्तु तुम्हारे ऐश्वर्य ने मेरे समीप किसी शत्रु को नही रहने दिया। शब्दवेधी बाण चलाने का उन्माद विवेक से समर्थित नही हुआ।

वासवदत्ता उन्माद भी विवेक से समर्थित हुआ है, आर्य ! तो आपके बाण ने सारिका के शब्द का ही अनुसरण किया ?

उदयन हॉ, महादेवी ! एक क्षण मे ही सारिका का अन्त हो गया।

वासवदत्ता अनर्थ हुआ, आर्य ! उस सारिका की समाधि बननी चाहिए जो आपके बाण का लक्ष्य बन सकी।

उदयन किन्तु मै उस सारिका को देख नही सका।

वासवदत्ता देख नही सके ? तो आपको ज्ञान कैसे हुआ कि सारिका ही धराशायी हुई है !

उदयन उस सारिका की स्वामिनी, मजुघोषा

वासवदत्ता ये मजुघोषाएँ न जाने क्यो आपके मार्ग मे आ जाया करती है।

उदयन अपनी सुघोपवती वीणा से ही पूछो, देवि !

वासवदत्ता वह भी आपकी कीर्ति के स्वरो को ही गुनगुनाया करती है। उसकी साँसो के तार उँगलियो का स्पर्श पाते ही कलरव कर उठते है। किन्तु यह मजु-घोषा मेरी सुघोपवती वीणा से भी महान् होगी। उसका परिचय दे, आर्य !

उदयन · मैं उसका परिचय स्वय नही जानता, देवि ! केवल इतना ही जानता हूँ कि वह उस मृत सारिका की स्वामिनी है। उसने कटु शब्दो मे मेरी निंदा करते हुए मुझ पर अभियोग लगाया है।

वासवदत्ता : आर्य की निंदा करने का साहस एक सामान्य नारी को हो ?

उदयन नही, महादेवी ! मैं उस समय आखेटक के वेश मे था। वह नही जान सकी कि मै ही उदयन हूँ और आज वह आखेटक उदयन पर लगाया हुआ अभियोग महाराज उदयन के समक्ष प्रस्तुत करेगी।

वासवदत्ता अभियोग की विचित्र स्थिति है, आर्य ! महाराज उस आखेटक को किस प्रकार दड देगे ?

उदयन दड का निर्णय स्वय महादेवी करेगी।

वासवदत्ता यह निर्णय तो अमात्य यौगधरायण बहुत अच्छा करते।

उदयन तुम सत्य कहती हो, महादेवी ! किन्तु उनके निर्णय बडे भयानक होते है। वे उस वनप्रान्त को कही मगध की श्रेणी मे न रख दे।

वासवदत्ता इस अन्त पुर मे अब अन्य कक्षो के लिए स्थान नही है, आर्य ! मेरा सुख और सौभाग्य, मेरे मन की सीमा से अधिक बढता जा रहा है।

उदयन स्वप्न मे भी ऐसी कल्पना नही है, देवि ! आज जब तुम्हारे कक्ष मे प्रवेश कर रहा था तो द्वार पर मधुर शब्द करती हुई सारिका को देखकर मुझे उस निरपराध सारिका का स्मरण हो आया और करुणा की एक छोटी-सी लहर ने मेरे मन की सारी शान्ति एक क्षण मे बहा दी। तुम अपनी सुघोषवती वीणा के सगीत से मेरे अवसाद को दूर कर दो, देवि !

वासवदत्ता वीणा बजाने का अवकाश कहाँ है, आर्य ! आपकी मजुघोषा अपना न्याय माँगने के लिए आती ही होगी। मै भी उस मजुघोषा को देखना चाहती हूँ जो एक तुच्छ सारिका पर आर्य का विराट् वैभव तौलना चाहती है।

उदयन नही, महादेवी ! उसका अभियोग न्याय-सगत है। निर्दोष प्राण-हानि कभी तुच्छ नही होती, वह चाहे सारिका की हो या मनुष्य की। लाओ अपनी सुघोषवती वीणा ! मै ही उस पर स्वर-सधान करूँगा।

वासवदत्ता शर-सन्धान के उपरान्त स्वर-सन्धान अनुचित नही है। सभव है, इस स्वर-सन्धान के समक्ष उस वनवासिनी के अभियोग का शर-सन्धान कुठित हो जाय।

उदयन ऐसी बात नही है, देवि !

[एक मिनट तक वीणा पर मालकोश की ध्वनि। अचानक वीणा का एक तार टूट जाता है।]

उदयन तार टूट गया ! जो कभी नही हुआ, वह आज कैसे ?

[सुहासिनी का प्रवेश]

सुहासिनी महाराज की जय हो ! न्याय-कक्ष से सूचना मिली है कि मजुघोपा नाम

की एक स्त्री महाराज के समक्ष उपस्थित होकर एक अभियोग प्रस्तुत करना चाहती है ।

वासवदत्ता यह सारिका से सम्बन्धित अभियोग ही है ।

उदयन जिसका निर्णय तुम करोगी, देवि ! सुहासिनी ! उस स्त्री को इसी कक्ष मे आने की आज्ञा दी जाय ।

सुहासिनी जैसी महाराज की आज्ञा । [**प्रस्थान**]

उदयन बडी कठोर स्त्री है यह । निषाद-स्वर की भाँति इसका तीक्ष्ण स्वर किसी शब्दवेधी बाण-सा सीधा हृदय मे प्रवेश करता हे ।

वासवदत्ता कही वह हृदय का भाग न बन जाय !

उदयन : हृदय का भाग बनने के लिए देवी वासवदत्ता की वाणी चाहिये । कितना शक्तिशाली है रूप उसका ! विशाल नेत्र और मिली भौहे, जैसे शक्ति के दो अक्षर जिन पर भौह की मात्रा लगी हुई है । उठी हुई नासिका, जैसे सौन्दर्य ने अपनी सीमा खीच दी हो । क्रोध से कसे हुए अधरोष्ठ, जैसे प्रत्यचा मे किसी ने ग्रन्थि लगा दी हो ।

वासवदत्ता (**बीच ही मे**) मुझे भय है, आर्य, कि उस प्रत्यचा से किसी शर का सन्धान न किया गया हो !

उदयन उसका एक-एक शब्द बाण था जो अभियोग की अग्नि लेकर समीप के वायुमडल मे क्रोध की चिगारियाँ फेक रहा था ।

वासवदत्ता उस स्त्री की रूप-रेखा कही आपकी वाणी से साहित्य न बन जाय !

उदयन इसका भी निर्णय तुम्ही करना, देवी ! वह स्त्री आती ही होगी । उसका यथार्थ अभियोग जानने के लिए मुझे समीप के कक्ष मे चले जाना चाहिये । देखो, सुहासिनी आ रही है । मै जाता हूँ । [**प्रस्थान**]

[**सुहासिनी का प्रवेश**]

सुहासिनी महाराज की . .महादेवी की जय हो ! महाराज कहाँ है ?

वासवदत्ता वे समीप के कक्ष मे है । वह स्त्री आयी ? मै ही उसका निर्णय करूँगी ।

सुहासिनी : वह स्त्री द्वार पर है, महादेवी !

वासवदत्ता उसे इस कक्ष मे भेज दो ।

सुहासिनी जो आज्ञा । [**प्रस्थान**]

वासवदत्ता (**अपने-आप**) आर्य का जीवन किसी अभिनय से कम नही है और इस अभिनय की विचित्रता यह है कि वह सदैव उनके लिए सुखान्त ही होता है, भले ही उनमे मेरी करुणा सम्मिलित हो ।

[**मंजुघोषा का प्रवेश**]

मंजुघोषा प्रणाम करती हूँ, महादेवी ! महाराज नही है ? तब मेरा यहाँ आना व्यर्थ हुआ ।

वासवदत्ता : तुम्हारा नाम मजुघोषा है ? तुम कोई अभियोग उपस्थित करना चाहती थी ?

मजुघोषा हाँ, देवि ! किन्तु मैने द्वार पर सुना कि महादेवी ही महाराज का अधिकार ग्रहण कर रही है। ऐसी स्थिति मे मुझे आपकी सेवा मे उपस्थित ही नही होना चाहिये था।

वासवदत्ता नारी ! शान्ति से बोलना सीखो। सम्भव है, तुम्हारा अभियोग विश्वस्त होने पर मै भी महाराज से प्रार्थना करूँ कि वे स्वय इसका निर्णय करे।

मंजुघोषा सहानुभूति के लिए अनेक धन्यवाद, महादेवी ! किन्तु मुझे इस नागरिक वातावरण मे राजनीति की एक विचित्र दुर्गन्धि मिलती जा रही है।

वासवदत्ता नारी ! क्या विश्वास करने की मगल-भावना ने तुम्हे सदैव के लिए छोड दिया है ? अविश्वास की अग्नि मे तुम्हारा रोम-रोम जलता हुआ दीख पडता है।

मजुघोषा सत्य है, महादेवी ! और यह अविश्वास नागरिकता का अभिशाप है। मेरे वनप्रान्त मे रहने वाले व्यक्ति विश्वास पर अपने प्राणो का बलिदान करते है। किन्तु इस नगर के लोग अविश्वास को अपनी राजनीति समझते है।

वासवदत्ता इस कथन का प्रमाण देना होगा तुम्हे।

मंजुघोषा प्रमाण स्पष्ट है, महादेवी ! वह आखेटक जिसने बार-बार मुझे वचन दिया था कि वह इस समय अपना अपराध स्वीकार करने के लिए महाराज के न्याय-कक्ष मे उपस्थित रहेगा, मैने यहाँ बडी देर तक उसकी प्रतीक्षा की, किन्तु वह कही दृष्टिगत न हुआ। अब मै अपने अभियोग का आरोप किस व्यक्ति पर करूँ ? मैं कितना विश्वास लेकर आयी थी कि महाराज से न्याय प्राप्त कर सकूँगी, किन्तु महाराज भी नही है।

वासवदत्ता ऐसी बात नही है, नारी ! महाराज कुछ क्षण बाद इस कक्ष मे आ ही रहे है और वह आखेटक, यदि उसने वचन दिया है, तो वह भी अवश्य उपस्थित होगा। तुम उसका नाम जानती हो ?

मजुघोषा उसका नाम ? **(स्मरण करते हुए)** शखचूड और शेखरक। नही, नही, ये नाम तो दूतो के थे। महादेवी, उस आखेटक ने नम्रता और विश्वास की बातो का ऐसा जाल बिछा दिया कि मै उसका नाम पूछना ही भूल गयी। वह अमात्य यौगन्धरायण के साथ था।

वासवदत्ता अमात्य यौगन्धरायण के साथ ? तो उसकी रूप-रेखा बतला सकती हो ? यदि वह इस नगर मे होगा तो मैं उसे अवश्य ही उपस्थित होने का आदेश दूँगी।

मजुघोषा मुझे ऐसा ज्ञात होता है कि वह महाराज की सेवा मे नियुक्त आखेटक होगा, तभी तो वह अमात्य यौगन्धरायण के साथ था और वह महाराज की कृपा की बात भी कह रहा था। उसके व्यवहार मे मर्यादा थी और उसकी मुख-मुद्रा

मे एक विशेष प्रकार का तेज था ।

वासवदत्ता (मुस्कुराहट से) किन्तु क्या किसी नारी के समक्ष पुरुष ,का तेज रह सकता है ? और विशेषकर जब वह पुरुष तुम जैसी नारी के समक्ष अभियोगी के रूप मे हो ?

मंजुघोषा . नही, महादेवी ! मैंने अनुभव किया कि उसकी स्थिर मुख-मुद्रा, हृदय मे प्रवेश करने वाले उसके नेत्र, निर्भर की भाँति प्रवाहित होने वाली उसकी वाणी, उसके तेजस्वी व्यक्तित्व का समर्थन कर रहे थे। उसके बाण से मेरी सारिका विद्ध हो चुकी थी, इसलिए अपनी सारिका की मृत्यु पर मेरे शब्द अँगारे बनकर उसके ऊपर वरस रहे थे। किन्तु वह समुद्र की भाँति गभीर था। मै अनुभव कर रही थी कि जैसे मेरे क्रोध के शब्द मेरे कठ से ही निकल रहे हो, हृदय से नही। जैसे, देवि, मेरा क्रोध वर्षा का भरा हुआ बादल हो, जिसके मुख पर तो विद्युत् की रेखा है किन्तु भीतर सहानुभूति के जल का अपार कोष भरा हुआ है ।

वासवदत्ता तब तुम्हारा अभियोग यथार्थ नही है, स्त्री ! जिसके प्रति तुम्हारे हृदय मे सहानुभूति हो जाती है वह अभियोग का पात्र कैसे बन सकता है ?

मजुघोषा नही, महादेवी ! न्याय और सहानुभूति एक दूसरे के समर्थक नही है। यदि ऐसा होता तो कोई नरेश अन्याय करने पर अपनी प्रजा को दडित नही कर सकता। मैं उस आखेटक के व्यक्तित्व से भले ही प्रभावित हो जाऊँ, किन्तु इससे अभियोग का पथ अवरुद्ध नही हो सकता ।

वासवदत्ता मै प्रसन्न हूँ तुम्हारे अभियोग से। पहले मेरे समक्ष अपना अभियोग स्पष्ट करो। मै तुम्हारे अभियोग को महाराज की सेवा मे पहुँचाने मे सहायता करूँगी ।

मंजुघोषा कृतज्ञ हूँ, महादेवी ! मै एक किरात-कन्या हूँ। मेरे माता-पिता ने मेरे शैशव मे ही यह ससार छोड दिया। मैं अपने मातुल के साथ कौशाम्बी के समीप के वनप्रान्त के एक कोने मे कुटीर बनाकर निवास करती हूँ। मेरे मातुल पक्षियो का व्यापार करते है। वे समय-समय पर पक्षियो का विक्रय करने के लिए समीपवर्ती जनपदो मे चले जाते है, और तब मै अकेली रह जाती हूँ। इन दिनो भी मै अकेली हूँ ।

वासवदत्ता उस घने वनप्रान्त मे तुम्हे अकेले भय नही लगता ?

मजुघोषा महादेवी ! किरात-कन्या को किसका भय ? अपने मातुल से सीखी बाण और कृपाण की कला ने ही उसे निर्भय बना दिया है ।

वासवदत्ता किरात-कन्या होकर तुमने इतनी सुन्दर भाषा कहाँ सीखी ?

मजुघोषा महादेवी ! मेरे मातुल महाराज के इस नगर कौशाम्बी मे अनेक दिनो तक निवास कर चुके है ।

वासवदत्ता तब तुम्हे हमारी नागरिकता का अधिकार है। आगे का विवरण दो ।

मजुघोषा आज से पाँच वर्ष पूर्व मैने एक पक्षि-शावक को एक वृक्ष के कोटर मे पडा

पाया । ग्रीष्म की ऊष्मा से वह शिथिल होकर अपनी अन्तिम साँसें ले रहा था । मैं उसे उठा लायी । बडे प्रेम से उसका पालन किया और पाँच वर्षों मे पक्षि-शावक ने एक सुन्दर सारिका का रूप ग्रहण कर लिया । वह सारिका मधुर सगीत से मेरी उस छोटी-सी कुटी मे आनन्द का सागर लहरा देती थी । इतने वर्षों मे वह मेरे परिवार का ही अग बन गयी । मातुल की अनुपस्थिति मे वह मेरे एकाकी जीवन की एकमात्र सहचरी थी । कल सन्ध्या समय जब वह पुकार-पुकार कर मुझसे अपना दाना माँग रही थी उसी समय उस क्रूर आखेटक का तीक्ष्ण बाण उसके कण्ठ मे लगा और वह धराशायी हो गयी । करुणा और क्रोध से मैं पागल हो गयी । मैं अपनी सारिका को उसके अन्तिम समय मे दाना भी नही दे सकी ! **(सिसकी)** मेरी सारिका भूखी ही चली गयी ! **(गहरी सिसकी)** उसके मरण-काल का चीत्कार इस समय भी मेरे कानो मे गूँज रहा है, महादेवी ! और निश्चेष्ट होती हुई उसकी करुण दृष्टि मेरे हृदय मे चुभ रही है। जैसे ही मैंने उसके कठ से वह बाण निकाला वैसे ही उसके प्राण उस आकाश मे उड गये, जहाँ से वे फिर न लौट सके ।

वासवदत्ता तुम्हारी सारिका के इस करुण अन्त से मुझे भी कष्ट होता है, किरात-कन्या !

मजुघोषा महादेवी ! उसकी ऐसी मृत्यु देखकर उस आखेटक के प्रति मेरे क्रोध की सीमा न रही । मै अपना कृपाण लेकर उन्मादिनी की भाँति वन मे उस आखेटक को खोजने लगी । सहसा मेरी दृष्टि अमात्य यौगन्धरायण के साथ उस आखेटक पर पडी और मै उस पर आक्रमण करना चाहती थी, देवि ! किन्तु उसकी शान्त-मुद्रा ने मेरे क्रोध को कुठित-सा कर दिया ।

वासवदत्ता किरात-कन्ये ! तुम्हारा अभियोग वास्तव मे गम्भीर है । उसका न्याय होना चाहिए । अभियुक्त को दडित होना ही पडेगा । मै तुम्हारे न्याय के पक्ष मे हूँ । तुम्हारा साथ दूँगी ।

मजुघोषा किन्तु, महादेवी, अभी तक अभियुक्त नही आया ?

वासवदत्ता **(नेपथ्य की ओर देखकर)** अरे, आर्य आ रहे है !

मजुघोषा **(विह्वल होकर)** महाराज आ रहे है ? महाराज आ रहे है ? महाराज की जय !

[उदयन का प्रवेश]

उदयन : स्वस्ति, देवि ! तुम कौन हो ?

वासवदत्ता आर्य, यह मजुघोषा नाम की किरात-कन्या है । समीप के वनप्रान्त मे एक कुटी बनाकर निवास करती है । मातुल के अतिरिक्त इसके परिवार मे कोई नही । केवल एक सारिका थी, जिसे किसी क्रूर आखेटक ने अपने शब्दवेधी बाण का लक्ष्य बना दिया । व्यर्थ ही सारिका के प्राण लेने के कारण वह आखेटक दड का पात्र है और यही अभियोग लेकर यह आपके समक्ष उपस्थित हुई है ।

उदयन वह आखेटक निश्चय ही दड का अधिकारी है, उसके लिए किरात-कन्या जो दड निर्धारित करना चाहती है, करे। मेरी राज-शक्ति उसका समर्थन करेगी।

वासवदत्ता बोलो, किरात-कन्ये ! तुम किस दड की व्यवस्था करना चाहती हो ? **(गहरी दृष्टि से देखकर)** तुम आर्य को इतनी गहरी दृष्टि से क्यो देख रही हो ? सावधान, नारी ! न्याय की याचना नेत्रो से नही शब्दो से होती है।

उदयन बोलो, नारी ! तुम उस आखेटक के लिए किस दड की व्यवस्था करती हो ?

मजुघोषा मै . मै . महाराज . !

वासवदत्ता विद्युत् की वाणी तरल होकर बरसना चाहती है ? जिस उग्रता से तुम अपना अभियोग लाई थी, उसी उग्रता से न्याय भी मॉगो, और जब महाराज ने तुम्हे दड निर्धारित करने का अधिकार दे दिया है तो इतनी विह्वलता किसलिए ?

मंजुघोषा **(अधिक विह्वलता से)** महाराज ! **(क्षीण शब्दो मे)** आखेटक ! आखेटक.. !

वासवदत्ता कहाँ है तुम्हारा आखेटक, किरात-कन्या ?

मंजुघोषा महादेवी ! **(रुककर)** आखेटक .! आखेटक...!

उदयन कहाँ है तुम्हारा आखेटक ? तुम विस्मयभरी दृष्टि से मुझे क्यो देख रही हो, किरात-कन्ये ?

मजुघोषा महाराज ! क्षमा हो, आपके मस्तक का चिह्न...!

वासवदत्ता आर्य के मस्तक का चिह्न तो इनके कृपाण-युद्ध का वरदान है। आखेटक के मस्तक का चिह्न किसी किरात-कन्या के प्रहार का चिह्न होगा।

मजुघोषा नही, महादेवी ! वैसा ही चिह्न. .वही चिह्न है जो मैने आखेटक के मस्तक पर देखा था। **(स्वप्नावस्था में कहती हुई-सी)** तिलक की भाँति दोनो भौहो के मध्य मे। कृपाण-रेखा की भाँति, जो किसी भी छद्मवेश से नही छिपाया जा सकता।

उदयन क्या तुम समझती हो कि मै ही आखेटक हूँ ? अपने हृदय को सतुलित करो, नारी !

मंजुघोषा महाराज ! क्षमा हो। **(तीक्ष्ण दृष्टि से देखती हुई)** किरात-कन्या की दृष्टि भूल नही कर सकती, अब महाराज मै अपना अभियोग लौटाती हूँ। मेरा अभियोग मुझे लौटा दीजिये, महाराज ! मै किसी प्रकार का न्याय नही चाहती, किसी प्रकार का न्याय नही चाहती। आप के चरणो पर मै सहस्र सारिकाएँ निछावर कर सकती हूँ। ओह ! न जाने मैने कितने अपशब्दो का प्रयोग किया, देवि ! मै आपसे क्षमा की भिक्षा मॉगती हूँ। महाराज से मैने न जाने कितने अपशब्द कहे होगे ! मेरी सारिका का रक्त आँखो मे क्रोध बनकर समा गया था। मै क्या जानती थी कि उस वनखड मे मेरे समक्ष स्वय महाराज खडे हुए है ! महादेवी ! मै कितनी धन्य हूँ कि उस समय महाराज ने मुझे कितना आदर दिया था, और पापीयसी पापीयसी......

[कठ अवरुद्ध हो जाता है और वह उदयन के चरणो पर गिर पड़ती है ।]

उदयन उठो, उठो ! मजुघोषे ! अपराध मेरा है, किन्तु जिस प्रकार तुम नही जानती थी कि तुम अपने महाराज के समक्ष अपशब्दो का प्रयोग कर रही हो, उसी प्रकार मै भी नही जानता था कि मेरा वाण तुम्हारी सारिका के कठ की ओर जा रहा है, किन्तु मै दोषी हूँ, दड की व्यवस्था करो। यह लो मेरा कृपाण, जिस प्रकार मेरे वाण ने तुम्हारी सारिका के कठ पर प्रहार किया उसी प्रकार मेरे कठ पर इस कृपाण का प्रहार करो।

मंजुघोषा नही, महाराज ! क्षमा ! क्षमा... ! क्षमा . ! मै लौट जाऊँगी, मै अभियोग लेकर आई थी, अभियुक्ता वनकर जाऊँगी। आज्ञा दीजिये, महाराज !

उदयन · किरात-कन्ये ! तुमने अपने को अभियुक्त मान लिया है। तुम्हे स्मरण होगा, आखेटक उदयन का भी एक अभियोग था। उसका निर्णय भी तो महाराज उदयन को करना है। उस सम्बन्ध मे तुम्हे कुछ कहना है ?

मजुघोषा मै कुछ नही कहूँगी, महाराज !

उदयन तो आखेटक उदयन का अभियोग सत्य है, और उसका न्याय इस प्रकार होगा कि आज से अभियुक्ता किरात-कन्या महादेवी वासवदत्ता की प्रमुख सहचरी होकर उदयन के राजकक्ष मे निवास करेगी। महादेवी ! इसमे तुम्हारी स्वीकृति है ?

वासवदत्ता आर्य की राजनीति को स्वीकार करने का सौभाग्य मुझे अनेक बार प्राप्त हो चुका है। यह सौभाग्य भी शिरोधार्य होगा। क्यो मजुघोषे ! तुम्हे स्वीकार है ?

मजुघोषा मै कृतार्थ हुई, महादेवी !

उदयन महादेवी की स्वीकृति पर मैं अपनी हस्तिस्कन्ध वीणा मे अपने हृदय का उल्लास मुखरित करना चाहता हूँ !

[सुहासिनी का प्रवेश]

सुहासिनी महाराज की जय !

उदयन सुहासिनी, मैं अपनी हस्तिस्कन्ध वीणा चाहता हूँ !

सुहासिनी जो आज्ञा, महाराज ! (**कुछ देर रुककर**) महाराज ! महाराज दर्शक की ओर से सदेश लेकर कचुकी आप की सेवा मे उपस्थित होने के लिए अनुमति चाहता है।

उदयन महाराज दर्शक का सदेश लेकर आया है ? सुहासिनी ! उसे शीघ्र भेजो।

सुहासिनी जो आज्ञा। [**प्रस्थान**]

वासवदत्ता मगध से सन्देश आया है, तब तो वह आवश्यक सन्देश होगा।

उदयन तुम्हारा कथन सत्य है, महादेवी !

[कंचुकी का प्रवेश]

कंचुकी . महाराज की जय ! सेवा मे यह निवेदन प्रस्तुत करना चाहता हूँ कि

महाराज दर्शक ने आपसे आग्रहपूर्वक यह कहला भेजा है कि अरुणि पर आक्रमण करने के लिए सेनाध्यक्ष रुमण्वान् ने एक विशाल सेना एकत्र कर ली है। साथ मे मेरी मगध की सेना भी सुसज्जित है। हमारे शत्रु परस्पर द्वेषाग्नि मे दग्ध हो रहे है, उनमे फूट पड गई है। यही सबसे अधिक उपयुक्त समय है, जब उन पर आक्रमण किया जा सकता है। हमारी सेनाएँ गगा के उस पार पहुँच गई है, आपके नेतृत्व की प्रतीक्षा है। आप शीघ्र ही सैन्य-सचालन करे।

उदयन · कचुकी ! महाराज दर्शक की आज्ञा शिरोधार्य है। तुम शीघ्र ही उन्हे समाचार दो कि मैं दुष्ट अरुणि पर आक्रमण करने के लिए उद्यत हूँ। तुम जाओ, मै शीघ्र ही आऊँगा।

कंचुकी जो आज्ञा महाराज ! **[प्रस्थान]**

उदयन . महादेवी ! इस समय हस्तिस्कन्ध वीणा की कला नही, कृपाण मेरा आह्वान कर रहा है। मेरे जाने मे तुम्हारी स्वीकृति है ?

वासवदत्ता . महाराज की कला और कृपाण अमर हो !

[यवनिका]

2

⌖ रात का रहस्य ⌖

•

पात्र-परिचय

बिम्बसार—मगध के भूतपूर्व सम्राट्
वासवी—बिम्बसार की बड़ी रानी
अजातशत्रु (कुणीक)—बिम्बसार का पुत्र और मगध का सम्राट्
समुद्रदत्त—अजातशत्रु के आचार्य देवदत्त का सहायक और शिष्य
उग्रजित्—सैनिक
भद्रजित्—वधिक

•

स्थान—मगध
काल—ई० पू० 548
समय—रात्रि का दूसरा पहर

रात का रहस्य

स्थिति—बिम्बसार ने सिंहासन त्याग दिया है। वैशाली राजवंश की लिच्छिवि कुमारी बिम्बसार की छोटी रानी है। उसने बुद्धदेव के विद्रोही चचेरे-भाई देवदत्त के परामर्श से अपने पुत्र अजातशत्रु को अपने पति के जीवन-काल मे ही सिंहासन पर अधिकार कर लेने की शिक्षा दी। देवदत्त और छलना की नीति ने अजातशत्रु को विद्रोही और उद्दण्ड बना दिया। इसी गृह-कलह और आतरिक संघर्ष को मिटाने के लिए बिम्बसार ने सिंहासन त्याग दिया और वे वासवी के साथ एक कुटी मे निवास करने लगे हैं। राजशक्ति के प्रलोभन से अजातशत्रु अपने पिता को सन्देह की दृष्टि से देखता है और इसीलिए उसने अपने पिता की कुटी पर नियंत्रण लगा दिया है। नियत्रण के साथ-साथ उसने उनका भोजन भी बन्द कर दिया है।

[इस समय बिम्बसार और वासवी कुटी मे हैं। बिम्बसार लेटे हैं और वासवी उनके समीप बैठी है। बिम्बसार को निराश दृष्टि से देखती हुई कहती है]

वासवी . आर्यपुत्र ! भोजन आज भी नही आया।

बिम्बसार (पर्राये स्वर से) आज भी नही आया ?

वासवी : नही, प्रात काल से प्रतीक्षा कर रही हूँ, पर शून्य-दृष्टि द्वार तक जाकर लौट आती है।

बिम्बसार प्रतीक्षा मत करो, देवी ! अजात का शासन यदि हमारे भूखे रहने से ही सुदृढ होता है, तो देवी, हमारी भूख मे ही हमारा निर्वाण है। हम भोजन की कामना नही करेगे।

वासवी न करे, किन्तु मै कैसे यह सहन करूँ कि आर्यपुत्र, जो कुछ समय पूर्व मगध के सम्राट् थे, आज सामान्य भोजन के भी अधिकारी नही समझे गये ! मगध-सम्राट् के भाग्य मे आज साधारण अन्न के दाने भी नही है ! (सिसकी) आज चार दिन हो गये और नियन्त्रण मे रखे गये मगध-सम्राट् के लिए मिट्टी के पात्र मे रखा हुआ रूखा-सूखा भोजन भी नही है। यह कैसा शासन है जिसमे पिता की भूख ही पुत्र की राज्यश्री का प्रतीक है ? आज आर्यपुत्र को साधारण

पुरुष की भाँति अपनी भूख बुझाने का भी अधिकार नही है ? (**सिसकियाँ**)

बिम्बसार शान्त, शान्त, वासवी ! इन आँसुओ से मेरे धैर्य की शिला को बहाने का प्रयत्न न करो। बिम्बसार इतना निर्बल नही है कि वह बीते हुए राज्य-वैभव की स्मृति मे अपने वन्दी-जीवन की वास्तविकता भूल जाय। वन्दी जीवन ऐसा ही होता है। सम्राट् की दृष्टि ही उसके भविष्य की दिशा है, फिर वह सम्राट् चाहे अपना पुत्र ही क्यो न हो ! आज मेरा कुणीक मगध का सम्राट् है। वह चाहता है कि हम वन्दी हो, तो हम वन्दी है। वह चाहता है कि हम भूख से मरण को प्राप्त हो, तो हम भूख से मरण को प्राप्त होगे, किन्तु हम तडपेगे नही, देवी ! हम प्रलय की आँधी मे उडेगे, पर हमारी आँखो से आँसू नही गिरेगे, क्योकि हम मनुष्य है जिसकी सत्ता सर्वोपरि है। सुख और दु ख दोनो हम समान रूप से भोग सकते है। भूख से हम मूर्च्छित होगे, लेकिन हम यह नही कहेंगे कि हमे भोजन दो। भोजन देनेवाले की इच्छा ही सत्य है। हमारी इच्छा कुछ महत्त्व नही रखती, देवी !

वासवी · आर्यपुत्र ! मैं भी स्वाभिमान रखती हूँ, यह समस्त मगध की प्रजा जानती है और इसीलिए मैं यह सहन नही कर सकती कि पुत्र इतना अभिमानी बने कि वह राज्य के लोभ से पिता को सिहासन से हटाकर वन्दी-गृह मे डाल दे और स्वय सम्राट् बन जाय।

बिम्बसार वासवी ! तुम महादेवी थी, किन्तु तुम राजमाता नही थीं। राजमाता लिच्छिवि कुमारी से पूछो कि सिंहासन प्राप्त करना प्रत्येक युग का आदर्श है या नही ? और फिर सिंहासन-त्याग मैंने स्वय किया। तथागत की यही इच्छा थी कि मैं सासारिक वैभवो से विरक्त होकर विश्राम लूं। फिर गृह-विवाद और आन्तरिक सघर्षो से मगध को बचाना भी तो मेरा धर्म था। मैने सिंहासन-त्याग किया। और कुणीक बडा हुआ, उसे भी तो उसका अधिकार मिलना चाहिए।

वासवी आपने मगध के लिए इतना त्याग किया, किन्तु क्या कुणीक और कुणीक की माता लिच्छिवि कुमारी ने इस त्याग की सराहना की ?

बिम्बसार देवी ! त्याग यदि घुटनो के बल बैठकर सराहना की भिक्षा माँगे तो क्या उसे हम त्याग कह सकते है ? मेरे त्याग को सराहना की अभिलाषा नही रही। वह मगध के प्रति मेरा कर्तव्य था जिसे मैंने पूरा किया। कर्तव्य और प्रशसा का सगम होना कर्तव्य के लिए अभिनन्दनीय नही है।

वासवी किन्तु, आर्यपुत्र ! आपके कर्तव्य का यह पुरस्कार भी तो नही है कि आपकी स्वतन्त्रता का अपहरण हो और आपका निवास-स्थान वन्दीगृह मे परिवर्तित कर दिया जावे।

बिम्बसार यह हमारा दुर्भाग्य है कि कुणीक पर हमारा प्रभाव नही रह सका। कुणीक अपनी माता लिच्छिवि कुमारी की छाया मे पोषित हुआ और देवदत्त की कूटनीति मे उसे गति मिली। तथागत की प्रतिद्वन्द्विता मे देवदत्त जिस प्रति-

हिंसा से प्रेरित हुआ है वही प्रतिहिंसा कुणीक के हृदय मे भी जाग उठी है और तथागत के प्रति मेरी श्रद्धा ही कदाचित् मेरे बन्दी-जीवन का रहस्य है।

वासवी हो सकता है, आर्यपुत्र ! किन्तु मै उस प्रतिहिंसा को क्या कहूँ जिसमे पुत्र अपने पिता के वात्सल्य को भूलकर उसे बन्दी बना दे और मनुष्यता की सारी मर्यादाओ को तोड दे।

बिम्बसार यह मनुष्यता की बात नही है, देवी ! यह सम्राट् की बात है, सम्राट् की ! अहंकार के अभिशाप ही का नाम तो सम्राट् है, जैसे फूलो के चारो ओर काँटो की बेल हो। यह महत्वाकाक्षा की बेल है, अमर-बेल है, जो बडे-से-बडे राज्य पर चढ जाती है और अपने बोझ से—अपनी सहस्र-सहस्र शाखाओ के बोझ से—राज्य को दबा देती है। राज्य का रस चूसकर लहलहाती है, बोझिल बन जाती है और राज्य को, राज्य को .

[**खाँसी आ जाती है।**]

वासवी विश्राम करे, आर्यपुत्र ! आप बहुत दुर्बल हो गये है, यह जल ही ग्रहण कीजिए।

[**पात्र से जल भरकर देती है।**]

बिम्बसार (**जल पीकर**) यही मेरे लिए अमृत है। इसे पीकर मै जीवन के अन्तिम क्षण तक जागता रहूँगा। हाँ, तुम शयन करो ! रात्रि का दूसरा पहर बीत रहा है। नक्षत्र ऊपर उठ चुके है। (**हँसकर**) ये हमारे भाग्य के नक्षत्र नही है। मेरे पुत्र के शासन मे मगध का भाग्य-नक्षत्र ऊपर उठे, यही मेरी कामना है।

वासवी इसी कामना के साथ आप शयन करे।

बिम्बसार शयन नही कर सकूँगा, देवी ! मेरे मस्तिष्क मे प्रलय की आँधी है, जिसमे मेरे जीवन के शेष क्षण सूखे पत्ते की भाँति दिशा-शून्य होकर बिखर रहे है, उन्हे रोकने की चेष्टा न करो। उन्हे रोकोगी तो वे चूर-चूर हो जायेगे और उन्हे चूर-चूर करने से मगध मे धूल की मात्रा और भी बढ जायगी। मै नही चाहता कि हमारा मगध धूल से अधिक धूमिल बने।

[**पास ही किसी नारी का भयानक चीत्कार। 'हाय, मेरे लाल को बचा लो ! मेरे लाल को बचा लो ! मै भी मर जाऊँगी, मेरे लाल को बचा लो ! कोई ! कोई तो मेरे लाल को बचा लो !'**]

वासवी (**करुण स्वर से**) किसी नारी का करुण चीत्कार है, आर्यपुत्र ! मै बाहर देखती हूँ, कौन-सी दु खिनी नारी इतने अन्धकार मे इस भाँति भटकती फिर रही है।

[**शीघ्रता से बाहर जाती है।**]

बिम्बसार (**अपने-आप**) अन्धकार ! मेरे भाग्य मे समाया हुआ अन्धकार आज इतने घने रूप मे ससार मे भी समा रहा है। इस अन्धकार का क्या रहस्य है ? यह अन्धकार मेरे ही भाग्य मे रहता तो अच्छा था। मेरे भाग्य ! क्या तुझमे

पर्याप्त स्थान नही है कि तू सारे ससार के अन्धकार को समेट ले ? उसे आकाश की शरण मे जाने का अवसर क्यो देता है ? मेरी भाँति तू भी शरणागत वत्सल बन, जिससे अन्धकार को और अन्धकार के भीतर किसी नारी को भटकने की आवश्यकता न पडे ।

[नारी की सिसकियाँ अत्यन्त समीप आ जाती है ।]

[वासवी का प्रवेश]

वासवी आर्यपुत्र ! एक अत्यन्त दु खिनी नारी है जो अपनी कुटी के उपवन मे से होकर जा रही थी। मै द्वार पर नियुक्त रक्षक की स्वीकृति से उसे बुला लाई हूँ ।

बिम्बसार किन्तु हम उसके कष्टो का निवारण कैसे कर सकते है, देवी ! उसके अपराधी को दण्ड किस प्रकार दे सकेगे ? आज हम सम्राट् नही है । कहाँ है वह स्त्री ?

वासवी वह यहाँ आ गयी है । **(नेपथ्य की ओर देखकर)** आओ बहन !

[अस्त-व्यस्त वेश मे एक स्त्री का प्रवेश]

बिम्बसार **(उठकर, स्त्री से)** भद्रे, तुम कौन हो, तुम्हे क्या दु ख है ?

[स्त्री फूट-फूटकर सिसकियाँ लेने लगती है ।]

वासवी . बोलो बहन, तुम्हे कौन-सा दु ख है ?

स्त्री **(सिसकियाँ लेती हुई)** मेरे लाल को बचाओ, देवी ! मेरे लाल को बचाओ ! मै बडी अभागिन नारी हूँ, मेरे लाल को बचा लो !

वासवी **(सहानुभूतिपूर्वक)** तुम्हारे लाल को ? कहाँ है वह ? उसे क्या कष्ट है ?

स्त्री देवी ! चार दिनो से उसके मुँह मे अन्न का दाना भी नही गया । वह भूख से छटपटा रहा है । उसके प्राण बचा लो । **(बिम्बसार से)** मेरा लाल भूख की ज्वाला मे जल रहा है । वह नन्हा-सा सुकुमार बच्चा है । अधिक दिनो तक भूख की ज्वाला नही सह सकेगा ! उसे बचाइये, महाराज !

बिम्बसार **(सन्तोष देते हुए)** मगध मे अन्न की कमी नही है, देवी ! तुम कही से भी अन्न प्राप्त कर सकती हो, जिसे हम नही प्राप्त कर सकते । उससे तुम अपने बच्चे के प्राण बचा सकती हो ।

स्त्री यह सम्भव नही है, महाराज ! राजसत्ता ने मेरा घर-द्वार सब छीन लिया । मै अनाथ हूँ, महाराज ! मुझे अन्न कही नही मिल रहा है । मै द्वार-द्वार जाकर भीख माँग चुकी । किसी ने मुझे एक मुट्ठी भी अनाज नही दिया । **(सिसकियाँ)**

बिम्बसार मगध की प्रजा इतनी हृदयहीन नही है, देवी !

स्त्री हृदयहीन नही है, महाराज ! किन्तु सम्राट् ने आज्ञा दे दी है कि जो मुझे एक मुट्ठी भी अन्न देगा, उसे बडा कठोर दण्ड दिया जायगा ।

बिम्बसार क्यो ? उन्होने इस प्रकार की आज्ञा क्यो दी ?

स्त्री महाराज ! मै तथागत का उपदेश सुनने के लिए उनके सघ मे चली गयी

था। सम्राट् के गुप्तचरो ने जानेवाले व्यक्तियो की सूचना सम्राट् को दे दी। वही आचार्य देवदत्त बैठे थे। उन्होने कहा कि जो गौतम के सघ मे गया है उसका घर-द्वार और सम्पत्ति छीन लो। उसे एक मुट्ठी-भर अन्न न दो। सम्राट् ने मेरे लिए भी इसी दण्ड की घोषणा कर दी। मुझे मरने का भय नही है, किन्तु मेरा तीन वर्ष का अनाथ बच्चा बिना अन्न के एक दिन भी जीवित नही रह सकेगा। मुझे थोडा-सा अन्न चाहिए, महाराज ! मेरे लाल के जीवन के लिए मुझे कुछ अन्न दे दीजिए।

बिम्बसार (क्षुब्ध होकर) अन्न ! अन्न ! अन्न ! मगध के सम्राट् ने अन्न को कितना महत्त्व दे दिया है। (गहरी साँस लेकर) भद्रे ! मै किस प्रकार कहूँ, मै तुम्हारी सहायता नही कर सकता।

वासवी बहन, जिस लाल को बचाने के लिए तुम हाहाकार कर रही हो, वह बडा होने पर तुम्हे बन्दीगृह मे भी तो डाल सकता है ?

बिम्बसार व्यग्य मत करो, इस समय माँ के सामने उसके पुत्र की प्राण-रक्षा का प्रश्न है।

वासवी क्षमा करे, आर्यपुत्र ! जीवन की विषमता हृदय को स्थिर नही होने देती। बहन ! तुम भी बुरा न मानना। मै इस समय जीवन के बहुत बडे सकट मे हूँ। तुम्हारी क्या सहायता करूँ ? अन्न को छोडकर जो कुछ भी हमारे पास है, तुम्हारा है।

स्त्री और कुछ लेकर क्या करूँगी, देवी ! मेरे बच्चे को अन्न के अतिरिक्त और कुछ नही चाहिए। वह उठ-बैठ भी नही सकता। उसकी साँस वेग से चलने लगी है, आँखे ऊपर की ओर खिच गई है। उसके मुँह से 'माँ' और 'भूख' यही दो शब्द निकलते है। हाय, मेरा लाल, (सिसकियाँ) मुझे छोडकर जा रहा है ! मै अपने लाल के मुँह मे अन्न के दो दाने भी नही डाल सकती। देवी ! मै माँ नही हूँ, माँ नही हूँ, राक्षसी हूँ, पिशाचिनी हूँ। अपने लाल को मारकर ही रहूँगी। अपने लाल का जीवन लेकर ही रहूँगी। (सिसकियाँ) मेरा लाल ! हाय, मेरा लाल !

बिम्बसार देवी ! यदि ऐसा ही है तो सम्राट् की निरकुशता की वेदी पर एक बलि और होने दो। आज मुझे अपने अधिकार का ध्यान हो आता है। जब मेरे हाथ मे शासन था, भगवती अन्नपूर्णा प्रत्येक नागरिक की माता थी। जिस भोजन से हमने सहस्रो बार मगध की प्रजा को सतुष्ट किया, वही भोजन आज हमारे पास नही है। इससे अधिक मुझे क्या कष्ट हो सकता है, भद्रे !

स्त्री (सिसकियाँ रोककर) महाराज ! मुझे क्षमा कीजिए। मैंने आपको कष्ट दिया। मै अपने लाल को तडप-तडपकर ही मर जाने दूँगी।

वासवी नही, बहन ! तुम्हारा लाल तडप-तडपकर नही मरेगा। मै तुम्हारे लिए—तुम्हारे लाल के लिए—भिक्षा माँगूँगी। जो कार्य मैंने जीवन मे कभी

नही किया, वह तुम्हारे लाल के लिए करूँगी। मै आर्यपुत्र के भोजन के लिए भिक्षा नही मॉग सकी, पर तुम्हारे लाल के लिए भिक्षा माँगूंगी।

बिम्बसार वासवी ! तुम मानवी नही देवी हो। अपने पति के आत्म-सम्मान के लिए तुमने भिक्षा नही माँगी। इस स्त्री के लाल के लिए भिक्षा माँगो, किन्तु क्या मगध की राज-सत्ता तुम्हे भिक्षा मॉगने देगी ? क्या तुम इस आश्रम मे भी स्वतत्र रखी गई हो ? देवी वासवी ! अन्न न सही, इसे और ही कुछ दे दो।

वासवी आर्यपुत्र ! अब हमारे पास शेष क्या है ? मेरे हाथो मे यही एक स्वर्ण-ककरण है। (**स्त्री से**) देवी ! यह स्वर्ण-ककरण लो और किसी को देकर अपने लाल के लिए अन्न प्राप्त करो।

स्त्री देवी ! मै यह स्वर्ण-ककरण कैसे लूं ? इसे कहाॅ ले जाऊँगी ? इसे देखकर मगध के किसी भी व्यक्ति को पता लग जायगा कि यह महादेवी वासवी का स्वर्ण-ककरण है। राजसत्ता भी सतर्क है, और फल यह होगा कि दूसरे ही क्षण राजसत्ता आपको निमत्रित करेगी कि वह आपको दण्ड दे। (**बिम्बसार से**) मै अपने लाल की रक्षा मे महाराज को दण्ड का भागी नही बनाऊँगी।

बिम्बसार इसकी चिन्ता न करो, भद्रे ! पहले अपने लाल के प्राणो की रक्षा करो। हम राजदण्ड सहन कर लेगे। हमारी वर्तमान स्थिति से भयानक राजदण्ड की यत्रणा न होगी।

स्त्री सत्य है, देव ! किन्तु महारानी !

बिम्बसार (**बीच मे ही**) वे मगध की महारानी नही है, भद्रे ! यह भयानक शब्द न कहो। मैं मगध के वृद्ध नागरिक के रूप मे यह आदेश देना हूँ कि अपने लाल की जीवन-रक्षा के लिए यह स्वर्ण-ककरण स्वीकार करो। इसे बेचकर अन्न प्राप्त करो। जाओ, अब इस कष्ट को हम अधिक सहन नही कर सकेगे। आज सागर सूख गया है, उसमे जल का एक करण भी शेष नही है। हम तुम्हे खारे जल की एक बूंद भी नही दे सके। आज हमारी सहानुभूति अमावस के उस चन्द्र की भॉति है जिसमे प्रकाश की एक कला भी शेष नही रह गई है।

स्त्री (**द्रवित होकर**) महाराज, आपकी यह दशा ।

वासवी लो, यह स्वर्ण-ककरण। इससे अपने लाल की प्राण-रक्षा करो। इसमे जडे हुए रत्नो का प्रकाश तुम्हारे लाल के जीवन का प्रकाश बने।

स्त्री मैं कृतार्थ हुई, देवी ! (**बिम्बसार से**) मैं कृतार्थ हुई, महाराज ! प्रणाम ! (**वासवी से**) देवी ! प्रणाम !

वासवी चलो, मैं तुम्हे द्वार तक पहुँचा दूं, जिससे तुम्हे रक्षको से मुक्ति मिले।

[**स्त्री के साथ वासवी का प्रस्थान**]

बिम्बसार चली गई। बेचारी स्त्री ! माता बनकर और भी कितनी करुण हो जाती है। अपने पुत्र के जीवन की आशका से कितनी व्यथित है वह। देवी वासवी

कहती है कि इसमे जडे हुए रत्नो का प्रकाश तुम्हारे लाल के जीवन का प्रकाश बने। जीवन का प्रकाश ! मेरा लाल भी एक रत्न था। कुणीक ! अजातशत्रु ! जिसमे जीवन का प्रकाश था, किन्तु मै नही जानता था कि वह रत्न वज्र की भाँति कठोर होगा ! उसमे कान्ति होगी किन्तु सरलता नही, सौन्दर्य होगा किन्तु सौभाग्य नही। मेरा ही रत्न मेरी दरिद्रता का अग्रदूत होगा, यह मै नही जानता था। दरिद्रता जो आज मगध मे पुरस्कार की भाँति वितरित की जा रही है। दरिद्रता ! अन्न का अभाव ! फूल से भी कोमल लाल अन्न के अभाव मे तडपकर प्राण त्याग रहे है। **(उग्रता से)** बिम्बसार ! तू विद्रोह कर। यह मानवता का सबसे बडा अभिशाप है। आज भूख से एक शिशु की हत्या हो रही है, कल शत-शत मानवता के कुसुम इसी ज्वाला मे झुलस-झुलसकर नष्ट होगे। विद्रोह कर ! विद्रोह कर ! जीवित रहने का अधिकार सभी प्राणियो को समान रूप से है। मनुष्य के जीवन के लिए तू विद्रोह कर ! **(शान्त होकर सोचते हुए)** पर तथागत ! तुम कहते हो कि सभी प्राणियो पर समदृष्टि रखो, यदि विश्व मे किसी अस्त्र का प्रयोग हो सकता है तो वह करुणा ही है। करुणा से ही विश्व-मैत्री सम्भव है। तथागत ! फिर मै क्या करूँ ? मै भूल रहा हूँ ! मै भूल रहा हूँ ! मुझे प्रकाश दो, तथागत ! मुझे प्रकाश दो ! मै अन्धकार मे खो रहा हूँ रात के रहस्य मे......!

[वासवी का प्रवेश]

वासवी आर्यपुत्र ! रात्रि के अन्धकार मे वह स्त्री विलीन हो गयी। मैने उसका नाम जानने की चेष्टा की, किन्तु वह नाम बतलाये बिना ही चली गई। मुझे इसमे कुछ रहस्य ज्ञात होता है, आर्यपुत्र !

बिम्बसार चिन्ता न करो देवी ! यह सृष्टि ही रहस्यमय है। तारो को देखो, कितने उज्ज्वल दिखाई देते है, किन्तु वे अपना कितना सत्य हम पर प्रकट करते है ? विस्तृत आकाश मे उदित होकर रात-भर चमकते है और प्रात काल अपना रहस्य अपने साथ लिए हुए अस्त हो जाते है। सारी सृष्टि प्रवचनामयी है। यदि उस स्त्री का लाल भूख से मरता भी न हो तो शिशु को बचाने की हमारी भावना ही अभिनन्दनीय है। तुमने अपना कर्तव्य किया। उससे अधिक सन्तोष और क्या हो सकता है ?

वासवी किन्तु आर्यपुत्र ! इस सन्तोष मे भी न जाने कहाँ का दुर्भाग्य झाँक रहा है, और हम यह भी नही जानते कि उस दुर्भाग्य की सीमा कितनी है।

बिम्बसार मै जानता हूँ, देवी, कि उस दुर्भाग्य की सीमा कितनी है क्योकि वह दुर्भाग्य अपने पुत्र के द्वारा दी गई सम्पत्ति है। मेरे पुत्र ने—मेरे ही हृदय के टुकडे ने—मुझे विपत्ति का यह कोष दिया है, देवी !

वासवी आर्यपुत्र .. !

बिम्बसार - विपत्ति का यह कोप। मेरे शासन-काल मे ये विपत्तियाँ नही थी। अब

कुणीक के सकेत से उभरकर मेरे द्वार पर आ गयी है और बदला लेने की प्रतिहिंसा मे मेरे जीवन मे विष के बीज बो रही है। मगध की साधारण प्रजा भी—नारी भी—उन विष के बीजो पर कपट का जल सींच सकती है।

वासवी सत्य, आर्यपुत्र! द्वार पर पहुँचते ही उस स्त्री ने रक्षको को कुछ सकेत किया। मैंने धुँधले प्रकाश मे भी देख लिया कि उस स्त्री ने एक रहस्यमय ढग से हाथ उठाया और तभी रक्षको के ओठो पर एक हल्की-सी हँसी चमक उठी। वह स्त्री छद्मवेशिनी ज्ञात होती है। उसने कोई जाल तो नही रचा?

बिम्बसार छोडो इन बातो को, देवी! इस सम्बन्ध मे सोचना व्यर्थ है, विशेपकर जब हम भोजन न मिलने से प्रतिदिन मृत्यु के द्वार पर पहुँच रहे है। पर मुझे आश्चर्य है, देवी, कि तुम इतनी सुकुमार होकर भी किस प्रकार भूख से युद्व कर रही हो? इतने कप्ट पाने पर भी तुम्हे अपने सम्बन्ध मे चिंता नही है?

वासवी आर्यपुत्र! आप इस सम्बन्ध मे कुछ न सोचे, आपकी चिंता मे भूलकर मुझे अपनी चिंता के लिए अवकाश ही नही रह जाता। मै तो यही सोच लेती हूँ कि यदि हमारे भाग्य मे क्षुधा ही से प्राणान्त होना लिखा है तो वह हम प्रसन्नतापूर्वक स्वीकार करेगे।

बिम्बसार मुझे यह सुनकर सन्तोप है, देवी!

वासवी अब आप शान्ति से शयन करे।

[एकाएक खडखडाहट के साथ समुद्रदत्त और एक सैनिक का प्रवेश]

समुद्रदत्त महाराज और महारानी की सेवा मे प्रणाम!

बिम्बसार . यह सम्बोधन हमे नही चाहिए। कौन है जो इन दुर्दिनो मे हमारा परिहास कर रहा है?

समुद्रदत्त मै हूँ, आचार्य देवदत्त का सहायक समुद्रदत्त। **(सैनिक से)** सैनिक उग्रजित्, तुम द्वार पर ही रहो! आवश्यकता होने पर तुम बुलाये जाओगे।

उग्रजित् जो आज्ञा। **[प्रस्थान]**

बिम्बसार आचार्य देवदत्त के सहायक समुद्रदत्त को इस कुटी मे आने की आवश्यकता क्यो पडी?

समुद्रदत्त आचार्य देवदत्त की आज्ञा, श्रीमन्!

बिम्बसार बिम्बसार के जीवन को अब भी आज्ञाओ के अनुसार चलना है? क्या उन आज्ञाओ का अन्त कभी न होगा? इस निकृष्ट दशा मे डालने के उपरान्त अब किस आज्ञा का अकुश बिम्बसार के मस्तक पर है?

समुद्रदत्त क्षमा करे, श्रीमान् एक अभियोग के भागी हैं।

वासवी (चौककर) अभियोग? कैसा अभियोग?

समुद्रदत्त हाँ, देवी! एक दारुण अभियोग है।

बिम्बसार राजसिंहासन से दूर होकर एक कुटी मे निवास करते हुए, प्रात काल के एक तारे की भाँति निष्प्रभ होते हुए, बिम्बसार किस अभियोग का भागी हो सकता है ?

वासवी जिस सम्राट् ने अपने जीवन-भर अभियोगो का निर्णय कर अपराधियो को दण्ड दिया है, वह अभियोग का भागी किस प्रकार होगा ?

समुद्रदत्त देवी ! इस अभियोग मे आप भी सम्मिलित है।

वासवी मै भी सम्मिलित हूँ ? हो सकता है। यदि आर्यपुत्र अभियोग के भागी है तो वामाँग भी भागी होगा।

समुद्रदत्त **(बिम्बसार से)** क्षमा करे, श्रीमन् ! मेरे पास अधिक समय नही है। इस समय अभियोग सिद्ध करने का उत्तरदायित्व मुझ पर है। अभियोग यह है कि आपने राजाज्ञा की अवहेलना की है।

बिम्बसार राजाज्ञा की अवहेलना ? स्पष्ट करो, समुद्रदत्त ! मैने कौन-सी राजाज्ञा की अवहेलना की है ?

वासवी यदि बिना भोजन के जीवित रहना राजाज्ञा की अवहेलना है तो हम अवश्य ही अपराधी है, समुद्रदत्त !

समुद्रदत्त क्षमा करे, देवी ! राजनीति मे व्यग्य के लिए स्थान नही है। अभी एक स्त्री आप की कुटी मे आई थी ?

वासवी हाँ, बेचारी अशान्त और दु खिनी थी। उसका लाल भूख से तडप-तडपकर मरने को था।

समुद्रदत्त आपकी सेवा मे मै यह निवेदन कर देना चाहता हूँ कि वह स्त्री राजसत्ता से दण्डित है। आचार्य देवदत्त का आदेश है कि उसे भिक्षा मे एक मुट्ठी अन्न भी कोई नही दे सकता। यदि उसकी कोई सहायता करेगा तो राजाज्ञा की अवहेलना करेगा और राजसत्ता उसे अपराधी मानकर दण्ड देगी, चाहे वह मगध का सम्राट् ही क्यो न हो।

बिम्बसार : इसकी सूचना मुझे है। उस स्त्री ने ही हमे इस राजाज्ञा की सूचना दी थी।

समुद्रदत्त : तब भी देवी वासवी ने उसकी सहायता करने के लिए उसे अपने हाथो का स्वर्ण-ककरण दिया। आपकी कुटी के बाहर वह स्वर्ण-ककरण के साथ पाई गई।

वासवी : क्या आप कुटी के बाहर उसकी प्रतीक्षा कर रहे थे ?

समुद्रदत्त : देवी ! अपराधियो के पीछे राजसत्ता की दृष्टि सदैव ही रहती है। किसी भी क्षरण हम अपराधियो के कार्यो का लेखा दे सकते है।

वासवी : यह ठीक है, परन्तु मुझे इसमे कुटिलता की गन्ध मिल रही है। जान-बूझकर हमे अभियोग मे फँसाने की चेष्टा ज्ञात होती है। वह स्त्री रात्रि के अन्धकार मे हमारे उपवन मे से होकर निकले, क्रन्दन कर हमारी करुणा को उत्तेजित करे, हम उसकी सहायता करे, और वह स्त्री रक्षको को रहस्यमय

सकेत कर इसकी सूचना समुद्रदत्त को दे और हम इस दड के भागी बन जाएँ। यह देवदत्त की क्षुद्रता है। क्या कुटिलता ही मगध राष्ट्र की राजनीति है ?

समुद्रदत्त : यह राजद्रोह है, देवी ! और राजद्रोह का दण्ड प्राणदण्ड है।

विम्बसार . चुप रहो, समुद्रदत्त ! मैंने सिहासन छोड दिया है, किन्तु उसका यह तात्पर्य नही है कि राज्य के साधारण सेवक भी हमसे स्वेच्छापूर्वक व्यवहार कर सके। तुम अपना कर्तव्य कर सकते हो किन्तु हममे से किसी का भी अपमान नही कर सकते। अधिक-से-अधिक अभियोग स्पष्ट कर हमे दण्ड की सूचना दे सकते हो।

समुद्रदत्त : आचार्य देवदत्त का आदेश है कि राजाज्ञा के विरुद्ध उस नारी को सहायता करने के कारण श्रीमान् विम्बसार और देवी वासवी राजद्रोह के अपराधी है।

विम्बसार : और राजद्रोह का दण्ड प्राणदण्ड है।

समुद्रदत्त : हाँ, महाराज !

विम्बसार : 'महाराज' शब्द का सम्बोधन मत करो। यदि हमने राजद्रोह किया है तो तुम हमे प्राणदण्ड दे सकते हो।

समुद्रदत्त : आचार्य देवदत्त की ऐसी ही आज्ञा हुई है।

वासवी : अभी-अभी यह नारी कुटी के बाहर गयी है। इतने थोडे समय मे हमारे अभियोग की सूचना देवदत्त के पास पहुँच गयी और उन्होने दण्ड की आज्ञा भी दे दी ? यह सचमुच एक विचित्र घटना है।

समुद्रदत्त · **(राजाज्ञा-पत्र निकालकर)** आचार्य देवदत्त की दण्ड-घोषणा का राज-पत्र है।

विम्बसार . **(देखकर विचारते हुए)** हूँ, अब मेरे मन मे विश्वास हो गया कि यह एक पूर्व-निश्चित अभिसन्धि ही है। बुद्धदेव की प्रतिष्ठा देवदत्त को सहन नही हो सकती। और जब तक मै जीवित हूँ, तब तक बुद्धदेव की अप्रतिष्ठा कभी नही होगी। इसलिए बुद्धदेव को गिराने के लिए मेरी मृत्यु की आवश्यकता है। क्यो समुद्रदत्त ! वह नारी देवदत्त के द्वारा ही भेजी गयी थी ?

समुद्रदत्त : मै इस प्रश्न का उत्तर देने लिए बाध्य नही हूँ, श्रीमन् !

विम्बसार : ठीक है, वह नारी देवदत्त के द्वारा ही भेजी गयी थी। **(वासवी से)** देवी ! तुम्हारा अनुमान सत्य है। अपराध की कल्पना पहले ही कर ली गयी थी। नारी से अभिनय कराया गया। वह सघ मे गयी। उसकी सम्पत्ति का अपहरण किया गया। राज्य की घोषणा हुई कि उसकी सहायता कोई न करे। उसका बच्चा चार दिनो से भूखा बना। यह मेरे चार दिनो के उपवास का व्यग्य था।

वासवी : सत्य है, आर्यपुत्र !

बिम्बसार : उसकी करुणा से हम द्रवित हो जाएँ, उसकी सहायता करे और इस प्रकार राजदड के भागी बने। देवदत्त ने यह विचार कर राजदण्ड का आज्ञा-पत्र

पहले से ही समुद्रदत्त को दे दिया और नारी ने अन्धकार मे विलीन होकर प्रतीक्षा करने हुए समुद्रदत्त को अपनी कुटिल योजना की सफलता की सूचना भी दे दी। बोलो, समुद्रदत्त ! यह ठीक है ?

समुद्रदत्त : (**हतप्रभ होकर**) आप स्वय सम्राट् रह चुके है, महाराज ! आप सत्य अनुमान कर सकते है, किन्तु मै तो आज्ञाकारी सेवक हूँ। मुझे राजाज्ञा का पालन करना ही होगा।

बिम्बसार : तो राजाज्ञा का पालन करो। देवदत्त के अनुसार हमने राज्य के प्रति अपराध किया है। उस अपराध का दण्ड है—प्राणदण्ड। तुम वधिक को अपने साथ लाये हो ?

समुद्रदत्त : हाँ, महाराज ! भद्रजित् मेरे साथ आया है, वह द्वार पर है।

बिम्बसार : तो उसे बुलाओ और मेरे वध की आज्ञा दो। बिना भोजन के मै यो ही मृत्यु की ओर अग्रसर हो रहा हूँ। यह प्राणदण्ड मेरी भूख की यत्रणाओ को सदैव के लिए समाप्त कर देगा। कहाँ है भद्रजित् ? उसे यहाँ आने की आज्ञा दो।

वासवी : (**आगे बढकर**) पहले प्राणदण्ड मुझे मिलना चाहिए, क्योकि मैने ही अपना स्वर्ण-ककण उतारकर उस नारी को दिया था।

बिम्बसार : देवी, स्वर्ण-ककण उतारकर देने का आदेश तो मेरा था।

वासवी : नही, आर्यपुत्र ! आदेश मे अभियोग की पूर्ति नही है, क्रिया-निर्वाह मे अभियोग की पूर्ति है और फिर मैं अपनी आँखो से यह जघण्य कार्य होते नही देख सकूँगी। समुद्रदत्त ! अपराध मेरा है, मुझे प्राणदण्ड पहले मिलना चाहिए।

बिम्बसार (**समुद्रदत्त से**) समुद्रदत्त ! इस दण्ड की सूचना राज्य-परिषद् को है ?

समुद्रदत्त : आचार्य देवदत्त के निर्णय की मान्यता सर्वप्रथम है। राज्य-परिषद् के सभ्यो को वे अपने कार्य के औचित्य से सतुष्ट कर सकते है।

बिम्बसार : और मगध-सम्राट् अजातशत्रु को हमारे प्राणदण्ड की सूचना है ?

समुद्रदत्त : मगध-सम्राट् जो भी कार्य करते है, आचार्य देवदत्त के निर्णयानुसार ही करते हैं। अत इस सम्बन्ध मे मगध-सम्राट् की सहमति का कोई प्रश्न ही नही उठता।

बिम्बसार : मै एक बार मगध-सम्राट् को देख सकता हूँ, समुद्रदत्त !

समुद्रदत्त : श्रीमन्, क्षमा करे। यह असभव है। आचार्य देवदत्त के आज्ञा-पत्र मे इसकी कोई स्वीकृति नही। अन्तिम इच्छा की पूर्ति कर देने की भी स्वीकृति नही है।

वासवी : देवदत्त मानव नही, दानव है।

बिम्बसार : क्रोध न करो, देवी ! हमे राजसत्ता की प्रत्येक आज्ञा मान्य है। (**समुद्रदत्त से**) समुद्रदत्त, कोई चिन्ता की बात नही। बुलाओ बधिक उग्रजित् को। हम मगध-सम्राट् को नही देख सकेगे, कोई हानि नही। मुझे प्राणदण्ड देने

के वाद मेरा यह प्रश्न मगध-सम्राट् के पास भिजवा देना कि पिता की वात्सल्य-धारा का उत्तर रक्तधारा से देकर तुमने किस आदर्श की पूर्ति की है ? अच्छा, अव मैं मरने के लिए प्रस्तुत हूँ। समुद्रदत्त ! तुम अपना कार्य पूरा करो। (**वासवी से**) वासवी ! देवी ! विदा।

वासवी : (चीत्कार करते हुए) यह नही हो सकता ! यह नही हो सकता ! मरने का अधिकार सर्वप्रथम मेरा है।

समुद्रदत्त : (गम्भीरता से) आप चिंतित न हो, देवी ! आचार्य देवदत्त ने इस बात की व्यवस्था भी कर दी है कि आवश्यकता पडने पर आप दोनो को एक साथ ही दण्ड दिया जा सकता है। (**पुकारकर**) उग्रजित् !

[**उग्रजित् का प्रवेश**]

उग्रजित् : आज्ञा, श्रीमन् !

समुद्रदत्त : भद्रजित् को कृपाण सहित यहाँ आने की सूचना सुनाओ !

उग्रजित् जो आज्ञा, श्रीमन् !

वासवी मैं बहुत कृतज्ञ हूँ, समुद्रदत्त !

समुद्रदत्त . इसमे कृतज्ञ होने की बात नही है, देवी ! यह तो राजाज्ञा है। हाँ, आज्ञा देने के पूर्व मैं आचार्य देवदत्त की आज्ञा से आप दोनो को एक आनन्द-सवाद सुना देना चाहता हूँ, जिससे आप अपने जीवन के अन्तिम क्षण मे प्रसन्न हो सके और आनन्द से मर सके। वह आनन्द-सवाद यह है कि.

वासवी . (बीच ही मे टोककर) आर्यपुत्र की कुशलता को छोडकर ससार मे मेरे लिए कोई भी आनन्द-सवाद नही हो सकता।

समुद्रदत्त हो सकता है, देवी ! यह आपके लिए ही नही, समस्त मगध-साम्राज्य के लिए आनन्द का सवाद है।

बिम्बसार तव मैं यह आनन्द-सवाद अवश्य सुनूँगा जिसमे समस्त मगध-साम्राज्य आनन्द का अनुभव कर सकता है। सुनाओ वह आनन्द-सवाद, समुद्रदत्त !

समुद्रदत्त : वह आनन्द-सवाद यह है, वासवी देवी ! आप भी सुनने की कृपा करे !

वासवी : जिसमे आर्यपुत्र की स्वीकृति है वह मुझे सदैव स्वीकार है। सुनाइये, वह आनन्द-सवाद !

समुद्रदत्त : धन्यवाद ! वह आनन्द-सवाद यह है कि ..

[**उग्रजित् का प्रवेश**]

उग्रजित् : श्रीमन्, भद्रजित् कृपाण सहित सेवा मे उपस्थित है।

समुद्रदत्त ठीक है ! उससे कहो कि कुछ क्षण द्वार पर ही रहे। मैं अभी ही उसे भीतर आने का आदेश दूँगा।

उग्रजित् . जो आज्ञा। [**प्रस्थान**]

समुद्रदत्त : अच्छा, तो मैं आप दोनो को आनन्द-सवाद सुनाता हूँ। वह आनन्द-

सवाद यह है कि अजातशत्रु को प्रसेनजित् कौशल-नरेश की कन्या वाजिरा कुमारी से एक पुत्र.

बिम्बसार : (विह्वल होकर बीच ही मे शीघ्रता से) पुत्र ! पुत्र ! कुणीक को पुत्र प्राप्त हुआ है ! **(उद्विग्न होकर वासवी को सम्बोधित कर)** वासवी, देवी ! कुणीक के यहाँ पुत्र हुआ है। मै...मै उस पुत्र को देखूंगा। अपने पुत्र को देखूंगा।... .मगध के भावी नरेश को देखूंगा । समुद्रदत्त ! मुझे ले चलो ..! मुझे ले चलो . ! राजभवन मे मुझे ले चलो ! मै कुणीक के पुत्र को देखूंगा । नन्हे-से राजकुमार को देखूंगा । उसे एक चुम्बन...स्नेह-चुम्बन दूंगा। वासवी ! देवी ! उसे एक स्नेह . चुम्बन दूंगा। फिर मुझे. फिर मुझे प्राणदण्ड दे देना। उसी क्षण...उसी क्षण प्राणदण्ड दे देना. पहिले मुझे मेरा छोटा राजकुमार दिखला दो .। मै उसे देखूंगा अवश्य देखूंगा । इसी क्षण देखूंगा । ओह इतना सुख...इतना आनन्द मै कैसे सँभालूं ! **(पुकारकर)** वासवी ! शीघ्र चलो। देवी ! शीघ्र चलो...शीघ्र चलो, नही तो हम पीछे रह जायँगे, पीछे रह जायँगे । ओह, मेरा सिर घूम रहा है .मै गिर पडूंगा, वासवी ! . मै गिर. वासवी.. देवी......!

[बिम्बसार पृथ्वी पर गिर पडते हैं ।]

वासवी : (शीघ्रता से समीप आकर) आर्यपुत्र . आर्यपुत्र !

[नेपथ्य मे तीव्र घोष—'सम्राट् की जय' . 'राजकुमार की जय' . . .'मगध के भावी सम्राट् की जय'. . 'नवीन राजकुमार की जय' ...'जय—जय—जय'।]

समुद्रदत्त (घबराहट से) सम्राट् इस समय यहाँ कैसे यहाँ कैसे आ सकते है ? मै जाकर देखता हूँ। **[शीघ्रता से प्रस्थान]**

[नेपथ्य मे 'सम्राट् की जय' का घोष फिर एक बार होता है। 'जय' की ध्वनि समाप्त होते ही द्वार से आते हुए अजातशत्रु का स्वर सुनाई देता है : 'पिता' 'पिता' . 'पिता' . . ! शब्द क्रमश. पास आता है। अजातशत्रु का शीघ्रता से प्रवेश]

अजातशत्रु (उद्विग्न और करुण स्वर से) पिता ! पिता ! पिता जी ! क्षमा क्षमा ! मै क्षमा का भिक्षुक हूँ। मै पितृ-द्रोही हूँ। मैने जघन्य पाप किया है। मैने अपने स्वर्ग को नरक मे डाल दिया। मुझे राज्य नही चाहिए, राज्य नही चाहिए। पिता ! पिता ! मुझे केवल आपके चरणो की छाया चाहिए। **(वासवी से)** माँ ! माँ ! पिता जी उत्तर क्यो नही देते ? क्या वे मुझसे इतने रुष्ट है कि मुझसे बोलना भी उन्हे स्वीकार नही ? उनका पुत्र कुणीक सेवा मे उपस्थित है।

वासवी (सिसकियाँ लेती हुई) नही, कुणीक ! तुम्हारे पुत्र-जन्म के सवाद से

तुम्हारे पिता को इतना आनन्द हुआ कि वे आनन्दातिरेक से मूर्च्छित हो गये।

अजातशत्रु (**विह्वल होकर**) ओह, मैं कितना पापी हूँ, पिता! जो पिता पुत्र के प्रत्येक आनन्द को अपना आनन्द समझता है, उसी पिता को पुत्र ने नियन्त्रण मे रखा। उसे बिना भोजन के तडपाया। आह, माता! मुझे क्षमा करो। मैंने तुम्हे और पिता को इतने कष्ट दिये है कि यदि तुमने और पिता ने मुझे क्षमा नही किया तो उनका प्रायश्चित्त सौ जन्मो मे भी नही हो सकता। पृथ्वी पर साक्षात् देवी और देवता की भाँति मैने माता और पिता का मूल्य नही समझा। मै कितना अधम हूँ . कितना नीच हूँ!

वासवी नही, तुम मगधराज हो, कुणीक!

अजातशत्रु माँ! मुझे शाप दो। मैंने मगधराज बनकर अपने सच्चे राज्य का तिरस्कार किया है। मेरी माता ने और देवदत्त ने अपने स्वार्थो के लिए मेरा बलिदान किया। मुझ पर दया करो, माँ! मुझे क्षमा करो। मैंने पिता के स्नेह का मूल्य नहीं समझा।

वासवी कुणीक! जब तुम स्वय पिता हुए तब तुमने पिता के स्नेह का मूल्य समझा।

अजातशत्रु मुझे लज्जित न करो, माँ! मेरी आँखे लज्जा से ऊपर भी नही उठ सकती। मै भ्रम मे पोषित हुआ। मेरा मार्ग टेढा था। मुझे उचित शिक्षा नही दी गयी। मैंने अपने को विश्व-भर मे महान् समझा। मैं उद्दण्ड हो गया। अब मुझे अनुभव हुआ कि जिस राजमहल मे मै रहा वह तो ईंट-पत्थरो का था। मेरा सच्चा राजमहल तो पिता के चरणो मे है। मैंने तुमको और पिता को जो दारुण यन्त्रणाएँ दी है वे सब एक साथ मिलकर मेरे हृदय मे दशन कर रही है। माँ! मुझे क्षमा करो। पिता! मुझे क्षमा करो। (**वासवी से**) माँ, पिता जी बोलते क्यो नही?

वासवी (**बिम्बसार से**) आर्यपुत्र! कुणीक आपके चरणो मे क्षमायाचना कर रहे है। उन्हे क्षमा कीजिए।

अजातशत्रु पिता जी! आपका पुत्र कुणीक आपके चरण छूकर शपथ. . . .(**चरण-स्पर्श करता है। सहसा चीखकर**) पिता जी! आप कहाँ है! कहाँ है! पिता! पिता!

वासवी (**उद्विग्नता से सिसकी लेकर**) आर्यपुत्र! आर्यपुत्र!

[**मूर्च्छित हो जाती है।**]

अजातशत्रु माँ! तुम मूर्च्छित हो गई! ओह, पापी कुणीक! तू पितृहन्ता है। तू इतने विलम्ब से आया कि पिता बिना क्षमा किये ही चले गये। क्या इस रात का यही रहस्य है, जिसने अपने अन्धकार मे मेरे जीवन के वास्तविक सत्य को ढँक लिया था? ओह, पिता! आप कितने महान् थे। अपनी यन्त्रणाओ से निरन्तर युद्ध किया, भूख की ज्वाला मे अपने रोम-रोम को जलाया और अपने

स्नेह को सुरक्षित रखते हुए वीर पुरुष की भाँति इस ससार से चले गये। मेरे सुख से सुखी हुए किन्तु उस सुख की सूचना भी नही दी। इस सब का दोष इस अभागे कुणीक पर है। इस कुत्सित अजातशत्रु पर है। इस दम्भी मगधराज पर है, जिसने विष को अमृत समझा और पाप को पुण्य समझकर माथे पर लिया। धिक्कार है मुझे! अभागे कुणीक! अब तुझे जीवन-भर शान्ति नही मिलेगी। तू आत्म-प्रतारणा की अग्नि मे तिल-तिल कर जल जल! (एक गहरी सिसकी)

[नेपथ्य मे जाता हुआ भिक्षु-वर्ग गम्भीर स्वर मे सम्मिलित ध्वनि कर रहा है।]

बुद्धं शरण गच्छामि !
धम्म शरण गच्छामि !
सघ शरणं गच्छामि !

3 ·

मर्यादा की वेदी पर

•

पात्र-परिचय

भैरवी—मस्मगा दुर्ग की वीर नारी
सेल्यूकस—सिकन्दर का सेनापति
एनिसाक्रिटीज़—सिकन्दर का सहचर
आम्भि—तक्षशिला का राजकुमार
देवपुत्र सिकन्दर—ग्रीक विजेता
मोरोईस—पौरव का मित्र
पौरव—पचनद-नरेश
सैनिक आदि

•

काल—ई० पू० 326
स्थान—वितस्ता तट का युद्धक्षेत्र

मर्यादा की वेदी पर

स्थिति युद्ध-वाद्य बज रहा है। हाथियो की चिघाडो और घोड़ो की टापो का शब्द हो रहा है। दूर से 'मारो, मारो, वितस्ता मे डुबा दो! मारो!' शब्द होता है! 'मारो!' शब्द कहनेवाले को एक बरछा लगता है। 'मार' जोर से कहता है और 'रो' कहते-कहते उसकी आवाज क्रमश नीचे उतर आती है। 'धम्म' से वह गिर पडता है। दूसरी आवाज ढाल पर पड़नेवाले भाले की है। 'खन्' की आवाज होती है और भाला 'भद्' से जमीन पर गिरता है। मेघो की गड़गड़ाहट जैसा शब्द। तलवारो से द्वन्द्व-युद्ध होने की ध्वनि। 'सप्-सप्' करती हुई तलवारें वायु चीरती हुई दो योद्धाओ के बीच मे चल रही हैं। थोडी देर बाद 'आह' कहती हुई कराहती ध्वनि।

एक वीर (भैरवी) (उग्रता से साँस लेता हुआ) जा! जा! तेरे लिए मौत का दरवाजा खुला है। (कराहने की ध्वनि। फिर ढाल पर पड़नेवाले भाले की ध्वनि होती है।) उधर से वीर आ रहा है। (घोडे की टापो की ध्वनि) सैनिक! घोडे से उतरकर युद्ध कर। मैं भूमि पर हूँ।

सेल्यूकस सामने आ! (कूदकर उतरता है और दोनो मे तलवारो से युद्ध होता है। सप्-सप्' की ध्वनि फिर होती है। चौंककर) ओह, तू कौन! यह बालो की लट बाहर निकल आई। तू स्त्री है?

भैरवी युद्धभूमि मे स्त्री-पुरुष का प्रश्न नही उठता। ले बचा अपने को! (तलवार का प्रहार, जो ढाल पर गिरता है।)

सेल्यूकस : (पुकारकर) एनिसाक्रिटीज! यह स्त्री है, एनिसाक्रिटीज!

भैरवी : दस सैनिको को बुला ले! मै बदला लूँगी। जब तक. .जब तक . मैं सौ सैनिको को मृत्यु के द्वार तक नही पहुँचाऊँगी तब तक . ।

[एनिसाक्रिटीज का प्रवेश]

एनिसाक्रिटीज सेल्यूकस! तुमने मुझे पुकारा? देवपुत्र की अश्वारोहिणी सेना पौरव के पुत्र और उसकी रथी सेना को मारकर आगे बढ गई, आगे बढ गई।

सेल्यूकस एनिसाक्रिटीज! यह स्त्री है। इसे बन्दी करो।

एनिसाक्रिटीज सैनिको! इस स्त्री को घेर लो और बन्दी बना लो।

[सैनिक उसे घेर लेते है और बन्दी बना लेते हैं ।]

भैरवी : युद्ध करो, युद्ध करो ! कायरो ! सामने युद्ध करो । बन्दी बनाना कायरो का काम है । मेरी तलवार तुम नही छीन सकते, नही छीन सकते !

एनिसाक्रिटीज़ यह स्त्री ! यह कौन-सी स्त्री है ? देवपुत्र सिकन्दर की सेना से युद्ध करने का साहस इस स्त्री को हुआ है !

भैरवी हाँ, स्त्री को, भैरवी को ! और तुम युद्ध नही कर सकते । छिः ! घेरकर बन्दी बनाकर तलवार छीनने मे तुम्हे लज्जा नही आई ! कायर ! नराधम !

एनिसाक्रिटीज सैनिको ! इस स्त्री को शिविर मे ले जाओ ।

भैरवी मैं युद्ध करूँगी, मैं युद्ध करूँगी । मुझे छोड दो ।

['मै युद्ध करूँगी', की आवाज क्षीण होती जाती है ।]

एनिसाक्रिटीज अच्छा, सेल्यूकस ! तो मैं जाता हूँ । **(रुककर)** देवपुत्र बहुत आगे निकल गये । इस स्त्री को देवपुत्र के सामने उपस्थित किया जाय । पर यह कौन स्त्री है, सेल्यूकस ?

सेल्यूकस मै स्वय नही जानता । युद्ध मे मुझे सेना के पिछले भाग को सगठित करने की आज्ञा देवपुत्र ने दी थी । मै सैनिको की व्यवस्था कर ही रहा था कि यह स्त्री बाई ओर के सैनिको को चीरती हुई आई । एक वीर को मारकर इसने अपनी तलवार मेरी दिशा मे चलाई । मैने उसकी तलवार को जैसे ही रोका, वैसे ही वार के रुक जाने से उसकी शक्ति उसी की ओर लौट गई और उस झटके मे उसके बालो की लट बाहर निकल आई । तब मैंने समझा कि यह स्त्री है ।

एनिसाक्रिटीज बडी साहसी है । हमने देवपुत्र के साथ इतने देशो मे युद्ध किया, हिन्दुस्तान को छोडकर कही ऐसी स्त्री नही मिली ।

सेल्यूकस देवपुत्र कहाँ है ?

एनिसाक्रिटीज वे पुरु से लडने के लिए अपनी अश्व-सेना लेकर आगे बढ गये है । मुझे आदेश दिया है कि मै वितस्ता के किनारे की पूरी रक्षा करूँ ।

सेल्यूकस हाँ, रक्षा करो, लेकिन और देशो की तरह यह देश नही है । यहाँ के लोग अपने प्राणो को हथेली पर लेकर लडते है ।

एनिसाक्रिटीज देवपुत्र का आदेश है कि सारा एशिया उनका है । सारे एशिया के निवासी उनके अपने आदमी है, जिनकी रक्षा का भार देवपुत्र पर है । इसलिए वे सैनिको को क्षमा भी कर सकते हैं । भले ही वे अपनी जान हथेली पर लेकर लडे । यह स्त्री भी उनके सामने उपस्थित की जायगी ।

सेल्यूकस : **(देखकर)** अच्छा, राजकुमार आम्भि भी इस ओर आ रहे है । उनसे इस स्त्री के विषय मे पूछा जाय ।

एनिसाक्रिटीज राजकुमार आम्भि ! तक्षशिला का राजकुमार ! **(हँसता है ।)**

सेल्यूकस तुम हँसे क्यो, एनिसाक्रिटीज !

एनिसाक्रिटीज हिन्दुस्तान मे ऐसे आदमी भी होते है। इनसे तो वाख्त्री का दारयवहु अच्छा, जो देवपुत्र को यदि जीत नही सका तो उनके अधीन भी तो नही बना। हिन्दूकुश का शशिगुप्त भी अच्छा, जो हारने के बाद ही हमारी तरफ से लडा। लेकिन आम्भि ! (हँसता है।) आम्भि ! जब देवपुत्र युद्ध मे थे तभी इसका दूत वहाँ हमारे चरण छूने के लिए पहुँच गया। हारने के बाद चरण छूता तो हमे भी खुशी होती, लडने के बाद मित्रता होती, लेकिन इसने हमे लडने का मौका ही नही दिया। इससे तो वह स्त्री अच्छी, जो हाथ मे तलवार लेकर हमसे लडने आई। अगर आम्भि जैसे तीन-चार ही लोग हमे मिल गये तो हिन्दुस्तान हमारा है।

सेल्यूकस हमे तो अपना बल बढाना है, चाहे वह मित्रता से हो या शत्रुता से। देखो, वह आ गया।

आम्भि (**प्रवेश करके**) सेल्यूकस और एनिसाक्रिटीज, मै प्रणाम करता हूँ !

सेल्यूकस महाराज आम्भि ! हम लोग सैनिक है। महाराज के प्रणाम से हमे सकोच होता है।

एनिसाक्रिटीज फिर युद्ध-भूमि मे प्रणाम। मुझे तो ऐसा मालूम होता है, जैसे भाला हाथ मे न रहकर वितस्ता मे गिर जाय।

आम्भि (**निर्लज्जता की हँसी हँसता हुआ**) भाला हाथ मे न रहकर वितस्ता मे गिर जाय ! लेकिन अब भाले के प्रयोग की आवश्यकता भी न होगी। देवपुत्र सिकन्दर ने रात की वर्षा मे जिस कौशल के साथ वितस्ता पार की है, उससे यह भूमि रणभूमि नही रगभूमि हो सकती है। भाला यदि वितस्ता मे गिर भी जाय तो उससे सगीत की एक ध्वनि ही निकलेगी। और इस ध्वनि के निकलने का अवसर अब आ गया है।

एनिसाक्रिटीज पर महाराज ! देवपुत्र इस ध्वनि को पसन्द नही करते। यदि करते तो वे परसीपोलिस का राजमहल छोडकर बर्फ और कुहरो मे आग न लगाते। तूफानी नदियो और नुकीली चट्टानो मे से निकलनेवाले पहाडी लडाको के बीच अपने भाले को न तौलते।

आम्भि : हाँ, उन्होने अपने भाले को तौला खूब ! उनकी सेना पौरव की राज्य-सीमा पर ऐसी टूट पडी है जैसे पहाडी नदी किनारे की मिट्टी को तोड देती है। अब पुरु को मालूम होगा कि आम्भि का अपमान क्या होता है और उसका बदला कैसे दिया जाता है।

सेल्यूकस ये बाते युद्धभूमि मे नही होती, महाराज !

आम्भि युद्धभूमि ! देवपुत्र का आक्रमण तो बहुत आगे बढ गया। अब तो यह शान्तिभूमि बन गई है।

सेल्यूकस हाँ, महाराज ! एक विचित्र बात अभी हुई। एक सैनिक बडी तेजी से लडता

हुआ आया। जब मैने उसका वार रोका तो उसके झटके मे उसका सिर हिल गया और.. और. ..

आम्भि . और.. और क्या ?

सेल्यूकस उसके सिर के बाल दीख पडे। सुन्दर बाल। काले, चमकीले, लम्बे जैसे काली घटाओ की छाया पडने से वितस्ता की लहरे स्याह दीख पडी थी।

आम्भि वह स्त्री थी!

एनिसाक्रिटीज आप चौक क्यो पडे, महाराज! पुरुषो की अपेक्षा यहाँ की स्त्रियाँ रण-क्षेत्र ज्यादा पसन्द करती है।

आम्भि यह तुम्हारा व्यग्य है, एनिसाक्रिटीज!

एनिसाक्रिटीज महाराज बात खूब समझते हैं। उस स्त्री की बात भी बहुत अच्छी तरह समझ लेगे। सेनापति सेल्यूकस! कहो तो उस स्त्री को बुलवाऊँ ?

सेल्यूकस हाँ, हाँ, बुलवाओ। मैं तो यह चाहता ही था।

एनिसाक्रिटीज (पुकारकर) सैनिक! उस बन्दी स्त्री को शीघ्र यहाँ लाओ।

आम्भि शायद वह पुरु की कोई गुप्तचर हो, जो हमारा भेद लेने के लिए आई हो ?

एनिसाक्रिटीज हमारा, यानी देवपुत्र सिकन्दर का ?

आम्भि हाँ, हाँ, यही मेरा तात्पर्य है। हम भी तो देवपुत्र सिकन्दर के साथी है।

सेल्यूकस लेकिन गुप्तचर अपने को युद्ध की आग मे नही झोक सकता। वह रोग की तरह धीरे-धीरे आता है या मित्र बनकर कोमलता का बाना बनाकर आता है, जैसे मखमली म्यान मे तलवार छिपकर कमर मे झूलती है।

एनिसाक्रिटीज तो क्या हम समझे कि महाराज आम्भि भी गुप्त शत्रु है जो मित्र बनकर आये है ?

आम्भि सावधान, एनिसाक्रिटीज! मै देवपुत्र का सच्चा मित्र हूँ। पचनद-नरेश पौरव की उद्दडता का दड देना हम दोनो का धर्म है। यदि मैं देवपुत्र का सच्चा मित्र न होता तो देवपुत्र अपनी सारी सेना के साथ तक्षशिला मे हमारे अतिथि न होते और मै सवा-सौ मन चाँदी, सवा-मन सोना, हीरे, मोती, पन्ने, नीलम और लाल की थैलियाँ भेट न करता। और वह अद्भुत विहार-नौका! ओह! श्वेत राजहसी! मै देवपुत्र के लिए बनवाकर न भेजता।

एनिसाक्रिटीज . आप देवपुत्र को ऐश्वर्य से मोहित नही कर सकते, महाराज! उन्होने शूषा, एकबताना और परसीपोलिस के महलो मे नर्तकी ताया के कहने से आग लगा दी थी। और परसीपोलिस के महल मे क्या था, आप जानते है ? मुँजान के गोमेद और सिन्ध का स्वर्ण, ताम्रपर्णी के मोती और अफ्रीका के रत्न, रोम के दास और ग्रीस की नर्तकियाँ, बाख्त्री की केसर और स्पेन की अँगूरी शराब! इस सब को देवपुत्र की मशाल की लाल लपटे निगल गई। आपका वैभव, क्षमा करे महाराज, इसके सामने क्या है!

आम्भि · और उद्भाण्डपुर मे सिन्धु पर मैने जो सेतु बनवाया जिससे देवपुत्र की सेना इस देश मे आ सके, वह क्या कम महत्त्व का है ! मैने अपने देश का सिंहद्वार देवपुत्र के लिए खोल दिया , ससार की कौन-सी सम्पदा इसकी तुलना कर सकती है ?

एनिसाक्रिटीज सचमुच, जो हम नही कर सकते वह महाराज, आपने किया। आप शत्रु का सत्कार करने मे बहुत कुशल है। इतिहास मे, महाराज, आपके समान वीर पुरुष शायद ही हो। (**देखकर**) वह स्त्री आ गई, महाराज ! यही वह स्त्री है जो तलवार लेकर युद्ध कर रही थी। सैनिको ! उस स्त्री को पास लाओ !

[सैनिक स्त्री को उपस्थित करते है। स्त्री का स्वर क्रमशः तीव्र सुन पड़ता है।]

भैरवी मेरे हाथ मे तलवार दो ! मेरे हाथ मे तलवार दो !

सेल्यूकस यह तलवार चलाने मे बहुत कुशल है, महाराज !

आम्भि होगी, किन्तु प्रणाम करने मे कुशल नही है।

सेल्यूकस वीर नारी ! गाधारराज आम्भीक को प्रणाम करो !

भैरवी (**दाँत पीसते हुए**) गाधारराज ! क्षत्रिय कुल-कलक ! जन्मभूमि से विश्वास-घात करनेवाला आम्भि, जिसने तलवार चलाये विना ही सारी सेना सिकन्दर को सौंप दी। कायर और निर्लज्ज आम्भि !

आम्भि . चुप रह, नारी ! नही तो तेरी जीभ काटकर फेक दी जायगी।

भैरवी और तेरी जीभ, सिकन्दर के पैरो की धूल चाटेगी ! सैनिको ! मुझे एक तलवार दो। मैं पहले आम्भि से युद्ध करूँगी, नीच नराधम आम्भि से !

आम्भि · ओह, असह्य ! नारी, तू अपनी मृत्यु पास बुला रही है।

एनिसाक्रिटीज महाराज ! स्त्री से प्रणाम नही तो युद्ध ही स्वीकार कीजिए ! चलो, सेनापति सेल्यूकस ! हमे सेना के पिछले भाग की व्यवस्था करनी है, जो देवपुत्र का सब से बडा आदेश है।

सेल्यूकस . चलो, एनिसाक्रिटीज ! (**चलने को उद्यत होते हैं।**)

आम्भि इस स्त्री के दड की व्यवस्था होनी चाहिए।

एनिसाक्रिटीज . आप तो देवपुत्र के मित्र है। आप ही दड की व्यवस्था करे। चलो, सेल्यूकस ! [**दोनो का प्रस्थान**]

आम्भि (**तीव्र स्वर मे**) सैनिक !

भैरवी सैनिक नही, भैरवी। मुझसे बात करो ! मेरा नाम भैरवी है।

आम्भि मेरे राज्य मे रहकर मुझसे इस प्रकार की बाते करने का साहस ! दुष्टा नारी, तू कौन है ?

भैरवी मैं कौन ! अपने विश्वासघात से पूछ। मेरे मस्सगा नामी दुर्ग से पूछ। उन सात हजार सैनिको से पूछ जिन्होने मरते-मरते अपने दुर्ग की रक्षा की। और

उनके मरने पर उन नारियो से पूछ जिन्होने वीर पुरुषो का स्थान लेकर दुर्ग की रक्षा की है। मै दुर्ग की रक्षा मे मर नही सकी। जिस तलवार ने मुझे मरने नही दिया उस तलवार से पूछो कि मैं कौन हूँ ?

आम्भि मै देखता हूँ तलवार से अधिक वेग तेरी जिह्वा मे है, सर्पिणी !

भैरवी उसके दशन से सावधान रह, कायर ! तू मरकर उस सिकन्दर के चरणो मे लौट जा जिसने अपने देवताओ को साक्षी बनाकर दुर्ग के नागरिको को अभय-दान दिया था। कहा था कि तुम लोग मस्सगा दुर्ग से बाहर चले जाओ, हम तुम पर आक्रमण नही करेगे। किन्तु नागरिको के बाहर निकलते ही सिकन्दर ने उन पर आक्रमण किया और विश्वास मे खोये हुए उन निरीह नागरिको का रक्त बहाने मे उसे लज्जा नही आई !

आम्भि चुप रह, नारी ! देवपुत्र की पवित्रता पर कलक लगाने मे तुझे लज्जा नही है ?

भैरवी लज्जा ! मैने विदेशियो के हाथो अपना देश नही बेचा। कायर ! दासता को मित्रता का नाम देने मे तुझे लज्जा आनी चाहिए। यदि क्षत्रित्व का नाम तू भूल नही गया है, तो दे मेरे हाथो मे तलवार और मेरे हाथो से कटकर अपना कलक धो दे।

आम्भि बस, बस ! दुर्द्धर्षिणी नारी ! एक शब्द भी कहा तो मैं इस तलवार से तेरा मस्तक काट दूँगा।

भैरवी यही वीरता तुझे शोभा देगी। शस्त्रहीन नारी का मस्तक रक्त नही, आग उगलेगा, जिससे दासता से पाया हुआ तेरा वैभव जल-जलकर भस्म हो जायगा। सिकन्दर ने भी निस्सहाय नागरिको को मारा था। उसका दास अपने स्वामी का ही आचरण करेगा। तू भी तलवार उठा और मेरा मस्तक काट दे।

आम्भि अब तुझे अधिक देर तक जीवित नही रखूँगा। सैनिक ! इसके हाथो मे तलवार दे और इसे छोड दे ! देखूँ, इसकी जिह्वा की भाँति इसकी तलवार मे भी शक्ति है या नही ! नारी के रक्त से अपने हाथ......

भैरवी .. कलकित कर ! विदेशियो की दासता से सिर तो कलकित हो ही गया है, अब हाथ भी कलकित कर। पर मै कलकित होने से तुझे बचा दूँगी। मेरी तलवार ही तेरे रक्त का पान करेगी।

[तलवार गिरने की आवाज]

भैरवी मैं कृतज्ञ हूँ, सैनिक ! यह तलवार अब मेरे हाथ मे है। मुझे छोड दो !

[एनिसाक्रिटीज का प्रवेश]

एनिसाक्रिटीज नही, सैनिक ! यह स्त्री विचाराधीन है। यह देवपुत्र के समक्ष उपस्थित की जायगी। इसे ले जाओ !

[सैनिक स्त्री को ले जाते है।]

भैरवी **(बलपूर्वक ले जाये जाते हुए)** नही ! मैं आम्भि से युद्ध करूँगी। इसको

दशद्रोह का दड दूँगी, अवश्य दूँगी, अवश्य दूँगी !

[**धीरे-धीरे उसके शब्द दूरी मे डूब जाते है ।**]

एनिसाक्रिटीज स्त्री का यह साहस ! महाराजा आम्भि से युद्ध करने की बात कहती है । पहले हमारे सैनिको से युद्ध करे, तब महाराजा आम्भि की तलवार से कटने का सौभाग्य प्राप्त करे । महाराजा आम्भि ! आपने पूछा, यह स्त्री कौन थी ?

आम्भि मस्सगा दुर्ग की बची हुई एक स्त्री थी, जो अपने पागलपन मे देवपुत्र की निन्दा कर रही थी । मै इस निन्दा को सहन नही कर सकता । यदि आप न आते तो मै उस स्त्री का सिर काट देता, एनिसाक्रिटीज !

एनिसाक्रिटीज आप देश के सच्चे मित्र है, आम्भि महाराज ! पर आपको सिर काटने की मेहनत न करनी पडती । किसी भी सैनिक को आज्ञा दे दी जाती, वह उसे एक क्षरण मे मृत्यु के द्वार तक पहुँचा देता । फिर युद्ध तो बराबरी वालो मे होता है । कहाँ आप महाराज, और कहाँ वह एक तुच्छ नारी ! (**व्यग्य से**) हुँअ्, आपने उसे इतना बढने ही क्यो दिया ?

आम्भि वह मुझ ही को युद्ध के लिए ललकार रही थी । क्षत्रिय किसी चुनौती को सहन नही कर सकता ।

एनिसाक्रिटीज यही गुरग हमारे देवपुत्र मे है । वे जरा-सी चुनौती पर अपने प्राणो की बाजी लगा देते है । पौरव के दूत ने देवपुत्र से निवेदन किया कि महाराज पौरव . ...?

आम्भि (**बीच ही मे**) पौरव को 'महाराज' कहना मेरा अपमान करना है ।

एनिसाक्रिटीज मुझसे भूल हुई, महाराज आम्भि ! नीच पौरव के दूत ने देवपुत्र से निवेदन किया कि वितस्ता नदी के तट पर रणक्षेत्र मे हम स्वय देवपुत्र को तलवार से उत्तर देगे । देवपुत्र ने इस अभिमान को तोडने के लिए ही यह आक्रमरण किया है ।

आम्भि देवपुत्र सचमुच 'देवपुत्र' है । वे युद्ध मे बहुत आगे बढ गये है । शत्रु की युद्ध-नीति बतलाने के लिए मुझे उनके समीप रहना आवश्यक है । मै अभी जाता हूँ । [**प्रस्थान**]

एनिसाक्रिटीज यह है आम्भि, जिसने लोभ मे आकर अपने देश के साथ विश्वास-घात किया । किन्तु हमे इससे क्या ! हमे तो हिन्दुस्तान पर विजय चाहिए । विजय ! विजय ! (**पुकारकर**) सैनिक !

[**सैनिक का प्रवेश**]

सैनिक आदेश, श्रीमन् !

एनिसाक्रिटीज पोरस के पुत्र की सेना के जितने रथ पानी के बरस जाने से कीचड मे फँस गये है, उन्हे दूसरे सैनिको की सहायता से हटाकर मैदान साफ कर दो । यह काम शीघ्र ही हो ।

सैनिक : जैसी आज्ञा !

एनिसाक्रिटीज (स्वगत) युद्ध का कोलाहल दूर हो गया है। मालूम होता है, देवपुत्र शत्रु को पीछे हटाते हुए बहुत दूर निकल गये है। हमारी विजय निश्चित ज्ञात होती है। ग्रेनिकस और आरबेला के युद्ध मे हमे जैसी सरलता से विजय मिली, वैसी ही विजय हमे यहाँ भी मिल सकेगी। सैनिक ! युद्ध का क्या समाचार है ?

सैनिक श्रीमन् ! पौरव ने व्यूह-रचना बडी चतुराई से की। हरावल मे हाथियो की पक्ति खडी की और प्रत्येक हाथी के बीच मे पदचर सेना की टुकडियाँ दीवार की तरह खडी की। बगल मे घुडसवार सेना सजाई और उनके सामने रथो की कतार लगा दी। परन्तु देवपुत्र ने अपनी घुडसवार सेना लेकर पौरव की सेना के बगल मे हमला किया।

एनिसाक्रिटीज देवपुत्र बडे रण-कुशल आचार्य है। फिर ?

सैनिक थोडी-थोडी देर मे घुडसवारो की लम्बी कतार पौरव की सेना की बगल मे लहरो की तरह बढ-बढकर आक्रमण करती रही। पानी बरस जाने से पौरव के रथो के चक्के भूमि मे धँस गये। और जिस ढग से रथो को आगे बढना चाहिए था, उस ढग से वे नही बढ पा रहे थे। पैदल सेना के पैर भी भूमि पर फिसल जाते थे।

एनिसाक्रिटीज तब तो वे भूमि चूमने लगे होगे ?

सैनिक धनुष चलानेवाले धनुष का एक सिरा भूमि मे टिकाकर बाण-वर्षा करते थे, लेकिन पानी बरस जाने के कारण उनके धनुष के सिरे भूमि पर नही टिकते थे।

एनिसाक्रिटीज तब तो यह समझना चाहिए कि जल-देवता पोसिडन ने भी देवपुत्र की सहायता की। जब दोनो ही देवता है तो आपस मे सहायता करनी ही चाहिए। धन्य है !

सैनिक देवपुत्र का आक्रमण बडे उग्र ढग से हुआ। उनके वीरो ने अपने घोडो के चक्र से ऐसी तेजी से शत्रु की सेना को घेरा कि हाथियो की पक्ति सिमिटकर रह गयी। हमारे तीरो से महावत जमीन पर गिरने लगे और बिना महावतो के हाथी अपने आक्रमण की दिशा भूल गये।

एनिसाक्रिटीज तब तो हाथियो ने अपने दल के सैनिको को ही कुचला होगा ?

सैनिक यही हुआ, श्रीमन् ! हाथियो ने बाणो की वर्षा से घबराकर अपने ही दल के वीरो को बुरी तरह कुचला। हमारे सैनिक एक बडे चक्र मे बैठकर आक्रमण कर रहे थे। इसलिए वे चाहे जिस स्थान से अपना लक्ष्य साध सकते थे। हाथी जब उनकी ओर दौडते थे तो वे हट जाते थे और जब हाथी लौटते तो वे उनका पीछा करते हुए उन्हे तीरो से बेध डालते थे। इसीलिए हाथियो ने लौटकर अपने ही पक्ष के सैनिको को कुचला।

एनिसाक्रिटीज देवपुत्र की रण-नीति की प्रशसा नही हो सकती !

सैनिक : हाथियो के लौटते ही हमारे घुडसवार चारो ओर से बढकर सेना को घेर लेते थे और हमारे वीर सैनिक शत्रुओ को बुरी तरह से काटकर फेक देते थे।

एनिसाक्रिटीज सच है, हमारी सेना मे योरुप, अफ्रीका और एशिया तीनो महाद्वीपो के रणकुशल सैनिक है। पीछे से क्रेतेरस ने भी तो सहायता पहुँचाई होगी, जिसे मैने देवपुत्र का सकेत पाकर सेना सहित भेज दिया था ?

सैनिक सत्य है, श्रीमन् ! देवपुत्र का सकेत पाकर क्रेतेरस ने वितस्ता पारकर अपने उग्र सैनिको से नया हमला करके थके हुए सैनिको का स्थान ले लिया और शत्रुओ को अलग-थलग करके उन्हे एक-एक कर मौत के घाट उतार दिया।

एनिसाक्रिटीज शाबाश, क्रेतेरस !

सैनिक क्रेतेरस ने एक काम और किया, श्रीमन् ! उसने रणभूमि के प्रत्येक कोने से आक्रमण किया और हरावल और चद्रावल को बारी-बारी से छिन्न-भिन्न किया। इसके बाद उसने देवपुत्र का सकेत पाकर अपनी सेना के प्रत्येक वीर को आज्ञा दी कि वे फरसा लेकर हाथियो के सूँड काट डाले।

एनिसाक्रिटीज ओहो, तब तो हाथियो की शकल अजीब-सी हो गई होगी ?

सैनिक श्रीमन्, वे भेडो की तरह इधर-उधर भागने लगे। चिघाडते हुए उन्होने बेतरतीब होकर भागना शुरू किया और अपनी सेना के बचे हुए वीरो को रौद डाला और चारो ओर भारी भगदड मच गयी।

एनिसाक्रिटीज · और पौरव का क्या हुआ ?

सैनिक पौरव का समाचार मुझे नही मिल सका, श्रीमन् !

एनिसाक्रिटीज . वह समाचार भी शीघ्र मिल जायगा। सेना मे भगदड मचने पर अकेला पौरव क्या कर सकता है। उसकी हार निश्चित है।

कई स्वर **(नेपथ्य में)** देवपुत्र की जय ! देवपुत्र सिकन्दर की जय ! जगद्विजयी सिकन्दर की जय !

एनिसाक्रिटीज ओह ! **(प्रसन्नातिरेक से)** हमारी विजय हुई, हमारी विजय हुई। सैनिक ! हमारी विजय हुई। यह लो ढाल, यह लो भाला, यह तुम्हारा पुरस्कार है, सैनिक ! तुम्हे मैने अपना अग-रक्षक बनाया। ओह, देवपुत्र यही आ रहे है, यही आ रहे है ! तुम जाओ, सैनिक !

[सैनिक का प्रणाम कर प्रस्थान]

कई स्वर **(समीप ही)** देवपुत्र की जय ! देवपुत्र की जय !

एनिसाक्रिटीज देवपुत्र की जय !

[देवपुत्र सिकन्दर का प्रवेश]

सिकन्दर पूर्व और पश्चिम का युद्ध ! ससार-विजय का स्वप्न आज के युद्ध मे मैंने इस तलवार की चमकती हुई धार मे देखा। वितस्ता की लहरो ने मेरे

तुम्हे प्रणाम करता हूँ । पौरव पराजित हुआ ।

सम्मिलित स्वर देवपुत्र की जय, जय, जय !

सिकन्दर आज की विजय हमारे वीरो की विजय है । उन वीरो की विजय है जो प्रत्येक देश मे हमारी विजय की माला मे रत्नो की तरह गुँथते चले गये है और आज हमारी विजय की माला इतनी बडी हो गई है कि वह मकदूनिया के कठ से हिन्दोस्तान के हृदय तक झूलती है, हिन्दोस्तान के हृदय तक ! ऐसा क्यो है, एनिसाक्रिटीज, जानते हो ?

एनिसाक्रिटीज इसलिए कि आप ससार के एक महान् पुरुष है।

सिकन्दर नही, एनिसाक्रिटीज, ऐसा नही है । वह माला हिन्दोस्तान के हृदय तक इसलिए झूलती है कि इस देश के वीरो ने शक्ति की पूजा तो की किन्तु वे अपने देश की पूजा नही कर सके । एक-एक नगर, एक-एक वीर फौलाद का टुकडा है , लेकिन अलग-अलग टुकडे एक शृखला नही बना सके । ये एक-दूसरे के हृदय से नही जुड सके । इसीलिए शक्ति का देवता पौरव आज इतनी बडी सेना का स्वामी होकर भी मकदूनिया का सेवक हो सकता है ।

एनिसाक्रिटीज यह सच है, देवपुत्र !

सिकन्दर ओफ ! आज कितना भीषण युद्ध था । काले पहाडो की भाँति हाथियो की सेना सारे रणक्षेत्र को दबाये बैठी थी । रथी सेना का वेग सिन्धु-नद की तरह भयानक था । जय या मृत्यु की कगारो को छूती हुई एक बडी सेना युद्ध-घोषणा कर रही थी । उसके धनुषो से तीर नही वज्र बरस रहे थे । तलवारे सर्पिणी की तरह फुफकार रही थी । और मैने युद्ध की उस आग मे अपने वीरो को तूफान की तरह बढा दिया ।

एनिसाक्रिटीज बडा भयानक दृश्य होगा ?

सिकन्दर भयानक दृश्य था । वीरो की धमनियो से रक्त के नाले बहकर वितस्ता से मिलने लगे , किन्तु विजय हमारी ही रही । सख्या मे अधिक होते हुए भी वे वीर अपना सगठन नही कर सकते थे । बीस हजार पैदल, तीन हजार घुडसवार, एक हजार रथ और तेरह सौ हाथी हमारे ग्यारह हजार सैनिको को नही जीत सके ।

एनिसाक्रिटीज : यह आपका सचालन-कौशल है, देवपुत्र ! और पौरव का क्या हुआ ?

सिकन्दर पौरव ! वह वीर धन्य है ! सेना का सर्वनाश हो जाने पर भी उसने मैदान नही छोडा । वह वीरो को बढावा देता और कायरो को भागने से रोकता रहा । ऐसा वीर पुरुष, इतने देशो के साथ युद्ध करते हुए, मुझे नही दीख पडा । पौरव ! तुम किसी भी देश के गौरवशाली राजा हो सकते हो !

एनिसाक्रिटीज जो व्यक्ति देवपुत्र से प्रशसा पा सकता है, वह सचमुच ही वीर है ।

सिकन्दर : वीर ! उसी को हम वीर कह सकते है जो कायर को भी वीर बना दे,

गिरते हुए योद्धाओ को फौलाद की दीवार मे बदल दे । जो तलवारो मे विजली भर दे और भालो मे भाग्य की कठिनता । पौरव ऐसा ही वीर है । साढे छ फुट ऊँचा, अग मे वज्र की दृढता, जैसे वह हिमालय का पुत्र हो । आक्रमण मे सिंह की तरह भयानक । गति मे जैसे जलप्रपात, जो आगे बढकर शत्रु पर गिरना जानता है । और हुँकार करने मे बरसात का बादल जो एक छोर से दूसरे छोर तक गर्जन करता हुआ सारी दिशाओ को हिला दे । उसकी ओर आक्रमण करने-वाले मेरे साठ सैनिक ठिठककर रह गये, जैसे मडूसा ने उन पर दृष्टि डालकर पत्थर का बना दिया हो ।

एनिसाक्रिटीज वास्तव मे वह भयानक वीर है । फिर उसकी हार कैसे हुई, देवपुत्र !

सिकन्दर पौरव रणक्षेत्र मे जो कुछ कर सकता था, उसने किया । वह सेनापति ही नही था, सिपाही था । उसकी आँखो के सामने उसके घुडसवार हमारे भालो से भूमि पर गिर रहे थे । उसके कुछ हाथी वीरो का रास्ता रोककर काली पहाडियो की तरह रणभूमि मे पडे हुए थे । और कुछ हाथी महावतो के बिना बरसाती नालो की तरह इधर-उधर गिरते-पडते चिंघाड रहे थे । पैदल सेना हमारे तीरो से तितर-बितर हो रही थी, परन्तु वह सूर्य की तरह हाथी के पहाड के ऊपर दृढता से बैठा हुआ ललकार रहा था । वह ईरान के सम्राट् दारयवहु की तरह रणक्षेत्र छोडकर भागा नही, लेकिन वह उस समय तक लडता रहा जब तक उसने एक भी गुल्म को सगठित रूप से युद्ध करते हुए देखा । जब उसके दाहिने कधे पर गहरा घाव लगा तो उसने नदी की लहर की तरह अपने हाथी को रण-क्षेत्र मे तिरछा घुमा लिया । उसका सारा शरीर चुस्त जिरहबख्तर से कसा हुआ था । केवल हाथ को घुमाने के लिए कधा खुला हुआ था, वही उसे घाव लगा । वह वीरो को ललकारता हुआ घूमा । ओह ! कितना वीरतापूर्ण उसका युद्ध था ।

एनिसाक्रिटीज आपने मुझे वितस्ता के किनारे की रक्षा का भार सौपा था, नही तो मै भी उस वीर के दर्शन करता ।

सिकन्दर मैं ऐसे वीर को मारना नही चाहता, मित्र बनाना चाहता हूँ । इसलिए मैंने जोर से घोषणा की कि पौरव की रक्षा हो ! जैसे ही रणक्षेत्र मे विजय हमारे हाथ मे आयी और पौरव का हाथी अपने स्वामी की रक्षा करने के लिए घूमा वैसे ही मैंने आम्भि को आदेश दिया कि वह घोडे पर चढकर पौरव का पीछा करे और उससे प्रार्थना करे कि वह हाथी से उतरकर मेरे पास आने का कष्ट करे । आम्भि मेरे आदेश का पालन करके शीघ्र ही आता होगा ।

एनिसाक्रिटीज सच है, देवपुत्र ! सेना के तितर-बितर होने पर पौरव के मन मे विजय की आशा तो रह ही नही सकती । वह हाथी पर अपनी रक्षा के लिए भाग भी नही सकता था, अत उसने आपका आदेश मान ही लिया होगा ।

सिकन्दर ऐसी मुझे भी आशा है ।

[सैनिक का प्रवेश। वह प्रणाम करता है।]

सैनिक देवपुत्र ! आम्भि आपकी सेवा मे उपस्थित होने की आज्ञा चाहते है।

सिकन्दर उन्हे इसी समय भेजो !

सैनिक जो आदेश ! [प्रस्थान]

एनिसाक्रिटीज देखे, आम्भि क्या समाचार लाते है ! कितना अच्छा हो, यदि पौरव भी उनके पीछे आता हो।

सिकन्दर पौरव वीर है, वह जो कुछ भी करे उसमे मुझे सन्तोष होगा।

[आम्भि का प्रवेश]

सिकन्दर आम्भि ! पौरव ने तुम्हारी बात मानी ?

आम्भि नही, देवपुत्र ! मैंने उसके हाथी के पास तक अपना घोडा पहुँचाया और पुकारकर कहा कि पौरव ! तुम्हारे पास देवपुत्र ने मित्रता का सदेश भेजा है। तुम हाथी से उतरकर उनकी सेवा मे चलो। मैने भी तुमसे शत्रुता छोड दी है। पौरव ! तुम मेरी बात सुनो। देवपुत्र जितने बडे शत्रु है, उतने ही बडे मित्र भी है।

एनिसाक्रिटीज तुमने अपनी बात बडे अच्छे ढग से कही, आम्भि महाराज !

आम्भि किन्तु, देवपुत्र, मैं उनका पुराना शत्रु था। उन्होने घूमकर मेरी ओर देखा। अपना हाथी सामने बढाया और बाये हाथ से एक भाला उठाकर मेरी ओर इस तरह चलाया कि यदि मैं तेजी से पीछे की ओर घोडा न दौडा देता तो मेरा जीवन ही समाप्त हो गया होता।

एनिसाक्रिटीज तुम्हारा घोडा भागने मे बहुत तेज है, आम्भि ! और साथ ही तुम भी तेजी से भागकर आक्रमण निष्फल कर सकते हो। साधुवाद !

सिकन्दर तो वह नही लौटा, पर ऐसे वीर को मै अपना शत्रु नही रहने दूँगा। एनिसाक्रिटीज तुम जाओ और मीरोईस को पौरव के पास भेजकर मेरा सदेश कहलाओ। पौरव को लौटकर आना ही चाहिए। मीरोईस और पौरव पुराने मित्र है। जाओ, शीघ्रता करो !

एनिसाक्रिटीज जो आज्ञा ! [प्रस्थान]

सिकन्दर मैं पौरव को चाहता हूँ, आम्भि ! यदि ऐसा वीर हमारे साथ होगा तो मैं एशिया की विजय का स्वप्न पूरा कर सकूँगा। तब हमारा राज्य कितना विशाल होगा ! हमारी विजय इतिहास के कठ मे माला की तरह सजी रहेगी और उस माला मे सारा हिन्दोस्तान हिमालय की गाँठ देकर एक बडे रत्न की भाँति सजा रहेगा।

आम्भि ऐसा ही होगा, देवपुत्र !

सिकन्दर जानते हो ऐसा क्यो होगा, आम्भि ?

आम्भि इसलिए कि मैं आपकी सेवा करने के लिए सदैव प्रस्तुत रहूँगा।

सिकन्दर (हलकी हँसी हँसकर) नही, नही, आम्भि ! ऐसा नही है। तुम मेरी

सेवा अवश्य करोगे किन्तु तुम्हारी सेवा वितस्ता की लहर नही है जो मुझे अपने मस्तक पर रख ले । तुम्हारी सेवा उद्भाण्ड का वह सेतु है जो सिन्धु की छाती पर खडा होकर मुझे और मेरी सेना को मार्ग तो देता है पर वह एक स्थान पर ही जड होकर स्थिर है, सब काल के लिए । वह तिल-भर भी अपने स्थान से हिल नही सकता । उसी तरह तुम तभी तक मेरी सहायता कर सकते हो जब तक कि तुम्हारे विपक्षी पौरव का अभिमान धूल मे नही मिल जाता ।

आम्भि आप मुझ पर अविश्वास न करे, देवपुत्र !

सिकन्दर (**हँसकर**) अविश्वास ! विश्वास जब स्वार्थ के पैरो पर चलता है तो वह अविश्वास बन जाता है । और अविश्वास जब आदर्श खोजने लगता है तो वह राजनीति का रूप धारण करता है । गाधार-नरेश ! तुम मेरे मित्र हो , किन्तु विश्वास को स्तुति की भाँति कहना अविश्वास की भावनाओ को जगाना है ।

[**एनिसाक्रिटीज का प्रवेश**]

एनिसाक्रिटीज · देवपुत्र ! आपकी राजनीति अचूक है । वीर पौरव मीरोईस के साथ आपकी सेवा मे आ रहे हैं ।

सिकन्दर (**प्रसन्नता से उद्विग्न होकर**) साधुवाद ! साधुवाद ! पुरस्कार मे यह लो मेरी तलवार । (**तलवार फेंक देता है ।**) मेरे साथ के वीरो ने हिन्दूकुश पार करते हुए जितनी विपत्तियाँ झेली है, आज उसका पूरा पुरस्कार उन्हे मिला । मेरे वीरो ने आज तक युद्धभूमि मे जितना रक्त बहाया है, उस रक्त की एक-एक बूंद आज विजय के मुकुट मे माणिक रत्न बनकर सुसज्जित हो गयी है । मेरे वीरो, आज तुमने यूनान को एशिया के मस्तक पर रख दिया है, और यूनान का मस्तक आज हिमालय से भी ऊँचा है, हिमालम से भी ऊँचा ! एनिसाक्रिटीज, हिमालय से भी ऊँचा है ।

एनिसाक्रिटीज सत्य है देवपुत्र, बिल्कुल सत्य है ।

सिकन्दर आम्भि, तुम प्रसन्न हुए ?

आम्भि देवपुत्र, आज मेरी विजय दोनो ओर है । एक ओर तो मेरे मित्र और स्वामी देवपुत्र की विजय है और दूसरी ओर मुझ पर भाला चलाने वाला पौरव बन्दी है ।

सिकन्दर (**चीखकर**) कौन कहता है कि वह बन्दी है ? आम्भि ! तुम हमारे मित्र को अपमानित नही कर सकते । पौरव के सम्मान पर किसी प्रकार का प्रश्न-चिह्न लगाना मेरे सम्मान पर प्रश्न-चिह्न लगाना है । तुम वीर नही हो, तभी तो दूसरे वीर की उचित सराहना नही कर सकते । अभी तक तुम्हारे मन मे ईर्ष्या और अविश्वास है, इसीलिए मैने कहा था कि विश्वास जब स्वार्थ के पैरो पर चलता है तो वह अविश्वास बन जाता है और तुम अभी तक पूरे अविश्वासी बने हो ।

आम्भि आपके पथ-प्रदर्शन मे मेरा अविश्वास विश्वास मे बदल जायगा, देवपुत्र !

[मीरोईस का प्रवेश]

मीरोईस देवपुत्र ! महापुरुष पौरव आपकी सेवा मे उपस्थित है।

सिकन्दर सम्मान सहित लाओ ! इसी समय लाओ ! मै ऐसे वीर को प्रणाम करना चाहता हूँ।

मीरोईस जो आज्ञा ! [प्रस्थान]

सिकन्दर मैं अपने मित्र का स्वागत करना चाहता हूँ। जो वीरता पौरव ने दिखलाई है, उसके लिए बडे-से-बडा राज-सम्मान भी कम होगा। इस विजय के अवसर पर सारे वन्दी मुक्त किये जायँ। मैं शिविर मे जाकर पौरव के लिए तलवार और रत्नहार की भेट लाऊँगा।

आम्भि मुझे आज्ञा दीजिए, देवपुत्र !

सिकन्दर नही, मैं स्वय जाऊँगा। वीर का स्वागत अपने हाथो से करने मे मुझे प्रसन्नता होगी। [सिकन्दर का प्रस्थान]

एनिसाक्रिटीज देवपुत्र वीर का स्वागत करना जानते है, महाराज आम्भि ! महाराज पौरव आ गये।

[महाराज पौरव का प्रवेश। यद्यपि उनकी दाहिनी भुजा मे घाव है फिर भी वे गर्व से मस्तक ऊपर उठाकर चल रहे हैं। साढे छ फुट ऊँचे होने के कारण उनके साथ चलने वाले दो सैनिक बहुत छोटे मालूम होते हैं।]

एनिसाक्रिटीज महाराज पौरव को एनिसाक्रिटीज प्रणाम करता है !

पौरव इस देश को प्रणाम करो, वितस्ता को प्रणाम करो, जिसने तुम्हे विजय दी है। यूनानी युवक ! रणक्षेत्र मे वीरता की पूजा होती है, कुटिल नीति की नही। कुटिल योजना से ही तुमने विजय प्राप्त की है। इस विजय की मैं सराहना नही कर सकता। सिकन्दर, देवपुत्र सिकन्दर क्या यहाँ नही हैं ?

एनिसाक्रिटीज वे अपने शिविर से शीघ्र ही आने वाले है। आप-जैसे परमवीर का वे सम्मान करना चाहते है।

पौरव पराजित होने पर सम्मान ? यह मेरी वीरता के प्रति व्यग्य तो नही है ! (पीछे फिरकर) सैनिक ! दूर हटो ! तुम्हे मेरे इतने समीप आने की आवश्यकता नही। मेरे नियन्त्रण को वन्धन न वनाओ। मैं भागूँगा नही, शस्त्र का प्रयोग नही करूँगा, मैं तुम लोगो को वचन दे चुका हूँ। आर्यावर्त्त के वीर झूठ नही बोलते और मै वीर पुरुष हूँ।

सैनिक क्षमा करे, महाराज ! आपसे बढकर वीर पुरुष हमने नही देखा।

पौरव आम्भि को नही देखा ?

आम्भि अब भी मेरा अपमान करने का साहस तुममे है ?

पौरव देशद्रोही ! विश्वासघाती ! उद्भाण्ड पर सेतु बनवाकर तूने देश को जिस शृखला मे बांधा है, उसकी कडियाँ मेरे हाथो मे देख ! आज पौरव पराजित

हुआ है, कल देश का एक-एक वीर पराजित होगा। और तू इसे अपनी विजय समझेगा! तू युद्ध में मर नही सकता था? जीवित रहकर तुझे जीवन का कौन-सा गौरव मिल सका? क्या शव की तरह तू सिकन्दर के कंधो पर नही चढा है?

आम्भि : पौरव अपनी जीभ रोक!

पौरव : वह ज्वालामुखी की लपट है, वह तभी रुकेगी जब तुझे जलाकर भस्म कर देगी। दुष्ट! नराधम! मुझसे तू क्रुद्ध था तो मुझे युद्ध मे ललकारता, वीरता से युद्ध करता, तब या तो मैं जीवित रहता या तू, किन्तु वह जीवन मनुष्य का जीवन होता, पशु का नही, जिसे तू विदेशियो के चरणो मे लुठित कर रहा है। अपने देश की मर्यादा पर कुठाराघात करनेवाले आम्भि! (**क्रोध से कॉपता है।**)

एनिसाक्रिटीज महाराज! आप शात हो। आपके शरीर से रक्त अधिक निकल गया है। आपके लिए शीतल जल लाऊँ?

पौरव नही, मुझे जल की आवश्यकता नही है। इस बन्दी वेश मे मैं दूसरे के हाथ से दिया हुआ जल विष समझता हूँ।

[**सिकन्दर का प्रवेश**]

सिकन्दर : वीर पौरव! सिकन्दर तुम्हे प्रणाम करता है। तुम्हारी वीरता को प्रणाम करता है।

पौरव : इस प्रणाम का मै अधिकारी नही हूँ।

सिकन्दर वीर पौरव! तुम मेरे प्रणाम के अधिकारी हो, मेरी मित्रता के अधिकारी हो। पराजित होने पर भी तुम्हारे मुख पर विवशता नही है, घायल होने पर भी तुम्हारे शरीर मे शिथिलता नही है। तुम एक वीर की भॉति लडे और एक वीर की भॉति पराजित हुए। किन्तु, पौरव! तुम्हारी पराजय मेरे ऊपर विजय है। बोलो, मैं तुम्हारे साथ किस तरह का व्यवहार करूँ?

पौरव सिकन्दर! मेरे साथ वैसा ही व्यवहार हो जैसा किसी राजा के साथ किया जाता है।

सिकन्दर धन्य! धन्य! तुमने अपने योग्य ही कथन किया है। ऐसा ही होगा। तुम्हारे साथ राजाओ के समान ही व्यवहार किया जायगा। वीर के साथ व्यवहार करना राजसम्मान की शोभा है। यह तो मै अपनी ओर से करूँगा ही, किन्तु तुम अपनी ओर से जो कुछ भी चाहो, वह मुझसे ले सकते हो।

पौरव देवपुत्र! जो कुछ भी मैंने कहा है, वह पर्याप्त है। वीर पुरुष दो बाते कभी नही बोलते। मेरी बात का जो अर्थ आप लगाना चाहे वह लगा सकते है। इसके अतिरिक्त मैं कुछ नही कहना चाहता।

सिकन्दर वीर पौरव! तुम्हारा कहना बिलकुल सच है। राजा की मर्यादा वही जानता है जो युद्ध करता है। मैं तुम्हारी वीरता को सम्मानित करना चाहता हूँ। आज से तुम्हे मैं अपना मित्र मानता हूँ। आर्यवीर! तुम धन्य हो। यह

भेट स्वीकार करो, यह तलवार और यह रत्नहार !

[सिकन्दर भेंट मे तलवार और रत्नहार प्रस्तुत करता है ।]

पौरव—मै तुम्हारी मैत्री का स्वागत करता हूँ ।

सिकन्दर—धन्यवाद ! मै तुम्हारा राज्य तुम्हे लौटाता हूँ । तुम मेरे हिन्दोस्तान के राज्य के प्रतिनायक रहोगे । सब लोग कहो, आम्भीक, तुम भी कहो, महाराज पौरव की जय ! **[सब का सम्मिलित जय-घोष]**

[भैरवी का प्रवेश]

भैरवी **(उत्तेजित होकर)** नही, नही यह जय नही है, नही है । यह हमारे देश की हार है । सच्चे वीर-हृदय पौरव को मित्रता के नाम से अपनी विजय का एक साधन बनाया गया है । पौरव ! फेक दो यह तलवार, यह रत्नहार । यह हमारे देश को जीतने का इन्द्रजाल है ।

पौरव कौन ?

भैरवी मै हूँ, भैरवी । इस विजय के उत्सव मे मै मुक्त की गयी हूँ, किन्तु यह बन्धन की भूमिका है । पौरव ! यह बन्धन की भूमिका है । मै मस्सगा की नारी हूँ । मैंने स्वतत्रता के होमकुड मे हजारो वीरो और नारियो को आत्म-समर्पण करते देखा है । यह हमारे देश की मर्यादा नही है, पौरव ! यह धोखा है । यह प्रवचना है । यह तलवार तोड दो । यह माला अपने पैरो से कुचल दो ।

आम्भि सैनिक ! इस नारी को फिर से बन्दी बनाओ ।

भैरवी नही, नही ! मुझे कोई बन्दी नही बना सकता । मै अकेली ही अपने देश के लिए युद्ध करूँगी । आम्भि और पौरव सिकन्दर के आक्रमण को आगे बढाने के लिए रथ के दो चक्र होगे । मैं शिला बनकर इसे रोकूँगी, अवश्य रोकूँगी, पौरव ! पौरव ! यह हमारे देश की मर्यादा नही है । शत्रु से मिल-कर देश को कुचलना हमारे देश की मर्यादा नही है ।

आम्भि मै स्वय तुझे बन्दी करूँगा, नारी ! सैनिको, तुम भी मेरे साथ आओ !

भैरवी आम्भि ! अपनी जन्मभूमि को और कलकित न कर । मै इतने सैनिको से जीत नही सकूँगी, पर वन्दिनी भी नही बनूँगी । देश को बन्दी होता मैं नही देख सकती । तो फिर यह रही मेरी तलवार ! आज अपना रक्त ही देश की मर्यादा की वेदी पर चढाऊँगी । जय आर्यवृत्त ! जय जननी जन्मभूमि !

[तलवार से अपना मस्तक काट देती है ।]

पौरव **(चीखकर)** भैरवी ! भैरवी !

सिकन्दर **(विस्मय से)** भैरवी ! भैरवी !

[ध्वनि शून्य मे गूँजकर रह जाती है ।]

. 4

कौमुदी महोत्सव

●

पात्र-परिचय

सम्राट् चन्द्रगुप्त—कुसुमपुर के मौर्य सम्राट्
चाणक्य—सम्राट् चन्द्रगुप्त के महामंत्री
वसुगुप्त—कुसुमपुर के समाहर्त्ता
यशोवर्मन—कुसुमपुर के अन्तपाल
पुष्पदन्त—कुसुमपुर के कार्यान्तिक
अलका—राजनर्तकी
सैनिक और दौवारिक

●

समय—ई० पू० 322

कौमुदी महोत्सव

[बाहर चारो ओर कोलाहल हो रहा है। बीच-बीच मे तुरही का नाद हो उठता है। शंख और घंटो की आवाज भी सुन पडती है। धीरे-धीरे वह ध्वनि क्षीण होती है। राजकक्ष मे समाहर्त्ता वसुगुप्त और अन्तपाल यशोवर्मन बातें कर रहे है।]

वसुगुप्त आज कुसुमपुर की जनता का कोलाहल कितना उभरा हुआ है! ढाल के मध्य भाग की भाँति वह किसी भी तलवार का वार रोकने के लिए आगे बढ आया है। कुसुमपुर का उत्साह एक ढाल की तरह है, जिस पर विद्रोह की तलवार भी कुठित हो जायगी। अब तो अन्तपाल यशोवर्मन का सन्देह दूर हो गया होगा?

यशोवर्मन वसुगुप्त! सन्देह पानी का बुलबुला नही है जो एक क्षण मे भग हो जाता है। सन्देह तो धूमकेतु की रेखा है जो आकाश मे एक छोर से दूसरे छोर तक फैली रहती है। और धूमकेतु जानते हो किस बात का प्रतीक है—भय का, आशका का, अमगल का।

वसुगुप्त किन्तु भय, आशका और अमगल तो नही है। नन्दवश का विनाश होते ही ये ढाक के तीन पात की तरह अलग हो गये।

यशोवर्मन अलग-अलग भले ही हो गये हो, पर है तो।

वसुगुप्त अब रहे भी नही। जब शक, यवन, पारस और वाह्लीक राजाओ के साथ महाराज चन्द्रगुप्त ने कुसुमपुर मे प्रवेश किया तो सारी प्रजा ने उनका स्वागत किया। क्या इस कोलाहल मे तुमने प्रजाजनो के उत्साह की सरिता उमडते हुए नही देखी?

यशोवर्मन देखी, किन्तु इस उत्साह के बीच ऐसे कठ भी हो सकते है जिनमे व्यग्य और परिहास की ध्वनि हो। नन्द के प्रति राजभक्ति अभी निष्प्राण नही हुई है। हरी घास मे कुश और कटक भी होगे।

वसुगुप्त तो वे निर्मूल कर दिए जावेगे।

यशोवर्मन किन्तु आपको क्या ज्ञात नही है कि महाराज नन्द के मत्री राक्षस की नीति छद्मवेश धारण कर चलती है? नन्द नही है किन्तु नन्द के मत्री तो है जो छिपकर कुसुमपुर से बाहर चले गये है।

वसुगुप्त तो हमारे पास भी पहिचानने वाली आँखे है। **(जन-रव फिर बढता है।)**

देखो यह जन-रव बढ रहा, है ! वातायन बन्द कर दो !

यशोवर्मन हाँ, वात ही नही सुन पडती । [**वातायन बन्द करते हैं ।**]

वसुगुप्त तो सम्राट् चन्द्रगुप्त ने जब कुसुमपुर मे प्रवेश किया तो पहला कार्य तो यहाँ की शासन-व्यवस्था ठीक करना है।

यशोवर्मन आचार्य चाणक्य के मस्तिष्क मे राजनीति के न जाने कितने व्यूह प्रतिदिन बनकर बिगडते है, उनसे अधिक राजनीति की व्यवस्था कौन कर सकता है ?

वसुगुप्त तो क्या सम्राट् चन्द्रगुप्त का मस्तिष्क केवल वाहु-वल का केन्द्र ही है ?

यशोवर्मन · हाँ, आचार्य चाणक्य की नीति और सम्राट् चन्द्रगुप्त के वाहु-बल ने ही तो नन्दवश को समाप्त किया है। नन्दवश की विलासिता-सध्या सम्राट् चन्द्रगुप्त की यश-चन्द्रिका के सामने अधिक देर तक नही रुक सकी ।

[**नेपथ्य मे 'सम्राट् चन्द्रगुप्त की जय' का घोष**]

वसुगुप्त (**उत्सुकता से**) सम्राट् आ गये ? तो क्या जनता का इतना कोलाहल उन्ही के स्वागत के लिये था ? वातायन खोलकर देखो, यशोवर्मन !

यशोवर्मन मैं देखता हूँ । (**वातायन खोलते है । जन-रव फिर तीव्रता से सुनाई पडता है**) हाँ, जनता उत्सुकता से पुष्पो के हार उछाल रही है । महाराज ने अतरग प्रकोष्ठ के सिंह-द्वार से प्रवेश कर लिया है , उनका वेश इस समय दर्शनीय है। विस्तीर्ण ललाट, उठी हुई नासिका और बडे-वडे अरुण नेत्र। वे नागरिको से कुछ कह भी रहे है। कहते समय उनकी वाणी मे वीरत्व उसी प्रकार गुँजायमान होता है जैसे दिशाओ मे दूर से आती हुई प्रतिध्वनि सिमिट कर अतिम स्वर मे गूँजती है । उनकी भौंहो मे स्वाभाविक रूप से वल पडे हुए है जैसे दृष्टि के ऊपर आकाक्षाएँ वक्र होकर दुहरी हो गई है । घुँघराले मुक्त केशो पर मुकुट है, जिसकी कलगी सिर के हिलने मात्र से लज्जाशील नारी की दृष्टि की भाँति झुक जाती है । भुजदण्डो मे शक्ति का सचय है । ज्ञात होता है जैसे वे राज्य के मेरुदण्ड है । सैनिको जैसा वेश, हृदय पर मोतियो की माला, कमर मे मखमली म्यान के भीतर खड्ग । बडा उत्साहपूर्ण वेश-विन्यास है उनका !

वसुगुप्त (**प्रसन्नता से**) सचमुच, सम्राट् वीर-रस के प्रतीक है। वह दौवारिक आया।

[**दौवारिक का प्रवेश**]

दौवारिक महाराज की जय ! सम्राट् का आगमन हो रहा है।

वसुगुप्त हम लोग भी उनके स्वागत के लिए उत्सुक है । तुम जाओ, वाहरी द्वार पर सम्राट् पर पुष्प-वर्षा हो !

दौवारिक जो आज्ञा । [**प्रस्थान**]

यशोवर्मन सम्राट् ने तक्षशिला मे ग्रीक सैन्य-सचालन का जो कौशल देखा है, उस कौशल के बल पर तो वे समस्त भारत पर अपना साम्राज्य स्थापित कर सकते

है । उन्होने विदेशी राजनीति को स्वीकार कर किसी भविष्य कार्यक्रम की नीव डाली है, यह वहुत कम लोग जानते है ।

वसुगुप्त राजनीति के साथ नारी ! यही तुम्हारे कहने का तात्पर्य है ? [**दबी हुई सम्मिलित हँसी**]

[**सम्राट् की जय-ध्वनि के बाद सम्राट् चन्द्रगुप्त का कार्यान्तिक पुष्पदन्त के साथ प्रवेश**]

वसुगुप्त और यशोवर्मन (**सम्मिलित स्वर मे**) सम्राट् की जय !

चन्द्रगुप्त समाहर्त्ता वसुगुप्त ! कुसुमपुरी का वैभव मैने देखा । मुझे ऐसा ज्ञात होता है जैसे युद्ध की भैरवी ने कषाय वस्त्र धारण कर लिए है और वह सन्यासिनी हो गई है । नगर की शोभा मलीन है जैसे तलवार की झकार वायु मे विलीन हो गई है । नागरिको का यह उल्लास शृगालो का कोलाहल जैसा ज्ञात होता है जिसे हमे मनुष्यत्व देना है । नागरिको से कहला दो कि अब वे अपने घर जावे ।

वसुगुप्त जो आज्ञा, सम्राट् । [**प्रस्थान**]

[**धीरे-धीरे जन-रव शान्त हो जाता है ।**]

चन्द्रगुप्त और अन्तपाल यशोवर्मन ! जो तेज मैने ग्रीक सैनिक के सेवको मे देखा था वह कुसुमपुर के प्रतिष्ठित नागरिको तक मे नही है । यहाँ के व्यक्तियो मे स्पष्ट बात कहने का साहस नही है । एक छल है, एक विडवना है जो सोन नदी की भाँति कुसुमपुर को घेरे हुए है । उसे बधन-मुक्त करो, यशोवर्मन !

यशोवर्मन मुझे विश्वास है, सम्राट् ! आचार्य चाणक्य की नीति से कुसुमपुर एक कुसुम के समान सुन्दर और आपकी कीर्ति की भाँति निर्मल हो जायगा ।

[**वसुगुप्त का प्रवेश**]

चन्द्रगुप्त सभव है । आचार्य चाणक्य की नीति ने कुसुमपुर की राजनीति मे ऐसे चक्रव्यूह की रचना की है, जिसमे अराजकता का पथ मृत्यु-दीवार पर जाकर समाप्त होता है । और उस मृत्यु-दीवार की नीव मे जानते हो क्या है ? समस्त नन्दवश चिर-निद्रा मे शयन कर रहा है ।

वसुगुप्त और उस नन्दवश की आँखो मे विलासिता का मद अतिम क्षणो तक रहा है ।

चन्द्रगुप्त मुझे इस बात का दु ख है , किन्तु राजनीति कृपाण की धार का मार्ग है । जो व्यक्ति विलासिता का बोझ अपने सिर पर रखकर चलता है, वह उस कृपाण को निमत्रण देता है कि वह उसके शरीर के दो टुकडे कर दे । मै आचार्य चाणक्य के चक्रव्यूह की मृत्यु-दीवार को जीवन का प्रकाश-स्तम्भ बनाना चाहता हूँ ।

वसुगुप्त सम्राट् के बाहु-बल मे और आचार्य चाणक्य की नीति मे यह क्षमता है ।

चन्द्रगुप्त आचार्य चाणक्य की सहायता से जो कुछ भी अभी तक हुआ है, उनके प्रति

नागरिको को असतोष तो नही होना चाहिए। तक्षशिला के अनुभव से मैं कुसुमपुर की सभी बाधाएँ दूर करना चाहता हूँ। शासन का मापदण्ड प्रजा का सन्तोष और सुख होना चाहिए।

यशोवर्मन सम्राट् का कथन सत्य है।

चन्द्रगुप्त इसीलिए मै एक महोत्सव का आयोजन करना चहता हूँ—कौमुदी महोत्सव। शरद् ऋतु की आज पूर्णिमा है। इसलिए समाहर्त्ता वसुगुप्त के प्रस्ताव के अनुसार मैंने मध्याह्न मे इस निर्णय की घोषणा कर दी है। प्रकृति की इस चन्द्रमयी निर्मलता मे जनता के हृदय की समस्त पाप-वासनाएँ धुल जावे। कौमुदी महोत्सव इस भाँति कुसुमपुर का महान् राजनीतिक पर्व है।

वसुगुप्त सम्राट्! कुसुमपुर के सिंह-द्वार ने अभी तक शृगालो का स्वागत किया है। आपके प्रवेश ने सिंह-द्वार का नाम सार्थक किया।

चन्द्रगुप्त तुम प्रसन्न कर देने वाली बात कह सकते हो, वसुगुप्त! इसीलिए मैंने तुम्हे कुसुमपुर का नागरिक होने पर भी 'कर' एकत्रित करनेवाले समाहर्त्ता का नवीन पद दिया है। तुम मधुर बाते कहकर अच्छी तरह 'कर' एकत्रित कर सकते हो।

वसुगुप्त यह सम्राट् की कृपा है।

चन्द्रगुप्त फिर प्रजा का सन्तोष ही मेरे सुख का अग्रदूत है। **(कार्यान्तिक पुष्पदन्त को सम्बोधित करते हुए)** कार्यान्तिक पुष्पदन्त! कौमुदी महोत्सव के लिए कुसुमपुर के नागरिको मे उत्सुकता है?

पुष्पदन्त सम्राट्! जिस समय से कौमुदी महोत्सव का सवाद नागरिको के समीप पहुँचा है उस समय से प्रत्येक नागरिक ने शूद्र महापद्मनन्द की क्रूरता के उपसहार मे आपकी उदारता का 'भरत वाक्य' जोड दिया है। सम्राट् ने आचार्य चाणक्य की सहायता से शस्त्र, शास्त्र और पृथ्वी का उद्धार किया है। आपका कुसुमपुर मे प्रवेश शस्त्र-विजय का सूचक है, जिसमे शास्त्र का सतोष और पृथ्वी का कल्याण है।

यशोवर्मन प्रजा-वर्ग मे से कुछ व्यक्ति नन्दवश के समर्थक हो सकते है और नन्दवश के विनाश से उनका क्षुब्ध होना स्वाभाविक है, इसलिए कौमुदी महोत्सव के सम्बन्ध मे सम्राट् की घोषणा असतोष को सुख और ऐश्वर्य से भरकर उसमे राजभक्ति की तरग उठा सकती है। कौमुदी महोत्सव मे कुसुमपुर के निवासी अपनी नगरी की शोभा देखकर अपने वैर-विरोध को भूल सकते हैं। नगरी का ऐश्वर्य देखकर उनके विचारो की दिशा मे परिवर्तन हो सकता है। किन्तु हमे यह उत्सव सतर्कता से देखना चाहिए।

वसुगुप्त सतर्कता से देखने की ऐसी विशेष आवश्यकता नही है। नगरी का ऐश्वर्य जननी का ऐश्वर्य है। जननी का ऐश्वर्य देखकर किस पुत्र को प्रसन्नता न होगी! अपरिचित व्यक्ति की ओर से आई हुई कल्याण-कामना भी जब रुचिकर ज्ञात

होती है तो सम्राट् ! आप जैसे उदारमना सम्राट् की ओर से की गई कल्याण-कामना नागरिको के हृदय मे सम्राट् के प्रति भक्ति और श्रद्धा की मदाकिनी प्रवाहित किए बिना नही रहेगी।

चन्द्रगुप्त ऐसा ही हो ! **(कार्यान्तिक पुष्पदन्त से)** क्यो कार्यान्तिक पुष्पदन्त ! कौमुदी महोत्सव का क्या प्रबन्ध किया गया है ?

पुष्पदन्त . सम्राट् ! कौमुदी महोत्सव के अवसर पर कुसुमपुर को सजाने मे नायक ने अपनी सारी शक्ति लगा दी है। सोन और गगा के सगम पर एक शत नौकाओ को सम्राट् के शुभ नाम के आकार मे सजाकर उन पर चालीस हाथ ऊपर आकाश-दीपो की व्यवस्था की गई है, जिससे शरद-चन्द्रिका के हास के साथ सम्राट् का नाम भी दीपो का आलोक-मण्डल बनाता हुआ नागरिको के हृदयो मे प्रवेश कर जावे।

चन्द्रगुप्त . यह मनोवैज्ञानिक चातुर्य है। और ?

पुष्पदन्त : नगर के काष्ठ-प्राचीर के चौसठ द्वारो पर मगल-कलशो की तरगे सुसज्जित होगी। दूर से ऐसा ज्ञात होगा कि कुसुमपुर प्रकाश का एक सरोवर है जिसमे चारो ओर से दीप-किरणो की चौसठ तरगे प्रवाहित हो रही है।

चन्द्रगुप्त यह सौन्दर्य-रचना सराहनीय है !

पुष्पदन्त सम्राट् ! प्राचीर पर जो पाँच सौ सत्तर अलिन्द है उनमे नगर की उतनी ही बालाएँ मणिजटित आभूषणो से अपने को सुसज्जित कर प्रकाश के आलोक मे नृत्य करेगी। उनके नृत्य मे जब उनके रत्न प्रकाश की किरणो से आलोकित होगे तो ज्ञात होगा जैसे किरणो के कमलो मे प्रकाश-बिन्दुओ के भ्रमर क्रीडा कर रहे है।

चन्द्रगुप्त यह तो बहुत सुन्दर होगा !

पुष्पदन्त और सम्राट् ! प्राचीर के चारो ओर जो सोन नदी की नहर है उसमे सहस्रो दीप-दान होगे। ज्ञात होगा जैसे नगर के चारो ओर दीपो की आकाश-गगा बहती जा रही है।

वसुगुप्त सम्राट् ! नायक पुरस्कार का अधिकारी है।

चन्द्रगुप्त निस्सदेह, और कार्यान्तिक पुष्पदन्त ! तुम इस बात की घोषणा कर दो कि इस महोत्सव मे जितने भी पण व्यय किये जायँ वे राजकोष से व्यय न होकर मेरे 'चन्द्रकोष' से व्यय किये जायँ। यद्यपि इस उत्सव से प्रजा-वर्ग का मनोरजन होगा तथापि इसका व्यय-भार मै वहन करूँगा।

वसुगुप्त . यह सम्राट् की उदारता है। शूद्र राजा महापद्म तो प्रजा से सहस्र-सहस्र पण लेकर उन्हे अपने विलास मे व्यय करते थे और प्रजाजनो को उसी अवसर पर प्राणदण्ड का पुरस्कार मिलता था। अपने को एक राष्ट्र घोषित करते हुए भी वे प्रजाजनो के हृदयो मे अणु-मात्र भी स्थान नही बना सके थे। यही अवस्था उनके पुत्र घननन्द के समय मे थी।

चन्द्रगुप्त वसुगुप्त ! अपने समारोह को इन अरुचिकर चर्चाओ से क्षत-विक्षत मत होने दो ।

वसुगुप्त मुझसे भूल हुई, सम्राट् ! मैं क्षमा-प्रार्थी हूँ ।

चन्द्रगुप्त और कार्यान्तिक पुष्पदन्त ! प्रजा-भवनो का शृगार कैसा होगा ?

पुष्पदन्त सम्राट् ! प्रजा-भवनो की श्रेणी मे विविध रग के प्रकाश-तोरणो की व्यवस्था है । ऐसा ज्ञात होगा जैसे रात्रि मे भी सम्राट् की राजधानी मे सप्त रगो के इन्द्रधनुष विविध नृत्य-मुद्राओ मे सजे है ।

वसुगुप्त और इस अवसर पर सम्राट् के समक्ष नन्दवश की राजनर्तकी के नृत्य की व्यवस्था भी तो होनी चाहिए ?

यशोवर्मन यह समय तो नगरी की शोभा देखने का होगा, नर्तकी की शोभा देखने का नही ।

वसुगुप्त नगरी की शोभा देखने के अनन्तर सम्राट् विश्राम भी तो चाहेगे ! विश्राम के क्षणो को निद्रालु बनाने के लिए राजनर्तकी के नृत्य की आवश्यकता भी होगी ।

चन्द्रगुप्त कार्यान्तिक पुष्पदन्त ! जाओ, और नायक से कौमुदी महोत्सव की व्यवस्था शीघ्र करने के लिए कहो । मेरे 'चन्द्रकोष' से उसे पाँच सहस्र पण के पुरस्कार की सूचना भी दो, कौमुदी महोत्सव के प्रारम्भ का सकेत मुझे तूर्य-नाद से मिलना चाहिए ।

पुष्पदन्त जो आज्ञा, सम्राट् ! [**प्रस्थान**]

चन्द्रगुप्त नायक वास्तव मे पुरस्कार का अधिकारी है । कुसुमपुर मे ऐसी सौन्दर्य-रचना सभवत पहली बार होगी ! क्यो वसुगुप्त ?

वसुगुप्त निस्सदेह, सम्राट् ! कुसुमपुर मे रहते मेरा इतना जीवन व्यतीत हुआ, किन्तु महाराज नन्द ने विलासिता की थाह पाकर भी कभी अपनी नगरी का ऐसा शृगार नही किया । यह श्रेय आपके ही शासन को होगा कि कुसुमपुर सचमुच सौन्दर्य का कुसुम बन सका ।

चन्द्रगुप्त वसुगुप्त ! तुम्हारी प्रशसा अतिशयोक्तियो से भरी होती है । इतनी प्रशसा सुनकर मुझे कभी-कभी सन्देह होने लगता है ।

वसुगुप्त किस सम्बन्ध मे, सम्राट् ?

चन्द्रगुप्त जो तुम कहते हो, उसकी यथार्थता मे ।

वसुगुप्त सम्राट् परीक्षा करके देख ले । सत्य को सत्य कहना कोई अतिशयोक्ति नही है, सम्राट् ! और फिर सम्राट् भी तो स्पष्टवक्ता है । सम्राट् स्वय इस बात को समझते होगे ?

चन्द्रगुप्त चन्द्रगुप्त रण-नीति के अतिरिक्त और कुछ नही समझना चाहता, वसुगुप्त ! समाहर्त्ता के नवीन पद पर तुम्हारी नियुक्ति के सम्बन्ध मे भी महामत्री चाणक्य ही समझे । इस सम्बन्ध मे उनसे पूछने का मुझे अवकाश ही नही मिला ।

यशोवर्मन आचार्य चाणक्य से पूछना बहुत आवश्यक था, सम्राट् !

वसुगुप्त यशोवर्मन ! तुम्हे मेरा अपमान करने का कोई अधिकार नही। तुम मुझे द्वन्द्व-युद्ध के लिए प्रेरित करते हो !

यशोवर्मन सम्राट् के सेवक और आचार्य महामत्री चाणक्य के शिष्य होने के नाते मै द्वन्द्व-युद्ध के लिए प्रस्तुत हूँ, वसुगुप्त ! सम्राट् ! मै द्वन्द्व की आज्ञा चाहता हूँ।

चन्द्रगुप्त यशोवर्मन ! यह राजकक्ष है, समरागण नही। कौमुदी महोत्सव को रक्त का अभिषेक नही चाहिए। तुम्हे भी इतने शीघ्र क्षुब्ध नही होना चाहिए।

वसुगुप्त सम्राट् ! मै क्षमा चाहता हूँ। किन्तु सत्य की रक्षा हो।

चन्द्रगुप्त अवश्य होगी। और आज कौमुदी महोत्सव मे तो सौन्दर्य की भी रक्षा होगी। हाँ, तुम राजनर्तकी के सम्बन्ध मे क्या कह रहे थे ?

वसुगुप्त सेवक यही निवेदन कर रहा था, सम्राट्, कि सम्राट् के विश्राम-क्षणो को निद्रालु बनाने के लिए राजनर्तकी के नृत्य की आवश्यकता हो !

चन्द्रगुप्त हाँ, होनी चाहिए।

वसुगुप्त तो सम्राट् ! मैने उसकी सज्जा के लिए विशेष प्रबन्ध करा दिया है। वह राज-प्रासाद के उत्तर-कक्ष मे वेश-भूषा से सुसज्जित है।

चन्द्रगुप्त मेरी इच्छाओ के पूर्व ही कार्य की आयोजना करनेवाले वसुगुप्त ! मै तुमसे प्रसन्न हूँ। कौमुदी महोत्सव मे सदैव मेरे साथ रहोगे।

वसुगुप्त यह मेरा सौभाग्य है, सम्राट् !

चन्द्रगुप्त इस अवसर पर मुझे तक्षशिला का स्मरण हो आता है, उस तक्षशिला मे जहाँ अट्ठारह विषयो की शिक्षा दी जाती थी। सहस्रो विद्यार्थी थे। वहाँ मेरे एक मित्र थे। तुमने भी उनका नाम सुना होगा। प्रसिद्ध सस्कृतज्ञ कात्यायन।

वसुगुप्त वे तो व्याकरण-निर्माता पाणिनि के अभ्यास-सिद्ध शिष्य प्रसिद्ध है, सम्राट् !

चन्द्रगुप्त हाँ। मै आयुर्वेद, धनुर्वेद और शल्य सीखता था और कात्यायन वेद और व्याकरण। पाणिनि के व्याकरण सूत्र भाषा और साहित्य के पूर्व ही चलते थे। उसी प्रकार तुम्हारे कार्य भी मेरी इच्छा के पूर्व ही हो जाते है।

वसुगुप्त आप मुझे आदर देते है, प्रभु !

चन्द्रगुप्त वही आचार्य चाणक्य से मैत्री हुई। नीति-निष्णात आचार्य चाणक्य के समान बुद्धि और अन्तर्दृष्टि मे आज समस्त आर्यावर्त्त मे एक भी व्यक्ति नही है। यह मेरा सौभाग्य है कि वे मेरे आचार्य और महामत्री है।

यशोवर्मन सम्राट् ! आचार्य चाणक्य की नीति अमर होने की क्षमता रखती है। राजनीति के साथ आयुर्वेद आदि मे भी आचार्य चाणक्य निपुण है। चीन के एक राजकुमार अपनी नेत्र-पीडा की चिकित्सा कराने के लिए तक्षशिला आये थे। आचार्य चाणक्य ने एक सप्ताह की चिकित्सा मे ही उन्हे स्पष्ट दृष्टि प्रदान की।

चन्द्रगुप्त . यह मै जानता हूँ। उनकी राजनीति पर मुग्ध होकर तक्षशिला शासक

आम्भीक उन्हे तक्षशिला मे ही रखना चाहता था। किन्तु उन्होने वहाँ रहना स्वीकार नही किया। उन्होने मुझे आश्वासन दिया था कि हम दोनो एक स्वतन्त्र राज्य की स्थापना करेगे।

यशोवर्मन · और सम्राट्! उनका कथन अत मे कितना सत्य निकला!

चन्द्रगुप्त · सत्य क्यो न होता, मानवी हृदय को पहिचानने की अतर्दृष्टि उनमे इतनी अधिक है कि वे एक ही क्षण मे उसका सम्पूर्ण कार्यक्रम स्पष्टत बतला सकते है। वे कार्य करने की शैली जानते है। अपूर्व शक्ति, अपूर्व साहस और अपूर्व बुद्धि का विचित्र समन्वय उनमे हुआ है।

यशोवर्मन वे नर-रत्न है, सम्राट्! आपके सहयोग से वे राज्य को निष्कटक बना देगे।

चन्द्रगुप्त मैं भी ऐसा ही अनुमान करता हूँ, किन्तु कौमुदी महोत्सव के सम्बन्ध मे भी मै आचार्य चाणक्य से परामर्श नही कर सका। सग्राम की उलझनो ने अवकाश ही नही दिया, किन्तु इसकी सूचना तो उन्हे अवश्य मिल चुकी होगी!

वसुगुप्त वे आपकी इच्छा का समर्थन ही करेगे। कौमुदी महोत्सव की उपयोगिता और सामयिकता तो वे अपनी अन्तर्दृष्टि से अवश्य ही देख चुके होगे। तो अब समय अधिक हो रहा है। सम्राट्, राजनर्तकी के नृत्य के सम्बन्ध मे क्या निर्णय करते हैं?

चन्द्रगुप्त उसका क्या नाम है?

वसुगुप्त : 'अलका', सम्राट्। वह अनिद्य सुन्दरी और अद्वितीय नृत्य-कला की साम्राज्ञी है।

चन्द्रगुप्त मैं पहले उसे देखना चाहूँगा।

वसुगुप्त अवश्य, सम्राट्! वह राज-प्रासाद के उत्तर-कक्ष मे वेश-भूषा से सुसज्जित है। आज्ञा हो तो उसे सम्राट् की सेवा मे निरीक्षणार्थ उपस्थित करूँ?

चन्द्रगुप्त ऐसा ही हो।

वसुगुप्त जो आज्ञा, मैं उसे अभी सम्राट् की सेवा मे उपस्थित करता हूँ। [**वसुगुप्त का प्रसन्नता के साथ प्रस्थान**]

चन्द्रगुप्त अन्तपाल यशोवर्मन! आज राजनर्तकी अलका का नृत्य देखकर मै कुसुम-पुर की उत्कृष्ट नृत्य-कला का परिचय पा सकूँगा।

यशोवर्मन मैं सम्राट् की सेवा मे एक निवेदन करना चाहता हूँ?

चन्द्रगुप्त निवेदन करो।

यशोवर्मन विलासी नद-वश की राजनीति मे यह राजनर्तकी अलका है।

चन्द्रगुप्त यह राजनर्तकी अलका?

यशोवर्मन हाँ, सम्राट्! राजनर्तकी के जीवन का यह सबसे बडा अभिशाप है कि वह नद-वश के विनाश का कारण बनी। और इस तरह वह निर्दोष नही कही जा सकती।

चन्द्रगुप्त . निर्दोप ? वह सब प्रकार से दोषी कही जानी चाहिए। गौतम ने ग्रहिल्या को शाप क्यो दिया ? क्या ग्रहिल्या ने ग्रपने सदाचार से ग्रपने सौन्दर्य की रक्षा नही की थी, फिर क्यो उसने इन्द्र को नही पहिचाना ? शची का सौभाग्य ग्रप्सराग्रो को बाँटनेवाले इन्द्र की लालसा का भी परिचय चाहिए। वैसे ही क्या ग्रलका महाराज नन्द को नही पहिचान सकी ? क्या महाराज नन्द की ग्राँखो मे उसके ग्रगराग की ग्ररुण रेखाएँ विद्युत् बनकर नही चमक उठी ? यशोवर्मन ! तुम जानते हो ग्राकाश की उल्का प्रकाश से ग्रोतप्रोत रहती है; किन्तु जब वह उदित होती है तो समस्त ससार मे ग्रमगल की ग्राशका क्यो होती है ?

यशोवर्मन . जब सम्राट् ऐसा सोचते है तो उसके नृत्य की ग्रनुमति क्यो दे रहे है ?

चन्द्रगुप्त केवल कौमुदी महोत्सव को शोभा-सपन्न करने के लिए ग्रौर कुसुमपुर की जनता के मन मे यह सतोष उत्पन्न करने के लिए कि सम्राट् चन्द्रगुप्त ने महाराज नन्द के ग्राश्रितो के साथ सहानुभूति का व्यवहार किया। तुम जानते हो, यशोवर्मन ! महाराज नन्द के लिए जो विप था, उसे मै ग्रमृत मे परिणत करना चाहता हूँ।

यशोवर्मन सम्राट् तक्षशिला के स्नातक है। सम्राट् जानते है कि राजनीति मे राजनर्तकी का क्या स्थान है।

चन्द्रगुप्त वही स्थान जो कृपाण की धार को ढकने के लिए म्यान का होता है। राजनीति रूपी कठोर कृपाण का ग्रातक छिपाने के लिए राजनर्तकी रूपी ग्राव-रण ग्रावश्यक है; किन्तु वह ग्रावरण कृपाण की धार को कुठित नही करता। राजनीति की परुषता प्रजा की दृष्टि से ग्रोझल रहना ग्रावश्यक है।

यशोवर्मन सत्य है, सम्राट् !

चन्द्रगुप्त किन्तु महाराज नन्द की राजनीति राजनर्तकी से कुठित हो गई। तलवार ही म्यान बनकर रह गई, मै राजनर्तकी को म्यान बनाकर रखना चाहता हूँ। (**रुककर**) क्या कारण है मुझे कौमुदी महोत्सव के प्रारभ की सूचना तूर्य द्वारा नही सुन पडी ?

[**वसुगुप्त का प्रवेश**]

वसुगुप्त सम्राट् ! राजनर्तकी सेवा मे उपस्थित है।

चन्द्रगुप्त उपस्थित करो ! वह मेरे कक्ष के वातावरण को सगीत ग्रौर नृत्य से मुखरित करे।

वसुगुप्त जो ग्राज्ञा, सम्राट् ! [**प्रस्थान**]

चन्द्रगुप्त ग्रन्तपाल यशोवर्मन ! नृत्य ग्रौर सगीत कौमुदी महोत्सव की वह प्रस्तावना है जिसमे उमग की रूपरेखा मगल के रग मे सुसज्जित होती है। नृत्य मे ऐसी मनोहर भावनाएँ है जिनमे सुख का रहस्य जागता है।

[वसुगुप्त के साथ राजनर्तकी अलका का प्रवेश]

अलका सम्राट् की सेवा मे अलका का प्रणाम स्वीकार हो ! [अत्यन्त सुकुमार भाव से प्रणाम करती है ।]

चन्द्रगुप्त (हाथ उठाकर) कुसुमपुर की श्री और शोभा की अधिवासिनी बनो । (यशोवर्मन से) यशोवर्मन ! तुम जा सकते हो ।

यशोवर्मन जो आज्ञा, सम्राट् ! मेरा निवेदन है कि इस नृत्य-समारोह मे आचार्य चाणक्य भी सम्मिलित हो ।

चन्द्रगुप्त (हँसकर) आचार्य चाणक्य ! राजनीति को कविता से मिलाना चाहते हो ? मुझे कोई आपत्ति नही। यदि चाहो तो उन्हे यहाँ भेज सकते हो । वे भी राजनीति के कुचक्रो से थक गये होगे, उन्हे भी विश्राम की आवश्यकता होगी । राजनीति का मस्तिष्क आज नृत्य की कविता से हृदय की सहानुभूति प्राप्त करे ।

वसुगुप्त जो आज्ञा, सम्राट् ! [प्रस्थान]

चन्द्रगुप्त राजनीति और कविता ! (राजनर्तकी से) क्यो राजनर्तकी ! तुम राजनीति की ताल पर नृत्य कर सकती हो ?

अलका सम्राट् ! अभी तक तो राजनीति ही मेरे नृत्य की ताल थी । किन्तु मैंने इसकी ओर कभी ध्यान दिया ही नही । राजनर्तकी का राजनीति से क्या सम्बन्ध, सम्राट् ! वह तो राज्य की अनुचरी-मात्र है ।

चन्द्रगुप्त (हँसकर) इन्ही छद्मवेशी शब्दो से अनुचरी स्वामिनी बन जाती है, राजनर्तकी ! महाराज नन्द तुम पर मोहित थे या तुम महाराज नन्द पर मोहित थी ?

अलका सम्राट्, मुझे क्षमा करे । सच्ची नारी मोहित नहीं होना चाहती, वह आत्म-समर्पण करना चाहती है । जो नारी मोहित होती है, वह अपने रूप का व्यापार करती है, हृदय का समर्पण नही ।

चन्द्रगुप्त तुम किस व्यापार मे विश्वास करती हो—रूप के व्यापार मे या हृदय के व्यापार मे ?

अलका हृदय का व्यापार नही होता, सम्राट् !

चन्द्रगुप्त तो हृदय का समर्पण सही ।

अलका उस समर्पण की कोई भाषा नही होती, सम्राट् ! जिस समर्पण मे भाषा होती है, वह व्यापार बन जाता है, और हृदय का व्यापार कभी नही होता ।

चन्द्रगुप्त पर महाराज नन्द तो हृदय का व्यापार करते थे । और उस व्यापार मे वे अपना सारा साम्राज्य हार गये । क्या यह बात सत्य नही है ?

अलका सत्य है, सम्राट् ! किन्तु पुरुष तो व्यापारी है, वह अपने व्यापार मे सब कुछ लुटा सकता है ।

चन्द्रगुप्त के पुरुषो प्रति तुम्हारी बहुत हीन दृष्टि है, राजनर्तकी !

अलका : उसी प्रकार जैसे पुरुषो की नारियो के प्रति हीन दृष्टि है, सम्राट् ! वे नारी को विलासिता की सामग्री बनाकर छोड देते है।

चन्द्रगुप्त किन्तु कोई नारी बलपूर्वक विलासिता की सामग्री नही बनाई जा सकती। वह अपनी विजय के लिए विलासिता की सामग्री बनती है और दोष पुरुषो को देती है।

अलका सम्राट् राजनीति के आचार्य है और सेविका राजनीति के पैरो से कुचली हुई धूल है, सम्राट् ! मै क्या निवेदन कर सकती हूँ !

चन्द्रगुप्त किन्तु राजनर्तकी ! धूल भी सिर पर चढ सकती है।

अलका हाँ, सम्राट् ! जब व० पैरो से ठुकराई जाती है। किन्तु सेविका का यह अधिकार नही।

चन्द्रगुप्त अधिकार नही, राजनर्तकी ! यह तो उसकी गति है। गति मे अधिकार का आडम्बर नही होता, उसमे शक्ति की विद्युत् होती है। और तुममे वह शक्ति की विद्युत् है जिसने आकाश का हृदय चीरते हुए तडपकर नन्द जैसे विशाल शाल वृक्ष को धराशायी कर दिया।

अलका तब तो मुझे विद्युत् की भाँति ही पृथ्वी मे विलीन हो जाना चाहिए, सम्राट् !

चन्द्रगुप्त किन्तु राजनर्तकी महासती सीता नही बन सकती जो भूमि मे विलीन हो जावे। राजनर्तकी को राज्य का शृगार करना पडता है।

अलका यह मेरे जीवन का अभिशाप है, सम्राट् ! ऐसे फूलो का क्या सौन्दर्य जो किसी शव पर बिखेर दिए जाते है। आज आपके चरणो पर गिरकर मै अपने जीवन से मुक्त हो जाऊँगी।

चन्द्रगुप्त निराशा की बाते मत करो, राजनर्तकी ! तुम जानती हो आज कौमुदी महोत्सव है। कुसुमपुर की जनता मेरे साथ आनन्द-विभोर हो जाना चाहती है। तुम्हे मधुर गायन से वातावरण को गुजित करना है।

अलका सम्राट् की जो आज्ञा। किन्तु आज से मै राजनर्तकी का पद त्याग दूंगी और आपके चरणो की धूल मे शयन कर अमर हो जाऊँगी।

चन्द्रगुप्त राजनर्तकी ! तुम्हारा यह वार्त्तालाप महाराज नन्द से नही हो रहा, सैनिक चन्द्रगुप्त से हो रहा है। मुझे अपने चरणो की धूल वीरो की परम्परा के लिए छोडनी है, राजनर्तकियो की परम्परा के लिए नही, किन्तु मै तुमसे प्रसन्न हूँ। कुसुमपुर के नागरिको को नृत्य-शिक्षा दो और उसका मगलाचरण आज कौमुदी महोत्सव मे तुम्हारे नृत्य से हो। नृत्य प्रारम्भ करो, जिससे कुसुमपुर का वायुमडल तुम्हारे नूपुरो के स्वरो का वाहक बनकर कौमुदी महोत्सव का निमत्रण प्रत्येक दिशा मे पहुँचा दे।

वसुगुप्त अलका ! तुम्हे कुसुमपुर के आदर्श नृत्य का परिचय सम्राट् को देना है। इस समय तुम्हे ऐसा नृत्य करना है कि सम्राट् नृत्य-विभोर होकर अपने जीवन

के समस्त विषाद को भूल जायँ ।

चन्द्रगुप्त मुझे तो कोई विषाद नही है, वसुगुप्त ।

वसुगुप्त सम्राट् को विषाद ही क्या हो सकता है ! सम्राट् तो सैनिक है । सैनिको को विषाद कैसा ! मै तो यही कहना चाहता था कि कुसुमपुर के नागरिको के हित-चिन्तन मे लगा हुआ आपका मन जो थका हुआ है. . .

चन्द्रगुप्त ठीक है । राजनर्तकी ! नृत्य प्रारम्भ हो ।

अलका जो आज्ञा सम्राट् की !

[प्रणाम कर नृत्य प्रारम्भ करती है । कुछ देर नृत्य करने के बाद मधुर कंठ से गीत गाती है]

आज मधुमय कुसुमो के द्वार—
द्वार पर है अलि का गुजन !
सजीली थी मधुवन की गली,
समीरन धीरे-धीरे चली,
फूल के पास खिल गई कली,
और नभ से सध्या ने उतर,
लगाया आँखो मे अजन !
आज मधुमय कुसुमो के द्वार—
द्वार पर है अलि का गुंजन !

[थोडी देर तक नृत्य होता रहता है । अन्त मे सम्राट् के मुख से प्रशसा के शब्द निकलते है]

चन्द्रगुप्त बहुत सुन्दर, राजनर्तकी अलका ! तुम जितनी सुन्दर हो, उतना ही सुन्दर तुम्हारा नृत्य है । यह लो अपना पुरस्कार !

[चन्द्रगुप्त अपने गले से मोतियो की माला उतारते है । सहसा आचार्य चाणक्य का प्रवेश]

चाणक्य पुरस्कार नही दिया जावेगा, सम्राट् !

चन्द्रगुप्त **(आश्चर्य से रुककर)** महामत्री चाणक्य !

चाणक्य सम्राट् ! आग बुझ जाने पर भी आग की राख गरम रहती है, उसे तुम हाथ मे नही उठा सकते । तुम इतने थोडे समय मे कैसे मान बैठे कि कुसुमपुर की आग इतनी शीतल भस्म हो गई है कि उसमे कुसुमो की क्यारियाँ सजाई जायँ ?

चन्द्रगुप्त महामन्त्री ! चन्द्रगुप्त ने कुसुमो की क्यारियो मे नही, समरागण मे अपने जीवन का वैभव देखा है । उसने नूपुरो की झकार मे नही, तलवारो की झकार मे अपने जीवन का सगीत गाया है । आपने यह कैसे समझ लिया कि चन्द्रगुप्त के क्षणिक मनोविनोद मे उसका समरागण कुसुम की क्यारी बन गया ? आपको यह समझना चाहिए कि यह क्षणिक विश्राम भविष्य के युद्ध की भूमिका है ।

चाणक्य : और सम्राट् चन्द्रगुप्त, यदि इस क्षणिक विश्राम मे ही जीवन का अन्त हो गया तो ? तुम्हारे भविष्य के वैभव का समरागण ही कही तुम्हारे शव का श्मशान बन गया तो इस विश्राम के क्षण को तुम क्या कहोगे ?

चन्द्रगुप्त आर्य ! विश्राम के क्षणो की सीमा क्या और कितनी है, यह जानने के लिए चन्द्रगुप्त के पास पर्याप्त विवेक......

चाणक्य (बीच ही मे). .. नही है। यही समझकर मै अपने साथ सैनिक लाया हूँ। (पुकारकर) सैनिको ! राजनर्तकी और समाहर्त्ता को अपने नियत्रण मे लो।

[सैनिक नेपथ्य से निकलकर आगे बढ़ते है।]

वसुगुप्त सम्राट् ! राजमर्यादा भग हो रही है, रक्षा कीजिए !

चन्द्रगुप्त महामत्री ! वसुगुप्त अपने नवीन समाहर्त्ता है।

चाणक्य · किन्तु इस समय वे बन्दी है। सैनिको, दोनो को नियत्रण मे लो। यदि कोई विरोध हो, तो बल प्रयोग हो !

वसुगुप्त (करुण स्वर मे) मै निर्दोष हूँ, मै निर्दोष हूँ, सम्राट् ! महामत्री ! मैं निर्दोष हूँ।

अलका (अत्यन्त करुण स्वर मे) मेरा स्पर्श कोई न करे। मै नारी हूँ। नारी की मर्यादा सुरक्षित हो, सम्राट् ! नारी की मर्यादा सुरक्षित हो। मै स्वय नियत्रण मे होती हूँ। हाय, नारी नियत्रण मे, सदैव नियत्रण मे, जीवन-भर नियत्रण मे ! [विह्वल हो जाती है।]

चन्द्रगुप्त (आगे बढ़कर) आर्य चाणक्य !...

चाणक्य कुछ मत कहो इस समय, सम्राट् चन्द्रगुप्त ! चाणक्य अपना कर्त्तव्य अच्छी तरह समझता है। सैनिको ! दोनो को नियत्रण मे लेकर दूसरे कक्ष मे जाओ।

सैनिक जो आज्ञा ! [दोनो को बन्दी कर सैनिकों का प्रस्थान]

चन्द्रगुप्त यह राजमर्यादा की सबसे बडी अवहेलना है, महामन्त्री ! जिस राजमर्यादा की पूजा हमने रक्त चढाकर की है, उसी राजमर्यादा को तुच्छ सैनिक अपने पैरो की धूल से कलकित करे ! यह कैसी राजनीति है ? आज कौमुदी महोत्सव के अवसर पर . .

चाणक्य कौमुदी महोत्सव ?

चन्द्रगुप्त . हाँ, कौमुदी महोत्सव। क्या आपने मेरी घोषणा नही सुनी ?

चाणक्य वह सुनने योग्य नही थी।

चन्द्रगुप्त आप राजमर्यादा का इतना अपमान कैसे कर रहे है, महामन्त्री ! कौमुदी महोत्सव की घोषणा कुसुमपुर मे मेरी प्रथम राजघोषणा है।

चाणक्य : वह राजघोषणा प्रारम्भ होने से पूर्व ही समाप्त हो गई।

चन्द्रगुप्त (आश्चर्य से) समाप्त हो गई ! किसने यह साहस किया ?

चाणक्य मैने, आर्य चाणक्य ने ।

चन्द्रगुप्त इसीलिए मुझे घोषणा का तूर्य नही सुन पडा । तो आपने कौमुदी महोत्सव की घोषणा नही होने दी ?

चाणक्य नही, मैंने ही घोषणा नही होने दी ।

चन्द्रगुप्त मै कारण जानना चाहता हूँ ।

चाणक्य मै कारण नही बतला सकता ।

चन्द्रगुप्त सम्राट् कौन है, चन्द्रगुप्त या चाणक्य ?

चाणक्य चन्द्रगुप्त ।

चन्द्रगुप्त फिर सम्राट् चन्द्रगुप्त की आज्ञा की अवहेलना क्यो हो रही है ?

चाणक्य इसलिए कि वह आज्ञा किसी मचले बालक की हठ की तरह है ।

चन्द्रगुप्त फिर भी उसकी रक्षा चाहिए ।

चाणक्य नही, बालक आग पकडना चाहता है । उसे आग पकडने की सुविधा नही दी जा सकेगी ।

चन्द्रगुप्त यह तुम्हारा गर्व है, महामन्त्री !

चाणक्य यह तुम्हारा अज्ञान है, सम्राट् !

चन्द्रगुप्त (क्रुद्ध होकर) महामन्त्री ! कुसुमपुर की विजय मे तुम्हारा हाथ रहा है, तो क्या इतनी छोटी-सो विजय ने ही तुम्हारे गर्व की चिनगारी को फूंक मार कर लपट मे परिवर्तित कर दिया ? यह गर्व उस चिता की ज्वाला है जिसमे तुम्हारी राजनीति जलकर भस्म हो सकती है !

चाणक्य मुझे इसकी चिन्ता नही है, सम्राट् ! गर्व मेरे अन्त करण का अधिकार है । वह राज्य से अनुशासित नही है । किन्तु मै यह स्पष्ट कर देना चाहता हूँ कि चाणक्य के गर्व की चिनगारी स्वर्ग के राज्य को प्राप्त करके भी लपट नही बनेगी । हॉ, अपमान के हल्के झोके से ही यह दावाग्नि बनकर तुम्हारे वैभव के नन्दन वन को क्षण-भर मे भस्म कर सकती है । क्या तुम नन्दवश के विनाश की पुनरावृत्ति देखना चाहते हो ?

चन्द्रगुप्त आर्य चाणक्य ! सैनिक चन्द्रगुप्त विलासी नन्द नही है जो पतन के गर्त के मुख पर खडा होकर हलकी-सी राजनीति के धक्के की प्रतीक्षा करे । मौर्य चन्द्रगुप्त हिमाद्रि की तरह सुदृढ है, जिसे महामन्त्री चाणक्य की कुटिल राजनीति रूपी ऑधियो के झोके एक कण-भर भी विचलित नही कर सकते ।

चाणक्य मौर्य चन्द्रगुप्त ! क्षत्रियत्व क्या इतना पतित हो गया कि वह ब्राह्मणत्व पर पदाघात करे ? क्या तुम जानते हो कि मौर्य हिमाद्रि की भाँति सुदृढ कैसे हो पाया ? उसकी सुदृढता को धारण करनेवाली पृथ्वी इसी ब्राह्मण की राजनीति है । यदि यह शक्ति एक क्षण के लिए अलग हो जाय तो हिमाद्रि इतने वेग से नीचे गिरेगा कि वह अपने साथ समीपवर्ती वृक्षो को भी लेकर समुद्र-

तल मे चला जायगा और तब समुद्र की तरगे इसी ब्राह्मण के चरणो मे लौटने के लिए आवेगी और यह ब्राह्मण उस ओर देखेगा भी नहीं ।

चन्द्रगुप्त आर्य चाणक्य ! ससार मे जितने प्रतापशाली राज्य हुए है क्या वे सब महामन्त्री चाणक्य की राजनीति के बल पर ही हुए है और जहाँ महामन्त्री चाणक्य नही है, वहाँ किसी राज्य की स्थापना भी नही है ? क्या सारे राज्यो की शक्ति महामन्त्री चाणक्य की शक्ति से ही भिक्षा माँगकर ससार मे चली है और क्या चन्द्रगुप्त इतना हीन है कि उस शक्ति के बल पर ही विजय प्राप्त करता है ? तब जाने दो ऐसी शक्ति को । उसे मै आज ही दूर करता हूँ । महामन्त्री चाणक्य ! तुम महामन्त्री पद से मुक्त किये गये ।

चाणक्य मौर्य ! लो अपना शस्त्र (**फेंक देते हैं**) । यह कलक इसी समय दूर करता हूँ । राजमन्त्री राक्षस की राजनीति के कुचक्र मे आनेवाले चन्द्रगुप्त ! क्या मैं अपनी शिखा खोलकर विनाश की फिर प्रतिज्ञा करूँ ? जिस ब्राह्मण की शिखा सर्पिणी ने नन्दवश को एक ही दशन मे समाप्त कर दिया, क्या मौर्य भी उस सर्पिणी पर हाथ रखना चाहता है ? जिस चन्द्रगुप्त को अपना आत्मीय समझ कर कुसुमपुर के सिहासन पर आरूढ कराया, उसी चन्द्रगुप्त के विनाश से क्या श्मशान को सुसज्जित करूँ ? वाह रे ब्राह्मण ! ब्रह्म-ज्ञान मे जीवित रहनेवाला आज राज्य के कुचक्रो से लाछित हो रहा है । आज अपने सृष्टि-सागर का विष मैं पी ही रहा हूँ, किन्तु चन्द्रगुप्त ! मुझमे कालकूट को भी पी जानेवाले नीलकठ की शक्ति है । समझते हो ?

चन्द्रगुप्त समझता हूँ, चाणक्य ! (**शस्त्र उठाते हुए**) यह शस्त्र अब मेरे अधिकार मे है । आज से मै समस्त राजनीति अपने बाहु-बल मे केन्द्रित कर कुसुमपुर का शासन करूँगा और विद्रोह के सर्पो को जलाने के लिए महायज्ञ करूँगा ।

चाणक्य करो, इसी समय से करो वह महायज्ञ और उसमे तुम भी विनष्ट हो जाओ ! आज कौमुदी महोत्सव करो और अपने नवीन समाहर्त्ता और राजनर्तकी के रूप मे अपनी मृत्यु को निमन्त्रण दो ।

चन्द्रगुप्त मेरे आनन्दोत्सव से ईर्ष्या करने वाले चाणक्य ! तुम यही कहो । ब्राह्मण को इन ऐश्वर्यो से द्वेष होना स्वाभाविक है ।

चाणक्य आत्मचिन्तन मे जो ऐश्वर्य है, क्षत्रिय, वह इन तुच्छ भडकीले वैभवो मे नही है और वह वैभव जो अपने साथ मृत्यु लिए हुए है ! शत्रु के गुप्तचरो और विषकन्याओ पर विश्वास करनेवाला सम्राट् एक ही पदक्षेप मे मृत्यु का आलिगन उसी भाँति करता है जैसे एक ही उछाल मे पतिगा दीप-शिखा के भीतर जलती हुई मृत्यु मे भस्म हो जाता है । तुम भी भस्म हो जाओ और अपने वैभव का जला हुआ काला धुआँ अपने पीछे छोड जाओ !

चन्द्रगुप्त · अपनी राजनीति मे अविश्वासी बने हुए, चाणक्य ! तुम प्रत्येक व्यक्ति को गुप्तचर और प्रत्येक नारी को विषकन्या समझ सकते हो । राज्य-सीमा की रेखा

पर रेंगती हुई तुम्हारी आँखो की पुतलियाँ काले कीडे की तरह केवल निरीह जीवो की हिंसा करना ही जानती है। महामन्त्री की विशेषता...

चाणक्य महामन्त्री मत कहो, मौर्य ! मै अब तुम्हारा महामन्त्री नही हूँ। मैं भी तुम्हे सम्राट् नही कह रहा हूँ। मै केवल एक ब्राह्मण हूँ। वह ब्राह्मण जिसकी शिखा बहुत दिनो तक खुली रही और वह तभी बाँधी गई जब उसने अपनी प्रतिज्ञा के अनुसार नन्दवश का विनाश कर दिया। अब उसके सामने केवल दो ही मार्ग है। या तो वह पुन अपनी शिखा खोलकर मौर्यवश के विनाश की प्रतिज्ञा करे या क्षितिज की भाँति अपनी बाहुओ को फैलाकर नक्षत्रो के नेत्रो से विश्वभरा पृथ्वी को अपनी करुणा और शान्ति से सींचे। तब समस्त सृष्टि मे उसका राज्य होगा, पशु-पक्षी उसके सहचर होंगे और वायु के झकोरो मे झूमकर साम गान करता हुआ तुम्हे क्षमा करेगा।

चन्द्रगुप्त यह तपोवन नही है, आर्य ! और चन्द्रगुप्त क्षमा का न तो पात्र है, न अभिलाषी। अब तपोवन के होमकुण्ड मे हिंसा करो या कुश-कटक चरनेवाले हरिणो को क्षमा करो, किन्तु जाने के पूर्व अपने नवीन समाहर्त्ता वसुगुप्त तथा राजनर्तकी अलका पर लगाये हुए लाछन का निराकरण करना होगा। और यदि यह लाछन असत्य निकला तो राज्य का दण्ड-विधान अपराधी को पहचानता है। यह मेरा अन्तिम आदेश है।

चाणक्य अपने नवीन महामन्त्री को प्रथम आदेश दो, मौर्य ! मै तुम्हारे समक्ष सत्य के उद्घाटन के लिए बाध्य नही हूँ।

चन्द्रगुप्त जो ब्राह्मण सत्य के उद्घाटन को अपना धर्म न समझे, उसे मैं किस सज्ञा से सम्बोधित करूँ ?

चाणक्य . सत्य का उद्घाटन मैं अपनी इच्छा से कर सकता हूँ। किन्तु इस उद्घाटन के अनन्तर मैं एक क्षण भी यहाँ नही ठहर सकूँगा। यह वातावरण अभिशाप बनकर मेरे रोम-रोम मे तीव्र प्रतिहिंसा की ज्वाला उत्पन्न कर रहा है।

चन्द्रगुप्त सर्वप्रथम प्रमाण उपस्थित किया जाय !

चाणक्य (पुकारकर) सैनिक !

[सैनिक का प्रवेश]

सैनिक आज्ञा, महाराज !

चाणक्य समाहर्त्ता वसुगुप्त और राजनर्तकी अलका को उपस्थित करो।

सैनिक जो आज्ञा। **[प्रस्थान]**

चाणक्य चन्द्रगुप्त ! प्रजा के सस्कार जल्दी नही छूटते। इस समय भी महाराज नन्द से सहानुभूति रखने वाले व्यक्ति कुसुमपुर मे विद्रोह की लपटो के स्फुलिंग बने हुए है। राजमन्त्री राक्षस कुसुमपुर के नागरिको मे अविश्वास के बीजो पर अपनी नीति का जल सींच रहा है। कुसुमपुर के समस्त कार्यो मे षड्यन्त्र का जाल जयकार के छद्मवेश मे चारो ओर घूम रहा है और तुम कौमुदी महोत्सव

मे असावधान होकर विषकन्या का स्पर्श करना चाहते हो ? चन्द्रगुप्त ! मैं अपने निस्पृह नेत्रो से सब कुछ देख रहा हूँ और तुम देखकर भी कौमुदी महोत्सव की शीतलता मे हलाहल पान करने जा रहे हो ! मै फिर यही कहना चाहता हूँ **(सैनिक का वसुगुप्त और अलका के साथ प्रवेश)** अच्छा ! समाहर्त्ता वसुगुप्त और राजनर्तकी अलका। सैनिक ! तुम जाकर द्वार पर अपना स्थान ग्रहण करो। **(सैनिको का प्रणाम कर प्रस्थान। वसुगुप्त को सम्बोधित करते हुए)** समाहर्त्ता वसुगुप्त ! मुझे दु ख है कि मैने तुम्हे सैनिको के नियन्त्रण मे रखा। मै जानता हूँ कि तुम सम्राट् चन्द्रगुप्त के विश्वासपात्र नवीन समाहर्त्ता हो।

वसुगुप्त मै समाहर्त्ता नही हूँ, महामन्त्री ! यदि समाहर्त्ता होता नो सम्राट् समाहर्त्ता का अपमान इस भाँति नही देख सकते थे।

अलका **(करुण स्वर मे)** और नारी का अपमान आज तक कुसुमपुर के राजकक्ष मे नही हुआ, मै अपमानित हुई हूँ, सम्राट् !

चन्द्रगुप्त **(दृढ़ता से)** निस्सन्देह ! मै दोनो के अपमान का प्रतिकार करूँगा।

चाणक्य **(वसुगुप्त से)** सम्राट् से तुमने आश्वासन पा लिया है, समाहर्त्ता। और **(राजनर्तकी से)** राजनर्तकी ! तुम्हे भी सम्राट् के बाहुओ की शीतल छाया प्राप्त हो चुकी है, किन्तु **(वसुगुप्त से)** मै जानना चाहता हूँ, समाहर्त्ता ! राजनर्तकी से तुम्हारा परिचय कितना पुराना है ?

वसुगुप्त मै राजनर्तकी का नाम भी नही जानता, महामन्त्री ! मुझे तो कौमुदी महोत्सव की घोषणा के कुछ क्षण पूर्व राजनर्तकी का परिचय मिला।

चाणक्य तुम कुसुमपुर के निवासी हो, समाहर्त्ता !

वसुगुप्त कुसुमपुर के एक ग्राम अमरावती का निवासी हूँ। मै वहाँ का अन्तपाल था।

चाणक्य तो तुम कुसुमपुर मे कब से निवास करते हो ?

वसुगुप्त मैने कहा न, महामन्त्री ! मै कुसुमपुर का नही, अमरावती का निवासी हूँ।

चाणक्य सम्राट् चन्द्रगुप्त ने तुम्हे कुसुमपुर मे पाया या अमरावती मे ? उन्होने तुम्हे अपना समाहर्त्ता बनाने मे तो कुसुमपुर की नागरिकता को ही ध्यान मे रखा होगा ?

वसुगुप्त मै कुसुमपुर मे निवास नही करता, महामन्त्री ! मै अमरावती से कुसुमपुर आया अवश्य करता हूँ।

चाणक्य वर्ष मे कितनी बार आया करते हो ?

वसुगुप्त मै कह नही सकता।

चाणक्य **(कठोर स्वर मे)** प्रश्न की अवहेलना नही हो सकती। ठीक उत्तर दो।

वसुगुप्त महाराज नन्द के प्रमुख उत्सवो मे आया करता था।

चाणक्य गत वर्ष वसतोत्सव मे सम्मिलित हुए थे ? अमरावती के अन्तपाल !

वसुगुप्त . हाँ, महामन्त्री !

चाणक्य . वसन्तोत्सव मे राजनर्तकी अलका ने नृत्य किया था। तुमने उसे

देखा था ?

वसुगुप्त हाँ, महामन्त्री ।

चाणक्य तब तुम अलका के नाम से परिचित हो ?

वसुगुप्त हाँ महामन्त्री ।

चाणक्य अभी तुमने कहा कि मै अलका का नाम भी नही जानता और कहा कि कौमुदी महोत्सव के एक क्षण पूर्व राजनर्तकी का परिचय मिला ?

वसुगुप्त मैं राजनीति की बाते प्रकट नही करता ।

चाणक्य (हँसकर) बडे राजनीतिज्ञ हो । अच्छा, राजनीति की बाते मत कहो । सीधा उत्तर दो, तुम राजमन्त्री राक्षस के गुप्तचर कब हुए ?

वसुगुप्त महामन्त्री ! मै दुष्ट राक्षस को जानता भी नही हूँ ।

चाणक्य उसी तरह जिस तरह तुम राजनर्तकी को नही जानते थे ?

वसुगुप्त (चन्द्रगुप्त से) सम्राट् ! मेरे सम्मान की रक्षा कीजिए ।

चन्द्रगुप्त मै रक्षा करूँगा । पहले महामन्त्री आचार्य चाणक्य के प्रश्नो के उत्तर दे दो ।

वसुगुप्त मै उत्तर देने मे असमर्थ हूँ, सम्राट् ! कौमुदी महोत्सव के इस अवसर पर मैने अधिक आसव पान कर लिया है । इसी कारण मेरे उत्तर ठीक नही है ।

चाणक्य कोई हानि नही, समाहर्त्ता ! मै तुम्हे और भी आसव पान करने के लिए दूँगा, जिससे तुम्हारे लिए यह कौमुदी महोत्सव और भी मगलमय हो ।

वसुगुप्त मै अधिक आसव पान करना राजधर्म के प्रतिकूल समझता हूँ, महामत्री !

चाणक्य अभी तुमने कहा कि अधिक आसव पान करने के कारण मै ठीक उत्तर नही दे सकता । अब कहते हो, मै अधिक आसव पान करना राजधर्म के प्रतिकूल समझता हूँ ।

वसुगुप्त मैं राजनीति के रहस्य आपके समक्ष खोलने मे असमर्थ हूँ ।

चाणक्य बार-बार राजनीति ! प्रत्येक प्रश्न मे राजनीति ! राज्य का समाहर्त्ता राज्य के महामत्री से राजनीति के रहस्य नही कहना चाहता ? और आसव पान करने मे भी तुम्हारी राजनीति है ! हाँ, तुम्हारी नही, मेरी है । समाहर्त्ता ! यदि तुम नही चाहते तो मैं तुमसे राजनीति के रहस्य खोलने के लिए नही कहूँगा । कविता की बाते कहूँगा । कविता की बाते कर सकते हो ? उत्तर दो ! जो आसव वन्य कुसुमो की सुगन्धि लिए हुए है, वह इतना मादक क्यो होता है ?

वसुगुप्त : मैं नही जानता, महामत्री !

चाणक्य तुम नही जानते, मै जानता हूँ । जो आसव वन्य कुसुमो की सुगधि लिए हुए है वह इतना मादक इसलिए है कि उसे सुन्दरियाँ अपने हाथ से पान कराती है, ऐसी सुन्दरियाँ जिनके नेत्रो मे आसव है । वे तुम्हारे आसव को देखते हुए अपने नेत्रो का आसव उसमे ढालकर उसे और भी मादक बना देती है ।

वसुगुप्त आप तो राजनीति और कविता दोनो मे पारगत हैं, महामन्त्री !

चाणक्य चाणक्य की सूखी शिराओ मे कविता कहाँ ! किन्तु तुम्हारी इच्छानुसार मैं राजनीति के रहस्यो के बदले तुम्हे कविता देना चाहता हूँ। एक बात और पूछूँ ? सुन्दरियो के नेत्रो मे अधिक मादकता है या अधरो मे ?

वसुगुप्त इस प्रश्न का उत्तर देना कठिन है, महामन्त्री !

चाणक्य राजनीति के रहस्यो से भी कठिन, समाहर्ता ! जिसमे तुम पारगत हो। अमरावती के अन्तपाल और महाराज नन्द के वसतोत्सव मे सम्मिलित होने वाले वसुगुप्त के लिए यह प्रश्न कठिन नही है। महाराज नन्द के वसतोत्सव मे 'अनग-क्रीडा' का आयोजन हुआ था ?

वसुगुप्त हाँ, महामत्री !

चाणक्य और तुम उसमे सम्मिलित हुए थे। तब तो तुम जानते ही होगे की सुदरियो के नेत्रो से अधिक अधरो मे मादकता होती है। होती है समाहर्त्ता ? **(तीव्र स्वर मे)** उत्तर दो।

वसुगुप्त · हाँ, महामत्री !

चाणक्य तो जो आसव सुन्दरियाँ अपने अधरो से लगा कर देती है उसमे और भी अधिक मादकता होती है ? **(तीव्र स्वर से)** उत्तर दो।

वसुगुप्त हाँ, महामत्री !

चाणक्य अब मुझे तुमसे कोई प्रश्न नही पूछना। तुमसे इतने प्रश्न पूछकर मैंने तुम्हे जो कष्ट दिया है, उसके लिए मै तुम्हे पुरस्कार देना चाहता हूँ। और यह पुरस्कार यह है कि तुम राजनर्तकी अलका के अधरो से स्पर्श किए गये मादक आसव का एक घूँट..

अलका **(विह्वल होकर)** क्षमा कीजिए, महामत्री ! मै आसव का स्पर्श नही करूँगी। आज तक न मैने आसव पान किया है और न पान कराया है। मै क्षमा की भीख माँगती हूँ, महामत्री !

चाणक्य . कौमुदी महोत्सव मे पुरस्कार मिलता है, देवी ! भीख नही। **(पुकारकर)** सैनिक ! **(सैनिक का प्रवेश)** आसव का एक चषक उपस्थित करो।

सैनिक जो आज्ञा ! [प्रस्थान]

अलका **(बिलखकर)** महामत्री ! मेरा जीवन अभिशाप से परिपूर्ण है। मै राजनर्तकी बनकर नारी भी नही रह पाई। मै ससार की सबसे बडी विडबना हूँ, मै पाप की कालिमा हूँ, मै रौरव की ज्वाला हूँ। मै मै .

चाणक्य : नहीं, देवी ! तुम महाराज नन्द की राजनर्तकी हो। अनिंद्य सुन्दरी, कला-पूर्ण नृत्य की सम्राज्ञी ! हाँ, मुझे दु.ख है कि तुम्हारा जीवन **(सैनिक चषक लेकर आता है)** क्या ले आये चषक ? हाँ, मै अपने साथ ही तो लाया था आसव और चषक। लो, तुम इसका पान करो, राजनर्तकी !

अलका महामत्री ! मुझे आसव पान न कराओ, मुझे विष दे दो, भयानक हलाहल दे दो, उससे शान्ति मिलेगी। मेरी जिह्वा पर सर्प-दशन चाहिए, सर्प-दशन, सर्प-

दशन, महामत्री !

चाणक्य सर्प-दशन तुम्हें नही चाहिए, राजनर्तकी ! किसी और को चाहिए। (**सैनिक से**) सैनिक ! बलपूर्वक यह आसव राजनर्तकी को पान कराओ ! (**सैनिक राजनर्तकी को बलपूर्वक आसव पान कराता है। अनिच्छापूर्ण लडखडाती हुई साँस मे मदिरा पान करने की आवाज**) बस, रहने दो। (**सैनिक राजनर्तकी के अधरो से चषक हटाता है**) अब यह आसव राजनर्तकी के अधरो को छूकर और भी मादक बन गया। अब कौमुदी महोत्सव के समाहर्त्ता वसुगुप्त को उनका पुरस्कार चाहिए। सैनिक ! यह शेष आसव समाहर्त्ता वसुगुप्त पान करेगे।

वसुगुप्त सम्राट् ! मेरी रक्षा कीजिए। मै यह आसव पान नही करूँगा, नही करूँगा।

चाणक्य सैनिक ! वसुगुप्त को शेष आसव बलपूर्वक पान कराओ।

[**सैनिक बलपूर्वक आसव पान कराते है। घुटते हुए कंठ की आवाज**]

वसुगुप्त (**लडखडाते शब्दो मे**) ओह ! घोर हलाहल आग की ज्वाला ! सर्प-दशन सर्प दशन महामत्री, चाणक्य ! तुम राज मत्री...राक्षस पर विजयी हुए। कौमुदी महो त्. सब नही हो सका. । अलका मुझे क्षमा। कौमुदी...महो .त् सव कौ मु दी...म. हो त्.. स व !

[**प्राण छूट जाते है।**]

चन्द्रगुप्त ओह, विषकन्या ! राजनर्तकी विषकन्या है ! अधरो से स्पर्श किया गया आसव . हलाहल बन गया ! समाहर्त्ता

चाणक्य समाहर्त्ता अब इस ससार मे नही है, चन्द्रगुप्त ! अब अलका

अलका सम्राट् ! क्षमा कीजिए। महामत्री ! प्राणो की भिक्षा दीजिए। मैं निर्दोष हूँ, मैं निर्दोष हूँ, सम्राट् ! मै आपके चरण चूमकर .

[**चरणो पर गिरने के लिए आगे बढती है।**]

चाणक्य पीछे हटो ! पीछे हटो, चन्द्रगुप्त ! (**चन्द्रगुप्त पीछे हटते है**) यह तुम्हारे पैरो मे अपने दाँत चुभाकर तुम्हे मृत्यु-मुख मे ढकेल देगी। यह इसका अन्तिम प्रयोग है। नारी रूप मे भयानक सर्पिणी विषकन्या ! राजमत्री राक्षस ने कौमुदी महोत्सव का प्रस्ताव वसुगुप्त से कराकर असावधान चन्द्रगुप्त को विषकन्या के प्रयोग से नष्ट करने की चाल सोची थी। सैनिको ! राजनर्तकी को वन्दी करो। इसका प्रयोग शत्रु पर ही किया जायगा। (**सैनिक राजनर्तकी को बन्दी करते है**) समाहर्त्ता वसुगुप्त राक्षस का गुप्तचर था और राजनर्तकी अलका विषकन्या। इस सत्य का उद्घाटन मैंने अपनी इच्छा से किया है और इस उद्घाटन के अनन्तर मैं एक क्षण भी यहाँ नही ठहर सकूँगा। मेरा मार्ग छोड दो। हटो ! तपोवन मेरी प्रतीक्षा कर रहा है। चन्द्रगुप्त ! अपने विश्वासपात्र समाहर्त्ता वसुगुप्त का अंतिम सस्कार और कौमुदी महोत्सव का आयोजन दोनो साथ-साथ करो और

अपना राज्य सम्हालो ! [प्रस्थान]

चन्द्रगुप्त : (विह्वल स्वरों में) आर्य चाणक्य ! महामंत्री चाणक्य ! चन्द्रगुप्त को तुम्हारी आवश्यकता है। महामंत्री चाणक्य के बिना यह राज्य नष्ट हो जायगा, चन्द्रगुप्त नष्ट हो जायगा। महामंत्री चाणक्य ! कौमुदी महोत्सव नहीं होगा। (चाणक्य के पीछे शीघ्रता से जाते हैं। उनकी ध्वनि क्रमशः क्षीण होती सुनाई पड़ती है) कौमुदी महोत्सव नहीं होगा !...कौमुदी महोत्सव नहीं होगा !!...... कौमुदी महोत्सव नहीं होगा !!!

[धीरे-धीरे परदा गिरता है।]

5

सोन का वरदान

•

पात्र-परिचय

सम्राट् अशोक—स्वर्गीय सम्राट् बिन्दुसार के पुत्र और मगध के सम्राट्

कुमार सुसीम
कुमार सुगाम
कुमार सुहास
कुमार सुबेल
—सम्राट् बिन्दुसार के पुत्र और सम्राट् अशोक के बड़े भाई

कुमार सुदत्त—सम्राट् अशोक का छोटा भाई

खल्लाहक—सम्राट् अशोक के अमात्य

चडगिरिक—सम्राट् अशोक का अगरक्षक

•

काल—ई० पू० 274

स्थान—सोन नदी का तट, पाटलिपुत्र

सोन का वरदान

[*दृश्य*—सोन नदी की समतल भूमि। मध्य मे एक झुका हुआ पेड जिसका तना आसन की भाँति बैठने का काम दे सकता है। दाहिनी ओर बिखरी हुई शाखाओ वाला दूसरा पेड है, जिसकी दो शाखाओ मे इतना अन्तर है कि उनके बीच मे चन्द्र का बिम्ब दीख सकता है। स्थान-स्थान पर छोटी-मोटी झुरमुटे है जो कभी-कभी पैरो मे उलझ जाती हैं। भूमि उपजाऊ होने के कारण हरीतिमा से परिपूर्ण है। गहरी संध्या का समय है। आज कृष्ण-पक्ष की तृतीया है। अभी तक चन्द्रोदय नही हुआ है; किन्तु समीप काष्ठ-प्राचीर पर लगा हुआ दीप-स्तम्भ इस स्थान पर हलका-सा आलोक फेक रहा है। पूर्व दिशा मे चन्द्रोदय के पूर्व की आभा दीख पडने लगी है। वातावरण सुनसान है। कभी-भी सीताध्यक्ष (कृषि विभाग के अध्यक्ष) का सेवक 'सा . व धा ....न' की आवाज देता है, जो वायु मे गूँजती हुई क्रमशः धीमी हो जाती है। यह एकान्त जैसे युद्ध के पूर्व का आतंक लिये हुए है। परदा उठने पर सुगाम और सुदत्त बडी सावधानी से धीरे-धीरे आगे बढते हुए दीख पडते हैं। वे कभी-कभी दायें और बायें भी झुककर देखते हैं कि इस स्थान पर अन्य कोई तो नही है। सुगाम और सुदत्त राजकुमार है। सुगाम के वस्त्र नीले और सुदत्त के पीले चीनाशुक के बने हुए है। दोनो के हाथ मे कृपाण है। सुगाम पूर्व की ओर गहरी दृष्टि से देखते हुए सुदत्त से बात आरम्भ करते है]

सुगाम अभी चन्द्रोदय नही हुआ ?

सुदत्त (आकाश की ओर देखते हुए) अभी तक चन्द्र के दर्शन नही हुए।

सुगाम तो हमे चन्द्रोदय की प्रतीक्षा करनी है। उसी समय इस सोन नदी के तट पर पाटलिपुत्र को उसका योग्य शासक मिलेगा। उत्साही, कृतज्ञ, वीर जो राजश्री को अपने वश मे रख सके, जिसमे दैवी-बुद्धि और दैवी-शक्ति हो।

सुदत्त (वृक्ष का सहारा लेते हुए ठण्डी साँस भरकर) आह! ये सब लक्षण हमारे पिता सम्राट् विन्दुसार मे थे। कौन जानता था कि भाग्याकाश का ऐसा तेजस्वी नक्षत्र इतने शीघ्र अस्त हो जायेगा।

सुगाम (**टहलने से रुककर**) करुणा का अवकाश नही है, सुदत्त ! उसके लिए हमारी माताओ की आँखो मे सागर से भी अधिक जल है । उस सागर मे राज्य की नौका नही डूब सकती । हमे आज पाटलिपुत्र के योग्य शासक का निर्णय करना ही है । मै सभी भाइयो की सहमति प्राप्त कर चुका हूँ । केवल तुम्ही शेष रह गये हो ।

सुदत्त (**व्यग्य से**) और मेरे अतिरिक्त भी कुछ शेष रह गया है ?

सुगाम तुम्हारे अतिरिक्त ? तुम्हारे अतिरिक्त कुछ नही । (**कुछ सोचकर**) हाँ, मत्रिमडल सम्भवत हमारे पक्ष मे नही है, किन्तु इसकी हमे चिन्ता नही । कृष्ण-पक्ष चन्द्र की कलाएँ छीन सकता है, चन्द्र को मिटा नही सकता ।

सुदत्त जीवन की तृष्णा जिसमे है, वह मिटकर भी नही मिटता । तो इस कृष्ण-पक्ष के क्रोड से चन्द्र का उदय होगा ?

सुगाम अवश्य, यह तो प्रकृति का सत्य है ।

सुदत्त तो यह प्रकृति का सत्य किस व्यक्ति पर घटित होगा ?

सुगाम यह व्यक्ति होगा, मगध का सम्राट् ।

सुदत्त स्पष्ट कहो, सुगाम ! मगध का सम्राट् कौन होगा ?

सुगाम यही तो सोन की लहरे निर्णय करेगी ।

सुदत्त मनुष्य का भाग्य ये लहरे बनायेगी, जो एक ककडी के गिरने से हिचकी ले उठती है ? सुगाम ! स्पष्ट कहो, तुम सम्राट् होना चाहते हो ?

सुगाम (**कृपाण टेककर**) मै ?

सुदत्त हाँ, तुम ! सुगाम ! हो सकते हो । सम्राट् बिन्दुसार के साहसी सुपुत्र ! मेरे ज्येष्ठ भ्राता ! और और नाम भी बुरा नही रहेगा एकराट् विजिगीपु राजर्षि श्री सुगाम ।

सुगाम मै व्यग्य नही सुनना चाहता, सुदत्त ! यदि मै सम्राट् होना चाहूँ तो कोई शक्ति मुझे नही रोक सकती । वर्षाकाल मे बादल आकाश मे स्वय ही आते है और जल की वर्षा करते है । आकाश बादलो से भिक्षा नही माँगता । उसी प्रकार मैं भी राजश्री की भिक्षा नही माँगूँगा । राजश्री स्वय मेरे पास आयेगी, किन्तु एक बात पूछूँ (**सहसा**) तुम सम्राट् होना चाहते हो ?

सुदत्त . मै ? (जोर से अट्टहास कर) मै ?

सुगाम · इतने जोर से मत हँसो, सुदत्त ! यह सुनसान कही चौक न उठे । यह एकान्त कही मत्रिमडल के पक्ष मे न हो ! यह एक विश्वस्त प्रश्न है कि तुम सम्राट् नही होना चाहते ।

सुदत्त (**फिर हँसकर**) मैं ? इसी सोन नदी के किनारे हम दोनो का द्वन्द्व-युद्ध हो और मगध के योग्य शासक का निर्णय, इसी इच्छा से तुम मुझे यहाँ लाये हो । किन्तु, सुगाम ! मैं . मैं द्वन्द्व-युद्ध नही करूँगा । अपनी माताओ की अश्रु-धारा मे किसी भाई की रक्त-धारा नही मिलाऊँगा । मैं सम्राट्-पद के लिए द्वन्द्व-

युद्ध नही करूगा। पाटलिपुत्र विपत्तियो मे डूब रहा है। मै उस पर अपने कृपाण का वोझ नही रक्खूंगा। हाॅ तुम सम्राट् बनो, पाटलिपुत्र के योग्य शासक। मैं जीवन-भर अपनी माताओ की सेवा करूँगा।

सुगाम . (**लम्बी साँस लेकर**) साधु ! सुदत्त ! तो तुम सम्राट्-पद के लिए उत्सुक नही हो ?

सुदत्त उत्सुक कौन नही होगा। किन्तु मै नही हूँ।

सुगाम तो यदि इस समय मै सम्राट् न बनूं और किसी अन्य भाई को बनाना चाहूँ तो तुम उसे सम्राट मानोगे ?

सुदत्त किसे सम्राट् बनाओगे ?

सुगाम मै पहले तुम्हारी सहमति चाहता हूँ।

सुदत्त सोचकर वताऊँगा।

सुगाम (**तीव्रता से**) मै तुम्हारा विश्वास चाहता हूँ, सुदत्त ! हाॅ या नही ! तीर लक्ष्य पर सीधा जाता है, वह आकाश मे विहार नही करता। तुम्हारा उत्तर सीधा होना चाहिये।

सुदत्त और यदि एक टेढा प्रश्न मै पूछूं तो उत्तर दोगे ? पाटलिपुत्र का सम्राट् कौन होगा .स्पष्ट उत्तर दो, सुगाम !

सुगाम यह सोचकर बताऊँगा।

सुदत्त मेरी तरह तुम भी सोचकर बताओगे ? मै बिना सोचे बतला सकता हूँ . मगध का भावी सम्राट् होना चाहता है—सुगाम !

सुगाम (**मुस्कराकर**) तुम अन्तर्यामी ज्ञात होते हो, सुदत्त ! सभी भाइयो का मत मेरे पक्ष मे है, किन्तु इस समय मुझे पाटलिपुत्र की राजनीति की रक्षा करनी है। भावी सम्राट् को कुछ त्याग भी तो करना चाहिए। हमारी राजनीति कुछ समय के लिए एक दूसरा सम्राट् चाहेगी।

सुदत्त नही, मै तो सुगाम को ही सम्राट् मानूंगा। मुझे उसका नाम बहुत प्रिय है। सम्राट् सुगाम, न जाने कितने अच्छे ग्राम इस नाम मे ही निवास करते है।

सुगाम साधु ! किन्तु कुछ दिन धैर्य रखो। प्यारे भाई सुदत्त ! मेरी प्रार्थना है कि कुछ दिनो के लिए एक अन्य भाई को सम्राट् स्वीकार करो।

सुदत्त . किसे ?

सुगाम : जो इस समय सबसे अधिक वीर है।

सुदत्त · अशोक ?

सुगाम : तुम काॅप क्यो उठे, सुदत्त !

सुदत्त अशोक के नाम से क्यो काॅपूंगा। वह भी तो हमारा भाई है। उसने उज्जयिनी का शासन कितनी योग्यता से सम्हाला है ! जब वह बोलता है तो ज्ञात होता है जैसे आकाश उसका साथ दे रहा है।

सुगाम तुम बहुत दुर्बल-हृदय हो, सुदत्त ! इसीलिए तुम्हे सुदृढ करने और तुम्हारा

विश्वास पाने के लिए मैं तुम्हे यहाँ लाया हूँ। देखो ! **(एक-एक शब्द पर रुक-रुक कर दृढता से)** इसी स्थान पर आज हम सब अशोक का वध करेंगे। **[आतंक मुद्रा]**

सुदत्त वध करेंगे। क्यो ? उसका अपराध ?

सुगाम उसने अपने सब से ज्येष्ठ भ्राता सुसीम का अपमान किया है।

सुदत्त किस प्रकार अपमान किया ? कुछ अपशब्द कहे या तुम्हारी तरह कुछ राज-नैतिक वाक्यो का प्रयोग किया ?

सुगाम राजनैतिक वाक्य तो नही कहे , किन्तु बडे भाई के रहते अपने को सम्राट् घोषित कर दिया।

सुदत्त सम्राट् घोषित कर दिया ? **[काँपता है]**

सुगाम : तुम फिर काँप उठे। तुम अशोक से डरते हो ?

सुदत्त डरता तो नही हूँ , किन्तु उसके साहस की प्रशसा करता हूँ।

सुगाम सुनो, सुदत्त ! अब तुम्हे सुसीम की प्रशसा करनी होगी। स्वर्गीय पिता के वात्सल्य के सबसे बडे अधिकारी ! वे कुछ समय के लिए पाटलिपुत्र के सम्राट् होगे। तुम्हे हमारे साथ उनका साथ देना होगा। दोगे ? वचन दो।

सुदत्त **(सोचता हुआ)** अपने सबसे बडे भाई, सुसीम ? पर वे तो तक्षशिला का विद्रोह शान्त करने गये है। सम्राट् ने उन्हे वहाँ भेजा था।

सुगाम वे विद्रोह शान्त कर वहाँ से लौट भी आये। आज प्रात सूर्य के साथ उन्होने पाटलिपुत्र मे प्रवेश किया। विद्रोह तो उन्होने एक दिन मे शान्त कर दिया। उन्हे देखते ही नागरिको के सिर श्रद्धा से झुक गये। उन्होने हाथ जोडकर कहा—कुमार ! हमे सम्राट् से या आपसे असतोष नही है। कार्यान्तिक और अन्तपाल हमे कष्ट देते हे। युवराज सुसीम ने कार्यान्तिक और अन्तपाल को कारागार मे डाल दिया और उसी क्षण विद्रोह शान्त हो गया। कितनी दैवी शक्ति है उनमे ! आचार्य चाणक्य ने अपने अर्थशास्त्र मे सम्राट् को दैवी-शक्ति सम्पन्न माना है। इसी दैवी शक्ति के कारण वे सच्चे अर्थ मे सम्राट् होगे।

सुदत्त **(सिर हिलाते हुए)** हाँ, सम्राट् तो हो सकते है , किन्तु मन्त्रिमडल उनसे रुष्ट है। एक बार उन्होने अमात्य खल्लाहक का अपमान कर दिया था।

सुगाम खल्लाहक जन्म से ही खल है तो वेचारे सुसीम क्या करे ? खलो को अनुशासन मे रखना सज्जनो का धर्म है।

सुदत्त . फिर भी अमात्य **(संकेत करते हुए)** उस द्वीप-स्तम्भ की तरह है जिसका आधार पाकर राजश्री प्रकाश फैलाती है।

सुगाम हाँ, स्तम्भ ही है, जो जडता का प्रतीक है।

सुदत्त : फिर भी अमात्य समान धरातल से ऊँचा है।

सुगाम सौ अमात्य भी जुड जायें तो वे आकाश से ऊँचे नही हो सकते, सुदत्त ! जिसमे तारो का सगठित प्रकाश है। हम सब भाइयो की सगठित शक्ति का

सामना क्या अमात्य-मडल कर सकता है ? अमात्य-मडल अमात्य-मडल ही है और भाइयो की शक्ति ऐसा आलोक-मडल है, जो मनुष्य की शक्ति से धूमिल नही हो सकता । दीपको का समूह भी कही तारो की समता कर सकता है ? और सुनो, सुदत्त ! मन्त्रिमडल का सगठन तो सम्राट् करता है । हम लोगो की सहायता से सुसीम सम्राट् बनकर एक नये मन्त्रिमडल का सगठन करेगे और सबसे बडी बात यह होगी कि

सुदत्त सबसे बडी बात क्या होगी ?

सुगाम सबसे बडी बात यह होगी कि. .उस मन्त्रिमडल मे होगे हम और तुम..

सुदत्त तुम और हम ? यह तो बडी अच्छी बात होगी । दो नेत्रो की तरह हम और तुम सम्राट् सुसीम का मार्ग-दर्शन करेगे । सुसीम की मुझ पर कृपा भी है । एक बार मुझसे हँसकर कहने लगे—सुदत्त ! तुम्हारे नाम के अनुरूप मैं तुम्हे कुछ देना चाहता हूँ ।

सुगाम तो अब वह समय आ गया हे, सुदत्त ! वे तुम्हे अपने नवीन मत्री का पद प्रदान करेगे । बोलो, हमारा साथ दोगे ?

सुदत्त इसी प्रकार का लालच सुगाम, तुमने अन्य भाइयो को दिया होगा , तभी वे सब तुमसे सहमत हे । सुसीम के नाम मे सम्भवत तुम पाटलिपुत्र का शासन करोगे ।

सुगाम (तीव्र स्वर मे चिल्लाकर) सुदत्त !

सुदत्त (डरकर) शब्दो पर मुझे अधिकार नही हे, सुगाम ! कुछ कहना चाहता हूँ, कुछ मुँह से निकल जाता है । मुझे कुछ डर लगता है । (सोचकर) अच्छा, साथ दूँगा तुम्हारा, मुझे चाहे अमात्य-पद मिले या न मिले । बोलो, कैसे साथ देना होगा ?

सुगाम आज कृष्ण-पक्ष की तृतीया हे । (**पूर्व आकाश की ओर देखकर**) चन्द्र के उदय होने मे कुछ ही विलम्ब होगा । मुझे मध्याह्न मे गुप्तचरो से सूचना मिली थी कि आज चन्द्रोदय होने पर अशोक अमात्य खल्लाहक के साथ कुछ विशेष मत्रणा करने के लिए इसी स्थान पर आवेगे । उसी समय हम सब मिलकर उन पर आक्रमण करेगे और या तो उनका वध करेंगे या उन्हे कारागार मे डाल देगे ।

सुदत्त हम सब मिलकर एक पर आक्रमण करेगे, यह कौन-सी राजनीति है ?

सुगाम यह सिहासन प्राप्त करने की राजनीति है ।

सुदत्त (**मुस्कराकर**) तो फिर यह राजनीति नही व्याजनीति हे ।

सुगाम (**तीव्रता से**) सुदत्त ! यह परिहास का समय नही है । चन्द्रोदय होना ही चाहता है ।

सुदत्त अच्छी बात है । चकोर की भाँति देखूँगा (**पूर्व की ओर देखते हुए**) चन्द्रोदय कब होता है ।

सुगाम . उसी समय कुमार सुसीम अपने साथियो सहित अपने सम्राट् होने की घोपणा करेगे। तुम्हे उनके जयकार मे सम्मिलित होना पडेगा।

सुदत्त मुझे तो जयकार मे सम्मिलित होना है। चाहे वह तुम्हारा हो, चाहे अशोक का, चाहे सुसीम का।

सुगाम (तीव्र दृष्टि से) यह जयकार सुसीम का होगा।

सुदत्त . तो सुसीम के जयकार मे भाग लूँगा। अभी बोलो, 'कुमार सुसीम की जय'! मैं उसमे अपना कठ-स्वर मिलाऊँगा।

[बाहर से किसी के आने का शब्द]

कोई आ रहा है, सुगाम! तुम मुझे यहाँ क्यो ले आये? मै सन्ध्या समय अपरिचितो को युद्ध का अवसर नही देता। तुम जानते हो, सुगाम! करुणा के क्षणो मे मुझे वीरता अच्छी नही लगती।

सुगाम . इस ओर चले आओ, सुदत्त! [दोनो दाहिनी ओर के पेड के समीप जाते है।]

[अशोक के अगरक्षक चडगिरिक का प्रवेश। उसके हाथ मे कृपाण है।]

चडगिरिक (सैनिक ढग से) कौन है यहाँ?

[कोई उत्तर नही मिलता।]

चडगिरिक (पुन तीव्रता से) शस्त्र या शास्त्र की परीक्षा देने वाला कौन है यहाँ!

सुगाम (आगे बढकर) तुम्हारे प्रणाम के अधिकारी कुमार सुगाम और कुमार सुदत्त।

चडगिरिक प्रणाम करता हूँ, कुमार!

सुदत्त तुम सम्भवत मुझे प्रणाम भी करोगे।

चडगिरिक दो नेत्रो के लिए एक ही दृष्टि होती है, कुमार! किन्तु इस समय सोन नदी के तट पर कुमारो को किस कार्य के निमित्त कष्ट उठाना पडा?

सुगाम प्रश्नकर्ता अपना परिचय प्रस्तुत करे!

चडगिरिक चडगिरिक, श्रीमन्! सम्राट् अशोक का अगरक्षक।

सुगाम उज्जयिनी का करमोलि अशोक कहो .सम्राट् अशोक नही।

चडगिरिक श्रीमन्, आज प्रात निश्चय हो चुका है कि स्वर्गीय सम्राट् बिन्दुसार के स्थान पर

सुगाम वाक्य पूर्ण न हो, चडगिरिक! स्वर्गीय सम्राट् के ज्येष्ठ पुत्र युवराज सुसीम पाटलिपुत्र मे प्रवेश कर चुके है, उनके रहते किसी को अधिकार नही है कि वह एकराट् बिन्दुसार का सिंहासन कलुपित करे। सम्राट् होने के वास्तविक अधिकारी युवराज सुसीम है।

चडगिरिक जो निर्णय अमात्य-मडल से हुआ है, वह सर्वमान्य है, श्रीमन्।

सुगाम सम्राट् के निधन के साथ अमात्य-मडल भी समाप्त हो जाना चाहिये। पूर्णिमा के चन्द्र के साथ तारे भी अस्त हो जाते हैं। मैं इस अमात्य-मडल के

किसी भी अमात्य को महत्त्व नही देता।

चंडगिरिक इसका उत्तर कोई अमात्य ही दे सकता है, अगरक्षक नही। मै यही निवेदन करना चाहता हूँ कि इस स्थान की अपेक्षा श्रीमान् के लिए राजमहल अधिक उपयुक्त स्थान होगा।

सुदत्त : सुगाम ! माताएँ भी हम लोगो की प्रतीक्षा कर रही होगी। और मुझे इसी स्थान पर अशोक और सम्राट् सुसीम की एक साथ प्रतीक्षा करनी है। चडगिरिक ! तुम अपने को बदी समझो। इस अशिष्टता के लिए कल न्यायाधिकरण मे तुम पर विचार होगा।

चंडगिरिक श्रीमन् ! न्यायाधिकरण पर एकमात्र अधिकार सम्राट् अशोक का है।

सुगाम चुप रह, सम्राट् अशोक को रटने वाला दादुर ! तू दुर्विनीत भी है। द्वन्द्व के लिए प्रस्तुत हो। **(नेपथ्य से)** चडगिरिक तुम अपने स्थान पर रहो ?

चंडगिरिक श्रीमन् !

[अमात्य खल्लाहक का प्रवेश]

खल्लाहक किससे बाते कर रहे हो ? **(सामने सुगाम को देखकर)** राजकुमार सुगाम और राजकुमार सुदत्त ?

सुगाम अमात्य ! चडगिरिक ने राजमर्यादा भग की है। मै उससे द्वद्व चाहता हूँ।

खल्लाहक यह राजकुमार की मर्यादा के अनुकूल नही है, कुमार ! वह एक अगरक्षक से द्वद्व करे ! **(चंडगिरिक से)** चडगिरिक ! कुमारो की मर्यादा अक्षुण्ण रहे।

चंडगिरिक मर्यादा की सुरक्षा मे ही सेवक का अस्तित्व है, श्रीमन् !

सुगाम और वह अस्तित्व क्षण-मात्र मे मिटा दिया जा सकता है, अमात्य ! चडगिरिक का यह साहस कि वह हमसे कहे कि इस स्थान की अपेक्षा राजमहल आपके लिए अधिक उपयुक्त स्थान होगा ! कुमार सुदत्त इसके साक्षी है।

सुदत्त · साक्षी क्या ! चडगिरिक प्रणाम करना भी नही जानता।

खल्लाहक कुमार ! चडगिरिक का अपराध क्षमा हो ! वह अगरक्षक है। उसका कर्तव्य है कि जिस स्थान पर उसकी नियुक्ति हो, वह निरापद रहे।

सुदत्त हमारे यहाँ रहने से स्थान निरापद नही समझा जायेगा ?

खल्लाहक सम्राट् अशोक .

सुगाम **(बीच मे ही तीव्रता से)** सम्राट् अशोक ! सम्राट् अशोक ! किस विधान से उज्जयिनी का करमोलि अशोक मगध का सम्राट् अशोक हो सकता है ? यह एक भयानक षड्यन्त्र है।

खल्लाहक शान्त, राजकुमार ! आपके द्वारा राजमर्यादा भग न हो। सम्राट् अशोक स्वर्गीय सम्राट् बिन्दुसार के वैसे ही पुत्र है जैसे आप या सुसीम।

सुगाम तो मै या सुसीम सम्राट् क्यो नही हो सकते ?

खल्लाहक हो सकते है, किन्तु अमात्य-मडल का निर्णय ऐसा नही है ।

सुगाम वह अमात्य-मडल तो ऐसा निर्णय करेगा ही जिसके नायक आप है । ऐसा अमात्य-मडल नष्ट कर दिया जायगा ।

खल्लाहक राज्य का विधान एक खिलौना नही है, कुमार ! जिसे एक वालक अपने क्रोध मे नष्ट कर दे । इस वाक्य का उत्तर. . .

सुगाम : (**बीच ही मे**) उत्तर ? अभी सुसीम से मिल जायेगा । (**सुदत्त से**) चलो, सुदत्त !

सुदत्त : हाँ ! राजकुमार सुसीम ही इसका उत्तर देगे और उनके कठ मे हम लोगो का स्वर भी होगा और जैसा राजकुमार सुगाम ने कहा, उस स्वर मे सुसीम का जय-जयकार भी होगा । हाँ ! चलो सुगाम !

सुगाम अमात्य खल्लाहक ! थोडी देर अमात्य-पद को सन्ध्या मे बादल की भाँति राग-रजित कर लो । चन्द्रोदय होने पर तुम्हारे रगो का कही पता भी नही चलेगा ।

[**सुदत्त के साथ शीघ्रता से प्रस्थान**]

खल्लाहक . (**सुगाम और सुदत्त के जाने की दिशा मे देखते हुए**) विद्रोह की जडे दूर तक फैल गई है । ज्ञात होता है कुमार सुगाम ने इसके लिए सगठन भी कर रखा है । मै समझता हूँ इसका पता सम्राट् अशोक को होगा ।

चडगिरिक : इसका पता सम्राट् को हे, श्रीमन् !

खल्लाहक : इस विषय मे उन्होने कुछ कहा ?

चडगिरिक : कहा, मुझे चिन्ता नही है । विद्रोह की अग्नि को दीपो मे सजाकर मैंने दीपावली का उत्सव मनाया है ।

खल्लाहक : (**मुस्कराकर**) साहस के अवतार है हमारे सम्राट् । इसीलिए अमात्य-मडल ने एक स्वर से निर्णय दिया है कि मगध के सिंहासन पर उनका ही अभिषेक हो । कल इसकी घोषणा होगी । सब भाइयो मे वे ही सबसे अधिक शक्तिशाली और साहसी है ।

चंडगिरिक · (**सिर झुकाकर**) हाँ, श्रीमन् !

खल्लाहक · किन्तु इस विद्रोह का शमन करना आवश्यक होगा । कुमार सुगाम अवश्य ही इस विद्रोह का दावानल दूर-दूर तक पहुँचावेगे और कुमार सुसीम को नेता बनाकर कुछ अनिष्ट करने की बाते सोच रहे होगे ।

चडगिरिक : इन्ही कुमारो से सेवक ने सुना कि राजकुमार सुसीम अन्य कुमारो के साथ सम्राट् पर आक्रमण करेगे और..

[सम्राट् अशोक का प्रवेश । माँस-पेशियो से गठा हुआ शरीर । मुख पर तेज और नेत्रो मे आकर्षण । स्वर मे स्पष्टता और वज्र जैसी दृढता । सम्राट् अशोक अकुश की कसी हुई धोती पहने हुए है, जिसके कमर के समीप-भाग मे हस-मिथुन के चिह्न है । कन्धो को

ढकती हुई तथा बायी बाहु पर होती हुई रेशमी चादर है जिसमे रत्नो के फुँदने लगे हुए हैं। चीनाशुक के बने हुए डोरी वाले कमरबन्द, जिनके सिरे छाती के समीप रत्न-सकट से कसे हुए है। शीर्ष-पट के साथ एक मयूरपक्ष के रग का उष्णीष जिसके दोनो ओर एक-एक मोती की माला बँधी हुई है। पैर मे लिपटल मजीठ रग के उपाहन। हाथ मे कृपाण]

अशोक : (प्रवेश करते ही) चडगिरिक ! तुम यहाँ से जा सकते हो।

खल्लाहक · (घूमकर) सम्राट् की जय !

चडगिरिक : (झुककर) सम्राट् की जय !

अशोक . आदेश दुहराये नही जाते, चडगिरिक !

चडगिरिक : (झुककर) श्रीमन् ! [शीघ्रता से प्रस्थान]

खल्लाहक : किन्तु चडगिरिक की यहाँ आवश्यकता होगी, सम्राट् !

अशोक : मेरी रक्षा के लिए ? (कुछ हँसते हुए) क्योकि आपके अमात्य-मडल ने निर्णय किया है कि अशोक मगध के सम्राट् हो और सम्राट् के लिए अगरक्षक हो। किन्तु मै समझता हूँ, अमात्य ! वह सम्राट् भी क्या है, जिसे अगरक्षक की आवश्यकता हो। (अमात्य खल्लाहक की मुद्रा गभीर है। उसकी ओर तिरछी दृष्टि से देखते हुए) बहुत गभीर हो गये, अमात्य ! सम्राट् तो वही है, जो सम्यक् रूप से विराज सके। सतोष से प्रजा उसकी श्री की सराहना कर सके। उसके लिए अगरक्षक की क्या आवश्यकता हे। अगरक्षक की नियुक्ति तो प्रजा के प्रति अविश्वास है। प्रजा ऐसे राजा को क्या क्षमा कर सकती है ?

खल्लाहक : किन्तु इस समय परिस्थिति भयानक है। आपको भी यहाँ नही रहना चाहिये। परिस्थिति अत्यन्त भयानक है. सम्राट् !

अशोक : (हँसकर) भयानक ! परिस्थिति भी कभी भयानक होती है, अमात्य ? मनुष्य की दुर्बलता का दूसरा नाम परिस्थिति है। जब मनुष्य विवश होकर कुछ नही कर सकता, तो वह सरलता से कह देता है, परिस्थिति अनुकूल नही है... भयानक है। मनुष्य ही परिस्थितियो का निर्माण करता है और निर्माण कर चुकने पर जब वह असफल हो जाता है, तो भाग्य को दोप देता है। अपने हाथ से अपनी ही शक्तियो की हत्या करता है और कहता है कि मैं अकेला हूँ।

खल्लाहक : आपके साहस की मैं प्रशसा करता हूँ, सम्राट् ! किन्तु मैं कुछ निवेदन करना चाहता हूँ।

अशोक अमात्य की वाणी विधान की वाणी है। मै सुनूँगा।

खल्लाहक आप जानते है, सम्राट् ! अमात्य-मडल ने जो निर्णय किया है, वह अन्य कुमारो को स्वीकार नही है। वे ज्येष्ठ कुमार सुसीम को सम्राट् बनाना चाहते है। इस गृह-विद्रोह के सम्बन्ध मे ही परामर्श देने के लिए मैंने आपको इस एकान्त मे निमत्रित किया था। राजमहल के तो कोने-कोने मे अनन्त

जिह्वाएँ, अनन्त नेत्र और अनन्त कान है। यह एकान्त ही मूक, अन्ध और बधिर है। किन्तु अब आपको यहाँ भी नही रहना चाहिए। यह एकान्त भी मुझे एक कच्छप की भाँति लग रहा है जो अपने विद्रोह का सिर अपने भीतर समेटकर बैठा हुआ है।

अशोक मुझे उससे भय नही है, अमात्य! कच्छप भले ही कठोर हो, किन्तु वह भय से आक्रान्त भी हे। भय ही उसे सिर समेटने के लिए वाध्य करता है। वह चोरी से माँस नोचता है, विषधर की तरह आक्रमण नही करता। मुझे ऐसे कच्छपो से भय नही है; मै उनके मर्मस्थल को वेधना चाहता हूँ। हाँ! तुम मुझे कुछ परामर्श देना चाहते थे पाटलिपुत्र की राजनीति के सम्बन्ध मे ?

खल्लाहक तो आपको सूचना है कि अन्य राजकुमार असतुष्ट है ?

अशोक हाँ, मुझे इस बात की सूचना है कि अन्य राजकुमारो को अमात्य-मडल के निर्णय से असतोष है। इस सम्बन्ध मे आपका और अमात्य-मडल का क्या निर्णय है ?

खल्लाहक अमात्य-मडल इस सम्बन्ध मे आपसे परामर्श के लिए उत्सुक है। जहाँ तक मेरा व्यक्तिगत निर्णय है, सम्राट्! यह बिलकुल स्पष्ट है और वह पाटलिपुत्र के हित मे है। आज मुझे मगध की सेवा करते हुए बीस वर्ष से अधिक हो गये। स्वर्गीय सम्राट् की राजनैतिक मत्रणाओ का आसन मेरे परामर्श निर्मित सिंहो के कन्धो पर था। आचार्य चाणक्य के अर्थशास्त्र ने तो हमारा मार्ग प्रशस्त किया ही है, किन्तु अनेक परिस्थितियाँ ऐसी आई है जहाँ हमने राजनीति को सरस्वती की गुप्त धारा बनाकर विपक्षियो मे भी सग्राम करा दिया है। किन्तु यह अतर्विद्रोह विपक्षियो की हिंसा से भी भयानक है।

अशोक आपकी राजनीति पर हमे विश्वास है।

खल्लाहक सम्राट्! आज मगध मे गृह-विद्रोह की ज्वाला भडक उठी है। स्वर्गीय सम्राट् इस बात को स्वीकार करते थे कि सब भाइयो मे आप सबसे अधिक शक्तिशाली है, किन्तु वे ज्येष्ठ कुमार सुसीम को समीप रहने के कारण अधिक चाहते थे। आप उज्जयिनी मे ग्यारह वर्षो से थे। आपने अनेक विद्रोह शान्त किये, किन्तु कुमार सुसीम ने आपके शौर्य की सूचना सम्राट् तक पहुँचने भी नही दी। कुमार सुसीम सम्राट् का स्नेह पाकर धृष्ट और दुर्विनीत हो गये। कुमार सुगाम भी उन्ही की भाँति निरकुश बन गये। जब तक्षशिला मे विद्रोह हुआ तो सम्राट् आपको उज्जयिनी से तक्षशिला भेजना चाहते थे, किन्तु अमात्य-मडल जानता था कि वह विद्रोह राज्य-कर्मचारियो के प्रति है, सम्राट् के विरुद्ध नही। इसलिए आपके भेजे जाने की आवश्यकता नही समझी गई और कुमार सुसीम को राज्य से दूर करने के लिए तक्षशिला भेज दिया गया।

अशोक सुसीम शाति स्थापित कर आज प्रात तक्षशिला से पाटलिपुत्र लौट भी आये ?

खल्लाहक हाँ ! आज प्रात वे लौट आये । उन्हे स्वर्गीय सम्राट् के निधन की सूचना मिल चुकी थी, इससे उन्हे आशका थी कि अमात्य-मडल उनके स्थान पर कही कुमार अशोक को सम्राट् न बना दे ।

अशोक (**मुस्कराकर**) और आपके अमात्य-मडल ने अशोक को ही सम्राट् बनाया।

खल्लाहक इसीलिए कुमार सुसीम अन्य कुमारो के साथ मिलकर पाटलिपुत्र को विद्रोह की अग्नि मे भस्म कर देना चाहते है ।

अशोक विद्रोह मे तो यही होगा । किन्तु इससे रक्षा का उपाय ?

खल्लाहक मेरी दृष्टि मे एक ही है ।

अशोक सुनना चाहता हूँ ।

खल्लाहक यदि इसे राजवश की मर्यादा के विपरीत न समझा जाय तो.. .

अशोक तो......?

खल्लाहक उन पर शीघ्रातिशीघ्र नियत्रण लगा दिया जाय ।

अशोक सैनिक नियत्रण ?

खल्लाहक हाँ, सम्राट् ! अन्यथा बढती हुई आग की लपटो की भाँति वे राज-मर्यादा की फूलती हुई बेलो को झुलसाते रहेगे ।

अशोक इसके अतिरिक्त अन्य कोई मार्ग नही है ?

खल्लाहक वे सब प्रतिहिंसा के विष-दन्तो मे मृत्यु का अभिशाप लिए हुए है। वे आप पर आक्रमण करना चाहते है । उन्हे इस बात की सूचना है कि आप इस समय यहा पर है । इसीलिए मैने निवेदन किया कि अब आप इस समय यहाँ से शीघ्र ही लौट चले । जब आपकी रक्षा के लिए अगरक्षक और एक सैनिक गुल्म की नितान्त आवश्यकता है, तब आपने अपने अगरक्षक को यहाँ से जाने का आदेश दे दिया ।

अशोक (**सोचते हुए**) वे यहाँ मुझ पर आक्रमण करेगे ?

खल्लाहक निस्सदेह ! कुमार सुगाम और कुमार सुदत्त यही अभिसधि लेकर यहाँ से गये है । वे आपके आने के पूर्व यहाँ थे । वे सब मिलकर किसी भी क्षण आप पर आक्रमण कर सकते है । चन्द्रोदय होने ही वाला है । वे इसी की प्रतीक्षा कर रहे होगे । यही उनके आक्रमण की वेला है ।

अशोक अधकार मे वे अपना आक्रमण अधिक सफलता के साथ कर सकते है। विद्रोह का कृपाण तो अधकार की म्यान मे रहता है ।

खल्लाहक इसीलिए, सम्राट्, परामर्श का समय चन्द्रोदय के पश्चात् ही रखा गया था ।

अशोक तो चन्द्रोदय ही उनके आक्रमण की वेला है ?

खल्लाहक हाँ, सम्राट् !

अशोक तो फिर अमात्य, तुम भी यहाँ से जाओ ।

खल्लाहक मै भी यहाँ से चला जाऊँ ? मगध के सम्राट् को इस एकान्त मे छोडकर

चला जाऊँ, जिससे विद्रोहियो का मार्ग और भी सुगम हो जैसे ? मेरे लिए यह सभव नही होगा, सम्राट् ! यह राज-धर्म और सेवा-धर्म दोनो ही के प्रतिकूल है ।

अशोक तो राज-धर्म भी कैसा है कि उसने अपने सम्राट् की परीक्षा लिए बिना ही उसे सम्राट् बना दिया ? नदी की गहराई परखी ही नही और उसमे अपनी विशाल नौका छोड दी ? अमात्य-मडल को सम्राट् की परीक्षा भी तो लेनी चाहिये थी ?

खल्लाहक उज्जयिनी मे सम्राट् की परीक्षा अनेक बार ली जा चुकी है ।

अशोक उज्जयिनी पाटलिपुत्र नही है, अमात्य ! उज्जयिनी केवल पश्चिम-चक्र की राजधानी है और पाटलिपुत्र समस्त मगध राज्य का केन्द्र है । यहाँ की परीक्षा वास्तविक परीक्षा है ।

खल्लाहक फिर भी, सम्राट्, आपसे प्रार्थना है कि आप मुझे यहाँ से जाने का आदेश न दे । विद्रोह मे पाटलिपुत्र भस्म होने जा रहा है ।

अशोक मैं अमात्य को आदेश न देकर उनसे आग्रह करना चाहता हूँ कि वे मुझे एकान्त मे कुछ विचार करने का अवसर प्रदान करे ।

खल्लाहक जैसी आज्ञा ! [प्रस्थान]

अशोक **(टहलते हुए सोचते है)** विद्रोह ! विद्रोह की अग्नि मे पाटलिपुत्र भस्म होने जा रहा है ! सम्राट् बिन्दुसार का पाटलिपुत्र ! सम्राट् चन्द्रगुप्त का... ! **(टहलते हुए पेड़ के समीप आते है। वे पूर्व के आकाश मे देखते है)** यह चन्द्र ! तो चन्द्रोदय हो गया ! आक्रमण की यही वेला है । कैसा आक्रमण होगा ! किसी ने आक्रमण कर चन्द्र की तीन कलाएँ भी काट ली है । **(एक दिशा मे चौंककर देखते है)** कौन है ? **(कोई उत्तर नहीं मिलता)** पाटलिपुत्र मे चोर की तरह छिपने वाला कौन है ?

सुगाम **(सामने आकर तलवार टेककर खडा होता है)** मै चोर नही हूँ, अशोक !

अशोक **(आत्मीयता के स्वरो मे)** सुगाम ! तुम हो ? फिर चोर की तरह क्यो छिप रहे हो ? तुम मेरे भाई हो, स्वर्गीय सम्राट् बिन्दुसार के पुत्र, मगध राज्य के सरक्षक !

सुगाम व्यग्य-बाण मत चलाओ । शक्ति हो तो तुम तलवार का प्रयोग क सकते हो ।

अशोक शक्ति भी है और तलवार भी है, किन्तु प्रयोग का अवसर मैं नही देखता । हाँ, तुम प्रयोग करो । देखो, चन्द्रोदय हो गया । तुम्हारे आक्रमण की वेला यही तो है । देखूँ, तुम किस प्रकार आक्रमण करते हो ?

सुगाम मै आक्रमण तो करूँगा ही, अशोक ! पहले यह जानना चाहता हूँ कि अमात्य खल्लाहक और अगरक्षक चडगिरिक कहाँ है ?

अशोक दो भाइयो के बीच मे कोई बाहरी व्यक्ति नही होना चाहिये, सुगाम ! इसीलिए दोनो को ही यहाँ रहने की अनुमति मैंने नही दी । अब यहाँ केवल मै

हूँ और तुम हो। हम दोनो का जीवन जीवन है, कोई प्रदर्शनी नही जो बाहरी व्यक्ति देखे।

सुगाम अशोक ! तुम जानते थे कि मै यहाँ आने वाला हूँ ?

अशोक निस्सदेह ! मै अपने अन्य भाइयो की भी प्रतीक्षा कर रहा हूँ। वे सब कहाँ है ?

सुगाम कही दूर नही होगे, किन्तु तुम जानते हो, इसका परिणाम क्या होगा ?

अशोक भाइयो के मिलने का परिणाम बुरा नही होता, यह मै जानता हूँ।

सुगाम तुम साहसी हो, अशोक ! इसलिए मुझे तुम पर दया आती है। मै नही चाहता कि भाइयो की क्रोधाग्नि मे तुम भस्म हो जाओ।

अशोक मै भस्म हो जाऊँ ? असम्भव। क्रोधाग्नि मे क्रोध करने वाला व्यक्ति ही भस्म होता है, सुगाम ! मै अपने भाइयो को क्रोधाग्नि मे भस्म होने से रोकूँगा।

सुगाम : यह तुम्हारा साहस-मात्र है। अशोक ! तुम्हारे लिए उचित होगा कि तुम मगध के सिंहासन से हट जाओ।

अशोक अशोक आज तक अपने कर्तव्य से पीछे नही हटा है, सुगाम ! यदि अमात्य-मडल एक मत से मेरे सम्राट् होने का निर्णय न करता तो मै दूसरे दिन ही उज्जयिनी के लिए प्रस्थान करता। पिता-श्री के निधन के पश्चात् मगध राज्य की सुरक्षा का प्रश्न मेरा पहला कर्तव्य है, जिसका पालन मै जीवन के अन्तिम क्षणो तक करूँगा।

सुगाम तुम्हारा यह झूठा अभिमान है। मै तुम्हे सचेत करना चाहता हूँ, अशोक ! तुम युवराज सुसीम के मार्ग से हट जाओ।

अशोक मुझे सुसीम के मार्ग का मोह नही है। मुझे अपना मार्ग प्रिय है, और यदि मै अपने सत्य मे स्थित हूँ तो प्रत्येक मार्ग मेरे लिए राजमार्ग है, भूमि का प्रत्येक खड मेरे लिए सिंहासन है और सिंहासन उच्च नही है, सुगाम ! सिंहासन पर बैठने की योग्यता उच्च है। सुसीम सिहासन को ही उच्च समझते है। यह मार्ग मेरा नही है।

सुगाम : फिर भी तुम्हारा मार्ग सुसीम के मार्ग को अवरुद्ध करता है। तुम इस मार्ग से हट जाओ, नही तो

अशोक नही तो . ?

सुगाम समस्त भाइयो की सम्मिलित शक्ति तुम्हे बलपूर्वक मार्ग से हटा देगी।

अशोक मै ऐसी शक्ति के दर्शन करना चाहता हूँ। जीवन-भर मैने शक्ति की ही उपासना की है। आज उसका सम्मिलित रूप देखकर मै अपने को धन्य समझूँगा। कहाँ है वह सम्मिलित शक्ति ? उस सम्मिलित शक्ति का प्रयोग मै भी देखना चाहता हूँ, सुगाम !

सुगाम वीरवर अशोक ! मै नही चाहता कि स्वर्गीय पिता-श्री का शुभ्र वश भाइयो

के रक्त से कलकित हो। यदि तुम सुसीम के पक्ष मे नही हो तो किसी अन्य भाई को सिहासन पर बैठने का अवसर दे सकते हो। तुमने अपनी वीरता की ध्वजा समस्त पश्चिम-चक्र मे फहराई है। तुम ऐसा कर सकते हो कि यदि सुसीम योग्य नही है, अर्थात् उसे सिहासन के योग्य नही समझते तो...तो मैने अर्थात् मैंने मार्ग, आदर्श पर चलने का प्रयत्न प्रयत्न नही साधना की है . । मैं अर्थात् मैं .

अशोक देखो, सुगाम ! अपने व्यक्तित्व पर बल दो .. किसी दूसरे का अनुकरण आत्महत्या है।

सुगाम (तीव्रता से) तो अब तुम्हारी हत्या की जायगी, अशोक ! मैं तुम्हे सावधान करने आया था। तुम्हारे प्रति भाइयो का क्रोध अन्तिम सीमा पर पहुँच गया है।

अशोक मनुष्य की शक्ति अन्तिम सीमाओ मे शोभा नही पाती। अन्तिम सीमाओ को सतुलित करने मे शोभा पाती है।

सुगाम यह तुम्हारा अन्तिम निर्णय है ?

अशोक मेरे धैर्य की परीक्षा न लो, सुगाम ! क्या तुम समझते हो कि मगध का सिहासन किसी वणिक की तुला है, जो शब्दो के भार से किसी ओर भी झुक सकती है ? यह सिंहासन मौर्य सम्राट् चन्द्रगुप्त का है, सम्राट् बिन्दुसार का हे, जिनका साहस और प्रताप उसमे रत्नो की भाँति जडा हुआ है, और इन रत्नो मे देश का ही नही, विदेश का भी इतिहास प्रतिबिम्बित हुआ है।

[नेपथ्य मे कोलाहल होता है।]

अशोक . यह कैसा कोलाहल ?

सुगाम (व्यग्य से) इसी कोलाहल मे तुम्हारा इतिहास प्रतिबिम्बित होगा !

[नेपथ्य मे एक स्वर—अशोक का वध करो !
दूसरा स्वर—पाटलिपुत्र का कलक दूर हो !
तीसरा स्वर—अशोक को बन्दी करो !]

अशोक (तीव्रता से कोलाहल की दिशा मे देखकर) मैं प्रस्तुत हूँ।

[नेपथ्य मे फिर हलचल होती है।]

सुगाम (उच्च स्वर से) सम्राट् की जय !

[‘जय’ का नाद गूँजते ही नेपथ्य से सुसीम अन्य चार भाइयो सहित तलवार की नोक सामने कर झपटते हैं।]

सुसीम (तीव्रता से तलवार उठाकर) प्रतिहिंसा मेरे प्राणो मे है। मृत्यु मेरे हाथो मे है ..आक्रमण करो !

[हलचल होती है।]

अशोक (गर्जन के स्वर मे) सावधान ! सम्राट् बिन्दुसार के वश के हिंसक पशु ! वही खडे रहो !

[सब स्तंभित होकर रुक जाते हैं ।]

अशोक . (**वैसे ही गर्जन के स्वर मे**) यदि एक भी व्यक्ति आगे बढा तो वह खौलते हुए तेल के कडाह मे झोक दिया जायगा ।

[**सब ठिठके हुए खड़े रहते है । केवल कुमार सुसीम आगे बढते हैं ।**]

सुसीम किसका साहस है कि वह हमे खौलते हुए तेल के कडाह मे झोक दे ?

अशोक पाटलिपुत्र का एक-एक व्यक्ति यह साहस रखता है। और खौलते हुए तेल की एक-एक बूंद माँस मे डूबकर हड्डियो को गलाने की शक्ति रखती है। तुम आगे बढोगे ?

सुसीम मै ही नही मेरे भाई भी आगे बढेगे ।

अशोक तुम्हारे ये भाई जिन्हे तुमने विद्रोह के लिए भडकाया है, जिन देवता जैसे राजकुमारो को तुमने भेडियो का बाना पहनाया है ? पिता की मृत्यु पर टूटते हुए इनके आँसुओ से तुम अपना राज्याभिषेक कराना चाहते हो ? बोलो, सुसीम ! स्वार्थ की वेदी पर भाइयो की बलि देना हिसा की पराकाष्ठा है या नही ?

सुसीम हिसक तुम हो ।

अशोक भाइयो को अपने साथ-साथ तुम लाये हो, जिससे वे मेरी तलवार से कटे और तुम मुझसे सन्धि कर सिहासन पर बैठो । तुम्हारा स्वार्थ ये भाई जानते है । इसलिए ये भाई देखने मे तुम्हारे साथ है, पर वास्तव मे साथ नही है। राज्य मे विद्रोह स्वार्थ के पैरो पर खडा होता है । इन पैरो की दिशा जानते हो किस ओर है ? सुदत्त ! सुहास ! सुवेल ! तुम लोगो के पैर काँप रहे है। तुम्हारे हाथो की तलवारे झुक रही है। राजनीति मे विद्रोह वह हिम-खड है जो अविश्वास की आँच मे गलकर बह जाता है । तुम्हारे माथे पर जो पसीना है, सुदत्त ! वह उसी का रूप है । उसे जल्द पोछो ।

[**सुदत्त बाएँ हाथ से माथे का पसीना पोछता है ।**]

सुसीम (**सुदत्त से सरोष**) पसीना क्यो पोछते हो ?

सुदत्त (**हकलाते स्वर मे**) अविश्वास ...अविश्वास से गल. गल कर बह रहा है ।

सुसीम (**चीखकर**) अविश्वास ? कैसा अविश्वास ?

अशोक (**तीव्रता से**) वह अविश्वास, जो तलवारो मे काँपता है । वह अविश्वास, जो तलवार को कसकर पकडता है , किन्तु मुट्ठी ढीली की ढीली रह जाती है। वह अविश्वास, जो साहस कर बोलना चाहता है , किन्तु भूमि मे गडे लोहे पर की गई चोट की भाँति गले मे कुठित हो जाता है। स्पष्ट कठ से कहो, सुसीम ! क्या कहना चाहते हो ? तुम्हारी वाणी अविश्वास से बोझिल हो रही है ।

सुसीम मेरी वाणी बोझिल नही । मै पूछता हूँ, मुझे खौलते हुए तेल मे झोकने की शक्ति किसमे है ?

अशोक मुझमे । उस शक्ति की परीक्षा लेना चाहते हो ? तुम्हारे भाइयो के पैर लडखडा रहे है । तुम्हारी वाणी मे पहले जैसा तीखापन नही है । कौन परीक्षा लेगा ? समझो, सुसीम ! सागर की एक बूँद सागर के जल के समान ही है, किन्तु उसमे प्रलय का सघात उत्पन्न नही हो सकता । यदि तुम्हारे साथ के भाइयो ने मगध का भविष्य नही पहचाना तो मुझे बलपूर्वक पहचानने के लिए बाध्य करना होगा ।

सुसीम हमे कोई बाध्य नही कर सकता ।

सुगाम राजकुमारो को कोई बाध्य नही कर सकता । काल भी उनके सामने आये, तो वे उसे अपने पैरो से कुचल देगे । भाइयो ! अशोक तुम्हारे सामने है । उस पर आक्रमण करो ! वध करो !

[कुमारो मे एक दूसरे का मुख देखकर फिर आक्रमण करने की हलचल होती है ।]

अशोक (तीव्रता से) शान्त ! तुम लोग एक पग भी आगे नही बढ सकते । यह रणभूमि नही है । यह पाटलिपुत्र की पवित्र धरणी है । गङ्गा और सोन ने इसका अभिषेक किया है । युद्ध करना है तो पाटलिपुत्र के बाहर की भूमि रक्त से रजित की जायगी । यह पवित्र धरणी यज्ञ-भूमि है, रणभूमि नही ।

सुसीम किन्तु तुम, अशोक तुम, इसे अपने दुस्साहस से रणभूमि मे परिणत करना चाहते हो !

अशोक आक्रमण करने का आदेश किसने दिया—मैने या तुमने ? यह भी तक्षशिला का विद्रोह है ? यह भी उत्तर-चक्र का विप्लव है ? यह पाटलिपुत्र के भविष्य का निर्णय हे । यह हमारी पितृभूमि—हमारे मध्य-चक्र की परम्परा का निर्णय है । सुसीम ! अधिकार को विद्रोह का खिलौना मत बनाओ । मै आवेश के चक्रव्यूह मे अधिकार को लाछित नही होने दूँगा । मै जानता हूँ, आवेश मे भरे हुए व्यक्तियो का समूह पशुओ के पैरो से चलता है । आवेश दूर हो !

सुगाम तो सुसीम मगध के सम्राट् होगे । पिता का उत्तराधिकार उन्ही को प्राप्त होगा ।

अशोक और तुम्हे प्राप्त क्यो नही हो सकता ? तुम भी मगध-सम्राट् के पुत्र हो, पिता के उत्तराधिकारी हो । सुगाम ! तुम भी मगध के सम्राट् हो सकते हो ।

सुगाम वह तुमने स्वीकार कब किया ?

अशोक वह भी कभी स्वीकार हो सकता है । किन्तु इसके लिये तुम विद्रोह करोगे ? किसके साथ विद्रोह करोगे ? अमात्य-मडल की शक्ति प्रजा की शक्ति है । प्रजा की शक्ति ईश्वर की शक्ति है । ईश्वर की शक्ति से कौन युद्ध करेगा ? याद रखो, सुगाम ! प्रजा की शक्ति मेरे साथ है, फिर किसमे साहस है कि ईश्वर की शक्ति के समक्ष खडा रह सके ! और इन टूटी हुई तलवारो के साथ तुम मुझमे युद्ध करोगे ? सुगाम ! तुमने इन कुमारो के हाथो मे टूट जाने वाली

तलवारे क्यो दे रखी है ?

[कुमार अपनी तलवारो पर दृष्टि डालते हैं ।]

सुगाम ये राजकुमारो की अपनी तलवारे है।

अशोक तो इन तलवारो का पानी उतर गया है । जब विद्रोह के लिए तलवार उठती है तो उसका पानी उतर जाता है। (**तलवारो को लक्ष्य कर**) यह देखो ! ये तलवारे आपस मे ही टकरा रही है । सुहास और सुवेल ! तुम लोगो की तलवारे आपस मे ही टकराकर कुठित हो रही है । पीछे हटो !

[दोनो यन्त्रवत् पीछे हट जाते हैं ।]

सुदत्त मेरी तलवार तो नही टकरा रही है ।

अशोक · तुम भविष्य को पहचानते हो । सुदत्त और सुगाम ! तुम भी भविष्य को पहचानते हो , क्योकि तुम मुझे सावधान करने आये थे और अपने लिए मगध का सिहासन .

सुसीम (**आश्चर्य से सुगाम की ओर देखते हुए**) अपने लिए मगध का सिहासन चाहते थे ?

सुगाम . अपने लिए अर्थात् तुम्हारे लिए ।

सुदत्त मुझसे तो किसी अमात्य-पद की बात कर रहे थे ।

सुहास हॉ, और यही मुझसे भी कहा था ।

सुबेल और मुझे तो अमात्य के नाम से पुकारने भी लगे थे !

अशोक शान्त ! शान्त ! परस्पर भेद की बाते करने से लाभ कुछ नही होगा । परस्पर अविश्वास का समय कहाँ ? पाटलिपुत्र का प्रत्येक राजकुमार सत्य को पहचानता है, वह धोखे मे नही आ सकता । मै तुम सबसे अपने मन की बाते कहना चाहता था , किन्तु पूज्य पिता की चिता की जलती हुई भस्म आज भी पाटलिपुत्र को दग्ध कर रही है । पूज्य माताओ की आँखो से बही हुई आँसुओ की धारा इस सोन नदी के प्रवाह से किसी भी प्रकार कम नही ।

सुदत्त मैने भी यही कहा था, अशोक ! मैने भी यही कहा था ।

सुसीम (**दृढता से**) मेरे सामने यह प्रश्न नही है, अशोक ! मै अपना अधिकार चाहता हूँ, अधिकार चाहता हूँ ! मै ज्येष्ठ हूँ ।

अशोक फिर मेरे प्रणाम के अधिकारी होकर मेरे आक्रमण के अधिकारी क्यो होना चाहते थे ? सुसीम ! तुम नही जानते कि तुम कितने महान् हो ! तुम मे कितनी शक्ति और क्षमता है ! तुमने तक्षशिला का विद्रोह एक दिन मे समाप्त कर दिया । तुम सम्राट् बिन्दुसार के ज्येष्ठ पुत्र ! मगध साम्राज्य के सुदृढ स्तम्भ ! यदि तुम अपने विवेक को सतुलित रखते तो यह राजश्री तुम्हारे चरणो मे लौटती और तुम पदाघात करते हुए कहते, 'दूर हो पिशाची ! तू मेरी शरण मे आने के योग्य नही है ।' किन्तु आज पिता का मरण तुम्हारे राज्य-वैभव का सोपान बन रहा है । माताओ की अश्रु-धारा मे तुम अपने भाई की रक्त-धारा

मिलाना चाहते हो ?

सुदत्त मैंने तुमसे यही कहा था, सुगाम ! मैने भी यही कहा था, अशोक ! मै निश्चय तुम्हारे पक्ष मे हूँ। मेरा प्रणाम स्वीकार करो। [**प्रणाम करके अशोक के समीप आकर खड़ा हो जाता है।**]

सुबेल और मैने भी अशोक का विरोध कब किया ? मै भी तुम्हारे पक्ष मे हूँ। मैं प्रणाम करता हूँ। [**प्रणाम करता है और अशोक के समीप दूसरी ओर खडा हो जाता है।**]

सुहास अशोक सत्य के पथ पर है। मै भी प्रणाम करता हूँ। [**प्रणाम करके अशोक के पक्ष मे आकर सुदत्त के समीप खडा हो जाता है।**]

अशोक पाटलिपुत्र की राजनीति कृतज्ञता का स्वर पहचानती है। मै तुम सब लोगो का कृतज्ञ हूँ, सुदत्त, सुवेल और सुहास ! तुम लोग विविध शासन-चक्रो के कुमार बनने की योग्यता रखते हो। तुम लोग जाओ। माताओ को तुम्हारे शीतल शब्दो की आवश्यकता होगी।

सुदत्त मैं भी यही सोचता हूँ, अशोक ! (**सुबेल और सुहास से**) चलो सुवेल ! चलो सुहास ! (**सुसीम से**) अच्छा सुसीम ! हम लोग जा रहे है।

सुबेल और सुहास चलो ! [**अशोक को प्रणाम करके जाते हैं।**]

सुसीम (**अशोक से**) तो इस प्रकार तुमने भेद-नीति से काम लिया !

अशोक (**शान्ति से**) भेद-नीति का प्रयोग वहाँ हो, जहाँ सगठन हो और जहाँ लोगो को भ्रम मे डालकर काम लिया जा सकता हो। इस नीति की आवश्यकता मुझे नही है, सुसीम ! मेरी नीति तो आत्मविश्वास की है। आत्मविश्वास जीवन के सत्य को पहचानने का बीज-मन्त्र है। और जीवन का सत्य किसी एक व्यक्ति का धन नही है, वह मानव-मात्र का अखण्ड वैभव है। तुम उदार नही हो सके। उदारता के अभाव मे तुम्हारा वैभव शरदकालीन बादल बन गया, जो देखने मे तो उज्ज्वल है, किन्तु उसमे जल की एक बूंद भी नही है। तुम नही समझ सके कि तुम्हारी आँखो की परिधि ही अन्तिम परिधि नही है .क्षितिज के पार भी एक परिधि है, जिसमे पृथ्वी और आकाश जैसे अलग तत्त्वो मे भी सन्धि हो सकती है।

सुगाम अशोक ! तुम महान् हो।

अशोक महान् तो मानव है, सुगाम ! यदि कोई व्यक्ति सच्चा मानव बन सके ! मानव ही सृष्टि का केन्द्र है। जहाँ वह है, वहाँ सारी प्रकृति है मानव ही राष्ट्र है। और मानव ही युग है। वह अनन्त प्रगति है, उसमे अनन्त शक्ति का स्रोत है यद्यपि वह नही जानता कि इस शक्ति का स्रोत कहाँ है।

सुसीम : (**सिर पकडकर**) ओह ! सब समाप्त हो गया।

सुगाम मेरे लिए कही कोई स्थान नही रह गया।

[**अमात्य खल्लाहक का प्रवेश**]

खल्लाहक सम्राट् की जय !

अशोक (**मुस्कराकर**) अमात्य ! तुम और अगरक्षक गुप्त स्थान मे बैठे-बैठे थक गये होगे , किन्तु मुझे अपनी वाणी और दृष्टि पर विश्वास था ।

खल्लाहक सम्राट् ! सैनिक गुल्म भी समीप ही था । वह प्रतीक्षा मे था कि कुमार आक्रमण करे ।

अशोक किन्तु कुमारो ने आक्रमण नही किया । कितने कृपालु है ये कुमार !

सुसीम इस समय जाता हूँ, अशोक ! फिर कभी

अशोक नही ! अभी तुम नही जा सकोगे, कुमार सुसीम और सुगाम ! मेरा अनुरोध है कि तुम आत्महत्या नही करोगे । इस वश मे किसी ने आत्महत्या नही की है । तुमसे शासन-चक्र के सम्बन्ध मे कुछ परामर्श करूँगा । यह स्मरण रखना कि आवश्यकता से अधिक बुद्धिमत्ता मूर्खता की जननी है ।

सुसीम क्या मुझे खौलते हुए तेल के कडाह मे डालोगे ? मुझे कोई चिन्ता नही ।

अशोक (**अमात्य से**) मै अगरक्षक की उपस्थिति चाहता हूँ ।

खल्लाहक सम्राट की जैसी इच्छा । मै भी यही चाहता था । [**प्रस्थान**]

अशोक कुमार सुसीम ! राज्यश्री एक महापर्व मनाती है । उसमे महत्त्वाकाक्षा की भरी नदी मे स्नान होता है । गुप्त अभिसधियो का मत्र-पाठ होता है । प्रशस्तियो के स्तोत्र पढे जाते और ऐश्वर्य के पुष्प बिखेरे जाते है । पाटलिपुत्र की राज्यश्री मे यह कुछ नही होगा । उसमे प्राचीन राज्यपुरुषो की अर्चना मे केवल प्रेम की पुष्पाजलि अर्पित होगी और प्राणो के दीप जलेगे । यह राजनीति है यही राज्यश्री है । (**नेपथ्य मे देखकर**) कौन ? चडगिरिक !

चडगिरिक आज्ञा, सम्राट् ! [**सिर झुकाता है ।**]

अशोक राजकुमार सुसीम और राजकुमार सुगाम को आदर सहित राजमहलो मे पहुँचा दो !

सुसीम हम लोग जिस भॉति आये है, उसी भाँति चले जावेगे ।

अशोक नही, कुमार सुसीम ! सम्राट् बिन्दुसार के राजवश की मर्यादा सुरक्षित रहेगी । (**चंडगिरिक से**) और चडगिरिक ! साथ मे सैनिक गुल्म भी रहेगा ।

चडगिरिक जैसी आज्ञा, सम्राट् ! (**कुमारो से**) कुमारो से प्रार्थना है कि वे राजमहलो की ओर प्रस्थान करे ।

सुसीम : (**सुगाम से**) चलो, सुगाम !

सुगाम अशोक ! तुम्हारे कहने से मै आत्महत्या नही करूँगा ।

अशोक साधु, सुगाम ! [**सुसीम और सुगाम का शीघ्रता से प्रस्थान**]

[**खल्लाहक का प्रवेश**]

खल्लाहक सम्राट् की कोई विशेष आज्ञा ?

अशोक (**सोचते हुए**) कृष्ण-पक्ष की रात्रि मे जितने अधिक तारे रहते है, उतना

ही अधिक अंधकार भी रहता है।

खल्लाहक सत्य है, सम्राट्! किन्तु आज चन्द्रोदय होने पर पाटलिपुत्र को सच्चा सम्राट् मिला।

अशोक यह उस पवित्र सोन (**नेपथ्य मे संकेत करते हुए**) का वरदान है—सोन का, जिसने सम्राट् चन्द्रगुप्त के पाटलिपुत्र का निर्माण किया। उसी पवित्र सोन का वरदान है!

[**अशोक के मुख-मडल से तेज किरणें फूटती-सी ज्ञात होती हैं।**]

[**धीरे-धीरे परदा गिरता है।**]

6

❖ चारुमित्रा ❖

●

पात्र-परिचय

सम्राट् अशोक—मगध सम्राट्
तिष्यरक्षिता—सम्राज्ञी
चारुमित्रा—सम्राट् की अगरक्षिका
स्त्री—शिशु की माता
स्वयप्रभा—तिष्यरक्षिता की सहचरी
उपगुप्त—बौद्ध-सन्यासी
राजुक, प्रहरी आदि

●

काल—ई० पू० 261
स्थान—कलिंग मे गोदावरी के तट पर सम्राट् अशोक का युद्ध-शिविर।

चारुमित्रा

[सम्राट् अशोक ने अपने शासन के तेरहवे वर्ष मे कलिग पर चढाई कर दी है। उसका कारण यह है कि कलिंग-नरेश, सम्राट् अशोक की सत्ता स्वीकार करने मे अपना अपमान समझता है। उसने भारत के बाहर भी अपने उपनिवेश स्थापित कर रखे है। उज्जयिनी के कुमारामात्य सुगाम ने अपने असफल विद्रोह की प्रतिक्रिया मे कलिग-नरेश की सहायता करना उचित समझा है। सम्राट् अशोक को यह सहन नही हो सकता। उन्होने उज्जैन और तक्षशिला मे आत्माभिमान की जो दीक्षा प्राप्त की है, वह कलिग-नरेश के स्वातन्त्र्य प्रेम से समझौता नही कर सकती। और जब अशोक ने सम्राट् चन्द्रगुप्त के वश में जन्म लिया है, तो वे कैसे अपने अधिकार से आँखे मूँद सकते है ? इस समय उनका राज्य उत्तर हिन्दूकुश से लेकर दक्षिण मे पेनार नदी तक है और पश्चिम मे अरब सागर से लेकर बंगाल की खाड़ी तक। सिर्फ कलिग एक मतवाले नाग की तरह सिर उठाये हुए विषम दृष्टि से अशोक की ओर देखता है। अशोक उस नाग का सिर कुचलना चाहते है। उन्होने दो वर्ष पहले कलिग पर चढाई कर दी है। उनकी सैन्य शक्ति अपार है। पैदल, अश्वारोही, रथ और हाथियो को उन्होने कलिग की सीमा पर अड़ा दिया है। वे आगे बढते चले जा रहे है। सम्राट् अशोक स्वय सैन्य-सचालन करते है। उनका शिविर उनकी सेनाओ के साथ है। वे युद्ध के अतिरिक्त किसी भी विषय पर बात नही करना चाहते।

उनका शिविर इस समय गोदावरी तट पर है। दूर पानी के बहने और शिलाओ से टक्कर खाने की ध्वनि है। शिविर के चारो ओर लताओ और गुल्मो का जाल है। समस्त वातावरण मे शान्ति और सौन्दर्य है, जो कभी किसी सैनिक की ललकार से या पक्षी के तीखे स्वर से भंग होता है, लेकिन शान्त हो जाता है, जैसे एकाकी मार्ग मे चलती हुई कोई स्त्री ठोकर खाने से चीख उठे, लेकिन फिर अपने मार्ग पर चलने लगे। शिविर के पर्दो पर शस्त्र त्रिकोण मे

लम्बी रेखाओ के रूप से सजे हुए है । जगह-जगह युद्ध के वस्त्र टँगे हुए हैं । इस समय सध्या गहरी होती जा रही है । सम्राट् अशोक युद्ध से नही लौटे । उनकी रानी देवी अपने कक्ष मे बैठी हुई चित्र बना रही हैं । शिविर के कक्ष मे ऐश्वर्य बरस रहा है । स्तम्भो मे स्वर्णलताएँ लिपटी हैं और उन पर रत्नो के फूल हैं, जो प्रकाश में ज्योति-मडल बन जाते हैं । नीलम और मोतियो की झालरो से कक्ष की दीवारो पर समुद्र की फेनिल लहरो का आभास उत्पन्न किया गया है । पीछे एक महराब है, जिसके दोनो ओर प्रस्तर-निर्मित एक-एक हाथी घुटने टेके हुए है । चारो ओर दीपस्तम्भ हैं, जिनमे दीपक जल रहे हैं और उन्ही स्तम्भो मे फूल के आकार के पात्र से सुगन्ध-धूम निकल रहा है । कक्ष के बीच मे एक ऊँचा और सजा हुआ आसन है । उससे हटकर कोने की ओर चार छोटी-छोटी आसन्दिकाएँ हैं । उन आसनो मे से एक पर देवी बैठी हैं । उनके सामने चित्रफलक पर एक अधबनी तस्वीर है, जिसमे प्रकृति का सौन्दर्य अपनी पूर्णता के लिए देवी की तूलिका मे से उतर रहा है । कक्ष मे निस्तब्धता है । देवी चित्र बनाने मे लीन हैं । रुककर एक स्थान पर खड़ी रहकर वह भिन्न-भिन्न कोणो से चित्र की ओर देख रही हैं । दो क्षणो तक चित्र देखने के बाद वे अपनी तूलिका से दीप-स्तम्भ पर शब्द करती हैं । एक परिचारिका प्रवेश कर दोनो हाथ जोडकर प्रणाम करती है ।]

महादेवी चारु ! देख यह चित्र कितना अच्छा बन रहा है ।

चारुमित्रा बहुत अच्छा, महादेवी !

महादेवी चारु ! मैंने चाहा कि इसी जगह की प्रकृति का चित्र बना लूं । यहाँ रहते-रहते ये पेड, ये झुरमुट, ये फूल मुझे बहुत अच्छे लगने लगे है । लता खिलती है तो मालूम होता है जैसे उसके सुहाग के दिन आये है । और गोदावरी तो ऐसे बहती है जैसे किसी के छूने पर उसे रोमाच हो आया है । तुझे भी तो यह जगह अच्छी लगी होगी ?

चारुमित्रा हाँ, महादेवी ! मुझे बहुत अच्छी लगती है ।

महादेवी तब तो युद्ध समाप्त हो जाने दे । फिर तेरा विवाह इसी जगह रचाऊँगी । इन्ही पेडो के नीचे मडप होगा और इन्ही फूलो से तेरी माँग भरूँगी ।

चारुमित्रा महादेवी आपका चित्र बहुत अच्छा बना है ।

महादेवी तू अपने विवाह की बात इस तरह उडा देना चाहती है ? इसी चित्र मे तेरे विवाह का भी चित्र होगा । कुमारामात्य सुगाम के साथ विवाह करेगी ? आह, कितने साहसी है ! वे तेरे लिए छद्मवेश भी धारण कर सकते है ।

चारुमित्रा क्षमा करे, महादेवी ! कुमारामात्य सुगाम के लिए कोई सुगामिनी

कुमारी ही हो सकती है, चारुमित्रा नही !

महादेवी तो चारुमित्रा के लिए किसी मित्र की आवश्यकता होगी, जिसका चित्र मुझे अपनी तूलिका से खीचना चाहिए। [हँसी]

चारुमित्रा महादेवी ! आप अपनी तूलिका को कष्ट न दे। आपकी कला हम लोगो के लिए बहुत ऊँची है।

महादेवी तू बहुत मीठी बाते करती है, चारु ! किन्तु मेरी कला जीवन के प्रत्येक चित्र को अपना अग समझती है। यही दृश्य देख ! कितना साधारण है, पर मुझे तो बहुत प्रिय है।

चारुमित्रा यह तो यही पास के कुज का चित्र है।

महादेवी हॉ, चारु ! मै कल वहॉ गई थी, आर्यपुत्र के साथ। वे जाने कैसे हो गये है ! सब समय युद्ध की बाते करते है। तेरे कलिग देश पर जब से उन्होने चढाई कर दी है, तब से तो सारा राज्य-कार्य महामात्य खल्लाहक पर ही छोड रखा है। आज दो वर्ष पूरे होने जा रहे है, पर कलिंग पर उनका क्रोध वैसा ही बना हुआ है।

चारुमित्रा यह मेरे देश का दुर्भाग्य है।

महादेवी मै चाहती हूँ, चारु, यह लडाई शीघ्र ही समाप्त हो जाय। सच मान, यह युद्ध मुझे अच्छा नही लगता। हमारे सुख और शान्ति के जीवन मे जहॉ हँसी का फूल खिलना चाहिए, वहाँ आह और कराह कॉटे की तरह चुभ जाती है।

चारुमित्रा महादेवी ! लडाई मे यही आह और कराह तो तलवार का सगीत बनती है।

महादेवी अच्छा चारु ! यह बता, तूने कभी लडाई लडी है ?

चारुमित्रा नही, महादेवी !

महादेवी तू जानती ही नही लडाई किसे कहते है ? जीवन भी तो एक लडाई है। पुरुष की स्त्री से लडाई, स्त्री की पुरुष से लडाई। स्त्री-पुरुष की पुरुष-स्त्री से लडाई। तूने कभी लड़ाई लडी ही नही ?

चारुमित्रा नही महादेवी !

महादेवी विवाह होने से पहले इसका अभ्यास अवश्य कर ले।

चारुमित्रा हॉ, महादेवी !

महादेवी और चारु ! मै भी आर्यपुत्र से लडना चाहती हूँ। वे यह युद्ध बन्द कर दे। मुझे यह अच्छा नही लगता। कितने वीरो का नित्य रक्त बहता है ! आज जिन वीरो से देश की उन्नति होती, वही व्यर्थ मर रहे है। जो वीर मिट्टी छूकर सोना बनाते, वही आज मिट्टी हो रहे है।

चारुमित्रा सच है, महादेवी !

महादेवी किन्तु कलिग के लोग लडना भी अच्छी तरह से जानते है, नही तो मगध की सेना के सामने कौन टिक सकता ! दो वर्ष से तो यह लडाई चल रही है।

चारुमित्रा अभी बहुत वर्षो तक चलेगी, महादेवी !

महादेवी (**आवेश से**) क्या ? क्या ? चारु ! तू आर्यपुत्र की शक्ति का अपमान करती है ?

चारुमित्रा महादेवी ! क्षमा कीजिये। इसमे सम्राट् की शक्ति का अपमान नही है। मेरे कलिंग के निवासी वीर है। वे माता की तरह अपनी भूमि का आदर करते है। जब तक एक भी वीर है, तब तक तो कलिग की जय का घोष वायु को सहन करना ही होगा।

महादेवी तू विद्रोह की बात करती है, चारु !

चारुमित्रा महादेवी ! मै विद्रोह की बाते नही करती, मैं अपने देश के गौरव की बाते कर रही हूँ।

महादेवी तब तो तू अपने सम्राट् के साथ विश्वासघात भी कर सकती है ?

चारुमित्रा महादेवी ! मैने सम्राट् की सेवा उस समय से की है, जब उनका राज्याभिषेक भी नही हुआ था। आपके चरणो की छाया मे ही बडी हुई हूँ। जब मै सम्राट् की सेवा मे कलिग से आई थी, तब तो युद्ध की बात ही नही थी। आज मेरा देश कलिग सकट मे है, तो महादेवी, मुझे उसके सम्बन्ध मे कुछ कहने की आज्ञा भी नही मिलेगी !

महादेवी चारु ! तुझे पूरी आज्ञा है, किन्तु मै आर्यपुत्र का अपमान सहन नही कर सकती।

चारुमित्रा ससार मे उनका अपमान करने की क्षमता किसी मे नही है, महादेवी ! और मै भी उनकी आजन्म सेविका हूँ।

महादेवी किन्तु जब से कलिंग युद्ध प्रारम्भ हुआ है, तब से मै सम्राज्ञी होकर भी तुझसे डरती हूँ।

चारुमित्रा महादेवी, आप मुझे आत्महत्या की ओर प्रेरित करती है।

महादेवी (**हँसकर**) मैं तुझसे हँसी कर रही थी, चारु ! तू भी कभी हमसे विश्वासघात कर सकती है ? चारु ! मुझे प्यास लग रही है।

चारुमित्रा जो आज्ञा।

[**कोने के पात्र से जल भरकर देती है।**]

महादेवी (**दो घूँट पीकर**) तेरे हाथ के जल-पात्र मे ही मेरे विश्वास की तरलता है, चारु ! तू इस पात्र मे विष डाल सकती थी, किन्तु तुझ पर मेरा विश्वास है। तू कलिग-निवासिनी होकर भी मेरी प्रजा है, जिसने अपने जीवन के प्रभात से ही मगध-सेवा का पुनीत व्रत धारण किया है। यद्यपि आर्यपुत्र का क्रोध कलिग के प्रति बढता ही जा रहा है, फिर भी, चारु, यह युद्ध मुझे नही चाहिए। कितने दिनो से इस शिविर मे रहते हुए जैसे मेरा सुख सपना-सा बनता जा रहा है ! रात्रि मे युद्ध की समाप्ति पर उनके दर्शन कर लेती हूँ, तो ऐसा ज्ञात होता है जैसे कोई वृद्धा युवती बन गई हो। आज कहूँगी कि वे कलिग का युद्ध बन्द कर दे। वीरो को स्वतत्र साँस लेने देना भी तो दया की क्रूरता पर विजय

है । मुझे तो इस विजय पर ही संतोष है ।

चारुमित्रा आप देवी है ।

महादेवी फिर बतला क्या उपाय करूँ, चारु ! आर्यपुत्र तक्षशिला मे रहकर बडे साहसी बन गये है । कहते है, पूज्य पितामह, जिन्होने निकेटर सेल्यूकस की प्रचण्ड सेना का नाश कर दिया था, जिन्होने अलक्षेन्द्र के राज्य की दिशा बदल दी थी, तक्षशिला के ही तो विद्यार्थी थे । पितामह के योग्य पौत्र बनने का आदर्श जो है उनके सामने ।

चारुमित्रा हाँ, महादेवी !

महादेवी अच्छा, चारु ! आज आर्यपुत्र से एक बात पूछूँगी कि आपके पूज्य पितामह ने तो सेल्यूकस पर विजय पाकर उसकी सुन्दरी कन्या पर विजय पाई थी । क्या आपकी विजय मे किसी

चारुमित्रा महादेवी क्षमा करे । कलिग देश वीरो का देश है, कन्याओ का नही ।

महादेवी क्या कलिग-देश मे कन्याएँ होती ही नही ? चारु ! तू तो अपने देश की प्रशसा करते-करते ऊबती नही । महाराज की प्रशसा क्यो नही करती, जिन्होने कलिंग से युद्ध होने पर भी कलिग देश की सेविका को अपने देश से नही निकाला ।

चारुमित्रा महादेवी ! प्रियदर्शी नरेश अशोक सम्राट् है । मेरे यहाँ रहने से उनका क्या बिगडता-बनता है ।

महादेवी आचार्य चाणक्य ने शत्रु के विषय मे क्या कहा है, जानती है ? कहा है, शत्रु कभी छोटा नही होता ।

चारुमित्रा महादेवी ! मै अपने पद से अलग होने की आज्ञा चाहती हूँ ।

महादेवी : (हँसकर) बस, बुरा मान गई । बात-बात पर आज्ञा चाहती है । अरे, तू सेविका होकर भी मेरे वात्सल्य की अधिकारिणी है । अच्छा, देख ! मेरा चित्र और ध्यान से देख ।

चारुमित्रा **(ध्यान से देखते हुए)** महादेवी, आपने तो टूटे हुए वृक्ष बनाये है और उनमे लाल रग भर दिया है ।

महादेवी बतला, इसमे क्या रहस्य है ?

चारुमित्रा मै चित्रकला नही जानती, महादेवी !

महादेवी अरे, यह तो साधारण समझ की बात है । यह चित्र मै आर्यपुत्र को दिखलाना चाहती हूँ । उनसे कहूँगी, 'देखिये, आपने कलिंग के वीरो को तो रक्त से नहला ही दिया है । अब आपकी तलवार इन बेचारे वृक्षो पर भी पडी है और उनकी शाखाओ और टहनियो से रक्त निकल रहा है ।'

चारुमित्रा महादेवी ! आपकी बात की थाह नही ली जा सकती ।

महादेवी चारु !

चारुमित्रा महादेवी !

महादेवी आर्यपुत्र अभी नही आये ?

चारुमित्रा नही महादेवी !

महादेवी देख ! यह गोदावरी का सुसाम्य तट, ये पानी की लहरे जैसे सौदर्य की मालाएँ हो, जो आप से आप गुँथकर बडी होती है और तट पर किसी का हृदय न पाकर टूट जाती है ।

चारुमित्रा हाँ, महादेवी !

महादेवी और ये जो पक्षी उडते चले जा रहे है, जैसे प्रेम की ग्रन्थियाँ है जिन्होने आकाश मे उडना सीख लिया है । अच्छा सुन, यह समस्त वातावरण तेरा नाच देखना चाहता है । नाच सकेगी ?

चारुमित्रा जो आज्ञा, महादेवी !

महादेवी उज्जयिनी मे सीखी हुई तेरी नृत्य-कला आज इस शिविर मे साकार हो । जा, जल्दी पैरो मे सगीत भर ला ।

[चारु जाती है । महादेवी थोडी देर प्रकृति की ओर देखती है फिर अपने चित्र के पास आकर तूलिका उठाती है और उसमे रग भरने लगती है । धीरे-धीरे गाती जाती है]

अली पहचान गया कलि को ।
अपने स्वर से स्वर्ग बनाया, इस सुमनाञ्जलि को ।
मन्द पवन धीरे बहा, उर मे भर अनुराग,
कलित कुज मे केतकी, मौन रही है जाग ।
खिलने का सवाद कौन देता कुसुमावलि को ।
अली पहिचान गया कलि को ।

[चारु नूपुर पहिनकर आती है और महादेवी के सामने खड़ी होती है]

चारुमित्रा आज्ञा है !

महादेवी मेरी, और उस कली की भी, जो तेरे नृत्य के साथ खिलना चाहती है ।

[चारु प्रणाम कर नृत्य करती है । कुछ समय तक नृत्य होता है । महादेवी तन्मय होकर देखती है कभी-कभी बीच मे प्रशंसा करती जाती है । अकस्मात् 'सम्राट् अशोक की जय' का घोष । नृत्य रुक जाता है । महादेवी चारु को देखती है और चारु महादेवी को ।]

[नेपथ्य मे.... .सम्राट् अशोक की जय ! सम्राट् अशोक की जय !!]

[शीघ्रता से एक परिचारिका का प्रवेश]

परिचारिका महादेवी ! सम्राट् शिविर मे लौट रहे है । [प्रस्थान]

चारुमित्रा महादेवी, अब क्या होगा ?

महादेवी (सान्त्वना के स्वरो मे) कुछ नही । तू नूपुर उतार दे ।

चारुमित्रा (सिर हिलाकर) जो आज्ञा !

[बैठकर नूपुर उतारने लगती है। एक पैर का नूपुर उतर जाता है, लेकिन दूसरे पैर का नूपुर उतारने मे उलझ जाता है और प्रयत्न करने पर भी नही उतरता। इतने मे ही जय-घोष के साथ सम्राट् अशोक का प्रवेश। महादेवी और चारु प्रणाम करती हैं। अशोक अभय मुद्रा मे हाथ ऊपर उठाते हैं।]

अशोक विजय, देवी ! आज युद्ध मे फिर विजय ! ओह, तुम्हारी मगलकामनाओ मे कितनी शक्ति है ! विजय, विजय, विजय !

[हाथ उठाते हैं।]

महादेवी आर्यपुत्र की विजय हो !

चारुमित्रा सम्राट् की विजय हो !

अशोक देवि ! शत्रुओ की सख्या वहुत अधिक थी। हाथी और घोडे जैसे दुर्भाग्य की तरह अडे हुए थे, किन्तु तुम्हारी मगलकामना ने मुझे और मेरे वीरो को ऐसी शक्ति दी कि शत्रु सूखे पत्तो की तरह बिखरकर चूर-चूर हो गये। मेरी शक्ति के पीछे, देवि ! तुम्हारी मगलकामना है। चारुमित्रा ! देवी पर पुष्प-वर्षा हो।

[चारुमित्रा आगे बढने के लिए पैर उठाती है कि उसके पैर का नूपुर शब्द कर उठता है।]

अशोक : (चारुमित्रा के पैरो पर दृष्टि गड़ाकर) अरे, यह क्या ? नृत्य ! सग्रामभूमि मे रंगभूमि ! **(प्रश्नसूचक मुद्रा मे)** चारु ?

चारुमित्रा सम्राट् ! क्षमा चाहती हूँ।

अशोक मेरी युद्धभूमि मे केवल भैरवी का नृत्य हो सकता है, चारुमित्रा का नही।

चारुमित्रा सम्राट् .

अशोक और उस भैरवी नृत्य मे तलवारो का सगीत होगा, नूपुरो का नही।

चारुमित्रा सम्राट् .

अशोक आश्चर्य है कि मेरी अगरक्षिका चारुमित्रा आज नर्तकी बनी हुई है ! यह नृत्य किस कूटनीति की भूमिका है ?

चारुमित्रा सम्राट् .

अशोक मेरे युद्ध के उत्साह मे कोमलता भरने वाली चारुमित्रा ! तुझे क्या पुरस्कार चाहिए—रत्नो का हार, मोती की माला ?

चारुमित्रा मुझे दण्ड दीजिये सम्राट् !

अशोक मेरे युद्ध के उत्साह मे कोमलता भरने वाली, चारुमित्रा ! तुझे दण्ड ही मिलेगा। तू इस नीति से मुझे युद्ध करने से रोकना चाहती है ? स्त्री ! कलिंग से उत्पन्न शरीर, कलिंग का ही साथ देगा। विश्वासघातिनी, चारुमित्रा ! **(पुकारकर)** राजुक !

[राजुक का प्रवेश]

अशोक राजुक ! चारुमित्रा जलते हुए अगारो पर नाचना चाहती है। आग तैयार हो।

राजुक जो आज्ञा ! [**प्रणाम कर प्रस्थान**]

अशोक चारुमित्रा ! दूसरे पैर मे भी नूपुर पहन ले। एक पैर की पूरी ध्वनि नही निकलेगी। दूसरा पैर नूपुरो की प्रतीक्षा मे है।

[**चारुमित्रा दूसरे पैर मे भी नूपुर पहनने के लिए झुकती है।**]

महादेवी आर्यपुत्र !

अशोक देवि !

महादेवी आर्यपुत्र ! चारु का दोष नही है।

अशोक देवि ! चारु का दोष नही है, यह कैसी बाते कहती हो ? कलिग के शरीर मे कलिग की आत्मा का मगध के साथ क्या व्यवहार हो सकता है ? चारु जानती है कि मेरे क्रोध मे उसका देश जल रहा है। वह मेरे क्रोध की ज्वाला शान्त करने के लिये अपने सगीत और नृत्य का प्रयोग करना चाहती है। मुझे नही सुना सकती तो तुम्हे सुनाकर तुम्हारे द्वारा मुझमे कोमलता का सचार करना चाहती है। मैं देख रहा हूँ, तुम्हारे स्वभाव को भी उसने दया से भर दिया है।

महादेवी आर्यपुत्र ! दया करना तो स्त्री का स्वाभाविक धर्म है। चारु मुझे क्या दया से भर सकती है ? किन्तु, आर्यपुत्र ! चारु निरपराध है। एकाकी क्षणो को काटने का यह मेरा साधारण उपाय था। मैंने ही चारु को आज्ञा दी थी कि वह नृत्य करे।

अशोक तुमने आज्ञा दी थी ?

महादेवी हाँ, आर्यपुत्र ! युद्ध के भयानक क्षणो मे स्त्री के एकाकी हृदय को कौन-सा सहारा है ? सगीत, नृत्य, चित्रकला, यही तो।

अशोक तो चारु अपनी ओर से नृत्य करने नही आई ?

महादेवी नही, आर्यपुत्र ! उसे क्षमा कीजिए।

अशोक अशोक ने किसी को भी अपराध करने पर क्षमा नही किया, किन्तु इस समय क्षमा करता हूँ। (**चारु की ओर देखकर**) चारु ! तुझे क्षमा करता हूँ। अच्छा हो कि तेरा नृत्य भैरवी नृत्य बनकर मगध की विजय के लिए हो। और यदि ऐसा न कर सके तो फिर यह नृत्य अपने कलिग के कटते हुए वीरो के रुडो और मुडो के लिए रहने दे। (**पुकारकर**) राजुक !

[**राजुक का प्रवेश**]

अशोक आग तैयार हो गई ?

राजुक हाँ, सम्राट् !

अशोक उस आग से उन कायरो को शीतल करो, जो आज युद्ध-भूमि से पीछे हटे है।

राजुक : जो आज्ञा ! **[जाने लगता है।]**

अशोक . और सुनो ! यह मत सुनना कि सचालन-कौशल से सावधानी के साथ पीछे हटे है। युद्ध-भूमि के अतिरिक्त प्रत्येक भूमि वीरो के लिए कलक-भूमि है।

राजुक जो आज्ञा ! **[प्रस्थान]**

अशोक इस शिविर के वातावरण को तेरे नृत्य की ध्वनि नही चाहिए, उसे वीरो का हुकार चाहिये। मेरी अगरक्षिका का कवच नूपुरो मे परिणत नही होगा। अपने हाथो को तलवार दे, पैरो का नूपुर नही, चारु ! इन सगीत-भरे पैरो को विश्राम की आवश्यकता है, जो नृत्य की गति से थक गये है।

[चारु सिर झुकाकर जाती है।]

अशोक देवि ! कलिग से युद्ध करते समय ज्ञात होता था, जैसे पाटलिपुत्र की शक्ति से एक प्रलय उत्पन्न हुआ है, जो कलिग को रक्त के समुद्र में डुबाना चाहता है। तक्षशिला, गान्धार और उज्जयिनी के बडे-बडे वीर मेरी घूमती हुई दृष्टि की दिशा मे ही अपनी तलवार घुमाते थे। सेना की एक-एक टुकडी पानी की लहर की तरह बढती थी और धीरे-धीरे बडी होकर शत्रुओ की तलवार से टकराती थी। वे तलवार भी नही घुमा सकते थे। उस समय मुझे ऐसा ज्ञात होता था कि मेरी ललकार भी तलवार थी, जिसके सामने घूमा हुआ शस्त्र भी लक्ष्य-भ्रष्ट हो जाता था।

महादेवी आर्यपुत्र ! इतना रक्तपात

अशोक मैने अपनी सेना का अर्धव्यूह बनाकर आक्रमण किया था। शत्रु सोचते थे, जैसे सहस्रो धूमकेतु एक विशेष आकार मे कसे हुए मृत्यु का दाह लेकर आ रहे है। न जाने कितने शत्रु हाथियो के पैरो से पिस गये। सैकडो घोडो के पैरो मे उलझकर रक्त से लथपथ हो गये। ज्ञात होता था, रक्त का महानद महानदी से मिलने के लिए जा रहा है।

महादेवी आर्यपुत्र ! इतना भयानक युद्ध !

अशोक : मुझ पर भी एक वीर ने तलवार चलाई। मैने महानाग वासुकि की भाँति अपना सिर बचा लिया। उसकी तलवार वायुमडल मे शून्यचक्र बनकर रह गई। अपने निष्फल हुए आक्रमण के वेग से वह घूम गया। उसके घूमते ही मैंने तलवार की नोक उसके पार्श्व मे भोक दी। उसकी ललकार आह मे बदलकर रक्त मे डूब गई। वह टूटे हुए वृक्ष की तरह भूमि पर गिर पडा।

महादेवी आर्यपुत्र ! आपका युद्ध-कौशल भयानक है।

अशोक और महादेवी ! आज के युद्ध मे कुमारामात्य सुगाम भी कलिंग की कसौटी पर कसी हुई मगध की तलवार लेकर मुझसे युद्ध करने आये। मैने देखा, आकाश मे निकले हुए धूमकेतु की भाँति वे अपने अमगल को ही गति का रूप देकर मेरी तलवार से टकराना चाहते है। उन्होने अपने मगध-सम्राट् होने की घोषणा फिर से की। हम दोनो की तलवारे इतने वेग से लडी कि उनसे निकली हुई

चिनगारियो ने भी तलवारो का रूप ले लिया। मैंने दूसरे ही क्षण देखा कि कुमाराःमात्य सुगाम की तलवार खड-खड हो गयी। उन्होने जैसे ही दूसरी तलवार निकाली, वैसे ही उनका अश्व धराशायी हुआ और वे सैनिकों के समुद्र मे अदृश्य हो गये।

महादेवी क्या आर्य सुगाम युद्ध मे मारे गये ?

अशोक यह तो नही कहा जा सकता, किन्तु वे दुबारा मुझसे युद्ध करने नही आये। फिर मैंने भी अश्व छोड दिया और मे उन्ही के मृतक अश्व की पीठ से पैर टेककर लडता रहा। शत्रुओ के नायक वीरभद्र की तलवार जैसे ही आगे बढने के लिए अर्द्धचक्र बना रही थी, वैसे ही मैंने झुककर कक्ष भाग से कधे पर ऐसा प्रहार किया कि अपने वेग मे, भुजा समेत उडकर उसकी तलवार एक हाथी की पीठ मे घुस गई। हाथी शत्रु पक्ष को कुचलता हुआ भाग खडा हुआ। उसी समय सेना के पैर उखड गये और आज की विजय ने, देवि! हमारे गले मे माला पहना दी।

महादेवी बहुत भयानक युद्ध है, आर्यपुत्र ! अब सहन नही हो सकता।

अशोक देवि! तुम बडी कोमल-हृदया हो। यह युद्ध तुम्हारे लिए नही है। इसीलिए मै चाहता था कि तुम पाटलिपुत्र मे ही रहो। किन्तु तुम्हारा अनुराग मुझे विवश कर सका कि तुम्हे साथ ले आया।

महादेवी आर्यपुत्र! यदि मैं एक अनुरोध और करूँ ?

अशोक क्या ?

महादेवी यह युद्ध रोक दीजिये।

अशोक यह क्या कह रही हो, देवि! युद्ध का रुक जाना पाटलिपुत्र की उन्नति का रुक जाना है। किसी भी साम्राज्य की सीमा तलवार से खीची जाती है और सीमा को स्थायी रखने के लिए उस रेखा मे रक्त का रग भरा जाता है। (**कक्ष मे दृष्टि डालते है। चित्रफलक पर दृष्टि डालकर**) अच्छा, यह तुमने बडा सुन्दर चित्र बनाया है!

महादेवी आर्यपुत्र! क्या इस चित्र का इतना सौभाग्य है कि आपकी प्रशसा का वरदान इसे मिल सकता है ?

अशोक बहुत ही सुन्दर है। यह तो उस कुज का है, जहाँ बैठकर मैंने युद्ध का कार्यक्रम बनाया था।

महादेवी हाँ, आर्यपुत्र! मै भी साथ थी।

अशोक तो ये वृक्ष टूटे हुए क्यो दिखाए गये है ?

महादेवी आर्यपुत्र! युद्ध की गति मे आपकी तलवार शत्रुओ पर पडने के साथ ही इन वृक्षो पर भी पडी है। ये बेचारे भी कट गये है और इनसे रक्त निकल रहा है।

अशोक तो रक्त के स्थान पर लाल रग की क्या आवश्यकता ? सच्चा रक्त भरो

इनमे। वह तो बहुत मिल सकता है। मैने कितने ही रक्त की शारीरिक सीमाएँ नष्ट कर उन्हे पृथ्वी पर वहने की पूर्ण स्वतन्त्रता दी है। वही से रक्त लो।

महादेवी . आर्यपुत्र ! मेरा हृदय काँप रहा है उस युद्ध की भयानकता से। आप क्यो इतने वीरो के रक्त से राज्यश्री को अग्नि का रूप देना चाहते है?

अशोक देवि ! अग्नि मे तपकर ही स्वर्ण पवित्र होता है। आज मेरी तलवार मे शक्ति है। उसका अधिक से अधिक उपयोग होने दो।

महादेवी . जैसी आर्यपुत्र की इच्छा ! किन्तु मुझे बहुत दुःख है उस क्रूरता पर। [सिर झुका लेती हैं।]

अशोक (मानते हुए) तुम दुःखी हो, देवि ! नही, दुःखी होने की क्या बात? तुम तो दया की देवी हो, तुम्हे तो किसी के दुःख मे भी दुःख होने लगता है। मै यथाशक्ति तुम्हारे सद्भावो की रक्षा तो करता हूँ। देखो, देवि ! आज तुम्हारी दया की ढाल ने मेरे दण्ड के कृपाण को कुण्ठित कर दिया .. !

महादेवी चारु निरपराध थी, आर्यपुत्र !

अशोक रणभूमि की दृष्टि से या रंगभूमि की दृष्टि से?

महादेवी आर्यपुत्र ! वह सेविका है, आपके चरणो की छाया मे ही वडी हुई है।

अशोक किन्तु आवश्यकता से अधिक वढने पर उसे काटने-छाँटने की आवश्यकता होगी, देवि ! मै अपने शिविर मे शत्रु-पक्ष के किसी व्यक्ति को अब रहने की आज्ञा नही दे सकता।

महादेवी किन्तु वह शत्रु-पक्ष की कहाँ है, आर्यपुत्र ! वह तो उस समय से आपकी सेविका है, जब आप उज्जयिनी मे कुमारामात्य थे। उस समय तो कलिंग से किसी प्रकार का भी शत्रु-भाव नही था। नृत्य सीखते-सीखते वह आपके अंतःपुर की अंगरक्षिका वनी, उस पर आपका भी कितना अधिक विश्वास था ! उसके एक निरीह कार्य से उसे दण्ड का भागी न बनाइये, आर्यपुत्र ! उस पर कृपा कीजिए।

अशोक किन्तु कृपा की दृष्टि राजनीति की दृष्टि नही होती, देवि ! आज युद्ध से लौटते समय मैने चारु के सम्बन्ध मे विचार किया था।

महादेवी युद्ध से लौटते समय?

अशोक हाँ, युद्ध से लौटते समय कलिंग के कुछ व्यक्ति मुझे प्रणाम कर रहे थे। मुझे उनके प्रणाम मे चारु का प्रणाम दीख पडा। यदि इस समय चारु नृत्य न भी करती तो उसके प्रति मेरा अविश्वास तो होता ही, और किसी न किसी प्रकार से मैं उसे दण्डित करता।

महादेवी किन्तु वह वेचारी ... !

अशोक राजनीति देवी नही है, जो दया से तरल हो जाय। किन्तु आज तुम्हारे कहने से मैने राजनीति को स्त्री का हृदय बना दिया।

महादेवी आर्यपुत्र की कृपा। विश्राम कीजिए।

अशोक देवि, मुझे विश्राम ? पितामह चन्द्रगुप्त ने चौबीस वर्ष के शासन मे कितना विश्राम किया ? तक्षशिला से मगध तक पृथ्वी का प्रत्येक कण उनकी आहट सुनकर काँपता था। बहुत से छोटे-छोटे राज्यो को एक सघ मे गूँथकर उन्होने अपनी राजश्री को विजयमाला पहनाई। सेल्युकस निकेटर से उन्होने गाधार और सीमाप्रान्त लेकर जम्बूद्वीप के मुकुट मे कुछ रत्न और जड दिये थे। मैं उन्ही की सन्तान हूँ, देवि ! विश्राम के लम्बे क्षणो मे राज्य-सीमा सकुचित हो जाती है।

महादेवी ठीक है, आर्यपुत्र ! पर कलिंग युद्ध ने आपको बहुत उत्तेजित कर दिया है।

अशोक कलिंग नरेश अपने को सम्राट् मानता है। वह भी कुमारामात्य सुशाम की भाँति पाटलिपुत्र का आधिपत्य नही मानता। सुमात्रा और जावा मे उसने अपने उपनिवेश स्थापित कर रखे हैं। जलयानो मे विहार करता है और समझता है कि वह जम्बूद्वीप का सम्राट् है। देवि, वह मेरे शासन के मार्ग को एक स्तूप बनकर रोकना चाहता है। मैं आचार्य उपगुप्त के उपदेशो की भाँति उसे भी ठोकर मार देना चाहता हूँ।

महादेवी . आर्यपुत्र ! आचार्य उपगुप्त मे और कलिंग मे समानता नही हो सकती।

अशोक क्यो नही ? आचार्य उपगुप्त बौद्ध धर्म के सबसे बडे आचार्य है, कलिंग विद्रोहियो का सबसे बडा नेता है। मैं बौद्ध धर्म और कलिंग दोनो का नाश करूँगा। आचार्य उपगुप्त ने कुमार सुशाम को सघाराम मे शरण दी थी। मैं ऐसे धर्म का नाश करूँगा, जो विद्रोह को प्रश्रय दे।

महादेवी क्षमा, दया, करुणा, आर्यपुत्र ! आचार्य उपगुप्त कल यहाँ आये थे। उन्होने कलिंग के भीषण रक्तपात को देखकर कहा था कि बुद्धि का अक्षय कोष मनुष्य, थोडी-सी भूमि के लिए, मनुष्यत्व को मिट्टी मे मिला देना चाहता है। कलिंग के सम्बन्ध मे कहा था कि अहकार का फल यही हुआ है और होगा।

अशोक यह व्यग्य मुझ पर किया गया है, देवि !

महादेवी आर्यपुत्र ! उनके कथन मे सत्यता है। क्या अहकार का नाश नही होना चाहिए ?

अशोक अहकार और राज्य-धर्म मे अन्तर है। राज्य-धर्म पाटलिपुत्र का अधिकार है और अहकार कलिंग की वृत्ति है। उसे अपनी सेना का अहकार है। उसके पास साठ सहस्र पदातिक, सात सौ हाथी और एक सहस्र अश्वारोही है। समझता है कि वह इन्द्र का वशज है। मैं अपनी सेना के हाथो उसके अहकार के पौधो को उखाड फेकूँगा, देवि !

महादेवी कितनो का रक्त बहेगा, महाराज ?

अशोक उसमे जम्बूद्वीप को नहलाकर पवित्र करना चाहता हूँ, देवि !

[नेपथ्य मे भयानक तुमुल। किसी स्त्री का क्रन्दन-स्वर, 'अशोक

का नाश हो ! अशोक का सर्वनाश हो !' प्रहरी का स्वर, 'पुष्य ! मार डालो इसे भी']

अशोक : यह कैसा कोलाहल ! अशोक का तिरस्कार करने वाला कृपाण की धार मे डूब जाता है।

महादेवी **(कान बन्द कर क्रन्दन स्वर मे)** नही, आर्यपुत्र ! **(अशोक के वक्षस्थल में छिप जाती है)** नही !

अशोक : **(जोर से आवाज देते हैं, फिर महादेवी की पीठ पर हाथ फेरकर)** शान्त हो ! शान्त हो ! मै अभी देखता हूँ। **(अशोक महादेवी को सँभालकर आसन पर बिठलाता है, शिविर की खिड़की से देखता हुआ)** पुष्य ! इस स्त्री को मेरे शिविर मे भेजो।

[महादेवी अपने हाथो से नेत्र बद किये हुए हैं। अशोक महादेवी के हाथो को आँखो से हटा अपने हाथो मे लेते हैं।]

अशोक देवि ! मैं अभी देखता हूँ, कौन है जो अपने चीत्कार की चिनगारी से मगध के सम्मान मे आग लगाना चाहता है।

महादेवी आर्यपुत्र ! मै आपका अमगल नही सुन सकती। **(आकाश की ओर देखते हुए)** आर्यपुत्र का मगल हो ! आर्यपुत्र का मगल हो ! आर्यपुत्र का मगल हो !

अशोक . कोई स्त्री है, गोद मे एक बच्चे को लिये हुए है।

महादेवी मै पूछूँगी, वह कौन है , क्यो ऐसी अशुभ बात मुँह से निकालती है ?

अशोक अवश्य, तुम्ही पूछो। मै वस्त्र बदलने जाता हूँ। **[प्रस्थान]**

[प्रहरी एक स्त्री को लेकर आता है। महादवी के सकेत से प्रहरी हट जाता है। वह स्त्री लगभग पच्चीस वर्ष की होगी। उसके बाल और वस्त्र अस्त-व्यस्त हैं। वह अपने बच्चे को गोद मे लिए है। उसकी मुद्रा पागल स्त्री की तरह है।]

महादेवी आओ, स्त्री ! तुम कौन हो ?

स्त्री **(विस्फरित नेत्रो से एक बार ही फूटकर)** ओह, रानी ! अशोक का सर्वनाश हो ! अशोक का सर्वनाश हो ! मुझे भी मार डालो ! मुझे मार डालो ! तुम्हारी तलवार दीनो और अनाथो का रक्त पीना चाहती है। उसकी प्यास तभी बुझ सकती है, जब वह कलिंग के छोटे-छोटे शिशुओ का रक्त पीकर सदैव के लिए सन्तुष्ट हो जाय। अपने शरीर का भी सारा रक्त मै उसे चढा दूँगी, जिससे शिशुओ के जीवन की रक्षा हो। यह अशोक ...

महादेवी ठहरो, ठहरो! तुम आर्यपुत्र के सम्बन्ध मे कुछ नही कह सकती। चुप रहो ! तुम क्या चाहती हो ?

स्त्री मै क्या चाहती हूँ ? मेरे बच्चे के खण्ड-खण्ड कर डालो। यह अभी मरा नही है। **(पुत्र की ओर देखकर)** लाल ! अभी तुम मरे नही हो। ये लोग तुम्हारे टुकडे-टुकडे कर डालेगे, तब तुम मरोगे। तब तक कुछ बोलो। बोलो, मेरे लाल !

(अपने बच्चे को हाथो ही मे झकझोरती है) अगर मै जानती कि इस अवस्था मे तुम्हे सैनिको की तलवारो से कटना पडेगा तो मैं कुछ बडे होते ही तुम्हारे हाथो मे तलवार दे देती और कहती, 'लाल ! तुम्हे मगध के क्रूर सम्राट् से युद्ध करना पडेगा। तुम अभी से युद्ध की शिक्षा लो।' तुम भी तो मेरे छोटे राजकुमार हो ! मेरे राजकुमार ! मेरी गोद के राजकुमार ! किन्तु मै तुम्हारे हाथो मे तलवार नही दे सकी, नही दे सकी, मेरे लाल ! और आज सैनिको ने तुम्हे बिना युद्ध के मेरी गोद मे सदैव के लिए सुला दिया। कायर ! नीच ! नारकी !

महादेवी : (जिज्ञासा के स्वरो मे) क्या कह रही हो ?

[अशोक का प्रवेश। वे दूर चुपचाप इस तरह खड़े हो जाते है कि महादेवी के पीछे है और महादेवी की दृष्टि उन पर नही पड़ती।]

स्त्री (अपने बच्चे को देखकर) तेरा रक्त इतना मीठा है, मेरे बच्चे ! राजा तक उसे पीना चाहता है। और अधिक रक्त हो तो अपने नन्हे हृदय को सामने रख दे। ये सब मिलकर पी ले।

महादेवी क्या तुम्हारा बच्चा मर गया है ? कैसे ?

स्त्री अशोक राक्षस ले गया मेरे बच्चे को। राज्य नही चाहता था मेरा लाल ! किन्तु मेरे लाल को अशोक ले गया ! इसे ...

अशोक (आगे बढकर) यह क्या कह रही हो तुम ? ठीक तरह से बतलाओ। तुम्हारा न्याय होगा। यह बच्चा कैसे मरा ?

स्त्री मुझे न्याय नही चाहिये, नही चाहिये। पाटलिपुत्र से न्याय उठ गया। इसके पिता को सैनिको ने घेरकर मारा और जब मै इसे बचाने लगी तो इसके फूल से हृदय मे भाला घुसेड दिया उन राक्षसो ने। मेरे बच्चे को राज्य नही चाहिये था। मेरा छोटा राजा तुम्हारा राज्य नही चाहता था। तब भी इसे . .तब भी इसे...

अशोक ठहरो, मैं उन दुष्टो को दण्ड दूँगा। वीरो के लिए उनका भाला है, शिशुओ के लिए नही।

महादेवी आर्यपुत्र ! न्याय होना चाहिये बेचारी स्त्री का।

अशोक होगा और अवश्य होगा।

स्त्री मै अब न्याय लेकर क्या करूँगी और न्याय भी क्या मिलेगा। जिस राजा का रक्त शिशुओ के रक्त से पुष्ट होता है, उससे न्याय मिलेगा ? कैसा न्याय ! इसके पिता नही रहे, यह भी नही रहा। अब अपने किस सुख के लिए मै न्याय के बन्दनवार सजाऊँगी ? जो बन्दनवार मेरे लाल के रक्त से रँगा हुआ है, उससे कौन-सा मगल सजाऊँगी ? मुझे नही चाहिए, सम्राट् ! मुझे कुछ नही चाहिए। तुमने क्या सोचकर मेरे लाल को चन्दन की चिता पर चढा दिया। वह तो धूल मे खेलता हुआ ही मुझे अच्छा लगता था। मेरे लाल ! जब तुम धूल मे खेलकर

आते थे और अपने हाथो से मेरा आँचल मैला कर देते थे तो मै उन मैले वस्त्रो मे भी अपने को राजमाता समझती थी। तुम अब नही खेलोगे तुम्हे तो अब चन्दन की चिता पर चढना है। जाओ, मेरे लाल! अब आग की लपटो से खेलना। देखना कि उन लपटो मे अधिक ज्वाला है या मेरे हृदय मे! मेरे हृदय मे, मेरे लाल! हृदय मे!

अशोक (**ध्यान से शिशु की ओर देखते हुए**) यह रक्त! इतना अधिक रक्त!

स्त्री लाओ, मैं तुम्हे राजतिलक कर दूँ। अपने बच्चे के रक्त का तिलक लगाकर (**चिल्लाकर**) सम्राट् अशोक. ....! चक्रवर्ती अशोक! [**भयानक अट्टहास**]

अशोक मै अभी न्याय करूँगा। (**पुकारते हुए**) पुष्य.. ..!

[**प्रहरी का प्रवेश**]

अशोक : इस स्त्री को विश्राम-शिविर मे ले जाकर अपराधियो की पहचान कराओ, मै अभी आता हूँ। जाओ! (**जाने को उद्यत होता है**) और उन अपराधियो को बन्दी कर मेरे सामने उपस्थित करना। समझे! मै इसका न्याय करूँगा।

स्त्री यदि न्याय कर सकते हो, तो यह न्याय करो कि मेरा शिशु जी उठे। जिला सकते हो उसे? अपने शरीर का रक्त देकर इसके रक्त की कमी पूरी कर सकते हो, मगध के सम्राट्? पाटलिपुत्र के न्यायकर्त्ता! मेरे पुत्र के यदि प्राण ले सकते हो तो क्या लौटा नही सकते? यदि नही, तो मेरे भी प्राण ले लो। तुम्हारा यही न्याय होगा। अत्याचारी! क्रूर! अशोक! शिशुओ और स्त्रियो के रक्त से अपने न्याय को बडा समझते हो? मेरे लाल को मुझसे छीनकर

अशोक सावधान नारी! युद्ध मे मरे हुए व्यक्तियो पर आँसू नही चढाये जाते। पुष्य! ले जाओ इसे।

प्रहरी जो आज्ञा। (**स्त्री से**) चलो। [**पुष्य स्त्री को बलपूर्वक ले जाता है।**]

स्त्री (**जाते हुए**) अपने पुत्र के रक्त को देखकर यदि तुम आँसू रोक सके तब समझूँगी कि तुम मनुष्य नही, राक्षस हो, राक्षस, जिसने मेरे लाल का रक्त पी लिया! मेरा बच्चा! मेरा लाल!

[**धीरे-धीरे शब्द क्षीण हो जाता है। कुछ देर तक स्तब्धता रहती है। अशोक विचारमग्न है।**]

महादेवी आर्यपुत्र! मूर्च्छा-सी आ रही है।

अशोक देवि! विश्राम करो। मै अभी न्याय करूँगा।

महादेवी आर्यपुत्र! यह रक्तपात अब बन्द हो।

अशोक एक छोटी-सी घटना राज्य की बढती हुई बेल को काट दे? यह घटना तुम्हारा चित्र नही है, देवि! जिसमे तूलिका के एक हलके झटके से राज्य की बेल कट जाय। देवि! युद्ध मे तो यह सब होता ही है।

महादेवी मै क्या करूँ, आर्यपुत्र!

अशोक विश्राम करो। मै विश्राम शिविरो मे अभी जाता हूँ। सेना के विश्राम की

क्या व्यवस्था है, घायलो की क्या सुश्रुषा हो रही है, यह मुझे देखना है। (पुकारकर) राजुक !

[राजुक का प्रवेश]

अशोक महामात्रो से कहो कि अश्व तैयार हो। उन्हे मेरे साथ नैश-निरीक्षण के लिए चलना होगा।

राजुक जो आज्ञा, सम्राट् ! [प्रस्थान]

अशोक : देवि ! पिता-श्री सम्राट् बिन्दुसार ने राज्य की सीमा नही बढाई। वे कदाचित् यह उत्तरदायित्व मेरे लिए छोड गये है। सम्राट् चन्द्रगुप्त के परिश्रम की परम्परा कुछ वर्षो तक तो चले।

महादेवी कब तक, आर्यपुत्र ?

अशोक : जब तक कि पाटलिपुत्र का प्रवासी नागरिक, कलिंग के जनपद मे निवासी होकर न रहने लगे।

[राजुक का प्रवेश]

राजुक सम्राट् ! महामात्र और अश्व तैयार है।

अशोक अच्छा, जाओ ! मै अभी आता हूँ। (**महादेवी से**) देवि ! आज उस स्त्री का न्याय भी करूँगा और निरीक्षण भी। सैनिको के पुरस्कार और दण्ड की व्यवस्था एक साथ ही होगी। देवि ! मगलकामना करो कि मगध चिर-जीवी हो !

महादेवी आर्यपुत्र ! मेरे दु ख मे भी मगध चिरजीवी हो।

[**अशोक का प्रस्थान**]

महादेवी वायु के प्रवाह की भाँति सदैव अस्थिर ! अभी आये और अभी गये ! मै क्या करूँ ? (**चित्र की ओर दृष्टि डालती है**) यह चित्र ! (**क्रोध से फाड़-कर फेंक देती है। पुकारकर**) स्वयप्रभा !

स्वयप्रभा महादेवी, यह क्या ? यह चित्र किसने फाड दिया ? ओह इतना सुन्दर चित्र !

महादेवी मैने .मैने इसे नष्ट कर दिया।

स्वयप्रभा मैं इसे जोड सकती हूँ।

महादेवी नही। इसे उठाकर बाहर फेक दे।

[**स्वयंप्रभा फटे हुए चित्र के टुकड़े एकत्र करती है।**]

महादेवी स्वयप्रभा ! आर्यपुत्र गये ?

स्वयप्रभा हाँ, महादेवी ! पाँच महामात्रो के साथ अभी-अभी गये है।

महादेवी चले गये ! तू क्या कर रही थी ?

स्वयप्रभा महादेवी ! आपके सुन्दर गीतो की स्वर-लिपि लिख रही थी।

महादेवी उनको नष्ट कर दे। आर्यपुत्र यह सब कुछ नही चाहते।

स्वयप्रभा . महादेवी ! बडे सुन्दर गीत है।

महादेवी : इस विषय मे बात मत कर, जा । [**स्वयंप्रभा जाना चाहती है ।**]

महादेवी : चारु कहाँ है ?

स्वयंप्रभा महादेवी ! अभी तो यही थी । कदाचित् शिविर-कक्ष मे हो ।

महादेवी रो रही थी ?

स्वयंप्रभा महादेवी ! उदास तो बहुत थी । ज्ञात होता है कि उसके आँसू सूख गये है ; किन्तु हृदय रो रहा है ।

महादेवी : तूने उससे बाते की ?

स्वयंप्रभा महादेवी ! आपके गीतो की स्वर-लिपि पूछी । वह कुछ भी नही कह सकी ।

महादेवी : बेचारी चारु ! आज चारु पर महाराज बहुत अप्रसन्न हुए ।

स्वयंप्रभा : महादेवी ! उससे कभी कोई अपराध तो हुआ नही ।

महादेवी कहते थे कि वह कलिंग की है, शत्रु-पक्ष की ।

स्वयंप्रभा महादेवी ! आज तक महाराज की सेवा उसने जितनी श्रद्धा और भक्ति से की है उतनी पाटलिपुत्र की किसी सेविका ने नही की । वह तो सम्राट् के अत पुर की अगरक्षिका है ।

महादेवी : हाँ, मै भी यही समझती हूँ ।

स्वयप्रभा और मै तो उसे अच्छी तरह जानती हूँ, महादेवी ! वह उज्जयिनी से मेरी अतरग-सखी है । सम्राट् की इच्छा ही उसके कार्य का नाम है । वह कैसे विश्वासघातिनी हो सकती है ?

महादेवी कहते थे, राजनीति की दृष्टि दया की दृष्टि नही है ।

स्वयंप्रभा महादेवी ! राजनीति भी कोई राजनीति है, यदि उससे सच्ची सेवा और सच्चे प्रेम मे सन्देह उत्पन्न हो जाय ?

महादेवी यही सन्देह तो कदाचित् उनके जीवन की सफलता है । उन्होने शत्रु की छोटी से छोटी अभिसन्धि को अपनी शक्ति से छिन्न-भिन्न कर दिया है । आज मेरी प्रार्थना पर ही उन्होने चारु को क्षमा किया ।

स्वयप्रभा : महादेवी ! आपकी करुणा ने सम्राट् की शक्ति के साथ रहकर राज्य को सतुलित किया है ।

महादेवी स्वयप्रभा आज मेरी करुणा सीमा तक पहुँच गई ।

स्वयप्रभा कैसे, महादेवी ?

महादेवी एक स्त्री के छोटे से बच्चे को सैनिको ने मार डाला ।

स्वयप्रभा : हाँ, महादेवी ! मैने भी सुना ।

महादेवी आर्यपुत्र न्याय करने गये है । देखे, क्या न्याय करते है । मै तो आज बहुत अशान्त हूँ ।

स्वयप्रभा महादेवी, विश्राम कीजिये. .

[नेपथ्य मे .. बुद्धं शरण गच्छामि,
धम्म शरणं गच्छामि,
संघ शरण गच्छामि ।]

स्वयंप्रभा : आचार्य उपगुप्त का कठ-स्वर है, महादेवी !

महादेवी : (स्वस्थ होकर) जाकर उन्हे यहाँ ले आ । मैं बहुत विह्वल हो रही हूँ ।

स्वयप्रभा जो आज्ञा, महादेवी ! [स्वयंप्रभा जाती है ।]

महादेवी : (अपने आप मद कठ स्वर से) महात्मा उपगुप्त ..

[सम्हलकर उठती है और स्वय आसन ठीक करती है । प्रतीक्षा-दृष्टि से द्वार की ओर देखती है । स्वयप्रभा के साथ महास्थविर उपगुप्त का प्रवेश । महास्थविर उपगुप्त बौद्धभिक्ष के वेश मे है । पीत वस्त्र धारण किए हुए हाथ मे भिक्षा-पात्र]

महादेवी प्रणाम करती हूँ, भते !

उपगुप्त (अभय हस्त उठाकर) सुखी रहो, देवि ! क्या सम्राट् नही है ?

महादेवी भते, वीर पुरुष घर पर नही रहते । रणक्षेत्र ही उनका घर है ।

उपगुप्त · देवि ! रणक्षेत्र हृदय को शान्ति नही दे सकता । तथागत ने कहा है—अहकार और एषणा का नाश करो । यह युद्ध अधिकार-लिप्सा है, इसका अत नही है, देवि !

महादेवी भते ! आपका उपदेश आर्यपुत्र के कानो तक पहुँचा ?

उपगुप्त · देवि ! सम्राट् नीति-कुशल है । मेरी बाते सुनते है । मुस्कराकर कहते है—'आप थक गये होगे, भते ! विश्राम-गृह आपकी प्रतीक्षा कर रहा है ।'

महादेवी भते ! यह युद्ध वद होना चाहिये । मै इस अत्याचार को सहन नही कर सकती ।

उपगुप्त देवि ! इस अत्याचार को कौन सहन कर सकता है ? एक लक्ष वीर तो रणक्षेत्र मे हत हुए । तीन लक्ष आहत हुए है जो एक लक्ष के पथ का अनुसरण करना चाहते है । देवि ! रक्त की नदियाँ वह निकली है जो महानदी की समानता करने को अग्रसर है । कलिग राज्य के घर फूल की पँखुडियो की तरह गिर रहे है । देवि ! तुम कुछ नही कर सकती ?

महादेवी भते ! आज मै सम्राज्ञी न होकर एक साधारण स्त्री होती तो किसी प्रकार आत्म-बलिदान कर सम्राट् के मन की दिशा बदल देती । पत्नी होकर पति के मार्ग की वाधिका बनने का साहस मुझमे नही होता । राजवश की मर्यादा कैसे नष्ट करूँ ? भते ! मै सम्राज्ञी होकर साधारण स्त्री भी नही रही ।

उपगुप्त : तो कहता हूँ, देवि ! शात हो । जब तक मनुष्य आर्य सत्य से परिचित नही होता, उसे दु ख उठाना ही पडता है । तथागत ने कहा, 'भिक्खुओ ! मै सब बधनो से, लौकिक और अलौकिक से मुक्त हो गया । अनेक के लाभ के लिए विचरण करो, अनेक के हित के लिए विचरण करो, ससार के प्रति करुणा

के लिए विचरण करो, देवताओ और मनुष्यो के कल्याण के लिए विचरण करो ।' देवि ! मुझे विश्वास है, सम्राट् अशोक इस धर्म-शिक्षा को मानकर ससार का कल्याण करेगे ।

महादेवी भते ! मुझे तो विश्वास नही होता ।

उपगुप्त समय की प्रतीक्षा करो । महाराज मे परिवर्तन होगा । जब किसी व्यक्ति मे शक्ति की क्षमता होती है तो बुरे मार्ग से अच्छे मार्ग पर और अच्छे मार्ग से बुरे मार्ग पर जाने मे विलम्ब नही लगता । महाराज मे शक्ति की क्षमता है और वे बुरे मार्ग पर है । किसी भयानक भावना से उनके हृदय का दिशा-परिवर्तन सभव है । वे विजय के आकाक्षी है, विजय प्राप्त करे , किन्तु हिंसा से नही, अहिंसा से । वे शासन करना चाहते है, करे, किन्तु क्रोध से नही, करुणा से । विनाश करे, किन्तु जाति का नही, अपनी तृष्णा का । वे ज्ञान-प्राप्ति मे प्रयत्नशील हो, राज्य-प्राप्ति मे नही । ज्ञान अमर है, राज्य क्षण-भगुर है ।

महादेवी महाभिक्षु ! आपका उपदेश सुनकर हृदय को शाति मिलती है ।

उपगुप्त : शाति लाभ करो, देवि ! यही पथ निर्वाण का है । अच्छा, देवि ! अब मैं जाऊँगा । **[उठ खड़े होते है ।]**

महादेवी : भते ! आशीर्वाद दीजिये कि राज्य मे शाति हो ।

उपगुप्त ऐसा ही हो !

महादेवी भते ! भिक्षा स्वीकार कीजिए । मै अपने हाथ से लाऊँगी ।

[महादेवी बाहर जाती है ।]

स्वयंप्रभा भते ! आपसे एक प्रार्थना करना चाहती हूँ !

उपगुप्त कैसी ?

स्वयप्रभा भते ! आप चारु को तो जानते है ?

उपगुप्त हॉ, हॉ । सम्राट् की सेवा मे सतत रहने वाली !

स्वयंप्रभा · आज वह बहुत दु खी है ।

उपगुप्त क्यो ?

स्वयंप्रभा सम्राट् का उस पर से विश्वास उठ गया है ।

उपगुप्त : इसलिए कि वह कलिंग-बालिका है ?

स्वयप्रभा हॉ !

उपगुप्त तो उसके लिए उचित तो यही है कि वह महाराज की सेवा और भी सलग्नता के साथ करे । सदेह को सेवा से नष्ट कर दे । वह इस समय कहॉ होगी ?

स्वयंप्रभा सम्राट् के बाहरी शिविर मे ।

उपगुप्त अच्छा, मै उससे मिलता जाऊँगा । उसे सतोष और शाति देकर फिर मैं सघाराम जाऊँगा ।

स्वयंप्रभा भते ! बडी कृपा होगी आपकी ।

उपगुप्त : यह तो तथागत की आज्ञा है ।

[महादेवी भिक्षा लेकर आती है ।]

महादेवी मुझे अपने हाथो से आपकी सेवा मे मधुकरी लाने मे विशेष हर्ष होता है, भते !

उपगुप्त तुम सुखी रहो, देवि !

[महादेवी उपगुप्त को मधुकरी देती है ।]

उपगुप्त अच्छा, अब जाऊँगा ।

महादेवी · भते, प्रणाम !

उपगुप्त · सुखी रहो ।

महादेवी · स्वय ! महाभिक्षु को शिविर-द्वार तक पहुँचा दो ।

स्वयप्रभा जो आज्ञा । **[स्वयप्रभा का उपगुप्त के साथ प्रस्थान]**

महादेवी : (सोचते हुए) महादेवी ! तेरी दशा एक कीडे की तरह है, जो ऐसी लकडी मे रहता है जिसके दोनो ओर आग लग रही है । तू कहाँ रहेगी ?

[स्वयप्रभा का प्रवेश]

स्वयप्रभा महादेवी ! भते जाते समय आपके लिए स्वस्ति-वचन कह गये है ।

महादेवी तथागत को प्रणाम ! स्वयप्रभा ! या तो मै सघाराम चली जाऊँगी या वन-वासिनी हो जाऊँगी ।

स्वयप्रभा महादेवी ! आप शान्त हो ।

महादेवी नही, स्वयप्रभा ! अब मुझे इस राज्यश्री से घृणा हो रही है । उसके सजाने के लिए कितने मनुष्यो की बलि देनी पड रही है । रात-दिन युद्ध की बाते सुनते-सुनते जैसे श्रवण-शक्ति विद्रोह कर रही है । अब मै और कुछ सुनना नही चाहती । देख, इतनी अच्छी वनश्री है । यहाँ के पेड और पर्वत कैसे सुख मे दीख पड रहे है ! ये तो किसी से लडने नही जाते, किसी का रक्त नही बहाते, किन्तु इन पर हरियाली छाई रहती है, फूल खिलते रहते हैं, निर्झर इनके चरणो को धोते रहते है । इन्हे किस बात की कमी है । यह मनुष्य ही न जाने किस सुख के लिए दूसरे का सुख नष्ट करने मे जुटा रहता है, रक्त की नदियाँ बहाता है ।

स्वयप्रभा महादेवी ! जीवन का सत्य यही है ।

महादेवी · और स्वयप्रभा ! अगर मैं स्त्री न होकर इसी पास के पेड की एक कली होती, तो आनन्द के साथ वसत के किसी प्रात काल मे खिलकर सारे ससार को एक बार हँसती हुई आँखो से देख लेती और सध्या होने पर सूर्य के पीछे-पीछे मैं चली जाती । स्त्री होकर और सम्राज्ञी होकर मैं सुखी नही हूँ, स्वयप्रभा ! जीवन के सत्य से बहुत दूर जो जा पडी हूँ ।

स्वयप्रभा महादेवी ! आपका हृदय शान्त हो ।

महादेवी स्वयप्रभा ! कैसे शान्त हो ? शान्ति का उपाय करने के बदले मैं अशान्ति की लहरो मे बही जा रही हूँ। पास मे कोई कूल-किनारा नही है। ज्ञात होता है, युद्ध की समाप्ति होते-होते मेरा जीवन भी समाप्त हो जायगा।

स्वयप्रभा महादेवी ! दु खी न हो। ऐसी बाते न करे।

महादेवी . मै आर्यपुत्र के सामने बहुत साहस कर कुछ बाते कहना चाहती हूँ। या तो मै कह नही सकती या उनकी दृष्टि मुझे कहने नही देती। साहस कर दो-एक शब्दो मे यदि कुछ कहती भी हूँ, तो आर्यपुत्र की वीरता की लहर मे मेरे शब्द बुद्बुद् की भाँति बह जाते है।

स्वयंप्रभा महादेवी ! आप जो कुछ भी कह सकती है, सम्राट् के सामने उतना कहने की शक्ति ससार के किसी व्यक्ति मे नही है।

महादेवी किन्तु उसका परिणाम कुछ नही, स्वयप्रभा ! चारु को यहाँ आने की सूचना देगी ?

[नेपथ्य मे 'सम्राट् अशोक की जय-जय !']

महादेवी स्वयप्रभा ! रहने दे। किसी को मत बुला। आर्यपुत्र आ रहे है।

[चिंतित मुद्रा मे अशोक का प्रवेश। महादेवी प्रणाम करती है। स्वयप्रभा अधिक झुककर प्रणाम करती है।]

अशोक देवि ! न्याय नही हो सका।

महादेवी · आर्यपुत्र ! उस स्त्री का न्याय ?

अशोक : हाँ, देवि ! वह स्त्री उसी शिविर मे आत्म-हत्या करके मर गई।

महादेवी मर गई ? **(करुण स्वर मे)** आह, बेचारी स्त्री !

अशोक मैने पुण्य को आज्ञा दी थी कि वह उस स्त्री को विश्राम-शिविर मे ले जाकर खडी कर दे। शिविर का प्रत्येक सैनिक उसके सामने आये और वह स्त्री उस सैनिक को पहचाने, जिसने उसके शिशु की छाती मे भाला घुसेड दिया था। मुझे ज्ञात हुआ कि १२३ सैनिक घरो मे घुसे थे। उन्ही १२३ सैनिको के भाग्य का निर्णय था, किन्तु उस स्त्री ने १७ सैनिको के आने पर एक बार अपने बच्चे को चूमा, हृदय से चिपटा लिया और अठारहवे सैनिक की कमर से छुरी निकालकर स्वय अपने हृदय मे भोक ली। पुण्य उसे रोक नही सका और वह रक्त की नदी मे तडपने लगी। देवि ! उसने मेरे न्याय पर विश्वास नही किया। उसने मेरी राज्यसत्ता से बढकर अपने बच्चे को समझा !

महादेवी आर्यपुत्र ! माता का हृदय ससार के किसी वैभव से नही तुल सकता। वह सबसे बडा है।

अशोक किन्तु माता के हृदय मे विशालता भी तो होती है।

महादेवी पहले वह अपने बच्चे के लिए होती है, आर्यपुत्र ! आप अनुमान कर लीजिए कि इस युद्ध मे जितने वीरो की मृत्यु हुई है, उनकी माताओ के हृदय की क्या दशा होगी !

अशोक मै देख रहा हूँ, देवि ! आज एक शिशु की जननी ने मेरे सारे साम्राज्य को तुच्छ सिद्ध कर दिया।

महादेवी आर्यपुत्र जम्बूद्वीप के सबसे बडे वीर है।

अशोक : देवि ! आज विश्राम-शिविर मे जाने पर ज्ञात हुआ कि एक लक्ष से अधिक सैनिक अभी तक युद्ध मे मारे जा चुके हैं, जिनमे वहुत अधिक सख्या कलिंग के सैनिको की है। तीन लक्ष सैनिक आहत हुए हैं। उनकी माताओ के हृदय की क्या अवस्था होगी !

महादेवी **(आश्चर्य और दु ख के स्वर मे)** आर्यपुत्र ! चार लक्ष वीर इस सग्राम की वलि हुए हैं।

अशोक जव कलिग-नरेश को ज्ञात हुआ कि चार लाख वीर सग्राम की बलि हुए हैं, तव उसने यह सधि-पत्र भेजा है। **(सधि-पत्र खोलते हुए)** आज पाटलिपुत्र की विजय हुई। किन्तु देवि ! उस स्त्री की आत्महत्या ने मेरा ध्यान सग्राम मे मरे हुए वीरो की माताओ की ओर आकर्षित कर दिया है और मेरी विजय मे जैसे उल्लास के वदले अभिशाप तडप रहा है।

[वाहर कोलाहल होता है। "चारु", "चारु", "क्या हुआ ?", "अभी प्राण शेष हे ?", "कहाँ चोट लगी है ?", "यह कैसे हुआ ?", "शान्त ! शान्त !" की ध्वनि आती है।]

अशोक **(चौंककर)** यह कैसा शब्द ! **(पुकारकर)** राजुक !

[राजुक का प्रवेश]

राजुक सम्राट् ! चारुमित्रा का मूर्च्छित शरीर वाहर है।

अशोक **(पुन. चौंककर)** चारुमित्रा का मूर्च्छित शरीर ?

महादेवी आह ! चारु ! **[सिर झुकाकर बैठ जाती हे।]**

राजुक हाँ, उन्हे तलवार का गहरा घाव लगा है। आचार्य उपगुप्त उनके साथ है।

अशोक : शीघ्र भीतर लाओ।

[चारुमित्रा का शरीर लेकर दो प्रहरी आते हे। साथ मे उपगुप्त भी हे।]

अशोक महाभिक्षु को अशोक का प्रणाम ! भते ! यह क्या ? **(प्रहरियो से)** यह शरीर नीचे रख दो। ओह, चारुमित्रा ! **[प्रहरी शरीर रख देते हे।]**

महादेवी : ओह ! मेरी चारु ! मेरी चारु ! !

उपगुप्त देवि, शान्त हो। सम्राट् ! यह चारुमित्रा की स्वामिभक्ति का प्रमाण हे।

अशोक स्वामिभक्ति ! कैसी स्वामिभक्ति ? अभी जीवित है चारु ?

उपगुप्त महाराज ! अभी जीवित तो है, पर वह अचेतावस्था मे है।

महादेवी · भते ! क्या हुआ ? क्या हुआ ?

उपगुप्त देवि ! शान्त हो। चारुमित्रा ने आज ससार के सामने यह घोषित कर दिया कि एक नारी मे कितनी शक्ति है, कितनी क्षमता है !

अशोक : किस प्रकार, भते ?

उपगुप्त : मैने सुना था, आपने चारुमित्रा पर अविश्वास किया था ?

अशोक हाँ, वह कलिग की अधिवासिनी थी। अविश्वास होना स्वाभाविक था।

उपगुप्त किन्तु, सम्राट् ! उसने बाल्यावस्था से आपकी सेवा की थी इसलिए उसमे सेवा के सस्कार प्रकट थे और देश-भक्ति के सस्कार प्रच्छन्न। और इन्ही प्रकट सस्कारो ने प्रच्छन्न भावनाओ को धूमिल किया है और आज उसी सेवा से उसने कलिग को अमर बना दिया।

अशोक . मैं उत्सुक हूँ, भते ! चारु के सम्बन्ध मे सुनने के लिए।

उपगुप्त सम्राट् ! जम्बूद्वीप जानता है कि आपने रक्त की नदी बहाकर कलिंग-युद्ध मे कितने वीरो को रणक्षेत्र मे सुला दिया है। आपने रक्त की नदी से कलिंग की भूमि को लाल कर दिया है। और अब तो आपकी विजय निश्चित है।

अशोक : मैंने विजय प्राप्त कर ली, महाभिक्षु ! यह सधि-पत्र है।

उपगुप्त · सम्राट् ! इस सधि-पत्र से अधिक मूल्यवान चारु का बलिदान है।

अशोक (आश्चर्य से) बलिदान !

महादेवी मेरी चारु ने अपना बलिदान कर दिया ?

उपगुप्त हाँ, देवि ! सम्राट् के अविश्वास से उसे हार्दिक दु ख हुआ था। आज वह सम्राट् के बाहरी शिविर मे सम्राट् से आज्ञा लेकर चली जाती और महानदी की लहरो मे विश्राम करती, किन्तु उसके पूर्व ही उसे विश्राम करने का अवसर मिल गया।

अशोक . किस प्रकार ? शीघ्र बतलाइये।

उपगुप्त . सम्राट् ! चारुमित्रा आपके बाहरी शिविर मे आपके लौटने की प्रतीक्षा कर रही थी; किन्तु सम्भवत आपके लौटने मे देर हुई।

अशोक : हाँ ! आज मैं स्कन्धावार के निरीक्षण के लिये चला गया था। अभी तक मैं अपने बाहरी शिविर मे शयन के लिये नही पहुँचा।

उपगुप्त · सम्राट् ! उस शिविर मे आप पर आक्रमण करने के लिए कलिंग के कुछ सैनिक छिपे हुए थे। वे सध्या से ही मगध-सैनिक के वस्त्र मे शिविर मे घूम रहे थे। चारुमित्रा को उन पर सन्देह हुआ। उसने बातें कर यह जान लिया कि वे कलिंग के सैनिक है।

अशोक : (आश्चर्य से) फिर ?

उपगुप्त · सम्राट् ! देवी चारुमित्रा ने उन्हे धिक्कारते हुए कहा, 'कायरो ! तुम लोग मेरे देश कलिग के नाम को कलकित करने वाले हो ! यदि सम्राट् अशोक को मारना है, तो युद्ध मे तलवार लेकर क्यो नही जाते ? यहाँ चोरो की तरह घुसकर एक वीर पुरुष से छल करते हुए तुम्हे लज्जा नही आती ?'

अशोक चारुमित्रा ! तुम धन्य हो ! तुम देवी हो !

उपगुप्त सम्राट् ! उन सैनिको ने चारुमित्रा को लालच दिया, कलिंग की विजय

का स्वप्न दिखलाया; किन्तु चारुमित्रा ने कहा, 'मैं अपने स्वामी से विश्वासघात नही कर सकती ।'

अशोक चारु ! तू अमर हो !

उपगुप्त सम्राट् ! चारु निश्चय ही अमर होगी । उसने उन सैनिको को हट जाने के लिए ललकारा । जब वे नही हटे तो कक्ष मे टँगी हुई आपकी तलवार लेकर उसने उन सैनिको पर आक्रमण कर दिया ।

महादेवी धन्य, चारु !

उपगुप्त हाँ, देवि ! दो सैनिक तो घायल होकर भाग गये , किन्तु एक सैनिक की तलवार चारु के कधे पर लगी और वह गिर पडी । उसी समय मैं पहुँचा । वह कायर वहाँ से भागकर पास की झाडी मे छिप गया । देवी चारु ने अचेत होने से पहले सारी कथा मुझे टूटे-फूटे शब्दो मे सुनाई थी ।

अशोक धन्य है, चारु ! आज तूने अपने देश कलिंग को अमर कर दिया । भते ! इसी समय किसी योग्य चिकित्सक को बुलाकर चारु के जीवन की रक्षा करनी होगी । **(पुकारकर)** राजुक !

[राजुक का प्रवेश]

अशोक महामात्रो को सूचना दो कि वे देवी चारुमित्रा की रक्षा के लिए योग्य चिकित्सको की शीघ्र व्यवस्था करे !

राजुक जो आज्ञा ! **[प्रस्थान]**

महादेवी आर्यपुत्र ! मेरी चारु. मेरी चारु की चिकित्सा शीघ्र ही होगी ।

अशोक महादेवी ! अधीर न हो । चारु ने जो कार्य किया है, वह नारी-जाति के इतिहास मे स्वर्णाक्षरो से लिखा जायगा । और सुनो, देवी ! आज से अशोक ने ..अत्याचारी अशोक ने युद्ध को सदैव के लिए छोड दिया । **[तलवार भूमि पर फेंक देते है ।]**

महादेवी **(प्रसन्नता से)** युद्ध छोड दिया ! युद्ध छोड दिया ! कितने महान् हैं आप ! धन्य है आप ! मैं आपको प्रणाम करती हूँ । **(घुटने टेककर प्रणाम)** युद्ध छोड दिया छोड दिया ! आर्यपुत्र की जय !

सब : सम्राट् अशोक की जय !

अशोक महाभिक्षु ! आज से मै हिंसा किसी भी रूप मे न करूँगा और देखूँगा कि किसी मनुष्य का रक्त इस पृथ्वी पर न पडे । प्रत्येक स्थान पर, सिंहासन पर, अन्त पुर मे, विहार मे, मै प्रजा की सेवा करूँगा । आज से मेरा महान् कर्त्तव्य होगा कि मै सब जीवो की रक्षा का अधिक से अधिक प्रबन्ध करूँ ।

उपगुप्त देवानाम्प्रिय प्रियदर्शी सम्राट् अशोक का कल्याण हो !

अशोक मेरे आदेशो को शिलालेखो के रूप मे लिखवाकर समस्त जम्बूद्वीप मे प्रचार कर दो कि अशोक आज से उनकी रक्षा करने वाला उनका बन्धु है ।

चारुमित्रा । **(मूर्च्छा दूर होने पर)** सम्राट् अशोक की जय !

महादेवी ओह, चारु ! चारु तू अच्छी है ?

अशोक · चारुमित्रा की जय ! चारु !

चारुमित्रा · सम्राट् ! क्षमा ! आपकी आज्ञा थी कि मै मगध की ओर से तलवारो के साथ भैरवी-नृत्य सीखूं। पूरी तरह नही सीख सकी, क्षमा हो ! .क्षमा !

अशोक चारुमित्रा ! तू पाटलिपुत्र की शोभा है। उसके गौरव की विभूति है।

चारुमित्रा : सम्राट् ! आग के अँगारो पर नाचने का अवसर तो आपने नही दिया, अब मैने अँगारो पर अपनी देह रखने का अवसर आपसे माँग लिया। **(महादेवी से)** क्षमा करे, देवि !

महादेवी . ओह, चारु ! तू अच्छी हो जायगी। सम्राट् ने तेरे लिए कुशल चिकित्सको का प्रबन्ध किया है। तू शीघ्र ही अच्छी हो जायगी।

चारुमित्रा: नही, देवी ! **(शिथिल स्वर मे)** सम्राट् अशोक की जय !

[आँखे बन्द कर लेती है। अशोक अवाक् हो चारुमित्रा की ओर देखते रह जाते हैं।]

अशोक चारु ! तू मरेगी नही और जब मैने आजीवन प्राणियो की सुरक्षा का व्रत ले लिया है, तो तेरे जीवन की सुरक्षा मे मै अपनी सारी शक्ति लगा दूंगा। मगध-साम्राज्य के चिकित्सक तेरे जीवन की रक्षा करेगे और समस्त जम्बूद्वीप के सघाराम तेरे जीवन की मगलकामना !

[नेपथ्य में—संघ शरणं गच्छामि !
धम्मं शरणं गच्छामि !
बुद्धं शरणं गच्छामि !]

["देवानाम्प्रिय प्रियदर्शी सम्राट् अशोक की जय !"]

[धीरे-धीरे परदा गिरता है।]

· 7

वासवदत्ता

●

पात्र-परिचय

वासवदत्ता—जन-पद-कल्याणी नर्तकी
पूर्णिका—वासवदत्ता की अतरग सखी
सुलोचना—वासवदत्ता की सहचरी
मदयतिका—एक नर्तकी
जयसेन—बेरजा के नगर-श्रेष्ठि
सुदर्शी—जयसेन का सखा
उपगुप्त—आचार्य

●

काल—ई० पू० 261
स्थान—बेरजा नगर
समय—रात्रि का प्रथम पहर

वासवदत्ता

[वासवदत्ता के सप्तभूमि-प्रासाद का एक बहुत सुसज्जित कक्ष। पुष्परागजटित सुन्दर गवाक्षो से शुक्ल-पक्ष की एकादशी का चन्द्र दीख रहा है। उसकी ज्योत्स्ना कक्ष मे बिखर रही है। स्फटिक के दीपाधारो पर सुगन्धित तैल से परिपूर्ण दीपक जगमगा रहे हैं। पीत और हरित पाट वस्त्रों से द्वार सुसज्जित हैं। स्थान-स्थान पर वासवदत्ता की नृत्यभंगिमाओ के आकर्षक चित्र हैं, जिन पर मणिमालाएँ झूल रही हैं। कक्ष मे दर्पण इस कोण से लगे हुए हैं कि वे चित्र उनमे अनेक होकर प्रतिबिम्बित हो रहे हैं। दुग्ध-फेन की भाँति आसन्दियों पर श्वेत कंचुक पड़े हुए हैं। उत्तर की ओर एक लम्बी पीठिका है जिस पर कोमल उपधान रखे हुए हैं। स्थान-स्थान पर अगरु-पात्र से धूम उठ रहा है। दक्षिण की ओर काष्ठ-स्तम्भ पर एक विशाल वीणा रखी हुई है। भूमि पर कौशेय धुस्स बिछे हुए हैं। इसी प्रासाद के अलिंद से दूरागत ध्वनि में एक दूसरी नर्तकी मदयंतिका मन्द स्वरो से श्यामकल्याण के स्वरो से अलाप ले रही है। वासवदत्ता अपना शृङ्गार कर चुकी है। वह वासन्ती परिधान धारण किये हुए है। मस्तक पर चन्द्र-कला का किरीट जिसमे राशि-राशि नीलमों की जगमगाहट है। पुष्पराग के कुण्डल जो उसकी अलको के साथ झूल उठते हैं। गौर वर्ण, चतुर्थी के चन्द्र की भाँति मस्तक, कुञ्चित भ्रू जो कटाक्ष का अनुसरण करती है, जिसके मध्य में केसर से बनी हुई पुष्पित वल्लरी अंकित है। प्रस्फुटित कमल-दल की भाँति नयन-कोरक जिनमे अंजन भ्रमर का रंग और गूँज लेकर समाया हुआ है। कपोलो और चिबुक पर पत्रावलि। वह स्वर्ण तारो की कंचुकी कसे हुए है जैसे उत्तान शृङ्गार के दो घनाक्षरी छन्द पढ़े जाने से वर्जित कर दिये गये हैं। शरदकालीन आकाश के रंग का दुकूल। रत्न-जटित किंकणी। पैरो मे जावक और नूपुर। जैसे वह स्वर्ग से उतरी हुई इन्द्रधनुषी रश्मि हो। वासवदत्ता इस समय पीठिका पर अर्ध-शयित अवस्था मे नेपथ्य से आने वाली रागिनी पर बशी-वादन कर रही है। समीप ही उसकी सहचरी पूर्णिका एक पुष्पमाला

गूंथ रही है। कुछ देर बशी-वादन के उपरान्त वासवदत्ता मुस्कराते हुए बंशी ओठो से हटाती है और मधुर स्वर से हँसती है जैसे नूपुरो की घटिकाएँ बिखर गई हो।]

वासव [मधुर हँसी]

पूर्णिका : स्वामिनी !

वासव [मधुरतर हँसी]

पूर्णिका स्वामिनी !

वासव : पूर्णिके ! वृद्धा के सिकुडे हुए शरीर पर अगराग ! (पुन हँसती है) वृद्धा के शरीर पर (हँसती है) अगराग (हँसती है) उसी तरह दूर से आती हुई दुर्बल रागिनी के स्वरो पर मेरा बशी-वादन ! (हँसती है) बशी के स्वरो का अगराग !

पूर्णिका : नगर-लक्ष्मी वासवदत्ता का बशी-वादन अगराग ही तो है।

वासव : कौन गा रही है ?

पूर्णिका . मदयन्तिका, स्वामिनी !

वासव : हाँ, मदयन्तिका ही होगी। हाय री, मदयन्तिका ! मेरे कक्ष की ओर मुख करके ही स्वरालाप करती है। कहती तो यही है कि मै वासवदत्ता के प्रासाद का वातावरण सगीतमय करने के लिए ही स्वरालाप करती हूँ किन्तु इसमे एक रहस्य है। जानती है ?

पूर्णिका : नही जानती, स्वामिनी !

वासव . ओ हो ! मदयन्तिका को इतने दिनो से जानकर भी नही जानती ? अच्छा पहले द्वार पर जाकर सकेत से उसे विश्राम करने के लिए कह दे। उसका मुख मेरे कक्ष की ओर ही होगा।

पूर्णिका जैसी आज्ञा ! [प्रस्थान]

वासव (गहरी साँस लेकर) वेचारी मदयन्तिका ! (गवाक्ष से चन्द्र की ओर देखती है) एकादशी का चन्द्र ! खण्डित होकर भी कितना मनोहर और दिव्य है ! कितनी शीतल किरणे है ! जैसे ये भी किसी बशी के कोमल स्वर है। (नेपथ्य में संगीत बन्द हो जाता है) सगीत समाप्त। मदयन्तिका मौन हो गई।

[पूर्णिका का प्रवेश]

पूर्णिका स्वामिनी प्रसन्न हो ! मदयन्तिका ने स्वरालाप समाप्त कर दिया।

वासव · मदयन्तिका बडी सौम्य है। मुझ पर श्रद्धा रखती है। उसे कुछ पुरस्कार दूँगी।

पूर्णिका यही क्या कम पुरस्कार है स्वामिनी कि उसे आपने अपने प्रासाद मे स्थान दे दिया है !

वासव : पूर्णिके ! मैने मुक्त हृदय से अन्य नर्तकियो को अपने प्रासाद मे निवास करने की अनुमति दे दी है। भय हो सकता है कि वे मेरे वसन्त मे वर्षा के मेघ उठा

सकती है; किन्तु मै समझती हूँ कि उन्हे भी अपनी कला-कादम्बिनी की कमनीयता दिखलाने का अवसर मिलना चाहिए ।

पूर्णिका : इन्द्रधनुष को मेघ-माला का भय नही होता, स्वामिनी !

वासव : (**हँसकर**) ओ हो ! कविता की किरण फैला दी तूने !

पूर्णिका : स्वामिनी ! मैने मदयन्तिका को जैसे ही सकेत किया, उसका स्वर किसी नगर-श्रेष्ठि की भाँति उसके कण्ठ मे ही रह गया । स्वामिनी, किसी रहस्य की बात कह रही थी ?

वासव रहस्य ! (**सोचते हुए**) हाँ, स्मरण आया । मदयन्तिका है तो बहुत सौम्य ...किन्तु......कहूँ ?

पूर्णिका हाँ, स्वामिनी !

वासव मदयन्तिका सदैव प्रयत्न करती रहती है कि उसका स्वरालाप इतना मधुर हो...इतना मधुर हो कि नगर-श्रेष्ठि आर्य जयसेन.. समझी !

पूर्णिका नगर-श्रेष्ठि आर्य जयसेन ! (**हँसती है**) स्वामिनी ! नगर-श्रेष्ठि आर्य जयसेन की रुचि समस्त वेरजा नगर जानता है । वे पाटल और जूही का भेद जानते है और जानते हैं मेरी स्वामिनी नगर-लक्ष्मी वासवदत्ता के कक्ष का पथ । मदयन्तिका के कक्ष का नही, भले ही वह मेरी स्वामिनी के प्रासाद मे निवास कर मधुर से मधुर स्वरालाप करे ।

वासव : मेरे प्रति तेरा पक्षपात है, पूर्णिके !

पूर्णिका ये वाक्य तो स्वय आर्य जयसेन ने कहे थे । कहते थे, आकाश के सौध-सदन मे चन्द्र ने अपने साथ तारको को भी स्थान दे दिया है ।

वासव . आर्य जयसेन प्रेमी है । उनके मुख की रेखाएँ और हृदय के भाव दोनो ही सौन्दर्य के साँचे मे ढले हुए है । तुझे एक सूचना दूँ !

पूर्णिका · आज्ञा, स्वामिनी !

वासव : आर्य जयसेन आज इस कक्ष मे आ रहे है ।

पूर्णिका · (**प्रसन्नता की उमंग में**) आ रहे है ?

वासव मेरा शृगार देखकर तूने कुछ अनुमान नही किया ?

पूर्णिका किया स्वामिनी ! किन्तु चन्द्र तो चन्द्र है । कलाएँ स्वय उसके मस्तक पर आकर धन्य हो जाती है ।

वासव । (**मुस्कराकर**) कलाएँ धन्य हो जाती है । और यदि कलाएँ घट जायँ ? अमावास्या हो जाय, पूर्णिके ! अमावास्या !

पूर्णिका . ऐसी वात न कहे, स्वामिनी ! (**कराह के स्वर मे**) भविष्य के बोझ से वर्तमान के कन्धे दुखने लगते है ।

वासव · तू तो ऐसे स्वर मे कह रही है, जैसे तेरे ही कन्धे दुख रहे है। (**मधुर हँसी**) पूर्णिके ! अपनी वाणी मे रूपक और उपमाओ से अधिक काम न लिया कर । समझी !

पूर्णिका मेरी वाणी मे अलकार उसी भाँति आ जाते है जिस भाँति स्वामिनी के कक्ष मे नगर-श्रेष्ठि जयसेन ।

वासव तो जयसेन मेरे कक्ष के अलकार है ? पूर्णिके ! तेरे अलकार अच्छे है जो कभी पुराने नही होते किन्तु मेरे अलकार वासना मे धुलकर छोटे होते जाते है और एक दिन समाप्त हो जाते है। पूर्णिके ! ये तो सेज पर सजे हुए फूल है जो सुगन्धि की बात कहते-कहते मुरझा जाते है ।

पूर्णिका इस आत्म-बलिदान मे भी शोभा है, स्वामिनी !

वासव इस शोभा से मै खेलती हूँ, अभिनय करती हूँ। दु ख तो यह है कि ससार इस अभिनय को ही सत्य समझता है ।

पूर्णिका किन्तु कभी-कभी अभिनय भी सत्य हो जाता है, स्वामिनी !

वासव जब उस अभिनय के मच पर हिम-शृङ्ग की भाँति अचल पुरुष प्रवेश करता है । वह वाणी से नही, आत्मा से कहता है कि मै तुम्हे कृतार्थ कर सकता हूँ। उसमे आकाक्षा नही, आकाक्षा की पूर्ति पर विरक्ति नही । वह अलकार है और रस भी है । वह फूल है, उसकी सुगन्धि भी है ।

पूर्णिका : तो नगर-श्रेष्ठि आर्य जयसेन का प्रेम...

वासव वह इस दीपक मे जलने वाला सुगन्धित तेल है जो कुछ ही समय मे समाप्त हो जायगा । किन्तु उससे मेरे कक्ष की शोभा है । इसलिए इस दीपक को मणि-जटित स्तम्भ पर रखती हूँ, कचुक की ओट मे सजाती हूँ, जिससे वह बुझ न जाय ।

पूर्णिका : किन्तु आर्य जयसेन के आगमन से तो आप बहुत प्रसन्न हो उठती है ।

वासव : क्योकि वे मेरे अभिनय को सार्थक करते है । उनकी सम्पत्ति मे मेरे नूपुरो की झकार है, उनके हृदय की धडकन मे मेरे नृत्य की ताल है और उनके अनुराग मे मेरे चरणो की लालिमा ।

पूर्णिका (मुस्कराकर) और उनके बाहु-पाश मे .. ..

वासव (तीव्रता से) सावधान, पूर्णिके ! तू मेरी सखी है, तुझे क्षमा करती हूँ। वासवदत्ता ने आज तक आत्म-समर्पण नही किया । वह आनन्द और विलास की सूत्र-धारिणी है—पात्र नही । वह वसन्त-सुषमा की भाँति प्रत्येक फूल खिलाती है, फूल नही बन जाती । वह अभिनय का सत्य है, सत्य का अभिनय नही ।

पूर्णिका : क्षमा करे, स्वामिनी !

वासव . क्षमा किया ! प्रसन्न हो जा ! आज नगर-श्रेष्ठि आर्य जयसेन यहाँ आकर कृतार्थ होगे । इस शृगारगृह को तू और भी सुसज्जित कर दे । उनके आने मे अब अधिक विलम्ब न होगा ।

पूर्णिका माध्वीक मदिरा का सुरा-भाड भी उपस्थित करूँ ?

वासव उसमे चम्पक की सुगन्धि मिला दे । दासियो से कह दे, वे गन्ध-द्रव्य स्वर्ण-कलशो मे सुसज्जित कर दे । स्फटिक प्रतिमाओ मे स्वर्ण और मणि-मालाओ के

आभरण सजा दे। समस्त कक्ष सुगन्धित और आलोक से सुरभित और उज्ज्वल हो उठे। आज आर्य जयसेन का उसी भाँति स्वागत होना चाहिए जैसे शरीर मे यौवन का होता है, वसन्त मे कामदेव का होता है।

पूर्णिका . **(गम्भीर स्वर से)** जैसी आज्ञा!

वासव बुरा मान गई ? हँसकर कह न 'जैसी आज्ञा'। तेरी वाणी के सारे अलकार कहाँ गये ? **(पूर्णिका कुछ नही बोलती)** नही बोलेगी! अच्छा, तो मैने नगर-श्रेष्ठि श्री आर्य जयसेन को आत्म-समर्पण किया। स्वीकार है ?

पूर्णिका . कही चन्द्रकला भी अन्धकार को आत्म-समर्पण कर सकती है ?

वासव वाणी मे अलकार तो आ गया। अब हँसी भी आयेगी. .

[दोनो हँस पड़ती है।]

वासव तू वास्तव मे वासवदत्ता की पूर्णिका है। अब वह वीणा मेरे हाथो मे दे दे। **(पूर्णिका वीणा उठाने के लिए जाती है)** आज ऐसी रागिनी का अलाप हो कि दूर-दूर तक स्वरो का बन्दनवार लग जाय। और राग का स्थायी तोरण की भाँति सुसज्जित हो! यह राग तूने सुना ? **(वीणा मे जयजयवन्ती का राग कुछ देर बजाती है)** कैसा रहा ?

पूर्णिका यह तो आपकी जय-जय का स्वर लेकर जयजयवन्ती बन गई!

वासव तब तो आज मै ससार-विजयिनी बन गई हूँ।

[दासी सुलोचना का प्रवेश]

सुलोचना जन-पद-कल्याणी की जय! आर्य सुदर्शी दर्शन करना चाहते है।

वासव **(देखकर)** सुलोचना! आर्य सुदर्शी या नगर-श्रेष्ठि आर्य जयसेन ? तूने अपने सुलोचनो से उन्हे ठीक देखा है ?

सुलोचना दासी नगर-श्रेष्ठि जयसेन को पहचानती है। आर्य जयसेन नही है, आर्य सुदर्शी है।

वासव **(सोचते हुए)** जयसेन नही आये! सुदर्शी है। **(सुलोचना से)** दर्शनीय है ?

सुलोचना **(लज्जित होकर)** मै क्या कहूँ, स्वामिनी!

वासव कह दे, दूसरे कक्ष मे मदयन्तिका उनकी प्रतीक्षा कर रही है।

सुलोचना स्वामिनी! वे आपकी सेवा मे कुछ निवेदन करना चाहते है।

वासव मै इस समय कोई निवेदन नही सुनना चाहती।

पूर्णिका सम्भव है, स्वामिनी, कोई राजकीय सूचना हो!

वासव राजकीय सूचनाएँ तो मेरे चरणो मे जावक की पक्तियाँ बनकर शयन करती है। किन्तु सुन लूँगी यह सूचना। सुलोचने! तू आर्य सुदर्शी को कक्ष मे भेज दे।

सुलोचना जैसी आज्ञा!

पूर्णिका इस बीच मै दासियो को प्रबन्ध-सज्जा की आज्ञा दे दूँ ?

वासव . वे सावधानी से कार्य मे तत्पर हो।

पूर्णिका · अत्यन्त सावधानी से। [प्रस्थान]

[वासवदत्ता वीणा के तारो पर उँगलियाँ फेरती हुई कुछ सोचती है ।]

[सुदर्शी का प्रवेश]

सुदर्शी जन-कल्याणी देवि वासवदत्ता को प्रणाम !

वासव . स्वागत, आर्य !

सुदर्शी : मुझे आपकी सेवा मे एक सूचना निवेदन करनी है।

वासव . परिचय !

सुदर्शी : मेरा नाम सुदर्शी है । मै नगर-श्रेष्ठि आर्य जयसेन का मित्र हूँ ।

वासव सुनकर प्रसन्न हूँ ।

सुदर्शी . नगर-श्रेष्ठि आर्य जयसेन इस समय आपकी सेवा मे उपस्थित होने वाले थे।

वासव नही होगे ?

सुदर्शी उनके आने मे कुछ विलम्ब होगा।

वासव कारण !

सुदर्शी आज उन्होने मधुवन मे आपके अभिसार की व्यवस्था की है। माधवी और यूथिका की मालाओ से समस्त भूमि सुसज्जित की है। आम्र-कुञ्ज के मध्य मे विविध लताओ के बीच दुग्ध-धवल धुस्स बिछाये गये हैं। उसके चारो ओर पाट-वस्त्रो के झीने आवरण है। सुगन्धि की मन्द लहरे चारो ओर बह रही है, चन्द्र की शुभ्र किरणो मे वह चन्द्रलोक का उपवन ज्ञात होता है। वही चलने की व्यवस्था है ।

वासव कवि मत बनो, आर्य ! इसकी सूचना उन्होने पहले नही दी ।

सुदर्शी : देवि ! क्षमा करे। कुतूहल मे वे जीवन को कला समझते है। उन्होने कहा था कि नगर की अपेक्षा प्रकृति की सुरम्य भूमि मे ही देवि वासवदत्ता का सौन्दर्य वन-कुसुमो की भाँति सुसज्जित हो सकेगा।

वासव : मैं सुनकर प्रसन्न हुई। आज मेरा अभिसार होगा। आर्य जयसेन समस्त सौन्दर्य पर जय प्राप्त करके ही रहेगे ।

सुदर्शी : आपको चलने मे कोई कष्ट न हो, इसलिए उन्होने विविध पुष्पो से सुसज्जित श्वेत कौशेय का मन्दघोप रथ आपकी सेवा मे भेजा है।

वासव साधु ! उस रथ मे मै आर्य जयसेन के साथ ही आसन ग्रहण करूँगी ।

सुदर्शी यह आर्य जयसेन का सौभाग्य है ।

वासव तो मुझे कितनी देर प्रतीक्षा करनी होगी ?

सुदर्शी आपके अभिसार की व्यवस्था करने मे ही उन्हे कुछ विलम्ब हुआ। यदि आपको कुछ प्रतीक्षा करनी पडे तो क्षमा करे।

वासव सुख की प्रतीक्षा सुख से अधिक सुखदायक है ।

सुदर्शी आपकी जय, देवि ! उन्होने एक प्रार्थना और की है।

वासव सुनूंगी।

सुदर्शी : आपकी वीणा भी अभिसार मे साथ रहेगी ।

वासव : (मुस्कराकर) मेरे कण्ठ की वीणा पर्याप्त नही है ?

सुदर्शी : आपके कण्ठ का अनुकरण करने के लिए वीणा की आवश्यकता है।

वासव : बडे मधुर-भाषी हो, आर्य ! तो मै प्रस्तुत रहूँगी।

सुदर्शी मुझे भी आपके शृङ्गार के लिए जूही की पुष्प-मालाओ की व्यवस्था करनी है। आज्ञा चाहता हूँ !

वासव : जाओ, आर्य ! सामन्त-कुमारो से भी कह दो, वे भी आज चन्द्र की ज्योत्स्ना मे मेरा नृत्य देखे। आर्य जयसेन को सूचना देना कि मेरे साथ मेरे गवाक्ष मे झाँकने वाला यह चन्द्र भी उनकी प्रतीक्षा कर रहा है।

सुदर्शी : जैसी आज्ञा, देवि ! [**प्रस्थान**]

वासव तो अभिसार की सज्जा है। (**देखकर**) दीपको की शिखाएँ मन्द हो रही है। अब तुम्हे तेल नही चाहिए। दीपको ! तुम विश्राम करो। बुझ जाओ। आज तो चन्द्र की ज्योत्स्ना का ही राज्य रहेगा। उसकी किरण-मणियो के दीपक जलेगे—मणिदीप। और उन्हे शरीर पर सजाकर नृत्य करेगी—नगर-लक्ष्मी वासवदत्ता। [**वीणा के तारो को झनझना देती है।**]

[**पूर्णिका का प्रवेश**]

वासव पूर्णिके ! तू आ गई। तू भी मेरे साथ चलेगी ?

पूर्णिका कहाँ, स्वामिनी ?

वासव मधुवन के अभिसार मे।

पूर्णिका . कब चलना होगा, देवि ?

वासव आज ही, आज की ज्योत्स्ना मे ही, इसी समय !

पूर्णिका और आर्य जयसेन की स्वागत-सज्जा ! सब प्रबन्ध कर आई हूँ।

वासव मेरी स्वागत-सज्जा की है उन्होने ! बडे कौतुक-प्रिय है वे। दिन-भर मेरे अभिसार के प्रबन्ध मे रहे होगे वे। मुझे प्रसन्न करने की कितनी चेष्टा करते है।

पूर्णिका . फिर उनके आगमन की सूचना असत्य थी ?

वासव तू कुछ नही जानती, पूर्णिके ! उन्होने सूचना इसलिए भिजवा दी थी कि मैं उनकी ही प्रतीक्षा मे रहूँ, किसी अन्य सामन्त-कुमार का स्वागत न करूँ। सन्ध्या-समय सूर्यमुखी पश्चिम की ओर ही घूमकर सूर्य को देखे।

पूर्णिका आप बहुत प्रसन्न है, देवि !

वासव · आर्य जयसेन बडे कुशल प्रेमी है, यह जानकर मै बहुत प्रसन्न हूँ। तू कुशल प्रेमी की परिभाषा जानती है ?

पूर्णिका मैं नही जानती, स्वामिनी !

वासव (**हँसकर**) तेरी पूर्णिमा के दिन जितने दूर हो, उतना ही अच्छा। सभी कुशल प्रेमी नही होते। पूर्णिके ! कुशल प्रेमी वह है जो शरीर से दूर रहकर हृदय के समीप आ जाय। [**मन्द हँसी**]

[शीघ्रता से मदयन्तिका का प्रवेश]

मद० क्षमा करे, अय्या ! मै बिना सूचना दिए ही आ गई।

वासव मदयन्तिका ! आज बिना सूचना दिए ही सब कार्य हो रहे है। कोई विशेष वार्त्ता ?

मद० आज आप अभिसार के लिए जा रही है ?

वासव : नगर-श्रेष्ठि आर्य जयसेन की प्रार्थना है। किसी दिन तुम भी अभिसार करोगी।

मद० यह मेरा सौभाग्य नही है, अय्या !

वासव इतनी निराश मत बनो, मदयन्तिका। यदि तुम्हारी इच्छा हो, तो तुम भी इस अभिसार की नक्षत्र-मालिनी बनो।

मद० नही, अय्या ! मै एक प्रार्थना करने आई हूँ। **(पूर्णिका की ओर देखकर)** पूर्णिके सखी ! मेरी प्रार्थना मे सहायिका बनो।

पूर्णिका कैसी प्रार्थना ?

मद० अय्या ! नगर-श्रेष्ठि ने जो श्वेत कौशेय का रथ आपकी सेवा मे भेजा है, उसे देखने मै गई थी। बडा सुन्दर रथ है। स्वर्ण-कलश से मण्डित, सुगन्धित पुष्प-मालाओ से सुसज्जित। उसमे चार श्वेत सैन्धव अश्व, जो स्वर्ण और मणियो से अलकृत है रथ ले जाने के लिए चचल हो रहे है। ज्योत्स्ना मे उनकी कलगी जल की उठी हुई फुहार जैसी ज्ञात होती है। यह सब देखकर जैसे ही मै लौट रही थी वैसे ही......

पूर्णिका नगर-श्रेष्ठि आर्य जयसेन...

मद० नही, पूर्णिके ! मैंने देखा, पास ही के शाल्मली वृक्ष के नीचे आचार्य उपगुप्त। उन्हे मेरे पैर की ठोकर लगी।

वासव **(आश्चर्य से)** ठोकर ? आचार्य उपगुप्त को ?

मद० . हाँ, अय्या ! आचार्य उपगुप्त शयन कर रहे है, नग्न भूमि पर। कोई शैया नही, कठोर भूमि पर, जिस पर शाल्मली की काष्ठ-शुक्तियाँ पडी हुई है वे शयन कर रहे है। कुश-कटको पर चलने के कारण उनके चरण क्षत-विक्षत हो रहे है। इसलिए वे आज भिक्षा के लिए भी नही निकले।

वासव तो आचार्य उपगुप्त ने आज भोजन नही किया ?

मद० नही, अय्या ! उन्होने कल से भोजन नही किया।

वासव पूर्णिके ! तू आचार्य उपगुप्त को मधुकरी दे आ।

पूर्णिका : जो आज्ञा !

मद० अय्या ! मैने निवेदन किया कि मैं आचार्य के लिए यही मधुकरी ले आती हूँ; किन्तु उन्होने मेरा निवेदन स्वीकार नही किया।

वासव कारण ?

मद० उन्होने कहा कि भिक्षु द्वार पर ही मधुकरी ग्रहण करता है, अन्यत्र नही।

वासव : तो वे द्वार पर कैसे आ सकेंगे ?
मद० . मैने उनसे प्रार्थना की। वे कठिनाई से खडे हुए। मैने सहायता देनी चाही। उन्होने स्वीकार नही की। चलकर वे द्वार तक आ गये है।
वासव · द्वार तक आ गये है ! तो मै उनका स्वागत करूँगी।
पूर्णिका आज आपका अभिसार है, स्वामिनी !
वासव : हाँ, अभिसार है, तभी तो जा रही हूँ। पूर्णिके ! तू आसन ठीक कर, मै उन्हे कक्ष मै लाऊँगी।
पूर्णिका · नगर-श्रेष्ठि जयसेन यदि इसी समय आये तो वे निराश होगे, स्वामिनी !
वासव मेरे स्थान की पूर्ति मदयन्तिका करेगी। मेरे पास अब अधिक समय नही है। [प्रस्थान]
पूर्णिका : मदयन्तिका, मै नही जानती थी कि तुम मे इतनी ईर्ष्या है।
मद० · तुम्हे मेरी आलोचना करने का कोई अधिकार नही है, पूर्णिके !
पूर्णिका . स्पष्ट बात कहने का सबको अधिकार है, मदयन्तिका ! जब तुमने देखा कि नगर-श्रेष्ठि ने अभिसार का प्रबन्ध किया है तो तुम इसे सहन नही कर सकी। आचार्य उपगुप्त का प्रसग ले आई। उस प्रसग का यह समय नही था। तुम उपगुप्त को स्वय अपने कक्ष मे ले जा सकती थी। स्वामिनी से कहने की क्या आवश्यकता थी ?
मद० . इसलिए कि अय्या को इस बात की सूचना होनी चाहिए।
पूर्णिका किन-किन बातो की सूचना तुम स्वामिनी को देती हो ? मै तुम्हारी नीति समझती हूँ। स्वामिनी को उपगुप्त की सेवा मे छोडकर तुम नगर-श्रेष्ठि के साथ अभिसार करती।
मद० : तुम चुप रहो, पूर्णिके !

[आचार्य उपगुप्त के साथ वासवदत्ता का प्रवेश]

वासव · भन्ते ! दासी पर आपने बडी कृपा की। आप किसी के कक्ष मे नही जाते; किन्तु मेरा निमन्त्रण स्वीकार कर आपने यह कृपा की।
मद० वास्तव मे बडी कृपा की, अय्या ! आचार्य मानव-मात्र पर एक-सी कृपा करते है। उनके समक्ष न कोई छोटा है, न बडा। उनकी गति सर्वत्र है।
वासव : मै आचार्य का उपदेश ग्रहण करूँगी, पूर्णिके ! आचार्य के लिए आसन बिछा दे और तू जा।
पूर्णिका जो आज्ञा ! **[आसन बिछाकर आचार्य उपगुप्त को "भन्ते, प्रणाम" कहकर चली जाती है।]**
मद० मै भी अय्या से जाने की आज्ञा चाहती हूँ ?
वासव हाँ, नगर-श्रेष्ठि से मेरा नमस्कार कहना।
मद० उन्होने मिलने की कृपा की तो कह दूँगी। भन्ते, प्रणाम करती हूँ। [प्रस्थान]
वासव मैं मदयन्तिका का आभार मानती हूँ कि उसने आपकी सूचना मुझे दी।

आपके नाम से तो मेरे कान अनेक बार पवित्र हो चुके है ; किन्तु नेत्रो को आज ही दर्शनो का वरदान प्राप्त हुआ ।

उपगुप्त देवि ! आरोग्य लाभ करो ! नेत्रो द्वारा जो रजनीय रूप देखा जाता है, वह हिंसक है और उसके सामने तुम्हारे नेत्र हरिण के समान है । रजनीय रूप के जाल म बधकर नत्र इच्छानुसार विहार नही कर सकेगे, उन्हे बन्धन मे मत डालो, स्वाधीन रहने दो !

वासव . भन्ते ! आपकी वाणी अमर है । आपकी मनोहर कान्ति मे नेत्र के हरिण यदि सदा के लिए उलझ जाये तो इससे अधिक नेत्रो का क्या सौभाग्य होगा ? भन्ते ! विराजिये, आसन प्रस्तुत है ।

उपगुप्त . देवि ! तृणो का आसन ही मेरा आसन है । सुख का ध्यान महाताप और महादाह उत्पन्न करता है । आनन्दमय जीवन का सिंहासन ही इस तृण के आसन पर है । इसलिए मैं इसी मे समर्पित हूँ ।

वासव : आप धन्य है, भन्ते ! मदयन्तिका ने कहा था कि आप भूमि पर शयन कर रहे थे । क्या आपके शरीर की गौर कान्ति भूमि पर लुठित होने योग्य है ? भन्ते ! यदि आपकी यह गौर कान्ति भूमि से मैली होती है, तो इन कौशेय वस्त्रो को अग्नि मे होम कर देना चाहिए ।

उपगुप्त देवि ! आरोग्य दृष्टि से देखो । जल पर जब किरण पडती है तो जल भी रजत-रूप धारण करता है, उसी भाँति इस शरीर पर जब यौवन की किरण पडती है तो शरीर मे कान्ति उत्पन्न हो जाती है । किन्तु किरण जब अस्त हो जाती है तो शरीर पर श्याम रेखाएँ पड जाती है । शरीर मे कान्ति नही है, वह तो अवस्था की कान्ति है और अवस्था परिवर्तनशील है, तब शरीर का महत्त्व कैसा ? चाहे वह गौर हो, चाहे श्याम । वह भी जीवन का एक आसन है । सुख मे यदि तुम्हारी आसक्ति नही है तो शरीर का आसन सर्वोत्तम है ।

वासव सत्य है, भन्ते !

उपगुप्त : और भूमि ! वह तो शरीर की माता है । यह महापृथ्वी गम्भीर है । पृथ्वी छोडकर यह कोई दूसरी वस्तु नही हो सकती । कोई पुरुष हाथ मे कुदाल लेकर आए और कहे मै इस पृथ्वी को अ-पृथ्वी करूँगा तो क्या वह पृथ्वी को अ-पृथ्वी कर सकता है ? वह यहाँ खोदे, वहाँ खोदे, मिट्टी को यहाँ फेके, वहाँ रखे और कहे, घोषणा करे कि मैंने पृथ्वी को मिटा दिया तो क्या देवि ! उस पुरुष ने इस महापृथ्वी को मिटा दिया ?

वासव · नही, भन्ते !

उपगुप्त इसलिए यह महापृथ्वी गम्भीर है । इसे कोई मिटा नही सकता । उसी पृथ्वी से शरीर का निर्माण है, उसी पृथ्वी मे शरीर का विनाश है । जब शरीर पृथ्वी का अग है तो पृथ्वी पर शयन करने मे शरीर को कष्ट कैसा ? अशान्ति कैसी ? पृथ्वी पर तो शयन करना वैसा ही है जैसा शिशु का माता के हृदय पर

सो जाना।

वासव : किन्तु भन्ते ! मुझे कष्ट होता है कि इतना सुन्दर और दृढ शरीर पृथ्वी का होकर पृथ्वी के वैभव पर नही, उसकी भस्म पर विश्वास रखता है। मै तो निवेदन करती हूँ कि यदि अवस्थाओ के अनुसार शरीर का उपयोग नही है तो अवस्थाओ की सृष्टि ही क्यो की गई ? भन्ते ! आपके ज्ञान-सूर्य के सामने मैं अन्धकार की बातें भले ही करूँ, किन्तु भगवान् सूर्य भी सध्या-समय अन्धकार मे निवास करने चले जाते है। आज आप इस कक्ष मे निवास कीजिए।

उपगुप्त मै एक होकर अनेक कैसे हो जाऊँ, देवि ! आविर्भाव और तिरोभाव में एक साथ कैसे विचरण करूँ ? असन्तोष मे सन्तोष कैसे प्राप्त करूँ ? मै कहूँ कि इस कक्ष को शाल्मली वृक्ष की भूमि बना दो। बनाओगी ? नही, देवि ! वस्तुओ मे वासनाओ के केन्द्र है। मै उन्हे अपने चित्त से देखकर जानता हूँ। आकाश मे पक्षी उडते है तो पृथ्वी पर मनुष्य क्यो नही उडते ? प्रत्येक का धर्म और स्वभाव गुणो पर निर्भर है। अग्नि-मुख मे पडे हुए स्वर्ण मे अन्य-अन्य धातुएँ मिलानी नही चाहिएँ, अन्य धातुएँ निकालनी चाहिएँ।

वासव तो भन्ते ! ऐसे स्वर्ण का आभूषण कितना दिव्य होगा ? उस स्वर्ण के आभूषण से मेरा जीवन धन्य हो उठेगा। आपके वचनो मे कितना आकर्षण, आपके नेत्रो मे कितनी ज्योति, आपकी दृष्टि मे कितनी करुणा है ! फिर . फिर . वह करुणा मेरे लिए क्यो नही है, देव ! वह ज्योति मेरे प्राणो के समीप क्यो नही आती ?

उपगुप्त वह ज्योति किसी समय आ जायेगी। इस समय यदि कष्ट न हो, तो केवल मधुकरी, एक बार की मधुकरी से ही मेरा सत्कार हो।

वासव जैसी आज्ञा, भन्ते ! इस रात्रि मे जाने से आपको कष्ट होगा।

उपगुप्त जिस भाँति देवी को अभिसार मे जाते समय कष्ट नही होगा, उसी भाँति मुझे भी कोई कष्ट नही होगा।

वासव किन्तु भन्ते ! आपके चरणो पर अपना अभिसार निछावर करती हूँ। मेरी प्रार्थना है कि इस समय आप ठहर जायँ।

उपगुप्त अभी मेरे ठहरने का समय नही आया, देवि ! जिस दिन समय आयगा उस दिन मै स्वय तुम्हारे समीप पहुँच जाऊँगा।

वासव वह समय कब होगा, प्रभु !

उपगुप्त प्रतीक्षा मे आकर्षण होता है, देवि ! अपने सुख मे मेरी प्रतीक्षा न करना। तुम्हारे अभिसार मे विलम्ब हो रहा है। इस समय जहाँ तुम्हे जाना है, वही जाओ।

वासव **(शिथिल स्वरो मे)** जैसी आज्ञा ! मधुकरी समर्पित कर दूँ। **(पुकारकर)** पूर्णिके !

पूर्णिका **(नेपथ्य से)** आई, स्वामिनी !

वासव : भन्ते ! कभी-कभी इस चरण-सेविका का स्मरण करे। आपके आने का दिन जितना शीघ्र होगा, उतने ही निकट मेरा सौभाग्य होगा।

[**पूर्णिका का प्रवेश**]

पूर्णिका आज्ञा, स्वामिनी !

वासव भन्ते की सेवा मे मधुकरी !

पूर्णिका मैं मधुकरी ले आई हूँ, स्वामिनी !

वासव भन्ते की झोली मे डाल दे और इन्हे शाल्मली वृक्ष तक पहुँचा दे।

पूर्णिका जैसी आज्ञा !

वासव : भन्ते के श्रीचरणो मे प्रणाम।

उपगुप्त कल्याण हो ! [**उपगुप्त और पूर्णिका का प्रस्थान**]

वासव . हिम-शृङ्ग की भाँति अचल पुरुष उपगुप्त वाणी से नही आत्मा से साक्षात्कार करते है, कितने आकर्षक, कितने सौम्य ! शुभ्र ललाट पर चन्द्र के समान स्निग्ध शान्ति ! आज तक वासवदत्ता नर्तकी थी, आज उसने अपने को नारी अनुभव किया। नारी ! मुझे पराजित कर वे चले गये। आज मेरा सतीत्व तरल होकर उनके चरणो को धोने के लिए उमड पडा। कुसुम से भी अधिक कोमल और वज्र से भी अधिक कठिन। आज तक कभी ऐसा नही हुआ ! किन्तु किन्तु मेरे यौवन और सौन्दर्य का इतना अपमान ! कितने नगर-श्रेष्ठि और सामन्त-पुत्र मेरे चरणो से टकराए और मैने उन्हे ठोकर मार दी ! किन्तु आज.. आचार्य उपगुप्त .ओह ! यह शरीर जल रहा है। मस्तक मे क्रांति बिखर गई है। मै इस पुरुष-जाति से पूरा बदला लूंगी। जितने पुरुष है उन्हे चरणो के नीचे पीस दूंगी। वासवदत्ता नारी की समाधि पर विश्व-विजयिनी नर्तकी बनकर नृत्य करेगी।

[**पूर्णिका का प्रवेश**]

पूर्णिका स्वामिनी ! आचार्य को पहुँचाने नीचे गई तो नगर-श्रेष्ठि जयसेन आपके कक्ष मे आने को उत्सुक थे। सुलोचना ने उनसे कह दिया था कि आचार्य ऊपर है। वे नीचे प्रतीक्षा कर रहे है।

वासव और मदयन्तिका कहाँ है ? वे उसे अभिसार के लिए नही ले गये ?

पूर्णिका मैने यह भी नगर-श्रेष्ठि से पूछा था। उन्होने कहा कि मैंने मदयन्तिका की प्रार्थना ठुकरा दी। यदि अभिसार होगा तो एकमात्र नगर-लक्ष्मी वासवदत्ता का।

वासव साधु ! जयसेन, साधु ! पूर्णिके ! शीघ्र ही आर्य जयसेन को कक्ष मे आने दे। आज मेरा ही अभिसार होगा।

पूर्णिका जैसी आज्ञा, स्वामिनी ! [**प्रस्थान**]

वासव आज यह वीणा इस प्रकार गुजित हो कि आचार्य उपगुप्त का सौन्दर्य और यौवन इसमे बुलबुले की भाँति बह जाय, सदैव के लिए बह जाय। (**वीणा के तारो की ध्वनि**) मै विलासिनी हूँ तो मेरा विलास सगीत से दिशाओ को झक-

झोर दे और सारी दिशाएँ मेरे सगीत के स्वर मे गूँजकर एक हो जायँ। एक केवल एक. .[**वीणा के तारो की झंकार**]

[**जयसेन का प्रवेश**]

जयसेन : वासवदत्ते !

वासव स्वागत, आर्य ! अधिक प्रतीक्षा करनी पडी ?

जयसेन तुम्हारी छोटी प्रतीक्षा भी अधिक ज्ञात होती है, वासव ! किन्तु तुम्हारे वाक्य मुझे स्मरण है, 'सुख की प्रतीक्षा सुख से अधिक सुखदायक है।' [**हल्की हँसी**]

वासव कृतार्थ हुई , किन्तु आचार्य उपगुप्त तो कहते है कि प्रतीक्षा करनी ही नही चाहिए।

जयसेन आचार्य के उपदेश बौद्ध भिक्षुओ के लिए हैं, वासव ! जन-कल्याणी वासवदत्ता के लिए नहीं। इधर देखो, वासव ! तुम्हारे कण्ठ के लिए मैंने यह जूही की माला अपने हाथो से गूँथी है।

वासव मै कृतार्थ हुई, आर्य !

जयसेन तो इसे भी अपने कण्ठ की कमनीयता से कृतार्थ करो।

वासव इसे अपने हाथो से ही कण्ठ मे पहिना दे।

जयसेन . किसी समय कामदेव ने भी रति को अपने हाथो से माला पहिनाई थी। यह लो, कण्ठ मे समर्पित है। [**माला पहिनाते है, पहिनाते समय कण्ठ का स्पर्श**]

वासव ओह ! माला पहिनाने मे भी कला ! आर्य जयसेन कामदेव का कौशल भी सीखे हुए है।

जयसेन क्योकि तुम आज अभिसार की रति हो, महामाया हो !

वासव महामाया ! (**हँसती है**) किन्तु ये फूल तो इतने छोटे है ! देखिए, जूही के ये फूल—महा और लघु का विचित्र सयोग है। किन्तु देखिए, ये फूल इतने छोटे होते हुए भी अपने प्राणो मे कितनी मादक सुगन्धि लिये हुए है !

जयसेन सत्य है, तभी तो मैने जान-बूझकर यह माला बनाई।

वासव जान-बूझकर !

जयसेन हाँ, वासव ! तुम्हारे सुरभित कण्ठ मे पडकर जूही के ये पुष्प और भी कितने छोटे हो गये है।

वासव . साधु ! आर्य, साधु ! आप वास्तव मे सौन्दर्य के पारखी है। आज अभिसार मे मदयन्तिका साथ नही रहेगी ?

जयसेन उसका अभिमान तो देखो, वासव ! वह तुम्हारे बिना मेरे अभिसार मे भाग लेना चाहती है। मैने उसका तिरस्कार कर दिया।

वासव तिरस्कार कर दिया ? हाय ! उसी बेचारी ने तो उपगुप्त को मेरे कक्ष मे लाकर अपने एकाकी अभिसार की भूमिका रची थी और आपने उसका तिरस्कार कर दिया। जाने दीजिए, आर्य ! वह कला-पारखी आर्य जयसेन के तिरस्कार के योग्य भी नही है।

जयसेन · नही। मैं इसकी व्यवस्था करूँगा। लघु होकर महान् होने का दभ जीवन मे अनर्थ उत्पन्न कर सकता है।

वासव भूल जाइए, आर्य ! वह लघु है और आप इतने महान् हैं और यह चन्द्र भी महान् है जिसने अपनी चाँदनी से मेरे अभिसार को अमृत से नहला दिया है।

जयसेन (मुस्कराकर) तुम बाते बहुत अच्छी करती हो, वासव ! मैं भी एक बात कहूँ ? आकाश मे तो एकादशी का चन्द्र है, किन्तु मेरे समीप सोलह कलाओ से सम्पन्न पूर्णचन्द्र ! [दोनो की मधुर हँसी]

वासव प्रेम का पुरस्कार पाने वाली बाते कहते हो, आर्य ! तुम्हारे इस मधुर कण्ठ को माध्वीक सुरा का चषक उपहार मे दूँ ?

जयसेन मधुवन मे तो अनेक मधु-द्रव्यो के चषक तुम्हारे अधरो की प्रतीक्षा कर रहे है। यदि कष्ट न हो तो हम चले !

वासव ओह ! मै तो मधुर बातो मे ही उलझ गई थी। (पुकारकर) पूर्णिके !

पूर्णिका (नेपथ्य से) आई, स्वामिनी !

वासव अभिसार मे पूर्णिका मेरी सहचरी रहेगी। आपको कोई आपत्ति तो न होगी ?

जयसेन तुम्हारी इच्छा सर्वोपरि है, वासव !

[पूर्णिका का प्रवेश]

पूर्णिका आज्ञा, स्वामिनी !

वासव तू बाहर ही रह गई थी ?

पूर्णिका स्वामिनी ! आपके अभिसार की वस्तुएँ रथ पर सुसज्जित कर रही थी।

वासव और अपनी वस्तुएँ सुसज्जित कर ली ?

पूर्णिका मेरी वस्तुएँ कौन-सी है ! मेरी तो एकमात्र वस्तु आप है।

वासव मैं वस्तु हूँ ! [अट्टहास]

जयसेन बाहर सामन्त-कुमार और अन्य नगर-श्रेष्ठि प्रतीक्षा मे होगे। मैं गमन-तूर्य का आदेश दे रहा हूँ।

वासव जैसी आर्य की इच्छा !

जयसेन तुम मेरे साथ ही नीचे चलोगी, वासव ! मैं अभी आया। [प्रस्थान]

वासव पूर्णिके ! अभिसार मे मै और मेरी वीणा दोनो ही तेरे हाथो मे रहेगी। तू समझी ?

पूर्णिका समझती हूँ, देवि !

वासव माध्वीक सुरा के चषक से मेरे कण्ठ का सौभाग्य जगा दे।

पूर्णिका : जैसी आज्ञा।

वासव एक चषक आर्य जयसेन के लिए भी। वे आ रहे होगे। हम दोनो साथ ही साथ चलेगे।

[नेपथ्य मे—'जन-कल्याणी वासवदत्ता की जय !']

[तूर्य-नाद]

उपसहार

[तीस वर्ष के बाद]

स्थान : नगर-प्राचीर के बाहर
समय अर्द्धरात्रि

[भयानक सन्नाटा। बीच-बीच मे कुत्ते और सियारो के शब्द। कभी वायु जोर से चलकर वृक्षो को झकझोर देती है, जिससे निस्तब्धता और बढ जाती है। बीच-बीच मे दूर से आता हुआ बाँसुरी का मन्द स्वर। सियारो के शब्द के बाद कराहने की आवाज आती है। एक पेड़ के नीचे वृद्धा वासवदत्ता जर्जर-शरीर पड़ी है। उसके अ ग पर विषाक्त व्रण निकले हुए हैं और पीड़ा से वह कराह रही है। उसका समस्त शरीर काला पड़ गया है।]

वासव : **(सिसकी लेकर कराहते शब्दो मे)** आह ! दारुण पीडा है। अगो के भीतर ज्वाला ! भयानक विष की ज्वाला जल रही है। फोडो से सारा अग भर गया है। मैने कितने पाप किए है, प्रभु ! कितने पाप. आह ! आज मेरे समीप कोई नही है !.. मुझे नागरिको ने प्राचीर के बाहर लाकर डाल दिया है जिससे मेरा विष किसी को न लगे ! विष विष। तुम मे विष नही है, नागरिको ! तुम्हारी वाणी का विष मेरे विष से भयानक है ! भयानक. हलाहल से भी भयानक। **(बंसी की तान सुन पड़ती है)** और यह अमृत ! यह अमृत की वर्षा कौन कर रहा है ! .मैने भी अमृत की वर्षा की थी। मदयन्तिका मदयन्तिका की दुर्बल रागिनी पर बसी **(कराह भरी हँसी हँसकर)** बसी के स्वर मैं बजा रही हूँ...मै ही बजा रही हूँ। **(चौंककर)** ऐ, यह किसकी छाया है—पूर्णिके !.. तू वहाँ खडी क्या कर रही है? मेरे समीप आ ..**(जोर से कराहते हुए)** पूर्णिके ! **(शिथिल स्वर से)** कोई नही है। पेडो की झुकी हुई डाल है। यह पूर्णिका नही बन सकती नही बन सकती...मैंने तुझसे एक बार कहा था—कही मेरी कलाएँ घट जायँ, पूर्णिके ! अमावास्या हो जाय ! और आज अमावास्या हो गई, पूर्णिके ! अमावास्या घोर अमावास्या ! **(सिसकियाँ लेने लगती है)** वासवदत्ता अब कहाँ है, वासवदत्ता ! जन-कल्याणी वासवदत्ता ! उसकी मधुयामिनी...अभिसार। नही, नही। **(सुनते हुए)** ऐ, तूर्य का नाद सुन पडता है। . वह हुआ तूर्य-नाद। मेरे श्वेत-कौशेय का रथ .फूलो की मालाएँ .शीघ्र लाओ, जयसेन ! **(आदेश के स्वरो मे)** शीघ्र लाओ ! **(रुककर)** हाय ! मै किससे कह रही हूँ ! मेरे चारो ओर सूखी लताएँ झूल रही है। जर्जर वासवदत्ता के गले मे इन्हे ही डाल दो। **(जोर से चीखकर)** डाल दो...नही तो मर जाऊँगी। **(स्वर धीमा होता जाता है)** मर . जाऊँगी ..मर जाऊँगी।

मरने से पहले आचार्य उपगुप्त से क्षमा नही माँग सकी। भन्ते ! तुमने कहा था किरण जब अस्त हो जाती है तो शरीर पर श्याम रेखाएँ पड जाती है। हाँ, पड जाती है। देखो, मेरा शरीर कितना काला हो गया ! सोने की भाँति दमकता हुआ वासवदत्ता का शरीर जलती हुई लकडी की भाँति हो गया। देव ! इस अधजले शरीर को अब तुम्ही जला दो। आह ! कितनी पीडा है ! विलासी शरीर का अन्त . आज शृगालो के बीच मे... **(सिसकती है। पदचाप की ध्वनि)** मेरा रुदन सुनने के लिए कोई आ रहा है। जी-भर कर सुन लो—आज वासवदत्ता रुदन कर रही है ! **[सिसकी]**

[आचार्य उपगुप्त का प्रवेश]

उपगुप्त वासवदत्ता !

वासव **(स्वर सँभालते हुए)** कौन पुकारता है ? मुझे कोई नही पहिचानता ?

उपगुप्त मैं पहिचानता हूँ, देवि !

वासव देवि ? 'देवि' कहकर कौन पुकारता है ? परिहास न करो, नागरिक !

उपगुप्त : मैं उपगुप्त हूँ।

वासव आचार्य ! **(सिसककर रोने लगती है)** आचार्य ! आप कहाँ, प्रभु ! प्रभु ! आज आपकी वासवदत्ता को वृक्ष के नीचे.. वृक्ष के नीचे. **[सिसकती है।]**

उपगुप्त मेरी गोद मे अपना सिर रख लो, देवि ! मेरे कमडल से शीतल जल पी लो।

वासव आपकी शीतल वाणी से ही सब कष्ट दूर हो गये, प्रभु ! आज दासी ने आपको पा लिया है। अब वह अपने आचार्य को नही छोडेगी...नही छोडेगी।

उपगुप्त तुम्हे छोडकर नही जाऊँगा, देवि ! नागरिको से पता पाया कि तुम किसी वृक्ष के नीचे डाल दी गई हो। खोजते-खोजते तुम्हे यहाँ पाया।

वासव प्रभु ! देखो मैं क्या हो गई हूँ ! सारा शरीर ...

उपगुप्त ओह ! सारे शरीर पर फोडे उठ आये है। लाओ, इस शीतल चन्दन का लेप कर दूँ। तुम्हारी इस दशा की सूचना मुझे मिल गई थी।

वासव प्रभु ! वासवदत्ता पापिनी है। तुम दयामय हो, प्रभु ! तुम मेरे समीप आ गये . ..

उपगुप्त तुम्हारे अभिसार की रात मैं तुम्हारे समीप नही रुक सका था, देवि ! मैंने कहा था जिस दिन समय आयेगा, उस दिन मैं स्वय तुम्हारे पास पहुँच जाऊँगा।

वासव (करुण स्वर मे) और मेरे प्रभु आ गये। ओह, प्रभु ! तुम्हारे हाथ का स्पर्श चन्दन से भी अधिक शीतल है। अब मुझे अपने साथ ले चलो, प्रभु !

उपगुप्त : अवश्य ले चलूँगा। मेरे साथ कहो

[**वासवदत्ता कराहते स्वर से दुहराती है।**]

बुद्ध शरण गच्छामि।

धम्म शरण गच्छामि।

सघ शरण गच्छामि।

[**धीरे-धीरे परदा गिरता है।**]

8

स्वर्ण-श्री

पात्र-परिचय

सम्राट् वृहद्रथ—पाटलिपुत्र के अंतिम मौर्य सम्राट्
पुष्यमित्र—सम्राट् वृहद्रथ के सेनापति और पुरोहित
नागदत्त, स्वामिदत्त—पुष्यमित्र की सेना मे गुल्मपति
तेलियस—सम्राट् वृहद्रथ का मित्र, ग्रीक नायक
धारिणी—स्वामिदत्त की बहिन
मजुगोपा—सम्राट् की ताबूल-वाहिनी
विलोमा—सम्राट् की अगरक्षिका

काल—ई० पू० 185
स्थान—पाटलिपुत्र मे सेना-शिविर
समय—दिन के लगभग दस बजे

स्वर्ण-श्री

[तूर्य की तीन बार ध्वनि होती है। दूर से आता हुआ जनता का सम्मिलित स्वर। कहीं-कही बीच मे भारी स्वर से आदेश सुन पडता है—'सा व धा न' और उसके बाद ही किसी नारी का स्वर 'नही'.. 'नही'. .'नही'। तीसरी बार का ..'नही'.. एक चीत्कार के रूप मे होता है। जन-समूह का सम्मिलित स्वर—'यह नही हो सकता'.. 'यह नही हो सकता'...'यह नही होगा'...'हम अन्याय नही सहेगे'. 'हम विद्रोह करेंगे'...'हम विद्रोह करेंगे' आदि धीरे-धीरे धीमा पड जाता है। उसके बाद ही नागदत्त भागता हुआ आता है और स्वामिदत्त जो तलवार लिए हुए शिविर के द्वार पर पहरा दे रहा है, अचानक रुक जाता है। नागदत्त भागकर आने के कारण हाँप रहा है। वह आते ही तेजी से स्वामिदत्त को सम्बोधित करता है]

नागदत्त सा व धा न ! (साँसो की गति तीव्र) स्वामिदत्त ! जनता ने...जनता ने विद्रोह कर दिया है.. वह आँधी की तरह भयानक हो उठी है।

स्वामिदत्त आँधी लोहे की दीवाल नही तोड सकती, नागदत्त !

नागदत्त लेकिन जनता की शक्ति ने ज्वालामुखी का रूप ले लिया है। राजधर्म का आदेश है आदेश है कि.. . .

स्वामिदत्त उसे दुहराने की आवश्यकता नही है।

नागदत्त किन्तु जनता उत्तेजित हो उठी है। ज्वाला की जिह्वाओ की तरह वह बार-बार उठती है। टेढी-तिरछी होकर वह सब दिशाओ को समेटना चाहती है और प्रत्येक वस्तु को वह श्मशान की भस्म बनाकर छोड देना चाहती है।

स्वामिदत्त तब उसे बुझाने के लिए राज्य-शक्ति प्रलय-घन की तरह तडप उठेगी।

नागदत्त : प्रलय-घन भी उसे नही बुझा सकेगा।

स्वामिदत्त तुम सैनिक हो, नागदत्त ! तुम्हे राज्य-शक्ति की आलोचना का अधिकार नही है।

नागदत्त स्वामिदत्त ! राज्य-धर्म की उचित आलोचना का अधिकार प्रजा के प्रत्येक व्यक्ति को है। यदि राज्य-धर्म की उचित आलोचना न हो तो वह व्यवस्थित नही हो सकता। प्रजा का सुख ही राजधर्म की कसौटी है।

स्वामिदत्त तुम प्रजा का पक्ष ले रहे हो, नागदत्त ! प्रजा राजद्रोह कर रही है, तुम भी राजद्रोह के अपराधी हो।

नागदत्त किन्तु स्वामिदत्त ! मै कहता हूँ कि राजद्रोह अपराध नही है। यदि राजाज्ञा निरकुशता के महायान पर बैठकर आगे बढना चाहती है तो......

स्वामिदत्त तुम मर्यादा से आगे बढ रहे हो, नागदत्त ! तुम्हे सेनापति के सामने उत्तर देना होगा।

नागदत्त मैं अपने प्राणो से उत्तर देने के लिए प्रस्तुत हूँ, स्वामिदत्त ! मै सैनिक हूँ और उसी को सैनिक समझता हूँ जो प्रश्न का उत्तर प्राणो से दे सके।

स्वामिदत्त तुम्हारे इस निर्णय की सूचना सेनापति को देनी होगी।

नागदत्त तुम्हारी सूचना से पहले ही मेरे निर्णय की सूचना सेनापति की सेवा मे पहुँच चुकी है। किन्तु स्वामिदत्त, तुम भी सैनिक हो। मै तुमसे यह पूछना चाहता हूँ कि क्या सैनिक मानव नही है ?

स्वामिदत्त नही। वह केवल एक यन्त्र है जिसकी गति का निर्णय उसके नायक को है। सैनिक जीवन और मृत्यु मे कोई अन्तर नही समझ सकता। वह केवल इसीलिए जीवित है कि वह नायक की आज्ञा से मृत्यु प्राप्त कर सके। इससे अधिक सैनिक का कोई अधिकार नही है।

नागदत्त ऐसा सैनिक यदि स्वधर्म का सैनिक है तो उससे बढकर कोई न्याय नही है। किन्तु यदि वह सैनिक अधर्म का है तो उससे बढकर कोई अन्याय नही है। मै स्वधर्म का सैनिक हूँ, अधर्म का नही।

स्वामिदत्त यह सम्राट् की नीति से विद्रोह है और इस विद्रोह का दण्ड तुम्हे अवश्य मिलेगा।

नागदत्त उसकी मुझे चिन्ता नही है, स्वामिदत्त ! किन्तु तथागत का आदेश है कि प्राणि-मात्र पर दया की जाय। मै तथागत पर श्रद्धा रखता हूँ, इसलिए सैनिक होकर भी मैं मानव-धर्म मे विश्वास रखता हूँ और प्राणि-मात्र पर दया करना चाहता हूँ।

स्वामिदत्त : पर न्यायाधिकरण तुम पर दया नही करेगा।

नागदत्त न करे। किन्तु मैं सैनिक के स्वधर्म को महान् समझता हूँ। इसीलिए आज एक घटना से बहुत अधिक अशान्त हो गया हूँ।

स्वामिदत्त : कौन-सी घटना ?

नागदत्त सुन सकोगे उसे ? सम्राट् की आज्ञा से एक निरपराध नारी आजीवन कारावास के दण्ड से दण्डित होने जा रही है।

स्वामिदत्त नारी ने दण्डित होने का कार्य किया होगा। न्यायाधिकरण पुरुष और नारी मे भेद नही करेगा।

नागदत्त किन्तु नारी ने दण्डित होने का कोई कार्य नही किया।

स्वामिदत्त इसका निर्णय कौन करेगा ?

नागदत्त · जनता की सम्मिलित कठ-ध्वनि। नारी का केवल यही अपराध है कि वह सुन्दरी है।

स्वामिदत्त इसके अतिरिक्त ?

नागदत्त इसके अतिरिक्त यही कि वह विदेशियो द्वारा सत्रस्त हुई और उसने अपनी रक्षा के लिए राज्य से सहायता माँगी।

स्वामिदत्त : सहायता माँगी ?

नागदत्त हाँ, सहायता माँगी। किन्तु सम्राट् की सेना केवल वैदिक धर्म कुचलने के लिए है, नारी की रक्षा करने के लिए नही। इसलिए जनता ने विद्रोह किया है। वह सेनापति पुष्यमित्र के निवास की ओर गई है।

स्वामिदत्त और वह नारी कहाँ है ?

नागदत्त · मेरे सरक्षण मे।

स्वामिदत्त उसका नाम ?

नागदत्त धारिणी।

स्वामिदत्त (**चौंककर**) धारिणी ?

नागदत्त . हाँ, धारिणी। चौक क्यो उठे ?

स्वामिदत्त धारिणी मेरी बहिन का नाम है, नागदत्त !

नागदत्त तो इस नाम की अन्य स्त्रियाँ भी तो हो सकती है।

स्वामिदत्त : तुम. तुम उस स्त्री को दिखला सकोगे ?

नागदत्त क्यो ? सैनिक तो यन्त्र की भाँति है, जिसकी गति का निर्णय उसके नायक को है, जैसा तुम कह चुके हो अभी।

स्वामिदत्त नागदत्त ! मै उस स्त्री को देखना चाहता हूँ।

नागदत्त क्यो, सैनिको के पास आँखे भी होती है ?

स्वामिदत्त नागदत्त, तुम मुझ पर व्यग्य कर रहे हो। मै उस स्त्री को देखना चाहता हूँ।

नागदत्त फिर तुम न्यायाधिकरण का साथ दोगे या धारिणी का ?

स्वामिदत्त उस स्त्री को देखकर निर्णय दूँगा।

नागदत्त तब तुम भी सैनिको के निर्णय मे विश्वास रखते हो ? ठीक है, मै वह स्त्री तुम्हे दिखलाऊँगा। (**पुकारकर**) धनजय !

[**धनजय का प्रवेश**]

धनंजय आदेश !

नागदत्त धारिणी को उपस्थित करो !

धनजय जो आज्ञा। [**प्रस्थान**]

नागदत्त स्वामिदत्त ! प्रजा का असन्तोष केवल इस बात पर है कि सम्राट् बृहद्रथ ने अपना अभिषेक होने पर यह घोषणा की थी कि उनके शासन का सबसे बडा आदर्श यह होगा कि विदेशी दस्युओ से प्रजा की रक्षा हो, किन्तु सम्राट् ने

अपनी आँखो के सामने देखा है कि धारिणी का अपहरण हुआ।

स्वामिदत्त अपनी आँखो के सामने ?

नागदत्त हाँ, अपनी आँखो के सामने। वे इन्द्रगज पर बैठकर वन-विहार के लिए जा रहे थे और धारिणी वन से यज्ञ के लिए समिधि ला रही थी। उसी समय तेलियस नामक यवन ने उसका अपहरण किया।

[**धनंजय का प्रवेश**]

धनंजय धारिणी उपस्थित है, गुल्मपति !

नागदत्त : उसे सामने लाओ। नही, उसे यहाँ भेजकर अपना स्थान ग्रहण करो।

धनंजय जो आज्ञा। [**प्रस्थान**]

नागदत्त धारिणी आ गई। वह तुम्हारी बहिन न हो, यही मै चाहता हूँ।

[**धारिणी का प्रवेश**]

धारिणी (**चीखकर**) स्वामिदत्त !

स्वामिदत्त (**सहमकर**) बहिन !

धारिणी (**सिसकियाँ लेती हुई**) बहिन मत कहो मुझे। धारिणी तुम्हारी बहिन नही है, स्वामिदत्त ! तुम्हारे रहते उसका अपहरण हुआ है। [**घुटनो के बल गिर पडती है।**]

स्वामिदत्त तुम्हारा अपहरण हुआ बहिन ! यह कैसे हुआ ? उठो !

धारिणी : (**सिसकियाँ लेती हुई**) मेरा भाग्य ही जब धूल मे मिल गया, तब उठकर क्या करूँगी। मैं लाछित हुई। मैंने न्याय माँगा, पर न्याय के स्थान पर मुझे दण्ड मिला। मैंने न्याय क्यो माँगा ? मैं कलकित क्यो नही हुई ? पाटलिपुत्र की नारी अपनी पवित्रता की रक्षा करने पर आज दण्डित हो रही है ! [**सिसकियाँ**]

स्वामिदत्त मै लज्जित हूँ, बहिन ! मैं नही जानता कि मुझे क्या करना चाहिए। तुम्हारे आँसुओ से मुझे पीडा हो रही है।

धारिणी मेरे जीवन मे आँसुओ के सिवाय और रह क्या गया ? इन्ही आँसुओ मे अपनी आयु डुबाती रहूँगी। न्याय की भीख मे मुझे कारावास जो मिला है।

स्वामिदत्त न्याय की भीख मे कारावास ?

धारिणी हाँ, कारावास। किन्तु मुझे कारावास का दण्ड नही चाहिए। मुझे मृत्यु का दण्ड चाहिए। मैं मृत्यु का दण्ड चाहती हूँ। मेरे अपराध का दण्ड

स्वामिदत्त तुमने कोई अपराध नही किया, बहिन ! अपराध तो मैंने किया है कि सैनिक होकर भी मै तुम्हे इस अवस्था मे देख रहा हूँ और रक्षा करने मे असमर्थ हूँ।

धारिणी अब नारियो की रक्षा करना सैनिका का धर्म नही रह गया। सैनिक तो अब नारियो को लाछित करने के लिए रखे गये है। मैं यह लाछन बार-बार सहन नही करना चाहती, इसलिए मृत्यु का दण्ड चाहती हूँ। भाई मुझ, पर यह कृपा करो। मै हाथ जोडकर यही भिक्षा माँगती हूँ।

नागदत्त सब सुन चुके, स्वामिदत्त ! यह भिक्षा अपनी बहिन को दे दो न ?
स्वामिदत्त मैं लज्जित हूँ, बहिन ! मेरी प्रार्थना है कि तुम शान्त हो जाओ।
नागदत्त मै भी तुम्हारा एक भाई हूँ, बहिन ! मै तुम्हारे लाछन का प्रतिकार करूँगा। तुम्हारी सब तरह से रक्षा करूँगा। तुम मुझे अपना विवरण दो।
धारिणी : अपनी कलक-कथा कितनी बार दुहराऊँ ? मै महाकान्तार से लौट रही थी। उसी समय तेलियस नामक यवन ने मुझे पीछे से पकडना चाहा।
स्वामिदत्त . यवन तेलियस ?
धारिणी : हाँ, यही नाम मैने सुना। उस समय सम्राट् इन्द्रगज पर बैठकर, वन-विहार के लिए जा रहे थे। मैने पुकारकर कहा—'सम्राट् ! मेरी रक्षा कीजिए।' और सम्राट् ने सैनिको को आज्ञा नही दी कि वे मेरी रक्षा करे।
नागदत्त सम्राट् ने रक्षा करने की आज्ञा नही दी ?
धारिणी : नही।
स्वामिदत्त . तेलियस सम्राट् का विश्वासपात्र नायक है।
नागदत्त : फिर तुम्हारी रक्षा कैसे हुई, देवी !
धारिणी मेरे क्रन्दन से महाकान्तार के कुछ श्रमिक दौड पडे। उन्होने तेलियस को घेर लिया और मुझे बच निकलने का अवसर दे दिया।
नागदत्त सम्राट् ने कोई प्रतिरोध नही किया ?
धारिणी वे तत्क्षण लौट पडे और उन्होने दण्डनायक को आज्ञा दी कि तेलियस को जो कष्ट हुआ है उसके लिए उसे पुरस्कार दिया जावे और श्रमिको को दण्ड।
नागदत्त और तुम्हारे सम्बन्ध मे, देवी !
धारिणी मुझे आजीवन कारावास।
स्वामिदत्त क्यो ?
धारिणी . इसलिए कि मैने तेलियस के समक्ष आत्म-समर्पण नही किया।
नागदत्त पाटलिपुत्र मे यवनो के समक्ष नारियो का आत्म-समर्पण क्या न्याय है, स्वामिदत्त !

[स्वामिदत्त मौन है।]

नागदत्त : तुम मौन क्यो हो ? उत्तर दो।
धारिणी : सारी प्रजा भी पुकार-पुकारकर कह रही है कि यह न्याय नही है। इसीलिए वह सगठित होकर सेनापति पुष्यमित्र के समक्ष निवेदन करने गई है।
स्वामिदत्त . और हमारी माँ कहाँ है ?
धारिणी **(फूटकर)** उन्होने इस राजाज्ञा को सुनकर नगर के सिहद्वारे से अपना सिर टकरा लिया और उनके सिर के रक्त की धार बह निकली है। वे चीत्कार कर 'नही', 'नही' कहती हुई जनता का सहारा लिए न्याय के लिए गई है।
स्वामिदत्त शान्त होओ, बहिन !
धारिणी यदि मुझे प्राणदण्ड दिया जाता तो मै शान्त रहती, किन्तु जीवित रहकर

मैं अपना कलक जीवित नही रखना चाहती ।

नागदत्त मै बहुत दुखी हूँ, देवी !

धारिणी **(बिलखकर)** आज पाटलिपुत्र की नारी अपनी रक्षा नही कर सकती । यदि वह सम्राट् से अपनी रक्षा की प्रार्थना करती है तो सम्राट् अपनी राजनीति मे नारी को ही दण्डित करना चाहते है । मै जीवित नही रहूँगी ।

स्वामिदत्त : (चीखकर) बहिन !

धारिणी **(सिसकते हुए)** भाई स्वामिदत्त, मैं तुमसे भिक्षा माँगती हूँ कि तुम अपनी तलवार से मेरा सिर काट दो । मेरे रक्त से तुम मेरा कलक धो दो ।

नागदत्त स्वामिदत्त ! स्वीकार करो अपनी बहिन की प्रार्थना । तुम्हारी तलवार राजधर्म का पालन करना जानती है ।

स्वामिदत्त **(स्तभित होकर)** राजधर्म का पालन !

नागदत्त हाँ, राजधर्म का पालन । जिस सम्राट् को नारी की रक्षा मे नारी के दण्ड की व्यवस्था करनी पडती हे, उस सम्राट् को नारी की मृत्यु से प्रसन्नता ही होगी। और जब उसकी मृत्यु उसके भाई के हाथो हो, तुम पुरस्कार के अधिकारी होगे ।

स्वामिदत्त बहिन, मै बार-बार लज्जित हूँ । तुम्हारी यह दशा देखकर मैं अपनी राज-सेवा को कलक का अभिशाप समझता हूँ ।

धारिणी पर क्या तुम अपनी बहिन को जीवन के अभिशाप से तडपती हुई देखोगे ? यवन ने उसके अपहरण की चेष्टा की । उसका स्पर्श किया । ओह ! उसका स्पर्श अभी तक शर्प-दशन की भाँति मेरे शरीर मे ज्वाला की लपटे उठा रहा है । उससे मेरा सारा हृदय जल रहा है । मै जीवित नही रहना चाहती । भाई ! मै जीवित नही रहना चाहती । मृत्यु की यन्त्रणा भी उस स्पर्श से हलकी होगी । मेरी रक्षा करो, मेरी रक्षा करो ! **[सिसकियाँ]**

नागदत्त किन्तु तुम पवित्र हो, बहिन ! मृतक शरीर गगा का स्पर्श करते है, पर गगा अपवित्र नही होती ।

स्वामिदत्त **(क्षुब्ध होकर)** नागदत्त ! मेरी बहिन को यहाँ से ले जाओ । मै उसे इस रूप मे नही देख सकता ।

नागदत्त **(पुकारकर)** धनजय !

[धनजय का प्रवेश]

धनजय आदेश !

नागदत्त आर्या धारिणी को यहाँ से ले जाओ ।

धनजय जो आज्ञा । **(धारिणी से)** देवी ! आदेश का पालन करे ।

धारिणी **(बिलखकर)** स्वामिदत्त ! स्वामिदत्त ! यदि तुम अपनी तलवार से मेरा मस्तक नही काट सकते तो इस सैनिक को आज्ञा दो कि यह कार्य वह पूरा कर दे । मै जीवित नही रहना चाहती । मै जीवित नही रहूँगी . । नही रहूँगी ।

[धनंजय धारिणी को ले जाता है। नेपथ्य मे क्षीण होता हुआ स्वर—"मै जीवित नहीं रहूँगी।"]

[एक क्षण स्तब्धता]

नागदत्त . क्या सोच रहे हो, स्वामिदत्त ! तुम राजाज्ञा का साथ दोगे या अपनी वहिन का ?

स्वामिदत्त (चीखकर) मेरी राजभक्ति मे आग लग रही है, नागदत्त ! उससे मेरा रोम-रोम जल रहा है।

नागदत्त यह पहला अवसर नही है, स्वामिदत्त, जब नारी लाछित हुई है। इसके पहले भी न जाने कितनी स्त्रियो ने आत्महत्याएँ की है, न जाने कितनी स्त्रियो का यवनो द्वारा अपहरण हुआ है, और राजदण्ड अपने स्वार्थ की छाया मे ऊँघता रहा है। आज तुमने अपनी आँखो के सामने अपनी वहिन को लाछित होते देखा है। तुम अधिकतर पाचाल मे रहे। इस कारण इन बातो से अधिक परिचित नही हो। पर मै तुमसे यही कहना चाहता हूँ कि आज पाटलिपुत्र के सैनिक राजसिंहासन के नीचे गढे हुए सिहो की तरह निर्जीव और शोभा की वस्तु ही रह गये है। सम्राट् की आज्ञा धूमकेतु की भाँति समय-कुसमय अपनी भयानक लम्बाई मे......

[नेपथ्य मे तीव्र तुमुल। दूर "पुष्यमित्र की जय" का घोष]

नागदत्त (स्वगत) क्या आर्य पुष्यमित्र यहाँ आ रहे है ? (स्वामिदत्त से) हाँ, आर्य पुष्यमित्र ही आ रहे है। सम्भवत वे शिविर देखने के लिए आये हो।

स्वामिदत्त उनके सामने मैं इस घटना के सम्बन्ध मे निवेदन करना चाहूँगा।

नागदत्त . क्या तुम समझते हो कि उन्हे इस घटना के सम्बन्ध मे सूचना न मिली होगी ? वे सेनापति है और राजपुरोहित भी। पाटलिपुत्र मे कोई ऐसी घटना नही होती जिसकी सूचना उन तक नही पहुँचती। और हाँ, महाकान्तार के लोग तो उनकी सेवा मे पहुँच ही गये होगे।

[नेपथ्य मे पुष्यमित्र का स्वर]

पुष्यमित्र यह नागदत्त और स्वामिदत्त का शिविर है ?

उत्तर हाँ, आचार्य !

पुष्यमित्र वे अपने कर्त्तव्य पर नियत है ?

उत्तर हाँ, आचार्य !

[शख की ध्वनि होती है। आचार्य पुष्यमित्र का प्रवेश]

नागदत्त आर्य को प्रणाम !

स्वामिदत्त आर्य को प्रणाम !

पुष्यमित्र गुल्मपति ! सावधान हो ?

नागदत्त आर्य, सावधान हूँ !

पुष्यमित्र गुल्मपति स्वामिदत्त ! तुम्हारे परिवार के सभी व्यक्ति कुशलता से है ?

स्वामिदत्त (व्यथित स्वर मे) आर्य ! मेरा निवेदन है . मेरा निवेदन है.

पुष्यमित्र सैनिको का यह स्वर नही है, स्वामिदत्त ! सूर्य की किरण की भाँति उनकी वाणी स्पष्ट और सीधी होनी चाहिए। सैनिको की वाणी कवि की वाणी नही है, वह वैयाकरण की वाणी है जो नियमो से शासित होकर स्पष्ट कठ से निकलना जानती है।

स्वामिदत्त क्षमा हो, आर्य !

पुष्यमित्र गुल्मपति स्वामिदत्त ! महाकान्तार कहाँ है, जानते हो ?

स्वामिदत्त पाटलिपुत्र के दक्षिण मे, आर्य !

पुष्यमित्र दक्षिण नही, आग्नेय कोण मे, स्वामिदत्त !

स्वामिदत्त : क्षमा हो, आर्य ! मै अधिक दिनो तक पाचाल मे रहा हूँ।

पुष्यमित्र इसीलिए क्षम्य हो। महाकान्तार दक्षिण मे नही, आग्नेय मे है।

स्वामिदत्त . दक्षिण और पूर्व के मध्य कोण मे।

पुष्यमित्र और आग्नेय मे अग्नि की ज्वाला धधक उठी है, जानते हो ?

स्वामिदत्त जानता हूँ, आर्य !

पुष्यमित्र गुल्मपति स्वामिदत्त ! तुम्हे ही इस आग की ज्वाला शान्त करनी है।

स्वामिदत्त : यह आग की ज्वाला कान्तार के साथ-साथ मेरे परिवार .

पुष्यमित्र भावुक मत बनो, स्वामिदत्त ! तुम सैनिक हो। राजाज्ञा वज्र की तरह है। जिस दिशा मे गिरना चाहती है, उस दिशा मे गिरती है। कोई शक्ति उसकी दिशा और गति मे परिवर्तन नही कर सकती।

स्वामिदत्त सत्य है, आर्य !

पुष्यमित्र और महाकान्तार की जनता को दण्डित करने की व्यवस्था तुम्हे ही करनी होगी।

स्वामिदत्त जो आज्ञा, आर्य !

पुष्यमित्र · और एक अपमानिता नारी भी दण्डित हुई है।

स्वामिदत्त (तेजी से) धारिणी !

पुष्यमित्र : तुम्हारी वहिन ! उसके आजीवन कारावास मे उसे जो यन्त्रणाएँ मिलनी है उनके निर्धारण के लिए सम्राट् की ओर से तुम नियुक्त हुए हो।

स्वामिदत्त (विकल होकर) आर्य !

पुष्यमित्र यह राजाज्ञा है। सम्राट् वृहद्रथ की आज्ञा शस्त्र की वह धार है जिस पर चलने का साहस किसी मे नही है।

स्वामिदत्त आर्य ! एक प्रार्थना है।

पुष्यमित्र इस सबध मे कोई प्रार्थना स्वीकार नही होगी।

स्वामिदत्त मैं अपने सबध मे प्रार्थना करना चाहता हूँ, आर्य !

पुष्यमित्र निवेदन करो !

स्वामिदत्त मै अपने पद-त्याग की प्रार्थना करना चाहता हूँ।

पुष्यमित्र सुनी जायगी। किन्तु तुम्हारी प्रार्थना के पूर्व ही राजाज्ञा हो चुकी है। राजाज्ञा की पूर्ति के अनन्तर ही तुम मुक्त किए जा सकते हो।

स्वामिदत्त मेरी बहन को जो यन्त्रणाएँ दी जाने को है, आर्य, उनके. उनके लिए राजाज्ञा मे कुछ सशोधन .

पुष्यमित्र सावधान, स्वामिदत्त ! सीमा से आगे बढने का अधिकार किसी सैनिक को नही है। (**नागदत्त से**) नागदत्त ! तुम इस बात का ध्यान रखोगे कि स्वामिदत्त आत्महत्या नही करेगे।

नागदत्त . जो आज्ञा, आर्य !

पुष्यमित्र मै यह भी स्पष्ट कर देना चाहता हूँ कि यदि स्वामिदत्त ने आत्महत्या का प्रयत्न किया तो वह उसकी बहिन धारिणी के भविष्य जीवन के लिए और भी यत्रणाकारक सिद्ध होगा। इस बात का ध्यान स्वामिदत्त को रखना चाहिए। और हाँ, तुम्हे इस बात की सूचना है कि सम्राट् थोडी ही देर मे सैन्य-निरीक्षण करेगे ?

नागदत्त इस बात की सूचना बहुत पहले से घोषित कर दी गई है, आर्य !

पुष्यमित्र सभी गुल्मो के सैनिको की उपस्थिति आवश्यक होगी, नागदत्त ! जो सैनिक अनुपस्थित होगा उसके दड की व्यवस्था होगी।

नागदत्त जो आज्ञा, आर्य !

पुष्यमित्र . आर्य ! आज सम्राट् की इच्छानुसार एक विशेष बात होगी। सम्राट् चाहते है कि मेरी धनुर्विद्या का कौशल भी मेरे सैनिक देखे।

नागदत्त आपकी धनुर्विद्या तो अद्वितीय है, आर्य ! आपका कौशल देखकर सैनिक कृतार्थ हो जावेगे।

पुष्यमित्र यह सुनकर मै प्रसन्न हूँ। यह मेरे सैनिको का मेरे प्रति स्नेह है।

नागदत्त . नही, आर्य ! ये आपके गुण है। प्रजा का असतोष आपने दूर किया है। जन-सपत्ति की सुरक्षा आपके द्वारा हुई है। बाहरी शत्रु का भय आपने दूर किया है और सेना का वेतन आपने अपने कोष से दिया है। पिता भी अपने पुत्र का वैसा ध्यान नही रखता जैसा आपने रखा है।

पुष्यमित्र . यह सेनापति पुष्यमित्र का कर्त्तव्य है।

नागदत्त समस्त सेना का आप पर पूर्ण विश्वास है, आर्य !

[**धनजय प्रवेश करता है और पुष्यमित्र को प्रणाम करता है।**]

धनंजय आर्य की सेवा मे प्रणाम स्वीकार हो !

पुष्यमित्र कौन, धनजय ! क्या समाचार है ?

धनजय आर्य ! मजुगोपा सेवा मे उपस्थित होने की आज्ञा चाहती है।

पुष्यमित्र (**सोचते हुए**) मजुगोपा ! सम्राट् ताबूल-वाहिनी ! उसकी गति सर्वत्र है। आने की आज्ञा सुनाओ !

धनजय . जो आज्ञा !

पुष्यमित्र स्वामिदत्त ! मै देखता हूँ कि राजाज्ञा ने तुम्हे मलीन कर दिया है, मै अपने सैनिको की निर्बलता से लज्जित हूँ।

स्वामिदत्त आर्य ! मै क्षमा चाहता हूँ।

पुष्यमित्र सैनिक की क्रियाशीलता सागर की वह तरङ्ग है जो सेनापति की इच्छा-वायु का सकेत पाकर आकाश के हृदय मे समा जाती है और दूसरे क्षण पृथ्वी पर गिरते हुए भी दिशाओ को अपने सगीत से निनादित कर देती है। स्वामिदत्त ! तुम्हे भी ऐसी शक्ति का परिचय देना है।

स्वामिदत्त मै इससे अधिक शक्ति का परिचय देना चाहता हूँ, आर्य !

[धनजय का पुन प्रवेश]

धनंजय **(प्रणाम करता हुआ)** आर्य की सेवा मे प्रणाम ! मजुगोपा उपस्थित है, आर्य !

पुष्यमित्र उपस्थित हो !

नागदत्त मजुगोपा का इस स्थान पर आना रहस्यमय है, आर्य !

पुष्यमित्र मैं एकात चाहूँगा, नागदत्त ! तुम स्वामिदत्त के साथ बाहरी कक्ष मे विश्राम लो।

नागदत्त जो आज्ञा !

पुष्यमित्र और सुनो ! स्वामिदत्त की रक्षा हो।

नागदत्त जो आज्ञा !

पुष्यमित्र स्वामिदत्त ! अपने विवेक से काम लो। तुम्हारा पुष्यमित्र पर विश्वास हो।

स्वामिदत्त जो आज्ञा !

पुष्यमित्र अब तुम दोनो शिविर के बाहरी द्वार पर स्थान ग्रहण करो।

नागदत्त प्रणाम, आर्य !

स्वामिदत्त प्रणाम, आर्य !

पुष्यमित्र पाटलिपुत्र के सच्चे सैनिक बनो।

[नागदत्त और स्वामिदत्त का प्रस्थान]

पुष्यमित्र मजुगोपा का इस स्थान और इस समय पर आना भविष्य की भूमिका है भविष्य की...भूमिका। **[सोचते हुए टहलते हैं।]**

[मंजुगोपा का प्रवेश]

मजुगोपा आर्य की सेवा मे मजुगोपा का प्रणाम स्वीकार हो।

पुष्यमित्र सम्राट् की कृपापात्री बनो।

मजुगोपा आर्य ! सम्राट् ने एक विशेष इच्छा प्रकट की है। उसकी पूर्ति की आशा से मैं आपकी सेवा मे उपस्थित हुई हूँ।

पुष्यमित्र सम्राट् की इच्छा मेरा गौरव है, मजुगोपा !

मजुगोपा आर्य ! सम्राट् की इच्छा यह है कि आज आपकी धनुर्विद्या का कौशल इस

प्रकार हो कि सम्राट् के परम मित्र तेलियस भी प्रसन्न हो ।

पुष्यमित्र मै इसका पूर्ण प्रयत्न करूँगा, मजुगोपा, कि सम्राट् और उनके परम-मित्र तेलियस जैसी धनुर्विद्या की आशा मुझसे करते है उससे भी श्रेष्ठ धनुर्विद्या का प्रदर्शन मै उनके समक्ष कर सकूँ ।

मजुगोपा आर्य ! सम्राट् जानना चाहते है कि आप कैसी धनुर्विद्या का प्रदर्शन करेगे ।

पुष्यमित्र यह सम्राट् की इच्छा पर निर्भर है ।

मंजुगोपा आर्य ! क्षमा करे । सम्राट् कुछ सकेत चाहते है ।

पुष्यमित्र तो उनसे निवेदन करो, देवि, कि मै शिविर-भूमि मे लक्ष्य-केन्द्र पर चारो दिशाओ मे चार काष्ठ-दड गाड दूंगा, जिनके ऊपरे सिरे सुलगते हो । मेरे बाण की गति इतनी तीव्र होगी कि प्रत्येक बाण के वायु-वेग से प्रत्येक दिशा के सुलगते काष्ठ-दडो से ज्वालाएँ निकलने लगे और अन्त मे चारो ज्वालाएँ मिल कर एक हो जावे ।

मंजुगोपा . यह कौशल सराहनीय है, आर्य ! बाण-विद्या आपको पाकर कृतार्थ हुई है ।

पुष्यमित्र मजुगोपे ! सम्राट् की प्रशसा के लिए शब्द शेष रहे, इसका ध्यान रहे ।

मजुगोपा सेनापति होकर भो आप जनता के हृदय के सम्राट् है । पाटलिपुत्र मे ऐसा कोई सेनापति नही हुआ । सम्राट् ने एक इच्छा और प्रकट की है, आर्य !

पुष्यमित्र मै सुनने का अभिलाषी हूँ ।

मजुगोपा : उसे स्पष्ट करने मे मुझे लज्जा और ग्लानि हो रही है ।

पुष्यमित्र मजुगोपे ! यह सम्राट् की इच्छा का अपमान है । उनकी प्रत्येक इच्छा स्पष्ट कठ से कही जाने की शक्ति रखती है । लज्जा और ग्लानि के बादल से उनकी इच्छा की विद्युत् छिप नही सकती । सम्राट् की आज्ञा स्पष्ट कहो ।

मंजुगोपा आर्य ! क्षमा करे । सम्राट् ने इच्छा प्रकट की है कि इस अवसर पर उनके परम-मित्र तेलियस का मनोरजन भी होना चाहिए ।

पुष्यमित्र क्या मेरी धनुर्विद्या उनका यथेष्ट मनोरजन न कर सकेगी ?

मंजुगोपा उससे तो अनिर्वचनीय मनोरजन होगा ही, किन्तु नायक तेलियस इसके अतिरिक्त भी मनोरजन चाहते है ।

पुष्यमित्र किस प्रकार का ?

मजुगोपा वे नृत्य देखना चाहते है ।

पुष्यमित्र किसका ?

मजुगोपा धारिणी का ।

पुष्यमित्र धारिणी का ? वह धारिणी जिसका नायक तेलियस ने अपहरण करना चाहा था ?

मजुगोपा किन्तु नही कर सका । उनका कथन है कि आर्य पुष्यमित्र के सकेत से कुछ श्रमिको ने बीच मे बाधा डाल दी ।

पुष्यमित्र मेरे सकेत से ?

मजुगोपा हाँ, आर्य ! क्षमा हो।

पुष्यमित्र नायक तेलियस सम्राट् के परम-मित्र है। वे सब कुछ कह सकते है। उनका अधिकार है कि वे अपनी वाणी का प्रयोग चाहे जिस प्रकार से करे।

मजुगोपा जनता भी ऐसा सोचती है, आर्य !

पुष्यमित्र सम्राट् की वन-यात्रा के कारण मेरा शिविर महाकान्तार मे रहना आवश्यक था। यदि मेरे शिविर के समीप श्रमिको ने अपहरण मे बाधा डाली तो नायक तेलियस को मेरे सकेत की सभावना मे विश्वास हो सकता है, किन्तु सम्राट् से निवेदन करने से पूर्व नायक तेलियस को शासन-व्यवस्था के अनुसार सेनापति से उत्तर माँगना चाहिए और सेनापति पुष्यमित्र उसका उत्तर देता।

मजुगोपा नायक तेलियस सम्राट् के मित्र है और सम्राट् अपने मित्र की इच्छा का बडा आदर करते हैं। व्यवस्था के प्रतिकूल भी सम्राट् नायक के कथन पर ध्यान देगे।

पुष्यमित्र यह सम्राट् की इच्छा।

मजुगोपा फिर, आर्य ! धारिणी के नृत्य की व्यवस्था हो सकेगी ?

पुष्यमित्र अवश्य होगी। सम्राट् से निवेदन करो कि अपमानित होने पर भी धारिणी नायक तेलियस के मनोरजन के लिए अवश्य नृत्य करेगी, किन्तु उसका नृत्य मेरी धनुर्विद्या के प्रदर्शन के बाद होगा।

मजुगोपा यदि सम्राट् कारण जानना चाहेगे तो मै क्या निवेदन करूँगी, आर्य !

पुष्यमित्र सम्राट् की सेवा मे यह उत्तर निवेदन करना कि पहले सेनापति पुष्यमित्र का सौभाग्य होना चाहिये कि वह अपने सम्राट् और उनके मित्र नायक तेलियस को प्रसन्न करे। उसके बाद अन्य नागरिको के सौभाग्य की बात है।

मजुगोपा जैसी आज्ञा, आर्य ! मै अब जाने की अनुमति चाहती हूँ। सम्राट् ने शीघ्र ही यहाँ आने की इच्छा प्रकट की है।

पुष्यमित्र निवेदन करो कि उनके स्वागत की पूर्ण व्यवस्था है।

मजुगोपा जैसी आज्ञा ! आर्य की सेवा मे प्रणाम करती हूँ।

पुष्यमित्र सम्राट् की कृपापात्री बनो।

[मजुगोपा का प्रस्थान]

पुष्यमित्र (टहलते हुए) नायक तेलियस का सन्देह । सम्राट् का सेनापति पुष्यमित्र यवन तेलियस के मनोरजन के लिए धनुर्विद्या का प्रदर्शन करे । अपमानिता नारी को और भी अधिक लाँछित करने के लिए उसके नृत्य की माँग करे । सम्राट् प्रजा से अधिक यवन को सम्मान दे । उसका मनोरजन प्रजा की सुरक्षा से अधिक मूल्य रखता है अधिक मूल्य रखता है । पर मेरे बाणो का कौतूहलपूर्ण प्रदर्शन और धारिणी का नृत्य अवश्य होगा . अवश्य होगा । (पुकारकर) धनजय !

[**धनजय का प्रवेश**]

धनजय : आदेश, आर्य !

पुष्यमित्र : गुल्मपति नागदत्त और स्वामिदत्त को यहाँ आने को सूचना दो।

धनजय . जो आज्ञा, आर्य !

पुष्यमित्र · सम्राट् वृहद्रथ का आदेश ..धारिणी का नृत्य...आग पानी की तरलता प्राप्त करे और पानी आग की उष्णता मे अपने को उतारने की चेष्टा करे।

[**नागदत्त और स्वामिदत्त का प्रवेश**]

नागदत्त आर्य की सेवा मे प्रणाम !

स्वामिदत्त आर्य की सेवा मे प्रणाम !

पुष्यमित्र पाटलिपुत्र के यशस्वी सैनिक बनो। स्वामिदत्त ! मुझे प्रसन्नता है कि तुम्हारे पास सैनिक शिष्टता का विवेक है, तुम भावुक नही हो। मैने जान-बूझ कर तुम्हे नागदत्त के साथ रहने का अवसर दिया। तुम चाहते तो आत्महत्या कर सकते थे। नागदत्त ! स्वामिदत्त ने आत्महत्या की इच्छा प्रकट तो नही की ?

नागदत्त नही, आर्य !

पुष्यमित्र : स्वामिदत्त के मन की प्रवृत्ति किस दिशा मे थी ?

नागदत्त . सत्ता के प्रति ही उनके हृदय मे आक्रोश था।

पुष्यमित्र : स्वामिदत्त ! सत्ता किसी के साथ पक्षपात नही कर सकती। तुम स्वस्थ बनो। हाँ, मजुगोपा ने सूचना दी है कि सम्राट् अपने परम-मित्र तेलियस के साथ शीघ्र ही सैन्य-निरीक्षण के लिये आवेगे। किन्तु सैन्य-निरीक्षण के पूर्व वे मेरी धनुर्विद्या का कौशल भी देखना चाहेगे।

नागदत्त : उसका निर्देश आर्य ने किया था।

पुष्यमित्र : इस कौशल के प्रदर्शन की सामग्री तुम्हे उपस्थित करनी होगी, स्वामिदत्त !

स्वामिदत्त मै आज्ञा के लिए प्रस्तुत हूँ।

पुष्यमित्र . सम्राट् जिस मच पर तेलियस के साथ आसन ग्रहण करेगे उससे तीस अक्ष की दूरी पर पूर्व की ओर बीस अगुष्ठ-वर्ग मे चारो कोनो पर अँगारो के रूप मे सुलगते हुए काष्ठ-दड खडे करने होगे। मेरे चार बाणो के वेग से उत्पन्न वायु से इन चारो काष्ठ-दडो मे ज्वालाएँ जलेगी।

नागदत्त : यह आश्चर्यजनक बाण-विद्या है, आर्य !

स्वामिदत्त आज यह देखकर हम सब कृतार्थ होगे। मै शीघ्र ही इस सामग्री की व्यवस्था करूँगा।

पुष्यमित्र : अच्छा जाओ, गुल्मपति स्वामिदत्त ! इसकी पूर्ण व्यवस्था करो।

स्वामिदत्त आर्य की सेवा मे प्रणाम ! [**प्रस्थान**]

पुष्यमित्र (**स्वामिदत्त के जाने की दिशा मे देखते हुए**) गये। मुझे स्वामिदत्त के

मनोभावो से सहानुभूति है। राजनीति मस्तिष्क का सकेत है और मनोभाव हृदय का। मस्तिष्क और हृदय दो भिन्न दिशाओ मे नही चल सकते।

नागदत्त आपको हृदय की सही पहिचान है, आर्य !

पुष्यमित्र (सोचते हुए) नागदत्त ! तुम्हे भी एक विशेष प्रदर्शन की सामग्री उपस्थित करनी है।

नागदत्त आज्ञा, आर्य !

पुष्यमित्र जिस प्रकार सम्राट् के मित्र नायक तेलियस ने मेरे बाणो की कला देखने की इच्छा प्रकट की है उसी प्रकार एक और भी कला देखने की इच्छा उन्होने प्रकट की है जिसे सम्राट् की स्वीकृति प्राप्त हो गई है।

नागदत्त : उस कला का नाम सुनने की अभिलाषा है, आर्य !

पुष्यमित्र नृत्य-कला।

नागदत्त सैनिको की शिविर-भूमि मे ?

पुष्यमित्र हाँ, सैनिको की शिविर-भूमि मे। राजमच के समीप।

नागदत्त और नृत्य-कला का प्रदर्शन करना किसका सौभाग्य होगा, आर्य !

पुष्यमित्र धारिणी का।

नागदत्त (चौंककर) धारिणी का ?

पुष्यमित्र हाँ, धारिणी का। नायक तेलियस जिसका अपहरण नही कर सका। इसलिए वे सैनिको के सामने धारिणी को नृत्य के लिए विवश कर उसे लाछित करना चाहते है।

नागदत्त आर्य ! क्षमा हो। किन्तु धारिणी पहले ही लाछित हो चुकी है। वह नृत्य कैसे करेगी ?

पुष्यमित्र उसे नृत्य करना होगा, नागदत्त !

नागदत्त आपके आदेश की अवहेलना नही हो सकती , किन्तु धारिणी के मन मे नृत्य करने की भावना का उदय कैसे हो सकेगा, आर्य !

पुष्यमित्र होगा, अवश्य होगा। सेनापति पुष्यमित्र की बाण-विद्या से जब अँगारे ज्वालाएँ उगल सकते है तो क्या धारिणी नृत्य नही कर सकेगी ? वह नृत्य करेगी, अवश्य ही करेगी। मेरी आज्ञा की अवहेलना नही हो सकेगी। मच के समीप जो मेरा शिविर है, उसके अलिन्द पर तुम्हे धारिणी को उपस्थित करना होगा।

नागदत्त आपकी आज्ञा शिरोधार्य है।

पुष्यमित्र धारिणी तुम्हारे नियन्त्रण मे है ?

नागदत्त आर्य, वह मेरे नियन्त्रण मे है।

पुष्यमित्र तो उसे निश्चित समय पर अलिन्द मे उपस्थित करो।

नागदत्त जो आज्ञा, आर्य !

पुष्यमित्र तुम जा सकते हो। मै अपने धनुर्बाण की व्यवस्था करूँगा।

[पुष्यमित्र चुपचाप टहलने लगते हैं।]

संगीत

[पृष्ठभूमि मे कोलाहल। उभरी हुई आवाज में "सम्राट् बृहद्रथ की जय", "सम्राट् बृहद्रथ की जय", "सम्राट् बृहद्रथ की जय"। सैनिक-संगीत का प्रारम्भ। तूर्य, शंख और मृदंग की सम्मिलित ध्वनि। धीरे-धीरे कोलाहल शान्त हो जाता है। सम्राट् बृहद्रथ के अट्टहास की ध्वनि]

[सम्राट् बृहद्रथ की अंगरक्षिका घोषणा करती है]

अंगरक्षिका सम्राट् आज के पर्व पर सैनिको से यह आदेश करने की आज्ञा देते है, "मेरे पाटलिपुत्र के सैनिको! आज इस महान् शुभ अवसर पर तुम्हे न केवल मेरी जय की घोषणा करनी है, वरन् मेरे परम-मित्र नायक तेलियस की जय की घोषणा भी करनी है।"

["नायक तेलियस की जय" का घोष]

अंगरक्षिका सम्राट् की वाणी है कि सैनिको! यद्यपि नायक तेलियस हमारे देश के नही है तथापि उन्होने हमसे वैसी मित्रता की है जैसे गगा से शोण का सगम हुआ है।

तेलियस **(विकृत भाषा मे)** यह महाराज के मित्रता के परिणाम है।

[सम्राट् और नायक तेलियस की हँसी की ध्वनि]

अंगरक्षिका सम्राट् की वाणी है कि सैनिको! जनता के मन मे बुरी भावना उत्पन्न करने के लिए महाकान्तार के कुछ लोगो ने एक स्त्री के अपहरण की बात फैला दी है। यह बात नितान्त मिथ्या है।

[सैनिको मे कानाफूसी—"यह सत्य है", 'यह सत्य है।"]

अंगरक्षिका सम्राट् की वाणी है कि नायक तेलियस महाकान्तार के सौन्दर्य का निरीक्षण करने गये थे। विदेशी होने के कारण लोगो ने उन पर लॉछन लगाया है कि उन्होने एक नारी का अपहरण किया।

[सैनिको का मन्द स्वर—"क्या यह सत्य है?", "क्या यह सत्य है?"]

अंगरक्षिका सम्राट् की वाणी है कि इस लाछन को विश्वसनीय बनाने के लिए एक वृद्धा ने राज्य के सिह-द्वार को अपने मस्तक के रक्त से कलकित किया है।

[सैनिको का मन्द स्वर—"वह धारिणी की माता है", "वह धारिणी की माता है", "धारिणी की माता है।"]

अंगरक्षिका सम्राट् की वाणी है कि उस वृद्धा के सम्बन्ध मे न्यायाधिकरण में विचार होगा। सम्राट् का आदेश है कि सैनिको! भविष्य मे इस प्रकार का काण्ड उपस्थित कर जनता के हृदय मे व्यर्थ की आशका उत्पन्न करने वाले व्यक्तियो के लिए कठिन से कठिन दड की व्यवस्था होगी।

[सैनिको मे सन्नाटा]

वृहद्रथ आर्य पुष्यमित्र उपस्थित है।

पुष्यमित्र (उपस्थित होकर) मै उपस्थित हूँ, सम्राट् !

वृहद्रथ आर्य पुष्यमित्र ! हमारे परम-मित्र नायक तेलियस की इच्छा की सूचना तुम्हे प्राप्त हो चुकी ?

पुष्यमित्र प्राप्त हो चुकी, सम्राट् !

वृहद्रथ क्या उनके मनोरजन के लिए तुम्हारी धनुर्विद्या के प्रदर्शन की सारी व्यवस्था हो चुकी ?

पुष्यमित्र सारी व्यवस्था हो चुकी, सम्राट् !

वृहद्रथ और जिस स्त्री के अपहरण के सम्बन्ध मे कुछ विद्रोहियो ने अपना कठ-स्वर ऊँचा किया है, उसके नृत्य की व्यवस्था है ?

पुष्यमित्र व्यवस्था आदि है, सम्राट् ! सम्राट् के मच के सामने जो अलिन्द है उस पर वह स्त्री उपस्थित की गई है।

वृहद्रथ आर्य पुष्यमित्र ! जिस वृद्धा ने अपने रक्त से हमारे सिह-द्वार को कलकित किया है, उसके दंड की व्यवस्था नायक तेलियस ने जिस प्रकार दी है, उसकी घोषणा हुई ?

पुष्यमित्र वह घोषणा हो चुकी, सम्राट् !

वृहद्रथ वह घोषणा क्या है ?

पुष्यमित्र : सम्राट् ! वह घोषणा है कि पुष्यमित्र का चतुर्थ बाण वृद्धा के मस्तक के उस भाग को वेध देगा जहाँ से रक्त की धारा वही थी और जिसने सम्राट् के नगर का सिह-द्वार कलकित किया था।

वृहद्रथ यह घोषणा कहाँ हुई है, आर्य !

पुष्यमित्र : महाकान्तार मे। जहाँ की जनता ने विद्रोह किया था और जहाँ राजदड के आतक की आवश्यकता है।

तेलियस (हँसकर) आपका सेनापति अच्छा वस्तु है, सम्राट् !

वृहद्रथ आर्य पुष्यमित्र ! धनुर्विद्या का कौशल प्रारम्भ हो !

[कठो का हलका-सा मिला-जुला स्वर]

वृहद्रथ इस बात की घोषणा और करो विलोमा कि धनुर्विद्या के कौशल के अनन्तर सम्राट् नायक तेलियस के साथ नृत्य देखेगे जिससे सैनिको का मनोरजन होगा। यह भी कहो कि सम्राट् अपने सैनिको के मनोरजन का कितना ध्यान रखते है। उसके अनन्तर सैन्य-निरीक्षण करेगे।

अगरक्षिका सैनिको ! धनुर्विद्या के कौशल के अनन्तर सम्राट् नायक तेलियस के साथ नृत्य के समारोह का प्रबन्ध करेगे। सैनिको के मनोरजन का ध्यान रखने मे सम्राट् की उदारता सराहनीय है। नृत्य से मनोरजन कराने के उपरान्त सम्राट् सैन्य-निरीक्षण करेगे। सबसे प्रथम आर्य पुष्यमित्र अपनी धनुर्विद्या का कौशल

प्रदर्शित करेगे ।

वृहद्रथ यह और कहो विलोमा, कि सम्राट् की इच्छा है कि आर्य पुष्यमित्र का आदर्श प्रत्येक सैनिक का आदर्श होना चाहिए ।

अंगरक्षिका सैनिको ! सम्राट् की वाणी है कि आर्य पुष्यमित्र का आदर्श प्रत्येक सैनिक का आदर्श हो ।

कुछ स्वर सब सैनिको का आदर्श होगा ।

वृहद्रथ प्रारम्भ हो ।

[जन-रव कुछ अधिक जोर से सुनाई पड़ता है ।]

पुष्यमित्र **(सामने आकर)** गुरुदेव को प्रणाम ! बाणो की शक्ति की वन्दना । **(बाणो को चूमते हैं)** सैनिको ! सम्राट् की आज्ञानुसार आप मेरी बाण-विद्या का कौशल देखे । आपके समक्ष लक्ष्यकेन्द्र पर चार सुलगते हुए काष्ठ-दण्ड है जिनके ऊपरी भाग ने अँगारो का रूप ले लिया है। मेरे बाणो की गति से कंपित वायु उन अँगारो से ज्वालाएँ निकाल सकेगी । सबसे पहले पूर्व दिशा का काष्ठ-दण्ड ज्वाला से जलेगा । **(बाणो को प्रणाम कर)** जय गुरुदेव !

[बाण के चलने की प्रखर ध्वनि । पूर्व दिशा के काष्ठ-दण्ड से ज्वाला उठती है । जनता की हर्ष-ध्वनि—"धन्य, धन्य ! आग की ज्वाला जल उठी ! आग की ज्वाला जल उठी !"]

वृहद्रथ साधुवाद !

तेलियस साधुवाद !

अंगरक्षिका सम्राट् और तेलियस की वाणी आर्य पुष्यमित्र के कौशल की सराहना करती है ।

पुष्यमित्र मैं इस सराहना के लिए सम्राट्, नायक तेलियस और जनता का कृतज्ञ हूँ । अब उत्तर दिशा के काष्ठ-दण्ड मे ज्वाला उठेगी । **(बाणो को प्रणाम कर)** जय गुरुदेव !

[बाण के चलने की प्रखर ध्वनि । उत्तर दिशा के काष्ठ-दण्ड मे ज्वाला]

[जनता का कोलाहल—"वह आग की ज्वाला उठी ! वह आग की ज्वाला उठी !"]

वृहद्रथ साधुवाद, आर्य पुष्यमित्र !

अंगरक्षिका सम्राट् की वाणी आर्य पुष्यमित्र के कौशल की सराहना करती है ।

पुष्यमित्र . मै इस सराहना के लिए सम्राट् का कृतज्ञ हूँ ।

तेलियस हम भी सराहना करता हूँ।

पुष्यमित्र धन्यवाद ! अब पश्चिम दिशा के काष्ठ-दण्ड मे ज्वाला उठेगी । **(बाण को प्रणाम कर)** जय गुरुदेव !

[बाण के चलने की प्रखर ध्वनि । जनता का तुमुल हर्ष । "धन्य है,

धन्य है !" की ध्वनि। "आग की ज्वाला जल उठी" की ध्वनि]

वृहद्रथ साधुवाद, आर्य पुष्यमित्र !

अगरक्षिका सम्राट् की वाणी आर्य पुष्यमित्र की सराहना करती है।

तेलियस मेरी सराहना भी सीकार होगी।

पुष्यमित्र मैं सराहना के लिए कृतज्ञ हूँ। अब दक्षिण दिशा के काष्ठ-दण्ड मे ज्वाला उठनी चाहिए। राजाज्ञा है कि मेरा यह बाण दक्षिण दिशा के काष्ठ-दण्ड मे ज्वाला उत्पन्न करते हुए वृद्धा के मस्तक को बेध दे जिसने अपने रक्त से राज्य के सिंह-द्वार को कलंकित किया है। दक्षिण दिशा का बाण मेरे धनुष पर है। किन्तु सैनिको ! मै यह पूछना चाहता हूँ कि राज्य के सिंहद्वार को कलुषित करने का अपराध किसने किया है—वृद्धा ने किया है अथवा स्वय सम्राट् ने ? **(सन्नाटा)** किसका मस्तक इस बाण का लक्ष्य है ?

वृहद्रथ **(जोर से)** यह राजद्रोह है ! यह राजद्रोह है ! विलोमा, घोषणा करो कि यह राजद्रोह है।

अगरक्षिका सम्राट् की वाणी है कि ...

पुष्यमित्र पुष्यमित्र की वाणी है कि यह राजा की ओर से प्रजाद्रोह है। जिस राजा ने प्रजा की रक्षा नही की, नारियो का अपहरण होने दिया, सैनिको का वेतन नही दिया, निरपराधियो को दण्डित किया, अपने विलास की छाया मे प्रजा को कष्ट दिया, क्या उस राजा के प्रति कभी राजद्रोह हो सकता है ?

सैनिको का स्वर नही हो सकता, नही हो सकता।

वृहद्रथ अरे, यह क्या ! यह षड्यन्त्र है। विलोमा ! घोषणा करो कि यह षड्यन्त्र है। यह षड्यन्त्र है। **(पीछे घूमकर)** अरे, विलोमा कहाँ है ? मेरी अगरक्षिका विलोमा कहाँ है ?

पुष्यमित्र अब विलोमा को घोषणा करने का अधिकार नही है, सम्राट् ! जब मेरे बाणो से अग्नि की ज्वाला जल सकती है तो मेरे बाणो की दिशा देखकर विलोमा का कठ भी रुद्ध हो सकता है। समस्त सैनिक शान्त रहेगे। मै सम्राट् वृहद्रथ से यही पूछना चाहता हूँ कि दुष्ट और विलासी म्लेच्छ तेलियस के पैशाचिक मनोरजन के लिए एक निरीह और निरपराध-लाछिता नारी को नृत्य की आज्ञा देना कौन राजधर्म है ?

तेलियस हम यहाँ नाही ठहरूँगा। हमको नीद आ रहा है। हम सोऊँगा।

[तेलियस उठकर जाना चाहता है।]

पुष्यमित्र वही बैठे रहो, तेलियस ! नही तो यह बाण पहले तुम्हे सदैव के लिए सुला देगा।

तेलियस सम्राट् पुष्यमित्र ! कैसा-कैसा बाण चलाने को कहते ! हम तो तुम्हारे सिंहासन के नीचे सो जाऊँगा। **[सिंहासन के नीचे छिपना चाहता है।]**

पुष्यमित्र अपने स्थान पर रहो, तेलियस ! सम्राट् स्वय अपनी रक्षा के लिए वही

स्थान खोजेगे । मौर्य चन्द्रगुप्त और अशोक की परम्परा को कलुषित करने वाले हिंस्र-पशु के लिए सम्राट् का यह आवरण बहुत ओछा है ।

वृहद्रथ सैनिको, सैनिको ! अपने सम्राट् की रक्षा करो, यह राजद्रोह है ।

पुष्यमित्र यह राजद्रोह किसी भी प्रकार नही है, वृहद्रथ ! यह राजसत्ता है । ये सैनिक तुम्हारे नही है । ये सैनिक सेनापति पुष्यमित्र के है, सेनापति पुष्यमित्र के जो उनका पिता है । यह पाटलिपुत्र वृहद्रथ को सम्राट् नही, प्रवचक और दस्यु समझता है ।

वृहद्रथ (घबराकर) सैनिको, मेरी रक्षा करो ।

पुष्यमित्र (दृढता से) कोई सैनिक तुम्हारी रक्षा नही कर सकेगा क्योकि जिस राजाज्ञा की घोषणा मैंने अभी तक तुम्हारी ओर से सैनिको को सुनाई है उस राजाज्ञा के यन्त्र ने सैनिको के शरीर से राजभक्ति से भरे रक्त को एक-एक बूंद मे सिमिटकर निकल जाने दिया है ।

तेलियस हमको-मुझको बचाओ, सेनापति ! हम क्षमा माँगता हूँ ।

वृहद्रथ मित्र तेलियस ! तुम भी हमारा साथ छोड दोगे ?

तेलियस हमारा रक्षा तुम नही करोगे तो सेनापति अवश्य करेगे । हमारा रक्षा करो, सेनापति, हमारा रक्षा करो ।

वृहद्रथ (घबराकर) तब क्या मै अकेला हूँ ?

पुष्यमित्र तुम अकेले नही रहोगे, वृहद्रथ ! आज इस सैनिक-शिविर के बीच तुम अपने को न्यायाधिकरण मे समझो । मै यह पूछना चाहता हूँ, वृहद्रथ, कि तुम्हारे द्वारा जन-सम्पति की सुरक्षा हुई है ? उत्तर दो !

वृहद्रथ [**मौन है ।**]

पुष्यमित्र क्या बाहरी शत्रुओ का भय तुम्हारे शासन से दूर हुआ ? बोलो !

वृहद्रथ [**मौन है ।**]

पुष्यमित्र क्या सैनिको का वेतन महीनो उन्हे तुम्हारे कोष से दिया जा सका ? उत्तर दो !

वृहद्रथ मै मै मै मै कोई उत्तर नही दे सकता । हाय ! मै कहाँ जाऊँ ?

पुष्यमित्र वृहद्रथ ! दक्षिण दिशा के काष्ठ-दण्ड की ओर चलने वाले मेरे बाण के साथ तुम दक्षिण दिशा जाओ, जो यमराज की दिशा है । निरपराध धारिणी के लाछित होने पर भी उसके अत्याचारी को दण्ड न देकर उसे मित्र बनाना क्या पाटलिपुत्र की प्रजा का सबसे बडा अपमान नही है ? और उसी अत्याचारी के मनोरजन के लिए धारिणी को नृत्य के लिए आज्ञा देना क्या राजधर्म का सबसे बडा कलक नही है ? धारिणी तब नृत्य करेगी जब ऐसा राजधर्म नष्ट हो जायगा ।

वृहद्रथ मेरी रक्षा करो, पुष्यमित्र ! मै अपने प्राणो की भिक्षा माँगता हूँ ।

पुष्यमित्र सैनिको ! राजा भिक्षा माँग रहा है । क्या तुम लोग उसे भिक्षा दोगे ?

सैनिको का स्वर नही, नही। भिक्षा नही दी जा सकेगी।

पुष्यमित्र · न्यायाधिकरण ने भिक्षा नही दी, वृहद्रथ ! अब तुम्हारा मस्तक मेरे बाण का लक्ष्य होगा। तुम कही भी छिपने की चेष्टा कर सकते हो।

तेलियस (**सिंहासन के नीचे छिपने की चेष्टा करते हुए**) हम तो यहाँ छिपूँगा।

पुष्यमित्र वृहद्रथ ! तेलियस के समान तुम भी छिपने की चेष्टा कर सकते हो। मेरे बाण का यह कौशल होगा कि तुम चाहे जहाँ छिपो, वह तुम्हारे मस्तक को अवश्य वेध देगा। तुम एक बार फिर छिपने की चेष्टा कर सकते हो।

वृहद्रथ · (**पुकारकर**) विलोमा !

पुष्यमित्र तुम्हारी पुकार कोई नही सुन सकता, वृहद्रथ ! विलोमा अब प्रजा की अगरक्षिका है। तुमने राजदण्ड की छाया मे धर्म पर अनन्त आघात किये है। तुमने यज्ञो को निर्वासित कर दिया है किन्तु आज मैने यज्ञ की पुन प्रतिष्ठा की है। देख रहे हो ये काष्ठ-दण्ड, जो तीन दिशाओ से यज्ञ की ज्वालाएँ उत्पन्न कर रहे है ? केवल चौथी दिशा शेष है। तुम्हारे मस्तक का रक्त लेकर मेरा बाण चौथी दिशा मे भी यज्ञ की अग्नि उत्पन्न करेगा और तुम्हारे मस्तक की बलि लेकर मेरा यह यज्ञ पूर्ण होगा। तब सेनापति पुष्यमित्र के द्वारा वैदिक धर्म की प्रतिष्ठा पाटलिपुत्र मे फिर एक बार होगी। सावधान !

[**बाण चलने का तीव्र स्वर। एक क्षण बाद ही भीषण कराह**]

वृहद्रथ आह ! आह !! आह !!!

[**सेना के द्वारा "सेनापति पुष्यमित्र की जय" का घोष**]

पुष्यमित्र (**उमग से**) इस मस्तक के रक्त से पाटलिपुत्र मे स्वर्ण और श्री की प्रतिष्ठा एक बार फिर होगी। और धारिणी इस राजधर्म की विडम्बना के दूर होने पर अपने नृत्य से स्वर्ण-श्री को निमन्त्रण देगी। धारिणी ! मैने कहा था कि धारिणी का नृत्य अवश्य ही होगा। तुम्हारा नृत्य प्रारम्भ हो।

धारिणी पाटलिपुत्र की स्वर्ण-श्री अमर हो !

[**धारिणी के नृत्य की ध्वनि होती है।**]

[**धीरे-धीरे नृत्य की ध्वनि वायु मे विलीन हो जाती है।**]

: 9

✦ श्री विक्रमादित्य ✦

•

पात्र-परिचय

श्री विक्रमादित्य—शकारि अवन्तिनाथ
विभावरी (भूमक)—छद्मवेषी शक कुमार
पुष्पिका—उज्जयिनी-निवासिनी
उद्यान-रक्षक,
प्रहरी,
वधिक

•

काल—ई० पू० 57
स्थान—उज्जयिनी

श्री विक्रमादित्य

[श्री विक्रमादित्य (आयु 26 वर्ष) की न्याय-सभा का बाहरी कक्ष। एक सिंहासन है, जिसके दोनों ओर सिंह की दो विशाल प्रतिमाएँ हैं। सिंहासन के पीछे एक मेहराब है, जिसके मध्य मे सूर्य-मण्डल है। शिल्प-कला से सजाये गये पत्थरो पर बेल-बूटेदार आकृतियाँ है, जिनमें कमल और उसके चारो ओर मृणाल की जाली है। फर्श भी रंगीन पत्थरो का है और उसमे सरोवर की लहरो का आभास है। मेहराब से हटकर एक वातायन है, जिससे कुछ दूर पर शिप्रा का प्रवाह दीख रहा है। कमरे मे सुगन्धित द्रव्य का धूम है और चारो ओर रंगीन प्रकाश की शलाकाएँ है। द्वार के समीप काठ का एक त्रिभुज है, जिसमे एक घण्टा लटक रहा है।

सिंहासन पर श्री विक्रमादित्य आसीन है। देवतुल्य शरीर, घुटने तक लम्बी बाँहें, प्रशस्त ललाट, चौड़ा और ऊँचा वक्षस्थल, कटि-प्रदेश पुष्ट, जैसे विश्वकर्मा ने अपने चक्र-यन्त्र पर चढ़ाकर उनकी आकृति और शोभा को और भी चमका दिया है। उनकी कमर में अपराजित खड्ग कसा हुआ है, जो उनके पुरुषार्थ-रूपी सागर की उच्छल तरंग है। वे राजसी वस्त्र पहने हुए है। सिर पर रत्न-जटित मुकुट है। मञ्च की सीढियों पर दाहिनी ओर एक युवती विभावरी (आयु 22 वर्ष) खड़ी है। मोतियों से परिपूर्ण सीमन्त और वेणी मे मन्धूकपुष्प। कन्धों पर हरा उत्तरीय और कमर मे पीले रेशम का कटिबन्ध। वक्ष पर मोतियो की माला और पुष्पहार। उसका शेष शृंगार फूलो का ही है।

कक्ष में इस समय केवल ये दोनो ही हैं। गभीर घोष से श्री विक्रमादित्य मौन भंग करते हैं।]

विक्रमादित्य आश्चर्य है, उज्जयिनी मे तुम्हारा अपमान हुआ।

विभावरी सम्राट् ! उस अपमान की यन्त्रणा से आज दिन-भर रुदन करने के कारण मेरे कण्ठ की विकृति हो गई है।

विक्रमादित्य आर्य-नारियाँ रुदन नही करती। तुम्हारा नाम क्या है, देवी !

विभावरी विभावरी, सम्राट् !

विक्रमादित्य विभावरी ! कहाँ की निवासिनी हो ?

विभावरी विदिशा मे मेरा निवास है, सम्राट् !

विक्रमादित्य उज्जयिनी मे कब से निवास कर रही हो ?

विभावरी शरद्-पूर्णिमा के पर्व से। एक मास से कुछ ही अधिक समय हुआ।

विक्रमादित्य यहाँ तुम आई किसलिए थी ?

विभावरी पुण्यतीर्था उज्जयिनी मे शिप्रा-स्नान के लिए।

विक्रमादित्य कितने दिनो से शिप्रा-स्नान कर रही हो ?

विभावरी पिछले तीन वर्षो से, सम्राट् !

विक्रमादित्य प्रत्येक वर्ष तुम यहाँ एक मास से अधिक ठहरती हो ?

विभावरी नही, सम्राट् ! जब से आपका शासन हुआ है तब से यहाँ अधिक ठहरने लगी हूँ।

विक्रमादित्य क्यो ?

विभावरी सम्राट् ! आपके शासन मे उज्जयिनी की पवित्रता नक्षत्रो की पवित्रता के समान है। यहाँ चरणो के भैरव-राग मे पुष्पो ने अपनी पँखुडियाँ खोलना सीखा है। जो नगरी अपने वैभव के स्तूपो मे अपने हाथ फैलाकर आपके चरणो की वन्दना कर रही है, वह नगरी मेरे लिए इतना आकर्षण क्यो न रखे, सम्राट् !

विक्रमादित्य इसे मै कैसे सत्य समझूँ जब विभावरी जैसी आर्य-नारी अभियोगिनी के रूप मे मेरे सामने उपस्थित है।

विभावरी यह मेरा भाग्य-दोष है, सम्राट् ! सूर्य का आलोक कण-कण को प्रकाशित करता है, किन्तु पहाड की कन्दरा मे अन्धकार ही रहता है। यह सूर्य का दोष नही है, प्रभो ! यह कन्दरा का दोष है, जो पत्थरो को तोडकर उनमे छिपकर बैठ गई है।

विक्रमादित्य यदि तुम ऐसा समझती हो, देवि, तो अभियोगिनी बनकर मेरे सामने क्यो खडी हो ? यदि यह स्वय तुम्हारा दोष है तो तुमने राज-मर्यादा की शान्ति मे बाधा क्यो डाली ? उस दोष के दण्ड को सहन करने की शक्ति तुममे होनी चाहिए।

विभावरी सम्राट् ! यदि मै दण्ड सहन कर लूँगी तो इस दण्ड का द्वार भविष्य मे अन्य स्त्रियो के लिए भी खुल जायगा। आज मैं अपमानित हुई हूँ, यदि इसकी सूचना मैं आपके बाहुबल को न दूँ तो कल दूसरी स्त्री भी अपमानित हो सकती है।

विक्रमादित्य तुमसे पहले तो कोई स्त्री मेरे राज्य मे अपमानित नही हुई।

विभावरी यह आपके राज्य-शासन का गौरव है, सम्राट् !

विक्रमादित्य (दृढता से) चुप रहो, विभावरी ! मै ऐसे छद्मवेषी शब्द सुनना नही चाहता। ये मेरी यन्त्रणा को अधिक तीव्र करते है। मै जानना चाहता हूँ, तुम्हारा अभियोग क्या है ?

विभावरी : सम्राट् ! लज्जा मेरे शब्दो को रोक रही है ।

विक्रमादित्य · मुझे आश्चर्य हो रहा है, तुम आर्य-नारी किस प्रकार हो ? तुमने इस अपमान पर आज दिन-भर रुदन किया, जो आर्य-नारी की मर्यादा के प्रतिकूल है। फिर उस अपमान के कहने मे तुम्हे लज्जा हो रही है। आर्य-नारियाँ अपना अपमान ज्वालामय शब्दो मे कहती हैं, लज्जा के स्वरो मे नही।

विभावरी मै बहुत दुखी हूँ, सम्राट् !

विक्रमादित्य तब तो तुम्हे और भी निर्भीक होना चाहिए। भारत की दु खिनी नारी क्रान्ति की ज्वाला है, उसे कोई रोक नही सकता । वह उठती है तो सुगन्धिमय धूम की भाँति, और आकाश नक उसकी उदारता फैल जाती है, वह गिरती है तो बिजली की भाँति, और उससे पाताल का हृदय भी विदीर्ण हो जाता है।

विभावरी · सत्य है, सम्राट् !

विक्रमादित्य फिर तुमने यह याचना की थी कि तुम्हारा अभियोग न्याय-सभा के बाहरी कक्ष मे एकान्त मे सुना जाय । यह याचना भी तुम्हारी स्वीकार हुई। मैने अपनी सभा के सदस्यो और मन्त्रियो को यहाँ से हटा दिया । इस समय हम लोग एकान्त मे है । तुम निर्भीक होकर अपना अभियोग मुझे सुना सकती हो ।

विभावरी **(हाथ जोड़कर)** मै सम्राट् की कृतज्ञ हूँ ।

विक्रमादित्य कृतज्ञ होने की बात नही है । सम्राट् प्रजा का पिता है । यदि आवश्यकता होगी तो मै इसी स्थल पर तुम्हारे अभियुक्त को दण्ड भी दे सकूंगा ।

विभावरी यह आपकी कृपा है, प्रभो !

विक्रमादित्य अपना अभियोग स्पष्ट करो । किसमे इतनी शक्ति है जो उज्जयिनी मे नारी का अपमान करे ?

विभावरी सम्राट् ! आज प्रात काल उषा-वेला मे मै इसी शिप्रा **(वातायन की ओर संकेत)** के किनारे वायु-विहार के लिए गई थी । वहाँ पुष्पराग-उद्यान की सुगन्धि ने मुझे आकर्षित किया और मैने उसमे प्रवेश किया । शीतल समीरण बह रहा था, अनेक भाँति के पुष्प खिले हुए थे. .

विक्रमादित्य **(बीच ही मे)** मै इस समय काव्य नही सुनना चाहता, मै अभियोग सुनना चाहता हूँ ।

विभावरी क्षमा चाहती हूँ, सम्राट् ! मै सक्षेप मे ही कहूँगी । पुष्पराग-उद्यान मे पुष्पो की विविधता देखकर मेरे मन मे इच्छा हुई कि मै सूर्य भगवान की पूजा के निमित्त कुछ पुष्प चयन कर लूं । जिस समय मैं पुष्प चयन कर रही थी उसी समय एक दूसरी स्त्री मेरे समीप आई । उसने प्रेम से मेरी ओर देखकर निवेदन किया— "क्या मै आपकी सहायता कर सकती हूँ ?" उसका प्रेम-भाव देखकर मैंने उसकी सहायता स्वीकार कर ली । पुष्प चयन के उपरान्त उसने मेरी वेणी मे गूंथने की इच्छा प्रकट की । सम्राट् ! सौन्दर्य-प्रिय होने के कारण मैंने यह भी स्वीकार किया । जिस समय मेरी वेणी मे वह पुष्प गूंथ रही थी, उस समय मेरे कण्ठ

मे उसका स्पर्श अस्वाभाविक ज्ञात हुआ।

विक्रमादित्य (चौंककर) अस्वाभाविक ? [सिंहासन से उतर पडते हैं।]

विभावरी सम्राट्! उसके स्पर्श से मुझे पुरुष-स्पर्श का संकेत मिला।

विक्रमादित्य (स्तंभित होकर) पुरुष-स्पर्श ? तो क्या वह नारी-वेश मे पुरुष था ?

विभावरी मै यही सोचती हूँ, सम्राट्!

विक्रमादित्य तुमने उसी समय अपने अपमान का प्रतिकार किया ?

विभावरी सम्राट्! मुझे भय था कि मै कही अधिक अपमानित न हो जाऊँ।

विक्रमादित्य तुम्हारे पास कोई शस्त्र था ?

विभावरी हाँ, सम्राट्! मेरे पास शस्त्र था। वह अब भी है। देखिए, यह दन्तिका।

[कटिबन्ध से दन्तिका निकालकर दिखलाती है।]

विक्रमादित्य तुमने इसका प्रयोग किया ?

विभावरी सम्राट्! मुझे आपके न्याय मे अधिक विश्वास है।

विक्रमादित्य विभावरी! तुम आर्य-नारी हो। तुमने अपने कुल को कलंकित किया है, साथ ही मुझे भी, अपने सम्राट् को। तुम इस प्रकार अपमानित हो जाओ और शक-स्त्रियो की भाँति रोने लगो! तुम्हे अपनी असमर्थता पर लज्जा नही आई! तुम्हारी माता को आत्महत्या करनी चाहिए। तुम्हारे पिता को देश से भाग जाना चाहिए। शक्ति हीना नारी! भारत के भविष्य की संरक्षिका को अपमान का प्रतिकार करना भी न आया! [अशान्ति से शीघ्र गति मे टहलने लगते है।]

विभावरी सम्राट्! मुझे क्षमा कीजिए। विदिशा मे रहने वाली नारी को अभी उज्जयिनी की नारी से बहुत-कुछ सीखना है। आपके व्यक्तित्व के प्रभाव से तो उज्जयिनी की नारी दुर्गा और सरस्वती दोनो ही का रूप धारण कर सकती है।

विक्रमादित्य (घृणा से) अयोग्य नारी! इस तिल की ओट मे तुम पर्वत को नही छिपा सकती। यह कारण तुम्हारी असमर्थता की रक्षा नही करेगा।

विभावरी (हाथ जोडकर) सम्राट्! मैं भी दण्ड की पात्री हूँ।

विक्रमादित्य निस्सन्देह। नारी-अपमान के लिए मै अभियुक्त को निर्वासित तो करूँगा ही, साथ-ही-साथ तुम्हे भी साधना की अग्नि मे तपकर सच्ची नारी बनना होगा।

विभावरी मै दण्ड सहन करने के लिये प्रस्तुत हूँ, प्रभो!

विक्रमादित्य और तुम्हारा अभियुक्त कहाँ है ?

विभावरी मै उसे पुष्पराग-उद्यान की द्वार-रक्षिका से बन्दी कराकर ले आई हूँ। वह इस समय द्वार-रक्षिका के साथ बाहर है।

विक्रमादित्य (अशान्त होकर) उज्जयिनी मे कभी ऐसा अभियोग मेरे सामने उपस्थित नही हुआ। विभावरी! तुमने आज मुझे यह सोचने के लिये बाध्य किया है कि इतने युद्ध करने के उपरान्त, इतने शत्रुओ को मालवा, सौराष्ट्र

और गुर्जर से निर्वासित करने के उपरान्त भी मै उज्जयिनी की सामाजिक व्यवस्था ठीक करने मे असमर्थ रहा । आज भी उज्जयिनी मे नारी अपमानित हो सकती है ?

विभावरी हाँ, सम्राट् !

विक्रमादित्य **(तीव्र स्वर मे)** विभावरी !

विभावरी **(विह्वल होकर)** सम्राट् ! क्षमा हो । जिस नगरी की वाणी ने ही शिप्रा का रूप धारण कर लिया हो, वहाँ मेरी वाणी मे यदि कुछ भूल हो तो क्षमा कीजिए, किन्तु अपनी आत्मा का चीत्कार मै किन शब्दो मे व्यक्त करूँ, प्रभो ! मै लाछित हुई हूँ, मेरे आत्म-सम्मान की अवहेलना

विक्रमादित्य **(रोककर)** बस, अब मै अधिक नही सुन सकूँगा । तुम्हारे अभियोग ने मेरे पराक्रम की सहस्र भुजाओ को शक्तिहीन सिद्ध कर दिया है । मै अब तक अपनी शक्ति का विश्वासी था । आज वह विश्वास तुम्हारे अभियोग मे समाप्त हो रहा है । मेरे राज्य मे नारी का अपमान हो, यह मेरे लिये अपमान की बात है ।

विभावरी आप सम्राट्-श्रेष्ठ है, प्रभो !

विक्रमादित्य चुप रहो, विभावरी ! इन शब्दो से तुम मुझे पीडा पहुँचा रही हो। मैने विक्रमादित्य का विरुद धारण किया था । क्या मेरे इस साहस की भावना पर तुम्हारा अभियोग हँस नही रहा है ? मै उस विरुद का परित्याग करूँगा । तुमने विक्रम की ऐसी पताका भी कही देखी है जो अन्याय और अव्यवस्था के दण्ड मे सजी हो ? तुम ऐसे सूर्य की कल्पना कर सकती हो जिसकी किरणो से अन्धकार निकलता हो ? विक्रमादित्य अन्याय और अव्यवस्था का प्रतीक हो— यह असम्भव है, यह असम्भव है ।

विभावरी सम्राट्, शान्त हो ।

विक्रमादित्य अयोग्य व्यक्ति कभी शान्त नही हो सकता । मै अयोग्य हूँ । कालिदास ने व्यर्थ ही मेरी प्रशसा की है । मुझे पहचानने मे महाकवि ने भी भूल की ।

विभावरी नही, प्रभो ! मैने आपको कष्ट पहुचाने मे भूल की है ।

विक्रमादित्य नही, मैं विक्रमादित्य नाम का परित्याग करूँगा । मेरे लिये केवल यही मार्ग है, केवल यही । किन्तु इसके पूर्व मैं नारी के सम्मान की पूर्ण व्यवस्था कर जाऊँगा । हाँ, तुम्हारा अपराधी बाहर है ? मै उस नर-पिशाच को देखना चाहता हूँ जो अपने छद्मवेष मे नारियो का अपमान करता फिरता है, जो पुरुष होकर अपने पुरुषत्व को नारी के वस्त्रो मे छिपाये हुए है, जिसने विक्रमादित्य की सत्ता को विलासियो की शृगार-शाला समझ रखा है । **(द्वार के समीप पहुँचकर घटे पर चोट करते हैं, फिर लौटकर विभावरी से)** तुम्हे मेरे न्याय मे अधिक विश्वास है ! मैं आज एकाकी न्याय करूँगा । न्याय-सभा का सारा अधिकार अपने बाहु-बल मे केन्द्रित करके अपराधी को कठोर दण्ड दूंगा ।

[प्रहरी का प्रवेश ; वह अपना भाला झुकाकर प्रणाम करता है ।]

विक्रमादित्य प्रहरी ! बाहर जो वन्दिनी द्वार-रक्षिका के अधिकार मे है, उसे यहाँ उपस्थित होने की आज्ञा सुनाओ ।

प्रहरी जो आज्ञा ! [प्रणाम करके प्रस्थान]

विक्रमादित्य (विभावरी से) तुम मेरा न्याय देखना चाहती हो ? किन्तु सुनो, विभावरी ! मै ऐसी नारी से घृणा करता हूँ जो अपना सम्मान स्वय सुरक्षित नही रख सकती। नदी पहाड से कहे कि तुम मेरे लिये किनारा बना दो, बिजली बादल से कहे कि मुझे तडपना सिखला दो और नारी राजा से कहे कि मेरा न्याय कर दो। नारी ! भारतवर्ष को ससार मे लज्जित होने से बचाओ, विदेशियो से पद-दलित होने पर भी देश की मर्यादा सुरक्षित रहने दो।

[द्वार-रक्षिका का अभियुक्त (आयु 24 वर्ष) के साथ प्रवेश। द्वार-रक्षिका श्वेत वस्त्र धारण किये हुए है। काले रेशम का कटिबन्ध। कवरी मे पुष्प-शृ गार और हाथ मे शूल। अभियुक्त पाटल रग का उत्तरीय और नीले रंग का कटिबन्ध पहने है। गले मे स्वर्ण-माला। केशो मे कुन्द-पुष्प। माथे मे स्वस्तिक-तिलक। हाथो मे पुष्प-वलय और पैरो मे नूपुर धारण किये हुए हैं। दोनो का अभिवादन। द्वार-रक्षिका अभियुक्त को सामने उपस्थित करके द्वार पर जाकर खडी हो जाती है।]

विक्रमादित्य (द्वार रक्षिका से) तुम बाहर मेरी आज्ञा की प्रतीक्षा करो !

द्वार-रक्षिका (सिर झुकाकर) जो आज्ञा ! [प्रस्थान]

विक्रमादित्य (अभियुक्त को गहरी दृष्टि से देखकर विभावरी से) यही तुम्हारा अभियुक्त है ?

विभावरी (उद्वेग से) सम्राट् ! यही अभियुक्त है। इसी ने मेरा अपमान किया है, यही वह दुष्ट है, यही वह छद्मवेषी है जिसने

विक्रमादित्य (हाथ बढाकर) रुको, विभावरी ! तुम मेरे न्याय-कक्ष मे हो। (अभियुक्त से) अभियुक्त ! तुम विक्रमादित्य की परीक्षा लेना चाहते हो कि वह अपनी व्यवस्था मे सतर्क है या नही ? छद्मवेषी अभियुक्त ! तुम नारी-वेश मे पुरुषत्व का अपमान और नारीत्व की अवहेलना करने वाले कौन हो ?

अभियुक्त (हिचकते हुए) सम्राट् !

विक्रमादित्य (तीव्रता से) तुम्हारा नाम क्या है ?

अभियुक्त (रुकते हुए शब्दो मे) सम्राट्, मैं मैं पुरुष हूँ।

विक्रमादित्य मैं जानता हूँ कि तुम पुरुष हो। पुरुषत्व को लज्जित करने वाले पुरुष ! तुम्हारा नाम क्या है ? विक्रमादित्य के सामने तुम असत्य भाषण नही कर सकोगे। मेरे अधिकार मे अग्नि है, (तलवार पर हाथ रखकर) 'अपराजित' की तीक्ष्ण धार है और वधिक का तीक्ष्ण कृपाण ! सत्य और धर्म के सोपान पर सुसज्जित पवित्र न्याय के सामने अपने नाम के अक्षर दुहराओ।

अभियुक्त (विह्वल होकर) सम्राट्.. सम्राट्. मुझे क्षमा करें मैं . स्त्री.. हूँ।

विक्रमादित्य तुम स्त्री हो ? यह तो सभी देखने वाले जान सकते है, किन्तु मैं तुम्हारी पुरुषत्व की परिभाषा जानना चाहता हूँ।

अभियुक्त सम्राट्, मैं स्त्री हूँ। मेरा नाम पुष्पिका है।

विभावरी (तीव्रता से) यह झूठ बोलता है, इसका यह नाम नही है।

विक्रमादित्य (मुस्कराकर) नाम तो बहुत सुन्दर है, किन्तु तुम्हारा वास्तविक नाम क्या है ? तुम विक्रमादित्य के न्याय के सामने हो, असत्य भाषण नही करोगे।

अभियुक्त सम्राट्! मैं क्या कहूँ मेरी समझ मे नही आता. हाँ, मैं पुरुष हूँ, ।

विक्रमादित्य दण्ड के भय से उद्भ्रान्त मत बनो, अभियुक्त! भगवान् महाकालेश्वर की आन पर तुम असत्य भाषण नही करोगे।

अभियुक्त सम्राट् के सामने यह साहस किसी का नही हो सकता।

विक्रमादित्य अभियोगी कहता है कि तुम पुरुष हो। तुमने विभावरी का अपमान किया है। क्या यह सत्य है ?

अभियुक्त हाँ, सम्राट्, यह सत्य है। (रुककर) नही-नही यह सत्य नही है।

विक्रमादित्य (तीक्ष्णता से) स्थिर रहो, अभियुक्त! तुम कहाँ के निवासी हो ?

अभियुक्त सम्राट्! मैं उज्जयिनी मे निवास करती हूँ।

विक्रमादित्य (दृढता से) तो तुम स्त्री हो ? अभियुक्त! असत्य भाषण करने पर कठोर दण्ड मिलेगा। अपनी वास्तविकता स्वीकार करो।

अभियुक्त सम्राट्! मेरा नाम पुष्पिका है। मैं उज्जयिनी की निवासी हूँ!

विक्रमादित्य इसका प्रमाण ?

अभियुक्त मैं सम्राट् के राज्यारोहण के समय उपस्थित थी। उस समय सम्राट् ने उज्जयिनी की प्रत्येक नारी को जो स्वर्ण-मुद्राएँ दी थी, वे मेरे कण्ठ-हार मे अब तक सुसज्जित है। देखिए। [**अपना कण्ठ-हार दिखलाती है।**]

विक्रमादित्य किन्तु वे मुद्राएँ तुम्हारे द्वारा चुराई भी तो जा सकती है।

अभियुक्त सम्राट्! उज्जयिनी की प्रत्येक नारी आपकी मुद्रा को गौरव का चिह्न समझती है। वह उसे चोरी नही होने दे सकती और सम्राट्, उज्जयिनी मे चोरो का निवास नही है।

विक्रमादित्य मैं यह बात सुनकर प्रसन्न हूँ, किन्तु तुम पर अभियोग है कि तुम पुरुष हो। क्या तुम पुरुष हो ?

अभियुक्त (दृढ़ता से) सम्राट्, मैं पुरुष नही हूँ। [**विभावरी काँप जाती है।**]

विक्रमादित्य विभावरी! तुम काँप उठी। इतना क्रोध करने की आवश्यकता नही है। मैं अभी निर्णय करता हूँ। (**अभियुक्त से**) अभियुक्त! क्या मैं प्रहरी को आज्ञा दूँ कि वह तुम्हारा वेष-विन्यास परिवर्तित करे ?

अभियुक्त सम्राट्! उज्जयिनी की नारी को प्रहरी द्वारा अपमानित होने से रोकने की कृपा कीजिए।

विक्रमादित्य क्या तुम पुरुष नही हो, अभियुक्त !

अभियुक्त नही, सम्राट् ! मैं वचन दे चुकी हूँ कि अपने सम्राट् के सामने असत्य भाषण नही करूँगी ।

विक्रमादित्य **(विभावरी से)** विभावरी ! क्या तुम्हारे कहने से अभियुक्त स्वीकार करेगा कि वह पुरुष है ?

विभावरी **(अभियुक्त की ओर दृढता से देखकर)** अभियुक्त ! तुम पुरुष हो। तुम्हारे स्पर्श मे नारी का भाव नही था । तुमने मुझसे स्वीकार किया था कि तुम सम्रा के सामने पुरुषत्व स्वीकार करोगे। मेरी लज्जा के लिए स्वीकार करो। अपने वचन की पूर्ति के लिए स्वीकार करो । **(अभियुक्त मौन है)** देखो, अभियुक्त ! तुम चुप क्यो हो ? तुम स्वीकार क्यो नही करते ?

विक्रमादित्य **(विभावरी से)** तुम्हारा कथन भी रहस्यपूर्ण है, विभावरी !

विभावरी कोई रहस्य नही, सम्राट् ! **(अभियुक्त से)** अभियुक्त ! मै निश्चयपूर्वक कहती हूँ कि तुम पुरुप हो । मेरी ओर देखकर कहो—मै पुरुप हूँ ।

अभियुक्त **(विभावरी की ओर देखकर)** अच्छा तो मैं पुरुष हूँ ।

विक्रमादित्य **(क्रुद्ध होकर 'अपराजित' म्यान से निकालकर)** सावधान ! तुम सत्य से खिलवाड कर रहे हो, अभियुक्त ! राज-मर्यादा का अपमान करने के कारण तुम्हे कठोर दण्ड दिया जायगा । ज्वालामुखी के मुख पर बैठकर तुम अंजलि के जल से अपनी रक्षा करना चाहते हो । **(जोर से)** प्रहरी !

अभियुक्त **(घुटने टेककर)** सम्राट् ! क्षमा करे। मैं अपराधिनी हूँ, मैं आपकी करुणा का दान चाहती हूँ । **[प्रहरी का प्रवेश, वह प्रणाम करता है ।]**

विक्रमादित्य **(अभियुक्त से)** तो तुम पुरुष नही हो ? अभी विभावरी की ओर देखकर तुमने कहा कि मै पुरुष हूँ ।

अभियुक्त मैं स्त्री हूँ । अपने सम्राट् के सामने असत्य भाषण नही कर सकती ।

विक्रमादित्य इसमे कुछ रहस्य है। अच्छा तुम स्त्री ही सही । **(अकस्मात् दूसरी ओर नेपथ्य मे देखकर)** ओह इतना भयानक सर्प. **[प्रहरी उस ओर दौडता है। अभियुक्ता भागकर सिंहासन के पीछे छिप जाती हे ।]**

विक्रमादित्य अभियुक्ता वास्तव मे स्त्री है, सर्प न होते हुए भी सर्प के नाम से वह विचलित हो गई । पुरुषो का यह लक्षण नही है । **(विभावरी की ओर देखकर)** तुम विचलित नही हुई ? **[खड्ग म्यान मे रखते हुए ।]**

विभावरी मै साहसी हूँ, सम्राट् !

अभियुक्त **(आगे बढकर)** सम्राट् ! क्षमा-दान करे । विभावरी पुरुष हे ।

विक्रमादित्य ओह ! यह रहस्य है । मैं भी अनुमान करता हूँ विभावरी पुरुष हे।

विभावरी पुष्पिके, तुमने विश्वासघात किया । **[अभियुक्त की ओर दृष्टि करके ।]**

पुष्पिका क्षमा हो, राजकुमार ! प्रयत्न करने पर भी मैं सम्राट् के सामने असत्य भाषण नही कर सकी ।

विक्रमादित्य (**साश्चर्य**) राजकुमार !

पुष्पिका सम्राट् ! क्षमा की भिक्षा माँगते हुए निवेदन करती हूँ कि यह विभावरी शक राजकुमार क्षत्रप भूमक है।

विक्रमादित्य (**आश्चर्य और क्रोध से**) शक राजकुमार भूमक ! (**तलवार पर हाथ रखते हुए**) बोलो, राजकुमार भूमक ! तुम सौराष्ट्र के युद्ध मे कहाँ रहे ? क्या इसी वेष मे विदिशा की नारियो के बीच छिपे हुए थे ? तुम विभावरी हो ! क्यो कायर राजकुमार ! तुम्हे अपनी माता का स्तन्य लज्जित करते हुए सकोच नही हुआ ! स्त्री-वेष मे तुम्हे अपने पुरुषत्व को कलकित करते हुए क्षोभ नही हुआ ! और फिर तुम्ही अभियोग लाये थे ! स्वय अपराधी होते हुए अभियोग लगाने का साहस ! राजमर्यादा मे तुम्हे असत्य का अभिनय आत्म-हत्या करने से अच्छा ज्ञात हुआ ! कायरता की प्रतिमूर्ति राजकुमार भूमक !

भूमक : मै कायर नही हूँ, सम्राट् !

विक्रमादित्य तुम कायर नही हो ? तुम इतने तुच्छ हो कि तुम्हे आर्य-नारी बनने की योग्यता भी नही आई। आर्य-नारी ने रोदन किया ! उसके कण्ठ की विकृति हुई ! अपना पुरुष-स्वर छिपाने के लिए कण्ठ की विकृति ! उसने अपमान सहा ! शस्त्र का प्रयोग नही किया ! वह सम्मान के प्रतिशोध मे सम्राट् के सामने अभियोगिनी बनी, और उसे अभियोग के स्पष्ट करने मे लज्जा हुई ! ये सब क्या आर्य-नारी के लक्षण है ? मुझे पहले ही सन्देह होने लगा था। शको मे आर्य-नारियो का धर्म पहचानने की क्षमता कहाँ ? तुम शक राजकुमार भूमक हो, तुम इन बातो को क्या समझो ? तुम केवल स्त्री-वेप धारण करना जानते हो।

भूमक सम्राट् ! आप मेरा अपमान न कीजिए। स्त्री-वेष मैंने अपनी इच्छा से धारण किया। मै कायर नही हूँ। यदि आपकी इच्छा युद्ध करने की है तो मेरे लिए भी एक तलवार लाने की आज्ञा दीजिए। मैं जानता हूँ कि मै आप पर विजय प्राप्त नही कर सकता, किन्तु शक राजकुमार मरने से भी नही डरता।

विक्रमादित्य (**मुस्कराकर**) मै यह सुनकर प्रसन्न हूँ। (**घन्टे पर चोट करते हैं**) किन्तु विभावरी और भूमक मे क्या अन्तर है, यह मैं जानना चाहता हूँ ? यह सब काण्ड रहस्य के रूप मे मेरे सामने क्यो उपस्थित किया गया है ? स्त्री और पुरुष, फिर पुरुष और स्त्री ! मेरे राज्य मे इस इन्द्रजाल के लिए स्थान नही है।

[प्रहरी का प्रवेश]

प्रहरी : (**प्रणाम करके**) सम्राट् ! कोई सर्प नही दीख पडा।

विक्रमादित्य यह मैं जानता हूँ। (**विभावरी की ओर सकेत करते हुए**) इस स्त्री को शस्त्रागार मे ले जाकर इसे सैनिक का वस्त्र-विन्यास दो और साथ ही इस की रुचि के अनुसार एक तलवार भी।

प्रहरी : जो आज्ञा !

विक्रमादित्य स्त्री-वेष मे मेरे समक्ष तुम अपने पुरुषत्व को अधिक देर तक लज्जित मत करो, क्षत्रप-राजकुमार !

[भूमक का सैनिक के साथ प्रस्थान]

विक्रमादित्य (घूमकर पुष्पिका से) पुष्पिके, जो पुरुष था वह स्त्री-रूप मे आया और जिसमे पुरुष की कल्पना थी वह स्त्री ही निकली। यह सब मेरे सामने किस षड्यन्त्र का रूप है ?

पुष्पिका सम्राट् ! क्षमा करे। यह मेरी व्यक्तिगत जीवन-कथा है। परिस्थितिवश मुझे यह कार्य करना पडा। मै लाचार थी।

विक्रमादित्य तो तुम इस घटना-चक्र की प्रधान-पात्री हो ?

पुष्पिका नही, सम्राट् ! मै प्रधान-पात्री नही हूँ।

विक्रमादित्य तुम प्रधान-पात्री नही हो ? तुमने यह क्यो कहा कि मै पुरुष हूँ ?

पुष्पिका उपकार-ऋण से मुक्त होने के लिए, सम्राट् !

विक्रमादित्य उपकार-ऋण ? किसके उपकार-ऋण से मुक्त होने के लिए ?

पुष्पिका राजकुमार भूमक ने मेरे प्रति उपकार किया था।

विक्रमादित्य कैसा उपकार ?

पुष्पिका सम्राट् ! मै उज्जयिनी की निवासिनी हूँ। दो वर्ष पूर्व मैं एक कार्य से गुर्जर चली गई थी। अकस्मात् शको ने गुर्जर पर आक्रमण किया। दुर्भाग्य से मै भी शको के हाथो मे पड गई। जब अन्य बन्दियो के साथ मै वध-स्थान को ले जाई जा रही थी, उस समय एकाएक इस शक राजकुमार ने आकर मेरी रक्षा की और मुझे स्वतन्त्र किया।

विक्रमादित्य तुम पर ही यह कृपा क्यो की ?

पुष्पिका मै नही जानती, सम्राट् !

विक्रमादित्य सम्भवत तुम्हारे सौन्दर्य के आकर्षण ने उससे यह कार्य कराया हो।

पुष्पिका जो भी हो, सम्राट् ! किन्तु उसने मेरे आत्मसम्मान पर आँच नही आने दी और साथ ही मुझे जीवन-दान दिया। सम्राट् ! मुझे इतने बडे उपकार का बदला देना था।

विक्रमादित्य तो क्या उपकार का बदला तुम अन्याय-रूप से देती ?

पुष्पिका क्षमा कीजिए, सम्राट् ! राजकुमार भूमक ने इसी बात की याचना की थी।

विक्रमादित्य और इस क्षत्रप-राजकुमार ने स्त्री-वेष क्यो धारण किया ?

पुष्पिका सम्राट् ! जब आपने मालवा, गुर्जर और सौराष्ट्र से शको को निर्वासित किया तो मेरे ऊपर अनुग्रह रखने वाले क्षत्रप को गुर्जर छोडने मे कष्ट हुआ। उसने गुर्जर ही मे रहना निश्चय किया, किन्तु पुरुष-वेष मे रहना उसके जीवन के लिए सकट का कारण होता, इसलिए उसने स्त्री-वेष रखकर रहने मे ही अपनी कुशल समझी।

विक्रमादित्य फिर वह गुर्जर ही मे क्यो नही रहा ?

पुष्पिका सम्राट् ! दुर्भाग्य से गुर्जर मे लोगो की सन्देह-दृष्टि उस पर पड ही गई। इस समय मुझे उज्जयिनी भी आना था। तो उसने मुझसे प्रार्थना की कि वह भी मेरे साथ उज्जयिनी चले। मैने उसकी प्रार्थना स्वीकार की।

विक्रमादित्य क्या तुम उससे प्रेम करती हो ?

पष्पिका सम्राट् ! उपकार का बदला देना प्रेम नही कहा जा सकता।

विक्रमादित्य क्या वह तुमसे प्रेम करता है ?

पुष्पिका मै कह नही सकती, सम्राट् ! किन्तु इस प्रकार के व्यवहार की मैने सदैव अवहेलना की है। इस समय अधिक-से-अधिक वह मेरा भाई कहा जा सकता है।

विक्रमादित्य यह सुनकर मै प्रसन्न हूँ, किन्तु छद्मवेष रखने का अपराध करके भी उस राजकुमार को उज्जयिनी मे आते हुए भय नही हुआ ?

पुष्पिका उसे मेरे आश्रय का सबसे बडा बल था, सम्राट् ! वह समझता था कि मै उसकी पूर्ण रक्षा कर सकूँगी।

विक्रमादित्य जो तुम राज्य के समक्ष अपराधिनी होते हुए भी उसकी रक्षा नही कर सकी ?

पुष्पिका आप रक्षा कर सकते है, सम्राट् !

विक्रमादित्य तुम जानती हो, पुष्पिके ! शको को मै एक ही दण्ड दिया करता हूँ और वह है प्राण-दण्ड। किन्तु खेद है कि युद्ध मे इस क्षत्रप ने मेरा सामना नही किया। फिर भी इससे उसके दण्ड की व्यवस्था मे किसी प्रकार की बाधा नही पहुँचती। अभी एक बात तुम्हे और स्पष्ट करनी है। वह यह कि स्वय छद्मवेष मे उपस्थित होकर और तुम पर अभियोग लाकर उसने अपने किस कार्य की पूर्ति करनी चाही ?

पुष्पिका सम्राट् ! कुछ ही दिनो मे यहाँ उसे आपके आतक और मर्यादापूर्ण शासन का ज्ञान हो गया। उसे भय था कि वह किसी दिन भी न्याय-सभा के सामने उपस्थित कर दिया जायगा। अत उसे उज्जयिनी की प्रत्येक दिशा मे सम्राट् विक्रमादित्य का कृपाण दीख पडने लगा। उसने निश्चय किया कि वह शीघ्र ही कपिशा चला जायगा, किन्तु मार्ग मे उसे प्राणो का भय था। इसलिए उसने सैनिको के सरक्षण मे जाना ही उचित समझा। इसी बात के लिए उसे इस अभियोग की कल्पना करनी पडी।

विक्रमादित्य (सिर हिलाकर) ठीक।

पुष्पिका और सम्राट ! राज्य का यह नियम तो आपने निर्धारित कर दिया है कि नारी के अपमान का दण्ड देश-निर्वासन है। मै उस दण्ड के अनुसार निर्वासित होती, क्योकि मै स्वीकार करती कि मै पुरुष हूँ। मेरे दण्डित होने पर वह विभा-वरी-रूप मे आपसे यह प्रार्थना भी करता कि वह स्वय पदाघात कर मुझे राज्य

की सीमा से बाहर करता । इसलिए वह भी मेरे साथ-ही-साथ सैनिको के सरक्षण मे सीमा तक पहुँच जाता और सीमा पर पहुँचकर वह आपके राज्य से निकल भागता ।

विक्रमादित्य . यह रहस्य है !

पुष्पिका यही कारण है कि उसने मेरी आँखो मे आँखे डालकर मुझसे अनुरोध किया था कि मैं आपके सामने यह स्वीकार कर लूँ कि मैं पुरुष हूँ ।

विक्रमादित्य किन्तु, इससे अच्छा क्या यह न होता कि वह स्वय किसी स्त्री को अपमानित करके निर्वासन का दण्ड प्राप्त करता ?

पुष्पिका सत्य है, सम्राट् ! किन्तु आपसे प्राण-दान पाकर भी उसे भय था कि वह मार्ग ही मे किसी सैनिक द्वारा न मार दिया जाय ।

विक्रमादित्य तो इस अभियोग मे तुम तो निर्वासित हो ही जाती ।

पुष्पिका सम्राट् ! एक उपकारी के लिये मै यह भी करती, किन्तु बाद मे मै पुन: उज्जयिनी लौट आती, आपकी मुद्राओ से सुसज्जित अपना कण्ठ-हार दिखलाकर ।

विक्रमादित्य : तो तुमने अपराधी को छिपाकर और उसकी कूटनीति मे भाग लेकर राज-द्रोह किया है । तुम दण्ड की अधिकारिणी हो ।

पुष्पिका सम्राट् ! मैं दण्डित होने को प्रस्तुत हूँ, किन्तु अपने ऊपर अनन्त उपकार करने वाले शक राजकुमार की केवल एक इच्छा की पूर्ति करना मैने अपना परम-धर्म समझा ।

विक्रमादित्य किन्तु तुम जानती हो शको आर्यो का परस्पर क्या सम्बन्ध है ? शको ने आर्यो पर कितने अत्याचार किये है ? उन्होने ब्राह्मणो का वध किया है । उन्होने वर्णाश्रम धर्म को जड-मूल से उखाडने की चेष्टा की है । क्या शहानुशाही क्षत्रपो के शासन से तुम अपरिचित हो ?

पुष्पिका नही, सम्राट् ! मुझे शको के अत्याचार की कथा ज्ञात है, किन्तु शक राजकुमार भूमक बहुत दयावान् है । वह कोमल-हृदय है, वह न्यायी है, अन्यथा वह मुझे मुक्त क्यो करता ? वह मेरे सम्मान की रक्षा क्यो करता ? वह जाति से शक है, किन्तु अपने विश्वास से वह पूर्ण आर्य है । जैन धर्म मे उसका पूर्ण विश्वास है। वह हिंसा का विरोधी है, वह शक होकर भी शाकाहारी है ।

विक्रमादित्य तुम इस वक्तव्य से उसे निरपराध सिद्ध नही कर सकती । यदि आर्य-नारी की रक्षा करने के कारण उसे क्षमा भी कर दूँ तो कपटपूर्ण अभियोग के लिए उसे दण्डित तो करूँगा ही, और साथ ही तुम्हे भी ।

पुष्पिका सम्राट् ! मुझे दण्ड दीजिए, किन्तु मुझ पर उपकार करने वाले क्षत्रप-राज-कुमार को क्षमा कर दीजिए ।

विक्रमादित्य वह शक-क्षत्रप होने के कारण ही दण्ड का अधिकारी है । शासन का न्याय शक-क्षत्रप को शक्तिशाली नही रहने देगा । शको ने जिस प्रकार आर्य-सस्कृति को कुचलने की चेष्टा की है उसके लिए उन्हे अनेक परम्पराओ तक

प्रायश्चित की अग्नि मे जलना होगा। फिर विक्रमादित्य के सामने आर्य-धर्म का विद्रोही ससार का सबसे बडा अपराधी है।

पुष्पिका : क्या राजकुमार किसी भाति भी क्षमा नही किया जा सकेगा ?

विक्रमादित्य मैं उसे क्षमा भी कर सकता हूँ; किन्तु केवल एक बात पर और वह यह कि वह आर्य-धर्म स्वीकार करे और सारे देश मे उसका प्रचार करे। क्या वह यह प्रायश्चित स्वीकार करेगा ?

पुष्पिका सम्राट् ! मुझे आशा नही है।

विक्रमादित्य तब वह अवश्य दण्डित होगा। उसने राजधर्म की अवहेलना की है। उसने राज्य के प्रति षड्यन्त्र किया है, उसने एक झूठे अभियोग से अपनी मुक्ति की कुटिल युक्ति सोची है।

पुष्पिका (शिथिल होकर) सम्राट् की जो इच्छा !

विक्रमादित्य और सुनो, पुष्पिके ! तुम्हारे दण्ड की भी व्यवस्था है। यद्यपि सत्य बोलकर और राजधर्म की मर्यादा मानकर तुमने अपने अपराध की गुरुता कम कर ली है, फिर भी तुम्हे शक-क्षत्रप के साथ गुप्त अभिसन्धि करने के कारण दो मास के कारावास का दण्ड मिलेगा।

पुष्पिका सम्राट् ! मेरे कारावास का दण्ड बढा दीजिए, किन्तु मेरे उपकारी क्षत्रप को क्षमा कर दीजिए।

विक्रमादित्य यह असम्भव है। राजनीति स्त्रियो की विनयशीलता से तरल नहीं हुआ करती।

[प्रहरी के साथ भूमक सैनिक-वेश मे आता है। उसके हाथ मे तलवार है। वह एक सुन्दर शरीर का युवक दृष्टिगत होता है।]

विक्रमादित्य **(प्रहरी से)** प्रहरी ! तुम यही द्वार पर बाहर रहो। तुम्हारी आवश्यकता पडेगी।

प्रहरी **(सिर झुकाकर)** जो आज्ञा ! **[प्रस्थान]**

विक्रमादित्य **(भूमक से)** आओ, क्षत्रप-राजकुमार भूमक ! मै तुम्हारी गुप्त अभिसन्धि की सब बाते जान चुका हूँ। तुमने राज-मर्यादा का अपमान भी किया है। कपटपूर्ण अभियोग लाकर तुमने न्याय को धोखा देने की चेष्टा भी की है। तुम कुछ और कहना चाहते हो ?

भूमक जब उज्जयिनी की नारी ने भी मेरे साथ विश्वासघात किया तब मुझे और कुछ नही कहना।

विक्रमादित्य तुम इसे विश्वासघात क्यो कहते हो, क्षत्रप ! यदि उसने तुम्हारे पवित्र विश्वास की अवहेलना की होती तो वह निश्चय ही विश्वासघातिनी होती, किन्तु उसने सत्यासत्य का निर्णय करते हुए पवित्र राजधर्म की मर्यादा रखी। क्या इस आचरण के लिए तुम उसकी सराहना नही करोगे ?

भूमक सम्राट् ! मैने स्वय अपने दल के सैनिको से उसकी रक्षा की थी। मै चाहता

था कि वह भी आर्य-सम्राट् से मेरी रक्षा करती।

विक्रमादित्य तो तुम उपकार का प्रतिदान चाहते हो?

भूमक नही। संकटकाल मे केवल आत्म-रक्षा, और कुछ नही।

विक्रमादित्य किन्तु यह आत्म-रक्षा कपटपूर्ण अभियोग से नही हो सकती। तुम द्वन्द्व के लिए प्रस्तुत होकर आये हो? [**तलवार हाथ मे तौलते हैं।**]

भूमक मैं प्रस्तुत होकर आया हूँ, सम्राट्! [**तलवार हाथ मे सँभालता है।**]

विक्रमादित्य किन्तु तुम्हे युद्ध-दान नही मिलेगा।

भूमक मैं कारण जानना चाहता हूँ।

विक्रमादित्य कारण यह है कि स्त्री-वेष धारण कर लेने वाले व्यक्ति मेरे द्वन्द्व के योग्य नही रह जाते। मेरे सामने विभावरी का रूप है, मैं उस पर कृपाण नही रख सकूँगा। तुम्हारे लिए वधिक का कृपाण हो सकता है, विक्रमादित्य का 'अपराजित' नही। तुम तलवार पृथ्वी पर रख दो।

भूमक किन्तु मैं द्वन्द्व चाहता हूँ।

विक्रमादित्य (**तीव्र स्वर मे**) तुम न्याय-सभा के सामने हो, क्षत्रप!

[**भूमक लज्जा और क्रोध से तलवार फेंक देता है।**]

विक्रमादित्य न्याय की आज्ञा-पालन करने के कारण मैं प्रसन्न हुआ। भूमक! तुमने स्त्री-वेश धारण करके राज्य-दृष्टि के प्रति छल किया। झूठा अभियोग लगाकर तुमने राज्य-मर्यादा का अपमान किया, इसलिए तुम कठोर दण्ड के पात्र हो। किन्तु भूमक! किसी समय तुमने एक आर्य-नारी की प्राण-रक्षा की थी, इस कारण तुम्हे आंशिक रूप से क्षमा भी दी जा सकती है यदि तुम राज्य के नियम के अनुसार प्रायश्चित करो। तुम्हे प्रायश्चित करना स्वीकार है?

भूमक मुझे किसी प्रकार का भी प्रायश्चित करना स्वीकार नही है।

विक्रमादित्य फिर झूठे अभियोग के लिए दण्ड निश्चित है।

भूमक जो आपके समक्ष झूठा अभियोग है, वह मेरे समक्ष मेरी राजनीति है।

विक्रमादित्य किन्तु मै तुम्हे अपनी राजनीति से दण्ड दे रहा हूँ। सम्राट् के साथ कपट करने का दण्ड तुम जानते हो, भूमक!

भूमक सम्राट्! मैने कभी जानने की इच्छा नही की।

विक्रमादित्य तो अब जान लो। तुम्हारे दोनो हाथ काट लिए जायेगे।

पुष्पिका (**शीघ्रता से घुटने टेककर**) क्षमा, सम्राट्! क्षमा।

विक्रमादित्य उठो, पुष्पिके! उठो। तुम पहले से ही दण्डित हो। अब तुम्हे कुछ कहने का अधिकार नही है। (**भूमक से**) और भूमक, तुम्हारे दण्ड की व्यवस्था मैं इसी समय करूँगा। [**पुष्पिका उठती है।**]

भूमक सम्राट्! मैं सब समय प्रस्तुत हूँ।

[**विक्रमादित्य घण्टे पर चोट करते हैं।**]

विक्रमादित्य भूमक! मुझे केवल दुःख यही है कि तुम्हारे हाथो के न रहने से मैं कभी

तुम्हारा युद्ध-कौशल न देख सकूँगा, किन्तु कोई चिन्ता की बात नही। हाँ, अपने शेष जीवन मे तुम यह प्रयत्न करना कि अगले जन्म मे तुम्हारे दोनो हाथ जीवन-भर काम दे सके।

[प्रहरी का प्रवेश]

विक्रमादित्य (प्रहरी से) प्रहरी ! वधिक को शीघ्र यहाँ आने की आज्ञा सुनाओ। आज फिर भगवान् ज्योतिर्लिङ्ग महाकालेश्वर का रक्त का अभिषेक होगा।

प्रहरी (सिर झुकाकर) जो आज्ञा !

विक्रमादित्य पुष्पिके ! अपने उपकारी के प्रति जो कुछ भी श्रद्धा-वाक्य कहना है मेरे सामने ही कह लो। मुझे खेद है कि तुम्हारी क्षमा-प्रार्थना मुझे अस्वीकार करनी पडी। किन्तु शासन का न्याय सर्वोपरि है। वह शको के सम्बन्ध मे क्रूर है और अपराधियो के सम्बन्ध मे दृढ। वह तुम्हे अन्याय के समर्थन की आज्ञा नही देगा। और (**भूमक से**) राजकुमार भूमक ! मुझे खेद है कि तुम यहाँ एकाकी आये। यदि तुम्हारे कुछ साथी और होते तो पारस्परिक सहानुभूति मे तुम लोगो का दुःख कुछ कम होता।

भूमक सम्राट् ! मुझे अपने दुर्भाग्य की चिन्ता नही है।

विक्रमादित्य : ठीक है, तुम्हे सन्तोष होगा। अब हाथो से रहित होने पर तुम कपट करने के पाप से बचे रहोगे।

भूमक · यदि राजनीति ही कपट हो तो मैं उसमे पाप नही समझता। फिर भी मैं अपमानित होकर जीवित नही रहना चाहता। आप वधिक को आज्ञा दे कि वह हाथो के बदले मेरा सिर काट दे।

विक्रमादित्य नही, आज्ञा नही दी जा सकती। विक्रमादित्य द्वन्द्व और रण स्थल के अतिरिक्त किसी अन्य स्थल पर प्राण-दण्ड नही देता। मै केवल तुम्हारे हाथ काटने की आज्ञा दे सकूँगा। फिर तुम्हारे खण्डित शरीर से मुझे अन्याय रोकने मे भी सहायता मिल सकेगी। तुम दण्ड के प्रतीक बनकर इस प्रकार की न्याय-सभा करने के अवसर कम आने दोगे।

[वधिक का प्रवेश। अर्ध-नग्न, भयानक शरीर। कमर मे जाँघिया। हाथो मे कड़े। बाल खुले हुए। माथे पर त्रिपुण्ड और हाथ मे कृपाण। वह आकर प्रणाम करता है।]

विक्रमादित्य : वधिक ! तुम्हारे सामने यह शक अपराधी है। न्याय की आज्ञा है कि तुम इसके दोनो हाथ काट दो।

पुष्पिका (आगे बढकर, हाथ जोडकर) सम्राट् ! यदि आप राजकुमार को क्षमा नही करते तो मेरे भी दोनो हाथो के काटे जाने को आज्ञा दीजिये। अपने ऊपर उपकार करने वाले को दण्डित होता हुआ देखकर मेरी आत्मा मेरा तिरस्कार कर रही है। सम्राट् ! मेरी कुछ प्रार्थना है !

विक्रमादित्य : (तीक्ष्ण स्वर से) अपने स्थान पर ही रहो, पुष्पिके ! तुम्हारा न्याय हो

चुका है। न्याय के आदेश मे परिवर्तन के लिए कोई स्थान नही है, जब तक कि अपराधी राज-विधान के अनुसार प्रायश्चित न करे। मै अपनी ओर से एक वार फिर अवसर दे सकता हूँ। क्षत्रप ! तुम प्रायश्चित करने के लिए प्रस्तुत हो ?

भूमक (दृढता से) नही।

विक्रमादित्य : (वधिक से) वधिक ! तुम अपना कार्य करो।

वधिक (भूमक से) अपराधी ! घुटने टेको।

[भूमक घुटने टेकता है।]

वधिक दोनो हाथ जोडकर आगे वढाओ।

[भूमक दोनो हाथ जोडकर आगे वढाता हे।]

विक्रमादित्य शक राजकुमार ! इन हाथो से एक वार भगवान् ज्योतिर्लिङ्ग महाकालेश्वर को प्रणाम करो, फिर प्रणाम करने वाले ये हाथ नही रहेगे।

भूमक : सम्राट्, क्षमा करे। मैने तीर्थंकरो और शक-सम्राटो के अतिरिक्त किसी को प्रणाम नही किया।

विक्रमादित्य अब उन्हे दूसरे जन्म मे प्रणाम करना। राजकुमार ! अब तुम प्रस्तुत हो ?

भूमक मै प्रस्तुत हूँ, सम्राट् !

विक्रमादित्य (वधिक से) वधिक, अब तुम भी प्रस्तुत हो जाओ।

वधिक : जो आज्ञा ! [वह अपना कृपाण उठाता है।]

विक्रमादित्य . तुम और कुछ कहना चाहते हो, क्षत्रप !

भूमक कुछ नही, सम्राट् ! मै केवल यही दुख लेकर ससार मे रहूँगा कि विक्रमादित्य सम्राट् माँगने पर भी मुझे मृत्यु नही दे सके। मुझे एक दुख और रहेगा कि अब हाथो के न रहने से मै अपने सम्मान की रक्षा न कर सकूँगा।

पुष्पिका . (गहरी साँस लेकर) और समय पडने पर इन हाथो से किसी नारी की रक्षा भी नही हो सकेगी।

विक्रमादित्य दो दुख तुम्हारे और एक दु.ख पुष्पिका का, तीन दुख हुए। मै इसके लिए आर्य-धर्म के तीन स्मारक वनवाऊँगा। और कुछ ? (कुछ रुककर) कुछ नही ? (वधिक से) वधिक ! महाकालेश्वर का अभिषेक हो।

[वधिक तलवार उठाकर वार करता है। पुष्पिका शीघ्रता से आगे बढ़ जाती है और उसके माथे मे चोट लग जाती है। वह गिर पड़ती है। विक्रमादित्य शीघ्रता से बढकर उसके समीप पहुँचते हैं।]

विक्रमादित्य : (वधिक से) वधिक, ठहरो ! (वधिक सहमकर पीछे हट जाता है) (गहरी साँस लेकर पुष्पिका से) पुष्पिके, यह तुमने क्या किया ?

पुष्पिका (टूटे स्वर से) अपने उपकारी की रक्षा, सम्राट् !

भूमक (उठकर) सम्राट् ! मै प्रायश्चित करने के लिये प्रस्तुत हूँ।

विक्रमादित्य : (उठकर) क्षत्रप, यदि तुम पहले ही प्रायश्चित करने के लिये प्रस्तुत

हो जाते तो पुष्पिका को चोट न लगती ।

भूमक : सम्राट् ! मुझे आपके शासन में उज्जयिनी की नारी की महानता ज्ञात नहीं थी । मैं नहीं जानता था कि आपने अपने शासन का आदर्श इतना ऊंचा रखा है, जिसमें नारियाँ उपकार का बदला देने के लिए अपने प्राणों का उत्सर्ग तक कर सकती हैं ।

विक्रमादित्य : तो तुम प्रायश्चित करने के लिए प्रस्तुत हो ?

भूमक : हाँ, सम्राट् ! मैं प्रस्तुत हूँ ।

विक्रमादित्य : (वधिक से) वधिक, तुम जा सकते हो ।

[वधिक का सिर झुकाकर प्रस्थान]

विक्रमादित्य : (भूमक से) भूमक, मुझे प्रसन्नता है कि तुम प्रायश्चित करने के लिये तैयार हो । प्रायश्चित की पहली व्यवस्था यह है कि तुम पुष्पिका को अपनी बहन समझकर—यदि वह जीवित रही तो—उसकी शुश्रूषा का भार लोगे । स्वीकार है ?

भूमक : (सिर झुकाकर) स्वीकार है, सम्राट् ! [पुष्पिका के सिर को अपने घुटने पर रखता है ।]

विक्रमादित्य : प्रायश्चित की दूसरी व्यवस्था यह है कि तुम जैन-धर्म छोड़कर आर्य-धर्म का पालन करोगे और उसका प्रचार सौराष्ट्र के समीपवर्ती प्रदेश में करोगे । स्वीकार है ?

भूमक : (सिर झुकाकर) स्वीकार है, सम्राट् !

विक्रमादित्य : गो-ब्राह्मण की रक्षा करने का पुनीत कर्त्तव्य तुम्हारे जीवन का प्रथम कर्त्तव्य होगा । स्वीकार है ?

भूमक : (सिर झुकाकर) मैं स्वीकार करता हूँ, सम्राट् !

विक्रमादित्य : तो आज अपनी सारी प्रतिज्ञाओं को भगवान् महाकालेश्वर के मन्दिर में अभिमन्त्रित करो ।

भूमक : मुझे स्वीकार है, सम्राट् ! पुष्पिका के महान् उत्सर्ग में आपके चरित्र-बल की श्रेष्ठता छिपी हुई है । सुगन्धित पुष्प का विकास वसंत ही में होता है । आपके शासन में मैं अनुभव करता हूँ कि जैसे आर्य-धर्म का सूर्य अपनी उज्ज्वल और प्रखर रश्मियों से भारतीय गगन-मण्डल में चमक रहा है और उसके सामने छल का कोई बादल नहीं आ सकता । मैंने स्वयं अपनी आँखों से देख लिया कि आपके राज्य में षड्यन्त्र सफल नहीं हो सकता । आज मुझे गौरव है कि मैं आपका सेवक और आर्य-धर्म का सच्चा अनुयायी हूँ ।

विक्रमादित्य : (हाथ उठाकर) तब तुम मुक्त हो, क्षत्रप राजकुमार !

पुष्पिका : सम्राट् (टूटे स्वर में) मेरी प्रार्थना पूरी हुई मैं कृतज्ञ हूँ ! और ..और मेरी एक प्रार्थना और है ! आज की अमर घटना.. की स्मृति ..में आपका,...संवत् प्रचलित हो ।

भूमक हाँ, सम्राट् ! अभी तक के मान्य युधिष्ठिर-सवत् के स्थान पर विक्रम-सवत् का प्रचलन हो, यह मेरी भी प्रार्थना है।

विक्रमादित्य (हाथ उठाकर) तथास्तु ! पुष्पिके, तुम आदर्श नारी हो। तुम्हारी शुश्रुषा मे राज्य की विशेष सहायता रहेगी। तुम्हारे आदर्श आचरण के कारण तुम्हारा अपराध भी क्षमा किया गया।

भूमक और पुष्पिका (सम्मिलित स्वर मे) सम्राट् विक्रमादित्य की जय हो !

[सम्राट् विक्रमादित्य अभय-मुद्रा मे हाथ उठाते है।]

[परदा गिर जाता है।]

10

समुद्रगुप्त पराक्रमांक

•

पात्र-परिचय

समुद्रगुप्त पराक्रमाक—पाटलिपुत्र के सम्राट्
धवलकीर्ति—सिहल के राजदूत
मणिभद्र—भाडागार के अधिकरण
कोदण्ड—महाबलाध्यक्ष
घटोत्कच, वीरबाहु—भगवान् बुद्धदेव की प्रतिमा निर्माण करने वाले शिल्पी
प्रियदर्शिका—सम्राट् समुद्रगुप्त की वीणा-वाहिनी
रत्नप्रभा—राजनर्तकी
प्रहरी

•

काल—ई० 363
स्थान—पाटलिपुत्र

समुद्रगुप्त पराक्रमांक

[भाडागार का बाहरी कक्ष। दीवालो पर अनेक नृत्य-मुद्राओ मे नर्तकियो के चित्र हैं। स्फटिक पत्थरो के स्तम्भो पर दीपो का आलोक हो रहा है। पीछे लौह-दण्डो से बना हुआ परिवेश है। मच के बीच मे समुद्रगुप्त खडे हुए है। शरीर पर श्वेत और पीत परिधान। रत्नजटित शिरोभूषण, केश उन्मुक्त। पुष्ट वक्षस्थल, जिस पर रत्नो के हार। कटिबन्ध मे कृपाण। उनकी मुद्रा गम्भीर है। उनके दाहिनी ओर सिंहल के राजदूत धवलकीर्ति और राज्य के महाबलाध्यक्ष कोदण्ड हैं और बाईं ओर भाडागार के अधिकरण मणिभद्र हैं। धवलकीर्ति का पीत, मणिभद्र का श्वेत और कोदण्ड का नील परिधान है। कोदण्ड सैनिक-वेश मे है। द्वार पर शस्त्र लिए हुए प्रहरी। समुद्रगुप्त धवलकीर्ति को सम्बोधन करते हुए कहते हैं]

समुद्रगुप्त तो अब यह निश्चय है कि भाडागार मे वे रत्न नही है ?

धवलकीर्ति यह तो आपने स्वय देखा, सम्राट्! किन्तु भाडागार से इस तरह चोरी हो जाना आश्चर्यजनक है। भाडागार के अधिकरण मणिभद्र स्वय कुछ नही कह सकते।

समुद्रगुप्त : (तीव्र स्वर से) क्यो नही कह सकते ? (मणिभद्र से) मणिभद्र! वे रत्न कैसे चोरी चले गये ? आज तुम्हारा वह विश्वास कहाँ है जिसमे दो युगो से पाटलिपुत्र की मर्यादा पोषित होती आ रही थी ? वह विश्वास कहाँ है जिसमे मैने तुम्हे कौशल, काची और देवराष्ट्र की सम्पत्ति सौपी थी ? वह विश्वास कहाँ है जिसमे लिच्छवि-वश का गौरव निवास करता रहा है ? क्या उस विश्वास मे विष प्रवेश कर गया ? बडी से बडी सम्पत्ति की रक्षा करने का अनुभव लेकर भी तुम दो हीरक-खण्डो की रक्षा नही कर सके ? तुमने मेरे विश्वास मे इन रत्नो की केवल दो चिनगारियो से आग लगा दी! तुम्हारे ये श्रम-बिन्दु यदि रक्त-बिन्दु बन जाते! [क्रूर दृष्टि]

मणिभद्र सम्राट्! अच्छा होता यदि मेरे प्रत्येक रोम से रक्त-बिन्दु निकलकर आपके चरणो पर गिरकर कह सकते कि मै निर्दोष हूँ! यदि रक्त-बिन्दु वाणी-रहित है तो आप उन्हे राजनीति की भाषा दीजिए, किन्तु आपके विश्वास की पवित्रता

खोकर मैं जीवन की रक्षा नही चाहता ।

धवलकीर्ति सम्राट् ! आपका विश्वास खोकर कौन अपने जीवन की रक्षा करना चाहेगा ? किन्तु मणिभद्र की सरक्षा से रत्नो का चोरी जाना आश्चर्यजनक है ।

मणिभद्र यह आश्चर्य ही मुझे मृत्यु-पीडा का दशन है । सम्राट् ने जिस विश्वास से मुझे अश्वमेध यज्ञ की सचित निधि सौपी थी, उसी विश्वास की पवित्रता से मैने उन रत्नो की सरक्षा की थी, फिर भी प्रात वे राज्य-भाडागार मे नही पाये गये ।

समुद्रगुप्त भाडागार के एकमात्र अधिकारी तुम्ही हो, मणिभद्र ! फिर तुम्हारी आज्ञा के बिना वहाँ कोई प्रवेश ही कैसे कर सकता है ?

धवलकीर्ति यही तो आश्चर्य है, सम्राट् !

समुद्रगुप्त आश्चर्य से अपराध नही छिपाया जा सकता, धवलकीर्ति ! अपराध की सहस्र जिह्वाएँ है जो अग्नि-शिखा की भाँति चचल हो सकती है और (**मणिभद्र** से) तुम यह जानते हो, मणिभद्र, कि भाडागार की रक्षा क्या है ! वह कृपाण के दर्पण मे बन्द की हुई छाया है, कृपाण से मुक्त नहीं की जा सकती ।

मणिभद्र सम्राट् ! मै अपनी मृत्यु हाथ मे लेकर आया हूँ । रत्नो का खो जाना ही मेरे लिए सबसे बडा अपराध है । मुझे केवल अपने भाग्य-दोष का दु ख है । यश और कीर्ति के साथ सम्राट् की सेवा पच्चीस वर्षो तक करने के अनन्तर इस भाँति अपयश से मेरे जीवन का अन्त हो ! मै आपसे अपनी मृत्यु माँगने आया हूँ, सम्राट् !

समुद्रगुप्त मुझसे अपनी मृत्यु माँगने की भी आवश्यकता है ?

मणिभद्र सत्य है, सम्राट् ! मै अभी तक अपने जीवन की समाप्ति कर चुका होता, किन्तु आपके समक्ष अपनी आत्मा की पवित्रता के दो शब्द कहे बिना मुझे परितोष न होता । आप मेरे चरित्र के सम्बन्ध मे अनेक बाते सोच सकते थे । अब मुझे सन्तोष है, मैने अपनी आत्मा की पुकार आप तक पहुँचा दी । अब मुझे आज्ञा दीजिए ।

समुद्रगुप्त मणिभद्र ! अभी तुम नही जा सकोगे । तुम्हारे उत्तरदायित्व के साथ राज्य का भी उत्तरदायित्व है। यदि तुम्हारे अधिकार मे सुरक्षित की गई अश्वमेध-यज्ञ की सारी सम्पत्ति भी नष्ट हो जाती तो मुझे इतना दु ख न होता जितना इन दो रत्न-खण्डो की चोरी से हुआ है। इन रत्नो के साथ जैसे मेरे हृदय की सारी शान्ति और पवित्रता भी खो गई है ।

धवलकीर्ति सम्राट् ! उन रत्नो का सम्बन्ध भी पवित्रता से ही था । वे सिंहल की राजमहिषी के कठहार के प्रधान रत्न थे जो भगवान् बुद्धदेव की प्रतिमा के लिए विश्वास से आपकी सेवा मे भेजे गये थे ।

समुद्रगुप्त (**आश्चर्य से**) राजमहिषी के कठहार से ?

धवलकीर्ति हाँ, सम्राट् ! मै ही राजदूत बनकर सिंहल से यह सम्पत्ति लाया हूँ ।

जब सिहल के महासामन्त सिरिमेघवन्न ने एक लक्ष स्वर्ण-मुद्राएँ वोधगया मे एक विशाल मठ बनवाने और भगवान् बुद्ध की रत्न-जटित स्वर्ण-प्रतिमा निर्माण करने के निमित्त स्वर्ण-पात्रो मे सुसज्जित की तब राजमहिषी कुमारिला के नेत्रो मे श्रद्धा और प्रेम के आँसू छलक आये। उन्होने उसी समय महासामन्त से प्रार्थना की कि उनके कठहार के दो प्रधान हीरक-खण्ड श्रीमान् की सेवा मे इस अनुरोध के साथ भेज दिये जायँ कि ये हीरक-खण्ड भगवान् बुद्धदेव की प्रतिमा के अँगुष्ठ-नखो के स्थान पर विजडित हो। सम्राट् ! ये दोनो हीरक जैसे राजमहिषी कुमारिला की श्रद्धा और प्रेम के दो पवित्र अश्रु-बिन्दु थे, जो आज खो गये। इन अश्रु-बिन्दुओ के खो जाने से भगवान् के चरणो पर राजमहिषी की श्रद्धाजलि न चढ सकेगी। प्रतिमा अपूर्ण रहेगी, सम्राट् !

समुद्रगुप्त (आवेग से) तब सुनो, धवलकीर्ति ! तुम सिहल के राजदूत हो। मेरे महासामन्त की भेट लाने वाले ! तुम्हारे सामने मै यह प्रतिज्ञा करता हूँ कि सम्राट् समुद्रगुप्त यदि उन रत्न-खण्डो को नही खोज सका तो वह अपने राज्याधिकार का ध्यान छोडकर भगवान् बुद्धदेव की प्रतिमा के सामने कठोर प्रायश्चित करेगा !

मणिभद्र सम्राट् ! .....

धवलकीर्ति सम्राट् !.. .

समुद्रगुप्त रुको, राजदूत ! यह प्रतिज्ञा समस्त साम्राज्य के भाग्य-निर्णय के साथ घोषित की जा रही है। यह बुद्धदेव के प्रति मेरे अपराध का दण्ड है। राजमहिषी के विश्वास की रक्षा न कर सकने वाले का प्रायश्चित है। मेरी घोषणा प्रचारित हो और इसके साथ मेरे भाडागार के अधिकरण का कलक भी अमर हो ! **(मणिभद्र की ओर दृष्टि)** वह किस रूप मे हो, इसका निर्णय अभी होगा।

मणिभद्र सम्राट् ! आपके इन शब्दो मे मेरी मृत्यु भी मेरा उपहास कर रही है। जीवन का एक-एक क्षण मुझे शूल की भाँति चुभ रहा है। मै आपकी सेवा से जाने की आज्ञा चाहता हूँ, जिससे मै अपने इस कलकित जीवन को अधिक कलकित न कर सकूँ।

समुद्रगुप्त . ठहरो, मणिभद्र ! मेरी प्रतिज्ञा की पूर्ति मे तुम्हारी सहायता अपेक्षित होगी। तुम्हारी आत्महत्या से मेरा कलक मिटेगा नही। मुझे कुछ बातो के जानने की आवश्यकता है।

धवलकीर्ति . सम्राट् ! यदि एकान्त की आवश्यकता हो तो मुझे आज्ञा दीजिए।

समुद्रगुप्त नही, धवलकीर्ति ! ठहरो। तुम्हारे ही सरक्षण मे यह मठ और प्रतिमा निर्मित हुई है, तुम्हारी उपस्थिति भी आवश्यक है। मुझे विश्वास है, तुम अपने सकेतो से मेरे प्रयत्न मे सहायता पहुँचाओगे। **(मणिभद्र से)** विश्वासपात्र मणिभद्र ! वे रत्नखण्ड सर्वप्रथम तुम्हारे अधिकार मे कब आये ?

मणिभद्र · सम्राट् ! आज से दस दिन पूर्व।

समुद्रगुप्त फिर तुमने उन्हे कहाँ सुरक्षित किया ?

मणिभद्र इसी कक्ष मे, सम्राट् !

समुद्रगुप्त अतरग प्रकोष्ठ मे क्यो नही ?

मणिभद्र : मुझे धवलकीर्ति से यह सूचना मिली थी कि मठ और प्रतिमा का कार्य सम्पूर्ण हो गया है और अब वे शीघ्र ही शिल्पियो को दे दिये जावेगे, अत उन्हे अतरग प्रकोष्ठ मे रखने की आवश्यकता नही है ।

धवलकीर्ति महासामन्त से मुझे यही आज्ञा मिली थी कि मैं शीघ्रातिशीघ्र मठ और प्रतिमा के निर्माण और उसकी व्यवस्था की चेष्टा करूँ । सिहल द्वीप के भिक्षुओ को बोधगया मे बडा कष्ट होता है, इसलिए उनकी सुविधा के लिए शीघ्रातिशीघ्र मठ का निर्माण होना था । सम्राट् ! आपकी प्रशसा नही की जा सकती कि आपने भागवत धर्म मे विश्वास रखते हुए भी बोधगया मे भिक्षुओ के लिए मठ बनवाने की आज्ञा दे दी ।

समुद्रगुप्त यह मेरी प्रशसा का अवसर नही है, धवलकीर्ति ! हॉ, तो मठ और प्रतिमा की शीघ्र व्यवस्था करने की प्रेरणा से ही तुमने मणिभद्र को अतरग प्रकोष्ठ मे रत्न रखने से रोक दिया ?

धवलकीर्ति हाँ, सम्राट् ! शिल्पी प्रतिमा-निर्माण का कार्य समाप्त कर चुके थे । दो-एक दिन मे ही भगवान् बुद्धदेव के चरणो मे वे रत्न-विजडित कर दिये जाते ।

समुद्रगुप्त दो-एक दिन का प्रश्न नही था । प्रश्न मणिभद्र के उत्तरदायित्व और कोप-सरक्षा का था । फिर वे रत्न शिल्पियो को दूसरे दिन दे दिये गये ?

मणिभद्र नही, सम्राट् ! वे रत्न शिल्पियो को नही दिये जा सके । शिल्पियो को केवल पूर्व-निश्चय के अनुसार चार सहस्र स्वर्ण-मुद्राएँ दी गई थी ।

समुद्रगुप्त क्यो ?

मणिभद्र : उनका पारिश्रमिक चार सहस्र मुद्राएँ निश्चित किया गया था ।

समुद्रगुप्त . तो कार्य-समाप्ति के पूर्व ही उन्हे पारिश्रमिक क्यो दिया गया ?

मणिभद्र धवलकीर्ति का आदेश था ।

समुद्रगुप्त (धवलकीर्ति से) क्यो, धवलकीर्ति ! तुम्हारा यह निर्देश सत्य है ?

धवलकीर्ति . सत्य है, सम्राट् ! मैं उन शिल्पियो के कार्य से बहुत प्रसन्न था । वे अत्यन्त सात्विक प्रवृत्ति वाले है, मुझे विश्वास था कि वे पुरस्कार पाने के उपरान्त भी रत्न जडने का कार्य पूर्ण करेगे ।

समुद्रगुप्त ऐसे कितने शिल्पी है ?

धवलकीर्ति केवल दो है, सम्राट् !

समुद्रगुप्त उनके नाम ?

धवलकीर्ति घटोत्कच और वीरबाहु ।

समुद्रगुप्त इस समय वे कहाँ है ?

धवलकीर्ति वे अपने आवास-स्थान पर ही होगे !

कोदण्ड नही, सम्राट् ! वे इस समय बन्धन मे है । जब से रत्नो की चोरी का समाचार प्रसिद्ध हुआ है तब से मैने उन शिल्पियो को बन्दी कर रखा है । मै उन्हे मणिभद्र के साथ ही ले आया था । वे बाहर है, यदि आज्ञा हो तो उन्हे सम्राट् की सेवा मे उपस्थित करूँ !

समुद्रगुप्त मैं तुम्हारी सतर्कता से प्रसन्न हूँ, महाबलाध्यक्ष ! यद्यपि मैं जानता हूँ कि शिल्पी निर्दोष है, फिर भी मैं उनसे विचार-विनिमय करना चाहूँगा । उन्हे मेरे समक्ष शीघ्र ही उपस्थित करो !

कोदण्ड (सिर झुकाकर) जो आज्ञा ! [प्रस्थान]

समुद्रगुप्त तो धवलकीर्ति ! तुम शिल्पियो के कार्य मे बहुत प्रसन्न हो ?

धवलकीर्ति : हाँ, सम्राट् ! उन्होने केवल एक मास मे भगवान् की प्रतिमा का निर्माण कर दिया ।

समुद्रगुप्त उनके निर्माण-कार्य की कुछ विशेषता ?

धवलकीर्ति : सम्राट् ! भगवान् की प्रतिमा इतनी सजीव ज्ञात होती है, मानो वे सघ को उपदेश देने के अनन्तर अभी ही मौन हुए है । उनकी प्रतिमा का ओज अन्य धर्मावलम्बियो को भी बौद्ध-धर्म की ओर आकर्षित करने मे समर्थ है ।

समुद्रगुप्त और बोधगया का मठ पूर्ण हो गया ?

धवलकीर्ति हाँ, सम्राट ! मठ भी पूर्ण हो गया । एक सहस्र भिक्षुओ के निवास के योग्य उसमे प्रबन्ध है और उसमे चरम सीमा की कला-कुशलता उपस्थित की गई है ।

समुद्रगुप्त कला-कुशलता की चरम सीमा से क्या तात्पर्य है ?

धवलकीर्ति सम्राट् ! बुद्धदेव के जीवन के समस्त चित्र भित्तियो पर अकित है । महामाया का स्वप्न, गौतम का जन्म, शाक्य-नरेश का सुखोत्सव, वैराग्य उत्पन्न कराने वाले रोग, जरा और मृत्यु के चित्र, भगवान् गौतम का महाभिनिष्क्रमण, फिर उनकी तपस्या एव उनके बोधिसत्व का रूप ! सघ को उपदेश देते हुए उनके चित्रो मे महान् ऐश्वर्य और विभूति है ।

समुद्रगुप्त और भिक्षुओ की सुविधा का क्या प्रबन्ध है ?

धवलकीर्ति सम्राट् ! प्रवज्या की समस्त सामग्री प्रत्येक कक्ष मे सचित है । चीवर आदि की व्यवस्था देश के अन्य मठो से इसमे विशेष रहेगी । सक्षेप मे, अब किसी भी भिक्षु को लौकिक एव पारलौकिक दृष्टि से किसी प्रकार की भी असुविधा नही हो सकती ।

समुद्रगुप्त तब तो मठ के समस्त शिल्पियो को राज्य की ओर से भी पुरस्कार प्रदान किया जावेगा—घटोत्कच और वीरबाहु को तो विशेष रूप से । धवल-कीर्ति ! पाटलिपुत्र मे इन दोनो शिल्पियो को आवास कहाँ दिया गया था ?

धवलकीर्ति : जिस अतिथिशाला मे मैं हूँ उसी के समीप राज्यकुटीर मे ।

समुद्रगुप्त तुमने रत्न-खण्डो के सम्बन्ध मे उनसे कभी चर्चा की थी ?

धवलकीर्ति भगवान् बुद्ध की प्रतिमा के समाप्त होने के कुछ पहले ही मैने भगवान् के चरण-अँगुष्ठ मे स्थान छोडने की आज्ञा देते समय उनसे उन रत्नो की चर्चा की थी, किन्तु उनसे अधिक वार्त्तालाप कर अपना समय नष्ट करना मैने कभी उचित नही समझा । आवश्यक आदेशो के अतिरिक्त मैने उनसे कभी कोई बात ही नही की ।

समुद्रगुप्त तुम सिंहल के प्रमुख कलाविद् हो । फिर कलाकारो से वार्त्तालाप करना समय नष्ट करना नही है, धवलकीर्ति !

धवलकीर्ति . सम्राट् ! आप जैसे उत्कृष्ट कलाकार से वार्त्तालाप करना सौभाग्य की बात है, किन्तु सभी कलाकार मेरे समय के अधिकारी नही है ।

समुद्रगुप्त तुम भूल करते हो, धवलकीर्ति ! प्रत्येक कलाकार मे कुछ न कुछ मौलिकता अवश्य होती है। कलाविद् को चाहिए कि कलाकार की उस मौलिकता का वह रत्नो की भाँति सग्रह करे ।

[महाबलाध्यक्ष कोदण्ड का प्रवेश]

कोदण्ड (प्रणाम कर) सम्राट्, दोनो शिल्पी यहाँ उपस्थित है । आज्ञा हो तो भीतर लाऊँ !

समुद्रगुप्त उपस्थित करो !

[महाबलाध्यक्ष का प्रस्थान]

समुद्रगुप्त धवलकीर्ति ! ये दोनो शिल्पी क्या सिंहल के निवासी है ?

धवलकीर्ति हाँ, सम्राट् ! इनका आदि-स्थान तो सिंहल ही है, किन्तु अपनी कला-प्रियता के कारण ये समस्त देश का पर्यटन करते है ।

[महाबलाध्यक्ष कोदण्ड के साथ घटोत्कच और वीरबाहु का प्रवेश ।
वे प्रणाम करते है ।]

कोदण्ड (सकेत करते हुए) सम्राट् ! यह शिल्पी घटोत्कच है और यह वीरबाहु ।

समुद्रगुप्त घटोत्कच और वीरबाहु, सिंहल के शिल्पी ! किन्तु समस्त देश के अभिमान, राज्य मे सौन्दर्य की प्रतिष्ठा करने वाले, प्रस्तर मे प्राण फूंकने वाले ! तुम लोगो से राज्य की शोभा है । इसीलिए ये किसी भी दण्ड-विधान से दण्डित नही हो सकते । क्यो शिल्पी ! सौन्दर्य किसे कहते है ?

घटोत्कच सम्राट् ! विषम वस्तु मे समता लाना ही सौन्दर्य है ।

समुद्रगुप्त और तुम क्या समझते हो, वीरबाहु ?

वीरबाहु हृदय मे अनुराग की सृष्टि का साधन ही सुन्दरता है ।

समुद्रगुप्त यदि चोरी के प्रति हृदय मे अनुराग है तो वह भी सुन्दरता है, शिल्पी !

वीरबाहु सम्राट् ! यदि चोरी सात्त्विक भावो से होती है तो वह सुन्दरता कही जा सकती है ।

समुद्रगुप्त : सात्त्विक भावो से कौन-सी चोरी होती है ?

वीरबाहु कला, कविता और नारी-हृदय की, सम्राट् ! जिसमे निरीहता और पवित्रता है ।

समुद्रगुप्त और रत्न-खण्डो की चोरी, शिल्पी !

वीरबाहु वह सुन्दरता नही है, सम्राट् ! रत्न-खण्डो की चोरी मे तृष्णा है, जिसका रूप दु ख है और फल पाप है ।

समुद्रगुप्त तुम्हे ज्ञात है कि सिहल से भेजे गये रत्न-खण्ड चोरी चले गये ?

वीरबाहु सम्राट् ! मुझे इसकी सूचना महाबलाध्यक्ष से ज्ञात हुई । यही कारण है कि प्रभात से हम लोगो की स्वतन्त्रता पर प्रतिबन्ध है । हमारी रक्षा कीजिए, सम्राट् !

समुद्रगुप्त तुम लोगो की पूर्ण रक्षा होगी, शिल्पी ! पहले मेरे प्रश्नो के उत्तर दो ।

वीरबाहु प्रश्न कीजिए, सम्राट् !

समुद्रगुप्त तुम्हे दो सहस्र स्वर्ण-मुद्राएँ प्राप्त हो चुकी है ?

वीरबाहु हाँ, सम्राट् !

समुद्रगुप्त और घटोत्कच, तुम भी पुरस्कृत हो चुके हो ?

घटोत्कच हाँ, सम्राट् !

समुद्रगुप्त तुम लोग कार्य-समाप्ति के पूर्व ही पुरस्कृत क्यो हुए ?

घटोत्कच धवलकीर्ति की प्रसन्नता ही इसका कारण है ।

वीरबाहु या हम लोगो की कार्य-कुशलता ।

समुद्रगुप्त क्या इस बात की सम्भावना हो सकती है कि उन दो सहस्र मुद्राओ मे वे रत्न-खण्ड भी चले गये हो ?

घटोत्कच सम्राट् ! यदि रत्न-खण्ड उन स्वर्ण-मुद्राओ मे मिलते तो मै मणिभद्र को इस बात की सूचना अवश्य देता ।

वीरबाहु सम्राट् ! मेरा निवेदन तो यह है कि यदि मुझे दो सहस्र मुद्राओ से एक मुद्रा भी अधिक मिलती तो मै वह मणिभद्र के पास भेज देता ।

समुद्रगुप्त : इस बात का प्रमाण ?

घटोत्कच सम्राट् ! हृदय की निर्मलता का प्रमाण केवल निर्मल हृदय ही पा सकता है ।

समुद्रगुप्त क्यो शिल्पी ! क्या तुम्हे मेरे हृदय की निर्मलता मे विश्वास नही है ?

घटोत्कच सम्राट् ! हमे पूर्ण विश्वास है, इसीलिए आपसे निवेदन करना चाहते है । दूसरी बात यह है कि आज तक मैने भगवान् बुद्धदेव की प्रतिमाओ का निर्माण किया है । भगवान् बुद्धदेव की अनेक प्रतिमाओ तथा उनके जीवन के अनेक चित्रो को अकित करते-करते मेरे हृदय मे—मेरी कला मे—भी तथागत की प्रतिमा का निर्माण हो गया है । उनके 'आर्य-सत्य' मेरी प्रत्येक यति और गति मे सचरित हो गये है । ऐसी स्थिति मे रत्न-खण्डो की प्रभा मेरे चरित्र को कलकित नही कर सकती ।

समुद्रगुप्त वीरबाहु ! तुम्हारा क्या कथन है ?

वीरबाहु सम्राट् ! जो रत्न-खण्ड भगवान् बुद्धदेव के चरणो मे स्थान पाने के लिए भेजे गये थे, वे रत्न-खण्ड निर्जीव है और हम लोगो के हृदय सजीव। निर्जीवो मे इतनी शक्ति नही है कि वे सजीवो की प्रकृति मे बाधा डाल सके। यदि आवश्यकता होगी तो रत्न-खण्डो के स्थान पर हम लोग अपने हृदय भी विजडित करने के लिए प्रस्तुत होगे।

समुद्रगुप्त दोनो ही उच्च कोटि के कलाकार तथा शिल्पी है। घटोत्कच ! बुद्धदेव की प्रतिमा का निर्माण हो गया ?

घटोत्कच सम्राट् ! पिछले सप्ताह ही पूर्ण हो गया।

समुद्रगुप्त फिर रत्न-खण्डो को प्राप्त करने मे इतना विलम्ब क्यो हुआ ?

घटोत्कच सम्राट् ! मैने धवलकीर्ति से रत्न खण्डो के शीघ्र पाने की याचना की थी, किन्तु उन्हे अवकाश नही था।

समुद्रगुप्त धवलकीर्ति को अवकाश नही था ! क्यो धवलकीर्ति ?

धवलकीर्ति सम्राट् ! मै पाटलिपुत्र का उपासक हूँ। उसके सौन्दर्य को देखने की इच्छा अनेक वर्षो से मेरे हृदय मे थी। मै यहाँ आकर उसे अधिक-से-अधिक देखने के अवसर प्राप्त करना चाहता था। अत, मै प्राय आपके नगर के उद्यानो और सरोवरो ही मे अपने जीवन की अनुभूतियाँ प्राप्त करता था, किन्तु फिर भी शिल्पियो की आवश्यकता का ध्यान मुझे सदैव रहा करता था।

घटोत्कच किन्तु, गत सन्ध्या को जब मैंने आपकी सेवा मे आने की चेष्टा की, तो मुझे ज्ञात हुआ कि पाटलिपुत्र मे आकर नृत्य-दर्शन की ओर आपकी विशेष अभिरुचि हो गई है। आप नृत्यो की विशेष भाव-भगिमाओ के चित्र-सग्रह मे इतने व्यस्त रहते है कि आपको मेरी प्रार्थनाओ के सुनने का अवकाश नही था।

धवलकीर्ति घटोत्कच ! मेरी रुचि की समालोचना करने का तुम्हे कोई अधिकार नही है।

समुद्रगुप्त शान्त, धवलकीर्ति ! मुझे यह सुनकर प्रसन्नता है कि तुम्हे नृत्य-कला विशेप प्रिय है। तुमने पाटलिपुत्र की राजनर्तकी का नृत्य, सम्भव है, अभी तक न देखा हो। वह भी मै तुम्हे दिखलाने का प्रयत्न करूँगा।

धवलकीर्ति सम्राट् ! आपकी विशेष कृपा है।

समुद्रगुप्त मै उसे अभी दिखलाने का प्रबन्ध करूँगा। मेरे नृत्य देखने का समय भी हो गया। (**महाबलाध्यक्ष से**) कोदण्ड ! तुम इन शिल्पियो को न्याय-सभा की उत्तर-शाला मे स्थान दो। (**शिल्पियो से**) शिल्पी घटोत्कच और वीरबाहु ! तुम्हारे उत्तरो से मै प्रसन्न हुआ। राजकीय नियमो के आचरण मे यदि शिल्प-साधको को कुछ असुविधा हो तो वह उपेक्षणीय है। तुम ध्यान मत देना, शिल्पी !

वीरबाहु सम्राट् की जो आज्ञा !

धवलकीर्ति मुझे कोई असुविधा नही है, सम्राट् !

समुद्रगुप्त तो तुम लोग जाओ, राज-शिल्पियो को किसी प्रकार की असुविधा नही होनी चाहिए ।

कोदण्ड : जो आज्ञा, सम्राट् !

समुद्रगुप्त और सुनो, कोदण्ड ! राजनर्तकी रत्नप्रभा को इसी स्थान पर आने की सूचना दो । आज मैं धवलकीर्ति के साथ इसी स्थान पर राजनर्तकी का नृत्य देखूँगा ।

[कोदण्ड और शिल्पी जाने के लिए उद्यत होते हैं ।]

समुद्रगुप्त और सुनो ! प्रियदर्शिका से कहना कि वह मेरी वीणा ले आये । आज मैं फिर वीणा बजाना चाहता हूँ । केदारा के स्वरो का सन्धान हो !

कोदण्ड जो आज्ञा !

[कोदण्ड और शिल्पियो का प्रस्थान]

समुद्रगुप्त (मणिभद्र से) मणिभद्र ! दुर्भाग्य से यदि यह तुम्हारी अन्तिम रात्रि हो, तो तुम्हे अपने सम्राट् की वीणा सुनने का अवसर क्यो न मिले ? तुम भी सुनो !

मणिभद्र यह मेरा सौभाग्य है, सम्राट् !

धवलकीर्ति सम्राट् ! फिर मुझे आज्ञा दीजिए ।

समुद्रगुप्त क्यो धवलकीर्ति ! क्या तुम हमारी वीणा नही सुनोगे और राजनर्तकी का नृत्य नही देखोगे ? तुम तो बडे भारी कलाकार हो !

धवलकीर्ति सम्राट् ! प्रशसा के लिए धन्यवाद । मै सोचता हूँ कि कला की उपासना के लिए पवित्र मन की आवश्यकता है । मेरा मन इस घटना से बहुत अव्यवस्थित हो गया है ।

समुद्रगुप्त मैं अपनी वीणा से तुम्हारा हृदय व्यवस्थित कर दूँगा । फिर आज इस वादन और नृत्य को तुम मणिभद्र का विजय-विदा समझो । जिस मणिभद्र ने पच्चीस वर्षों तक राज्य की सेवा की है उसके अन्तिम क्षणो को मुझे अधिक-से-अधिक सुखमय बनाने का प्रयत्न करना चाहिए । इस मगल-वेला के समय तुम्हे भी उपस्थित रहना चाहिए । पाटलिपुत्र के न्यायाचरण मे सिहल का भी प्रतिनिधित्व हो ।

धवलकीर्ति सम्राट् ! आपका कथन सत्य है, किन्तु मैने समझा, सम्भवत आप एकान्त चाहते है ।

समुद्रगुप्त नही, धवलकीर्ति ! ऐसे समारोहो मे एकान्त टूटे हुए तार की तरह कष्ट-दायक है ।

धवलकीर्ति (सँभलकर) और सम्राट् ! आपकी वीणा मे वह स्वर है जो टूटे हुए हृदयो को भी जोड देता है । आप सगीत-कला मे नारद और तुम्बुरु को भी लज्जित करते है । आपकी सगीत-प्रियता इसी बात से स्पष्ट है कि आपकी मुद्राओ पर वीणा बजाती हुई राजमूर्त्ति अकित है । मैने सुना है कि आपने अपने अश्वमेध

यज्ञ के उपरान्त दो मास तक सगीतोत्सव किया था।

समुद्रगुप्त यह सरस्वती की साधना करने की सबसे सरल युक्ति है। अच्छा, धवलकीर्ति ! तुम भी तो सगीत जानते हो ?

धवलकीर्ति . सम्राट् ! आपकी साधना की समानता कौन कर सकता है ! किन्तु इस कला की ओर मेरी अभिरुचि अवश्य है।

समुद्रगुप्त : और नृत्य-कला भी तो जानते होगे ?

धवलकीर्ति सम्राट् ! नृत्य-कला का मैने अध्ययन-मात्र किया है, उसकी विवेचना कर सकता हूँ, किन्तु स्वय नृत्य नही कर सकता।

समुद्रगुप्त नृत्य-कला देखने से प्रेम है ?

धवलकीर्ति यह सिंहल के वातावरण का प्रभाव है।

समुद्रगुप्त मुझे प्रसन्नता है कि सिंहल का वातावरण मेरी अभिरुचि के अनुकूल है। फिर तो राजनर्तकी के नृत्य से तुम्हे विशेप प्रसन्नता होगी।

धवलकीर्ति यह सम्राट् का अनुग्रह है।

समुद्रगुप्त : और मेरी वीणा के स्वर भी आज मुखरित होगे।

धवलकीर्ति आपकी वीणा तो स्वर्गीय सगीत है, सम्राट् !

समुद्रगुप्त अधिक नही, धवलकीर्ति ! किन्तु सगीत ईश्वरीय विभूति की वह किरण है जिससे मनुष्य देवता हो जाता है। हृदय का समस्त कलुप वीणा की एक झकार से ही दूर हो जाता है।

[प्रियदर्शिका का वीणा लिए हुए प्रवेश। वह प्रणाम करती है।]

समुद्रगुप्त आओ, प्रियदर्शिके ! आज मै फिर वीणा बजाऊँगा।

प्रियदर्शिका **(वीणा आगे प्रस्तुत कर)** प्रस्तुत है, सम्राट् !

समुद्रगुप्त **(वीणा हाथ मे लेते हुए)** केदारा के स्वर मे वीणा का सन्धान है ?

प्रियदर्शिका हाँ, सम्राट् ! इसी राग की आज्ञा प्राप्त हुई थी।

समुद्रगुप्त राजनर्तकी रत्नप्रभा का शृगार पूर्ण हुआ ?

प्रियदर्शिका वे तैयार हे, आपकी सेवा मे उपस्थित होने की आज्ञा चाहती है।

समुद्रगुप्त उन्हे नृत्य के साथ आने दो केदारा स्वरो मे !

प्रियदर्शिका · **(सिर झुकाकर)** जो आज्ञा ! **[प्रस्थान]**

समुद्रगुप्त **(वीणा के तारो पर उँगलियाँ फेरते हुए)** सुनो, धवलकीर्ति ! केदारा के स्वर मे वह भावना है कि करुणा की समस्त मूर्छनाएँ एक बार ही हृदय मे जाग्रत हो जाती है। ऐसा ज्ञात होता हे जैसे सारा ससार तरल होकर किसी की आँखो से आँसू बनकर निकलना चाहता हे। तारिकाएँ आकाश की गोद मे सिमिटकर पतली किरणो मे प्रार्थना करने लगती है। कलिकाएँ सुगन्धि की वेदना से फूल बन जाती है और बिन्दु मे डूबकर पृथ्वी के चरणो मे आत्म-समर्पण करना चाहती है। अच्छा, तो सुनो वह रागिनी !

[समुद्रगुप्त वीणा पर केदारा का स्वर छेड़ते हैं। धीरे-धीरे बजाते हुए वे तन्मय हो जाते हैं। उसी क्षण रत्नप्रभा का नृत्य करते हुए प्रवेश। रत्नप्रभा के अंग-अग से रागिनी की गति व्यक्त हो रही है। वह अट्ठारह वर्षीया सुन्दरी है। सौन्दर्य की रेखाओ ही मे उसके शरीर की आकृति है। केशकलाप में पुष्पो की मालाएँ, शरीर में अंगराग और चन्दन की चित्र-रेखाएँ हैं। मस्तक पर केसर का पुष्पांकन। बीच मे कुंकुम का बिन्दु। नेत्र कोरो मे अजन की रेखा। चिबुक पर कस्तूरी बिन्दु। कठ में मुक्ताहार। हृदय पर रत्न-राशि। कटि मे दोलायमाना किंकणी और पैरो मे नूपुर। वह केदारा राग की साकार प्रतिमा बनकर नृत्य कर रही है। साथ ही सम्राट् समुद्रगुप्त की वीणा से निकलती हुई रागिनी राजनर्तकी के पद-विन्यास मे माधुर्य भर रही है। कुछ समय नृत्य करने के उपरान्त 'सम' पर राजनर्तकी हाथ जोडकर भाव-मुद्रा मे सम्राट् के समक्ष तिरछी होकर खडी हो जाती है।]

समुद्रगुप्त : (प्रसन्न होकर) मेरे राज्य की उर्वशी, तुम बहुत सुन्दर नृत्य करती हो! . यह पुरस्कार!

[गले से मोती की माला उतारकर देते हैं।]

रत्नप्रभा (हाथ जोडकर) सम्राट्! मै इसके योग्य नही हूँ। मुझ से आज दो बडे अपराध हुए है!

समुद्रगुप्त (भ्रांत होकर) तुमसे कभी कोई अपराध नही हुआ! कौन-सा अपराध?

रत्नप्रभा . पहला अपराध तो यह है कि मै आपकी मधुर वीणा के अनुकूल नृत्य नही कर सकी। आपके सगीत की मर्यादा कभी भग नही हुई। आज मेरे नृत्य के कारण आपका सगीत कलुषित हो गया, सम्राट्!

समुद्रगुप्त : नही, रत्नप्रभा! अपने नृत्य से तुमने मेरे स्वरो मे सहायता ही पहुँचाई है, हानि नही!

रत्नप्रभा सम्राट्! मै अनुग्रहीत हूँ। आपने कभी मेरे नृत्य के साथ वीणा नहीं बजाई। आज आपने मेरे नृत्य को अनन्त गौरव प्रदान किया है।

समुद्रगुप्त यह कला की साधना मे आवश्यक है। अच्छा दूसरा अपराध कौन सा है?

रत्नप्रभा सम्राट्! आज आपने इतनी मधुर वीणा बजाई कि सगीत की इस दिव्य अनुभूति मे मेरे हृदय का समस्त दोप दूर हो गया और आज मै अपना अपराध स्वीकार करने के लिए प्रस्तुत हूँ।

समुद्रगुप्त मै उत्सुक हूँ सुनने के लिए, रत्नप्रभा!

रत्नप्रभा सम्राट्! राजनर्तकी होकर मैने एक अन्य व्यक्ति से भेट स्वीकार की!

समुद्रगुप्त (उत्सुकता से) किससे?

धवलकीर्ति (शीघ्रता से) मुझसे, सम्राट्! सिंहल के राजदूत धवलकीर्ति से।

समुद्रगुप्त · तो इसमे कोई हानि नही। तुम तो हमारे राज्य के अतिथि हो, तुमसे भेट स्वीकार करने मे कोई हानि नही है।

रत्नप्रभा फिर भी, सम्राट्! अन्य राज्य के व्यक्ति की भेट स्वीकार करने की आज्ञा मेरी आत्मा मुझे नही देती। इनकी यह भेट आप ही के चरणो मे समर्पित करती हूँ। और वह यह है!

[सम्राट् के चरणो मे दो हीरक-खण्ड समर्पित करती है।]

मणिभद्र : **(हीरक-खण्डो को देखकर प्रसन्नता से)** वे हीरक-खण्ड यही है! **(उद्वेग से)** महाराज्ञ प्रायश्चित नही करेगे! महाराज प्रायश्चित नही करेगे!!

समुद्रगुप्त **(रत्नो को हाथ मे लेकर)** ठहरो, ठहरो, मणिभद्र! प्रसन्नता से पागल मत बनो। **(धवलकीर्ति से)** राजदूत धवलकीर्ति! क्या यह सत्य है?

धवलकीर्ति . **[लज्जा से नीचे सिर करके मौन है।]**

समुद्रगुप्त बोलो, राजदूत! क्या तुम इसी आचरण मे राजदूतत्व का निर्वाह करते हो?

धवलकीर्ति सम्राट्! मै लज्जित हूँ।

समुद्रगुप्त राजदूत! मुझे तुम पर पहले ही कुछ शका हो रही थी। मणिभद्र की आत्महत्या के विचार पर तुम मन ही मन प्रसन्न हो रहे थे, राजमहिषी कुमारिला के कठ-हार के रत्नो की पवित्रता का सन्देश जतलाकर तुम राज्याधिकार को लाछित करना चाहते थे, तुम इसीलिए शिल्पियो पर प्रसन्न हुए कि वे रत्न-खण्डो के लिए अधिक जिज्ञासा न करे, तुम रत्नप्रभा के नृत्य के पूर्व ही चले जाना चाहते थे जिससे तुम रत्नप्रभा के समक्ष दोषी होने से बच सको। मैंने इसीलिए आज वीणा बजाई जिससे सगीत के वातावरण मे अपराधी विह्वल हो जाय और अपना रहस्य खोल दे। नही तो मर्यादा के सकट मे सगीत की क्या आवश्यकता? तुम मेरे ही राज्य मे आकर विष का बीज बोना चाहते हो? बोलो! तुम्हे क्या दण्ड दिया जाय?

धवलकीर्ति सम्राट्, जो चाहे! मुझे दण्ड दें।

समुद्रगुप्त तुम जानते हो, धवलकीर्ति! राजदूत दण्डित नही होता। इसीलिए तुम निर्भीकता से कहते हो, सम्राट् जो चाहे मुझे दण्ड दे। किन्तु तुम यह ठीक तरह से समझ लो कि समुद्रगुप्त पराक्रमाक न्याय को देवता मानकर पूजता है और अन्याय को दैत्य समझकर उसका विनाश करता है। मैं अपने महासामन्त सिरि-मेघवर्ण से तुम्हारे दण्ड की व्यवस्था कराऊँगा। तुमने राजमहिषी कुमारिला के रत्न-खण्डो को स्वय कलुषित किया है, मणिभद्र के प्राण सकट मे डाले है, राज-नर्तकी को मर्यादा के पथ से विचलित करने का प्रयत्न किया है। दण्ड तुम्हे पाकर सुखी होगा।

धवलकीर्ति सम्राट्! मुझे अधिक लज्जित न कीजिए। मैं स्वय परिताप की अग्नि मे जल रहा हूँ।

समुद्रगुप्त . उस परिताप की अग्नि के प्रकाश मे क्या यह स्पष्ट कर सकते हो कि ये

रत्न-खण्ड तुमने मणिभद्र की सरक्षा से किस प्रकार मुक्त किये ?

धवलकीर्ति अपने अन्तिम समय मे मै असत्य भाषण नही करूँगा, सम्राट् ! आपको अभी ज्ञात हुआ कि शिल्पियो की कार्य-समाप्ति के पूर्व ही शिल्पियो को मैने प्रसन्न हो निश्चित पारिश्रमिक दे दिया और वह इसलिए कि जब मेरे सामने मणिभद्र उन्हे देने के लिए स्वर्ण-मुद्राएँ गिनें तो मैं मणिभद्र का ध्यान सिंहल की विशेषता की ओर बार-बार आकर्षित करूँ और ऐसे ही किसी अवसर पर मे वे रत्न-खण्ड दृष्टि बचाकर मजूषा मे से निकाल लूं। अपने कार्य की सरलता के कारण ही मैंने उन रत्नो को भाडागार के भीतरी प्रकोष्ठ मे न रखने का परामर्श मणिभद्र को दिया था।

समुद्रगुप्त फिर रत्नप्रभा को तुमने किस विचार मे ये रत्न भेट किये ?

धवलकीर्ति . मैंने उससे नृत्य करने की प्रार्थना की, किन्तु उसने कहा कि मै सम्राट् की आज्ञा के बिना किसी दूसरे के समक्ष नृत्य नही करूँगी। मैंने बार-बार प्रार्थना की और उसकी सुन्दरता के अनुरूप ही हीरक-खण्डो को भेट की। उसने मौन होकर वे रत्न-खण्ड ले लिये। न जाने क्या सोचकर और क्या समझकर !

समुद्रगुप्त फिर रत्नप्रभा ने तुम्हारे सामने नृत्य किया ?

धवलकीर्ति नही, सम्राट् ! उसने फिर भी अस्वीकार किया।

समुद्रगुप्त रत्नप्रभा ! मै तुमसे प्रसन्न हूँ। अब स्वीकार करो अपना यह पुरस्कार।

[हाथ मे रखी हुई माला देते हैं।]

रत्नप्रभा (माला लेकर सिर झुकाकर) सम्राट् ! आपकी प्रसन्नता मे ही मेरे पुरस्कृत होने की सार्थकता है।

समुद्रगुप्त मेरे साम्राज्य मे इस प्रकार का अन्याय नही हो सकता, इसी बात से मै सुखी हूँ।

धवलकीर्ति सम्राट् ! मुझे और किसी प्रश्न का उत्तर देना है ?

समुद्रगुप्त नही ! अब केवल महासामन्त को सूचना देनी है कि राजमहिषी के रत्न-खण्डो को भगवान् बुद्धदेव की श्रद्धा मे समर्पित न कर राजनर्तकी को भेट करने के अपराध मे जो दण्ड-व्यवस्था हो, उसका प्रबन्ध करें।

धवलकीर्ति सम्राट् ! आप उन्हे सूचना देने का कष्ट न उठाएँ। मैंने मणिभद्र के साथ विश्वासघात किया, राजमहिषी के हीरक-खण्डो को कलुषित किया, राजनर्तकी को मर्यादा से विचलित करने की चेष्टा की, और सम्राट् ! आपके प्रायश्चित करने का अवसर उपस्थित किया, इन सबका सम्मिलित दण्ड बहुत भयानक है। यदि मुझे सौ बार प्राण-दण्ड दिया जाय, तब भी वह पर्याप्त नही है। मैं अपनी ओर से सबसे बडा दण्ड स्वय अपने को दे रहा हूँ और वह है आत्महत्या !

[कटार अपने हृदय मे मार लेता है और सम्राट् के समक्ष ही गिर पडता है। मणिभद्र और राजनर्तकी के मुख से आश्चर्य और दु ख की ध्वनि]

समुद्रगुप्त स्वय दण्डित होने से अब तुम अपराधो से मुक्त हुए, धवलकीर्ति ! तुमने अपने नाम को धवल ही रहने दिया।

धवलकीर्ति (अस्फुट स्वरो मे) मै राजमहिषी को अपना मुख नही...दिखला सकता था सम्राट् ! मेरी कला की उपासना असत्य है ! मुझे.. शान्ति से मरने दे ! आपका सगीत

समुद्रगुप्त हाँ, धवलकीर्ति ! मै तुम्हे सगीत सुनाऊँगा। राजनर्तकी ! तुम नृत्य करो ! सच्चे अपराधी की मृत्यु को मगलमय बनाओ ! मणिभद्र के स्थान पर धवलकीर्ति को विजय-विदा दो ! मैं भी वीणा-वादन करूँगा। शिल्पियो को मुक्त कर यहाँ आने का निमन्त्रण दो ! आज धवलकीर्ति मृत्यु के समय मेरा मगल-वाद्य सुने। राजनर्तकी ! नृत्य शीघ्र आरम्भ हो !

[राजनर्तकी नृत्य करने के लिए प्रस्तुत होती है और सम्राट् समुद्र-गुप्त अपने हाथ मे वीणा लेकर स्वर छेडते है।]

[परदा गिरता है।]

11

✣ कृपाण की धार ✣

•

पात्र-परिचय

परम भट्टारक रामगुप्त—गुप्त-सम्राट् और समुद्रगुप्त पराक्रमाक का ज्येष्ठ पुत्र
चन्द्रगुप्त—रामगुप्त का छोटा भाई
ध्रुवस्वामिनी—रामगुप्त की रानी और महादेवी
शिखर स्वामी—रामगुप्त का अमात्य
सुलोचना—रामगुप्त की मधुबाला और प्रेयसी
वासती, हेमा—रामगुप्त की प्रतिहारियाँ

•

काल—382 ई०
स्थान—व्यास नदी के किनारे हिमालय की बाहरी श्रृखला मे विष्णुपद नामक पहाडी गढ मे रामगुप्त का युद्ध-शिविर

कृपाण की धार

[*स्थिति*—बाहर युद्ध का कोलाहल हो रहा है। शिविर के भीतर वशी की ध्वनि। उसके साथ ही नृत्य मे नूपुरो की झकार। उसके बाद ही अट्टहास। मदिरा मे कुछ मत्त रामगुप्त का हँसते हुए प्रवेश।]

रामगुप्त (हँसते हुए) वशी और उस पर नृत्य! क्यो सुलोचना! इसे भी युद्ध कहते है? नूपुरो का नाद ढाल की तरह सामने आता है और वशी की तीखी तान का तीर? वह हृदय तक पहुँच ही जाता है हृदय तक। (हँसता है) यह सगीत का युद्ध है। इसमे तुम मेरी शत्रु हो, सुलोचना!

सुलोचना : परम भट्टारक! सेविका शत्रु ही सही, किन्तु विजय तो सदैव आप ही की है।

रामगुप्त नही। इस युद्ध मे हारना ही मुझे अच्छा लगता है। मै हारना चाहता हूँ। परम भट्टारक महा-पराक्रम रामगुप्त का महा-पराक्रम हार मे ही है। कहाँ है तुम्हारी वशी के स्वर का तीर?

सुलोचना · वह यह रहा, परम भट्टारक!

[**वशी का तीव्र वादन**]

रामगुप्त ओह! मै हारा, मै हारा! तुम जीती, सुलोचना! महा-पराक्रम सुलोचना की जय! जय!! जय!!!

सुलोचना : परम भट्टारक! आपकी इस हार से जीत भी लज्जित हो जाती है।

रामगुप्त · हार ही तो मेरे हृदय का हार है, सुलोचना! और जब तुम्हारी वशी के स्वर का तीर तुम्हारी बकिम दृष्टि के तीर के साथ चलता है, तब मेरे हृदय के दोनो पक्ष घिर जाते है। तब मै तुमसे सन्धि करना चाहता हूँ, सुलोचना!

सुलोचना परम भट्टारक सन्धि भी शीघ्र कर लेते है।

रामगुप्त हाँ, सुलोचना! क्योकि तीर तो एक बार ही प्रहार करता है, किन्तु दृष्टि का तीर अनेक दिनो बाद भी ध्यान के धनुष पर चढकर प्रति क्षण प्रहार करता रहता है।

सुलोचना . किन्तु परम भट्टारक वीर है। वे प्रति क्षण युद्ध कर सकते है।

रामगुप्त प्रति क्षण युद्ध तो करता ही हूँ। और दो-दो युद्धो मे साथ-साथ भाग लेता हूँ। एक युद्ध शिविर के बाहर हो रहा है और दूसरा युद्ध हृदय के भीतर,

किन्तु देवि ! मैं बाहर के युद्ध मे उतना सावधान नही हूँ, जितना भीतर के युद्ध मे । तुम्ही कहो, देवि !

सुलोचना आज्ञा, देव !

रामगुप्त तुम्ही कहो, देवि ! मै हृदय के युद्ध मे भाग लूँ या बर्बर शको के युद्ध मे ? (**व्यग्य से**) हुँग्र्, बर्बर शक ! जो भूमि चाहते है, रक्त चाहते है, कर चाहते है। और मै ? मै दर्शन चाहता हूँ, हृदय चाहता हूँ, मुस्कान चाहता हूँ । किसमे अधिक आकर्षण है ?

सुलोचना परम भट्टारक सच्चे वीर है । युद्ध की बात ठीक समझते है ।

रामगुप्त युद्ध की बात वीर ही समझ सकता है, सुलोचना ! बर्बरो का युद्ध तो कृपाण की धार पर केवल दिन मे ही चलता है । यह युद्ध, मेरा युद्ध श्यामल नयनो की धार पर दिन और रात दोनो समय चलता है । उस युद्ध मे आग है, और इस युद्ध मे ? इस युद्ध मे मुस्कान की पँखुडियो से झरने वाला पराग है । उस युद्ध मे कर्कश ललकार है, इस युद्ध मे अभिसार है, शरीर का शृगार है । उसमे मरण है, इसमे जीवन है, सुलोचना ! इसमे जीवन है, अमर जीवन है और जीवन मे ही सुख है, आनन्द है ।

सुलोचना सत्य है, देव !

रामगुप्त हाँ, सुलोचना ! उस युद्ध मे कृपाण की धार पर मृत्यु है और इस युद्ध मे नेत्र की धार पर जीवन है, ऐसा जीवन जिसकी सीमा बडे-से-बडे राज्य की सीमा से भी बडी है ।

सुलोचना आपका कठ सूख रहा होगा, देव !

रामगुप्त नही, सुलोचना ! इस युद्ध की बात मे कठ नही सूखता । किन्तु तुम्हारे सकेत से जो लहर उठना चाहती है, वह उठे । सरिता मे एक लहर के बाद दूसरी लहर उठती है । उसी प्रकार तुम्हारा मधुपात्र भी उठे । लाओ, उठाओ अपने हाथो से वह लहर ।

सुलोचना लीजिए, देव ! [**पात्र भरकर देती है ।**]

रामगुप्त (**पान करते हुए**) ओह ! कितनी मादक लहर है ! लहर, लहर और तुम्हारा शरीर भी तो सौन्दर्य की लहर है, देवि ! इस सौन्दर्य की लहर से मेरे मधुपात्र की लहर उठी है । मधुपात्र की लहर और यह विचित्रता देखो, देवि ! कि एक लहर—तुम्हारे सौन्दर्य की लहर—मेरे नेत्रो मे समा रही है और दूसरी लहर—तुम्हारे मधुपात्र की लहर—मेरे कठ मे समा रही है, (**फिर पान करता है**) मेरे कठ मे समा रही है । कहते है कि लहरो को कोई पकड नही सकता , किन्तु मेरे नेत्र और कठ दो-दो लहरो को एक साथ पकड सकते है, दो-दो लहरो को ..

[**प्रतिहारी का प्रवेश**]

प्रतिहारी परम भट्टारक की जय हो !

रामगुप्त · कौन ! वासती ! आओ, तुम्हे भी मधु-पान कराऊँ ! मधु-पान कर 'जय' कहने मे जो मादकता आयेगी, नही जो मादकता उभरेगी नही. नही, ठीक नही कह सका !

वासती परम भट्टारक ! महामात्य शिखर स्वामी सेवा मे आने की अनुमति चाहते है।

रामगुप्त शिखर स्वामी ! महामात्य ! नही, ठीक नाम नही है। महामात्य का नाम मदिरामात्य होना चाहिए। आज मदिरामात्य शिखर स्वामी से भी युद्ध करूँगा कि कौन अधिक मधु-पान कर सकता है।

वासती : परम भट्टारक ! महामात्य शिखर स्वामी के सम्बन्ध मे क्या आज्ञा है ?

रामगुप्त (चौंककर) आज्ञा ! आज आज्ञा देने का अधिकार मेरी प्रेयसी सुलोचना को है। सुलोचना ! शिखर स्वामी के सम्बन्ध मे क्या आज्ञा है ?

सुलोचना मै तो दासी हूँ, परम भट्टारक ! दासी आज्ञा पालन कर सकती है, आज्ञा नही दे सकती।

[दूसरी प्रतिहारी का प्रवेश]

प्रतिहारी परम भट्टारक की जय हो !

रामगुप्त फिर जय ! अरे, मैं प्रेम के युद्ध मे हारना चाहता हूँ और तुम लोग 'जय' कहती चली आ रही हो ? कौन ! हेमा ! तुम मधुपात्र की 'जय' क्यो नही बोलती, मधुपात्र की, जो तुम्हारे परम भट्टारक पर भी जय प्राप्त कर चुका है। मै हार रहा हूँ और तुम जय बोलती हो !

हेमा परम भट्टारक ! महादेवी ध्रुवस्वामिनी सुसज्जित है। वे आपकी सेवा मे ।

रामगुप्त (बीच ही मे) महादेवी ध्रुवस्वामिनी ! ध्रुवस्वामिनी ! ओह ! सौन्दर्य की दीप-शिखा ! पिता समुद्रगुप्त की विजय मे सामन्त द्वारा अपनी पुत्री की भेट । वही तो मेरी महादेवी ध्रुवस्वामिनी ध्रुवस्वामिनी है।

वासंती परम भट्टारक ! क्या शिखर स्वामी महामात्य से निवेदन कर दूं कि इस समय महादेवी के आगमन ।

रामगुप्त (चौंककर) एँ, क्या कहा ? महामात्य शिखर स्वामी ! बाहर के युद्ध के नायक शिखर स्वामी और भीतर के युद्ध की नायिका ध्रुवस्वामिनी ! मैने कहा न, दो युद्ध साथ-साथ चल रहे है। दोनो से कह दो कि वे जायँ। मै दोनो से सन्धि कर लूंगा।

वासती परम भट्टारक ! महामात्य इस समय युद्ध का एक अत्यन्त आवश्यक समाचार निवेदन करने आये है।

रामगुप्त युद्ध का आवश्यक समाचार . ?

हेमा और परम भट्टारक ! महादेवी का आपसे यह प्रथम मिलन है।

रामगुप्त प्रथम मिलन ! हाँ, प्रथम मिलन । प्रथम मिलन किसे कहते हैं, वासती ! वसत के आने पर लता के प्रेम की गाँठ खुल जाती है, उसका नाम फूल है।

जो रहस्य की गाँठ नही खुलती, उसका नाम कली है। खुले और अध-खुले रहस्य के पास आने का नाम प्रथम मिलन है। हाँ, यही प्रथम मिलन है !

सुलोचना : किन्तु !

रामगुप्त किन्तु मेरे विचारो के मार्ग मे 'किन्तु' का कटक नही चाहिए, सुलोचना !

सुलोचना क्षमा करे, देव ! महामात्य को युद्ध का समाचार !

रामगुप्त · युद्ध का समाचार युद्ध का समाचार तुम सुनो, सुलोचना !

सुलोचना दासी युद्ध की नीति से अपरिचित है।

रामगुप्त जिसके सकेत पर युद्ध होते है, वह युद्ध की नीति से अपरिचित है ? (हँसता है) ह् ह् ह् ह् ह ! अच्छा, जाओ वासती ! जाओ हेमा ! दोनो को भेज दो। शिखर स्वामी और ध्रुवस्वामिनी। एक साथ। आज दोनो को एक साथ देखकर कहूँगा कि मेरे युद्ध-शिविर मे अमावस और पूनम एक साथ होती हे।

वासती जो आज्ञा ! महामात्य शिखर स्वामी सेवा मे अभी उपस्थित होगे।

हेमा : और महादेवी ध्रुवस्वामिनी भी इसी समय सुशोभित होगी।

[**दोनो का प्रणाम कर दो दिशाओ मे प्रस्थान**]

रामगुप्त (**सोचता हुआ**) शिखर स्वामी और ध्रुवस्वामिनी ! सुलोचना ! शिखर स्वामी को शकराज के युद्ध से अवकाश नही और ध्रुवस्वामिनी को प्रेम की धूप-छाँह मे सही मार्ग पाने का उत्साह नही ! प्रेम की धूप-छाँह मे !

सुलोचना परम भट्टारक ! आर्य समुद्रगुप्त चाहते थे कि राजकुमार चन्द्रगुप्त ही महादेवी का वरण करे। कदाचित् महादेवी भी यही चाहती थी।

रामगुप्त सुलोचना ! ज्येष्ठ भ्राता का अधिकार प्रेम से ऊपर है। पिता तो यह भी चाहते थे कि चन्द्रगुप्त ही राज्य का अधिकारी हो। किन्तु रामगुप्त के रहते क्या यह सम्भव था ? आज दोनो ही मेरे अधिकार मे है—राज्य और महादेवी, जो चन्द्रगुप्त के प्रेम की धूप-छाँह मे !

[**महामात्य शिखर स्वामी का प्रवेश**]

महामात्य परम भट्टारक की जय !

रामगुप्त महामात्य, तुम आ गये ! महादेवी भी आ रही है। मै यह पूछना चाहता हूँ कि महादेवी से युद्ध करूँ या सन्धि ! महादेवी चन्द्रगुप्त के प्रेम से !

महामात्य प्रेम के रहस्य सुलझाने का समय नही है, देव ! युद्ध का उलझाने वाला समाचार है।

रामगुप्त उसे मधुपात्र से सुलझा लो। (**सुलोचना से**) सुलोचना ! महामात्य शिखर स्वामी को एक मधुपात्र से पवित्र करो।

महामात्य परम भट्टारक क्षमा करे। शको ने हमे चारो ओर से घेर लिया है।

रामगुप्त चारो ओर से घेर लिया है ? तब उनसे कहो कि वे हमारी जय का घोष करे। चारो दिशाओ से जय-ध्वनि भी अच्छी तरह से गूंजेगी। परम भट्टारक

महापराक्रमाक रामगुप्त की जय ! जय !! जय !!! (हँसता है) ह्‌ह्‌ह्‌-ह्‌ह्‌ह ! तुम भी कहो ..महामात्य ! परम भट्टारक. ...

महामात्य परम भट्टारक ! आप मधु के प्रभाव से मुक्त हों। शकराज ने हमारी सेना को पराजित कर दिया है। हमारा शिविर शत्रु से घिर गया है। वे चारो ओर से बढना चाहते है।

रामगुप्त बढना चाहते है ! कोई हानि नही। उनका स्वागत करो। हम भी मधु-युद्ध मे तुम्हारा स्वागत करेगे। गुप्त-कुल अतिथि-सत्कार करना जानता है। क्यो सुलोचना ! अभी हमे महादेवी का भी तो सत्कार करना है !

सुलोचना सत्य है, देव !

महामात्य महादेवी का सत्कार आप नही करेंगे, परम भट्टारक ! शकराज करेगा।

रामगुप्त महादेवी का सत्कार शकराज करेगा ! मै समझा नही, अमात्य ! शकराज करेगा महादेवी का सत्कार ?

महामात्य : हाँ, देव ! महादेवी का सत्कार शकराज करना चाहता है। सुलोचना ! तुम यहाँ से जाओ। मै परम भट्टारक के साथ एकान्त चाहता हूँ।

सुलोचना : जो आज्ञा ! [प्रस्थान]

महामात्य परम भट्टारक ! मै आपसे प्रार्थना करना चाहता हूँ कि आप स्थिर चित्त से युद्ध की भयानकता का अनुमान करे। हमारे आधे से अधिक वीर मारे जा चुके है। शकराज ने विजय प्राप्त की है और सन्धि-पत्र भेजा है।

रामगुप्त देखने मे तो बडा सुन्दर सन्धि-पत्र है, महामात्य !

महामात्य किन्तु सुनने मे उतना ही भयानक। सुनिए, 'परम भट्टारक महापराक्रमाक रामगुप्त की सेवा मे कुषाणवशी शकराज का निवेदन है कि महादेवी ध्रुव-स्वामिनी का विवाह-सम्बन्ध सबसे प्रथम मुझसे स्थिर हुआ था किन्तु परम भट्टारक समुद्रगुप्त पराक्रमाक की दिग्विजय मे महादेवी के पिता ने सामन्त बन-कर महादेवी को आर्य समुद्रगुप्त के चरणो मे समर्पित कर दिया। महादेवी पर प्रथम अधिकार मेरा है। युद्ध मे विजय प्राप्त करके भी मैं इस बात पर सन्धि करता हूँ कि महादेवी को मेरे पास भेज दिया जाय। व्यास के दूसरे तट पर मेरा शिविर है। मैं कल सध्या तक महादेवी की प्रतीक्षा करूँगा।

—**कुषाणवशी शकराज**।'

रामगुप्त यह सन्धि-प्रस्ताव तो बडा भयानक है, अमात्य ! वह महादेवी की प्रतीक्षा करेगा ! इधर मै महादेवी की प्रतीक्षा कर रहा हूँ।

महामात्य : इस सन्धि-प्रस्ताव के सम्बन्ध मे क्या निर्णय है, परम भट्टारक !

रामगुप्त निर्णय ! मैं इस प्रस्ताव पर उससे भयानक युद्ध करता, किन्तु महामात्य, मेरे युद्ध के अच्छे-अच्छे वस्त्र सब राजधानी मे ही रह गये है। युद्ध मे शकराज कहेगा कि परम भट्टारक रामगुप्त पराक्रमाक के पास युद्ध के वस्त्र ही नही है। यह अपमान मै सहन नही कर सकूँगा।

महामात्य तो यह स्पष्ट है कि आप युद्ध मे नही जावेगे।

रामगुप्त : जाना तो चाहता हूँ, किन्तु किसी दूसरे के वस्त्र परम भट्टारक को पहनना शोभा नही देता।

महामात्य ऐसी स्थिति मे क्या करना चाहिए ? हमारे सब बडे-बडे वीर युद्ध मे काम आ चुके है। एक भी ऐसा वीर नही है जो शत्रु के आक्रमण को रोक सके।

रामगुप्त : चन्द्रगुप्त को युद्ध मे नही भेजा ? वह मेरी ओर से लडेगा और अपनी ओर से भी। क्योकि वह दोनो हाथो से तलवार चलाता है। एक हाथ उसका, एक हाथ मेरा।

महामात्य राजकुमार चन्द्रगुप्त आज ही राजधानी से आये है, किन्तु वे अकेले शत्रु के हजारो सैनिको से कैसे युद्ध कर सकेगे ?

रामगुप्त फिर तुम्हारी क्या सम्मति हे, महामात्य !

महामात्य मेरी सम्मति नो यह है, परम भट्टारक, कि राष्ट्र की रक्षा राजा का प्रथम कर्त्तव्य है। हम सब व्यक्तियो का बलिदान कर सकते है, किन्तु अपने महापुरुषो द्वारा अर्जित राज्य नही खो सकते। उन्होने न जाने कितने युद्ध लडे होगे, न जाने कितनी रक्त की नदियाँ बहाई होगी, तब कही जाकर इतना विशाल साम्राज्य उन्होने सगठित किया। हम केवल एक व्यक्ति के पीछे सहस्रो वीरो का रक्त नही बहा सकते। सम्मान तो बनता-बिगडता रहता है, किन्तु राज्य एक बार हाथ से निकल जाने पर फिर कठिनाई से प्राप्त होता है, परम भट्टारक !

रामगुप्त : तुम्हारा कहना यथार्थ है, महामात्य !

महामात्य और फिर शकराज से मैत्री हो जाने से यह राज्य अकटक हो जायगा, परम भट्टारक ! इसमे सन्देह नही।

रामगुप्त यह भी यथार्थ है, महामात्य !

महामात्य फिर इस सन्धि-प्रस्ताव के सम्बन्ध मे क्या निर्णय है, परम भट्टारक !

रामगुप्त निर्णय ! मधुपात्र की सहायता के बिना मैं कभी कोई निर्णय नही कर सकता। और फिर सुलोचना भी नही है।

महामात्य सुलोचना की कोई आवश्यकता नही है, परम भट्टारक ! वह तो महादेवी को चाहता है।

रामगुप्त चन्द्रगुप्त भी महादेवी को चाहता है, अब शकराज भी चाहने लगा। मेरे चाहने की बात किसी के सामने नही आती, महामात्य !

महामात्य आप महान् है, परम भट्टारक ! आप इसकी चिन्ता न करे।

रामगुप्त महामात्य ! शकराज कहता है कि महादेवी का विवाह-सम्बन्ध पहले उसी के साथ स्थिर हो चुका था। क्या यह सत्य है ?

महामात्य लिखता तो वह यही है, परम भट्टारक !

रामगुप्त तब तो सत्य की रक्षा होनी चाहिए। यदि महादेवी के पिता ने उनके साथ अन्याय किया तो हम तो नही कर सकते। गुप्त-कुल सत्य की रक्षा के

लिए प्रसिद्ध है। यदि महादेवी का विवाह-सम्बन्ध पहले शकराज के साथ स्थिर हो चुका है, तो महादेवी को उसी के पास जाना चाहिए। इससे दोनों बातो की पूर्ति होगी। एक तो शकराज से हमारी सन्धि होगी जिससे हमारे बचे हुए सैनिक मृत्यु से बचेगे और दूसरे हम सत्य की रक्षा कर सकेंगे। शकराज हमारे न्याय पर हमारी जय का घोष करेगा। तुम्हारी सन्धि करने की सम्मति नितान्त उचित है, महामात्य !

महामात्य तो फिर शकराज की इच्छानुसार हम महादेवी को भेंट मे देकर शकराज से सधि कर ले ?

रामगुप्त · सधि ! सधि तो आवश्यक है। सधि तो आवश्यक है, महामात्य ! महादेवी को इस बात की सूचना देनी होगी और मेरा महादेवी से प्रथम परिचय भी नही हुआ, प्रथम परिचय भी नही।

महामात्य जिस वस्तु से परिचय भी नही हुआ, परम भट्टारक, उसके जाने से विशेष दु ख भी नही होता। एक बात और परम भट्टारक ! शकराज ने महादेवी के साथ सौ स्त्रियाँ भी अपने सामन्तो के लिए माँगी है।

रामगुप्त ठीक ही माँगी है, महामात्य ! क्या तुम इतना भी नही समझते कि ध्रुवस्वामिनी उसकी महादेवी बनने जा रही है, तो वे अकेली तो जायँगी नही। कम-से-कम सौ स्त्रियाँ उनकी सेवा करती हुई जानी चाहिए। उन्ही स्त्रियो को वह अपने सामन्तो के लिए चुन लेगा।

महामात्य आपकी बुद्धि वास्तव मे बहुत तीक्ष्ण है, परम भट्टारक ! यह उपहार पाकर शकराज वास्तव मे आपकी प्रशसा करेगा।

रामगुप्त प्रशसा की क्या बात है, महामात्य ! तुम्ही विचार कर देखो उपहार के महत्त्व को ! महादेवी ध्रुवस्वामिनी उपहार मे मेरे पिता को प्राप्त हुईं। तो उपहार उपहार मे मिली हुई वस्तु हम जैसे वीरो को स्वीकार हो सकती है ? हम उपहार की वस्तु उपहार मे ही देंगे। हम किसी का उपहार स्वीकार नही कर सकते।

महामात्य देव ! आप ठीक सोच रहे है। सिंह को कोई उपहार नही दे सकता। वह अपने बल से .अपनी शक्ति से अपना आखेट करता है। उपहार स्वीकार करना आपकी शक्ति का अपमान है।

रामगुप्त शक्ति का अपमान ! तुम ठीक कहते हो, अमात्य ! यह मेरी शक्ति का अपमान है। उपहार मे प्राप्त की गई वस्तु उपहार की सामग्री ही बन सकती है। ठीक है। हम महादेवी को उपहार-स्वरूप शकराज को भेंट करेंगे। तुम शकराज को लिख दो कि आपकी सधि हमे स्वीकार है स्वीकार है **(सुलोचना का प्रवेश)** तुम आ गई, सुलोचना !

सुलोचना परम भट्टारक की जय ! महादेवी ध्रुवस्वामिनी आपकी सेवा मे .

रामगुप्त यह भी तुम्हारा उपहार है, किन्तु मधुपात्र के अतिरिक्त मैं कोई उपहार

ग्रहण नही करता । कोई उपहार नही केवल मधुपात्र ! [पान करता है ।]

सुलोचना देव ! महादेवी सेवा मे उपस्थित है ।

महामात्य यह भी ठीक हुआ, परम भट्टारक ! महादेवी स्वयं आ रही है ।

रामगुप्त महादेवी ध्रुवस्वामिनी ! उपहार की महादेवी ! . (सोचता हुआ) ध्रुवस्वामिनी सौन्दर्य की दीपशिखा जिसकी लौ से सौन्दर्य का प्रकाश तो बिखरता है, किन्तु उसमे आग है आग. फूलो की माला मे सर्प. मधुपात्र मे भयानक हलाहल .रसना मे कृपाणी रसना मे . ..

सुलोचना क्या सोच रहे है, देव !

रामगुप्त (चौंककर) और मेरा मन बार-बार कह रहा है सुलोचना...!

सुलोचना किन्तु वे तो महादेवी है देव ! मै तो केवल परिचारिका मात्र . परिचारिका !

रामगुप्त किन्तु परम भट्टारक रामगुप्त की परिचारिका किसी भी महादेवी से महान् है । क्योकि क्योकि .

सुलोचना परम भट्टारक रुक क्यो गये ?

महामात्य परम भट्टारक ने राजनीति की एक महान् समस्या हल की है ।

रामगुप्त हाँ, मैने हल की है मैने ही हल की है .मेरा कठ सूख रहा है, सुलोचना !

सुलोचना : यह पान कीजिए, देव ! [मदिरा-पात्र भरकर देती है ।]

रामगुप्त · (पान करते हुए) राजनीति की महान् समस्या.

[महादेवी ध्रुवस्वामिनी का प्रवेश]

ध्रुवस्वामिनी आर्यपुत्र की जय !

रामगुप्त (मादक स्वरो मे) महादेवी ध्रुवस्वामिनी ! स्वागत, महादेवी !

महामात्य महादेवी की जय !

ध्रुवस्वामिनी . सुलोचना ! मै एकान्त चाहती हूँ ।

सुलोचना जो आज्ञा ! [जाने को उद्यत होती है ।]

रामगुप्त तुम जा रही हो, सुलोचना ! फिर मेरा मधुपात्र कौन भरेगा ?

ध्रुवस्वामिनी भरनेवालो की कमी नही है, आर्यपुत्र ! सुलोचना ! तुम जाओ !

सुलोचना जो आज्ञा हो ! [प्रस्थान]

रामगुप्त महामात्य ! तुम मेरा मधुपात्र भरोगे ? मै महादेवी को कष्ट नही देना चाहता ।

ध्रुवस्वामिनी महामात्य !

महामात्य हाँ, महादेवी !

ध्रुवस्वामिनी महामात्य ! तुम राजनीति के आचार्य हो । तुम दाम्पत्य-नीति भी जानते होगे ?

महामात्य हाँ, महादेवी !

ध्रुवस्वामिनी मै केवल महादेवी ही नही हूँ, अपने पति की पत्नी भी हूँ और ऐसे

अवसर पर तुम जानते हो कि तुम्हारा क्या कर्त्तव्य है ?

रामगुप्त . वे अपना कर्त्तव्य अच्छी तरह जानते है, महादेवी !

ध्रुवस्वामिनी आर्यपुत्र ! महामात्य इसका उत्तर दे !

महामात्य मै अपना कर्त्तव्य तो अच्छी तरह जानता हूँ, महादेवी ! किन्तु इस समय युद्ध की मत्रणा भी आवश्यक है जिसमे मेरा यहाँ रहना सब प्रकार से उचित है।

ध्रुवस्वामिनी इसका निर्णय मैं करूँगी कि आपका यहाँ रहना आवश्यक है या नही । और मै यह निर्णय करती हूँ कि . .

रामगुप्त महादेवी ! निर्णय के पूर्व मेरा रिक्त मधुपात्र

ध्रुवस्वामिनी परम भट्टारक ! क्षमा करे । इस समय रिक्त मधुपात्र भरने की आवश्यकता नही है और मेरा कर्त्तव्य केवल रिक्त मधुपात्र भरना ही नही है, मै विलासिनी नही हूँ, गुप्त-कुल की महादेवी हूँ ।

महामात्य किन्तु

ध्रुवस्वामिनी किन्तु-परन्तु नही, महामात्य ! मै इस स्थान की एकमात्र स्वामिनी हूँ ।

महामात्य किन्तु यह युद्ध-शिविर है, महादेवी ! और यहाँ युद्ध की मन्त्रणाएँ होती है ।

ध्रुवस्वामिनी मधुपात्र के साथ ! यहाँ कृपाण की धार पर निर्णय होना चाहिए, महामात्य ! मधु की धार पर नही ।

महामात्य यह तो परम भट्टारक की इच्छा ।

ध्रुवस्वामिनी परम भट्टारक की ! और आप उनके महामात्य है। यदि परम भट्टारक अन्त पुर की दिशा भूल कर युद्ध-शिविरो मे विलास के कुज बसा ले, तो क्या आपका यह कर्त्तव्य नही है कि उन विलास-कुजो को नष्ट कर दे और युद्ध-शिविर को युद्ध-शिविर ही रहने दे ?

रामगुप्त **(भर्राये स्वर से)** यह युद्ध-शिविर ही बन गया, महादेवी ! तुमने सुलोचना को हटा ही दिया और लो, मै यह मधुपात्र भी फेक देता हूँ। **(मधुपात्र से)** जा, मधुपात्र ! टूट जा । **(फेंक देता है)** युद्ध मे गिरे हुए वीर के मस्तक की तरह टूट जा । तेरे भीतर से भी लाल रक्त की तरह लाल मदिरा बह निकलेगी । **(महादेवी से)** लो महादेवी ! मधुपात्र को मैने चूर-चूर कर दिया ।

ध्रुवस्वामिनी मैं कृतार्थ हुई । अब युद्ध की मत्रणा हो सकती है ।

रामगुप्त तुम युद्ध मे मत्रणा दोगी, महादेवी !

ध्रुवस्वामिनी युद्ध मे मत्रणा क्यो न दूँगी, परम भट्टारक ! गुप्त-कुल की वधू केवल अन्त पुर की निवासिनी नही है, वह युद्ध की मत्रणा मे भी भाग ले सकती है और युद्ध भी कर सकती है, विशेषकर जब आर्यपुत्र इस युद्ध-शिविर मे है। गुप्त-कुल के गौरव के अनुकूल ही यह बात है कि पति-पत्नी का प्रथम सम्भाषण अमात्य के सामने युद्ध-शिविर मे हो ।

रामगुप्त मैं तुम्हारे पास आने ही वाला था, महादेवी ! किन्तु ..

ध्रुवस्वामिनी . सुलोचना ने नही आने दिया । विलास-कुजो ने रोक लिया। मधु-पात्र की सरिता बहुत गहरी हो गई । मधु की बूंदो के दर्पण मे बन्दी हो गये ।

महामात्य मुझे यहाँ से चला जाना चाहिए था, महादेवी ! किन्तु आपके सम्बन्ध मे ही वार्त्तालाप हो रहा था ।

ध्रुवस्वामिनी मेरे सम्बन्ध मे ! आर्यपुत्र के अतिरिक्त किसी को भी अधिकार नही है कि वह मेरे सम्बन्ध मे वार्त्तालाप करे ।

महामात्य क्षमा करे, महादेवी ! शकराज भी इसे अपना अधिकार समझता है ।

ध्रुवस्वामिनी (**तीव्रता से**) महामात्य ! तुम्हे शकराज को इसका दड देना चाहिये । उसे इसी विष्णुपद के समीप व्यास नदी मे डुबा देना चाहिए ।

महामात्य यदि उसने हमे घेर न लिया होता तो उसे मै अवश्य ही व्यास नदी मे डुबा देता, परम भट्टारक !

ध्रुवस्वामिनी तो क्या शकराज ने हमारे शिविर को घेर लिया है ?

रामगुप्त इसमे शकराज का कौशल ही क्या ! हमारा शिविर ही इतना छोटा है कि शकराज का शिशु भी उसे घेर सकता है । [**हँसता है।**]

ध्रुवस्वामिनी (**व्यग्य से**) और आप सरलता से घिर सकते है । आर्यपुत्र ! क्या दिग्विजयी समुद्रगुप्त पराक्रमाक के वश मे इस प्रकार की बात करने वाले परम भट्टारक की सज्ञा से पुकारे जा सकते है ?

रामगुप्त इसका उत्तर दो, महामात्य शिखरसेन !

ध्रुवस्वामिनी : आर्यपुत्र यदि स्वय उत्तर नहीं दे सकते तो उन्होने आर्य समुद्रगुप्त की व्यवस्था के विपरीत चन्द्रगुप्त से सिंहासन क्यो छीन लिया ?

रामगुप्त चन्द्रगुप्त के साथ यह पक्षपात

महामात्य गुप्त-कुल मे ज्येष्ठ पुत्र द्वारा ही सिंहासन प्राप्त करने की परम्परा है, महादेवी !

ध्रुवस्वामिनी चुप रहिए, महामात्य ! आप राजनीति का मार्ग कूटनीति और षड्यत्र के पैरो से नही चल सकते । यह आपकी ही मत्रणा थी कि मैं नारी के स्वाभाविक अधिकारो को छोडकर महादेवी बन जाऊँ ! महादेवी जिसके वैभव के सिंहासन पर नारीत्व क्रदन कर रहा है । रानी का मुकुट उसके मस्तक का सौन्दर्य अवश्य बढा देता है, किन्तु उसके नीचे उसके सुहाग की रेखा छिप जाती है ।

रामगुप्त (**चौककर**) सुहाग की रेखा ! सुहाग-रेखा तो वर्तमान है, महामात्य !

ध्रुवस्वामिनी वर्तमान है ? मुझसे कहे, आर्यपुत्र ! जब परम भट्टारक महादेवी के सौभाग्य की बाते महामात्य की मत्रणा से करते है तब भी महादेवी की सुहाग-रेखा

महामात्य महादेवी, क्षमा करे ! परम भट्टारक और महादेवी केवल पति-पत्नी ही नही, राज्य के राजा और रानी भी हैं। उनका सम्बन्ध केवल उन्ही तक सीमित

नही है, उनसे राज्य के मगल और अमगल का भी सम्बन्ध है और आज तो अमगल अपनी चरम सीमा तक पहुँच रहा है।

ध्रुवस्वामिनी अपने ही राज्य मे राजनीति की बाते स्पष्ट कही जाती है, महामात्य !

महामात्य मै स्पष्ट कहना चाहता हूँ, किन्तु महादेवी ! स्पष्ट कहने का साहस मुझमे नही है।

ध्रुवस्वामिनी तब यह साहस किसमे होगा ? क्या मैं परम भट्टारक से प्रार्थना करूँ कि हमारे प्रथम मिलन ही मे राजनीति अमगल को क्यो निमन्त्रित कर रही है ? क्या परम भट्टारक मे भी साहस नही है कि वे अमगल को मगल मे परिणत कर दे ?

रामगुप्त महामात्य ! साहस एकत्रित करो। राजनीति के प्रत्येक पर्व मे तुमने हमारी सहायता की है। मेरा कठ सूख रहा है, अमात्य ! अब तो मेरा मधुपात्र टूट गया।

महामात्य : महादेवी की आज्ञा से दूसरा मधुपात्र आ सकता है, परम भट्टारक !

ध्रुवस्वामिनी . बात बदली नही जा सकती, महामात्य ! मै अपने प्रश्न का सीधा उत्तर चाहती हूँ। आप किस अमगल की बात कह रहे थे ?

महामात्य : महादेवी ! यदि क्षमा करे तो.

ध्रुवस्वामिनी . स्पष्ट कहिए, महामात्य ! शब्दो के छद्म-वेप मे बात छिपाई नही जा सकती। निर्बलता ही शिष्टाचार का आवरण है।

महामात्य · महादेवी ! शकराज ने हमारे दुर्ग को घेर लिया है। वह हमारे रक्तपात पर तुला हुआ है, किन्तु इतने पर भी उसने सधि का प्रस्ताव भेजा है।

ध्रुवस्वामिनी यह आग शीतल क्यो हो रही है ? सिंह गो-मुख की मुद्रा क्यो धारण करता है ?

रामगुप्त : वह बात कह दो, महामात्य ! महादेवी सुनने की मुद्रा मे है। ओह ! महादेवी ! तुम कितनी महान् हो।

महामात्य · महादेवी ! वह सधि केवल इस बात पर करना चाहता है कि परम भट्टारक अपनी महादेवी ध्रुवस्वामिनी को उसे भेट कर

ध्रुवस्वामिनी · (बीच ही मे चीखकर) महामात्य.. !

महामात्य : महादेवी, क्षमा करे ! शकराज कहता है कि उसका विवाह-सम्बन्ध पहले ही महादेवी से स्थिर हो चुका था। तभी तो महादेवी के पिता ने उपहार-स्वरूप उन्हे गुप्त-कुल मे

ध्रुवस्वामिनी . चुप रहो . महामात्य ! स्त्री उपहार की सामग्री नही है। **(रामगुप्त से)** परम भट्टारक ! मै महामात्य को दड देना चाहती हूँ।

रामगुप्त : महामात्य, तुम दड के भागी हो। अवश्य ही दड के भागी हो और सबसे बडा दड मै यह तुम्हे देना चाहता हूँ कि तुम इसी समय मेरे लिए एक भरा हुआ

मधुपात्र उपस्थित करो ! क्यो न, महादेवी !

ध्रुवस्वामिनी : **(आह भरकर)** ओफ ! जिस बात पर कृपाण म्यान छोडकर शत्रुओ के कठो पर गतिशील हो सकती है, उसी बात पर गुप्त-कुल दड की व्यवस्था मे मधुपात्र. .की इच्छा करता है । परम भट्टारक ! यह कैसी बात है ! कैसी विडवना है ! **(महामात्य से)** महामात्य ! परम भट्टारक को कुत्सित मत्रणा देने के कारण तुम अपने को दड का भागी समझो !

महामात्य . महादेवी ! दड से भी अधिक भयानक जो हो वह मुझे दीजिए, किन्तु परम भट्टारक ने ही यह राजनीति की समस्या हल कर दी है । वे शकराज के सधि-प्रस्ताव को मान चुके है ।

ध्रुवस्वामिनी : **(चीखकर)** ओह ! निर्लज्ज अमात्य ! यह कलकित सूचना देने के अपराध मे तुम्हारी जिह्वा काट दी जायगी । जाओ, यहाँ से इसी समय चले जाओ ! मैं एकान्त चाहती हूँ ।

महामात्य . जैसी आज्ञा, महादेवी ! अमात्य का कार्य सूचना देना है, चाहे वह पवित्र हो या कलकित । निर्णय का अधिकार परम भट्टारक और महादेवी को है । परम भट्टारक और महादेवी को प्रणाम ! **[प्रस्थान]**

रामगुप्त . **(उठकर)** मैं भी चल रहा हूँ, महामात्य !

ध्रुवस्वामिनी : **(रोककर)** नही, आप नही जा सकते । मै यह पूछना चाहती हूँ कि जो कुछ महामात्य ने कहा है, क्या वह सत्य है ?

महामात्य · **(घबराकर)** एँ एँ एँ एँ, मै क्या कहूँ ! सत्य भी हो सकता है ।

ध्रुवस्वामिनी . तो परम भट्टारक ने यह सधि स्वीकार कर ली ? परम भट्टारक ! क्या गुप्त-साम्राज्य की विभूति इसी मे है कि शत्रुओ को रक्त देने के स्थान पर अपनी मान-मर्यादा दे दी जाय ? परम भट्टारक ! यह नही हो सकता, यह नही हो सकेगा ।

रामगुप्त . महामात्य कहते है कि साम्राज्य की रक्षा करना हमारा धर्म है, देवी ! हम एक स्त्री के पीछे साम्राज्य नही खो सकते ।

ध्रुवस्वामिनी . यह तो अमात्य कहते है, किन्तु आप क्या कहते है ? अपनी महादेवी को शत्रु के हाथो सौपने पर जिस साम्राज्य की रक्षा आप करेंगे क्या वह साम्राज्य आपको कीर्ति दे सकेगा ? अपमान के साथ मिला हुआ वैभव ऐसा भोजन है जिसमे विष मिला हुआ है । उससे जीवन की रक्षा नही हो सकती ।

रामगुप्त · तुम्हारा उपदेश तो बहुत सुन्दर है, महादेवी ! यदि तुम्हारा और महामात्य का उपदेश एक ही तरह होता तो कितना अच्छा होता ! अब सबसे बड़ी कठिनाई यह है, महादेवी, कि शकराज तुम्हे माँगता है । क्या यह सच है कि तुम्हारा विवाह-सम्बन्ध शकराज से स्थिर हो चुका था ?

ध्रुवस्वामिनी . बलपूर्वक न तो स्त्री का विवाह-सम्बन्ध स्थिर हो सकता है और न उससे प्रेम किया जा सकता है । मै पूछती हूँ, परम भट्टारक ! क्या गुप्त-कुल की

यही मर्यादा है कि स्त्री के मूल्य पर सधि प्राप्त की जाय ?

रामगुप्त : जो कुछ मै करूगा आगे चलकर वही मर्यादा समझी जायगी । किन्तु यह भी सोचो, महादेवी, कि मै एक स्त्री के स्थान पर लाखो वीरो की रक्षा कर रहा हूँ । महामात्य शिखरसेन भी यही कहते है । मेरी राजनीति की तुम प्रशसा नही करती !

ध्रुवस्वामिनी : आपकी राजनीति मुझे आत्महत्या का निमत्रण दे रही है ।

रामगुप्त : (**घबराकर**) न न न न न न न, ऐसा न करो, ऐसा न करो, महादेवी ! मेरी सधि पूरी न हो सकेगी । गुप्त-साम्राज्य शकराज के हाथो नष्ट हो जायगा । तुम्हारी आत्महत्या से मेरे प्रख्यात वश मे रक्त का धब्बा लग जायगा ।

ध्रुवस्वामिनी : सत्य है, रक्त के धब्बे से कही कलक का धब्बा धुल न जाय !

रामगुप्त : तो तुम आत्महत्या तो न करोगी ? नही नही । ओह, देवी ! तुम कितनी सुन्दर हो ! कितनी सुन्दर हो ! मेरे सम्मान का कितना ध्यान रखती हो ! अच्छा, देवी ! मै तुमसे यह पूछता हूँ कि तुम इतनी सुन्दर हो क्यो ? इस सुन्दरता का रहस्य क्या है ? मै यदि एक मधुपात्र पान कर लू तो इस एक सुन्दरता को सौ गुनी देख सकता हूँ । (**महादेवी मौन रहती है**) तुम बोलती क्यो नही, महादेवी ! तुम बोलती क्यो नही ? तुम मुझ से युद्ध करने के लिए कहोगी, किन्तु सभव नही है, महादेवी ! क्योकि मेरे विचार से तलवारो का युद्ध अच्छी बात नही है । इतने वर्षो से पोषित किया हुआ सुन्दर शरीर एक क्षण मे कट जाता है । वर्षो से पोषित की हुई सुन्दरता की सम्पत्ति तलवार के एक हलके झोके मे ही उड जाती है । सोचो ! तुम्ही सोचो ।

ध्रुवस्वामिनी : (**करुण स्वर से**) आपके विचार क्यो ऐसे हुए, आर्यपुत्र ! किसने आपको इन विचारो मे पोषित किया ? आर्य समुद्रगुप्त के ज्येष्ठ पुत्र को युद्ध मे शरीर की सुन्दरता का ध्यान क्यो होता है ? आप अपने को सम्हालिए, आर्यपुत्र !

रामगुप्त : अच्छी बात है, इस सधि के बाद अपने को सम्हाल लूँगा ।

ध्रुवस्वामिनी : (**बिलखकर**) नही, नही, आर्यपुत्र ! इस सन्धि मे आप मेरा बलिदान न कीजिए । नही, नही ! परम भट्टारक ! ऐसा न कीजिए । आपकी अनुचरी हूँ । गुप्त-कुल की महादेवी हूँ । आर्य समुद्रगुप्त की कीर्ति देखिए । मैं आपकी पत्नी हूँ, आर्यपुत्र !

रामगुप्त : तो पत्नी को पति की आज्ञा माननी चाहिए ।

ध्रुवस्वामिनी : मै आपकी सब आज्ञाएँ मानूँगी, आर्यपुत्र ! किन्तु ऐसी आज्ञा न दीजिए जिसमे वश का गौरव ही नष्ट हो जाय । मै आपसे प्रार्थना करती हूँ, आर्यपुत्र ! मेरी रक्षा कीजिए, मेरी रक्षा कीजिए ! [**सिसकियाँ**]

रामगुप्त : अरे, यह क्या ! यह क्या ! परम भट्टारक रामगुप्त की महादेवी को रोना शोभा नही देता ।

ध्रुवस्वामिनी : अपने दुर्भाग्य को आँसुओ से बहा देना चाहती हूँ, आर्यपुत्र ! आपने मुझसे विवाह किया था, मेरी रक्षा का भार एकमात्र आप पर ही है। मै आपसे भिक्षा माँगती हूँ कि वंश-मर्यादा की रक्षा कीजिए।

रामगुप्त : महादेवी ! उठो, उठो। सधि से ही वश की रक्षा हो सकती है।

ध्रुवस्वामिनी : तो आपका यह निश्चय अटल है ?

रामगुप्त : हाँ, बिल्कुल अटल, महादेवी !

ध्रुवस्वामिनी : इसमे किसी प्रकार का परिवर्तन या सशोधन नही होगा ?

रामगुप्त . नही, तुम्हे शकराज के पास जाना ही होगा।

ध्रुवस्वामिनी और यदि मैं न जाऊँ तो ?

रामगुप्त बलपूर्वक भेजा जायगा। नही तो शकराज कहेगा कि मुझे अपनी स्त्री पर भी अधिकार नही। जिसे अपनी स्त्री पर अधिकार नही, वह राज्य पर अधिकार कैसे रख सकता है ?

ध्रुवस्वामिनी . ऐसा व्यक्ति न पति हो सकता है, न राजा।

रामगुप्त (उग्रता से) महादेवी ! तुम मेरा अपमान नही कर सकती।

ध्रुवस्वामिनी . मैं अपमान क्या कर सकती हूँ। अपमान तो शकराज कर सकता है। और उस अपमान को गौरव के साथ सिर पर धारण किया जा सकता है।

रामगुप्त · (तीव्रता से) महादेवी !

ध्रुवस्वामिनी यह तीव्रता मेरे ही साथ है ? जाने दीजिए। मैं अपनी रक्षा स्वय करूँगी।

रामगुप्त · तुम अपनी रक्षा स्वय करोगी, महादेवी !

ध्रुवस्वामिनी . हाँ, जब पति अपनी मर्यादा खो रहा है, तब पत्नी उस मर्यादा की रक्षा करेगी।

रामगुप्त : महादेवी ! तुम मर्यादा की रक्षा नही करोगी। शकराज के हाथो मेरे प्राण सकट मे पड जायेगे।

ध्रुवस्वामिनी . तो यह कहना चाहिए कि परम भट्टारक कायर है और क्लीव भी। यदि राजकुमार चन्द्रगुप्त यह सुने कि मेरी दशा इतने सकट मे है तो वे अपने प्राणो का मूल्य चुकाकर .

रामगुप्त (बीच ही मे) चन्द्रगुप्त का नाम न लो, महादेवी !

ध्रुवस्वामिनी : क्यो ? क्यो न लूं ? मै उनकी वाग्दत्ता थी। तुमने कूट मत्रणा करके मुझसे विवाह किया। उन्होने मर्यादा के लिए अपने बडे भाई को राज्य और स्त्री दोनो पर अधिकार कर लेने दिया, किन्तु बडा भाई इतना कायर है कि वह किसी की रक्षा भी नही कर सकता।

रामगुप्त तुम चन्द्रगुप्त का नाम न लो, महादेवी ! मुझे ईर्ष्या हो रही है।

ध्रुवस्वामिनी शकराज के पास मुझे भेजने मे ईर्ष्या नही होती ? आर्य समुद्रगुप्त की इच्छानुसार मेरा जो सच्चा अधिकारी हे, उनके प्रति आपको ईर्ष्या हो रही है ?

रामगुप्त : मै अधिक बाते नही सुनना चाहता, महादेवी ! इतनी बातो के बदले यदि तुमने एक मधुपात्र ही दे दिया होता तो मै तुम्हे क्षमा कर देता, किन्तु अब तुम क्षमा भी नही की जा सकती ।

ध्रुवस्वामिनी : मुझे क्षमा की आवश्यकता भी नही है, परम भट्टारक ! मै आपको मद्यप और निर्लज्ज समझती हूँ । आपकी क्षमा का मेरे समक्ष कोई मूल्य नही है । मेरी मर्यादा की रक्षा केवल यही कृपाणी करेगी । (**कृपाणी निकाल लेती है**) मै जा रही हूँ । [**जाने को उद्यत होती है ।**]

रामगुप्त (**घबराहट से**) देखो, देखो, महादेवी ! मै प्रार्थना करता हूँ कि तुम आत्महत्या न करना । शकराज मेरी हत्या कर देगा । मेरे प्राणो के लिए—जीवन के लिए । महादेवी !(**महादेवी का शीघ्रता से प्रस्थान**)गईं । वे कही आत्महत्या न कर ले ? मैं जाऊँ ? हाय, मै क्या करूँ, सुलोचना . !सुलोचना !

[**राजकुमार चन्द्रगुप्त का कृपाण लिये हुए प्रवेश**]

चन्द्रगुप्त : परम भट्टारक की जय !

रामगुप्त कौन, चन्द्रगुप्त ! भाई चन्द्रगुप्त ! महादेवी को बचाओ । वे आत्महत्या करने जा रही है । ओह ! मेरी सधि कैसे पूरी होगी ? वे आत्महत्या करने जा रही है ।

चन्द्रगुप्त कौन आत्महत्या करने जा रही है ? महादेवी ! नही । वे आत्महत्या नही करेगी । मै उनके आदर्श को पहिचानता हूँ । गुप्त-वश की वीर वधू कभी आत्महत्या न करेगी ।

रामगुप्त किन्तु चन्द्रगुप्त ! उन्होने कृपाणी निकाल भी ली है ।

चन्द्रगुप्त तो कृपाणी तो महादेवी की शोभा है, परम भट्टारक ! और फिर ऐसी कौन-सी बात है जिसके लिए आत्महत्या करनी पडे ?

रामगुप्त शकराज का युद्ध है, चन्द्रगुप्त !

चन्द्रगुप्त हॉ, मैने सुना है कि शकराज ने भयानक युद्ध किया है ।

रामगुप्त देखो, तुम्हारे शरीर पर भी छीटे है । ये मधु के छीटे तो . . .

चन्द्रगुप्त युद्ध के दिन मे मधु के छीटे शरीर और वस्त्रो पर नही गिरते, परम भट्टारक ! (**सामने टूटा हुआ मधुपात्र देखकर**) और आपने भी तो यह मधुपात्र तोड दिया है, गुप्त-कुल की मर्यादा इसीलिए स्थिर है कि युद्ध के दिनो मे विलास स्वप्न की तरह भुला दिया जाता है । आत्म-सम्मान और वश-गौरव ही एकमात्र कहने और सुनने का विषय बन जाता है ।

रामगुप्त : किन्तु कभी-कभी ऐसा करना कठिन हो जाता है, चन्द्रगुप्त !

चन्द्रगुप्त : हो सकता है, परम भट्टारक ! आज ही मै राजधानी से आया । शिविर मे आते समय मैने सुना कि हमारा दुर्ग चारो ओर से घिर गया है । शत्रु-पक्ष के सैनिक ने व्यग्य से कहा कि हमारे शकराज महादेवी ध्रुवस्वामिनी को उपहार मे लेकर सधि करेगे । मैने उसी क्षण उस सैनिक का सिर काट दिया । मुझ पर

चारो ओर से आक्रमण हुए किन्तु मैने प्रत्येक आक्रमण का निवारण किया और दस सैनिको को सदा के लिए सुला दिया। उन्ही के रक्त के ये धब्बे है। यह मधु नही है, परम भट्टारक! शत्रु का रक्त है जिसे मैंने महादेवी के अपमान मे युद्ध-भैरवी का तिलक बना दिया।

रामगुप्त किन्तु, चन्द्रगुप्त! सधि कर लेनी चाहिए। यह महामात्य ने भी कहा है।

चन्द्रगुप्त सधि! परम भट्टारक! आप क्या कह रहे है? महामात्य को दण्ड दीजिए। सधि के लिए झुकना गुप्त-कुल की परम्परा मे नही है। और वह सधि भी कैसी? गुप्त-कुल की गौरव-लक्ष्मी महादेवी ध्रुवस्वामिनी का अपमान करते हुए? परम भट्टारक! ऐसा दिन आने के पूर्व ही गुप्त-साम्राज्य का एक-एक सैनिक अपना रक्त बहाना अपने जीवन का सबसे बडा कर्त्तव्य समझेगा।

रामगुप्त और तुम्हारा कर्त्तव्य क्या है, चन्द्रगुप्त, यह जानते हो! अस्तु, ये बाते तो होती रहेगी। तुम मुझे एक मधुपात्र भी नही दे सकते? कितनी देर से मै मधु की कामना कर रहा हूँ।

चन्द्रगुप्त इस समय आप शत्रुओ का रक्तपान कीजिए, परम भट्टारक! शत्रुओ की सख्या बहुत अधिक है। आपका रक्त-पात्र कभी रिक्त न होगा। मेरे समक्ष गुप्त-वश की मर्यादा सुरक्षित रखने का व्रत है। इस कुल का महत्त्व स्थिर रहे इसीलिए मैने राजदड न ग्रहण करके पिता के द्वारा दिया गया सिंहासन छोड दिया। और आपके परम भट्टारक बनने मे अपने सौभाग्य का अनुभव किया।

रामगुप्त : किन्तु राज्य तो बडे भाई को ही मिलना चाहिए। इसे मानकर तुमने छोटे भाई की तरह काम किया। बडे भाई को राजनीति के प्रसगो को सुलझाने का गभीर कार्य करना है और बडे भाई ने यह निर्णय दे दिया है कि इस समय की परिस्थिति मे राज्य की रक्षा के लिए उचित यही है कि महादेवी शकराज के शिविर मे चली जावे।

चन्द्रगुप्त (**उग्रता से**) परम भट्टारक!

रामगुप्त राजनीति पर शान्ति से विचार करो, चन्द्रगुप्त! कहो तो मै महामात्य को भी बुला दूं! उनकी सहायता से तुम शीघ्र ही ठीक निर्णय पर पहुँच सकोगे।

चन्द्रगुप्त परम भट्टारक! मै ऐसे अमात्य का वध कर दूंगा। और मै देखता हूँ कि पिता आर्य समुद्रगप्त का पराक्रम आपके द्वारा कायरता के कारागार मे बन्द होने जा रहा है। सँभलिये, परम भट्टारक! अपने इतिहास को सँभालिये! नही तो यह गुप्त-वश मे आपके नाम को घृणा के अक्षरो मे लिखेगा। मैं गुप्त-कुल की वधू ध्रुवस्वामिनी को राज-प्रासाद मे लाने के लिए इस कारण नही गया था कि सधि-प्रस्ताव मे वे शकराज को सौप दी जायँ और गुप्त-कुल स्त्री की भाँति आत्म-समर्पण कर दे। उठिए, परम भट्टारक, और शकराज के सामने कृपाण का धार का कौशल दिखाइए!

रामगुप्त · मै सधि करूँगा, चन्द्रगुप्त ! राजाज्ञा बदली नही जा सकती । तुम्हे भी मेरा आदेश मानना होगा ।

चन्द्रगुप्त मै गृह-विद्रोह उपस्थित नही करना चाहता । नही तो परम भट्टारक, मै पहला द्वन्द्व आपसे ही करता । गुप्त-कुल की लक्ष्मी आज लाछित न होती । परम भट्टारक ! जिस श्रद्धा से मैने गुप्त-कुल का सिहासन आपको सौप दिया था, उसी श्रद्धा से मै आपको रण-निमत्रण भी देता । किन्तु इस समय आप मेरी प्रार्थना मान लीजिए और महादेवी का गौरव तथा गुप्त-कुल की यश श्री दोनो की रक्षा कीजिए । मै आपकी प्रत्येक आज्ञा मानने के लिए तैयार हूँ ।

रामगुप्त प्रत्येक आज्ञा मानने के लिए तैयार हो ? तो जिस प्रकार तुम महादेवी ध्रुवस्वामिनी को गुप्त-कुल मे लाये थे, उसी तरह तुम उन्हे शकराज के शिविर मे पहुँचाओ । और हाँ, मेरे लिए शीघ्र ही एक मधुपात्र लाओ !

चन्द्रगुप्त मै एक प्रार्थना करता हूँ !

रामगुप्त . मै कोई प्रार्थना नही सुनना चाहता । प्रार्थना स्त्रियाँ किया करती हैं ।

चन्द्रगुप्त अपने वश-गौरव की रक्षा के लिए आप मेरी प्रार्थना को स्त्री-प्रार्थना ही समझ लीजिए ।

रामगुप्त तो क्या तुम स्त्री हो ? (**हँसता है**) ह् ह् ह् ह् ह् ह । यदि तुम अपने को स्त्री समझो तो मैं तुमसे युद्ध कर सकता हूँ । क्योकि मै अभी तक उनसे ही युद्ध करता रहा हूँ । यही मेरा अभ्यास है । सुकुमार शत्रु को जीतने मे जितना आनन्द है, उससे अधिक आनन्द उससे हारने मे है । (**हँसता है**) ह ह् ह् ह् ह् ह !

चन्द्रगुप्त : अच्छा तो मै स्त्री ही सही । तब मैं आपसे एक बात का प्रस्ताव करता हूँ कि शकराज के शिविर मे महादेवी न जायँ । मैं ही महादेवी का रूप रखकर स्त्री-वेश मे शकराज के पास जाऊँ । आपकी सधि की बात पूरी होगी ।

रामगुप्त : महादेवी बनकर जाओगे ? स्त्री-वेश रखकर ? तुम्हे स्त्री-वेश मे देखकर शकराज को बहुत आनन्द आयेगा । (**हँसता है**) ह् ह् ह् ह् ह् ह ! अच्छा, तुम जा सकते हो और अपने साथ सौ स्त्रियो को ले जा सकते हो या तुम्हारी तरह यदि सामत भी स्त्री-वेश धारण करना चाहे तो ऐसी सामन्त-स्त्रियो को ले जाओ । ह् ह् ह् ह् ह् ह ! (**हँसता है**) किन्तु महादेवी को भी जाना होगा । मै राजनीति मे असत्य भाषण नही करता । (**महादेवी ध्रुवस्वामिनी का प्रवेश । उन्हे देखकर**) ओह ! महादेवी ! तुम आ गईं ? तुमने आत्महत्या नही की ! ओह ! तुम कितनी अच्छी हो ! यदि तुम आत्महत्या कर लेती तो सधि पूरी नही हो सकती थी । किन्तु पतिपरायणा हो । ऐसी पतिपरायणा को प्राप्त कर शकराज कितना प्रसन्न होगा ! ह् ह् ह् ह् ह् ह ! (**हँसता है**) मेरी प्रशसा किये बिना नही रहेगा । पतिपरायणा महादेवी ध्रुवस्वामिनी !

ध्रुवस्वामिनी (**चन्द्रगुप्त को देखकर**) ओह ! राजकुमार चन्द्रगुप्त ! कुमार ! मेरी

भयानक परिस्थिति देखो। मुझे शकराज के पास जाने का आदेश मिला है।

रामगुप्त तुम अकेली नही जाओगी, देवी! चन्द्रगुप्त तुम्हारे साथ स्त्री-वेश धारण कर जावेंगे। एक के स्थान पर दो स्त्रियाँ देखकर शकराज कितना प्रसन्न होगा! वह समझ जायगा कि गुप्त-वंश माँगी हुई वस्तु को दुगुनी करके देता है। (हँसता है) दुगुनी करके देता है। एक महादेवी नही, दो महादेवियाँ! दो-दो! (पुकारकर) अरे, महामात्य! तुम कहाँ हो, तुम भी सुनो! दो महादेवियाँ!

ध्रुवस्वामिनी (तीव्रता से) महादेवी सदैव एक होती है। भट्टारक! दो महादेवियाँ नही हो सकती।

रामगुप्त एक ही सही, किन्तु मैं कहता हूँ कि मधुबाला और महादेवी एक से दो अच्छी होती है। (हँसता है) ह् ह् ह् ह् ह् ह! एक से दो अच्छी होती है, महादेवी! किन्तु मुझे कोई आपत्ति नहीं और सुनो, आज से प्रण करता हूँ कि महादेवी के यहाँ से जाने का पर्व मै मधुबालाओ के साथ प्रतिवर्ष मनाऊँगा, प्रतिवर्ष!

ध्रुवस्वामिनी · तब मेरा जाना निश्चित है?

चन्द्रगुप्त हाँ, और मैं साथ चलूँगा। स्त्री-वेश धारण करके ही जाऊँगा। शक-शिविर मे मैं शकराज से युद्ध करूँगा, और महादेवी की रक्षा करूँगा।

ध्रुवस्वामिनी : किन्तु मैं अपने कारण राजकुमार के प्राण सकट मे नही डालूँगी।

चन्द्रगुप्त आर्य समुद्रगुप्त के पुत्र के लिए सकट भी वरदान है, महादेवी! और यदि महादेवी की रक्षा मे मेरे जीवन का उपयोग हो सके तो इससे अधिक गौरव की बात मेरे लिए और क्या हो सकती है? मै प्राण देकर महादेवी के सम्मान की रक्षा करूँगा।

ध्रुवस्वामिनी राजकुमार! तुम गुप्त-वंश के भूषण हो।

[महामात्य शिखर स्वामी का प्रवेश]

महामात्य परम भट्टारक की जय! मै अपने लिए दण्ड की व्यवस्था लेने आया हूँ, देव!

रामगुप्त (हँसकर) ह् ह् ह् ह् ह् ह! तुम्हारे दण्ड की व्यवस्था! ओह! तुम तो मत्रणा देने मे बृहस्पति हो। तुम्हारे ही सकेतो से कार्य हो रहा है, महामात्य! और एक बडी मनोरजक बात हुई है। चन्द्रगुप्त भी महादेवी के साथ शक-शिविर मे जायेंगे। और भी सुनो! स्त्री-वेश धारण कर! तुमने कभी स्त्री-वेश धारण किया है, महामात्य! (हँसता है) ह् ह् ह् ह् ह् ह! किसी दिन स्त्री-वेश धारण करो, महामात्य! (हँसता है) ह् ह् ह् ह् ह् ह!

महामात्य परम भट्टारक ने मेरी मत्रणा मानकर मुझे कृतार्थ किया है। राजनीति मे राष्ट्र किसी भी व्यक्ति से महान् है।

चन्द्रगुप्त चुप रहो, महामात्य! सिद्धान्त की बलि-वेदी पर राजकुल के गौरव का बलिदान नही किया जा सकता। यदि तुम मे शत्रु से युद्ध करने की शक्ति

नही है तो अपना आत्म-सम्मान भी तुम नही बेच सकते। किन्तु राजाज्ञा मुझे माननी है। मै सकट के समय अपने ही पक्ष मे विद्रोह नही करना चाहता, नही तो परम भट्टारक और तुम्हे दोनो को ही युद्ध मे निमत्रण देता।

महामात्य राजकुमार !

चन्द्रगुप्त चुप रहना सीखो, महामात्य ! मैने महादेवी की रक्षा करने का प्रण किया है। उन्हे अपने साथ शक-शिविर मे ले जाऊँगा और शकराज को उसकी उद्दण्डता का दण्ड दूँगा।

महामात्य राजकुमार ! मेरी राजनीति के अनुसार ही आप काम कर रहे है।

चन्द्रगुप्त . राजनीति के कीडे ! तुम नही जानते कि राजनीति गुप्त-वश के गौरव का अनुसरण करती रही है, गुप्त-वश ने राजनीति का अनुसरण नही किया। आर्य समुद्रगुप्त पराक्रमाक के राज्य की सीमा कृपाण की धार पर बनी है, सधियो से नही। आज उसी कृपाण की धार पर महादेवी को ले जाऊँगा और शकराज से द्वन्द्व युद्ध करूँगा। उसे यम-लोक भेज कर मै तुम्हे और परम भट्टारक को रक्त की धार से नहलाऊँगा। मै गुप्त-वश के सिंहासन पर उस व्यक्ति को नही बैठने दूँगा जो महादेवी के महत्त्व को नही पहिचान सका और जो कृपाण की धार मे डूबने के बदले मधुपात्र मे डूब गया। **(महादेवी से)** चलो, महादेवी !

ध्रुवस्वामिनी भट्टारक, तुम्हे प्रणाम करने मे भी मुझे लज्जा आती है। सिंहो की परम्परा मे तुम जैसे शृगालो के लिए मैं अपनी घृणा देकर जा रही हूँ। जय गुप्त-वश !

[चन्द्रगुप्त के साथ शीघ्रता से महादेवी का प्रस्थान]

रामगुप्त **(निर्लज्जता की हँसी हँसते हुए)** ह, ह, ह, ह, ह, ह ! नाटक तो बडा सुन्दर रहा, महामात्य ! सधि की बात पूरी हुई और चन्द्रगुप्त जैसा कटक भी दूर हुआ। तुम्हारी नीति बडी सुन्दर है, महामात्य !

महामात्य यह आपकी गुण-ग्राहकता है, परम भट्टारक !

रामगुप्त : इन लोगो के विवाद मे मेरा मधुपात्र भी टूट गया। मेरी मधुबाला सुलोचना को बुलाओ, महामात्य !

[सुलोचना का प्रवेश]

सुलोचना परम भट्टारक की जय ! मै तो आपके आदेश की प्रतीक्षा कर रही थी। मै शिविर-द्वार पर ही खडी थी। आपकी आज्ञा सुनते ही मै उपस्थित हूँ।

रामगुप्त तो लाओ मधुपात्र, सुलोचना ! इस राजनीति की उलझन मे तो मेरा कठ सूख गया।

सुलोचना प्रस्तुत है, परम भट्टारक ! **[मधुपात्र देती है।]**

रामगुप्त **(मधुपान कर)** ओह ! यह अमृत अभी तक मुझसे दूर रहा। **(मधुपात्र ऊपर उठाकर उसे सम्बोधित करते हुए)** मधुपात्र ! तेरी धारा मे मेरा जीवन सदैव ही बहता रहे।

सुलोचना . मै मधु और भी लाई हूँ, परम भट्टारक !

रामगुप्त लाओ, लाओ ! सुलोचने ! आज इतना मधु पी लूं कि उसकी सुगन्धि शकराज के शिविर तक पहुँच जाय, शकराज के शिविर तक । चन्द्रगुप्त और महादेवी भी कहे कि मधु का महत्त्व महादेवी से भी अधिक है । महादेवी से भी अधिक

महामात्य सत्य है, परम भट्टारक !

रामगुप्त (**हँसता हुआ**) ह् ह् ह् ह् ह् ह ! चन्द्रगुप्त कहता है कि कृपाण की धार मे डूबने के बदले मैं मधु-धार मे डूब रहा हूँ । हाँ, डूब रहा हूँ । मधु की धार मे डूब रहा हूँ।

सुलोचना और मधु दूँ, परम भट्टारक !

रामगुप्त हाँ, और मधु दो । मधु से सारा ससार भर दो कि मधु का धरातल आकाश तक पहुँच जाय और ग्रह-नक्षत्र उसमे डूबते हुए चले जायँ । फिर सारा मधु मेरे पात्र मे आकर समा जाय । आज से तुम सुलोचना तुम्ही महादेवी हो, महादेवी । (**चौंककर**) मै तो भूल ही गया । मैंने प्रण किया था कि महादेवी के यहाँ से जाने का पर्व मैं मधुबालाओ के साथ प्रति वर्ष मनाऊँगा । प्रति वर्ष. . यह पर्व आज से ही आरम्भ हो । सुलोचना ! अपनी वशी मे स्वर भरो । उसी तीखी तान का तीर मेरे हृदय तक पहुँच जाय । मेरे हृदय तक. . .!

सुलोचना जो आज्ञा, परम भट्टारक ! [**प्रस्थान**]

महामात्य बहुत सुन्दर प्रस्ताव है, परम भट्टारक !

रामगुप्त (**नशे मे**) तुम भी मुझसे सहमत हो, महामात्य ! एँ तब तो वशी की ध्वनि मे भी राजनीति है, राजनीति ! सगीत के युद्ध मे भी तुम्हारी राजनीति चलती है । अब चलाओ सगीत मे अपनी राजनीति.

[**सुलोचना आकर नृत्य-मुद्रा लेकर वशी के स्वर भरती है ।**]

रामगुप्त (**और भी अधिक नशे मे**) ओह ! यह वशी-ध्वनि का तीर आया, वशी-ध्वनि का तीर ! मैं मधु की धार मे डूब रहा हूँ, वशी-ध्वनि की धार मे डूब रहा हूँ, कृपाण की धार मे नही, कृपाण की धार मे नही, कृपाण की धार मे नही ।

[**वंशी का स्वर चलना रहता है और रामगुप्त मदिरा की मादकता से मूर्च्छित होकर गिर पडता है ।**]

[**परदा गिरता है ।**]

12

✥ कादम्ब या विष ? ✥

●

पात्र-परिचय

परम भट्टारक महाराजाधिराज कुमारगुप्त महेन्द्रादित्य—
मगध के सम्राट्
कुमार स्कन्दगुप्त—युवराज
पुरगुप्त—सम्राट् के छोटे पुत्र
अनन्त देवी—सम्राट् की छोटी रानी, पुरगुप्त की माता
सुनन्दा—अनन्त देवी की अतरग परिचारिका
टिण्डल—हूण सैनिक
नर्तकियाँ

●

काल—455 ई०
समय—8 बजे रात्रि

कादम्ब या विष ?

[अनन्तदेवी का शृगार हो चुका है। वे दर्पण के समीप बैठी हुई सुनन्दा से वार्त्तालाप कर रही है। सुनन्दा उनकी केश-राशि मे मोतियो की माला सजा रही है।]

अनन्तदेवी सुनन्दा ! तू मेरी केश-राशि मे बडे सुन्दर ढग से मोती गूँथ रही है। पर यह बतला कि तूने कभी मेरे नेत्रो मे आँसुओ के मोती देखे है ?

सुनन्दा हाँ, देवी !

अनन्त किस समय ?

सुनन्दा जिस समय आपने पहली बार परम भट्टारक के दर्शन किये और आपके विशाल नेत्रो से आनन्द के दो आँसू पलको की कोर मे झलक उठे थे।

अनन्त (हँसकर) अच्छा ! और तूने कभी मेरे हृदय मे पीडा देखी ?

सुनन्दा हाँ, देवी !

अनन्त किस समय ?

सुनन्दा जब लाज-भरे सौन्दर्य की पखुडियो की प्रेम की किरण ने पहली बार छेडा था।

अनन्त ओह ! कहाँ पहुँच गई। अच्छा यह बतला कि मै किस समय सबसे अच्छी लगती हूँ ?

सुनन्दा उषाकाल की निद्रा मे। सौन्दर्य के साथ श्राति, माधुर्य के साथ मादकता, जैसे सोने मे सुगन्धि हो।

अनन्त (हँसकर) तू बडी प्रियवादिनी है, सुनन्दा !

सुनन्दा यह बडा मोती केश-पाश के छोर मे सजा दूँ ?

अनन्त : सजा दे। ज्ञात होगा जैसे नीलाकाश के कोने मे शुक्र नक्षत्र चमक रहा है। तू बडी कला-पारखी है। (सहसा) हाँ, मेरे शयनपर्यक की पीठिका केतकी के पराग से सजा दी गई ?

सुनन्दा मृणालिनी ने सजा दी, महादेवी !

अनन्त . और कर्पूर-पल्लवो के रस से कादम्ब-पात्र सुवासित हुआ ?

सुनन्दा · लवगिका ने सुवासित कर दिया, महादेवी !

अनन्त और मेरे शयन-कक्ष की प्रतिमाओ के वक्षस्थल पर कुकुम के रग से चित्रकारी हो गई ?

सुनन्दा : मधुरिका ने चित्रकारी कर दी, महादेवी !

अनन्त मेरे कलहसो ने कमल का मधु-रस पान किया ?

सुनन्दा गीतिका ने करा दिया, महादेवी !

अनन्त और मेरी कोकिलाओ को आम्र-मजरी के अँकुर तो खिला दिये गये होगे ?

सुनन्दा · सुहासिनी ने अपने हाथ से खिला दिये, महादेवी !

अनन्त मृणालिनी, लवगिका, मधुरिका, गीतिका और सुहासिनी को मेरी मुस्कान का सवाद भिजवा दे, सुनन्दा !

सुनन्दा जो आज्ञा ! अभी जाऊँ ?

अनन्त नही, आर्यपुत्र शयन-मन्दिर मे आना ही चाहते है। मैं उनके स्वागत के मनोभावो मे होना चाहती हूँ। मेरी वाणी सन्देश-वाहक राजहस के शब्द-सी हो। मेरी विरहोच्छ्वास सारिका के मधुर स्वर-सा हो। मेरा प्रणय-निवेदन कोकिल के कूजन-सा हो और मेरी दृष्टि चन्द्रिका-पान मे मद-विह्वल चकोर की दृष्टि हो।

सुनन्दा मेरा निवेदन है कि इसके लिए प्रयत्न न करना होगा, महादेवी ! ये तो आपके स्वाभाविक गुण है और वे अस्त्र होने की सीमा तक पहुँच गये है।

अनन्त (हँसते हुए) तू सचमुच प्रियवादिनी है। फिर भी अपने अस्त्रो की धार तीक्ष्ण करने की आवश्यकता पड ही जाती है।

सुनन्दा सत्य है, महादेवी !

अनन्त तू मेरी वेणी मे मुक्तामाल गूँथ चुकी ?

सुनन्दा हाँ, स्वामिनी !

अनन्त तो अब इन वाद्य-यन्त्रो को मुखरित कर सकेगी ?

सुनन्दा आपकी आज्ञा ही मेरे समस्त कार्यो की स्वामिनी है।

अनन्त मैं वीणा मे अपनी उमग को साकार देखना चाहती हूँ।

सुनन्दा जो आज्ञा !

[कुछ क्षणो तक वीणा मे राग भैरव का वादन]

अनन्त बहुत सुन्दर। ऐसा ज्ञात होता है कि वीणा के प्रत्येक तार मे मेरा हृदय अनगिनती कपन ले रहा है। अब तू वशी मे मेरा प्रणय-निवेदन भर दे।

सुनन्दा जो आज्ञा !

[कुछ क्षणो तक वशी मे राग मालकोश का वादन]

अनन्त कितना सुन्दर प्रणय-निवेदन है ! जैसे वशी की ध्वनि करुण नेत्रो की दृष्टि बनकर प्रियतम के हृदय मे निवास करने जा रही है। अब तू मेरे उत्साह को मृदग मे मुखरित करेगी ?

सुनन्दा जैसी आज्ञा महादेवी !

[कुछ क्षणो तक मृदंग मे राग हिण्डोल का वादन]

अनन्त चमत्कारपूर्ण ! मृदग के बोल ही जैसे मेरे पद-चाप है जो अपने आदर्श पर

तीव्र गति से जा रहे है। कितनी गमनशीलता है ? अब तू मेरे रोष को डमरु का स्वर देने का प्रयत्न कर।

सुनन्दा जैसी आज्ञा !

[कुछ क्षणो तक डमरू मे राग मारू का वादन]

अनन्त बहुत अच्छे ढग से तूने मेरे रोप का रूप उपस्थित किया। यह डमरू जैसे मेरे रोष के प्रत्येक प्रहार को वार-वार तीव्र आघातो से व्यक्त कर रहा है।

सुनन्दा मै धन्य हुई, महादेवी ! किन्तु इस रोप से मुझे भय लगता है।

अनन्त : तुझे भय करने का कोई कारण नही है, सुनन्दा ! दूसरे है जो भय कर सकते है।

सुनन्दा : महादेवी ! ऐसे कौन भाग्यहीन व्यक्ति है जिन्हे आपके रोष से भय होना चाहिए ?

अनन्त सुनन्दा ! अपनी सीमा से आगे वढने का प्रयत्न न कर। राजनीति परिचारिकाओ के मनोविनोद की सामग्री नही है।

सुनन्दा क्षमा करे, महादेवी ! मेरी जिज्ञासा राजनीति की दृष्टि नही रखती। वह तो केवल महादेवी की महत्ता के सामने श्रद्धानत होना चाहती है।

अनन्त तो श्रद्धानत ही वने, रोप का मार्ग खोजने का प्रयत्न न करे। जाने दे। मेरा कठ शुष्क हो रहा है। कादम्व !

सुनन्दा जो आज्ञा, स्वामिनी ! **[कादम्ब भरकर देती है।]**

अनन्त **(एक घूँट पीकर)** वडा स्वादिष्ट कादम्व है। तूने इसमे चम्पक की सुगन्धि भी दे दी है। इसका पान करने पर ऐसा अनुभव होता है, सुनन्दा, जैसे मैं इन्द्र के नन्दन-निकुज मे कल्पवृक्ष के किसलयो पर शयन कर रही हूँ और विद्याधर और किन्नरियाँ मेरे समक्ष सुगन्धि को ही राग वनाकर गा रही है। इन्द्राणी मेरे चरण-पल्लवो को चूम रही है और स्वय इन्द्र मरुत् को इस वात का सकेत कर रहे है कि वायु धीरे बहे। मेरे ओठो की लालिमा शुष्क भी न वने और मेरे केशो के तिरछे छोर मेरे मस्तक के समीप नृत्य करते रहे। सुनन्दा ! यह दिव्य क्षण कितना मादक है !

सुनन्दा हाँ, महादेवी !

[एक परिचारिका का प्रवेश]

परिचारिका महादेवी की सेवा मे प्रणाम !

अनन्त गीतिका, तू है ? तुझे मेरी प्रसन्नता का सौभाग्य प्राप्त हो। किन्तु तुम सबने मुझे महादेवी कहना क्यो प्रारम्भ कर दिया ?

[हल्की हँसी]

गीतिका स्वामिनी ! महादेवी न होते हुए भी आप वास्तव मे महादेवी है, क्योकि परम भट्टारक सम्राट् का प्रेम आप ही पर है। कुमार स्कन्दगुप्त की माता तो केवल महादेवी का नाम धारण करती है, महादेवी का महत्त्व नही।

अनन्त तो क्या आर्यपुत्र केवल मेरे ही है ?

सुनन्दा जैसे साँस केवल नासिका से प्रवाहित होती है, दृष्टि केवल नेत्रो मे निवास करती है, प्राण केवल शरीर मे सचरित होते है उसी प्रकार परम भट्टारक सम्राट् का प्रेम केवल आपके द्वारा साकार होता है ।

अनन्त (हँसकर) तू तो कविता भी करने लगी, सुनन्दा ! इसमे केवल अलकार ही है या रस भी ? हाँ, गीतिका ! क्या समाचार लाई है ?

गीतिका : महादेवी की जय हो ! परम भट्टारक सम्राट् के चरणो की दिशा इस कक्ष की ओर हो रही है ।

अनन्त आर्यपुत्र इस कक्ष मे आ रहे है ?

गीतिका सत्य है, महादेवो !

सुनन्दा मेरा कथन भी कितना सत्य निकला, महादेवी !

अनन्त आर्यपुत्र सचमुच ही मेरे है, सुनन्दा ! कादम्ब-पात्र पूरी तरह से भरा हुआ है ?

सुनन्दा हाँ, महादेवी ! आपके आशीर्वाद की भाँति ।

अनन्त लेखनी प्रस्तुत है ?

सुनन्दा हाँ, महादेवी ! कृपाण की भाँति ।

अनन्त : फूल-माला प्रस्तुत है ?

सुनन्दा हाँ, महादेवी ! वाहु-पाश की भाँति ।

अनन्त गीतिका ! पारसीक नर्तकियो का प्रवन्ध है ?

गीतिका हाँ, महादेवी !

अनन्त जैसे ही मैं इच्छा करूँ, नर्तकियो को नृत्य के लिए उपस्थित रहना चाहिए ।

गीतिका जो आज्ञा, महादेवी !

अनन्त · अच्छा, तू जा !

गीतिका महादेवी की जय हो ! [**प्रस्थान**]

अनन्त सुनन्दा ! आज आर्यपुत्र के सामने बडे महत्त्व की बात होनी है ।

सुनन्दा उस महत्त्व की बात मे मेरे योग्य कोई सेवा हो सकती है, महादेवी !

अनन्त : (हँसकर) तू अपनी महादेवी को क्या किसी बात मे असमर्थ समझती है ?

सुनन्दा ऐसा सोचना भी पाप है, महादेवी !

अनन्त तो मै अपना कार्य उसी भाँति कर सकती हूँ जिस प्रकार अँगारो से अपने-आप ज्वाला उठ आती है, बादलो के घुमडने पर आपसे-आप बिजली चमकने लगती है और तीव्र वायु के चलने से लहरे अपने-आप प्रताडित होने लगती है ।

सुनन्दा यह सत्य है, महादेवी !

अनन्त तो ज्वाला उठना चाहती है, विजली चमकना चाहती है और लहरे प्रताडित होना चाहती हैं ।

सुनन्दा महादेवी ! मै भयभीत हो उठी हूँ ।

अनन्त भयभीत ! नारी भी कही भयभीत होती है ? मूर्खा ! (हँसती है) जब नारी को अपने आप पर विश्वास नही रह जाता तभी वह भयभीत होती है। यदि नारी वर्त्तमान के साथ भविष्य को भी अपने हाथ मे ले ले तो वह अपनी शक्ति से बिजली की तडप को भी लज्जित कर सकती है। वेचारी नारी ! उसे निर्भर रहने का अभ्यास हो गया है। इसलिए भविष्य की झूठी कल्पना भी उसे प्रतिक्षण आतकित किये रहती है। तू अपने भविष्य को हाथो मे ले और शक्ति की देवी वन !

सुनन्दा · जैसी आज्ञा, महादेवी !

अनन्त तभी मेरे कार्यों मे तू सच्ची सहचरी वन सकती है।

सुनन्दा आपके कार्यों मे, महादेवी ! मेरी योग्यता ?

अनन्त इसमे योग्यता और अयोग्यता की कौन-सी वात है। सुनन्दा ! आग जव ससार की प्रत्येक वस्तु को जलाने के लिए उठती है तव उसे किस योग्यता की साधना करनी पडती है ? वह तो उसका स्वाभाविक गुण है। समुद्र की लहरे किस योग्यता को लेकर आकाश चूमती है ?

सुनन्दा सत्य है, महादेवी !

अनन्त : अब यही वात देख ले ! मै आर्यपुत्र से हँसते हुए ऐसी वात करवा सकती हूँ जिसके लिए ससार मे अनेक युद्ध हुए है या हो सकते है।

सुनन्दा कौन-सी वात, महादेवी !

अनन्त (हँसकर) अच्छा ! तो तेरी जिज्ञासा भी जाग उठी। मैं तुझे भी वतला दूँ ?

सुनन्दा महादेवी ! भविष्य के परिणाम देखकर अपनी स्वामिनी की शक्ति की प्रशसा ठीक ढग से कर सकूँगी।

अनन्त इन छद्मवेशी वाक्यो को सुनकर प्रसन्न होने के वदले मैं तुझसे रुष्ट हो सकती हूँ।

सुनन्दा आपके रोष का मार्ग खोजने का साहस किसी को भी न होगा, महादेवी !

अनन्त किसी को भी न होगा ? है। ऐसा साहस एक व्यक्ति मे है।

सुनन्दा वह क्षीण आयु वाला कौन व्यक्ति है, महादेवी !

अनन्त तू मेरी सहचरी है। तू सुन ले। किन्तु यह अत्यन्त गोपनीय है।

सुनन्दा यह मेरे प्राणो के स्थान पर रहेगा, महादेवी !

अनन्त द्वार पर जाकर देख आ, कोई है तो नही।

सुनन्दा जो आज्ञा ! (द्वार तक जाती है) कोई नही है, महादेवी !

अनन्त सुन और सुनकर भूल जा। अनन्तदेवी की क्रोधाग्नि मे......

[दरवाजा खडकने की हल्की आवाज]

अनन्त : यह किसने द्वार खटखटाया ?

सुनन्दा कोई नही है, महादेवी ! वायु का शब्द है।

अनन्त वायु का शब्द है ? अच्छा, तो सुन। अनन्तदेवी की क्रोधाग्नि को छेडने वाले

का नाम है स्कन्दगुप्त ।

सुनन्दा (चौंककर) कुमार स्कन्दगुप्त !

अनन्त चौक उठी ? (**व्यग्य की हँसी हँसकर**) शक्तिहीना नारी ! पवन के झोको से चौक उठना, फूलो की पखुडियो से शरीर पर खरोच लगना, कठ पर बाहु का बोझ अनुभव करना, ये सब कुँज मे पुष्प-शैया की बाते है, राजनीति की नही । राजनीति मे कुँज की पुष्प-शैया जल उठती है, लाल फूल अँगारो का रूप धारण कर लेते है और शीतल समीर सर्पो की फुफकार बन जाती है ।

सुनन्दा (**काँपते हुए**) सत्य है, महादेवी ! युवराज स्कन्दगुप्त

अनन्त उसे युवराज न कह । युवराज-पद का सम्मान मेरे पुत्र पुरगुप्त को प्राप्त होगा । (**प्रत्येक शब्द पर जोर देकर**) मेरे पुत्र पुरगुप्त को ।

सुनन्दा (**डरे हुए स्वर मे**) महादेवी !

अनन्त और डमरू के जिस स्वर मे तूने मेरे रोष को साकार किया है, उसके अनवरत प्रहारो मे स्कन्द के सारे स्वप्न भस्मीभूत होगे ।

सुनन्दा किन्तु परम भट्टारक का कुमार स्कन्दगुप्त पर पूर्ण विश्वास है ।

अनन्त आर्यपुत्र का स्कन्द पर विश्वास ? (**व्यग्य की हँसी**) इस शयन-कक्ष के द्वार पर सारे विश्वास भिक्षुक बनकर खडे रहते है । जिस विश्वास की झोली भरनी आवश्यक होती है, मै आर्यपुत्र के हाथो की दिशा बदलकर वह झोली भरती हूँ।

सुनन्दा आपमे अपरिमित शक्ति है, महादेवी !

अनन्त और सुन ! मैने ऐसे विधान की रचना की है जिससे स्कन्द पर आर्यपुत्र का विश्वास वैसे ही क्षुब्ध हो उठेगा जैसे ग्रीष्मकाल मे बडे-बडे तालाबो का पानी सूख जाने से मछलियाँ लौटने लगती है ।

सुनन्दा सत्य है, महादेवी !

अनन्त और तू जानती है, यह कैसे होगा ? स्कन्द की वीरता ही उसका षड्यन्त्र बनेगी, उसके द्वारा बन्दी किया गया हूण सैनिक ही धन के लोभ से उसके मार्ग का कटक बनेगा ।

सुनन्दा : (**काँपकर**) महादेवी !

अनन्त इस रहस्य को गोपनीय रख, शक्तिहीना नारी ! आज आर्यपुत्र के मुख से उच्चरित होने वाले शब्दो से गुप्त साम्राज्य का भविष्य बदलेगा ।

सुनन्दा . (**डरे हुए शब्दो मे**) गुप्त साम्राज्य का भविष्य ?

अनन्त हाँ, गुप्त साम्राज्य का भविष्य । और यह सब करेगी महादेवी (**महादेवी पर जोर**) अनन्त देवी !

[**नेपथ्य मे—'परम भट्टारक महाराजाधिराज की जय !'**]

अनन्त (**शीघ्रता से**) आर्यपुत्र आ गये, सुनन्दा ! जल्दी कर । मेरी वेणी सुधार दे और यह आसन ठीक कर दे । उस पर मौलश्री की पत्तियाँ सजा दे ।

सुनन्दा · जैसी आज्ञा, महादेवी !

अनन्त और देख, चरण-पीठिका पर कौशेय वस्त्र की सिकुडन दूर कर दे। और कादम्ब-पात्र सामने की पीठिका पर सजा दे।

[सुनन्दा आज्ञानुसार वस्तुएँ सुसज्जित करती है।]

अनन्त आज तेरी महादेवी की परीक्षा है। उसकी शक्ति आज राजनीति की कसौटी पर कसी जायगी। तू देखेगी कि उसके कार्यों की रेखा राजनीति की कसौटी पर कचन की रेखा जैसी चमकदार निकलती है।

[अट्टहास के साथ कुमारगुप्त का प्रवेश]

सुनन्दा परम भट्टारक महाराजाधिराज की जय हो !

अनन्त : आर्यपुत्र की जय हो !

कुमारगुप्त (**हँसते हुए**) प्रिये ! तुम्हे खोजते-खोजते थक गया। तुम इस कामदेव-कक्ष मे इतनी दूर चली आईं।

अनन्त आपके स्वागत के लिए, आर्यपुत्र ! आसन ग्रहण कीजिए।

कुमार देवी ! आसन नही, मुझे तो हृदय चाहिए, हृदय ! अच्छा, तो मै आसन को तुम्हारा हृदय समझकर ही ग्रहण करूँगा। (**फिर हँसी**) लो, ग्रहण कर लिया। (**बैठते है**) प्रिये ! तुम्हारा कामदेव-कक्ष तो बहुत सुन्दर सजा हुआ है। और तुम भी कितनी सुन्दरी हो, प्रिये !

अनन्त यह आपका अनुराग है, आर्यपुत्र !

कुमार मुझे तो लगता है कि कामदेव भस्म होने के बाद अब स्त्री बन गया है, स्त्री ! (**हँसी**) और तुम्हारे शरीर को पाकर फिर ससार मे साकार हुआ है। [**हँसी**]

अनन्त वह इसलिए आर्यपुत्र, कि आपके साहचर्य का सुख मिलता रहे।

कुमार : और तुम जानती हो कि कामदेव भस्म होने के बाद स्त्री क्यो बन गया ?

अनन्त नही, आर्यपुत्र !

कुमार इसलिए स्त्री बन गया कि पुरुष होने पर शिवजी उसे भस्म कर सकते थे, अब स्त्री होने पर उनकी क्या शक्ति जो उसे फिर भस्म कर सके। स्त्री पर कोई पुरुष प्रहार नही कर सकता। तो यह कामदेव का षड्यन्त्र है षड्यन्त्र कि वह तुम्हारे रूप मे प्रकट हुआ है जिससे वह सब प्रकार के प्रहारो से सुरक्षित रहे।

अनन्त आर्यपुत्र का अनुराग ही तो मेरा कवच है।

कुमार अनुराग है तभी तो इतनी दूर कामदेव-कक्ष तक चला आया। मार्ग मे पुष्प की पखुडियाँ बिछी थी। ज्ञात होता था जैसे किसी कवि के छद बिछे हो और वाणी की भाँति मेरे पैर अग्रसर हो रहे थे। (**गहरी साँस लेकर**) ओह ! थक गया।

अनन्त सुनन्दा ! एक पात्र कादम्ब नही, नही. .तू जा। मैं अपने हाथो से आर्यपुत्र को कादम्ब दूगी। तू यहाँ से जा।

कुमार हाँ, सुनन्दा ! तू यहाँ से जा। जब पूर्णिमा की रात होती है तो चाँदनी

आकाश मे चारो ओर से बरसना चाहती है। तू बादल बन कर उस चाँदनी को नही रोक सकती।

सुनन्दा आपके आदेश का समीर मुझे कही भी ले जा सकता है, महाराज! प्रणाम! **(अनन्त देवी से)** महादेवी! प्रणाम!

कुमार **(दुहराते हुए)** महादेवी! **(अट्टहास)** तो महादेवी तुम हो! **(प्रत्येक शब्द पर जोर देते हुए)** सचमुच महादेवी तुम्ही हो। राज्य की महादेवी महारानी देव-की और मेरे हृदय-मन्दिर की महादेवी तुम! तुम! अनन्त देवी! जिनका प्रेम अनन्त है, जिनका सौन्दर्य अनन्त और सौन्दर्य का आकर्षण? वह भी अनन्त है, अनन्त! अनन्त!

अनन्त आर्यपुत्र! आपका कठ सूख रहा है, यह कादम्ब!

कुमार : ऐ, कादम्ब! तुम्हारे हाथो से! तुम्ही अपने कोमल करो से पिला दो। **(दो घूँट पीकर)** आह! कितना मधुर, कितना मादक! जैसे यह तुम्हारा प्रेम है जो अपने आत्म-समर्पण मे तरल हो गया है और मै उसे ससार-भर की प्यास लेकर पी रहा हूँ। **(जोर से पीने का शब्द)** महादेवी! महादेवी! तुम मगध की सर्वश्रेष्ठ सुन्दरी हो, **(मतवाले स्वरो मे)** सर्वश्रेष्ठ सुन्दरी! चन्द्रमा की किरणो से अगर कोई तारो की माला गूथे तो उसका नाम होगा अनन्त देवी! परम भट्टारक के हृदय-मन्दिर की महादेवी!

अनन्त आर्यपुत्र का प्रेम पाकर मै कृतार्थ हुई। मेरे हाथ से गूँथी हुई यह माला आपके हृदय मे स्थान पाकर धन्य बने।

कुमार जिस हृदय मे तुम्हारा निवास है, प्रिये, उसमे किसी अन्य के लिए स्थान नही है। किन्तु लाओ! यह माला अपने हाथो से पहिना दो **(माला पहिनाती है)** समझूँगा कि मेरे हृदय मे जो तुम्हारी मूर्त्ति है, उसके चरणो पर यह पुष्पा-जलि सजी हुई है। **(देखकर)** ऐ, यह बकुल की माला? देवी! यह तो उसी बकुल की माला है जो तुम्हारे मुख की मदिरा के छीटे पाकर उत्फुल्ल हुआ था।

अनन्त हाँ, आर्यपुत्र! यह उसी बकुल की माला है।

कुमार इसमे अशोक के अरुण पुष्प भी है, जो तुम्हारे पदाघात से पुष्पित हुए थे। जब अशोक की डाल से उतरकर मयूर भागने की चेष्टा कर रहा था तब तुमने उसे अपनी चूडियो की मजु ध्वनि मे नृत्य करा लिया था। नृत्य अविराम नृत्य! ओह, एक पात्र कादम्ब!

अनन्त यह है, आर्यपुत्र! **[कादम्ब देती है।]**

कुमार प्रिये! उस मयूर का नृत्य इस समय भी आँखो मे नाच रहा है।

अनन्त आर्यपुत्र! कुछ पारसीक नर्तकियाँ भी आपकी सेवा मे नृत्य की अनुमति चाहती है।

कुमार नृत्य! अवश्य होना चाहिये। देखूँगा कि तुम्हारी चूडियो की ध्वनि मे नाचते हुए मयूरो के नृत्य मे और उनके नृत्य मे कितना साम्य है।

अनन्त जैसी आज्ञा ! [कक्ष के घटे पर चोट करती है ।]

कुमार यह घटे की ध्वनि उसी प्रकार गूँज रही है जिस तरह समस्त मगध साम्राज्य मे तुम्हारी कीर्ति की ध्वनि गूँज रही है । प्रिये ! इसी प्रकार तुम्हारे प्रेम से मेरा हृदय भी गूँजता रहता है ।

अनन्त तो आर्यपुत्र, आपके हृदय मे अनुराग का कैसा सगीत भरा हुआ है जो निरन्तर गूँजता रहता है ?

कुमार जैसी मेरी हँसी गूँजनी है । [अट्टहास]

[गीतिका का प्रवेश]

गीतिका महादेवी को प्रणाम । मुझे क्या आज्ञा है ?

अनन्त नर्तकियो को आज्ञा दो कि आर्यपुत्र ने उनके नृत्य को धन्य हो जाने की अनुमति प्रदान कर दी है । उन्हे यहाँ आने की आज्ञा शीघ्र सुनाओ ।

गीतिका जो आज्ञा ! [प्रस्थान]

कुमार प्रिये ! इन नर्तकियो द्वारा केवल नृत्य ही होगा या सगीत भी ?

अनन्त आर्यपुत्र ! पुरुष और प्रकृति के मिलन पर ही सृष्टि प्रारम्भ होती है । सगीत पुरुष है और नृत्य प्रकृति है । इन दोनो के मिलाप पर ही आनन्द की सृष्टि होगी ।

कुमार · यह तुमने बहुत अच्छा कहा, प्रिये ! यही मै भी कहना चाहता था कि मेरी आत्मा मे तो तुम्हारे प्रेम का सगीत है और उस सगीत के अनुसार तुम्हारा क्रिया-कलाप ही नृत्य है । इन दोनो के मिलाप मे **(नेपथ्य मे नृत्य की ध्वनि)** अच्छा ! नृत्य करते हुए नर्तकियाँ आ भी गईं !

[नर्तकियो का नृत्य करते हुए प्रवेश]

अनन्त नर्तकियो ! इस नृत्य के साथ इतना सुन्दर गायन हो कि आर्यपुत्र की प्रसन्नता तुम्हारे भविष्य पर भी छा जाय ।

[नर्तकियो का गायन]

नूपुर की झंकार ।
जैसे वायु पहन जाती है ध्वनि के चंचल हार । नूपुर की झंकार ।
कुंज कुंज की कली खिल गयी,
प्रियतम से प्रियतमा मिल गयी;
और अधूरी प्रेम-कथा है राका मे साकार ! नूपुर की झंकार ।
लज्जा की वंकिम अरुणाई,
तट पर सधी लहर-सी आई,
सिकता-कण के प्राणो से गूँजा है मानो प्यार ! नूपुर की झंकार ।

[गाते हुए प्रस्थान]

कुमार **(मतवाले स्वरो मे)** प्रिये ! यह सगीत समाप्त होने पर भी कानो मे गूँज रहा है जैसे तुम्हारी स्मृति तुम्हारे जाने के बाद भी हृदय पर छाई रहती है ।

गीत कहता है कि 'और अधूरी प्रेम-कथा है राका मे साकार।' मै कहूँगा कि 'और अधूरी प्रेम-कथा है नयनो मे साकार।' तुम्हारी आँखे मौन रहकर भी सारी प्रेम-कथा कह देती है।

अनन्त मै धन्य हुई, स्वामी ! एक कादम्ब-पात्र और दूँ ?

कुमार प्रिये ! जैसे सागर मे सहस्रो सरितायें अपना आत्म-समर्पण करती है किन्तु सागर अपनी मर्यादा नही छोडता उसी प्रकार कादम्ब के अनगिनती पात्र मेरे कठ मे अपना सर्वस्व समर्पित करते है और मेरा हृदय अपनी चेतना नही खोता। प्रिये ! आँखो मे आलस्य का सकेत दीख रहा है। मै अब शयन करना चाहता हूँ।

[सहसा नेपथ्य मे भयानक तुमुल होता है।]

['इस हूण का वध' 'इस हूण का वध करना होगा' की कर्कश ध्वनि]

अनन्त **(घबराये स्वर मे)** अरे ! यह तो पुरगुप्त का कठ-स्वर है।

प्रतिहार परम भट्टारक की जय हो ! कुमार पुरगुप्त द्वार पर है।

कुमार : (अलसाए स्वर मे) प्रिये ! पुरगुप्त को भी एक कादम्ब-पात्र की आवश्यकता होगी।

अनन्त नही, आर्यपुत्र ! कोई भयानक काड घटित हुआ ज्ञात होता है।

कुमार नही, नही, कादम्ब-पात्र के टूटने का शब्द होगा।

अनन्त प्रतिहार ! राजकुमार पुरगुप्त को यहाँ आने की सूचना दो।

प्रतिहार जो आज्ञा ! **[प्रस्थान]**

कुमार **(वैसे ही अलसाए और मादक स्वर मे)** प्रिये ! मेरी आँखो मे एक स्वप्न तैर रहा है। तुम हो, मै हूँ और हमारे सामने कादम्ब की नदी बह रही है। हम और तुम उसमे स्नान कर रहे है। मै जब कभी उस नदी मे तैरते हुए सिर उठाता हूँ तो तुम कादम्ब के छीटे मुझ पर उछाल रही हो। वे छीटे मेरे मुख पर पडते हुए मेरे हृदय मे भी समा रहे है और मुझे हँसी आ रही है, हँसी आ रही है।

[मतवाली आवाज मे हँसते है।]

[पुरगुप्त का प्रवेश]

पुरगुप्त परम भट्टारक के चरणो मे प्रणाम।

कुमार कौन ? कादम्ब चरणो मे प्रणाम नही कर सकता। उसे मेरे मुख तक आना चाहिए।

अनन्त आर्यपुत्र ! पुरगुप्त चरणो मे प्रणाम कर रहे है।

कुमार पुरगुप्त ? कुमार पुरगुप्त ! मै तुम्हे आशीर्वाद देता हूँ कि तुम्हारा कादम्ब-पात्र कभी रिक्त न रहे।

पुरगुप्त **(घबराए स्वरो मे)** परम भट्टारक ! गुप्त साम्राज्य की राजलक्ष्मी आज षड्यन्त्र के चरणो पर बलि होने को थी, हमारे जीवन का सूर्य आज पश्चिमी क्षितिज पर पहुँचने को था और प्रतिहिंसा-राक्षसी के लिये आज हमारे हृदय का

पवित्र रक्त शरीर से बाहर आने को था।

अनन्त पुरगुप्त ! मेरे लाल ! क्या हुआ ? स्पष्ट शब्दो मे कहो न।

पुरगुप्त : माँ ! शुक्ल पक्ष मे चन्द्रमा की कलाओ के समान बढने वाले गुप्त साम्राज्य मे भी कलक की एक कालिमा है।

कुमार कलक की कालिमा ? वह मेरे कादम्ब-पात्र से उछला हुआ कोई छींटा तो नही है जो चन्द्रमा तक जाकर उसका अजन बन गया ! तुम लोग उसे कलक कहने लगे। [हँसते हैं।]

पुरगुप्त परम भट्टारक के कादम्ब-पात्र से नही, वात्सल्य से उछला हुआ अमृत है जो विष बन गया है। एक क्षण के विलम्ब से हमारी सौभाग्य-लक्ष्मी विदेशियो से पद-दलित होती।

अनन्त (आग्रह से) इस घटना को स्पष्ट करो, पुरगुप्त !

पुरगुप्त . कैसे स्पष्ट करूँ, माँ ! जिस बात की सभावना स्वप्न मे भी नही हो सकती, वह कठिन सत्य बनकर हृदय को ज्वालामुखी बना रहा है।

कुमार · किसी समय पृथ्वी ने भी मदिरा पी होगी। इतनी अधिक पी होगी कि वही ज्वालामुखी की लपट बनकर उन्मत्तता के साथ . ...

अनन्त : आर्यपुत्र स्वस्थ हो ! इस घटना का मदिरा से कोई सम्बन्ध नही है।

कुमार तो मदिरा-पात्र से होगा।

पुरगुप्त (सहसा) परम भट्टारक की हत्या से था।

अनन्त . (चीखकर) परम भट्टारक की हत्या से ?

कुमार (चौंककर) मेरी हत्या से ?

पुरगुप्त हाँ, पिता जी ! आपकी हत्या से। कुसुमपुर आज सर्पो की बामी बन गया है। और ये सर्प स्वच्छन्दतापूर्वक घूमते हुए चाहे जिस व्यक्ति को दशित कर सकते हैं।

कुमार : मैं सर्प का नाम जानना चाहता हूँ, पुरगुप्त !

पुरगुप्त परम भट्टारक क्षमा करे। मैं सर्प का ही नही, विषैले तक्षक का नाम भी ले सकता हूँ। कोई सहसा विश्वास नही करेगा किन्तु मै प्रमाण भी प्रस्तुत कर सकता हूँ।

कुमार कौन है वह नर-रूप तक्षक ?

पुरगुप्त परम भट्टारक का जिस पर अटल स्नेह और विश्वास है। मगध साम्राज्य के भविष्य का राजदड जिसके हाथो मे होने जा रहा है।

अनन्त (चीखकर) स्कन्दगुप्त ?

कुमार युवराज स्कन्दगुप्त ! असभव है, असभव, असभव !

पुरगुप्त मेरे पास प्रमाण प्रस्तुत है, पिताजी !

कुमार नही, पुरगुप्त ! मर्यादा पालक राघवेन्द्र ने दशरथ की जैसी सेवा की थी, वैसी ही सेवा पुत्र स्कद ने मेरी की है। उस जैसा सुशील, विनम्र और सच्चरित्र

पुत्र दुर्लभ है। महादेवी देवकी का मातृत्व उससे धन्य है।

अनन्त　मै भी यही सोचती थी, आर्यपुत्र ! किन्तु इधर उसके मन की दिशा बदल रही है। वह षड्यन्त्रकारियो के हाथ का खिलौना बन रहा है।

कुमार　प्रिये ! चाहे मेरे मन की दिशा बदल जावे किन्तु स्कन्द का मन ध्रुव नक्षत्र की भाँति स्थिर और अटल है। मेरा पुत्र स्कन्द हमारे वश का प्रतापी सम्राट् होगा।

पुरगुप्त　पिताजी ! आपके इसी विश्वास की छाया मे युवराज स्कद की महत्त्वाकाक्षा षड्यन्त्र मे परिणत हुई है और आज तो उसका चरम दृश्य ससार के समक्ष उपस्थित होने को था यदि आपका यह सेवक समय पर उपस्थित न हो जाता।

कुमार　तुम मेरी कुतूहलता और क्रोध को एक साथ उत्तेजित कर रहे हो, पुरगुप्त !

पुरगुप्त　पिताजी ! यदि मेरा अपराध किसी भी परिस्थिति मे आप देखे तो मुझे कठोर से कठोर दड दीजिये। किन्तु यदि मेरी सेवा मे देश-भक्ति और पितृ-भक्ति का कही भी सकेत मिले तो मैं केवल आशीर्वाद के दो शब्दो का अधिकारी-मात्र समझा जाऊँ।

अनन्त　पुरगुप्त ! अपना मन इस तरह छोटा मत करो। जो घटना घटित हुई है वह आर्यपुत्र के समक्ष निवेदन करो।

पुरगुप्त　पिताजी ! पूज्य भाई स्कद के चरणो मे मेरी अपार श्रद्धा रही है।

अनन्त　यह तो मै जानती हूँ।

पुरगुप्त : उसी श्रद्धा से प्रेरित होकर मैं प्रतिदिन सध्या समय उनके चरणो मे प्रणाम कर अपने कक्ष की ओर जाता हूँ। आज सध्या समय जब मैं उनके कक्ष मे गया तो वे वहाँ नही थे।

अनन्त　वहाँ वे कैसे होगे ! अपने विश्वास-पात्रो से मिलने का अवसर तो सध्या के धुँधले प्रकाश मे ही है।

कुमार　प्रिये ! व्यर्थ के सन्देह से अपने मन को कलुषित मत करो।

अनन्त　आर्यपुत्र ! सन्देह जब तक घटना का रूप न ले तब तक मै उसे अपने मन मे स्थान ही नही देती। जिस मन मे आपकी मूर्त्ति है उसे अपवित्र करना मै पाप समझती हूँ। हाँ, पुरगुप्त ! फिर क्या हुआ ?

पुरगुप्त　पिताजी ! जब मैंने उन्हे कक्ष मे नही देखा तो यह समझकर कि वे आपके कक्ष मे होगे, इस कक्ष मे आया। आने के पूर्व देखा कि पश्चिम के पार्श्व मे कोई तोरण-शाल-भजिका की मूर्त्ति की ओट मे काले वस्त्रो के आवरण मे छिपा हुआ बैठा है।

अनन्त　काले वस्त्रो के आवरण मे ? कौन था वह ? युवराज स्कद ?

पुरगुप्त　नही, माँ ! युवराज स्कद नही थे। वह स्कन्द के षड्यन्त्र का रूप था।

अनन्त　स्कन्द का षड्यन्त्र ? मैं कुछ समझी नही।

पुरगुप्त वह एक हूण था जो शस्त्र लिये उस क्षण की प्रतीक्षा मे था जब परम भट्टारक मधुर निद्रा मे लीन रहते और वह एक ही हाथ मे मगध का वैभव और इतिहास रक्त की धाराओ मे बहा देता।

अनन्त (**चीखकर**)रक्त की धाराओ मे वहा देता ? (**सिसकियाँ लेते हुए**) नही, नही, ऐसा नही हो सकता था, ऐसा नहीं हो सकता था। मेरा भाग्य इतना प्रतिकूल नही हो सकता था।

कुमार : धैर्य रखो, प्रिये ! मेरी मृत्यु की सम्भावना ऐसी नही है जो तुम्हे इतना विह्वल बना दे। हाँ, पुरगुप्त ! फिर क्या हुआ ?

पुरगुप्त पिताजी ! मैने उस हूण पर पीछे से जाकर पाद-प्रहार किया। जैसे ही वह घबराकर भागने को हुआ कि मैने उसे पकड लिया। अन्त पुर की समस्त द्वार-रक्षिकाएँ सहम उठी। मेरा उससे मल्लयुद्ध हुआ और अन्त मे वह जब शिथिल हो गया तो मैने एक द्वार-रक्षिका के उत्तरीय से उसके हाथ-पैर बाँध दिये।

अनन्त धन्य हो, मेरे लाल ! तुमने हूण को मल्लयुद्ध मे पराजित किया, तुम्हे कही चोट तो नही लगी ?

पुरगुप्त मैने जब उसके हाथ से तलवार छीनी तो मेरे बाये हाथ मे रक्त की एक रेखा-मात्र झलक उठी। कोई विशेष चोट नही है।

अनन्त : लाओ, मै उसे बाँध दूँ, लाल ! (**पास आकर बाँधती है**) ओहो, इतना अधिक रक्त निकल रहा है और तुम उसे केवल एक रक्त की रेखा ही कह रहे हो। हाथ उठाओ, मेरे लाल ! हाँ, इस तरह। लाओ ! पीठिका का कौशेय ही बाँधूँ। (**फाड़ने की आवाज**) इसे ऐसे बाँधूँ . हाँ, इस तरह। ओह, आर्यपुत्र ! देखिये. कितना रक्त निकल रहा है।

कुमार : मेरे पुत्रो के लिए रक्त शृगार की वस्तु है। हाँ, पुरगुप्त ! तो तुमने यह कैसे जाना कि वह हूण युवराज स्कन्द के षड्यन्त्र मे था।

पुरगुप्त : जब मैने उसी की तलवार से उसका वध करना चाहा तो वह मुँह फाडकर चीख उठा और कहने लगा कि युवराज स्कन्दगुप्त की आज्ञा से ही वह वहाँ छिपकर बैठा था।

कुमार किसलिये ?

पुरगुप्त आपको अनन्त निद्रा मे शयन कराने के लिए।

कुमार नही, नही, यह असभव है। स्कन्द के मन मे ऐसी दुर्भावना आ ही नही सकती।

पुरगुप्त : मै प्रमाण उपस्थित कर सकता हूँ, पिताजी ! मैने उस हूण के हाथ-पैर बाँध कर उसी तोरण-शाल-भजिका की ओट मे डाल दिया है। यदि आपकी आज्ञा होगी तो मै आपकी सेवा मे उसे उपस्थित भी कर दूँगा।

अनन्त सदेह के लिये स्थान ही क्यो छोडा जाय , आर्यपुत्र के समक्ष उसे उपस्थित क्यो नही कर देते ?

कुमार : किन्तु मुझे स्कन्द पर किंचित्मात्र भी सन्देह नही है ।

अनन्त आप इतने साधु और सौम्य है, आर्यपुत्र, कि आप समस्त ससार को अपने जैसा ही साधु और सौम्य समझते है । राज्याधिकार ने किसके मन को कलकित नही किया ? क्या अजातशत्रु ने महाराज बिम्बसार को राज्य-सिंहासन से हटा-कर स्वय राजशक्ति अपने हाथो मे नही कर ली ? इतिहास इसका साक्षी है, आर्यपुत्र !

कुमार किन्तु, स्कन्द !

अनन्त जब आपका ही पुत्र पुरगुप्त प्रमाण उपस्थित करने की आज्ञा चाहता है तो उसे अनुमति प्रदान करने मे हानि ही क्या है ?

कुमार अच्छा, पुरगुप्त ! प्रमाण उपस्थित हो ।

पुरगुप्त : जो आज्ञा । [प्रस्थान]

कुमार प्रिये ! मै बार-बार विश्वास करने का प्रयत्न करता हूँ कि तुम्हारा और पुरगुप्त का कथन सत्य हो, किन्तु मेरे अन्त करण की ध्वनि विश्वास करने की आज्ञा नही देती ।

अनन्त आपका कठ सूख रहा है, आर्यपुत्र ! एक पात्र कादम्ब ग्रहण कीजिये ।

कुमार लाओ, प्रिये ! (एक घूंट पीकर) तुम्हारे प्रेम की भाँति ही यह कादम्ब मधुर है, किन्तु, प्रिये ! मै भीतर से एक उदासी का अनुभव कर रहा हूँ ।

अनन्त सत्य है, प्राणनाथ ! जब विश्वास-पात्र ही विश्वास खोने लगते है तब मन की ऐसी दशा हो ही जाती है । यद्यपि स्कन्द ने प्राणदण्ड पाने का कार्य किया है, किन्तु उसका निर्णय कुछ दयापूर्ण हो ।

[पुरगुप्त का बदी हूण के सहित प्रवेश]

पुरगुप्त पिता जी ! यह हूण बन्दी है । यही तोरण-शाल-भजिका के पीछे तलवार लिये छिपा था ।

कुमार अच्छा, तुम हो ! तुम्हारा नाम ?

हूण (हकलाते हुए) टि टि . टि टिण्डल ।

कुमार तुम कुसुमपुर मे किस तरह आए ?

हूण सो सो सो सोकद गुप्त टा लाया ।

कुमार स्कन्दगुप्त क्यो लाये ?

हूण · सोकद गुप्त टा लाया । बदी टा बेनाया । हाम की सेनाटा भग्गाया । फि .. फि फि फिर बदी खाना टा मे डाला ।

कुमार वहाँ से तुम यहाँ कैसे आये ?

अनन्त तुमसे स्कन्दगुप्त ने यहाँ आने को कहा था न ?

हूण ज ज ज जेश रानी टा केहा तेश ठीक ।

अनन्त आर्यपुत्र ! आपको अब तो विश्वास होगा ।

कुमार क्या स्कन्दगुप्त ने तुम्हे तोरण-शाल-भजिका के पास छुपने को कहा था ?

हूण . ह • ह ह...हाम टा समझता नही।
कुमार तुम तलवार लेकर मारने आये थे ?
हूण : ए ..ए.. ए.. ऐसा टा पोरगुप्त बोला।
अनन्त तुम ठीक से नाम उच्चारण करो। किसने तुमसे ऐसा कहा ? स्कन्दगुप्त ने ?
हूण ज.. ज...ज जेश रानी टा केहा तेश ठीक।
पुरगुप्त पिताजी को मेरे कथन पर विश्वास करना चाहिए। यदि मै ठीक समय पर न आता तो आज सर्वनाश था।
कुमार मै इस हूण से अधिक बात नही कर सकता। मुझे मूर्च्छा-सी आ रही है। कादम्ब का प्रभाव बढता जा रहा है।
अनन्त : प्राणनाथ ! आप विश्राम कीजिये। पुरगुप्त, जाओ ! इस हूण वन्दी को ले जाओ। इसके दण्ड का निर्णय मै स्वय करूँगी।
पुरगुप्त . जैसी आज्ञा। (**हूण से**) चलो जी !

[पुरगुप्त का हूण के साथ प्रस्थान]

अनन्त : आर्यपुत्र ! हमारे मगध साम्राज्य मे एक षड्यन्त्र चल रहा है जिसका केन्द्र स्कन्दगुप्त है। इसका आभास मुझे तो कई महीनो से लग रहा था, आज यह सत्य बन गया।
कुमार · (**शिथिल स्वरो मे**) प्रिये ! स्कन्द से इस सबध मे बाते किए बिना मै विश्वास कैसे करूँ ? स्कन्द को बुलाओ।
अनन्त स्कन्द आपके सामने किस प्रकार आ सकेगा ? उसे तो अब आपके पास आने मे लज्जा आवेगी। जिसने अपने पिता के वध की योजना बनाई, वह क्या पिता से बाते कर सकेगा ? छोडिये, इन अरुचिकर प्रसगो को। आपका कठ सूख रहा है। लीजिये यह एक पात्र कादम्ब।
कुमार नही, प्रिये ! मैने आज कादम्ब इतना अधिक पान किया है कि उसकी नदी मेरे शरीर मे बह रही है। मेरा सिर घूम रहा है और नेत्र उठ भी नहीं सकते।
अनन्त फिर भी मेरे हाथो से इस बार कादम्ब को पान करें। इसमे मैने अपने मुख का प्रतिबिम्ब देखकर मुस्करा दिया है। यह कादम्ब तो आपको और भी प्रिय होगा !
कुमार लाओ, प्रिये ! यदि तुम इस प्रकार मुस्करा कर मुझे विष भी दो तो मै उसे अमृत समझकर पान कर लूँगा। लाओ। [**पान करते है।**]
अनन्त . मै धन्य हुई, आर्यपुत्र !
कुमार : मुझे मूर्च्छा-सी आ रही है, प्रिये !
अनन्त . आर्यपुत्र ! आप मेरी गोद मे विश्राम करे। कल प्रात काल स्कन्द को बुलाकर आपके समक्ष उपस्थित करूँगी और जिस विश्वासघात से उसने अपने पिता

के जीवन का अन्त करना चाहा है, उसका निर्णय मै स्वय उससे करवाऊँगी ।

कुमार . स्कन्द स्कन्द देवकी कहाँ है ?

अनन्त वह चक्रपाणि भगवान की पूजा मे व्यस्त होगी । जिसने पति की ओर से उदासीन होकर चक्रपाणि को ही सब-कुछ समझ लिया है उस नारी के सबध मे मै क्या कह सकती हूँ ?

कुमार . (**आँख बद कर शिथिल स्वरो मे**) महादेवी ! देवकी श्रद्धा की देवी है ।

अनन्त : आर्यपुत्र अत्यन्त सरल स्वभाव के है । (**सहसा**) हाँ, एक आवश्यक आज्ञा-पत्र मन्त्री कुमारामात्य पृथ्वी सेन की ओर से आया था, उस पर आपके हस्ताक्षर होना है ।

कुमार (**शिथिल स्वरो मे**) किस सबध मे आज्ञा-पत्र है ?

अनन्त . मैं तो उसे देख नही सकी, किन्तु कुमारामात्य ने निवेदन किया था कि यह आज्ञा-पत्र अत्यत आवश्यक है, इस पर आज ही हस्ताक्षर हो जाने चाहिए ।

कुमार प्रिये ! मैं तो इस समय आँख खोल भी नही सकता । कादम्ब ने स्वप्नो की चित्रशाला मेरी आँखो मे खीच दी है । मै उसी मे खो गया हूँ ।

अनन्त : मेरी आँखो से देखिये, आर्यपुत्र ! मेरी सेवा से चैतन्य हो जाइये । आज मन्त्रि-परिषद् मे आपने किसी विशेष समस्या पर विचार किया होगा ।

कुमार (**सोचता हुआ**) हाँ पुष्यमित्रो की गति रोकने के लिये .हाँ सामन्त राज्यो की रक्षा के लिए हाँ, मालव की रक्षा के लिए मै स्कन्द को भेजना चाहता था ।

अनन्त तब उसी सबध मे मन्त्री कुमारामात्य ने आपके हस्ताक्षरो के लिये आज्ञा-पत्र भेजा होगा ।

कुमार : सभव है, वही हो । कार्य अत्यन्त आवश्यक है ।

अनन्त : तब आप हस्ताक्षर कर दीजिये । मैं इसी समय आज्ञा-पत्र को कुमारामात्य के पास भिजवा दूँगी ।

कुमार : हाँ, हाँ . स्कन्द को कल प्रात काल ही मालव के लिए प्रस्थान करना चाहिए ।

अनन्त : तब यह रही लेखनी । आप यहाँ हस्ताक्षर कर दीजिये ।

कुमार : लाओ (**सोचकर**) पर हाँ, मुझे तो कल प्रात काल स्कन्द से पूछना था कि पुरगुप्त के कथन मे कितना सत्य है !

अनन्त : स्कन्द मालव जाने के पूर्व तो आपकी सेवा मे आएगा ही । उस समय उससे पूछ लीजिएगा ।

कुमार : यह भी ठीक है । (**हस्ताक्षर करते हुए**) लो, हस्ताक्षर कर दिये । प्रिये ! मुझे मूर्च्छा आ रही है । मैं विश्राम करना चाहता हूँ ।

अनन्त : आप मेरी गोद मे विश्राम कीजिये, प्राणनाथ !

कुमार : (**स्वप्निल स्वरो मे**) पुष्यमित्रो को हरानेवाला स्कन्द ! वीर-तेजस्वी .

पितृभक्त मेरा वध नही करवा सकता। मेरे युवराज..स्कन्द !.. उसका विवाह ...यदि मालव-कुमारी देवसेना से हो...तो...कितना अच्छा होगा देवसेना ! वह नन्दन-वन की वसन्त-श्री अमरावती की शची, स्वर्ग की लक्ष्मी...स्वर्ग स्वर्ग की लक्ष्मी...चक्रपाणि भगवान की शेष-शैय्या पर आसीन . लक्ष्मी लक्ष्मी सागर से उत्पन्न...समुद्र-मथन के अवसर पर...कल्पवृक्ष धन्वन्तरि . ऐरावत, वारुणी अमृत ..विष विष

अनन्त : विश्राम कीजिये आर्यपुत्र ! आपका मन अशान्त है। विश्राम कीजिये।

कुमार : विष...शकर ने पान किया . नीलकठ की शोभा आकाश की भाँति जिसमे चमकता हुआ चन्द्रमा . किन्तु उसकी कालिमा जो कादम्ब क छीटो से बनी है कादम्ब. कादम्ब .....

अनन्त : आर्यपुत्र ! एक पात्र कादम्ब और दूँ ? लीजिये। [**कादम्ब पिलाती है।**]

कुमार : (**कादम्ब मुख मे भरकर**) . ओह, मूर्च्छा.. .

[**नेपथ्य मे—'मै पिताजी के दर्शन इसी समय करना चाहता हूँ।'**
सुनदा का स्वर—'महादेवी भी साथ है।'
स्कद का स्वर—'मेरी माँ !']

[**स्कन्द का प्रवेश**]

स्कन्द : माँ. माँ ..

अनन्त : कौन, स्कन्दगुप्त !

स्कन्द : क्या माँ नही है ? किन्तु तुम तो मेरी माँ हो।

अनन्त : तुम्हारा छद्मवेश मैने बहुत देखा है, स्कन्द ! आगे से मुझे माँ मत कहा करो। मै तुम्हारे द्वारा माँ कहने पर अपने को अपमानित समझती हूँ।

स्कन्द मेरी ओर से आज तक कोई अपराध नही हुआ, माँ ! किन्तु अनजाने यदि अपराध हो गया हो तो मै क्षमा चाहता हूँ। मुझे क्षमा करो।

अनन्त यह छल-छन्दो की भाषा मुझे नही चाहिए। यह उनसे कहो जो महादेवी का दम्भ भरकर चक्रपाणि भगवान की पूजा का ढोग करती है।

स्कन्द मेरी माँ को अपमानित मत करो, माँ ! वे पूज्य है और माँ ! तुम भी पूज्य हो। पिताजी भी जानते है ..(**पिताजी को देखकर सहसा**) क्या पिताजी निद्रा मे है ?

अनन्त हाँ, निद्रा मे है।

स्कन्द तो माँ, धीरे बाते करो। कही पिताजी की निद्रा भग न हो जाय।

अनन्त यह झूठी पितृभक्ति रहने दो, स्कन्द !

स्कन्द माँ ! तुम ऐसी बाते करके मुझे कष्ट न दो।

अनन्त मैने तुम्हे रोक दिया है कि तुम मुझे माँ मत कहो।

स्कन्द : आज इतना क्रोध मुझ पर क्यो है, माँ ! आप तो मेरी सौतेली माँ है, फिर ऐसी कौन-सी नारी है जो 'माँ' शब्द पर द्रवित नही होती ?

अनन्त अच्छा, तो मैं नारी नही राक्षसी हूँ ! अब तू मुझे भी अपमानित करेगा !

स्कन्द नही माँ ! जिस दिन स्कन्द से अपनी माँ का अपमान होगा उस दिन स्कन्द इस ससार मे नही रहेगा ।

अनन्त : पिता को ससार मे रहने दे, यही तेरी बडी कृपा होगी ।

स्कन्द पिता को ससार मे रहने दूँ ? यह आप कैसी बाते कर रही है ? मैं तो समझता हूँ कि भगवान ही पिता के रूप मे अवतार ग्रहण करते है । वे ही उत्पत्तिकर्त्ता है, वे ही पालक है । उनके प्रति कपट करना ससार के सबसे बडे पापो मे है ।

अनन्त ये विचार इसलिए तो नही है कि तुझ पर किसी को सन्देह करने का अवसर न मिले ? मुख से पिता का गुण-गान करना और अपने कार्यो से उनके वध का प्रबन्ध करना ।

स्कन्द वध का प्रबन्ध करना ! मैं कुछ समझा नही ।

अनन्त हाँ, इसे तो हूण ही समझ सकता है ।

स्कन्द हूण ? कौन-सा हूण ? मैंने तो कुसुमपुर मे छिपे हुए समस्त हूणो को या तो मार डाला है या उन्हे बन्दी कर लिया है ।

अनन्त । बन्दी इसलिए कर लिया है कि वे तेरे षड्यन्त्रो मे भाग लेकर तेरे युवराज पद को परम भट्टारक के पद मे परिवर्तित कर दे ।

स्कन्द माँ ! अपने शब्दो पर प्रतिबन्ध लगाओ । ऐसे अनुचित और पापमूलक वाक्यो से

अनन्त मेरे वाक्य पापमूलक है और उन्ही के अनुसार तेरे कार्य पुण्यसूचक है । क्यो स्कन्द ?

स्कन्द **(पुकारकर)** पिता !

अनन्त तुम्हारे पिता इस समय गाढ निद्रा मे है । उनकी निद्रा भग मत करो । **(व्यग्य से हँसकर)** जो उन्हे चिर-निद्रा मे सुलाना चाहता था, वह उसकी निद्रा भग करे ! बडे कौतुक की बात है ।

स्कन्द माँ ! तुम क्या कर रही हो ? क्या तुम अपने वाक्य प्रमाणित कर सकती हो ?

अनन्त सत्य को प्रमाण की आवश्यकता नही है, स्कन्द ! अमावस का अधकार किसी व्यक्ति से नही कहता कि मेरी घोषणा करो । वह पाप-रूप से सब ससार पर छा जाता है । इसी प्रकार तुम्हारे पाप-कार्य किसी प्रमाण की आवश्यकता नही रखते ।

स्कन्द माँ ! मेरा रक्त खोल रहा है । मैं पिताजी से निवेदन करूँगा .

अनन्त जब मेरे पुत्र ने हूण से उनकी रक्षा कर ली तब उनसे तुम क्या निवेदन करोगे ? उसी हूण से जिसे तुमने पितृ-वध के लिए तोरण-शाल-भजिका के पीछे छिपा दिया था ।

स्कन्द ओह ! घोर षड्यन्त्र । क्या ऐसा सभव हो सकता है, माँ ! यह किसी नीच का कार्य है। स्कन्द सौ जन्म् मे भी अपने पिता के प्रति दुर्भावना नही ला सकता । ओह ! बतलाओ, माँ ! वह हूण कौन था ?

अनन्त इस तरह अनजान बन जाने से तुम्हारे पापो पर परदा नही पड सकता। (व्यंग्य से) वह हूण कौन था—जैसे दो वर्ष के भोले बच्चे हो न ? जिस हूण को षड्यन्त्र मे सम्मिलित किया, उसका नाम भी नही जानते !

स्कन्द : भगवान चक्रपाणि की शपथ, माँ ! मै उसे नही जानता ।

अनन्त भगवान चक्रपाणि तो माँ और बेटे के खिलौने हैं । चाहे जब उनकी दुहाई दे दी । चक्रपाणि न हुए वक्रपाणि हो गये । टेढे कार्यो मे भी उनकी साक्षी !

स्कन्द माँ, माँ, बस करो ! मेरी निन्दा करो किन्तु भगवान की निन्दा न करो। मै तुमसे प्रार्थना करता हूँ ।

अनन्त जिस तरह हूण टिण्डल से प्रार्थना की थी ।

स्कन्द : ओह टिण्डल ! वह नीच हूण जो धन लूटने के लिए गरम लोहे से नागरिको को जलाता था—खौलते तेल मे कपडे डुबाकर जनता को जलाता था और कोडे मारता था ! उसको मैने बन्दी किया । पैसे का लोभी ! उसे मार डालता तो यह सब कुछ न होता ।

अनन्त उसे मार डालना सहज नही था । मेरा पुत्र ही उसे मार सकता है ।

स्कन्द मै भी तुम्हारा पुत्र हूँ, माँ ! मैने उसे मारने के लिए कृपाण उठाया । उसने पैरो पर गिरकर प्राण-भिक्षा माँगी । मैने उसे केवल बन्दी करने की आज्ञा दी । वह पैसे का बडा लोभी था । ज्ञात होता है किसी नीच ने बधन-मुक्त कर पैसे का लोभ दिया और चाहे जैसा कहला लिया । इन हूणो मे मानवता नही है, माँ ! ये धन के लिए सब कुछ कर सकते है । किसी नीच का ही यह कार्य है । मै टिण्डल को दण्ड दूँगा—अब प्राणदण्ड दूँगा ।

अनन्त : किस पद से प्राणदण्ड दोगे ? युवराज पद से ? तुम्हारे इन्ही षड्यन्त्रो से क्षुब्ध होकर परम भट्टारक ने तुम्हे युवराज-पद से हटाकर कुसुमपुर छोडने को कहा है और पुरगुप्त को युवराज-पद दिया है। देखो, यह आज्ञा-पत्र जिसकी स्याही अभी तक सूखने नही पाई । [**हँसती है ।**]

स्कन्द : (**आज्ञा-पत्र देखकर**) ठीक है, माँ ! यह आज्ञा शिरोधार्य है । मुझे राज्य का कोई लोभ नही है । किन्तु मै सोच रहा हूँ कि इसी कार्य के लिए षड्यन्त्र की रूप-रेखा किसी ने बनाई है ।

अनन्त : अर्थात् मैने बनाई है ? तुझे लज्जा नही आती अपनी माँ पर इस प्रकार लाछन लगाते हुए ! नीच ! दुष्ट ! एक ओर तो मुझे अपनी माँ कहता है, दूसरी ओर मुझ पर षड्यन्त्र का लाछन लगाता है ।

स्कन्द : मैने तुम्हारा नाम नही लिया, महादेवी !

अनन्त और नाम कैसे लिया जाता है ? जब कुछ कहने को नही है तो 'महादेवी'

सम्बोधन से मुझे प्रसन्न करना चाहता है ! मैं ऐसे छद्मवेशियो के भुलावे मे नही आ सकती ।

स्कन्द सारा रहस्य मेरी समझ मे आ गया । अब मुझे कुछ नही कहना है । अपनी माँ की आज्ञा लेकर मै कुसुमपुर छोड दूँगा, किन्तु मुझे दु ख इसी बात का है कि मगध की प्रजा पर सकट आने पर. .

अनन्त . क्या तू ही सकट दूर कर सकता है ? क्या मेरे पुत्र पुरगुप्त मे इतनी शक्ति नही है कि वह विदेशियो और आततायियो से प्रजा की रक्षा कर सके ? तुझे अपनी शक्ति पर बडा अभिमान हो गया ज्ञात होता है।

स्कन्द . शक्ति जननी की है और साहस पिता का है । मुझे राज्याधिकार का मोह नही । मेरे भाई पुरगुप्त युवराज बने । मगध-साम्राज्य के अधिकारी हो किन्तु मेरी जन्मभूमि की दुर्दशा न हो ।

अनन्त अभिनय तू अच्छा कर सकता है, स्कन्द !

स्कन्द महादेवी ! यह अभिनय नही, यह प्राणो का चीत्कार है । जन्मभूमि की दुर्दशा मै किसी प्रकार भी सहन नही कर सकूँगा । शरीर मे अन्तिम रक्त-बिन्दु के रहते मै किसी भी विदेशी और अत्याचारी को मगध की भूमि पर पैर नही रखने दूँगा । युवराज बनकर न सही, सैनिक बनकर तो मै अपनी मातृभूमि की रक्षा का अधिकार रखता हूँ । यह आज्ञा-पत्र कहाँ तक पिता की इच्छा से लिखा गया है, यह तो परिषद् निर्णय करेगा किन्तु मै यह वचन देता हूँ, माँ ! कि मै सिहासन के प्रलोभन से कोई कार्य नही करूँगा ।

अनन्त (**व्यग्य से**) बस, बस, बहुत हुआ ।

स्कन्द : मुझे कल प्रात काल मालव की ओर प्रस्थान करना है । पिछले शक-युद्ध मे मालव-राज्य की जो सधि मगध-साम्राज्य से हुई थी, उसके अनुसार मालव की रक्षा हमारा धर्म है । आज मालव सकट मे है । शको की सेना फिर मालव को घेर रही है । मुझे शीघ्र ही मालव की रक्षा के लिए प्रस्थान करना है । किन्तु महादेवी ! मुझे आपसे यही निवेदन करना है कि अपने पुत्र को युवराज-पद दिलाने के उपरान्त अब और कोई अभिसन्धि मेरी अनुपस्थिति मे न हो ।

अनन्त क्या मुझे आज्ञा देने का साहस तुझमे है ?

स्कन्द तुम महादेवी हो, किन्तु मगध-साम्राज्य से बढकर नही हो। मगध की रक्षा तुम्हे भी उसी प्रकार करनी होगी जिस प्रकार एक सैनिक करता है । मगध पर विदेशियो की सेना उमड रही है । युवराज पुरगुप्त को तैयार करो कि वह उसका सामना करे । मगध का शासन विलास की छाया मे नही हो सकता, कृपाण की छाया मे होगा । पिताजी के जागने पर उनके चरणो मे मेरा प्रणाम निवेदन करना और कहना कि स्कन्द उन्ही के आदेशो से मालव की ओर चला गया है । विजय प्राप्त करके ही लौटेगा । [**प्रस्थान**]

अनन्त चला गया । कटक दूर हुआ । कहता है, मगध का शासन विलास की छाया

मे नही हो सकता ! विलास की छाया मे ! मै तो ऐसा शासन करूँगी कि समस्त मगध साम्राज्य के इतिहास मे वह अमर हो जाए। (**घटे पर चोट करती है**) कठ सूख रहा है, कादम्व समाप्त हो गया।

[**सुनन्दा का प्रवेश**]

सुनन्दा आज्ञा, महादेवी !

अनन्त हाँ, आज से तुम्हारा सम्बोधन सार्थक हो गया, महादेवी ! आज से मैं वास्तव मे महादेवी हूँ। सुनन्दा ! मेरा कठ सूख रहा है।

सुनन्दा मै कादम्ब साथ लाई हूँ, पान करे। मैं जानती थी कि महादेवी का कठ सूख रहा होगा।

अनन्त तू बडी कुशल है, सुनन्दा ! ला, पान करूँ। (**पान करती है**) और सुन ! परम भट्टारक ने लिखित आज्ञा-पत्र से यह घोषणा की है कि आज से स्कन्द युवराज नही है। युवराज है मेरे पुत्र कुमार पुरगुप्त ! और देख ! इस वात की किसी को भी सूचना न हो कि परम भट्टारक अव इस ससार मे नही है। देख, वे चिर-निद्रा मे लीन है।

सुनन्दा परम भट्टारक सम्राट् अव ससार मे नही है ! [**सिसकी**]

अनन्त . चुप, सुनन्दा ! एक सिसकी भी नही। (**सुनन्दा की सिसकियाँ बन्द हो जाती हैं**) अधिक से अधिक इसी वात की सूचना हो कि परम भट्टारक अस्वस्थ है और अपनी अतिम शैया पर लेटे है।

सुनन्दा : (**सिसकी मिले हुए कंठ से**) जो आज्ञा !

अनन्त · आज मै महादेवी हूँ। महादेवी देवकी का अभिमान धूल मे लौट रहा है। जा, इस लिखित आज्ञा-पत्र की घोषणा तूर्य से हो कि आज से युवराज पुरगुप्त की आज्ञा मान्य हो। शीघ्र जा !

सुनन्दा जो आज्ञा ! [**प्रस्थान**]

अनन्त : (**अट्टहास करती है**) स्कन्द कहता है कि मगध का शासन विलास की छाया मे नही हो सकता। मैं कहती हूँ कि मै विलास की छाया मे ही मगध का शासन करूँगी। जिस प्रकार डमरू के नाद से नाग मोहित होता है, उसी प्रकार मेरे रोष से मगध जो नाग की भाँति मतवाला है, मोहित होकर मूर्च्छित होगा और तव मैं एकाधिपत्य शासन करूँगी। विलास की छाया मे विलास की छाया मे

[**बाहर तूर्य की ध्वनि**]

अनन्त (**अट्टहास के साथ**) मै महादेवी हूँ ! मेरा पुत्र युवराज है ! मै स्वय अपने मुँह से कहूँगी—महादेवी अनन्त की जय ! जय.. ... !जय . . !!

[**धीरे-धीरे शब्द क्षीण हो जाता है।**]

[**परदा गिरता है।**]

13

राज्यश्री

•

पात्र-परिचय

सम्राट हर्षवर्द्धन—स्थाण्वीश्वर के सम्राट्
दिवाकर—विन्ध्याटवी आश्रम के आचार्य
माधव—सम्राट् हर्षवर्द्धन का सेवक
सुबन्धु, तारक—आचार्य दिवाकर के शिष्य
भिक्षु, शिष्य सैनिक आदि
राज्यश्री—सम्राट् हर्षवर्द्धन की बहिन
मेनका, विराजिका—राज्यश्री की सहचरियाँ
शिप्रा—चित्रक की पत्नी

•

समय—प्रभात
स्थान—विन्ध्याटवी मे दिवाकर मित्र का आश्रम

राज्यश्री

[प्रभात की अनुपम शोभा-श्री। पक्षियो का कलरव।]

तारक : (मन्द स्वर में पाठ करता हुआ)

कुर्वन्नेवेह कर्माणि जिजीविषेच्छत समा ।
एव त्वयि नान्यथेतोस्ति न कर्म लिप्यते नरे ॥

(धीरे-धीरे) इस लोक मे कर्म करते हुए भी सौ वर्षो तक जीने की इच्छा करे। अत तेरे लिए इसके अतिरिक्त कोई मार्ग नही है कि तू कर्म मे लिप्त न हो।

सुबन्धु . (समीप आता हुआ) आयुष्मन्!

तारक : क्या है, सुबन्धु!

सुबन्धु . एक बात कहना चाहता हूँ।

तारक : कहो!

सुबन्धु : तुम मन्त्र-पाठ करते हो। अग्निहोत्र करने जा रहे हो, पर तुम्हे इस बात का दुख नही है कि रात्रि मे विन्ध्याटवी की पूर्वी सीमा पर इतनी बडी आग लगी थी।

तारक आग लगी थी? यदि मै इन्द्र होता तो पर्जन्यो से धारासार वृष्टि करता।

सुबन्धु किन्तु जब तुम इन्द्र नही बन सके तो मनुष्यत्व का अभिमान रखनेवाले तारक! तुम्हारा कोई कर्तव्य नही रहा?

तारक कर्तव्य! वन मे जब आग लग जाय तो मनुष्य किस कर्तव्य का पालन करे?

सुबन्धु तुम भूल करते हो, तारक! मनुष्य का कर्तव्य जीवन की रक्षा करना है। तुम वन की आग नही बुझा सकते, किन्तु आग मे जलते हुए प्राणियो की रक्षा तो कर सकते हो।

तारक : किस तरह? भगवान की प्रार्थना करते हुए?

सुबन्धु नही! पेड पर न जाने कितने पक्षि-शावक होगे जो उडना नही जानते। अपने नीडो मे ही वे जलकर मर जायँगे। उन्हे तुम नीड समेत बचा सकते हो। चारो दिशाओ मे आग लगने पर एक दिशा की आग को फैलने से रोका जा सकता है, जिससे उसी दिशा से जीव-जन्तु भाग सके।

तारक (हँसकर) तुम बौद्ध हो न, सुबन्धु!

सुबन्धु बौद्ध होना जीवन का सत्य है। तथागत ने आर्य सत्य का आख्यान किया

है । दु ख, दुःख-समुदय, दु ख-निरोध, दु ख-निरोध-गामिनी प्रतिपदा । इन्ही से चार आर्य सत्यो का आख्यान तथागत ने किया ।

तारक शास्त्रार्थ न करो, सुबन्धु ! मुझे अग्निहोत्र के लिए देर हो रही है ।

सुबन्धु ' मुझे क्षमा करना, तारक ! तुम्हारे अग्निहोत्र मे बाधक हुआ । वह तो आचार्य दिवाकर मित्र अभी विन्ध्याटवी से लौटे, तो उन्होने अश्रुपूर्ण नेत्रो से कहा कि आज की अग्नि भयानक थी । उन्होने न जाने कितने पक्षि-शावको के प्राणो की रक्षा की ।

तारक अच्छा ! यह बात थी । हाँ, आचार्य तो सन्ध्या को ही लौटने को थे ! हम सब उनके सम्बन्ध मे चिन्तित थे ।

सुबन्धु वे उषाकाल मे आये । उन्होने कहा कि रात-भर वे चारो शिष्यो के साथ अग्नि का मार्ग रोकते रहे और अग्नि-शून्य दिशा से जीव-जन्तुओ को भागने की सुविधा देते रहे।

तारक वे आश्रम मे सूचना भिजवा देते तो अनेक शिष्य पहुँच जाते ।

सुबन्धु : मैने भी उनसे यही निवेदन किया, किन्तु उन्होने कहा कि उनके चार शिष्य पर्याप्त थे । फिर जव तक एक शिष्य समाचार देता और अन्य शिष्य आते, तब तक न जाने कितने जीवो की हानि हो जाती ।

तारक तो आचार्य को बहुत कष्ट हुआ ।

सुबन्धु वे कहते है कि यही मेरा जीवन-यज्ञ है ।

तारक तो इस जीवन-यज्ञ के सम्बन्ध मे

[एक भिक्षु के साथ एक स्त्री का प्रवेश]

स्त्री (करुण स्वर मे) नही ! नही ! मैं किसी को कष्ट नही देना चाहती।

भिक्षु कष्ट कैसा, देवि ! आचार्य दिवाकर मित्र के आश्रम मे कष्ट नही है । यहाँ आकर तुम्हारा कष्ट भी दूर हो जायेगा ।

स्त्री मेरे हाथ मे यह कृपाणी और मेरे वस्त्र मे रक्त के धब्बे देखकर इस पवित्र आश्रम मे कोई क्या कहेगा !

तारक यही कि आप साक्षात् दुर्गा है, देवि । आपका शुभ नाम क्या है ?

भिक्षु इनका शुभ नाम शिप्रा है । एक डाकू का आक्रमण निष्फल बनाकर इन्होने उसी पर आक्रमण किया । उसके शरीर का रक्त तो इनकी कृपाणी और वस्त्र पर रह गया , पर वह भाग गया ।

तारक आप वास्तव मे दुर्गा हैं । वह डाकू कौन था, देवि !

शिप्रा मेरे पतिदेव विदेश गये हुए है । मै अकेली वन ग्रामक मे रहती थी । एक दस्यु ने मेरे एकाकीपन का लाभ उठाकर मेरा धन चुराने के लिए रात्रि मे मेरे घर मे प्रवेश किया ।

सुबन्धु विन्ध्याटवी मे भी दस्यु है !

शिप्रा मैं जाग रही थी । मुझे जागते देखकर दस्यु ने मुझ पर प्रहार किया, किन्तु

सिरहाने रखी हुई पति की तलवार से मैने आक्रमण रोक लिया ।

तारक साधु ! साधु ! देवि !

शिप्रा मैने उसे घर से निकल जाने को कहा । जब वह नही हटा तो मैने उस पर प्रहार किया । उसके शरीर से रक्त की धारा बह निकली , किन्तु वह भाग गया ।

तारक तुम धन्य हो, देवि ! तुम्हे तो कोई चोट नही लगी ?

शिप्रा मेरे पैरो मे कुछ चोटे अवश्य लगी है, किन्तु अधिक नही । मेरे वस्त्र उसके रक्त से अवश्य भीग गये है । मै इसकी सूचना अटवी-सामन्त व्याघ्रकेतु को देने के लिए जा रही थी कि महात्मा भिक्षु मुझे यहाँ ले आये ।

सुबन्धु आपकी क्या सेवा की जाय, देवि !

भिक्षु मैने सोचा, दस्यु से सघर्ष करने मे देवी का कठ सूख गया होगा । आश्रम मे ले जाकर इन्हे शीतल जल पिला दूं ।

सुबन्धु ठीक किया, भन्ते ! (**शिप्रा से**) देवि ! शीतल जल पान कर कुछ विश्राम करे फिर अटवी-सामन्त के समीप जावे । यह आचार्य दिवाकर मित्र का आश्रम है । यहाँ किसी प्रकार की असुविधा नही होगी ।

शिप्रा धन्यवाद । मै शीघ्र ही सामन्त से परिस्थिति का निवेदन करना चाहती हूँ। यदि इस पर ध्यान न दिया जायगा तो अनेक स्त्रियो के लिए सकट उपस्थित हो सकता है ।

सुबन्धु आपका कथन यथार्थ है । यदि आप आवश्यक समझे तो मै भी साथ चलूं ।

शिप्रा नही, धन्यवाद ! मुझे कोई भय नही है, आप कष्ट न करे !

तारक इस आश्रम मे बिना आतिथ्य ग्रहण किये कोई नही जाता, देवि !

शिप्रा आप जैसे महात्माओ के दर्शन ही अतिथि को तृप्त कर देते है । फिर मै अतिथि भी नही हूँ ।

सुबन्धु अस्तु, आप शीतल जल ग्रहण करे, तब जावे । (**भिक्षु से**) भन्ते ! इन्हे रेवा का शीतल जल पान कराओ ।

भिक्षु चलो, देवि !

शिप्रा मै कृतार्थ हुई । मै अभिवादन करती हूँ ।

सुबन्धु स्वस्ति !

[भिक्षु के साथ शिप्रा का प्रस्थान]

तारक कैसी दिव्य-शक्ति और कैसा दिव्य-सौन्दर्य !

सुबन्धु तुम्हे अग्निहोत्र के लिए देर हो रही होगी, तारक !

तारक इस अग्नि-शिखा की वन्दना किसी अग्निहोत्र से कम नही है । मै सोचता हूँ, सुबन्धु कि यदि इस देवी मे आक्रमण करने की शक्ति न होती तो क्या होता ?

सुबन्धु उसके धन का अपहरण । और ससार के दु खो से छूटने मे उसे सुविधा

होगी । धन ससार का बन्धन ही तो हे ।
तारक यदि धन के साथ उसका भी अपहरण हो जाता तो !
सुबन्धु आर्यावर्त की नारी इतनी हीन नही है कि दस्यु उसका अपहरण करे ।
तारक (सोचते हुए) हाँ, यह तो ठीक है । धन का अपहरण ही होता ।

[एक सैनिक का प्रवेश]

सैनिक महात्माओ को प्रणाम !
तारक कौन हो तुम, सैनिक !
सैनिक मैं स्थाण्वीश्वर-नरेश महाराज हर्षवर्द्धन का दूत हूँ । क्या आचार्य दिवाकर मित्र का आश्रम यही है ?
तारक हां । आचाय दिवाकर मित्र का आश्रम यही हे । किन्तु महाराज हर्षवर्द्धन के दूत को यहाँ आने की क्या आवश्यकता प्रतीत हुई ?
सैनिक क्षमा करे, वह निवेदन आचार्य के समक्ष ही किया जा सकेगा ।
सुबन्धु अभी आचार्य स्नान-गृह मे है । वे उषाकाल ही मे विन्ध्याटवी से लौटे है ।
सैनिक मै एक बात पूछ सकता हूँ ?
सुबन्धु अवश्य ।
तारक यह आश्रम तो सभी प्रश्नो का समाधान है, दूत !
सैनिक आपके आश्रम मे महादेवी आयी थी ?
सुबन्धु महादेवी ! नही । एक स्त्री आयी थी । अभी-अभी तो वह यही थी । रक्त से उसके वस्त्र भीग गये थे ।
सैनिक (चौंककर) रक्त से ?
तारक उसके हाथ मे एक कृपाणी भी थी । उसके मुख पर अलौकिक तेज था ।
सैनिक (उद्विग्नता से) वही होगी, वही होगी, वही है ।
तारक कौन ? कौन वही है, दूत !
सैनिक महादेवी राज्यश्री !
सुबन्धु महादेवी राज्यश्री !
तारक स्थाण्वीश्वर-नरेश की छोटी बहिन !
सैनिक हाँ, वे विन्ध्याटवी की ओर चली आयी है ।
सुबन्धु विन्ध्याटवी मे तो चारो ओर आग लगी थी । सारी रात आचार्य वही थे ।
तारक किन्तु वे महादेवी राज्यश्री नहीं होगी, दूत !
सैनिक आप कहते है कि उनके हाथ मे कृपाणी थी ।
तारक कृपाणी तो प्रत्येक नारी के हाथ मे रह सकती है। (सुबन्धु से) देखो सुबन्धु, वह स्त्री आश्रम मे है ?
सुबन्धु मैं अभी देखता हूँ । [प्रस्थान]
तारक उसके हाथ मे कृपाणी थी । उसके वस्त्र रक्त से भीग गये थे ।
सैनिक उनके पैरो मे चोट लगी थी ?

तारक हाँ, उनके पैरो मे चोट अवश्य थी।

सैनिक तब तो वे महादेवी ही होगी। लौह-शृखला से कसे जाने पर उनके पैर अवश्य क्षत-विक्षत हो गये होगे।

तारक लौह-शृखला ? लौह-शृखला से नही, दूत ! उन्होने एक दस्यु से युद्ध किया था।

सैनिक : महाराज ग्रहवर्मा का घातक मालवा-नरेश देवगुप्त किस दस्यु से कम है ? ओह ! क्षमा करे, महात्मा ! आचार्य दिवाकर मित्र से निवेदन करने की वार्त्ता मेरे मुख से अनायास ही ...

तारक : कोई हानि नही, दूत ! यह वार्त्ता मन्त्र की भाँति गुप्त और सुरक्षित रहेगी। यह आश्रम नीति का तपोवन है, राजनीति का नही। (**देखकर**) अच्छा, सुबन्धु आ गये। उस स्त्री का क्या समाचार है, सुबन्धु !

[**सुबन्धु का प्रवेश**]

सुबन्धु : खेद है कि वह स्त्री जल पीने के उपरान्त ही आश्रम से चली गयी।

सैनिक तब मुझे यह सूचना महाराज की सेवा मे निवेदन करनी होगी।

तारक महाराज कहाँ है ?

सैनिक विन्ध्याटवी की पश्चिमी सीमा पर।

सुबन्धु पश्चिमी सीमा पर ! ठीक है। आग तो पूर्वी सीमा पर लगी थी।

सैनिक महाराज तीव्र गति से विन्ध्याटवी का एक-एक भाग देखेगे। वायु की भाँति उनकी गति है। वे अपनी बहिन को खोजकर ही रहेगे।

तारक इस प्रसग से हम सब दुखित है, सैनिक !

सैनिक महाराज हर्षवर्द्धन सर्वप्रिय नरेश है। तो महात्मन् ! जब आचार्य स्नान-गृह से बाहर आवे तो उन्हे महाराज के आगमन की सूचना अवश्य दे दे।

सुबन्धु अब तो वे पूजन-गृह मे होगे। उनके आते ही यह सूचना उनकी सेवा मे निवेदित की जायगी। आचार्य के शिष्यो की ओर से उनका इस आश्रम मे स्वागत है।

सैनिक प्रणाम। [**प्रस्थान**]

तारक : महाराज हर्षवर्द्धन की बहिन ! क्यो सुबन्धु ! क्या वह स्त्री महाराज हर्षवर्द्धन की बहिन हो सकती है ?

सुबन्धु मेरे अनुमान से नही हो सकती, क्योकि वह स्त्री कहती थी कि मैं वन ग्रामक मे रहती हूँ और मेरे पति विदेश गये है। महारानी राज्यश्री के पति तो कन्नौज के नरेश है।

तारक किन्तु राजनीति मे कूटनीति भी तो एक अग है। सम्भव है, महादेवी राज्यश्री ने छद्मवेश धारण कर दस्यु से युद्ध करने का अभिनय किया हो। कृपाणी पर लगा हुआ रक्त कोई रासायनिक द्रव्य ही हो।

सुबन्धु मै ये सब बाते कुछ नही जानता। मनुष्य को पहिचानने की सामान्य बुद्धि

मुझ मे है। उस स्त्री की भाव-भगिमा से मुझे ज्ञात नही होता कि वह राजकुल की है। फिर इस आश्रम मे आकर उस स्त्री को असत्य भाषण करने की क्या आवश्यकता हुई ?

तारक किन्तु उसके पैर मे चोट थी। दूत भी कहता था कि महादेवी राज्यश्री के पैरो मे चोट है।

सुबन्धु ठीक है, किन्तु महादेवी राज्यश्री अकेले यहाँ कैसे आ सकती है? उनके साथ तो अनेक स्त्रियो का समूह होगा।

[एक शिष्य का प्रवेश]

शिष्य आचार्य पूजा समाप्त कर इस बाहरी कक्ष मे आ रहे है। [प्रस्थान]

सुबन्धु हमे समस्त घटना-चक्र आचार्य के समक्ष रखना चाहिए।

तारक और महाराज हर्ष के विन्ध्याटवी तक आ जाने का समाचार जो दूत ने कहा है, वह तो उन्हे सुनाना ही चाहिए।

[आचार्य दिवाकर मित्र का पादुका पहने हुए प्रवेश। सुबन्धु और तारक उन्हे प्रणाम करते है।]

सुबन्धु भन्ते के श्री चरणो मे प्रणाम!

तारक भन्ते के श्री चरणो मे प्रणाम! आसन ग्रहण कीजिए, भन्ते!

दिवाकर (गभीर स्वर मे) स्वस्ति। तरुण बीजो को जल न मिलने से जो विकार होता है, वैसा विकार तो किसी के हृदय मे नही है? माता को देखने पर शिशु के मन मे जो विकार होता है, वैसा विकार तो किसी मे नही हुआ?

सुबन्धु भन्ते! आशीर्वाद देने के लिए उठे हुए आपके हाथ की शीतल छाया सभी प्रकार के तापो को दूर कर देती है।

तारक किन्तु, भन्ते! कुछ देर पहले एक स्त्री आयी थी।

दिवाकर इस आश्रम मे स्त्री?

सुबन्धु उसके वस्त्र रक्त से भीगे थे। और उसके हाथ मे एक कृपाणी थी।

तारक कहती थी कि उसने एक दस्यु से युद्ध किया है।

दिवाकर वह स्त्री! पहले मै समझा वे महादेवी राज्यश्री है। किन्तु राज्यश्री नही है। वह स्त्री एक सामान्य गृहस्थ की स्त्री है। दस्यु उसके धन का अपहरण करने के लिए उसके घर मे आ घुसा था।

तारक आप यह कैसे जानते है?

दिवाकर मैने लौटते समय उस दस्यु के घावो को धोया था और जडी का लेपन किया था। उसने सारी कथा मुझसे कही। अब से उसने दस्यु-कर्म सदैव के लिए छोड दिया।

सुबन्धु आपके सम्पर्क मे आकर दुष्ट भी अपनी दुष्टता छोड देता है।

तारक एक समाचार और है, प्रभु! विन्ध्याटवी की पश्चिमी सीमा पर महाराज हर्षवर्द्धन आये हुए है। उनका सैनिक यह सूचना आपको सुनाना चाहता था।

दिवाकर हर्षवर्द्धन, तुम धन्य हो ! आर्यावर्त का भविष्य तुम्हारे ही हाथो मे है।

तारक सैनिक ने यह भी कहा कि महाराज तीव्र गति से विन्ध्याटवी का एक-एक भाग देखेगे। वायु की भाँति उनकी गति है। वे अपनी बहिन को खोजकर ही रहेगे।

दिवाकर यह आश्रम उनके साथ होगा।

सुबन्धु भन्ते ! वह सैनिक कुछ बाते अस्पष्ट ढग से कह गया। वह मालव-नरेश देवगुप्त को दस्यु कह रहा था। और महादेवी राज्यश्री का नाम भी ले रहा था।

दिवाकर यह दारुण सवाद है, सुबन्धु ! मैने इसे वेणुवन जनपद की सीमा पर सुना। शिष्य चित्रभानु को देखकर लौट रहा था कि यह दारुण सवाद मुझे मिला।

तारक क्या हम लोग उसे सुन सकेगे, भन्ते !

दिवाकर कुशस्थल नरेश महाराज ग्रहवर्मा अब इस ससार मे नही रहे ! (मन्द स्वर मे) वे मेरे बाल्य-बन्धु थे।

सब (चौककर) नही रहे ?

दिवाकर जिस दिन स्थाण्वीश्वर-नरेश प्रभाकरवर्द्धन की मृत्यु हुई उसी दिन मालव-नरेश देवगुप्त ने ग्रहवर्मा की हत्या की।

सुबन्धु घोर अनर्थ !

दिवाकर और सब से भयानक बात यह है कि देवगुप्त ने ग्रहवर्मा की हत्या कर उनकी महादेवी राज्यश्री को लौह-शृखलाओ मे कसकर कारागार मे डाल दिया।

तारक सैनिक भी कह रहा था कि लौह-शृखला से कसे जाने के कारण उनके पैर क्षत-विक्षत हो गये है।

दिवाकर हाँ, वे लौह-शृखलाओ से कसी गयी थी, किन्तु गुप्त नामक कुलपुत्र द्वारा वे अन्त पुर की समस्त स्त्रियो-सहित मुक्त हुई और छिपकर इसी विन्ध्याटवी मे आ गयी है।

तारक तब तो हमे उन्हे शीघ्र ही खोजना चाहिए।

सुबन्धु इस समय तक उन्होने कही आत्म-हत्या न कर ली हो। क्योकि वर्द्धन-वश की स्त्रियाँ अग्नि को अपनी सहचरी मानती है।

दिवाकर इसलिए मै कल रात विन्ध्याटवी मे रुक गया था। जब मैने उसमे अग्नि लगी हुई देखी तो मै उत्सुकता से उन्ही की खोज करने लगा। मै केवल पक्षि-शावको तथा जीव-जन्तुओ की रक्षा कर सका, उन्हे कही नही पा सका।

तारक महाराज हर्षवर्द्धन के हृदय मे अपनी छोटी बहिन के प्रति इतना प्रेम है कि वे प्रचड शत्रु को पराजित किये बिना ही अपना देश मन्त्रियो पर छोडकर राज्यश्री को खोजने के लिए विन्ध्याटवी मे सामान्य व्यक्ति की भाँति भटक रहे है।

[समीप ही शंख-ध्वनि]

[शिष्य का प्रवेश]

शिष्य भन्ते के श्रीचरणो मे अभिवादन ! महाराज हर्षवर्द्धन आश्रम मे पधारे है।

दिवाकर (सहसा उठकर) महाराज हर्षवर्द्धन ! उनका स्वागत करो ! आयुष्मन सुबन्धु और तारक ! तुम शीघ्र ही कमण्डल मे पैर धोने का जल लाओ। वे स्वय अमृतमय है।

[तारक और सुबन्धु का प्रस्थान]

[फिर शखनाद। महाराज हर्षवर्द्धन का माधवगुप्त के साथ प्रवेश]

हर्ष आचार्य दिवाकर मित्र को हर्ष का प्रणाम !

माधव · माधवगुप्त का अभिवादन स्वीकार हो !

दिवाकर कल्याण हो, राजन् ! कल्याण हो ! मेरे आसन को सुशोभित करे।

हर्ष भन्ते ! समस्त पृथ्वी को जीतने पर भी जिस सिहासन पर हर्ष आसीन होगा, वह सिहासन भी आपके आसन मे नीचा ही रहेगा। आचार्य का आसन श्रद्धा का केन्द्र है। उस पर बैठकर हर्ष लाछित नही होगा। मेरे लिए तो पृथ्वी का आसन ही ऊँचा आसन है।

दिवाकर राजन् ! आप वीरो मे श्रेष्ठ है, पुरुष-सिंह है। आपके लिए तो गुणियो का हृदय ही आसन है।

हर्ष नही, आचार्य ! जिस हर्ष के हृदय की अवस्था ऐसी है कि उसने श्री को शाप मान लिया है, पृथ्वी जिसे महापातक की भाँति ज्ञात हो रही है, राज्य जिसे रोग की भाँति घेरे हुए है, भोग जिसे भुजग की भाँति ज्ञात होता है, घर जिसे नर्क की भाँति भयानक लगता है, जीवन अयश का केन्द्र और आरोग्य कलक का विस्तार प्रतीत होता है, जिसके आहार मे विष का स्वाद है, वह प्रत्येक आसन मे गिर गया है। आपके पुण्य-दर्शन से उसे कुछ आधार मिले तो उसका सौभाग्य होगा !

दिवाकर राजन् ! मैं आपके हृदय की स्थिति समझता हूँ। आप राज्य की धुरी धारण करनेवाले है। आप शान्त और सुखी हो। (**तारक और सुबन्धु का कमण्डल मे जल लिये हुए प्रवेश**) तुम आ गये ? अपने मान्य अतिथि के चरणो का प्रक्षालन करो।

माधव विन्ध्याटवी मे कुश-कटको से महाराज के चरण क्षत-विक्षत हो गये है।

हर्ष मेरा हृदय चरणो की अपेक्षा अधिक क्षत-विक्षत है, आचार्य !

दिवाकर सौभाग्य आपके आश्रय मे भाग्यवान् है। पौरुष आपके हृदय मे धन्य है। क्षत-विक्षत होने पर भी हृदय मे मगल का विकास है। हाँ, सुबन्धु ! चरणो का प्रक्षालन करो। [**सुबन्धु जल लेकर बढता है।**]

हर्ष नही, आचार्य ! आपके सभाषण-रूपी अमृत से मेरा समस्त शरीर प्रक्षालित हो चुका, अब पैरो का प्रक्षालन व्यर्थ है। आप अपने आसन पर आसीन हो। मेरे-लिए यह पृथ्वी ही श्रेष्ठ आसन है। [**पृथ्वी पर बैठ जाता है।**]

दिवाकर · आप जैसे पुण्यात्मा को देखकर मोक्ष की इच्छा रखते हुए भी मुझे मनुष्य शरीर मे श्रद्धा हो गयी है। यह आश्रम सब प्रकार से आपके सत्कार के लिए प्रस्तुत है।

हर्ष आचार्य ! हर्ष को किसी सत्कार की आवश्यकता नही है। दुर्भाग्य की साँसो ने ही उसे जीवन दिया है। महाप्रलय की भाँति पिता का मरण, उसके पूर्व ही जननी यशोमती का अग्नि-प्रवेश, फिर भगिनी-पति ग्रहवर्मा का वध, उसके अनन्तर ज्येष्ठ बन्धु राज्यवर्द्धन की हत्या और वहिन राज्यश्री को कारागृह। ये सव घटनाएँ उस दुर्भाग्य के चरण-चिह्न है जो मेरे जीवन के श्मशान मे यात्रा कर रहा है। आचार्य ! दुर्भाग्य की यह यात्रा क्या मेरी जीवन-यात्रा से भी वडी हो गयी ?

दिवाकर राजन् ! . .

हर्ष जिस प्रकार एक लौह-दण्ड वार-वार पत्थर पर चोट मारकर चिनगारियाँ उत्पन्न करता है, किन्तु उस पत्थर को भस्म नही करता, उसी प्रकार दुर्भाग्य मुझे तिल-तिल कर जलाता है, भस्म नही करता !

दिवाकर वह भस्म कभी नही कर सकेगा, राजन् ! अग्नि वायु का भक्षण कर प्रज्वलित होती है, किन्तु वही वायु जव आँधी वन जाती है तव अग्नि एक क्षण मे समाप्त हो जाती है। आपके हृदय मे साहस की वह आँधी है, राजन् !

हर्ष : वह आँधी उस समय से उत्पन्न हुई है, आचार्य ! जव जननी यशोमती ने अग्नि मे प्रवेश किया। वैदेही की भाँति अपने पति के सामने ही उन्होने अग्नि की शीतलता ग्रहण की ! वीर-जाया और वीर-जननी के साहस के समक्ष राज-परिवार और प्रजा-वर्ग के अनुरोध निर्वल सिद्ध हुए। मेरे आँसू भी जननी के दृढ निश्चय की शिला पर सूख गये। तव से उनका ही साहस मेरे प्राणो मे समा गया है। कष्ट के तीखे काँटो को मैने उन्ही साहस की उँगलियो से उखाडकर फेका है और प्रधान अधिकारी अवन्ति द्वारा यह घोषणा करा दी है कि पृथ्वी से उदयाचल तक, सुवेल पर्वत तक, अस्ताचल तक, गन्धमादन पर्वत तक, राजाओ की मुकुट-मणियो के आलोक से वना हुआ लेप मेरे चरणो का कष्ट दूर करेगा। किन्तु, आचार्य ! इस समय मेरे चरणो का कष्ट तव दूर होगा, जव इस विन्ध्याटवी मे खोयी हुई मेरी वहिन राज्यश्री मुझे मिल जाय ! आप इस विन्ध्याटवी के कण-कण से परिचित होगे। आपको मेरी वहिन राज्यश्री की सूचना है ?

माधव आचार्य ! महादेवी राज्यश्री के खो जाने से महाराज को वहुत कष्ट है।

दिवाकर राजन् ! शत्रु से अपमानित होने के भय से ही राज्यश्री विन्ध्याटवी मे आयी है, ऐसी सूचना अवश्य है। आपका साहस और मेरा विश्वास राज्यश्री को अवश्य ही आपके समीप ले आयेगा।

हर्ष आचार्य ! मेरे सभी प्रिय स्वजन ससार छोड चुके है। एकमात्र छोटी वहिन राज्यश्री ही वची है। मुझे आशका है कि पति की मृत्यु हो जाने के कारण कही वह भी अपने को अग्नि मे समर्पित न कर दे। उसके सामने अपनी जननी का आदर्श है जिसने अपने पति के आसन्न-वियोग ही मे अपने प्राणो की आहुति दे दी।

दिवाकर . आश्रम का यह कितना वडा सौभाग्य होता यदि वह आपको प्रिय सवाद

का उपहार दे सकता, किन्तु इसी समय मैं आश्रम के सभी शिष्यो को आदेश दूँगा कि वे विन्ध्याटवी की चारो दिशाओ मे बिखरकर महादेवी राज्यश्री का पता लगावे। सुबन्धु और तारक !

सुबन्धु आज्ञा प्रभु !

[**भिक्षु का प्रवेश**]

भिक्षु आचार्य को प्रणाम। एक स्त्री आश्रम-द्वार पर है।

हर्ष : (चीत्कार के स्वर मे) राज्यश्री !

भिक्षु : नही, राजन् ! वह स्त्री अभी कुछ देर हुए आश्रम से शीतल जल-पान करके गयी थी। वह आचार्य के दर्शन करना चाहती है।

दिवाकर उसे शीघ्र ही भीतर लाओ।

भिक्षु जो आज्ञा ! [**प्रस्थान**]

दिवाकर वह चित्रक की पत्नी है। उसने दस्यु पर आक्रमण किया था और अपनी कृपाणी से उसके शरीर पर गहरा घाव कर दिया था। वह वीर नारी है।

[**शिप्रा का प्रवेश**]

शिप्रा शिप्रा आचार्य के चरणो मे प्रणाम करती है।

आचार्य स्वस्ति !

शिप्रा मेरा अपराध नही है, आचार्य ! मैने अपनी ओर से अनेक प्रार्थनाएँ कीं, किन्तु उनका परिणाम कुछ नहीं हुआ। अब आप ही रक्षा करे !

आचार्य मैं जानता हूँ, भद्रे ! किन्तु इसका निर्णय अटवी-सामन्त व्याघ्रकेतु करेंगे। दस्यु पर प्रहार करने मे क्या अपराध हुआ, इस आश्रम से उसका कोई सम्बन्ध नही।

शिप्रा किन्तु, आचार्य ! व्याघ्रकेतु इसका निर्णय नही कर सकते। आपके प्रभाव से ही रक्षा हो सकती है।

आचार्य भद्रे ! इस समय अवकाश नही है। उस पर फिर कभी विचार होगा।

शिप्रा आचार्य ! इस समय अवकाश निकालना ही होगा। नही तो अनर्थ हो जायगा। बडी भयानक अग्नि की लपटे उठ रही है।

आचार्य : उन्हे शान्त करो, भद्रे ! इस समय दूसरी समस्या आश्रम के सामने है। हृदय की ज्वाला शान्त करो।

शिप्रा आचार्य ! यह समस्या सर्वप्रथम होनी चाहिए। अग्नि की लपटे मैं शान्त नही कर सकती। सारा वन-प्रान्त उनसे झुलस रहा है।

आचार्य क्या कल रात की लगी हुई आग अभी तक नही बुझी ?

शिप्रा : मै यह तो नही कह सकती कि वह आग कल रात की लगायी हुई है, किन्तु लपटे आकाश तक उठ रही है।

आचार्य इस समय हमारे अतिथि विराजमान है। हमे इनका सत्कार करना है।

शिप्रा . मैं अतिथि को प्रणाम करती हूँ और उनसे भी प्रार्थना करती हूँ कि वे एन

अबला की रक्षा करे।

हर्ष किन्तु तुम अबला नही हो, देवि ! तुम दस्यु पर प्रहार कर अपनी रक्षा कर सकती हो।

शिप्रा मै अपनी बात नही कर रही हूँ, देव ! एक बाला है जो किसी समय सौभाग्यवती रही होगी। न जाने किस दु ख से अभिभूत होकर वह अग्नि मे प्रवेश कर रही है।

हर्ष **(विह्वल होकर)** वह राज्यश्री है ! कहाँ है, देवि ? वह कहाँ है ? शीघ्र चलो, आचार्य ! उसे बचाने की कृपा कीजिए।

दिवाकर भगवान् तथागत की यही आज्ञा है। **(शिप्रा से)** भद्रे ! मार्ग बतलाओ। हम अभी चलेगे। **(सुबन्धु और तारक से)** सुबन्धु ! तुम भी चलो। तारक ! तुम अन्य शिष्यो को लेकर शीघ्र ही आओ। विलम्ब न हो।

[हलचल होती है।]

शिप्रा मै उस अभागिनी बाला की सखियो से कह आयी हूँ कि जब तक मै आचार्य के आश्रम से न लौटूँ तब तक किसी-न-किसी बहाने तुम उस बाला को चिता पर न चढने देना।

हर्ष : **(शिप्रा से)** तुम बुद्धिमती हो, देवि ! फिर भी शीघ्र चलो, देवि ! कही राज्यश्री अपने को अग्नि मे समर्पित न कर दे ! मेरा हृदय कहता है कि वह राज्यश्री ही है ! राज्यश्री ही है ! भगवान् आदित्य मुझे किरणो की गति प्रदान करे ! मै वायु के वेग से जाऊँ !

माधव मै वाहन का शीघ्र ही प्रबन्ध करता हूँ। **[प्रस्थान]**

शिप्रा : तब शीघ्र ही चलिए, देव ! मैं अश्व भी दौडाना जानती हूँ। यदि अश्व हो तो

हर्ष अश्व दौडाना जानती हो ? अश्व तो अनेक है। तुम धन्य हो ! चलो, देवि ! **(आचार्य से)** आचार्य ! मै आगे चल रहा हूँ। **[प्रस्थान]**

दृश्यान्तर

[वनप्रान्त—वृक्षाटवी के समीप चिता जल रही है। चिता के समीप एक स्त्री मगल-पाठ कर रही है।]

स्वस्ति न इन्द्रो वृद्धश्रवा न पूषा विश्ववेदा।
स्वस्ति नस्तार्क्ष्यो अरिष्टनेमि स्वस्ति नो बृहस्पतिर्दधात।
शान्ति ! शान्ति ! शान्ति. !

[आरती करती हुई नारियो के कठ से बीच-बीच मे सिसकियाँ निकल आती है। राज्यश्री अनिमेष दृष्टि से चिता की ओर देखती हुई बैठी है। मगल-पाठ की समाप्ति के बाद वह अपने आप गहरी साँस लेकर कहती है।]

राज्यश्री मगल-पाठ समाप्त हुआ। कितनी दिव्य ज्योति है चिता की इस मगलमय

अवसर पर ! अग्नि का पूजन हो, मेनका !

मेनका स्वामिनी ! अग्नि का पूजन तो सदैव हुआ है, किन्तु इस समय का पूजन कितना कठिन है, स्वामिनी !

राज्यश्री अग्नि का पूजन सदैव ही मगलमय है, मेनका ! विवाह के मगल-पर्व पर मैने वधू-वेश मे भी तो इसी अग्नि का पूजन किया था। क्या जानती थी कि इस भाँति भी पूजन करना होगा ! [सिसकी]

मेनका स्वामिनी ! यह स्मृति बडी कष्टकर है !

राज्यश्री (सिसकी रोककर) मेरी स्मृति ने वधू-वेश ही धारण किया है, मेनका ! जिसमे अक्षय शृगार है। उतना ही जितना इस चिता मे है। तू भी चिता का यह दिव्य शृगार देख ! कितना मोहक सिन्दूर लगा रखा है इसने अपनी लपटो मे ! इन्ही सिन्दूरी लपटो मे मेरे सुहाग की रेखा भी तो छिप गयी है ! (भावमय होकर) देवि ! लौटा दो ! लौटा दो, देवि ! मेरे सुहाग की रेखा। तुम्हारे पास तो सुहाग का भडार है जो कभी नही घटता। सदैव सरिता के जल की भाँति भरता ही रहता है। अरे ! तुम तो और भी प्रज्वलित हो उठी ! नही लौटाओगी मेरा सिन्दूर ? जाने दो, मै स्वय तुम मे प्रवेश करके अपना सिन्दूर खोज लूँगी या स्वय सिन्दूर बनकर तुम्ही मे समा जाऊँगी।

[आगे बढती है।]

मेनका स्वामिनी ! आगे न बढे।

राज्यश्री मेनका ! मत रोक मुझे। इसी प्रकार मेरी जननी यशोमती भी तो आगे बढी थी। अश्रु से स्नान कर, पति की चरण-रज का तिलक लगाकर उन्होने भी तो अग्नि का कौशेय धारण किया था ! उस समय मै उनके दर्शन नही कर सकी। अब मैं उन्हे अग्नि की लपटो मे पाकर पूछूँगी, 'माँ ! तुम राज्यश्री को उसी समय अपने साथ क्यो न ले आयी !' [सिसकी]

विराजिका विलाप न करे, महादेवी।

राज्यश्री विलाप नही करती, विराजिका ! मृत्यु के पथ पर आँसू बहाकर उसका मार्ग कोमल बना रही हूँ। मृत्यु मेरी सहचरी बने। मै भी तो उसी की तरह छायामात्र रह गयी हूँ। मै भी तो अतीत की स्मृतियो की समाधि हूँ।

विराजिका महादेवी ! आपको खोकर महाराज हर्षवर्द्धन भी जीवित नही रहेगे।

राज्यश्री (स्मृति से बिलखकर) मेरे हर्ष ! कहाँ हो तुम ! देखो, तुम्हारी छोटी बहिन राज्यश्री कितनी लाछित हुई है ! जिसे तुमने गोद मे खिलाया, वही कारागार की बन्दिनी बनी। लोह-शृखलाओ से उसके पैर कसे गये। हर्ष ! मुझे देखकर तुम लज्जित होगे। मै अपना कलकित मुख तुम्हे नही दिखलाऊँगी, नही दिखलाऊँगी ! [सिसकियाँ]

विराजिका महादेवी ! इसमे आपका क्या दोष ? ससार की विषम परिस्थितियाँ

सभी को लाछित करती है ।

राज्यश्री लाछित होने की अपेक्षा मृत्यु अच्छी है, विराजिका ! दुर्भाग्य ने मृत्यु के मच तक अनेक सोपान बनाये, किन्तु मेरे लिए मृत्यु एक पग भी नीचे नही उतरी, एक पग भी नही । जैसे नीच शत्रु की भाँति वह भी मुझे अपमानित कर रही है। जीवन के कारागार मे डालकर वह दूर से ही मेरा परिहास कर रही है । मै इसे सहन नहीं करूँगी, नही करूँगी । [**सिसकियाँ**]

विराजिका महादेवी !

राज्यश्री मेरे भस्म हो जाने के बाद यदि मेरे हर्ष मिले तो उन्हे यह कठहार दे देना और कहना कि तुम्हारे दिए हुए उपहार के योग्य राज्यश्री नही हो सकी । वह अपने दुर्भाग्य के साथ इस कठहार को नही जला सकी । प्यारे हर्ष का उपहार ! (**सिसकियाँ लेती है**) इसे सँभालकर रखना, विराजिका ! अब ये चिना की लपटे जननी यशोमती की गोद बनना चाहती है, मेनका ! चिता पर चढने के लिए अपने हाथ का सहारा दे !

[**इसी समय अश्व के समीप आने का शब्द**]

शिप्रा यही वह स्थान है, देव !

हर्ष (**पुकारकर**) राज्यश्री !

मेनका स्वामिनी ! महाराज हर्ष आ गये ! महाराज हर्ष आ गये !

राज्यश्री (**उद्भ्रान्त होकर**) हर्ष ! हर्ष !! [**मूच्छित हो जाती है ।**]

[**महाराज हर्ष शीघ्रता से दौडकर आते हैं ।**]

हर्ष कहाँ है, कहाँ है मेरी राज्यश्री ? राज्यश्री ! राज्यश्री !! यह है मेरी वहिन राज्यश्री !

[**हाथो मे उठाकर हृदय से लगा लेते हैं ।**]

हर्ष (**भरे हुए कठ से**) राज्यश्री ! तू कहाँ रही ? नेत्रो की अश्रु-धारा से मेरे हृदय को शीतल कर दे !

विराजिका (**गद्गद् कठ से**) महाराज की कठ-ध्वनि सुनकर महादेवी अचेन हो गयी। महाराज की सेवा मे प्रणाम ! महाराज ठीक समय पर आये । यह आपका कठ-हार ।

मेनका महाराज की सेवा मे प्रणाम ! महाराज ! यदि इसी समय न आते, तो स्वामिनी चिता मे प्रवेश कर जाती ।

शिप्रा (**विनोद से**) और तुम लोग महाराज का जयघोष करना भूल गयी ?

[**छः नारियो का सम्मिलित कठ**—महाराज हर्षवर्द्धन की जय !]

[**दिवाकर मित्र का शिष्यो सहित प्रवेश**]

शिप्रा आचार्य भी आ गये ।

दिवाकर मै प्रसन्न हूँ । आपका अनुमान सत्य था, राजन् ! राज्यश्री की रक्षा हुई। उसका और आपका कल्याण हो !

हर्ष   आचार्य ! प्रणाम करता हूँ। यह आपके दर्शनो का फल है कि आज मेरी बहिन जीवित है। [**राज्यश्री को चेत होता है।**]

राज्यश्री   (**चीखकर**) मेरे भाई हर्ष ! मै अनाथ हुई, पिता गये, माता गयी, भाई गये। तुमने मुझे उस मार्ग से क्यो लौटा लिया ? मुझे जाने दो ! मुझे जाने दो ! मै जाऊँगी ! [**सिसकियाँ**]

हर्ष   बहिन ! अब वर्द्धन-वश मे कौन रह गया। तुम जाओगी तो हर्ष के लिए इस ससार मे क्या अवलम्ब रहेगा ? मुझे जीवित रहने दो, बहिन ! जीवित रहने दो। इसलिए कि मै उस नराधम के वश को धूल मे मिला सकूँ, जिसने तुम्हे इस स्थिति मे पहुँचाया है। मुझे जीवित रहने दो, इसलिए कि मै तुम्हारे अश्रुबिंदुओ का मूल्य शत्रु के रक्त-बिंदुओ से चुका सकूँ, बहिन ! हमारे भाई राज्यवर्द्धन की हत्या जिस शशाक ने की है, उसके वश को मैं परशुराम की भाँति इक्कीस बार काटना चाहता हूँ। देवि ! जीवित रहो और मुझे जीवित रहने दो।

राज्यश्री   यह कुछ न करो, भाई ! जीवन मे तुम पुरुषार्थ करो, किन्तु जिस बहिन के जीवन मे अब कुछ भी शेष नही है, उस बहिन को ससार मे मत खीचो। जो फूल बिखर गया है, उसकी पखुडियो को तुम फिर न जोडो। जो सरिता सूख गयी है, उसमे तुम अजुलियो से जल मत भरो। चिता मेरी प्रतीक्षा कर रही है, उसे शान्त न होने दो !

हर्ष   बहिन ! मैंने अपनी माँ को ज्वाला मे जलते देखा है, पिता को मृत्यु की कालिमा मे छिपते देखा है। अब साहस नही है कि अपनी छोटी बहिन को जलते हुए देखूँ। मेरी बहिन ! मेरे हृदय मे अनेक चिताएँ जल रही है, उनमे छोटी बहिन की चिता प्रलय उत्पन्न कर देगी। उस प्रलय मे नष्ट होने से मुझे बचाओ, बहिन !

राज्यश्री   भाई हर्ष ! मैं कहाँ जाऊँ ? पति-हीना नारी को ससार मे कौन-सी गति है ? मैं प्रार्थना करती हूँ कि मुझे अपने पथ से विचलित न करो। मुझे धर्म-सकट मे न डालो।

हर्ष   आचार्य ! आप धर्म के प्राण है। मेरी बहिन को मार्ग दिखलाइए !

दिवाकर   पुत्रि ! पति-स्मृति, पति-प्रेम से अधिक पवित्र है, पति का विरह पति के मिलन से अधिक शक्तिशाली है। तुम पति की स्मृति से जीवन को पवित्र बनाओ।

राज्यश्री   मैं प्रणाम करती हूँ, भन्ते ! मै आपसे भी चितारोहण की अनुमति चाहती हूँ।

दिवाकर   पुत्रि ! अपने सकल्प का परित्याग करो, क्योकि तुम्हारे सकल्प से दो जीवन नष्ट होगे—तुम्हारा और तुम्हारे एकमात्र भाई हर्षवर्द्धन का। अत दूसरे के कल्याण के लिए विचरण करो ! आत्मसतोष का उतना महत्त्व नही, जितना दूसरे की प्राण-रक्षा का। अत अपने शोक का परित्याग करो !

राज्यश्री   शोक का परित्याग करूँ ? तब मुझे काषाय-ग्रहण की आज्ञा प्रदान कीजिए।

हर्ष   (**हर्षोल्लास से**) साधु ! आचार्य के चरणो मे प्रणाम ! बहिन ! तुम धन्य हो !

काषाय-ग्रहण मै भी करूँगा। किन्तु मेरी एक प्रार्थना है। मैने शत्रुओ का नाश करने की प्रतिज्ञा की है। वर्द्धन-वश के प्रताप को आर्यावर्त मे प्रतिष्ठित करने की शपथ ली है। जब तक मेरी यह प्रतिज्ञा पूरी न हो, तब तक मेरी बहिन मेरे समीप रहे। जब हर्षवर्द्धन अपना कार्य समाप्त कर ले, तब अपनी बहिन के साथ वह भी काषाय ग्रहण करे।

राज्यश्री आचार्य की क्या आज्ञा है?

दिवाकर पुत्रि! यद्यपि तुम्हारा दुःख बहुत दूर तक पहुँच गया है, फिर भी इस समय पिता और गुरु के समान बडे भाई की आज्ञा मान्य है। पुनीत रहकर अपना कर्तव्य पालन करना ही जीवन-यज्ञ है। इस जीवन-यज्ञ मे ससार का कल्याण है।

हर्ष आचार्य! आपसे मेरा एक निवेदन है। जब तक मेरी बहिन मेरे समीप रहे, आप धार्मिक कथाओ और विमल उपदेशो से इसे प्रतिबोध कराते रहे। आज से आप मेरे राज्य के आचार्य हुए।

दिवाकर सत्य की विजय हो!

हर्ष और शिप्रा! तूने मुझ पर अत्यन्त उपकार किया है। तू मेरी बहिन राज्यश्री की अगरक्षिका नियुक्त हुई।

शिप्रा मै कृतार्थ हुई, महाराज! यह मेरा भी जीवन-यज्ञ होगा!

हर्ष मै सबसे यथास्थान लौटने की प्रार्थना करता हूँ और यह प्रण करता हूँ कि स्थाण्वीश्वर का वर्द्धन-वश आर्य-गौरव को स्थिर करने मे भी जीवन-यज्ञ की पूर्ति समझेगा। जय आदित्य!

सम्मिलित स्वर महाराज हर्षवर्द्धन और आर्या राज्यश्री की जय!

[यवनिका]

14

भाग्य-नक्षत्र

•

पात्र-परिचय

महाराज पृथ्वीराज चौहान—दिल्ली और अजमेर के अधिपति
महारानी संयोगिता—महाराज पृथ्वीराज की नवीन रानी
चामुंडराय—महाराज पृथ्वीराज के भाई
महाराज वियाणा, महाराज अलवर—महाराज पृथ्वीराज के सहयोगी
जयानक—महाराज पृथ्वीराज के राजकवि
रूपा, पुष्पा—परिचारिकाएँ

•

काल— 1192 ई०
स्थान—दिल्ली के राजकक्ष में मंत्रणा-गृह

भाग्य-नक्षत्र

[नेपथ्य में वाद्य-सगीत और उसके अनन्तर ही नृत्य की ध्वनि। फिर महाराज पृथ्वीराज की गूँजती हुई हँसी।]

पृथ्वीराज (हँसते हुए) तो ऐसा है तुम्हारा नृत्य, रूपा ! तुम्हारे नुपूरो की झनकार मे चरणो के नीचे सगीत का एक-एक कमल खिल उठता है, कमल जिसकी पखुडियाँ वायु मे झकृत होती है सगीत-कमल !

रूपा वह कमल तो आपके अनुराग का कमल है, महाराज !

पृथ्वीराज नही, रूपा ! आकाश मे रजनी ने भी नृत्य किया। उसके चरणो के नीचे एक ही कमल खिल सका—पूर्णिमा का चन्द्र, एक ही कमल—जहाँ तुम्हारे नृत्य के सगीत से अनेक कमल खिलते है। तुम्हारे नृत्य से लज्जित होकर उसने नूपुर तोडकर सारे आकाश मे बिखरा दिये। वे ही बिखरे हुए नुपूर तो तारे है तारे, रूपा !

रूपा यह तो महाराज की सुन्दर कल्पना है ! महाराज कवि भी है।

पृथ्वीराज कवि तो रूपा ! चन्द्रक है जो महारानी सयोगिता की प्रशसा मे एक 'रासो' लिख लाया था। ओह ! कैसी कल्पनाएँ उसने की है। एक स्थान पर लिखता है "सेत वस्त्र सोहै सरीर, नख स्वाति बूँद जस।" सयोगिता के नख स्वाति की बूँद की शोभा लिए हुए है। स्वाति की बूँद जिससे मोती की रचना होती है। नख जैसे मोती की आदिशोभा लिये हुए है। कहाँ हैं महारानी सयोगिता ?

रूपा आपकी सेवा मे आती ही होगी। वह शृगार कर रही थी। शृगार करते हुए उन्होने आज्ञा दी थी कि उनके आने तक मै आपके सामने नृत्य करूँ।

पृथ्वीराज तो नृत्य उनके आगमन का अग्रदूत है, अग्रदूत ! तुम सत्य कहती हो, रूपा ! मुझे स्मरण हो रहा है कि राजकुमारी सयोगिता जब स्वयवर मे आ रही थी तब उनके नूपुरो की ध्वनि ने मुझे पहले ही सूचना दे दी थी कि राजाओ की उत्सुकता और उमग के बीच रूप और लावण्य की कोई देवी शोभा के अवगुठन मे छिपी हुई आ रही है। सगीत निश्चय ही उनके आगमन का अग्रदूत है।

[एक परिचारिका का प्रवेश]

परिचारिका महाराज की जय ! महारानी सेवा मे आ रही है।

पृथ्वीराज (उत्साह से) स्वागत ! स्वागत ! पुष्पे ! उनसे निवेदन करो कि उनके प्रत्येक चरण के नीचे भूमि पर जो लाल प्रतिबिम्ब पडता है वह पृथ्वीराज का

हृदय ही है, हृदय जो उनके स्वागत के लिए प्रति पद पर उपस्थित है ।

पुष्पा जो आज्ञा । [प्रस्थान]

पृथ्वीराज · महारानी आ रही है तो रूपा, नृत्य करो ! महारानी सयोगिना के आगमन को नृत्य की भूमिका चाहिए । उनके आगमन की तरग मे तुम्हारे नृत्य का कल्लोल हो और मेरा हृदय . .. मेरा हृदय स्वागत करने के लिए सरिता का कूल बन जाए .सरिता का कूल ।

रूपा · जो आज्ञा ! [**नृत्य का आरम्भ**]

पृथ्वीराज (**बीच मे ही**) स्वागत स्वागत . (**नृत्य का रुकना**) लावण्य की लक्ष्मी, सौभाग्य की सरस्वती सयोगिता !

[**सयोगिता का प्रवेश**]

सयोगिता महाराज की जय !

पृथ्वीराज तुम्हारे मुख से मेरो जय का उच्चारण कितना मोहक है, सयोगिता ! जैसे बाल-प्रभात मे मन-समीरण की लहरो पर तरगित होती हुई सरस्वती-वीणा की झकार हो !

संयोगिता तब तो महाराज, आपकी जय ही उषाकाल है जिसमे प्रत्येक स्वर सगीत का रूप धारण करता है ।

पृथ्वीराज महाकवि चन्द्रक की भाँति तुम्हारे कठ मे भी कविता है, सयोगिता ! (**रूपा से**) रूपा, तुम जाओ और मेरे भाग्य-नक्षत्रो की भाँति उन कुद-कलियो को एकत्र करो जिनकी मालाएँ महारानी सयोगिता के कठ मे ही अपनी सुगधि प्राप्त करे—उस कठ मे जिसमे कविता सगीत बनकर निवास करती है ।

रूपा जो आज्ञा ! [**प्रस्थान**]

पृथ्वीराज जिस प्रकार स्वर-लहरी मे मूर्च्छना सहायक रहती है, उसी भाँति सयोगिता! रूपा तुम्हारी सहायिका है । यह कन्नौज-कन्या तुम्हारी इच्छाओ से पूर्ण परिचित है ।

संयोगिता हाँ, महाराज ! वह मेरी सेवा मे बहुत दिनो से है । यही रूपा है जिसने ऐसी व्यवस्था की थी कि मै द्वार पर रखी हुई आपकी प्रतिमा के गले मे जय-माला डाल सकी । आपकी प्रतिमा के गले मे जब जयमाल पडी.

पृथ्वीराज (**बीच ही मे**) अच्छा, तो तुमने यह जान लिया था कि द्वार पर मेरी प्रतिमा रखी हुई है ।

सयोगिता . महाराज ! मेरे हृदय मे रखी हुई प्रतिमा कोई कही भी रख दे, मुझे सूचना तो मिल ही जाएगी । फिर रूपा भी यह जानती थी कि पिता आपका अपमान करने के लिए आपकी प्रतिमा द्वारपाल के स्थान पर रखना चाहते है । उसने मुझसे धीरे से कह दिया था कि जिस जगह वह आपकी प्रतिमा देखेगी वही अपने पायल से गहरी झकार उत्पन्न कर देगी और मै आपकी प्रतिमा के गले मे जयमाला डाल दूंगी ।

पृथ्वीराज अच्छा, तो इसके लिए पूरा विधान रचा था तुम लोगो ने ! मैं तो साधारण वेश मे प्रतिमा के समीप ही था। जब तुम और रूपा मेरी प्रतिमा को पहचानती थी तब तो मेरे कठ मे भी जयमाल पड सकती थी।

संयोगिता अवश्य पड सकती थी। मैने तो आपको साधारण वेश मे भी पहचान लिया था, किन्तु उस स्थान पर एकत्र राजाओ को तो सूचना नही थी कि आप उस स्थान पर साधारण वेश मे है। मै आपके गले मे जयमाल डालती तो वे लोग समझते कि मैने किसी चारण के गले मे माला डाल दी है।

पृथ्वीराज (हँसकर) चारण के गले मे ! जब चारण तुम्हे अश्व पर चढाकर ले जाता तब वे लोग सम्भवत समझते कि मैं किसी दरबार मे तुम्हे कवित्त पढवाने ले जा रहा हूँ। क्यो ? [हँसते है।]

सयोगिता (हँसते हुए) तब मै कवित्त के साथ भाग्य भी पढ सकती और अपने चारण को दिल्ली और अजमेर का नरेश भी बना सकती।

पृथ्वीराज दिल्ली और अजमेर ही क्यो, सयोगिता ! जहाँ तक सौन्दर्य का राज्य है वहाँ तक मेरा भी राज्य होता क्योकि सौन्दर्य की देवी सयोगिता ही मेरी है, केवल मेरी। केवल पृथ्वीराज चौहान की।

सयोगिता मै सौभाग्यशालिनी हूँ, देव ! आप जैसे पराक्रमी वीर को स्वामी के रूप मे प्राप्त कर, मुझे तो भय लग रहा था कि कही आपके जीवन और यश के दो किनारो के बीच मै दुर्भाग्य की लहर तो नही बन रही हूँ !

पृथ्वीराज नही, सयोगिता ! वे दो किनारे नही, वे मेरे दोनो भुजदड थे जिनके बीच तुम सुरक्षित थी और पृथ्वीराज के भुजदड दधीचि की हड्डियो से बने है जिन पर कोई भी प्रहार कुठित हो सकता है।

सयोगिता मुझे इसका विश्वास है, महाराज !

पृथ्वीराज : इसी विश्वास को अमर करने के लिए मै विवाह की स्मृति मे एक आनद-पर्व मनाना चाहता हूँ। इसीलिए मैंने तुम्हे इस बाहरी मत्रणा-गृह मे ही आने का कष्ट दिया। यही मै अपने सामन्तो से परामर्श कर सकूँगा।

सयोगिता मै आपके सकेत पर कही भी जा सकती हूँ, महाराज ! वायु की लहर सरिता के प्रवाह मे चाहे जिस दिशा से तरग उठा सकती है।

पृथ्वीराज मै इन्ही तरगो मे बहा करता हूँ, देवि ! तब इस विवाह-पर्व की भूमिका किस प्रकार हो ?

सयोगिता कहते है, महाराज के वश की उत्पत्ति यज्ञ से हुई है। यज्ञ मे महर्षि वसिष्ठ की आहुति से ही चहुवान का—चार भुजाओ वाले दिव्य पुरुष से प्रादुर्भाव हुआ। इस प्रकार महाराज मे अपने पूर्व पुरुष चहुवान की चार भुजाओ वाली शक्ति है। वह उस शक्ति से सहज ही अपने पर्व की भूमिका बना सकते है।

पृथ्वीराज : किन्तु कवि जयानक ने प्रमाणित किया है कि मै सूर्यवशी हूँ।

संयोगिता सूर्यवशी ? तब तो और भी अच्छा है, महाराज ! सूर्य की गति सर्वत्र

है। विस्तृत आकाश मे भी वह उषा के रगो से अपने समारोह की भूमिका सुसज्जित करता है !

पृथ्वीराज · (प्रसन्नता से) ओह, तुमने यह कितनी अच्छी बात कही ! कितना अच्छा सकेत किया ! महारानी ! कल उषाकाल मे ही यह पर्व मनाया जाये। तुम उषा बनकर विविध रग के बादलो की तरह वस्त्र धारण करो। लालिमा की तरह अगराग से तुम्हारा शरीर चर्चित हो। शुक्र तारे की भाँति तुम्हारे मस्तक पर हीरक-ज्योति हो और तुम्हारे सामने समीर की भाँति सामन्तो की पक्ति बढती चली जाए। पक्षियो की तरह पक्षियो की तरह चारण तुम्हारा यशोगान करे और मै . सूर्य की तरह.. मै . तुम्हारे ही समीप उदित होकर तुम्हारी मगल-श्री मे विभोर हो उठूँ !

संयोगिता महाराज ! आपमे कितना जीवन है, कितना उत्साह है ! उषा की भाँति कुछ क्षणो तक रहनेवाली मेरी शोभा को महाराज कितना महत्त्व दे रहे हैं !

पृथ्वीराज . आकाश की उषा तो क्षणिक है, देवि ! किन्तु मैं अपनी उषा को वर्षों तक सुरक्षित रखना चाहता हूँ वर्षो तक ! तब यही हमारे विवाह का स्मृति-पर्व हो, सयोगिता ! तुमने एक ही सकेत मे मेरे कार्यक्रम की रूपरेखा बना दी। तुम इस सूर्यवशी चौहान की अमर उषा बनो, जिसके दर्शनमात्र से हमे प्रकाश का सदेश मिले, जागरण की ज्योति मिले, जीवन-सग्राम के लिए बल मिले !

सयोगिता तो फिर मेरे लिए क्या आज्ञा है, महाराज !

पृथ्वीराज उषा को कोई आज्ञा नही दे सकता, महारानी ! वह सौभाग्य-लक्ष्मी की तरह उदित होती है, बादलो के समूह चारो ओर से एकत्र होकर उस पर अरुणिमा की पुष्प-वर्षा करते है। एक-एक क्षण उसके मार्ग पर प्रकाश की स्वर्ण-धूल बिखराता है। तुम्हारा कार्य तो बस इतना ही है इतना ही है, सयोगिता, कि तुम अपने अधरो मे एक तरल मुसकान भरकर ससार की ओर कल्याण-कामना से देख लो। तुम्हारी उस मुसकान मे दिल्ली और अजमेर का राज्य क्षितिज की सीमा तक फैल जाएगा और पश्चिम के बादल भी आकर उस अरुणिमा की छाया मे .

[नेपथ्य मे तुमुल]

[महाराज कहाँ हैं उन तक सदेश पहुँचाना आवश्यक है । महाराज कहाँ है ? बहुत विलम्ब हो रहा है ! महाराज की जय ! आदि का सम्मिलित स्वर]

सयोगिता · यह कैसा कोलाहल हो रहा है, महाराज !

पृथ्वीराज उषा का स्तव-गान अभी से आरम्भ हो गया ! (हँसी) जागरण की ज्योति अभी से फैलने लगी ! अच्छा मैं देखता हूँ। तुम विश्राम करो। मैं तुम्हे अभी सूचित करूँगा। (पुकारकर) पुष्पे !

[पुष्पा का प्रवेश]

पुष्पा (प्रणाम करते हुए) आज्ञा, महाराज !

पृथ्वीराज महारानी को विश्राम-कक्ष तक पहुँचा आओ।

पुष्पा जो आज्ञा !

संयोगिता महाराज का प्रेम अमर हो ! प्रणाम !

[संयोगिता का पुष्पा के साथ प्रस्थान]

पृथ्वीराज : (सोचते हुए) चौहान-वंश की उषा उषा . लालिमा की तरह अंगराग. शुक्र तारे की भाँति मस्तक पर हीरक-ज्योति समीर की भाँति सामन्तों की पंक्ति. पक्षियों की तरह चारणों के गीत !

जयानक (प्रणाम करते हुए) महाराज की जय !

पृथ्वीराज कौन ? जयानक ! महाकवि ! तुम्हारे स्वर में कम्पन है। क्या भारती की वीणा तुम्हारे कंठ में अधिक झंकृत हुई ?

जयानक महाराज अनेक दिनों के अनन्तर आपको इस बाहरी मंत्रणा-गृह में पाने का सौभाग्य हम लोगों को प्राप्त हुआ है। किसी को साहस ही नहीं हुआ कि वह आपकी सेवा में सूचना पहुँचाए।

पृथ्वीराज सूचना ? किस बात की सूचना ?

जयानक : महाराज, इस बात की सूचना कि पश्चिम आकाश में बादल

पृथ्वीराज (बीच में ही) अरुणिमा में अपना शृंगार कर रहे हैं ! (प्रसन्नता से) ओह, महाकवि ! तुम सचमुच ही प्रतिभाशाली हो। सरस्वती के वरदान से पवित्र महाकवि ! यह तुमने कैसे जाना कि विवाह-पर्व की उषा महारानी संयोगिता है ? वे पश्चिम आकाश में भी बादलों को राग-रंजित करने जा रही हैं ? ओह, अंगराग से उनका शरीर चर्चित है, मस्तक पर शुक्र तारे की हीरक-ज्योति है, समीर की भाँति सामन्तों की पंक्ति बढ़ रही है और तुम तुम महाकवि, पक्षिवृन्दों के समान मंगल-राग का कूजन कर रहे हो और दिल्ली और अजमेर का राज्य क्षितिज की सीमा तक फैल रहा है और पश्चिम आकाश के बादल उस अरुणिमा में

जयानक · महाराज......

पृथ्वीराज (गिरते हुए स्वर में) उस अरुणिमा में (गिरते हुए स्वर से) अपना शृंगार कर रहे हैं। क्यों ? तुम्हारे मुख पर सन्देह की रेखा ! सन्देह की रेखा कैसी ? तुम प्रसन्न नहीं हो रहे ?

जयानक महाराज ! यह विवाह-पर्व नहीं है, युद्ध-पर्व है।

पृथ्वीराज युद्ध-पर्व ? जयानक ! महाकवि ! तुम भी तो पश्चिम आकाश के बादलों की बात कह रहे थे ?

जयानक हाँ महाराज ! पश्चिम आकाश में बादल उठ रहे हैं, और उन बादलों में युद्ध का गर्जन है, तलवारों की बिजली .

पृथ्वीराज (सशंकित स्वर में) युद्ध का गर्जन ? तलवारों की बिजली ?

जयानक . हाँ, महाराज ! युद्ध का गर्जन, तलवारों की बिजली। चंडपुंडीर को सीमा-

प्रान्त से युद्ध-सदेश मिला है कि मुहम्मद गोरी एक बार फिर......

पृथ्वीराज : (बीच मे ही) मुहम्मद गोरी ?...शहाबुद्दीन गोरी ?

जयानक हाँ, महाराज ! शहाबुद्दीन गोरी।

पृथ्वीराज उसने तो तारायण के युद्ध मे राजपूतो की तलवार का पानी पिया है। ऐसा पानी जिसकी प्यास उसे फिर कभी नही लगेगी। वह तो पराजय को भारत की भेट समझकर अपने देश ले गया। कवि ! तुम अपनी कल्पना मे अतीत के चित्र को सजीव तो नही करना चाहते ? सजीव ? [अट्टहास करते हैं।]

जयानक महाराज ! आपके बल और पराक्रम के सागर मे किसी भी शत्रु की वीरता डूब सकती है। कुल-देवता सूर्य ने आपको नागौर मे छिपा हुआ इतना स्वर्ण-कोष दिया है मानो सोने के सिक्को मे सत्तर लाख सूर्य आपकी सेना का बल बढाने के लिए एकत्र हो गये है। कन्नौज और गुजरात के नरेश जानते है कि चौहान पृथ्वी-राज से युद्ध-दान लेने मे उन्हे शूद्र बनना पडा है।

पृथ्वीराज : और शहाबुद्दीन गोरी को क्या बनना पडा ?

जयानक शहाबुद्दीन गोरी ने अपने जीवन मे इतनी बडी हार का कभी अनुभव नही किया होगा, महाराज ! पराजित होने पर वह लाहौर नही ठहरा, सीधे गोर चला गया। उसे भय था कि कही लाहौर ही उसके लिए तारायण का युद्धक्षेत्र न बन जाये। वह महाराज की शक्ति जानता है। जब उसने चामुडराय के मुख पर भाला मारा तो महाराज की तलवार ने उसके कधे से रक्त की धारा बहा दी। वह तो खिलजी सैनिक ने उसकी सहायता कर दी, नही तो नही तो.

पृथ्वीराज : किन्तु गोरी के भाले से चामुडराय का दाँत तो टूट गया, मेरी तलवार से उसका कधा नही कटा, कधा नही कट सका।

जयानक यदि उसका कधा कट जाता तो महाराज ! वह दूसरी बार युद्ध मे आपको किस प्रकार गौरव दे सकता और चामुडराय के बत्तीस दाँतो मे एक दाँत टूटने से क्या कमी आ सकती है ?

पृथ्वीराज चामुडराय के दाँत मोती जैसे है। गोरी ने समझा होगा कि चामुडराय के मुख मे मोती भरे है और सुलतान का मोतियो के लिए लालच करना स्वाभाविक है, महाकवि !

जयानक किन्तु चामुडराय कुछ और कहते थे।

पृथ्वीराज क्या ?

जयानक वे कहते थे कि यदि शहाबुद्दीन को मेरे दाँतो से इतना प्रेम है तो उसे मुझ से बत्तीस बार युद्ध करके हारना पडेगा क्योकि मेरे मुख मे बत्तीस दाँत है।

पृथ्वीराज एक युद्ध के लिए एक दाँत ! (हँसते हुए) एक युद्ध के लिए एक दाँत ! गणित तो ठीक है।

जयानक किन्तु महाराज ! इस बार सीमा-प्रान्त से जो सदेश मिला है, वह बहुत ही भयानक है।

पृथ्वीराज पृथ्वीराज के लिए भयानक ? जयानक के मुख से भयानक बात ?

जयानक : हाँ, महाराज ! चडपुडीर ने सूचना दी है कि इस बार गोरी अपरिमित सैनिक बल लेकर आक्रमण करने आ रहा है। उसने एक लाख बीस हजार सैनिक इकट्ठे किये है, जिसमे अफगान, तुर्क और फारस के लोग है। दस-दस हजार की अश्व-सेना के चार विभाग उसके आक्रमण मे सबसे अधिक भाग लेगे।

पृथ्वीराज तुम गोरी के राजकवि नही हो, जयानक ! जो उसकी प्रशस्ति के वर्णन मे अपनी वाणी को विस्तार दो।

जयानक . महाराज, क्षमा करे ! मै सूचना-मात्र दे रहा हूँ।

पृथ्वीराज · मैं सूचना सुन चुका। मैं अपने विवाह-पर्व की योजना पहले बनाना चाहता हूँ।

जयानक · महाराज ! युद्ध की सूचना चिन्ताप्रद है। चामुडराय ने मुझे आपकी सेवा मे. ....

पृथ्वीराज (चीखकर) चामुडराय . ! चामुडराय से कहो कि वे जाएँ। मैं इस समय युद्ध की बात नही सुनना चाहता।

जयानक . महाराज ! चामुडराय भी बहुत आतकित है।

पृथ्वीराज : आतकित ? किस बात से आतकित है ? युद्ध से तो वे कभी आतकित होते नही है और न युद्ध की भयानकता को वह कोई महत्त्व देते है।

जयानक . ठीक है, किन्तु महाराज.. . !

पृथ्वीराज . सुनो ! चामुडराय से पूछो कि युद्ध-पर्व के पूर्व वह विवाह-पर्व मे योग दे सकते है ?

जयानक · जो आज्ञा ! [**जाना चाहता है।**]

पृथ्वीराज सुनो ! (**जयानक लौटता है**) चामुडराय इस समय कहाँ है ?

जयानक वे मत्रणा-गृह के बाहर आपके आदेश की प्रतीक्षा कर रहे है।

पृथ्वीराज : उन्हे भेजो। मै उनसे परामर्श करूँगा।

जयानक · जो आज्ञा ! [**प्रस्थान**]

पृथ्वीराज (**स्वगत**) युद्ध-पर्व ! मुहम्मद गोरी ! जिसे तारायण मे पराजित किया क्या वह फिर कभी युद्ध की कामना मुझसे करेगा ? जैसे जीवन मे एक युद्ध ही तो शेष रह गया है ! आखेट मे युद्ध, विवाह मे युद्ध, राजनीति मे युद्ध ! युद्ध · युद्ध ..युद्ध ! सयोगिता के साथ विवाह का उषाकाल भी समाप्त नही हुआ और युद्ध !

[**चामुडराय का प्रवेश**]

चामुंडराय · महाराज की जय ! [**प्रणाम करता है।**]

पृथ्वीराज · कहो, चामुड ! क्या जीवन-भर मुझे युद्ध ही करना है, गोरी से युद्ध ! कन्नौज से युद्ध ..! गुजरात से युद्ध ! फिर गोरी से युद्ध ! जैसे मेरे जीवन के क्षेत्र मे युद्ध ही सर्प की तरह कुडली मारकर बैठ गया है और चारो ओर का

वातावरण केवल युद्ध की विषाक्त फूत्कार से दूषित हो रहा है ! क्या उसमे प्रेम और आनन्द के अमृत के लिए कोई स्थान शेष नही रह गया ?

चामुंडराय महाराज !

पृथ्वीराज सुनो, चामुंड ! युद्ध की विभीषिका मे मैंने भैरव के समान युद्ध किया। शिव की तरह ताडव किया। मध्याह्न के सूर्य की किरणो की भाँति तलवार की धार गिराई। यज्ञ की लपटो की तरह आग बरसाई। फिर भी मेरे लिए युद्ध करना शेष है ? मै विवाह की शीतलता का अनुभव करना चाहता हूँ। विवाह का पर्व मनाना चाहता हूँ।

चामुंडराय महाराज ! आप सूर्यवशी चौहान हैं। उषा के कोमल सूर्य की भाँति उदित होकर आपने मध्याह्न के सूर्य की प्रखरता प्राप्त की है। क्या मध्याह्न का सूर्य फिर से बाल-रवि होना चाहता है ? क्या पानी चढी हुई तलवार मखमली म्यान की कोमलता मे शयन करना चाहती है ? क्या युद्ध का रक्त इतने शीघ्र महारानी के शरीर का अगराग होना चाहता है ?

पृथ्वीराज · **(चीखकर)** चामुंड !

चामुडराय महाराज, क्षमा करे ! आपको परामर्श देने मे यदि आपकी तलवार मेरा मस्तक काट दे तब भी पृथ्वी पर पडा चामुड का सिर महाराज को सच्चा परामर्श देगा। निकालिए, अपनी तलवार, महाराज ! मेरा मस्तक पृथ्वी पर गिरने के लिए तत्पर है। उस पृथ्वी पर जिस पर चारो दिशाओ मे राज्य करते हुए आप पृथ्वीराज चौहान है।

पृथ्वीराज चामुडराय ! तुम क्या परामर्श देना चाहते हो ?

चामुडराय महाराज ! आपने अनेक राज्यो पर विजय प्राप्त की है। अनेक राजपूत आपकी युद्ध-ध्वजा की छाया मे विश्राम कर रहे है। पिछले तारायण के युद्ध से दस गुनी अधिक सेना हमारे अधिकार मे है। हमारे पक्ष मे एक सौ पचास राजपूत सामन्त है जिनकी वीरता सारे राजस्थान मे प्रसिद्ध है। हमारे पास तीन लाख घुड-सवार है, और तीन हजार हाथी।

पृथ्वीराज यह ठीक है किन्तु

चामुडराय : किन्तु, महाराज ! आप विवाह-पर्व मे सुख की नीद लेना चाहते है। उधर अलवर और वियाणा के राजाओ मे परस्पर ईर्ष्या है और पश्चिमी क्षितिज पर युद्ध के बादल घिर रहे है। शहाबुद्दीन गोरी एक लाख बीस हजार सैनिक इकट्ठे कर बिजली की गति से बढ रहा है। क्षमा करे, महाराज ! अनेक दिनो से आप अन्त पुर से बाहर नही आये। प्रजाजनो मे असतोष है। वे समझते है कि इस परिस्थिति मे कही राजवश मे भय.

पृथ्वीराज **(तीव्रता से)** भय ? चामुड ! अपनी जिह्वा वश मे रखो। तुम मेरे भाई हो, नही तो मेरे लिए इस शब्द के कहनेवाले की जिह्वा कभी की पृथ्वी पर गिर पडती। भय ! इस शब्द से पृथ्वीराज का परिचय नही है। यह शब्द उसके

समीप वायुमडल मे गूँज ही नही सकता। प्रजाजनो के सामने घोषणा कर दो कि राजवश युद्ध के लिए प्रस्तुत है। पहले युद्ध-पर्व होगा, उसके बाद विवाह-पर्व। युद्ध के नगाडो पर चोट दो और उस चोट की प्रत्येक धमक से यह शब्द निकले कि पृथ्वीराज किसी भी समय युद्ध के लिए तैयार है, सदैव तैयार है।

चामुंडराय मैं धन्य हूँ, महाराज ! मैं अभी चडपुडीर को सूचना भेजता हूँ कि वह युद्ध की तैयारी करे। अधिक समय नही है, महाराज ! आप युद्ध-पर्व मे अधिक विलम्ब न करे। एक प्रार्थना और निवेदन करना चाहता हूँ।

पृथ्वीराज मै सुनूँगा।

चामुंडराय महाराज ! पिछले युद्ध मे राजपूतो मे परस्पर आत्मीय भाव था। इस युद्ध मे वे आपकी छत्र-छाया मे रहते हुए भी एक दूसरे से द्वेष रखते है।

पृथ्वीराज : (सोचते हुए) हाँ, इसकी सूचना दवे कठ से मुझे भी सुनाई गई थी। यह द्वेष किस प्रकार का है और किनमे है ?

चामुंडराय महाराज ! अलवर और वियाणा के राजाओ मे परस्पर प्रतिस्पर्धा है। महाराज वियाणा इस बात पर कटिबद्ध है कि युद्ध मे सर्वप्रथम नगाडे उन्ही के बजाये जाएँ, इसके बाद युद्ध का तूर्य घोषित हो।

पृथ्वीराज और महाराज अलवर क्या चाहते है ?

चामुंडराय महाराज अलवर का कथन है कि नगाडो पर चोट पडने से पूर्व युद्ध की घोषणा उन्ही के तूर्य से हो।

पृथ्वीराज इन दोनो के हृदय मे युद्ध की इच्छा है। फिर प्रथम और द्वितीय का प्रश्न क्यो उठना चाहिए ?

चामुडराय महाराज, मैं दोनो को अपने साथ लाया हूँ। यदि आप आज्ञा दे तो मैं उन्हे आपकी सेवा मे .

पृथ्वीराज **(बीच ही मे)** हाँ, अवश्य ही। **(पुकारकर)** जयानक !

[जयानक का प्रवेश]

जयानक : (प्रणाम करते हुए) महाराज की जय !

पृथ्वीराज जयानक ! महाराज वियाणा और महाराज अलवर को इसी समय सूचना दो कि वे यहाँ आने की कृपा करे।

जयानक : जो आज्ञा। **[प्रस्थान]**

पृथ्वीराज . इस युद्ध के अवसर पर परस्पर का विद्वेष ऐसी चिनगारी है जो वीरता के लाक्षागृह को एक क्षण मे भस्मीभूत कर सकती है। राजपूतो मे यदि विद्वेष न होता तो ससार की कोई भी शक्ति उन्हे पराजित न कर सकती, किन्तु जो फूल जितना शोभा-सम्पन्न और सुगन्धित होता है उसमे उतने ही तीक्ष्ण काँटे भी होते है।

चामुंडराय . सत्य है, महाराज !

पृथ्वीराज . मुझे तो आशका है कि महाराज वियाणा और महाराज अलवर के मेरे

पास आने मे भी प्रथम और द्वितीय की स्पर्धा न हो !

चामुंडराय महाराज, यह हमारा दुर्भाग्य है ।

[दोनो महाराजाओ का साथ-साथ प्रवेश]

दोनो (एक साथ) महाराज पृथ्वीराज की जय !

पृथ्वीराज मैं कृतज्ञ हूँ कि दोनो की सम्मिलित मगल-कामना मुझे मिल रही है। इसी प्रकार मैं चाहता हूँ कि दोनो की सम्मिलित सहायता भी प्राप्त हो सके। विशेषकर उस समय जब हम फिर विदेशी शत्रु से युद्ध करने जा रहे है, महाराज वियाणा !

महाराज वियाणा महाराज ! मै सब तरह से सेवा के लिए प्रस्तुत हूँ, किन्तु मै यह निवेदन करना चाहता हूँ कि हमारे राजवश की परम्परा बहुत प्राचीन है। स्वय भृगु ऋषि ने हमारे वश को अस्त्र-शस्त्र की शिक्षा दी थी और भृगु ऋषि शस्त्र-विद्या के सर्वप्रथम आचार्य है। इसीलिए हमे युद्ध-घोषणा का सर्वप्रथम अधिकार है।

पृथ्वीराज और महाराज अलवर ! आपका क्या कथन है ?

महाराज अलवर : हिन्दूपति ! हमारे राज्य ने सर्वप्रथम अग्नि से शक्ति प्राप्त की है और अग्नि जगद्गुरु ब्रह्मा ने उत्पन्न की। पचमुख शिव भी अपने मुख मे अग्नि-शिखा धारण करते है। अत शक्ति का प्रतीक तूर्य सबसे प्रथम हमारे वश मे है। तूर्य के पूर्व किसी भी युद्ध-वाद्य की घोषणा ब्रह्मा और शिव का अपमान है। हम अपनी शक्ति से ब्रह्मा और शिव का अपमान नही होने देगे।

महाराज वियाणा महात्मा भृगु तो शिवस्वरूप ही है, अत आपको हमारी दुदुभि की मान्यता स्वीकार करनी चाहिए।

महाराज अलवर नही। यह स्वीकार नही की जा सकती। शिवस्वरूप तो ससार है, इसी रूप मे वह पशुपति है। तब आपकी दुदुभि क्या किसी की भी ढपली स्वीकार की जा सकती है।

महाराज वियाणा ढपली ? आप मेरा अपमान नही कर सकते, महाराज अलवर !

महाराज अलवर मै सत्य कथन ही करता हूँ। यदि आप इसे अपना अपमान समझते हैं तो मै आपको द्वन्द्व के लिए आमन्त्रित करता हूँ।

महाराज वियाणा मै स्वीकार करता हूँ।

[दोनो तलवार निकालते हैं।]

पृथ्वीराज : शान्त ! महाराज अलवर ! शान्त ! महाराज वियाणा ! मुझे हार्दिक दु ख है कि परम्परा हमारे शत्रुओ का बल बढाने मे सहायक हो रही है। आप दोनो ही वीर है और दोनो ही नीतिज्ञ हैं। किसी की दुदुभि या किसी का तूर्य पहले या पीछे ध्वनित होने मे हमारे-आपके वश का नही हमारी वीरता का अपमान,है, और मै चाहता हूँ कि शत्रु से युद्ध करने मे इस बात का ध्यान रखा जाए कि किसका मस्तक रणदेवी को प्रथम समर्पित हो। इसी वीरता के व्रत मे परस्पर प्रतिस्पर्धा चाहिए, इसमे नही कि किसकी दुदुभि पहले बजती है और

किसका तूर्य पहले युद्ध-घोषणा करता है।

महाराज वियाणा फिर भी, महाराज ! परम्परा की रक्षा होनी चाहिए। हमारे वश के लोग क्या कहेगे कि युद्ध मे हम प्रथम घोषणा नही करते । यदि हमारे नगाडे पर चोट पडने से पहले किसी के तूर्य की घोषणा हुई तो हमारी सेनाएँ रणक्षेत्र छोड देगी ।

महाराज अलवर तब आपकी सेना से पहले मेरी सेना युद्ध करेगी । मै पहले आप से द्वद्व युद्ध करूँगा, बाद मे मुहम्मद गोरी से ।

पृथ्वीराज राजस्थान के वीरो ! हम जितनी सरलता से पहला युद्ध जीत सके है, इस परस्पर के विरोध से हमारे लिए यह युद्ध जीतना उतना ही कठिन प्रतीत होता है । मै चाहता हूँ कि यह विरोध दूर हो । हमारे कुछ शत्रुओ ने विदेशियो को पहले से ही निमत्रण दे रखा है । वे लोग तो शत्रु की सहायता ही करेगे। इस अवसर पर यदि आप दोनो वीर परस्पर द्वद्व मे लग गये तो शत्रु का कार्य कितना सरल हो जाएगा, यह आप जानते है ।

चामुंडराय महाराज ! आप कुछ निर्णय अवश्य करे, नही तो राजपूत जाति विनाश के पथ पर है । वह हिंसा और विद्वेष के ज्वालामुखी पर बैठकर प्रतिक्षण मृत्यु को निमत्रण दे रही है।

पृथ्वीराज तव मै यह निर्णय करता हूँ कि महाराज अलवर का तूर्य और महाराज वियाणा की दुदुभि एक ही साथ—एक ही क्षण—युद्ध की घोषणा करे। दोनो का महत्त्व एक समान है । मेरा निवेदन है कि आप केवल अपने वश की ओर न देखे, समस्त देश की रक्षा का ध्यान रखे । क्यो महाराज वियाणा ! आपको मेरा निर्णय स्वीकार है ?

महाराज वियाणा मुझे स्वीकार है, किन्तु एक क्षण पर दोनो वाद्य बजाए जाएँगे।

पृथ्वीराज और महाराज अलवर ! आपको मेरा निर्णय स्वीकार है ?

महाराज अलवर मुझे भी स्वीकार है किन्तु मेरी भी यही मान्यता है कि दोनो वाद्य एक ही क्षण पर घोषित हो ।

पृथ्वीराज ठीक है । मुझे यह सुनकर प्रसन्नता है कि राजपूत जाति विरोध करना ही नही, मेल करना भी जानती है । अपने-अपने वश की मर्यादा रखते हुए भी आप लोग कम-से-कम एक बात मे तो सहमत है कि युद्ध की घोषणा दोनो के वाद्यो से एक साथ हो । (**चामुड से**) चामुड ! क्या तुम इस बात का उत्तरदायित्व ले सकते हो कि दोनो महाराजाओ के वाद्य एक ही क्षण—एक ही निमेष—मे घोषित हो ?

चामुडराय : मै यह उत्तरदायित्व स्वीकार करता हूँ, महाराज !

पृथ्वीराज मै सुखी हुआ । दोनो महाराज पूर्ण आश्वस्त हो युद्ध की तैयारी करे ! आप लोग मेरे साथ कहे—जय राजपूत !

सब : (सम्मिलित स्वर मे) जय राजपूत !

पृथ्वीराज अब आप दोनो ही विश्राम करे ।
महाराज अलवर : महाराज की जय ! [प्रस्थान]
महाराज वियाणा . महाराज की जय ! [प्रस्थान]
पृथ्वीराज : यह परस्पर का द्वेष है । इसमे राजपूत-वश ने अपनी शक्ति और वीरता को हिंसा की वेदी पर चढा दिया है, चामुड ! हमारी सेना की शक्ति शत्रु की शक्ति से भले ही अधिक हो किन्तु इस आपस के द्वेष से हमारी ही हानि है । यदि एक क्षण पूर्व तूर्य की घोषणा हुई तो महाराज वियाणा रणक्षेत्र छोड देगे और यदि एक क्षण पूर्व दुदुभि की घोपणा हुई तो महाराज अलवर महाराज वियाणा से ही युद्ध करेगे ।
चामुडराय आप कुछ भी खेद न करे, महाराज ! मैने वचन दिया हे कि दोनो वाद्यो के वजने मे एक पल और विपल का भी अन्तर न होगा । इस सम्बन्ध मे आप निश्चिन्त रहे ।
पृथ्वीराज : मुझे तुम पर विश्वास है, चामुड !
चामुंडराय महाराज का निर्णय वहुत ही उपयुक्त और सतोपप्रद रहा ।
पृथ्वीराज किन्तु अभी तक मुझे पूर्ण सतोष नही है, चामुड ! **(सोचते हुए)** अच्छा, तुम जाओ । युद्ध की तैयारी बडी सतर्कता से हो । मैं भी महारानी सयोगिता से एक वात कहना चाहूँगा ।
चामुंडराय : जैसी आज्ञा । **(महाराज को प्रणाम कर)** महाराज की जय ! [प्रस्थान]
पृथ्वीराज राजपूतो का दुर्भाग्य जैसे आकाश के क्षितिज पर घिरता आ रहा है और गोरी से पहले मुझे इस दुर्भाग्य से युद्ध करना है । **(सोचते हुए पुकारकर)** पुष्पे !

[पुष्पा का प्रवेश]

पुष्पा : **(प्रणाम करते हुए)** महाराज की जय !
पृथ्वीराज · पुष्पे ! तुम महारानी से निवेदन करो कि वे यहाँ आने का कष्ट करे ।
पुष्पा जो आज्ञा ! [प्रस्थान]
पृथ्वीराज **(सोचते हुए)** राजपूतो का दुर्भाग्य ! यदि मुझे ज्ञात होता कि राजपूतो के वश-वृक्ष मे ईर्ष्या और द्वेष का कीटाणु प्रवेश कर रहा है तो मैं सदैव ही युद्ध-भूमि मे रहता युद्धभूमि मे । अन्त पुर की दिशा की ओर देखता भी नही । किन्तु मैं मै विलासी वनकर इन्द्र के नन्दन-कानन मे शयन करता रहा और मेरे सामन्तो की वीरता प्रतिहिंसा मे परिणत होती रही । **(ठडी साँस लेकर)** ओह ! भाग्य-नक्षत्र ! मेरे भाग्याकाश मे तुम्हारा उदय और अस्त आज सदेह का विषय वन रहा है ।

[संयोगिता का प्रवेश]

सयोगिता : **(प्रणाम करते हुए)** महाराज की जय !
पृथ्वीराज : आओ, सयोगिता ! क्षमा करना । सगीत तुम्हारे आगमन का अग्रदूत नही बन सका ।

संयोगिता : महाराज ! आपका स्वागत ही मेरे जीवन का सबसे सुन्दर सगीत है, सबसे सुन्दर ! सब समय वह मेरे जीवन मे गूँजता रहे। विवाह-पत्र की रचना मे . .

पृथ्वीराज विवाह-पत्र ! विवाह-पर्व का शृगार मै युद्ध-पर्व से करना चाहता हूँ।

सयोगिता ऐसा विवाह-पर्व केवल क्षत्रियो के यहाँ मनाया जा सकता है।

पृथ्वीराज : हाँ, केवल क्षत्रियो के यहाँ और किसी जाति मे इतना साहस और सयम नही है। विवाह-पर्व मे तुम उषा बनकर तब विविध रग के बादलो की तरह वस्त्र धारण कर सकोगी, जब मै विविध रग के बादलो की तरह वीरो के वस्त्रो को युद्धभूमि मे रक्तरजित कर लूँगा। तुम्हारे शरीर मे लालिमा का अगराग तब चर्चित हो सकेगा जब वीरो के शरीर रक्त की धारा से स्नान कर चुकेगे। शुक्र तारे की भाँति तुम्हारे मस्तक पर हीरक-ज्योति तब चमक सकेगी जब समस्त रणभूमि मे गज-मुक्ताओ के ढेर लग चुकेगे.. ।

संयोगिता : महाराज.... .

पृथ्वीराज : तुम्हारे विवाह-पर्व मे सामन्तो की पक्ति के पूर्व ही शत्रु के सामन्तो की पक्ति मेरे कृपाण की अग्नि मे प्रवेश करेगी और पक्षियो की तरह चारणो के गीत कराहते हुए शत्रुओ के कण्ठ मे डूबेगे, फिर वे तुम्हारे विवाह-पर्व के गीत गा सकेगे। तुम्हे स्वीकार है, देवी !

संयोगिता आरम्भ से युद्ध-पर्व ही तो मेरे विवाह-पर्व का अग्रदूत रहा है, स्वामी ! मेरे स्वयवर की घटना फिर एक बार नई बनकर आ जाएगी। यह तो मेरे लिए सुख का संवाद है। मुझे अभी रूपा से सूचना मिली कि शहाबुद्दीन गोरी फिर से आक्रमण के लिए प्रलय-बादलो की तरह उठना चाहता है।

पृथ्वीराज हाँ, ग्रीष्मकाल की उषा से ही वर्षाकाल मे बादलो के समूह आते है। मेरी प्रखर युद्ध-श्री ने ही इन प्रलय-बादलो को निमत्रण दिया है। मैं एक बार फिर उन बादलो को छिन्न-भिन्न करूँगा, देवी ! मेरे कवच की एक भी शृखला ढीली न हो ! मेरे शिरस्त्राण का अकुश और भी पैना किया जाए और मेरी म्यान मे नया कृपाण रखा जाए, प्रिये !

संयोगिता : आक्रमण की बात सुनकर मैं अपने साथ ही नया कृपाण ले आई हूँ, स्वामी ! मैं अपने हाथ से ही मगल तिलक-करूँगी और आपकी म्यान मे नया कृपाण रखूँगी। (पुकारकर) रूपा !

[रूपा का प्रवेश]

रूपा : (प्रणाम करती हुई) आज्ञा, महारानी !

सयोगिता : मगल-तिलक की सामग्री शीघ्र ले आ।

रूपा . जो आज्ञा ! [प्रस्थान]

पृथ्वीराज मैं प्रसन्न हूँ, सयोगिता ! तुम सचमुच ही वीर नारी हो। ससार के इतिहास मे यह अमोघ अक्षरो से लिखा जाएगा कि इस देश मे नारियाँ विवाह-

पर्व की उषा मे युद्ध पर्व के रक्तिम रग से अपना शृगार करती हैं।

संयोगिता · यह तो अपने देश की परम्परा है, स्वामी ! यदि विवाह-पर्व रक्त का अभिषेक ही चाहता है तो उसे युद्ध-भैरवी का नृत्य भी दीजिए। मेरी स्फूर्ति का नया कृपाण आपके हाथ मे हो और मेरी मगल-कामनाओ की ढाल आपकी रक्षा मे आपके सामने रहे, स्वामी ! शक्ति का आह्वान आप इसी नारी की दृढता से करे, इसी ज्योति से शिवजी ने कामदेव को भस्म किया था।

पृथ्वीराज क्षत्राणी ! तुम्हारे व्रत से ही हमारा युद्धस्थल सदैव क्रीडा-भूमि बना है। क्षत्रियो के कृपाण मे युद्ध-भैरवी के नृत्य की ही गति है। उसके प्रतिविम्ब मे सारा समरागण आन्दोलित होता है, जिसमे शत्रुओ के सिर उल्कापिंड की तरह भूपित होते है। यह युद्ध तो एक निष्प्रभ चिनगारी का युद्ध है जो हमारी फूट की सधियो मे प्रवेश कर दावानल का रूप धारण करता है। किन्तु, देवि! उसे बुझाने की शक्ति तुम्हारी मगल-कामनाओ के पारावार मे है।

[**रूपा का मगल-सामग्री सहित प्रवेश**]

पृथ्वीराज मगल की सामग्री भी लेकर आ गई ? यह तुम्हारी सच्ची सहचरी है, सयोगिता !

सयोगिता इस मगल-तिलक के अरुणबिन्दु मे अपनी समस्त कामनाएँ केन्द्रित करती हूँ, स्वामी !

[**मगल-तिलक करती है।**]

पृथ्वीराज देवी ! तुम्हे भूलकर अब युद्धक्षेत्र मे युद्ध-भैरवी का नृत्य ही देखूंगा।

संयोगिता हाँ, स्वामी ! उस युद्ध-भैरवी के नृत्य मे भारतीय नारीत्व ही है—भारतीय नारीत्व जिसके लिए जीवन अमर है और मृत्यु ? मृत्यु क्षणभगुर है।

पृथ्वीराज (दुहराते हुए) जीवन अमर है और मृत्यु क्षणभगुर है !

सयोगिता (रूपा से) अच्छा ! यह तुम्हारे हाथ मे और क्या है, रूपा !

रूपा : महाराज ने आज्ञा दी थी कि मैं भाग्य-नक्षत्रो की भाँति कुद-कलियो को एकत्र करूँ जिसकी मालाएँ विवाह-पर्व मे महारानी सयोगिता के कठ से ही अपनी सुगन्धि प्राप्त करे। उन्ही कुद-कलियो की यह माला है।

पृथ्वीराज भाग्य-नक्षत्रो की भाँति कुद-कलियो की माला ? तो इस माला का स्थान अब कहाँ है, यह तुम जानती हो, सयोगिता !

सयोगिता हाँ, महाराज ! अब इसका उपयुक्त स्थान आपका कृपाण है ! रूपा ! ला, इस माला से महाराज का कृपाण सुसज्जित करूँ।

पृथ्वीराज प्रिये ! तुम वीर नारी हो।

सयोगिता और आप इस देश के वीर पुरुष हैं, भाग्य-नक्षत्र है ! भाग्य-नक्षत्र, जिसका कभी अस्त न हो, जिसकी प्रत्येक किरण युद्ध-भैरवी को निमन्त्रण दे।

पृथ्वीराज . और यह रूपा के भैरवी-नृत्य मे साकार हो ! भैरवी नृत्य मे !
संयोगिता : रूपा ! तुम्हारा भैरवी-नृत्य आरम्भ हो, जो स्वामी के कृपाण के भैरवी-नृत्य का अग्रदूत हो।
रूपा जैसी आज्ञा।

[रूपा भैरवी-नृत्य आरम्भ करती है। उसके नृत्य का संगीत चारो ओर गूंज उठता है।]

[पटाक्षेप]

तैमूर की हार

[मिट्टी का एक छोटा-सा घर। दाहिनी ओर एक दरवाज़ा है जिससे घर के भीतर प्रवेश किया जाता है। सामने की दीवार मे एक खिड़की है। बायी ओर के दरवाज़े से अन्दर पहुँचते हैं जहाँ से तलघर की ओर मार्ग है। दूसरा मार्ग गुप्त रूप से बाहर की ओर जाता है। कमरे मे हर्षवर्धन, विक्रमादित्य और पृथ्वीराज चौहान आदि की कुछ तसवीरे है। बायी ओर के कोने मे एक अँगीठी है जिस पर कुछ खाने की सामग्री पक रही है। उसके समीप ही कुछ बरतनो मे खाने की चीज़ें और मिठाइयाँ सजी हुई है। कमरे के बीचो-बीच एक तख्त है जिस पर एक मोटी-सी दरी बिछी है। उसके समीप ही बैठने का एक मोढा है।

कल्याणी अँगीठी के पास बैठी हुई कोयले डालकर आग तेज़ कर रही है। साथ ही एक गीत गुनगुनाती जा रही है। उसका लड़का बलकरन तख्त पर बैठा हुआ एक पत्थर के टुकड़े पर अपना चाकू तेज़ कर रहा है।]

कल्याणी · [गुनगुनाती हुई गाती है]

अब मत जाना तुम दूर.. दूर।
उठ रही है पच्छिम में धूर,
उठ रही है पच्छिम में धूर,
आ गया तुरक आ गया तुरक,
नशे मे चूर—नशे मे चूर . चूर
अब मत जाना तुम दूर दूर!

बलकरन (चाकू तेज़ करते हुए) यह तुम क्या गुनगुना रही हो, माँ? इस पत्थर पर मेरा चाकू तेज नही हो रहा।

कल्याणी क्या तेरा चाकू भी मेरा गाना सुन रहा है? (पास आकर मोढे पर बैठते हुए) पर आज चाकू तेज करने की तुझे क्या सूझी! आज तो तेरी वर्षगाँठ है!

बलकरन वर्षगाँठ! मेरी वर्षगाँठ पर तो हथियारो की पूजा होनी चाहिए, माँ! पूजा! हाँ, तो माँ, क्या यह वर्षगाँठ वैसी ही होगी जैसे पार-साल हुई थी? [चाकू रोक देता है।]

कल्याणी हाँ, बिलकुल वैसी ही। इस वर्षगाँठ पर तू पूरे बारह वर्ष का हुआ। बेटा, मैं तो आशीर्वाद देती हूँ कि इसी तरह तेरी बहुत-सी वर्षगाँठे मनायी जाये। तू दिन दूना, रात चौगुना बढे।

बलकरन इसीलिए तू गाना गा रही थी! (फिर चाकू तेज़ करता है) माँ! कैसा है वह गाना?

कल्याणी यो ही बहुत पुराना गाना है।

बलकरन (रुककर) कितना पुराना?

कल्याणी बहुत पुराना। जब मै तेरे बराबर थी, मेरी माँ गाया करती थी।

बलकरन : तब माँ, मुझे भी सिखला दे यह गाना। जब मेरे बच्चे हो जायेगे, तो मैं भी उनके सामने गाऊँगा।

कल्याणी (हँसकर) गायेगा? वाह मेरे बलकरन! भगवान् करे, तेरी बात सच निकले! पर, बच्चे! यह गाना अच्छा नही है।

बलकरन वाह जब तेरी हर एक बात अच्छी है तो गाना क्यो अच्छा नही होगा?

कल्याणी डर का गाना है। अब तो वह ज़माना बीत गया। बहुत बरस हुए, एक तुरक आया था।

बलकरन तुरक कौन?

कल्याणी तुरक जो हमारा धरम नही मानता। कोई दूसरा धरम मानता है। और वह तुरक ऐसा था जो लोगो का खून बहाता था, उन्हे लूटता था, उनका घर जला देता था।

बलकरन ये भी कोई धरम है, माँ?

कल्याणी हाँ, वह तुरक तो कहता था, हमारा यही धरम है। कहता था, जो हमारा धरम नही मानता, उसको मारने के लिए ही हमने जनम लिया है।

बलकरन अच्छा! क्या नाम था उस तुरक का?

कल्याणी : महमूद। कहते है, गजनी से आया था। उसने सोमनाथ का मन्दिर तोडा और बहुत-से आदमियो का खून बहाया। फिर बहुत-सा धन लेकर वह यहाँ से चला गया।

बलकरन माँ, अगर मै उस जगह होता तो देखता।

कल्याणी : तू? तू देखता? बेटा! वह तुझे भी .

बलकरन मुझे? मुझे मारता? और यह चाकू किस दिन काम आता? इस चाकू से देख लेता।

कल्याणी अरे बेटा, उसके पास बडी-बडी तलवारे थी। वह जिधर से निकल जाता आग और मौत बरसाता जाता था! इसीलिए महमूद का नाम लोगो ने डराने के लिए रख छोडा था।

बलकरन किसको डराने के लिए?

कल्याणी बच्चो को डराने के लिए। जब कोई बच्चा नटखटी होता था तो लोग

कहते थे—'देखो, वह महमूद आ रहा है! तुरक आ रहा है।' तभी का तो यह गाना है। मेरी माँ भी यही गाना कभी-कभी गाती थी :

अब मत जाना तुम दूर ,दूर।
उठ रही है पच्छिम मे धूर!

तुरक पच्छिम से आया था न? तो कहते है :

उठ रही है पच्छिम मे धूर।

उसकी बडी सेना साथ आ रही थी, उसके चलने से रास्ते की धूर ऊपर उडने लगती थी :

आ गया तुरक—आ गया तुरक
नशे मे चूर—नशे मे चूर . चूर

लोगो का खून बहाना ही उसका नशा था, इसलिए माँ अपने बच्चे से कहती थी

अब मत जाना तुम दूर . दूर . !

बलकरन . (सोचता हुआ) माँ, मैं यह गाना नही सीखूंगा। तू भी यह गाना मत गा।

कल्याणी नही गाऊँगी, बेटा! वह तो तेरी वर्षगाँठ के दिन मुझे बहुत-सी पुरानी बाते याद आ गयी तो यह गाना भी याद आ गया, गुनगुनाने लगी।

बलकरन नही, माँ! अब वह बात नही रही। मै इस चाकू के साथ बडे-बडे हथियार लेकर बडी दूर जाऊँगा, और तुरक को देखूँगा कि वह कैसे अपने नशे मे चूर रहता है।

कल्याणी : ठीक है, बेटा! यह तो आगे की बाते है, जब तू बडा हो जायेगा। आज तो तेरी बारहवी वर्षगाँठ ही है।

बलकरन तो इससे क्या हुआ? मैं तुरक से नही डरता। ये विक्रमादित्य, हर्षवर्धन और पृथ्वीराज चौहान के चित्र मुझ मे उत्साह भरते है।

कल्याणी : ठीक है, बेटा! ये चित्र ऐसे ही उत्साह भरने वाले हैं।

बलकरन इसीलिए मै तुरक से नही डरता।

कल्याणी : तेरे पिता भी नही डरते थे, बेटा! आज वे होते! [**आँख मे आँसू**]

बलकरन अरे, माँ! तेरी आँखो मे आँसू? अच्छा मै अब ऐसी बाते नही करूँगा। मुझे माफ कर दो! मुझे माफ कर दो!

कल्याणी बेटा! तू तो मुझे प्राणो से भी अधिक प्यारा है तुझे माफ करने की बात ही क्या! मै तो गीत गाकर और तुझे देखकर ही सब कुछ भूलना चाहती थी।

बलकरन तो सब कुछ भूल जाओ, माँ! बतलाओ, आज वर्षगाँठ मे क्या-क्या करोगी?

कल्याणी : क्या करूँगी? अपने प्यारे बेटे को नहलाऊँगी, चन्दन लगाऊँगी, फूलो की माला पहनाऊँगी! फिर, आज मैंने तेरे लिए बहुत अच्छी-अच्छी मिठाइयाँ बनायी है। देख, उस कोने मे रखी हुई है। मिठाइयो के साथ खीर खिलाऊँगी, तुझे असीस दूँगी।

बलकरन पर माँ, मेरे साथ तुझे भी खाना पडेगा। तुझे भी अपनी वर्षगाँठ आज ही मनानी पडेगी, अभी ही, मेरे साथ। मै अकेले इतनी मिठाइयाँ नही खा सकता।

कल्याणी तेरे खाने के बाद खा लूँगी। बस, दूध-भर आ जाये। खीर बनने मे देर ही क्या लगती है। पानी उबल ही रहा है।

बलकरन अभी दूध नही आया ?

कल्याणी सूरज चढ आया, अभी तक सुजान दूध लाया ही नही। जाने क्यो नही लाया ?

बलकरन : मै ले आऊँ ?

कल्याणी सुजान आता होगा, बेटा ! तू कहाँ जायेगा ?

बलकरन 'मत जाना तुम दूर दूर' की बात तू सोच रही है। मैं तो बडी दूर जा सकता हूँ और फिर, सुजान का घर है ही कितनी दूर। रास्ते से जरा हटकर उत्तर की तरफ है न ? उस शीशम के पेड के नीचे ही तो उसकी झोपडी है। मै अभी ले आऊँगा। इसी गुप्त-मार्ग से बाहर चला जाऊँगा।

कल्याणी तू ऐसी बाते करता है तो जा ! पर जल्दी ही लौटना। आज तेरी वर्ष-गाँठ है।

बलकरन मै अभी लौटकर आया। (**उठता है**) मुझे एक बरतन दे दो। मै अभी लाता हूँ। और यह चाकू अब काफी तेज हो गया है, इसे मै अपने पास रखूँगा।

कल्याणी चाकू तेरे किस काम आयेगा ? अच्छा, यह ले बरतन। (**बरतन देती है**) बेटा, जल्दी ही लौटना !

बलकरन अच्छा, माँ ! मै अभी आया।

[**बायी ओर के गुप्त-मार्ग से प्रस्थान**]

कल्याणी (**बलकरन के जाने की दिशा मे देखती हुई**) मेरा भोला बच्चा ! बलकरन ! अभी से कैसी वीरता की बाते करता है ! (**सन्तोष से**) बलकरन मेरा बेटा ! (**फिर अँगीठी के पास आकर आग ठीक करती है। फिर गुनगुनाती है**) 'तुम मत जाना '(सम्हलकर) नही यह गाना अब नही गाऊँगी। बलकरन को अच्छा नही लगता। मेरा साहसी बच्चा ! [**फिर आग ठीक करती है। थोडी देर तक स्तब्धता रहती है। फिर भयानक शोर और भगदड। कल्याणी झिझककर खिडकी से बाहर देखने लगती है। फिर शोर और भगदड की आवाज। शीघ्रता से एक ग्रामीण प्रवेश करता है।**]

हिन्दू ग्रामीण (**घबराये हुए स्वरो मे**) तुरक आ गया ! तुरक आ गया ! भागो, भागो तुरक आ गया, भागो !

कल्याणी (**आगे बढकर, दृढता से**) पागल हो गये क्या ? तुरक कहाँ से आ गया ?

हिन्दू ग्रामीण नही, नही, तुरक आ गया।

कल्याणी अरे, तुरक जब आया था, तब से वर्षो बीत गये। अब तुरक कहाँ है ? वह आया भी और चला भी गया। तुरक (**व्यग्य से**) हूँ !

हिन्दू ग्रामीण : नही, सबको लेकर जगल मे छिप जाओ। वह आ रहा है। वह आ रहा है। [भाग जाता है।]

[फिर भगदड की आवाज होती है।]

कल्याणी यह भगदड कैसी मच रही है? [आगे बढती है।]

[दूसरे ग्रामीण का प्रवेश]

मुसलमान ग्रामीण . बहन, भाग चलो! जल्दी-जल्दी। वह तैमूर आ गया। मैने अपनी आँखो से देखा है। लूटते हुए आ रहे है वे लोग। हम लोग मरे चलो बहन!

कल्याणी अरे, कैसा तैमूर? कहाँ का तैमूर?

मुसलमान ग्रामीण (नेपथ्य मे देखते हुए) तुम नही चलोगी? वह आया! वह आया!

[भाग जाता है।]

कल्याणी : क्या सचमुच ही फिर तुरक आ गया? अरे, उसको मरे तो सैकडो बरस हो गये होगे। क्या अपनी कब्र से उठकर आ रहा है? लेकिन कहते है तैमूर आया है। तैमूर कौन? (पुकारकर) बलकरन बलकरन!

[फिर भगदड की आवाज होती है। चीख और पुकार।]

[तीसरे ग्रामीण का प्रवेश]

तीसरा हिन्दू ग्रामीण बहन कल्याणी, सब कुछ छोडकर जल्दी से भागो, तभी जान बचेगी। जगल मे छिप जाओ, नही तो घर के तलघर मे ही चलो। चलो मेरे साथ समय नही है।

कल्याणी (घबराहट से) बलकरन! मेरा बलकरन तो अभी नही आया। उसे छोड-कर मैं कही भी नही जाऊँगी।

तीसरा ग्रामीण कहाँ गया बलकरन?

कल्याणी (घबराहट से) वह वह दूध लेने गया है, सुजान के घर।

तीसरा ग्रामीण सुजान के घर? बहुत अच्छा है। तब तो उसका कुछ नही बिगडेगा। सुजान का घर खास रास्ते से बहुत हटकर दूर कोने मे है। वे लोग सीधे रास्ते से ही चले आ रहे है।

कल्याणी · कौन? कौन आ रहा है?

तीसरा ग्रामीण तुरक—इस बार तैमूर तुरक आया है। बडी भारी फौज लिए हुए है।

कल्याणी (डरकर) तैमूर तुरक? बडी भारी फौज?

तीसरा ग्रामीण हाँ, पर अब समय बिलकुल नही रहा। बलकरन का कुछ नही होगा। तुम जल्दी से चलकर तलघर मे छिप जाओ।

कल्याणी नही, बलकरन को आने दो। मै बलकरन के बगैर नही जाऊँगी। (पुकारती है) बलकरन बलकरन बेटा बलकरन . !

तीसरा ग्रामीण बहन, चुप रहो! तुरक सुन लेगा। जल्दी चलो चलो जल्दी!

[हाथ पकडकर वेग से ले जाता है, कल्याणी का स्वर 'बलक र. .न' धीरे-धीरे गूंजकर शान्त हो जाता है। स्तब्धता ! फिर भगदड। उसकी आवाज समाप्त होते ही वेग से तीन सैनिक घर मे घुस आते हैं। उनके हाथ मे तलवारें हैं, वे घर के सामान को तोड़ते-फोडते आते हैं। सरदार, जिसका नाम जफरअली है, लात से मोढ़ा उलट देता है। दोनो सिपाही तख्त के नीचे देखते है।]

जफर कोई नही ? कमबख्त सब भाग गये।

पहला तख्त के नीचे भी कोई नही है।

जफर मुबारक ! इस वक्त आदमियो को कत्ल करने का हमारा उतना मकसद नही है जितना सोना-चाँदी लूटने का है। इस घर मे देखो, कही है ?

मुबारक (देखते हुए) कही कुछ नही है, सरदार ! मामूली-सी झोपडी है। इसमे सोना-चाँदी कहाँ ?

जफर बेवकूफ हो तुम ! इन तसवीरो को पलटो। इनके पीछे दीवाल मे कुछ होगा। ये लोग अपना सोना-चाँदी दीवालो मे रखते है।

[मुबारक और उसका साथी अलीबेग तलवार से सब तसवीरो को उलटता है। कुछ नहीं दीख पडता।]

अलीबेग कही कुछ नही है, सरदार !

मुबारक · सरदार ! अगर सोना-चाँदी उन लोगो के पास होगा भी तो वे लोग अपने साथ लेकर भाग गये होगे।

जफर देखो, उस कोने मे क्या है ?

अलीबेग कुछ वरतन मालूम होते है, सरदार ! (बरतनो के पास जाकर उन्हे खोलता है) सरदार ! है, ये है।

जफर (खुशी से) शाबाश ! क्या है, सोना ? चाँदी ?

[अलीबेग उठाकर लाता है।]

अलीबेग सरदार ! सोना-चाँदी तो नही लेकिन उससे भी ज्यादा कीमती चीज है जिसकी आपको और हमको सख्त जरूरत है।

जफर . क्या ?

मुबारक (अलीबेग के पास आकर) सरदार ! बढिया खाना। तरह-तरह की मिठा-इयाँ। ओह ! (छूकर) बिलकुल ताजी। गरम।

अलीबेग सरदार ! आप बहुत भूखे है। कुछ खा लीजिए। फिर तो दिन-भर हम लोगो को लूट और कत्ल करना ही है।

जफर नही नही फेक दो ! (रुककर) एँ अच्छा, इधर लाओ !

मुबारक सरदार ! मालूम होता है, जल्दी मे लोग खाना भी नही खा सके। वैसा ही रखा छोड गये।

जफर (हाथ से छूकर) हाँ, गरम मिठाइयाँ है। लो, तुम लोग भी लो, भूखे होगे।

मुबारक : सरदार नोश फरमाये।

जफर मै खाऊँगा। लो, तुम लो! **(मुबारक को देता है। वह प्रसन्न होकर लेता है)** अच्छी मिठाइयाँ है। लो, अलीबेग! तुम भी लो।

अलीबेग **(आगे बढकर)** सरदार तो कबूल करे। **(हाथ फैलाता है)** दर-असल ताजी है।

[शेष मिठाई से भरी थाली जफर मोढे को तलवार से सीधा कर उस पर रखता है। फिर तख्त पर बैठता है।]

जफर **(खाते हुए)** बहुत लजीज। दो दिनो से खाना नसीब नही हुआ। अब जाकर ये मिठाइयाँ सामने आयी है।

अलीबेग **(खाते हुए)** खुदा का फज्ल है, सरदार!

मुबारक **(सहसा)** लेकिन, सरदार! रुक जाइए।

जफर **(चौंककर)** क्यो?

मुबारक कही इन मिठाइयो मे ज़हर न मिला हो?

जफर. बेवकूफ हो तुम। मुबारक! यहाँ के लोग इतने सीधे हैं कि वे ये बाते करना जानते ही नही। और फिर, हमने अपना धावा इतने जल्दी बोला हैं कि किसी को ऐसा करने का—सोचने का—वक्त ही नही मिल सकता।

अलीबेग सरदार सच फरमाते है।

जफर और फिर, दो दिनो के बाद इतना अच्छा खाना नसीब हुआ है। भूख-प्यास से बुरा हाल है। और अगर इस तरह मरना ही है, तो मिठाई खाकर क्यो न मरे?

अलीबेग सरदार ने क्या बात कही है? मिठाई खाकर क्यो न मरे? वाह, वाह!

मुबारक सच बात है, सरदार! भूख से तो मरना ही है, तो यह चीज़ फिर क्यो छोडी जाये?

जफर इसीलिए मै खा रहा हूँ। **(खाते हुए)** वाह! क्या कहना है। यहाँ के लोग मिठाइयाँ बनाना भी खूब जानते है।

अलीबेग सरदार! मुझे तो ऐसा मालूम होता है कि वे लोग हम लोगो के लिए ही ये मिठाइयाँ बनाकर छोड गये है।

मुबारक ये कैसे?

अलीबेग ये ऐसे कि उन्होने यह समझा होगा कि ये मिठाइयाँ खाकर हम लोगो का गुस्सा कम हो जायेगा। लूट-मार कम करेगे।

जफर **(हँसते हुए)** ह, ह, ह, ह, ह! हम लोगो का गुस्सा कम हो जायेगा! लूट-मार कम करेगे!

[सब लोगो की जोर से सम्मिलित हँसी]

[नेपथ्य मे : (तीव्र आवाज से) चुप रहो, कमबख्तो!]

[तैमूर लग का प्रवेश। वह लँगडाते हुए आगे बढ़ता है। उसे देखते

ही सब चौंक पड़ते है, मिठाइयाँ जमीन पर फेंककर फौजी ढग से तनकर खड़े हो जाते हैं। सन्नाटा छा जाता है। तैमूर लग बारी-बारी से तीनो को घूरता हुआ आगे बढता है।]

तैमूर (तीव्र स्वर मे) तुम लोग! बदबख्तो! इसी तरह तुम हिन्दोस्तान की दौलत गाजी तैमूर के खजाने मे भरोगे? जब तुम्हे कत्ल करना चाहिए, तब तुम आराम से तख्त पर बैठते हो। जब तुम्हे जवाहरात ढूँढने चाहिए तब तुम नाश्ता करते हो और जब तुम्हे धावा बोलना चाहिए, तब तुम लोग मिलकर कहकहे लगाते हो। जवाब दो?

[कोई कुछ नहीं बोलता—निस्तब्धता]

तैमूर (फिर तीव्र स्वर मे) मैंने अफगानिस्तान के बाद हिन्दुस्तान पर रुख इसलिए किया था कि मेरे सिपाही दौलत लूटने के बदले आराम से खाना ढूँढते फिरे? मैं बिना जतलाये देखना चाहता था कि तुम किस तरह मेरे हुक्म को अजाम दे रहे हो। इसीलिए मैंने अपने सब सिपाहियो को बाहर छोड दिया है। मैं देखता हूँ कि तुमने मेरे जिहाद को नफ्स-परवरी (इन्द्रिय-लोलुपता) का एक अदना तमाशा बना दिया है। तुम यहाँ मौज से खाना खाओ और गाज़ी तैमूर तीन दिन से भूखा रहे, और रात-दिन हुक्म देता रहे! मैंने तुम्हे क्या हुक्म दिया था, सरदार?

जफर (सैनिक ढग से) बुलन्द-इकबाल ने हुक्म फरमाया था कि आज शाम तक अमरकोट पहुँच जाना है।

तैमूर तो अमरकोट पहुँचने का यह रास्ता है? बदबख्त! गाजी तैमूर के सिपाहियो को रास्ता दिखलाने की जिम्मेदारी किस पर है? तुम पर। और तुम ऐश करते हुए अमरकोट का रास्ता खोजोगे?

[फिर सन्नाटा]

तैमूर मेरे हुक्म को किसने अजाम दिया? तुमने? तुम्हारे सिपाहियो की तलवारो पर खून का एक धब्बा भी नही है। तुम लोग सिपाही हो? तैमूर को मुँह दिखलाने के काबिल भी नही हो। बोलो, क्या चाहते हो? खाना खाने के बाद तुम्हारे लिए नाच-गाने का इन्तज़ाम भी किया जाये?

जफर हम लोग आलीजाह की माफी के ख्वास्तगार है। माफी अता फरमायी जाये।

तैमूर हरगिज नही! गाजी तैमूर कुसूर को माफ करना नही जानता। सरदार! तुमने जो हुक्म-उदूली की है, उसकी सजा तुम्हे मिलेगी। मै तुम्हारा नाम तुम्हारा नाम

जफर जफर अली!

तैमूर ज़फर अली! तुम गाज़ी तैमूर की खिदमत नही कर सकते। आज शाम को तुम्हारी सज़ा तजवीज़ की जायेगी। अभी मैं तुम्हे तुम्हारे मरतबे से खारिज करता हूँ, समझे!

जफर बुलन्द-इकबाल का हुक्म !

तैमूर जाओ, शाम तक अमरकोट पहुँचने का मेरा हुक्म पूरा हो ! **(तीव्रता से)** जाओ !

[तीनो सैनिको का शीघ्रता से प्रस्थान]

तैमूर **(बडबडाता हुआ)** दोजख के कुत्ते ! खाना-पीना, कहकहे ! सिपाहियो मे आरामतलबी ! मेरे सामने हिन्दोस्तान की यह फिजा नही रहेगी। **(गला बैठ जाता है। धीरे से)** नही रहेगी **(ओठ चाटता है)** गला सूख रहा है। तीन दिनो से खाना नही मिला कल से पानी भी नही नसीब हुआ। गला सूख रहा है। **(जमीन पर गिरा हुआ बरतन देखता है। चौंकता है। फिर तलवार से लुढकाकर उसे सीधा करता है)** सब खाली ? कमबख्तो ने कुछ भी नहीं छोडा ? लेकिन कोई बात नही। गाजी और मुजाहिदो (धार्मिक योद्धाओ) की किस्मत मे आराम कहाँ ?

[बलकरन का दूध लिये हुए बायीं ओर के गुप्त मार्ग से प्रवेश]

बलकरन **(पुकारते हुए)** माँ, माँ ! मै यह दूध ले आया।

तैमूर **(चौंककर)** दूध ?

बलकरन **(उजाड घर को देखकर चौंकते हुए)** यह सब क्या ? **(तैमूर को देखकर)** एँ, तुम कौन ? **(पुकारता है)** माँ माँ ! **(कुछ उत्तर न पाकर)** मेरी माँ कहाँ है ? **(तैमूर गौर से बलकरन को देखता है)** इस तरह मेरे घर मे घुस आने वाले तुम कौन हो ?

तैमूर **(जोर से)** खामोश ! गाजी तैमूर से यह नाचीज सवाल करता है कि तुम कौन हो। कमबख्त ! अगर बात पूछने की तमीज नही है तो खामोश रह !

बलकरन **(धीरे से दोहराता हुआ)** गाजी तैमूर ?

तैमूर इस नाम से वाकिफ नही है ? दुनिया का जर्रा-जर्रा जिसके कदमो को चूम चुका है, उससे सवाल करता है, 'तुम कौन हो ?' कमबख्त बच्चे ! मेरी तलवार से पूछ ! यह तेरे खून मे डूबकर तुझे मेरा नाम बतलायेगी। लेकिन ठहर.. यह दूध इधर ला .इस वक्त खुदा ने मेरे लिए भेजा है।

बलकरन यह दूध यह दूध मेरी वर्षगाँठ के लिए है।

तैमूर साफ जबान मे बात कर, जो समझ मे आये। सामने दूध हाज़िर कर !

बलकरन नही, मै माँ के सिवाय किसी को नही दे सकता।

तैमूर क्या ? लेकिन मै ले सकता हूँ। **(बलकरन से छीनकर जोर से अट्टहास करता है)** दूध मेरा है कि नही ? अब तुझे इस तलवार से काट दूँ ?

बलकरन **(हिचकते हुए)** क्या क्या तुम तुरक हो जो खून बहाना चाहते हो ? मेरी माँ यही कहती थी।

तैमूर तू बडा निडर मालूम होता है। सामने आ ! मेरी तलवार से कटने का फख्र हासिल कर !

बलकरन मेरे पास सिर्फ एक चाकू है। मेरे हाथ मे भी एक तलवार दो।

तैमूर ओफ ओह ! तू मुझसे दो हाथ लडने का हौसला भी रखता है ? अच्छा ! पहले दूध पिऊँगा। गला सूख रहा है।

[तख्त पर तलवार रखकर दोनो हाथो से दूध का बरतन मुँह मे उलट देता है। बलकरन दौडकर तैमूर की तलवार उठा लेता है।]

तैमूर · (सहसा) मेरी तलवार

बलकरन तुम्हारी तलवार अब मेरे हाथ मे है। अब तुम मुझ से लड सकते हो। सामने आओ !

तैमूर (दोहराकर) सामने आओ ? शाबाश ! लेकिन मेरी तलवार तुझ से सँभल नही सकेगी, बच्चे ! इधर ला !

बलकरन जैसे दूध छीन लिया था, वैसे तलवार भी छीन लो !

तैमूर छीन लूं ?

बलकरन : हाँ, लेकिन लडने वाले तलवार नही छीनते, वार करते हैं।

तैमूर तेरा कहना सही है। मालूम होता है तू बहादुर है। मेरी फौज मे भरती होगा ?

बलकरन (दृढता से) नही।

तैमूर नही ? इस्लाम कुबूल करेगा ?

बलकरन (अधिक दृढता से) नही।

तैमूर . तो अब तुझे ज्यादा देर तक जिन्दा नही रखूंगा। (**पैंतरा बदलकर तलवार छीन लेता है**) यह रही मेरी तलवार।

बलकरन छीन ली ? लेकिन यह बहादुरी नही है। मेरे पास यह चाकू है। इसी से लडूंगा।

तैमूर · चाकू से लडेगा, चाकू से ! (**अट्टहास करता है**) ह् ह् ह् ह् ह !

बलकरन हाँ, थोडी देर पहले मैंने इसे तेज किया है। देखो, यह इतना तेज है— मेरी उँगली से खून निकाल सकता है।

[उँगली मे चुभाकर खून की बूंदें दिखलाता है।]

तैमूर · शाबाश ! तैमूर के दिल मे रहम नही है लेकिन तेरी बातें सुनकर मैं

बलकरन इन बातो से क्या ! चलाओ अपनी तलवार, मैं भागूंगा नही।

तैमूर · भागेगा नही ! तू बहादुर शेर है। मै तुझ पर तलवार नही चला सकता। तू मुझ से भी ज्यादा बहादुर मालूम होता है। चाकू वाला बहादुर ! तेरा नाम क्या है ?

बलकरन . दुश्मन नाम नही पूछता, वार करता है।

तैमूर : लेकिन तेरी बहादुरी देखकर मैं तुझे अपना दुश्मन नही मानता। तेरा नाम क्या है, चाकू वाले ?

बलकरन बलकरन।

तैमर (**दोहराता हुआ**) वलकरन ! वलकरन ! हिन्दुस्तान की दौलतो मे तू भी एक दौलत है । वलकरन, गाजी तैमूर एहसान नही भूलता । जो उसकी थकावट दूर करने के लिए दूध हाजिर कर सकता है, उसके खून से वह अपनी तलवार नही रगेगा । नही तो अभी तक मैने तुझे साफ कर दिया होता ।

वलकरन लेकिन दूध मैने हाजिर नही किया, तुमने छीन लिया ।

तैमूर : एक ही वात है । दूध मैने पाया । मै तेरी जान बख्शता हूँ और तेरी एक मुराद पूरी कर सकता हूँ ।

बलकरन मुझे कुछ नही चाहिए ।

तैमूर नही, तू मेरा छोटा-सा बहादुर दोस्त है, चाकू वाला ! और इस हैसियत से तेरा मुझ पर हक है ।

वलकरन तो, मेरी माँ कहाँ है ?

तैमूर मै नही जानता । मेरे सिपाहियो ने तेरी माँ को कत्ल भी न किया होगा, क्योकि उनकी तलवारो पर खून का एक भी धब्बा नही था ।

बलकरन आप मेरी मुराद पूरी करेंगे ? तो फिर आपसे मै यही चाहता हूँ कि आप हमारे गाँव से बाहर चले जाये ।

तैमूर (**दुहराकर**) गाँव से बाहर चले जाये ? (**सोचकर**) मजूर ! मै दूसरे गाँव जाऊँगा । अपने छोटे बहादुर दोस्त की मुराद पूरी करूँगा । तेरा दूध और चाकू मुझे हमेशा याद रहेगा ।

बलकरन धन्यवाद !

तैमूर मै कुछ समझा नही । खैर, तैमूर की जिन्दगी मे एक नयी बात हुई । तैमूर के सामने कम लोग आते है—तू आया । तैमूर कम लोगो को माफ करता है, आज किया । वह काफिरो का खून पीता है, आज तुझ से छीनकर दूध पिया । यह एक मोजिजा (करामात) है ।

वलकरन मै कुछ समझा नही ।

तैमूर (**अट्टहास कर**) तैमूर की बराबरी करना चाहता है ? लेकिन तू तैमूर से भी बडा है । तेरा चाकू उसकी तलवार से भी तेज़ निकला । तैमूर खूंख्वार है लेकिन वहादुरी को सलाम करता है । बहादुर बच्चे को तैमूर का सलाम ! [**फौजी ढंग से सलाम करता है ।**]

वलकरन : (**उसी तरह**) सलाम !

तैमूर तेरे गाँव को हाथ नही लगाऊँगा । सिपाहियो को हुक्म देकर वापस कर दूंगा । (**हाथ उठाकर**) खुदा हाफिज ! [**शीघ्रता से प्रस्थान**]

वलकरन (**उसके जाने की दिशा मे देखता हुआ**) तैमूर वहादुरी को सलाम करता है ! (**फिर लौटता है । चारो ओर देखकर पुकारता है**) माँ...! माँ.. ! म ाँ . ाँ ? [**शीघ्रता से कल्याणी का प्रवेश । वह अति शीघ्रता से बलकरन को हृदय से लगा लेती है ।**]

कल्याणी बेटा बेटा बलकरन ! [सिसकने लगती है ।]

बलकरन एँ, माँ ! तू रोती क्यो है ? तू कहाँ थी ?

कल्याणी बेटा, तैमूर के सिपाही आये थे । उनसे बचाने के लिए ठाकुर दादा मुझे तलघर मे खीच ले गये थे । तुझे तो कुछ नही हुआ, बेटा ! कही चोट तो नही आयी ? देखूं !

[गौर से बलकरन के शरीर को देखती है ।]

बलकरन नही, माँ ! कही चोट नही आयी ।

कल्याणी तैमूर के सिपाहियो ने तो तुझे हाथ नही लगाया ?

बलकरन जब खुद तैमूर हाथ नही लगा सका, तो तैमूर के सिपाही कैसे हाथ लगायेंगे ?

कल्याणी तैमूर हाथ नही लगा सका ? क्या तैमूर यहाँ आया था ? तुरक तैमूर ?

बलकरन हाँ, माँ ! आया था । वह सारा दूध पी गया ।

कल्याणी सारा दूध पी गया ?

बलकरन · मैं सुजान के घर से दूध लाया था न, वही दूध सब पी गया ।

कल्याणी . बेटा, वे लोग तो खून पीते है ।

बलकरन पीते होंगे । लेकिन तैमूर ने तो सारा दूध पी लिया ।

कल्याणी तैमूर ने ? तुरक ने ?

बलकरन हाँ, माँ ! तूने तो मुझे झूठ बोलना नही सिखलाया ।

कल्याणी नही, बेटा ! कैसा था तैमूर ?

बलकरन तैमूर ? सिपाही की तरह, रोबीला चेहरा, मोटे-मोटे हाथ ! ऊँची नाक, हाथ मे तलवार ! लेकिन माँ, मेरे पास भी चाकू था । मैंने सवेरे ही से उसे तेज़ किया था ।

कल्याणी उसकी तलवार के सामने तेरा चाकू किस काम आता ?

बलकरन उसी चाकू ने तो उसे चौंका दिया । मुझे वह चाकू वाला बहादुर कहता था ।

कल्याणी (आश्चर्य से) अच्छा !

बलकरन मैंने कहा, यह चाकू बडा तेज है । मैने सवेरे ही उस पर धार रखी है । माँ ! उसे मैंने अपनी उँगली चीरकर दिखला दी । देखो, यह खून !

कल्याणी (चीखकर) ओह, यह खून !

बलकरन उसने नही निकाला । मैंने ही उँगली चीरकर गिराया है ।

कल्याणी (घबराकर) तेरी उँगली से खून तो अभी तक निकल रहा है, बेटा !

बलकरन : उसकी कुछ चिन्ता नही है, माँ ! तैमूर कहता था कि तेरा चाकू मेरी तलवार से भी तेज निकला ।

कल्याणी क्या तूने चाकू से उस पर वार किया था ?

बलकरन · नही, माँ ! मैं तो लडना चाहता था पर वही मीठी-मीठी बातें करने लगा ।

इस तरह चलता था लँगडाकर। (**लँगडाकर चलता है और हाथ फैलाकर कहता है**) 'तैमूर खूँख्वार है, लेकिन बहादुरी को सलाम करता है। बहादुर बच्चे को तैमूर का सलाम !' [**फौजी ढग से सलाम करता है।**]

कल्याणी (**आश्चर्य और प्रसन्नता से**) वाह ! तू तो बिलकुल तैमूर ही बन गया।

बलकरन मै लँगडा नही बनना चाहता, माँ !

कल्याणी · (**हँसकर**) हाँ, लँगडा कभी न बने ! तू सब तरह से फले-फूले ! तेरी उमर दिन-दूनी रात-चौगुनी हो ! भगवान् को हजार-हजार धन्यवाद है कि उसने मेरे बच्चे की तैमूर से रक्षा की।

बलकरन यह सब तेरा आशीर्वाद है, माँ !

कल्याणी हाँ, बेटा, आज तेरी वर्षगाँठ है न ! (**चारो तरफ देखकर**) तुरक के सिपाहियो ने सारा घर तोड-फोड डाला। तेरे लिए मैंने कितनी अच्छी मिठाइयाँ बनायी थी, सब नष्ट हो गयी। अब तेरी वर्षगाँठ कैसे मनाऊँ ?

बलकरन अपना आशीर्वाद-भर दे दे, माँ ! और.

कल्याणी और क्या ?

बलकरन और, तू चन्दन लगाने के लिए कहती थी न ! मेरी उँगली के खून का रक्त-चन्दन बना ले।

कल्याणी ओह, बेटे ! तू क्या कहता है ? आज मै अकेली हूँ। [**सिसकती है।**]

बलकरन : अकेली क्यो ? भगवान् है और मै हूँ, माँ !

कल्याणी जुग-जुग जियो, मेरे लाल ! मैं तुझे भगवान् का अश ही समझती हूँ। (**चौंककर खिड़की से देखती हुई**) यह पश्चिम मे धूल कैसी उड रही है ? क्या फिर कोई आ रहा है ?

बलकरन : तैमूर और उसके सिपाही गाँव से बाहर जा रहे होगे !

कल्याणी वे तो गाँव लूट रहे होगे और आदमियो का खून बहा रहे होगे ?

बलकरन नही, वे गाँव से बाहर जायेंगे, मैने जो कह दिया है।

कल्याणी तूने कह दिया है ? तेरा हुक्म वे क्यो मानने लगे ?

बलकरन उनको मानना तो पडेगा ही, माँ ! तैमूर ने मेरी बहादुरी से खुश होकर मेरी एक बात पूरी करने को कहा।

कल्याणी (**आश्चर्य से**) अच्छा !

बलकरन मैने कहा—आप और आपके लोग, इसी समय हमारे गाँव के बाहर चले जाये। तैमूर ने सोचा, फिर कहा, मजूर ! मै दूसरे गाँव जाऊँगा। अपने छोटे-से बहादुर दोस्त की मुराद पूरी करूँगा।

कल्याणी . धन्य ! मेरे लाल ! (**हृदय से लगाती है**) घर-घर मे ऐसे लाल हो !

बलकरन (**खिडकी से देखता हुआ**) हाँ, पश्चिम मे तो बहुत धूल उड रही है। वे लोग बडी तेजी से वापस जा रहे है।

कल्याणी हाँ, बेटे ! वापस जा रहे है।

बलकरन वह पश्चिम की धूल वाला तेरा कैसा गीत है ?

कल्याणी . अब तो उस गीत को बदलना पडेगा, मेरे बेटे, आज तेरी वर्षगाँठ के दिन ।

बलकरन तब मेरी उँगली से खून लेकर मुझे तिलक करके उसे बदलकर गाओ।

कल्याणी उँगली के खून का तिलक लगाऊँ ? यही सही, मेरे लाल ! वीर बालक की वर्षगाँठ है । तेरी बारहवी वर्षगाँठ ऐसे ही मनायी जाये !

[कल्याणी बलकरन की उँगली से खून लेकर तिलक करती है । फिर पहले गीत को बदलकर गाती है। बीच मे फिर रक्त का तिलक लगाती है ।]

गीत

तुम जाना घर से दूर...दूर. .!
उठ रही है पश्चिम मे धूर .
उठ रही है पश्चिम मे धूर...
फिर गया तुरक—भग गया तुरक
नशे मे चूर चूर !
तुम जाना घर से दूर दूर . !

[बलकरन गम्भीर है । कल्याणी रक्त-चन्दन लगाती है ।]

[धीरे-धीरे परदा गिरता है ।]

· 16 ·

दीप-दान

●

पात्र-परिचय

कुँवर उदयसिंह — चित्तौड के स्वर्गीय महाराणा साँगा का सबसे छोटा पुत्र। राज्य का उत्तराधिकारी। आयु 14 वर्ष।

पन्ना (धाय माँ) — खीची जाति की राजपूतानी। कुँवर उदयसिंह का सरक्षण करनेवाली धाय। आयु 30 वर्ष।

सोना — रावल सरूपसिंह की लडकी। अत्यन्त रूपवती और नटखट। कुँवर उदयसिंह के साथ खेलनेवाली। आयु 16 वर्ष।

चन्दन — धाय माँ का पुत्र। साहस और स्नेह का प्रतीक। आयु 13 वर्ष।

सामली — अन्त पुर की परिचारिका। आयु 28 वर्ष।

कीरत — जूठी पत्तल उठानेवाला वारी। आयु 40 वर्ष।

बनवीर — महाराणा साँगा के भाई पृथ्वीराज का दासी-पुत्र। क्रूर और विलासी। आयु 32 वर्ष।

●

काल—1536 ई०

समय—रात्रि का दूसरा प्रहर

स्थान—कुँवर उदयसिंह का कक्ष

दीप-दान

निर्देश—पूरी सजावट है। दरवाजो पर रेशमी परदे पडे हैं। एक पार्श्व मे उदर्यासिह की शैया है। सिरहाने पन्ना (धाय माँ) के बैठने का स्थान है।

[नेपथ्य मे नारियों की सम्मिलित नृत्य-ध्वनि। मृदंग और कडखे की रमक। फिर नारियो का सम्मिलित कण्ठ से गान]

कङ्कण बधन रण चढण, पुत्र बधाई चाव।
तीन दिहाडा त्याग रा, काँई रक काँई राव।
काँई रक काँई राव।
काँई रक काँई राव॥

[फिर नृत्य की ध्वनि]

घर जाताँ ध्रम पलटताँ, त्रिया पडता ताव।
ए तीनहु दिन मरण रा, काँई रक काँई राव।
काँई रक काँई राव।
काँई रक काँई राव॥

[यह सगीत नेपथ्य मे धीरे-धीरे हलका सुनाई पडता है।]

उदर्यासिह (दौडता हुआ आता है, पुकारता है) धाय माँ, धाय माँ! (कोई उत्तर नहीं मिलता। अपने-आप) धाय माँ कहाँ है? (फिर पुकारकर) धाय माँ!

पन्ना (भीतर से आती हुई) क्या है, कुँवर! (देखकर) अरे! साँझ हो गई और तुमने अभी तक अपनी तलवार म्यान मे नही रखी?

उदर्यासिह धाय माँ, देखो न कितनी सुन्दर-सुन्दर लडकियाँ नाच रही है। गीत गाती हुई तुलजा भवानी के सामने नाच रही है। चलो न! देखो न!

पन्ना : मै नही देख सकूँगी, लाल!

उदर्यासिह : नही, धाय माँ, चलो न! थोडी देर के लिए चलो न?

पन्ना नही, कुँवर! तुझे इस समय नाच देखना अच्छा नही लगता।

उदर्यासिह : क्यो नही अच्छा लगता? मै तो उन्हे बडी देर तक देखता रहा। और वे भी वे भी तो मुझे बडी देर तक देखती रही, धाय माँ! मै कितना अच्छा हूँ, धाय माँ!

पन्ना बहुत अच्छे हो। तुम तो चित्तौड के सूरज हो। महाराणा साँगा जी के छोटे

कुँवर। सूरज की तरह तुम्हारा उदय हुआ है। तभी तो तुम्हारा नाम कुँवर उदयसिह रखा गया है।

उदयसिह (हँसकर) अच्छा, यह वात है। पर क्या रात मे भी सूरज का उदय होता है ? मैं तो रात मे भी हँसता-खेलता रहता हूँ।

पन्ना दिन मे तो तुम चित्तौड के सूरज हो, कुँवर ! और रात मे तुम राजवश के दीपक हो, महाराणा साँगा के कुल-दीपक।

उदयसिह कुल-दीपक ! कही तुम मुझे दान न कर देना, धाय मा ! वे नाचने वाली लडकियाँ तुलजा भवानी की पूजा मे दीप-दान करके ही नाच रही है। वे दीपक छोटे से कुड मे कैसे नाचते है, धाय माँ ! (मचले हुए स्वर मे) चलो न, धाय माँ ! तुम उनका दीप-दान देख लो। जिस तरह उनके दीपक नाचते हैं उसी तरह वे भी नाच रही है।

पन्ना मैं इस समय कुछ नही देखूँगी, कुँवर !

उदयसिह (रूठकर) तो जाओ, मै भी नही देखूँगा। मै उदयसिह भी नही बनूँगा, और कुल-दीपक भी नही। कुछ नही बनूँगा।

पन्ना रूठ गये, कुँवर ! रूठने से राजवश नही चलते। जाओ, विश्राम करो। देखो, तुम्हारे कपडो पर धूल छा रही है। दिन-भर तुम तलवार का खेल खेलते रहे, थक गये होगे। जाओ, शैया पर सो जाओ। मैं तुम्हारी तलवार अलग रख दूँगी।

उदयसिह (रूठे हुए स्वर मे) तब तो मै तलवार के साथ ही सो जाऊँगा।

पन्ना अभी वह समय नही आया, कुँवर ! चित्तौड की रक्षा मे तुम्हे कई दिनो तक तलवार के साथ ही सोना पडेगा।

उदयसिह (रूखे स्वर मे) तुम्हे तलवार से डर लगता है, जो वार-वार तलवार रखने को कहती हो ?

पन्ना तलवार से डर ? चित्तौड मे तलवार से कोई नही डरता, कुँवर ! जैसे लता मे फूल खिलते है न, वैसे ही यहाँ वीरो के हाथो मे तलवार खिलती है तलवार चमकती है।

उदयसिह . (उसी तरह रूखे स्वर मे) अब मेरा मन बहलाने लगी ? तुम नाच देखने नही चलती तो मैं ही अकेला चला जाऊँगा। मैं जाता हूँ। [जाने को उद्यत होता है।]

पन्ना नही, कुँवर ! तुम कभी रात मे अकेले नही जाओगे। चारो तरफ जहरीले सर्प घूम रहे हे। किसी समय भी तुम्हे डँस सकते हे।

उदयसिह : सर्प ? कैसे सर्प ?

पन्ना तुम नही समझोगे, कुँवर ! जाकर सो जाओ। थक गये होगे। भोजन के लिए मैं जगा लूँगी।

उदयसिह नही, माँ ! आज न मैं भोजन करूँगा और न अपनी शैया पर ही सोऊँगा।

[प्रस्थान के लिए उद्यत]

पन्ना (रोकते हुए) सुनो, सुनो कुँवर !

[उदयसिंह का प्रस्थान]

पन्ना चले गये ! कुँवर का रूठना भी मुझे अच्छा लगता है। मना लूँगी। नाच-गान, दीप-दान ! इसी से चित्तौड की रक्षा होगी ? चित्तौड मे यह बहुत हो चुका, बहुत हो चुका। और अब तो बनवीर का राज्य है।

[नूपुर नाद करते हुए एक किशोरी का प्रवेश]

किशोरी धाय माँ को प्रणाम !

पन्ना कौन ?

किशोरी · मैं हूँ, सोना ! रावल सरूप सिह की लडकी। कुँवर जी कहाँ है ?

पन्ना : वे थक गये है, सोना चाहते है।

सोना सोना चाहते है, तो मैं भी तो सोना हूँ ! [अट्टहास]

पन्ना : चुप रह, सोना ! कुँवर जी रूठकर सोने चले गये हैं। तुम लोग कुँवर को नाच-गाने की ओर खीचना चाहती हो !

सोना क्या तुलजा भवानी के सामने नाचना कोई बुरी बात है ? आज हम लोगो ने दीप-दान किया और मन-भर कर नाचा—यो (नाचती है)। कुँवर जी भी तो बडी देर तक हमारा नाच देखते रहे। मै भी उनको देखकर बहुत नाची। उनको हमारा नाच बहुत अच्छा लगा, बहुत अच्छा ! देखो, पैरो की यह ताल ! [नूपुर की झनकार]

पन्ना बस-बस, सोना ! अगर तू रावल जी की लडकी न होती तो ..

सोना . कटार भोक देती ? कटार ! (अट्टहास करती है) धाय माँ, तुमने उदयसिंह के सामने तो अपने पुत्र चन्दन को भी भुला दिया। तुम्हारे मातृत्व मे उदयसिंह ऐसे समाये है, जैसे कटार को अपने हृदय मे रखने के लिए म्यान ने अपना हृदय खोखला कर दिया हो। (हँसती है) खोखला !

पन्ना यह कविता रहने दे। जानती नही बनवीर का राज्य है।

सोना . ओहो, बनवीर ! उन्हे श्री महाराजा बनवीर कहो। बागड के इलाके से वे हाथी-घोडो की झूल लाये थे हाँ, झूल। इतनी बडी। हमारे लिए भी तो वे एक रेशम की झूल लाये थे। उन्हे सिर से ओढकर नाचने से ऐसा लगता था, ऐसा लगता था, जैसे मकडी के जाले के आर-पार चन्द्रमा की किरणे थिरक रही है। हाँ

पन्ना बहुत नाचती हो, बनवीर की तुम पर बडी कृपा है।

सोना द्रौपदी के चीर की तरह। आज प्रात काल उन्होने मुझे बुलाया और कहा धाय माँ ! तुम बुरा तो नही मानोगी ?

पन्ना मै क्यो बुरा मानूँगी ?

सोना उन्होने कहा, महल मे धाय माँ अरावली पहाड बनकर बैठ गई है। अरावली

पहाड। (हँसती है) तो तुम लोग बनास नदी बनकर बहो न! खूब नाचो, गाओ। यो आज कोई उत्सव का दिन नही था, फिर भी उन्होने कहा, मेरे बनवाये हुए मयूर पक्ष कुड मे दीप-दान करो। मालूम हो, जैसे भवसागर मे आत्माएँ तैर रही हो, या जैसे मेघ पानी-पानी हो गये हो और बिजलियाँ टुकडे-टुकडे हो गई हो।

पन्ना : बडी उमग मे हो आज ?

सोना दीपको के साथ उमगे भी लौ देने लगी है, धाय माँ! सारा जीवन ही एक दीपावली का त्योहार बन गया है।

पन्ना तो यही त्योहार मना रही हो तुम ?

सोना मैं ही क्या, सारे नगर निवासी यह त्योहार मना रहे है, नहीं मना रही हो तो तुम! धाय माँ, तुम! पहाड बनने से क्या होगा ? राजमहल पर बोझ बन कर रह जाओगी, बोझ! और नदी बनो तो तुम्हारा बहता हुआ बोझ पत्थर भी अपने सिर पर धारण करेंगे, पत्थर भी! आनन्द और मगल तुम्हारे किनारे होगे, जीवन का प्रवाह होगा, उमगो की लहरे होगी जो उठने मे गीत गायेगी, गिरने मे नाच नाचेंगी। गीत और नाच, धाय माँ! गीत और नाच! जैसे सुख और सुहाग एक साथ हँस रहा हो। और जब दीप-दान का दीपक अपने मस्तक पर लेकर चलोगी, धाय माँ, तो ज्ञात होगा, धाय माँ, जैसे शुक्र तारे को मस्तक पर रखकर उषा आ रही है।

पन्ना · बनवीर के अनुग्रह ने तुम्हे पागल बना दिया है, सोना!

सोना धाय माँ! पागल कौन नही है ? महाराणा विक्रमादित्य अपने सात हजार पहलवानो के साथ पागल है। मल्ल-क्रीडा ही तो उनका पागलपन है। महाराज बनवीर महाराणा विक्रमादित्य की आत्मीयता से पागल है। वे विक्रमादित्य के अन्त पुर मे प्रलाप करते है। यह आनन्द ही उनका पागलपन है। सारा नगर आज के त्योहार मे पागल है। तुम कुँवर उदयसिह के स्नेह मे पागल हो और मैं ? (हँसकर) मेरी कुछ न पूछो, धाय माँ! मैं तो इन सब के पागलपन मे पागल हूँ। तुम चाहे जो कहो। हाँ, तो कुँवर उदयसिह कहाँ है ?

पन्ना कुँवर उदयसिह को छोडो, सोना! वे बहुत थक गये है। अब सो रहे होगे। तुम जाओ। यहाँ कही तुम्हारा पागलपन कम न हो जाय ?

सोना मेरा पागलपन ? धाय माँ, पागलपन कही कम होता है ? पहाड बढकर कभी छोटे हुए है ? नदियाँ आगे बढकर कभी लौटी है ? फूल खिलने के बाद कभी कली बने है ? सब आगे बढते है। नही बढती हो तो सिर्फ तुम, सदा एक-सी। तुम्हारा पागलपन भी सदा एक-सा। मैं रावल की बेटी हूँ, शायद सामन्त की बेटी बनूँ, शायद महाराज की बेटी बनूँ! कुछ बढकर ही बनूँगी। और तुम धाय माँ! सिर्फ धाय माँ ही रहोगी।

पन्ना सोना! मुझे किसी से ईर्ष्या नही है। मैं जैसी हूँ अच्छी हूँ। राजसेवा मे जीवन

जा रहा है—यही मेरे भाग्य की बात है।

सोना : भाग्य ! भाग्य तो सबके होता है, धाय माँ ! ये नूपुर मेरे पैरो मे पडे है तो इनका भी भाग्य है। मेरे पैरो की गति मे गीत गाते है, तो वह भी इनका भाग्य है। मेरे आगमन का सदेश पहले ही पहुँचा देते है, तो वह भी इनका भाग्य है। और जब मेरे पैर रुक जाते है तो ये मौन हो जाते है, वह भी इनका भाग्य है। भाग्य तो सबके होता है, धाय माँ ! तुम नगर के उत्सव मे भाग नही ले रही हो, न लो। महाराज बनवीर का साथ नही दे रही हो, न दो। मै कौन होती हूँ बीच मे बोलने वाली ?

पन्ना : तो क्या मेरे उत्सव मे जाने और न जाने का सम्बन्ध बनवीर की इच्छा से है ?

सोना : फूल कुछ कहता है ? अपनी सुगन्धि भेज देता है। दीपक कोई सदेश भेजता है ? पतगे आप-से-आप आ जाते है।

पन्ना : मै जानती हूँ इस दीपक की आग मे मै जल जाऊँगी।

सोना : तो कुँवर को भेज देती। उनको तो कोई आग न छू सकती ?

पन्ना : कैसे भेज देती ? इतने आदमियो के बीच उसे कैसे भेज देती ? महाराज साँगा के वश के एक वही तो उजाले है। महाराणा रतनसिह तीन ही वर्ष राज करके सूर्य लोक चले गये। विक्रमादित्य भी बनवीर की कूटनीति से अधिक दिनो तक. .

सोना : धाय माँ, तुम विद्रोह की बाते करती हो।

पन्ना : आँधी मे आग की लपट तेज ही होती है, सोना ! तुम भी उसी आँधी मे लड-खडाकर गिरोगी। तुम्हारे ये सारे नूपुर बिखर जायेगे। न जाने किस हवा का झोका तुम्हारे इन गीत की लहरो को निगल जायेगा। यह सुख और सुहाग पास-पास उठे हुए दो बुलबुलो की तरह बिना सूचना दिये फूट जायेगा। चित्तौड राग-रग की भूमि नही है, जौहर की भूमि है। यहाँ आग की लपटे नाचती है, सोना जैसी रावल की लडकियाँ नही।

सोना : (क्रोध से चीखकर) धाय माँ !

पन्ना : तोडो ये नूपुर ! बनवीर की आग की कलियो ! तुम्हारे पीछे काली राख है—यह मत भूल जाना। ये अतृप्त इच्छाओ की चिनगारियाँ अधजली होकर चिटकेगी और चित्तौड की आँखो मे किरकिरी बनकर कसकेगी। यह आग की ज्वाला हवनकुड को भी जला देगी, सोना ! इसे बुझा दो। तुम्हारे इस त्योहार से चित्तौड परिचित नही है। यहाँ का त्योहार आत्म-बलिदान है। यहाँ का गीत मातृभूमि की वन्दना का गीत है। उसे सुनो और समझो।

सोना : (शान्त स्वर से) समझ लिया, धाय माँ !

पन्ना : तो यहाँ से जाओ। देखना, इस त्योहार के पीछे कोई कूटनीति न हो। बनवीर से पूछना, इस रास-रग का क्या अर्थ है ?

सोना : वह मेरी समझ मे नही आवेगा, धाय माँ !

पन्ना तो जाओ, दिशाओ की तरह उसकी हँसी मे डूबी रहो। तुमसे प्रतिध्वनि भी न निकल सके।

[सोना का धीरे-धीरे प्रस्थान। उसके नूपुर धीरे-धीरे बजते हुए दूर तक सुन पडते है।]

पन्ना अँधेरी रात ! यह रास-रग ! नगर के सब लोगो का जमाव ! कुँवर उदयसिंह के लिए बुलावा ! यह सब क्या है ?

[चन्दन का प्रवेश]

चन्दन (दूर से पुकारते हुए) माँ ! माँ !

पन्ना . क्या, मेरे लाल ?

चन्दन . माँ ! इतनी कविता बनाने वाली, इतने गीत गाने वाली, इतना नाचने वाली सोना धीरे-धीरे कैसे जा रही थी ? गुम-सुम, जैसे किसी ने साँप का जहर खीच लिया हो।

पन्ना साँप का जहर ?

चन्दन हाँ, जहरीली तो है ही। जब बोलती है तो बातो की ऐसी चोट करती है कि कुछ कहते ही नही बनता। वह तो हमेशा उछलती-कूदती जाती थी। आज तो जैसे उसके पैर मे मोच आ गई हो ?

पन्ना आई थी कुँवर को बुलाने, अपना नाच दिखलाने। मैंने कुँवर को नही जाने दिया तो बुरा मान गई।

चन्दन हाँ, माँ ! कुछ दिनो से कुँवर हमारे साथ नही खेलते, इसी के यहाँ चले जाते है। मै भी उनके पीछे जाता हूँ। वह कुँवर की ओर देखती है और कुँवर उसकी ओर देखते है। कहते तो कुछ नही, बस देखते है। पता नही इस तरह देखने से क्या होता है। देखने से क्या होता है, माँ ?

पन्ना कुछ नही। लोग देवता के दर्शन करते हैं न, तो उन्हे आनन्द मिलता है। मै कुँवर से कह दूँगी कि वे भी देवता की तरफ देखा करे, सोना की तरफ नही।

चन्दन तो सोना बुरा न मान जायगी, माँ ?

पन्ना लोगो के बुरा मानने से क्या होता है। भगवान् को बुरा नही मानना चाहिए। तुम तो किसी को नही देखते, चन्दन ?

चन्दन देखता हूँ, माँ ! पहाडी खरगोश को। ओह, कैसी छलाँग भरता है, माँ ! जैसे उसमे बिजली भरी हो। पलक मारते ही पहाड की इस चोटी से उस चोटी पर पहुँच जाता है। पहाडी खरगोश से बढकर और कौन-सी चीज है यहाँ ? उसे देखकर फिर किसी को देखने की इच्छा नही होती।

पन्ना पहाडी खरगोश का क्या कहना है, चन्दन ! उसी तरह वीरो को भी धावा करना चाहिए।

चन्दन हाँ, मै भी उतनी ही तेजी से दौड सकूँगा—जमीन से आसमान तक।

पन्ना जमीन से आसमान तक कोई नही दौडता। हाँ, तू नाच देखने तो नही गया था ?

चन्दन माँ, धावा करने वाले कही नाच देखते है ? मुझे तो वह अच्छा नही लगता। हाँ, कुँवर को अच्छा लगता है । कुँवर कहाँ है, माँ !

पन्ना रूठ कर सो गये हैं ।

चन्दन : क्यों, भोजन करने मे ? उन्होने भोजन कर लिया ?

पन्ना नही । पर कुँवर तुम्हारे उठाने से न उठेंगे । तुम भोजन कर लो । मैं थोडी देर वाद उन्हे उठाकर, वहलाकर भोजन करा दूंगी ।

चन्दन मुझे अकेले भोजन करना अच्छा न लगेगा, माँ !

पन्ना भोजन कर लो, मेरे चन्दन ! मेरे लाल ! सज्जा ने तुम्हारे लिए अच्छा भोजन बनाया है । वह तुम्हे अच्छी-अच्छी बाते सुनाती हुई भोजन करा देगी । मैं भी अभी आती हूँ । तुम्हारी माला टूट गई थी, उसी को ठीक कर रही हूँ । बस, थोडे दाने और रह गये है ।

चन्दन माँ ! कल कुँवर की माला भी ठीक कर देना । वह भी टूट रही है । सोना ने उस पकडकर खीच दिया था ।

पन्ना अच्छा, चन्दन ! वह भी ठीक कर दूंगी ।

[चन्दन का प्रस्थान]

पन्ना (सोचते हुए) मेरा भोला लाल ! जब पूछा कि तुम तो किसी को नही देखते, तो कहता है, देखता हूँ, माँ ! पहाडी खरगोश को । (हँसते हुए) पहाडी खरगोश को ! वाह रे मेरे चन्दन ! कहता है, धावा करनेवाले कही नाच देखते हे । वह तो दौडते है जमीन से आसमान तक जमीन से आसमान तक ।

[एकाएक घर की कुछ चीजो के गिरने की धमक । शीघ्रता से सामली का प्रवेश]

सामली (चीखकर पुकारती हुई) धाय माँ ! धाय माँ !

पन्ना · कौन ? कौन सामली ?

सामली (विलखते हुए) धाय माँ, धाय माँ । कुँवर कहाँ है ? कुँवरजी कहाँ है ?

पन्ना : क्यो कुँवरजी को क्या हुआ ?

सामली उनका जीवन सकट मे है।

पन्ना : कहाँ ? कैसे ? यह तुम क्या कह रही हो ?

सामली उनका जीवन बचाओ, धाय माँ !

पन्ना . (चीखकर) सामली ! कहाँ है कुँवरजी ?

[अन्दर की तरफ भागती है ।]

सामली (बिलखते हुए) हाय ! सर्वनाश हो रहा है । क्या मेवाड को ऐसे ही दिन देखने थे ? क्या चित्तौड के साके का यही फल होना था ? हाय ! क्या हो रहा है ? तुलजा भवानी ! तुम चित्तौड की देवी हो । कैसे कहूँ कि तुम्हारे त्रिशूल मे अब शक्ति नही रही । मेवाड का भाग्य

पन्ना (फिर प्रवेश कर) सो रहा है । मेरा कुँवर सो रहा है । कही तो कुछ नही

हुआ । कुँवरजी रूठ गये थे । वे तलवार लिए हुए भूमि पर ही सो गये । तलवार उनके हाथो से खिसक गई है, पर वे तो शान्ति से सो रहे है। मेरे कुँवर को कुछ नही हुआ ।

सामली कुँवर अच्छे है । तुलजा भवानी कुशल करे ! पर, धाय माँ ! महाराणा विक्रमादित्यजी की हत्या हो गई ।

पन्ना (**चीखकर**) महाराणा की हत्या हो गई ? किसने की ?

सामली वनवीर ने । महाराणा सो रहे थे । उसने अवसर पाकर उनकी छाती मे तलवार भोक दी ।

पन्ना (**चीखकर**) हाय ! महाराणा विक्रमादित्यजी ! यह मैं पहले ही जानती थी। [**सिसकने लगती है ।**]

सामली वनवीर ने नगर-भर मे आज नाच-गान का त्योहार मनवाया, जिससे नगर-निवासियो का ध्यान नाच-रग मे ही रहे । मौका देखकर वह राजमहल गया । अन्त पुर मे वह आता-जाता था । किसी ने रोका नही । उसने महाराणा के कमरे मे जाकर उनकी हत्या कर दी । [**सिसकियाँ लेने लगती है ।**]

पन्ना . (**स्थिर होकर**) आज कुसमय नाच-रग की बात सुनकर मेरे मन मे शका हुई थी । इसीलिए मैने कुँवर को वहाँ जाने से रोक दिया था । सभव था कि कुँवर वहाँ जाते और वनवीर अपने सहायको से कोई काड रच देता ।

सामली इसीलिए मै दौड आयी हूँ, धाय माँ ! लोगो ने वनवीर को कहते सुना है कि वह कुँवर उदयसिंह को भी सिंहासन का अधिकारी समझकर जीवित रहने नही देगा । वह निष्कटक राज्य करेगा, धाय माँ !

पन्ना विलासी और अत्याचारी राजा कभी निष्कटक राज्य नही कर सकता ।

सामली लेकिन रक्त से भीगी तलवार लेकर वह सीना ताने हुए अपने महल मे गया है ।

पन्ना : लोगो ने उसे पकडा नही ? सैनिक चुपचाप देखते ही रहे ?

सामली सैनिको को उसने अपनी तरफ मिला लिया है । लोग उससे डरते है । महाराणा विक्रमादित्य का राज्य भी तो ऐसा नही था कि लोग उनसे प्रेम रखते । उनके पहलवानो की सहायता से राज्य नही चल सकता । सभी सामन्त महाराणा से असन्तुष्ट थे ।

पन्ना : अब क्या होगा ?

सामली थोडी देर वाद ही वह कुँवरजी को मारने आयेगा । आज की रात बहुत अँधेरी है । आज की रात मे ही वह अपने को पूरा महाराणा बना लेना चाहता है । किसी तरह से हो, कुँवरजी की रक्षा होनी चाहिए, धाय माँ !

पन्ना कुँवरजी की रक्षा (**सोचते हुए**) कुँवरजी की रक्षा ? अवश्य होगी अवश्य होगी । अव मेवाड का उत्तराधिकारी एक यही तो राजपूती-रक्त है । दासी-पुत्र वनवीर को चित्तौड सहन नही कर सकेगा ।

सामली यह तो आगे की बात है, पर तुम कुँवरजी की रक्षा किस तरह करोगी ?
पन्ना मैं ? मैं इस अँधेरी रात मे ही उसे लेकर कुभलगढ भाग जाऊँगी ।
सामली : और चन्दन कहाँ रहेगा ?
पन्ना जहाँ भगवती तुलजा उसे रखेगी । मेरे महाराणा का नमक मेरे रक्त से भी महान् है । नमक से रक्त बनता है, रक्त से नमक नही ।
सामली धन्य हो, धाय माँ ! पर तुम अँधेरी रात मे नही भाग सकोगी ।
पन्ना क्यो ? अँधेरी रात मे मुझे कौन जानेगा ? कौन पहिचानेगा ?
सामली : तुम महलो से निकल भी न सकोगी । आते समय मैंने देखा था कि बनवीर के सैनिक तुम्हारा महल घेरने को आ रहे थे । एक ओर से तो तुम्हारा महल घिर ही चुका था ।
पन्ना हा ! भगवान् एकलिंग ! अब क्या होगा ?
सामली जैसे भी हो, कुँवरजी की रक्षा तुम्हे करनी ही है ।
पन्ना मुझे सैनिको की सहायता नही मिल सकती ?
सामली सैनिक तो उसके है, धाय माँ !
पन्ना : और सामन्त ?
सामली उनमे अभी इतना साहस नही है ।
पन्ना तब मैं स्वय तलवार लेकर कुँवर की रक्षा करूँगी । भैरवी बनकर युद्ध करूँगी । मरते-मरते मैं उसकी तलवार के टुकडे-टुकडे कर दूँगी । उसके और मेरे कुँवर के बीच मे मेरे खून का समुद्र लहराएगा जिसे वह इस जीवन मे पार भी न कर सकेगा ।
सामली : उसके साथ सैनिक भी हो सकते है, धाय माँ ! युद्ध मे तुम्हारे प्राण जायेगे और कुँवरजी भी न बचेगे ।
पन्ना . तो फिर क्या करूँ ? सामली ! घुटने टेककर कुँवर की जीवन-भिक्षा माँगूँगी । बनवीर मनुष्य है । उसके मन मे कुछ तो दया होगी ।
सामली राजा की हत्या करने के बाद दासी-पुत्र मनुष्य है ? वह जगली पशु से भी गया-बीता है ।
पन्ना : फिर मेरे कुँवर कैसे बचेगे ? कैसे बचेगे मेरे कुँवर ?

[सिसकी]

सामली इसका उपाय मैं क्या बताऊँ, धाय माँ ! मैं तो महल की एक परिचारिका हूँ । मैं क्या कहूँ ? पर इतना कहे जाती हूँ कि वह क्रूर और अत्याचारी बनवीर आता ही होगा । सर्प की तरह उसकी भी दो जीभे है जो एक रक्त से नही बुझेगी । उसे दूसरा रक्त भी चाहिए । और वह कुँवर का...तुम कुछ बोल नही रही हो, धाय ! आँखे बन्द कर क्या सोच रही हो ?
पन्ना भगवती तुलजा का ध्यान कर रही हूँ कि वे मुझे शक्ति दे कि मैं कुँवर की रक्षा कर सकूँ ।

सामली · इस समय कुँवर की रक्षा शक्ति से नही हो सकेगी। कोई युक्ति ही काम दे सकती है। (**चौंककर**) कौन ग्रा रहा है ?

पन्ना (**ज़ोर से**) दरवाजे पर कौन है ?

[**कीरत बारी का प्रवेश**]

कीरत अन्नदाता ! कीरत बारी हौ। धाय माँ के चरन लागो।

पन्ना कीरत ! तुम हो। आ गये। बाहर तो कोई नही है ?

कीरत अन्नदाता ! बाहर सिपाहियों का डेरा लग रहा है। जान नही पडता अन्नदाता कै आधी रात कौ जे का हो रहा है। पैंडे मे किसी का भी पैसारा नही हो पाता। मै तो बारी हौ इससे कोई कुछ वोला नही।

पन्ना तो तुम वेखटके चले आये ?

कीरत अन्नदाता ! मै तो जूठी पत्तल उठाता हूँ। कोई मालमत्ता तो मेरे पास है नही। टोकनी है और उसमे पत्ते है। कुँवर जू ने व्यारू कर ली, धाय माँ ? मै जूठन पा लूँ।

पन्ना नही।

कीरत कुँवर जू जुग-जुग जिएँ, धाय माँ ! जब से कुँवर जू बूँदी से आये है तब से सगर महल मे उजियारा फैल गया है। राना विक्रमाजीत जब हर भजन करेगे तो धाय माँ, अपना चौर छत्तर कुँवर जू को ही तो सौपेगे। और जब कुँवर जू राना होयेगे तो सगर जहान उनको वन्दगी करने आयेगा। सच जानो, धाय माँ ! कुँवर जू के सरूप दर्शन दाखिल है। मै तो उनके लिए अपनी जान तक हाजिर कर सकता हूँ। (**ठहरकर**) धाय माँ, कुछ सोच रही हैं ?

पन्ना (**चौंककर**) एँ ! हाँ, मैं सोच रही हूँ। (**सामली से**) तुम बाहर जाके देखो सिपाही कहाँ-कहाँ खडे है और कितने सिपाही है।

सामली बहुत अच्छा, धाय माँ ! मै जाती हूँ। [**प्रस्थान**]

पन्ना तो कीरत ! तुम कुँवरजी को बहुत प्यार करते हो ?

कीरत अन्नदाता ! प्यार कहने मे जवान पर कैसे आवे ? वो तो दिल की बात है। मौके पै ही देखा जाता है। और कहने को तो मै कही चुका हूँ कि उनके लिए अपनी जान तक हाजिर कर सकता हौ।

पन्ना जान तक हाजिर कर सकते हो ?

कीरत ऐसी बातो मे तीन तिर बाचा नई हराते, धाय माँ ! मौके पै ही देखा जाता है।

पन्ना तो वह मौका आ गया है, कीरत !

कीरत मौका ? कैसा मौका ?

पन्ना कुँवरजी को बचाने का।

कीरत कौन के सिर पै भैरू बाबा की आँख चढी है जो कुँवरजी का बाल भी बाँका कर सके ? और कीरत के रहते ? धाय माँ ! हँसी तो नही कर रही है, अन्नदाता ?

पन्ना नही, कीरत ! हँसी का समय नही है। कुँवरजी के प्राण सकट मे है।
कीरत कौन है जिसने सूरज पै धूर उछाली है ?
पन्ना बनवीर।
कीरत अरे, वो बनवीर जो महाराना विक्रमाजीत के दरबार मे बन्दर सरीखा नाचता है ?
पन्ना . बहुत बातो का समय नही है, कीरत ! बोलो, कुँवरजी को बचाग्रोगे ?
कीरत तो मै तलवार ले आऊँ ?
पन्ना तलवार लाने का समय नही है। इस समय लडने से काम नही चलेगा। एक तरकीब करना होगा।
कीरत . हुकुम दे, अन्नदाता !
पन्ना भवानी तुलजा ने मेरे मन मे सब उपाय सुझा दिये है।
कीरत : हाँ, ध्यान तो कर रही थी आँख मूँद के। तो भवानी ने कौन-सा हुकुम करा ?
पन्ना : उसे मानोगे ?
कीरत अन्नदाता ! सिर माथे। सिर चढा के मानूँगा।
पन्ना अच्छा, तो सुनो। तुम बारी हो। तुम्हे बाहर जाने से कोई नही रोकेगा। तुम तो टोकरी मे जूठी पत्तल उठा के जाते ही हो।
कीरत ठीक कहती है, अन्नदाता ! आते वक्त भी किसी ने नही रोका।
पन्ना तो तुम कुँवरजी को टोकरी मे लिटाकर उन पर गीली पत्तले डाल कर महल से बाहर निकल जाग्रो।
कीरत वाह ! अन्नदाता ने खूब सोचा, खूब सोचा। मै ऐसे निकल जाऊँगा कि सिपाही लोग मुँह देखते ही रह जायेगे। तो कुँवरजी कहाँ है ?
पन्ना सो रहे है। आज भूमि पर ही सो गये। उन्हे धीरे से उठाकर अपनी टोकरी मे सुला लेना। वे जागने न पावे।
कीरत अन्नदाता ! उनको पता भी नही चलेगा कि वे कहाँ से कहाँ सो रहे है।
पन्ना . (गहरी साँस लेकर) चित्तौड का राजकुमार पत्तल ओढ के सोयेगा, कौन जानता था ?
कीरत यह सब भाग की बात है, अन्नदाता ! आज पत्तल ओढ के सोयेगे कल साल-दुशाला ओढेगे।
पन्ना तो तुम जाग्रो, जल्दी करो !
कीरत बहुत अच्छा, अन्नदाता ! कुँवरजी कहाँ है ?
पन्ना : मेरे कमरे मे नीचे ही सो गये है। तुम उन्हे उठा के तो ले जा सकोगे ?
कीरत अन्नदाता ! अगर हुकुम दे तो बनवीर तक को सिर पै उठा के ले जा सकता हूँ।
पन्ना : ठीक है। तुम्हारी टोकरी तो काफी बडी है ?

कीरत : अन्नदाता ! आपके जस ने ही तो मेरी टोकरी बडी कर दी है। सारे राजमहल की पत्तलें छोटी टोकरी मे कैसे आ सकती है ? और अन्नदाता ! आज तो बनवीर के साथ बहुत सामन्तो ने खाया है। मैने भी सोचा आज बडी टोकरी ले चलूं। सो वो ही लाया हूँ।

पन्ना : तो चलो, मै तुम्हारी मदद कर दूं।

कीरत . अन्नदाता ! आप तकलीफ न उठाये। मै सब कर लूंगा।

पन्ना और हाँ, कुंवरजी को लेकर तुम बेरिस नदी के किनारे मिलना। वहाँ जहाँ श्मशान है।

कीरत ठीक है, अन्नदाता ! वही मिलूंगा। वहाँ मुझ पै किसी भी आदमी की नजर न पडेगी।

पन्ना तो जाओ, कीरत ! आज तुम जैसे एक छोटे आदमी ने चित्तौड के मुकुट को सम्हाला है। एक तिनके ने राजसिंहासन को सहारा दिया है। तुम धन्य हो !

कीरत अन्नदाता ! धन्य तो आप है कि मुझ को आपने ऐसी सेवा करने का काम सौंपा है। तो मै चलूं ?

[सामली का प्रवेश]

सामली धाय माँ ! महल चारो तरफ सिपाहियो से घिर गया। उत्तर की तरफ ही सात सिपाही हैं, बाकी तीनो तरफ बीस-बीस सिपाही पहरा दे रहे है। शायद उत्तर की तरफ के सिपाही बनवीर को लेने गये है।

पन्ना : कोई चिन्ता की बात नही, सामली ! तुम यही ठहरना, मैं अभी आती हूँ।

सामली देख के क्या करोगी ? मै तो देख आयी हूँ। कुंवर को बचाने का कोई उपाय सोचो।

पन्ना मैं अभी आती हूँ। (कीरत से) चलो, कीरत !

[दोनो का प्रस्थान]

सामली न जाने धाय माँ क्या सोच रही है ? कीरत बारी भी तब से यही बना है। क्या होगा ? हाय ! बनवीर ने महाराणा को रक्त मे नहला दिया। दुष्ट बन-वीर ! . . .तुझे नर्क मे भी चैन न मिलेगा। कुंवर उदयसिंह पर आँख लगाई है। भवानी ! कुंवर की रक्षा करो। रक्षा करो ।

[पन्ना का प्रवेश]

पन्ना · अब ठीक है। कुंवर की रक्षा हो गयी।

सामली : (प्रसन्नता से) हो गयी ! हो गयी ! हो गयी ! कैसे ?

पन्ना कीरत ने अपनी टोकरी मे कुंवर को सुला दिया। ऊपर से पत्तले ढक ली और उन पर पानी छिडक दिया। वह उन्हे लेकर बेखटके महल से बाहर हो जायगा। कोई उससे कुछ पूछेगा भी नही। कुंवरजी बच गये ! कुंवरजी बच गये !

सामली वाह, वाह, धाय माँ ! बहुत अच्छा सोचा, बहुत अच्छा सोचा। सिपाही समझेंगे कि कीरत बारी जूठी पत्तले ले जा रहा है। कोई इससे कुछ पूछेगा भी

नही। कुँवरजी बच गये !

पन्ना · चित्तौड के भाग्य से ही वे बचेगे।

सामली जरूर बचेगे। पर धाय माँ ! यह सब तुम्हे किसने सुझाया ?

पन्ना भवानी ने। मैने आँख बन्द कर उनका ध्यान किया। उसी समय कीरत बारी आया। उसने कहा . मैं तो जूठी पत्तल उठाता हूँ। कोई मालमत्ता तो मेरे पास है नही। टोकरी है और उसमे पत्ते है। बस, भवानी ने यही बात मुझे सुझा दी।

सामली पर एक बात है, धाय माँ !

पन्ना · क्या ?

सामली · बनवीर यहाँ जरूर आयेगे। वे तुम्हारे महल मे कुँवरजी की खोज करेगे। जब वे कुँवरजी को न पावेगे और तुमसे पूछेगे तो तुम क्या उत्तर दोगी ?

पन्ना कह दूँगी कि मै नही जानती।

सामली इससे वे नही मानेगे। क्रोध मे आकर अगर उन्होने तुम्हारे ऊपर तलवार चला दी तो कुँवरजी तुम्हारे बिना कैसे जिएँगे ?

पन्ना मै अपने प्राणो की भिक्षा माँगूँगी जो चित्तौड की किसी नारी ने नही माँगी। ऐसी विचित्र भिक्षा वे अवश्य दे देगे।

सामली *बनवीर के सिर पर खून चढ गया है। वह दैत्य बन गया है।* कुँवरजी को न पाकर वह तुम्हे जरूर मार डालेगा।

पन्ना मुझे उसकी चिन्ता नही है, सामली !

सामली पर चिन्ता कुँवरजी की है। तुम्हारे बिना वे भी तो जीवित नही रहेगे। फिर तुम्हारा बलिदान चित्तौड के किस काम आयेगा। कुँवरजी को तो जीना ही चाहिए।

पन्ना सचमुच कुँवरजी मेरे बिना नही जियेगे। थोडी-सी बात पर तो रूठ जाते है। मुझे न पाकर उनका क्या हाल होगा ?

सामली किसी तरह बनवीर को धोखा नही दे सकती ?

पन्ना दे सकती हूँ।

सामली किस तरह ?

पन्ना कुँवरजी की शैया पर किसी और को सुला दूँगी। वह क्रोध मे अन्धा रहेगा ही। पहिचान भी नही सकेगा कि यह कौन सोया है।

सामली तो कुँवरजी की शैया पर किसे सुला दोगी ?

पन्ना : किसे सुला दूँगी ? (सोचकर) सामली ! मेरे हृदय पर वज्र गिर रहा है। मेरी आँखो मे प्रलय का बादल घुमड रहा है। मेरे शरीर के एक-एक रोम पर बिजली तडप रही है।

सामली · धाय माँ ! सम्भल जाओ। ऐसी बाते न कहो। कुँवर की शैया पर .. ..

पन्ना : सुला दूँगी। उसी को, उसी को सुला दूँगी जो मेरी आँखो का तारा

है......चन्दन ! चन्दन को सुला दूंगी, सामली ! (सिसकियाँ) चन्दन को सुला दूंगी। उस नन्हे-से लाल को हत्यारे की तलवार के नीचे रख दूंगी। कह दूंगी कि इसके नन्हे-से कलेजे पर हलकी-सी चोट करना। बेचारा अभी बालक है। भीषण प्रहार से मेरा लाल चौंक उठेगा।

सामली धाय माँ ! धाय माँ ! ऐसा मत कहो ऐसा मत कहो। ऐसा मैं नही सुन सकूंगी। महल के किसी कोने मे छिप रहूँगी। हाय ! तुम क्या कह रही हो। ऐसा मत करना, धाय माँ ! ऐसा मत करना। मैं जाती हूँ। ऐसा मैं नही सुन सकूंगी ऐसा मैं नही सुन सकूंगी। [प्रस्थान]

पन्ना चली गई। कहती है, ऐसा मैं नही सुन सकूंगी। जो मुझे करना है, वह सामली सुन भी न सकेगी। भवानी ! तुमने मेरे हृदय को कैसा कर दिया ? मुझे बल दो कि मैं राजवंश की रक्षा मे अपना रक्त दे सकूं। अपने लाल को दे सकूं। यही राजपूतनी का व्रत है। यही राजपूतनी की मर्यादा हे। यही राजपूतनी का धर्म है। मेरा हृदय वज्र का बना दो ! माता के हृदय के स्थान पर पत्थर रख दो, जिससे ममता का स्रोत बन्द हो जाये। भवानी ! मैं चित्तौड की सच्ची नारी बनूं। खीची राजपूतनी अपने रक्त से मगल-तिलक करे।

[नेपथ्य मे चन्दन का स्वर माँ ! माँ ! माँ !]

[चन्दन का प्रवेश]

चन्दन माँ ! देखो, मेरे पैर मे चोट लग गई। यह रक्त निकल रहा है।

पन्ना कहाँ रक्त निकल रहा है ? लाओ देखूं, मेरे लाल ! ओहो ! अंगूठे मे यह चोट कैसे लगी ? रक्त निकल रहा है। कितना रक्त निकल रहा है। लाओ। इसे बाँध दूं। (अपनी साडी से कपडे का टुकडा फाडती है) सीधा पैर करो ! हाँ, ठीक ...इसे बाँध देती हूँ। (बाँधते हुए) यह चोट कैसे लगी, लाल !

चन्दन मैं जैसे ही भोजन कर के उठा, माँ ! सज्जा ने कहा कि महल के चारो तरफ सिपाही इकट्ठे हो रहे है। मै देखने के लिए ऊपर के झरोखे मे चढ गया। अँधेरे मे कुछ दिखाई नही दिया। जैसे ही मैं नीचे कूदा एक टूटा हुआ शीशा अँगूठे मे चुभ गया। कोई बात नही है, माँ ! रक्त तो निकला ही करता है। पर ये सिपाही महल के चारो तरफ क्यो इकट्ठे हो रहे हैं ?

पन्ना आज नाच-रंग का दिन है न। वही सब देखने के लिए आये होगे। या फिर सोना ने उन्हे बुलाया होगा। वह नीचे नाच रही होगी।

चन्दन माँ ! सोना अच्छी लडकी नही है। मैं कल उससे कहूँगा, माँ कि कुँवरजी को अपना नाच न दिखाया करे। उनका मन आखेट करने मे नही लगता।

पन्ना मैं भी उसे समझा दूंगी, चन्दन !

चन्दन कुँवरजी कहाँ है, माँ ! आज भोजन मे भी साथ नही चले।

पन्ना : कही सो रहे होगे।

चन्दन तब से वे सो ही रहे हैं ? माँ ! कुँवरजी को ज्यादा नीद क्यो आती है ? मैं

देखूँ, कहाँ सो रहे है।

पन्ना : बुरा मानकर कही सो रहे होगे।

चन्दन : सोना ने ही उन्हे बुरा मानना सिखला दिया, माँ ! नही तो कुँवरजी पहले कभी बुरा नही मानते थे। खेल-खेल मे भी बुरा नही मानते थे। साथ खेलते थे, साथ खाते थे। आज अकेले कुछ खाया भी नही गया, माँ !

पन्ना तो चलो, चन्दन ! मैं तुम्हे जी-भर के खिला दूँ।

चन्दन अब कुँवरजी के साथ कल खाऊँगा, माँ ! कल हम दोनो साथ बैठेगे ..तुम प्रेम से परोस-परोस करं खिलाना। कल खूब खाऊँगा, माँ ! कुँवरजी से भी ज्यादा। कहते है कि मै चन्दन से ज्यादा खाता हूँ। अब कल से यह कहना भूल जायेगे। (हँसता है) क्यो न मा ?

पन्ना ठीक हे, लाल !

चन्दन मॉ ! अच्छी तरह से क्यो नही बोलती ? और तुम्हारी आँखे.. तुम्हारी आँखो मे पानी कैसा ? मॉ, ऐँ .तुम्हारी आँखो मे .

पन्ना कहाँ, चन्दन ! पानी कहाँ ? और तुम्हारे अंगूठे से रक्त की धार बहे, मेरी आँखो से एक बूँद पानी भी न निकले ?

चन्दन ओह ! माँ, तुम तो बाते करने मे बडी अच्छी हो। जब मै बडा होकर बहुत-सी जागीरे जीतूँगा, मॉ ! तो मै तुम्हारे लिए एक मन्दिर बनवाऊँगा। देवी के स्थान पर तुमको बिठलाऊँगा और तुम्हारी पूजा करूँगा। तुम अपनी पूजा करने दोगी ?

पन्ना तुझसे मुझे ऐसी ही आशा है, चन्दन !

चन्दन यह मत समझना, माँ, कि मै जागीरे नही जीत सकता। उस जगली खरगोश की तरह तेजी से दौड सकता हूँ। आसमान तक धावा बोल सकना हूँ।

पन्ना अब बहुत बाते न करो, चन्दन ! रात अधिक हो रही है, सो जाओ !

[कुछ आहट होती है।]

चन्दन माँ. माँ ! देखो, उस दरवाजे से कौन झाँक रहा है ?

पन्ना कीरत बारी होगा। तुम्हारा भोजन उठाने आया होगा। मै देखती हूँ।

[उठकर देखती है।]

चन्दन कोई और हो तो मैं अपनी तलवार लाऊँ ?

पन्ना (लौटती हुई) कोई नही है। महल मे किसका डर है ? लाल ! तुम सो जाओ !

चन्दन कहाँ सोऊँ ? सज्जा तो अभी रसोई-घर मे ही होगी। मेरी शैया ठीक न की होगी।

पन्ना तो...तो . तो तुम कुँवरजी की शैया पर सो जाओ। शैया ठीक होने पर तुम्हे उस पर लिटा दूँगी।

चन्दन और कुँवरजी बुरा मान गये तो ?

पन्ना मैं कुँवरजी को समझा दूँगी। तुम्हारे लेटने से कुँवरजी की शैया मैली तो हो न जायगी।

चन्दन तुम बहुत अच्छी हो, माँ! आज कुँवरजी की शैया पर लेट कर देखूँ। अब तो मै भी राजकुमार हो गया। (एकाएक स्मरण कर) पर मेरी माला? राजकुमार के गले मे माला होती है न? तुमने मेरी टूटी माला गूँथ दी?

पन्ना नही गूँथ पाई, लाल! सामली आ गई थी।

चन्दन कल गूँथ देना। भूलना नही, माँ! (शैया पर लेटता है) आहा. माँ! कितनी नरम शैया है। जी होता है, सदा इसी पर सोता रहूँ।

पन्ना (चीखकर) चन्दन!

चन्दन क्या हुआ, माँ?

पन्ना कुछ नही . कुछ नही । आज मेरा जी कुछ अच्छा नही है। कभी-कभी कलेजे मे शूल-सी उठती है। तुम सो जाओ तो मै भी सो जाऊँगी।

चन्दन मैं किसी वैद के यहाँ जाऊँ, माँ!

पन्ना नही, वैद्य के पास इसकी दवा नही है। यह आप-से-आप उठती है और आप-से-आप शान्त हो जाती है। तुम सो जाओ.. मै भी कुँवर को खिलाकर जल्दी सो जाऊँगी।

चन्दन . अच्छा, माँ! तुम्हारी आज्ञा नही टालूँगा। लो, मैं आँखे बन्द कर लेता हूँ।

पन्ना : सो जाओ! चित्तौड की अच्छी कहानियो को सोचते-सोचते सो जाओ। अपनी मातृभूमि मे कितने बडे-बडे वीर हुए है। बापा रावल जिन्हे हारीत ऋषि ने दर्शन दिये, जिन्होने मेवाड की नींव डालकर विदेशो पर चढाई की और उन्हे जीता। इन्होने ही पहले-पहल अपने आराध्य देव एकलिंग का मन्दिर बनवाया। राजा नरवाहन जिन्होने अपनी अकेली शक्ति से अनेक शत्रुओ को पराजित किया। राजा हसपाल जिन्होने अनेक राज्य जीतकर अपने राज्य मे मिलाये। रावल सामन्त सिह जिन्होने गुजरात के सोलकी राजा उदयपाल को युद्ध मे पराजित किया। रावल जयसिह, रावल समरसिंह

चन्दन (चौककर) माँ! मै आँखें बन्द कर तुम्हारी बाते सुन रहा था कि एक काली छाया मेरे सिर के पास आई और उसने मुझे मारने को तलवार उठाई। माँ .. वह काली छाया काली छाया!

पन्ना . मै तो तुम्हारे पास बैठी हूँ, लाल! यहाँ कौन-सी काली छाया आयेगी?

चन्दन कोई छाया नही आयेगी, माँ! पर न जाने क्यो नीद नही आ रही है। तुम मुझे कोई गीत सुना दो तो सुनते-सुनते सो जाऊँ।

पन्ना अच्छी बात है, मेरे लाल! मैं गीत ही गाऊँगी। अपने लाल को सुला दूँ।

[**करुण स्वर मे गीत गुनगुनाती है।**]

उड जा रे पँखेरुआ, साँझ पडी।
चार पहर बाटडली जोही,

मेड्याँ खडी ए खडी।
उड जा रे पँखेरुआ, साँझ पडी ॥
डबडब भरिया नैन दिरिघडा,
लग रयी झडी ए झडी।
उड जा रे पँखेरुआ, साँझ पडी ॥
तेरी फिकर हूँ भयी दिवानी,
मुसकल घडी ए घडी। उड जा रे पँखेरुआ ..
[धीरे-धीरे गान समाप्त होता है।]

पन्ना (फिर पुकारती है) चन्दन !

[चन्दन के न बोलने पर पन्ना अलग हटकर जोर से सिसकी लेती है।]

पन्ना मेरा लाल सो गया। मैने अपने लाल को ऐसी निद्रा मे सुला दिया कि अब यह न उठेगा। (सिसकियाँ लेती हैं) ओह पन्ना! तूने अपने भोले बच्चे के साथ कपट किया है। तूने अँगारो की सेज पर अपने फूल-से लाल को सुला दिया है। तू सर्पिणी है सर्पिणी, जो अपने ही बच्चे को खा डालती है। जान-बूझ कर अपने पुत्र की हत्या कराने जा रही है। हाय! अभागिनी माँ! ससार मे तेरा भी जन्म होने को था? (सिसकियाँ लेती है। फिर चन्दन को सबोधित करते हुए) लाल! तुम्हारी माला मै नही गूँथ सकी। तुम्हारा जीवन अधूरा होने जा रहा है तो माला कैसे पूरी होती? (सिसकियाँ) आज तुम भूखे ही रह गये, मेरे लाल! आज अन्तिम दिन मै तुम्हे अपने हाथो से भोजन भी न करा सकी! तुम क्या जानो कि कल तुम और कुँवर साथ-साथ कैसे भोजन करोगे! कहते थे कल तुम परोसकर खिलाना। मै अब किसे खिलाऊँगी, चन्दन! (सिसकियाँ) तुम बडी-बडी जागीरे जीतोगे, मन्दिर बनवाओगे, देवी के स्थान पर मुझे बिठलाओगे और मेरी पूजा करोगे! मैं ऐसी देवी हूँ कि अपने भक्त को ही खा रही हूँ। (सिसकियाँ) तुम्हारे अँगूठे से रक्त की धारा बही। अब हृदय से रक्त की धारा बहेगी तो मै कैसे रोक सकूँगी। मेरे लाल! मेरे चन्दन! जाओ, यह रक्तधारा अपनी मातृभूमि पर चढा दो! आज मैने भी दीप-दान किया है। दीप-दान! अपने जीवन का दीप मैने रक्त की धारा पर तैरा दिया है। ऐसा दीप-दान भी किसी ने किया है? एक बार तुम्हारा मुख देख लूँ। कैसा सुन्दर और भोला मुख है! [सिसकियाँ लेती है।]

[एकाएक भडभडाहट की आवाज होती है। हाथ मे तलवार लिए बनवीर आता है।]

बनवीर (मद्य पीने से उसके शब्द लडखडा रहे हैं) पन्ना!

पन्ना महाराज बनवीर!

बनवीर सारे राजपूताने मे एक ही धाय माँ है पन्ना ! सबसे अच्छी ! मैं ऐसी धाय माँ को प्रणाम करने आया हूँ। (रुककर) एँ, धाय माँ की आँखो मे आँसू ?

पन्ना नही आँसू नही है। आज मेरे कुँवर बिना भोजन किये ही सो गये।

बनवीर आज के दिन भोजन नही किया ? अरे, आज तो उत्सव का दिन है। आनन्द का दिन है। (**अट्टहास करता है**) मेरे महल मे तीन सौ सामन्तो ने भोजन किया। आज कीरत बारी की टोकरी देखती ! भोजन उठाते-उठाते वह जिन्दगी-भर के लिए थक गया होगा, (**हँसता है**) जिन्दगी-भर के लिए ! तो कहाँ हैं कुँवर उदयसिंह ? मै उन्हे अपने हाथ से भोजन करा दूँ ?

पन्ना कुँवर सो गये है। वे किसी के हाथ से भोजन नही करते, मैं ही उन्हे खिला दूँगी।

बनवीर धाय माँ हो न। आज पन्ना ! आज तुमने सोना का नाच नही देखा ? ओह ! कितना अच्छा नाचती है ! मैंने उससे कह दिया था कि वह कुँवर उदयसिंह को और धाय माँ को अपना नाच दिखला दे।

पन्ना वह आई थी। शायद तुम्ही ने उसे भेजा था, पर कुँवरजी का जी अच्छा नही था, इसीलिए मैने उन्हे नही भेजा।

बनवीर : जी अच्छा नही था, और आज का दीप-दान भी तुमने नही देखा ?

पन्ना : मेरे लिए दीप-दान देखने की बात नही है, करने की बात है।

बनवीर ठीक है, धाय माँ तो मगल-कामनाओ की देवी है। वे दीप-दान करके चित्तौड का कल्याण करेंगी। मै भी चित्तौड का कल्याण करूँगा। एक बात कहूँ, पन्ना ! मैं तुम्हे मारवाड मे एक जागीर देना चाहता हूँ। वहाँ तुम्हारे लिए तुलजा भवानी का मन्दिर बनेगा, मन्दिर। सारे लोग तुम्हे इतनी श्रद्धा से देखेंगे कि तुलजा भवानी मे और तुम मे कोई अन्तर भी न होगा। तुम्ही देवी के उस मन्दिर मे रहोगी। लोग तुम्हारी पूजा करेंगे।

पन्ना (चीखकर) बनवीर ?

बनवीर (**अट्टहास कर**) महाराज बनवीर नही कहा ? मेरे कहने-भर से तुम देवी हो गई ? महाराज बनवीर को बनवीर कहने लगी ! (**हँसता है**) देवी को प्रणाम ! देखा, अब तुम्हे मोह-ममता से दूर रहना होगा। तुम कुँवर उदयसिंह को मुझे दे दोगी। और मै उसे यह तलवार दूँगा। [**तलवार खींच लेता है।**]

पन्ना एँ ! यह तलवार ? इस पर रक्त क्यो लगा है ?

बनवीर रक्त तो तलवार की शोभा है, पन्ना ! वह अनन्त सुहाग से भरी है। यह तो उसके सिन्दूर की रेखा है। बिना रक्त के तलवार भी कभी तलवार कहला सकती है ?

पन्ना . यह तलवार म्यान मे रख लो, महाराज !

बनवीर . क्या तुम्हे भय लगता है ? चित्तौड मे तलवार से किसी को भय नही लगता। धाय माँ होने पर तुममे इतनी ममता भर गई कि तलवार नही देख

सकती ? पन्ना ! तलवारे आसानी से म्यान के भीतर नही जाती। जब म्यान मे राज्यश्री भर जाती है तो तलवार बाहर निकल आती है।

पन्ना आधी रात हो चुकी है, महाराज बनवीर ! विश्राम करो।

बनवीर · विश्राम मै करूँ ? बनवीर ? जिसे राजलक्ष्मी को पाने के लिए दूर तक की यात्रा करनी है। मै अपने साथ कुँवर उदयसिंह को भी ले जाना चाहता हूँ।

पन्ना यह नही होगा. यह नही होगा, महाराज बनवीर !

बनवीर जागीर नही चाहती ?

पन्ना नही।

बनवीर तो उदयसिंह के बदले जो माँगो वह दिया जायगा।

पन्ना राजपूतनी व्यापार नही करती, महाराज ! वह या तो रणभूमि पर चढती है या चिता पर।

बनवीर : दो मे से किसी पर भी तुम नही चढ सकोगी। तुम्हारा महल सैनिको से घिरा है।

पन्ना : सैनिको को किसने आज्ञा दी ? महाराज विक्रमादित्य ..

बनवीर (बीच ही मे) वे अब इस ससार मे नही है, पन्ना ! उन्होने रक्त की नदी पार कर ली है। उसी रक्त की लहर मेरी तलवार पर है।

पन्ना · ओह, बनवीर ! हत्यारा बनवीर !

बनवीर महाराणा बनवीर को हत्यारा बनवीर नही कह सकती, पन्ना ! हत्यारा बनवीर कहनेवाली जीभ काट दी जायगी।

पन्ना तो लो मेरी जीभ काट लो और यहाँ से चले जाओ। महाराणा विक्रमादित्य

बनवीर बार-बार विक्रमादित्य का नाम क्यो लेती है ? प्रेतो और पिशाचो को वह नाम लेने दो। यदि मेरा नाम लेना है तो जयकार के साथ नाम लो।

पन्ना धिक्कार है, बनवीर ! तुम्हारी माँ ने तुम्हे जन्म देते ही क्यो न मार डाला ?

बनवीर चुप रह, धाय ! बच्चे की पालनेवाली, लोरियाँ सुनानेवाली एक साधारण दासी महाराणा से बात करती है ? कहाँ है उदयसिंह ?

पन्ना तू उदयसिंह को छू भी नही सकता। नीच नारकी ! महाराणा विक्रमादित्य की हत्या के बाद तू उदयसिंह को देख भी नही सकता।

बनवीर मै नही देखूँगा, मेरी तलवार देखेगी। विक्रम के रक्त से सनी हुई तलवार अब उदयसिंह के रक्त से धोई जायगी।

पन्ना · ओह, क्रूर बनवीर ! तुम तो उदयसिंह के सरक्षक थे। रक्षा के बदले क्या तुम उसकी हत्या करोगे ? नही-नही, यह नही हो सकता, यह नही हो सकता ! महाराणा बनवीर ! तुम राज्य करो, चित्तौड पर, मेवाड पर, सारे राजपूताने पर राज्य करो। पर कुँवर उदयसिंह को छोड दो। मै उसे लेकर सन्यासिनी हो जाऊँगी। तीर्थो मे वास करूँगी। तुम्हारा मुकुट तुम्हारे माथे पर रहे, पर

मेरा कुँवर भी मेरी गोद मे रहे। बनवीर ! महाराणा वनवीर, मुझे यह भिक्षा दे दो।

बनवीर दूर हट दासी ! यह नाटक बहुत देख चुका हूँ। उदयसिंह की हत्या ही तो मेरे राजसिंहासन की सीढी है। जब तक वह जीवित है तब तक सिंहासन मेरा नही होगा। तू मेरे सामने से हट जा !

पन्ना मै नही हटूँगी ! अपने कुँवर की शैया से दूर नही हटूँगी।

बनवीर उदयसिंह को सुला दिया है जिससे उसे मरने का कष्ट न हो। उसका मुख भी ढक दिया है ! वाह री धाय माँ ! बालक के मरने मे भी ममता का ध्यान रखती है। (**तीव्रता से**) शैया से दूर हट, पन्ना ! मैं उसे चिर-निद्रा मे सुला दूँ।

पन्ना (**साहस से**) नही, ऐसा नही होगा, क्रूर नराधम, नारकी ! ले, मेरी कटार का प्रसाद ले [**आक्रमण करती है, उसकी चोट बनवीर की ढाल पर सुन पड़ती है।**]

बनवीर (**क्रूर अट्टहास करता है**) ह ह ह ह ! दासी क्षत्राणी ! कर लिया कटार का वार ? यह कटार मेरे हाथ मे है। अब किससे वार करेगी ? अब तुझे भी समाप्त कर दूँ ? लेकिन स्त्री पर हाथ नही उठाऊँगा।

पन्ना अबोध सोते हुए बालक पर हाथ उठाते हुए तेरा हृदय तुझे नही धिक्कारता ? पापी !

बनवीर (**शैया के समीप जाकर**) यही है, यही है, मेरे मार्ग का कटक ! आज मेरे नगर मे स्त्रियो ने दीप-दान किया है। मै भी यमराज को इस दीपक का दान करूँगा। यमराज ! लो इस दीपक को। यह मेरा दीप-दान है।

[उदय के धोखे मे चन्दन पर जोर से तलवार का प्रहार करता है। पन्ना जोर से चीख कर मूर्च्छित हो जाती है। कमरे मे मन्द लौ से दीपक जलता रहता है।]

[यवनिका]

. 17

✥ दुर्गावती ✥

•

पात्र-परिचय

दुर्गावती—गढामण्डला की महारानी
वीरनारायण—महारानी दुर्गावती के पुत्र
दीवान अधारसिंह—महारानी दुर्गावती के महामात्य
हैदर अली—नवाब आसफखाँ का दूत
कर्णसिंह—महारानी दुर्गावती का सेनापति
पाण्डवी—महारानी दुर्गावती की अग-रक्षिका
गण्डासेन—कुवेर गज का महावत
सैनिक

•

काल—1564 ई०
समय—प्रात काल 8 वजे
स्थान—राजमहल के कक्ष के सामने

दुर्गावती

[नेपथ्य मे हाथियो के चलने का शब्द। उनके दोनो ओर झूलती हुई घण्टियाँ बारी-बारी से ध्वनि दे रही हैं। यह ध्वनि क्रमश दूर होती जा रही है। दीवान अधारसिंह और वीरनारायण बातें कर रहे हैं।]

वीर० : (हल्की हँसी हँसकर) बडे सुन्दर हाथी है, महामात्य! प्रात कालीन उज्ज्वल सूर्य किरणो मे ये काले हाथी कितने भले मालूम देते है, जैसे सहसा प्रकाश के आ जाने से अन्धकार गोल चक्रो मे सिमिटकर धीरे-धीरे क्षितिज की ओर बढता जा रहा है। [फिर हल्की हँसी]।

अधार० (चिन्ता के स्वर में) हूँ

वीर० (दूर जाते हुए हाथियो को गिनते हुए) एक दो तीन चार पाँच पाँच...छ.. सात...आठ! आठ हाथी! भूमि का बोझ सँभाल चुकने के बाद जैसे ये आठो दिग्गज अब आकाश का बोझ सँभालने के लिए भूमि पर आ गये है। (हँसी) और इन्हे कितनी सुन्दर पत्रावलियो की चित्रकारी से सजाया गया है, महामात्य! रक्तचन्दन, शख-भस्म, गेरू और राम-रज के रगो से कानो पर कमल की कलियाँ, गण्डस्थलो पर लहरो की हिलोरे और सूँडो पर गोल पत्तो के बीच मे कुमुद के फूल कितनी सुन्दरता के साथ बनाये गये है, जैसे ये हाथी अपने मस्तक पर मानसरोवर की शोभा सँवारे हुए जा रहे है। इन हाथियो के महावतो को उनकी चित्रकला पर पुरस्कार देना चाहिए, महामात्य!

अधार० (चिन्ता भरे स्वर मे) हूँ

वीर० इनमे पाँचवाँ और आठवाँ हाथी! क्या नाम है इनका? शायद कुवेर गज और कुमारगज।

अधार० (वैसे ही चिन्ता भरे स्वर मे) हूँ..

वीर० इन दोनो हाथियो की आँखो के चारो ओर कितने सुन्दर कमल बनाये गये है! ऐसा ज्ञात होता है जैसे कमलो के बीच मे हाथियो की आँखे भ्रमर बनकर उन कमलो का मकरन्द पान कर रही है।

अधार० (अन्यमनस्कता से) हूँ

वीर० : आपका ध्यान किसी दूसरी ओर है, महामात्य! आप इस प्रकार उदासीनता से क्यो बोल रहे है?

अधार० · राजकुमार ! आप बुरा न मानें। मेरा ध्यान इस समय इन हाथियो की शोभा की ओर नही है।

वीर० वाह, इतने सुन्दर हाथी ! जो पर्वत की भाँति विशाल होकर भी आँखो मे भूलते है। भारी होकर भी इतने हलके ! इनकी शोभा से तो आँखे खिल उठती है जैसे काले बादलो की शोभा मे बिजली चमक उठती है।

अधार० ठीक है, राजकुमार ! आपकी कविता की कल्पनाओ से मेरी राजनीति की गुत्थियाँ नही सुलझ सकती। इस समय प्रश्न यह है कि इन आठ हाथियो के बाद नवाँ हाथी महेन्द्रगज कहाँ है ?

वीर० महेन्द्रगज ? वह माँ की सेवा मे होगा। वह उनका प्रिय हाथी है।

अधार० वह महारानी की सेवा मे नही है। चार दिन पहले मैंने आदेश दिया था कि आज प्रात काल महारानी के नवो हाथियो को स्नान कराकर सुसज्जित किया जाये और मेरे समक्ष उनका प्रदर्शन हो।

वीर० तब तो आपकी आज्ञा के अकुश से कोई हाथी बहक नही सकता। महेन्द्रगज को आपके समक्ष अवश्य ही आना चाहिए।

अधार० किन्तु न वह इन आठ हाथियो मे है और न इनके बाद।

वीर० यह तो स्पष्ट है क्योकि महेन्द्रगज का रग कपूर की भाँति सफेद है। वह इन तमालवर्णी हाथियो मे तो स्पष्ट ही देखा जा सकता था।

अधार० (गम्भीरता से) . हूँ . .

वीर० फिर महेन्द्रगज कहाँ जा सकता है ?

अधार० मुझे इसमे किसी षड्यन्त्र की दुर्गन्ध मिल रही है।

वीर० : षड्यन्त्र की ?

अधार० हाँ, किसी भयानक षड्यन्त्र की। ऐसे षड्यन्त्र की जिसमे राज्य के किसी विशेष कर्मचारी का हाथ है।

वीर० महामात्य ! कविता की कल्पना की भाँति मेरी तलवार की धार भी बहुत पैनी है। आप पता लगाइए कि किस कर्मचारी ने षड्यन्त्र की योजना की है। मेरी तलवार एक क्षण मे उसके रक्त से महाकाल भैरव का अभिषेक करेगी।

अधार० इस बात का विश्वास है, राजकुमार ! किन्तु इन कार्यो मे शक्ति की अपेक्षा बुद्धि की अधिक आवश्यकता हुआ करती है। षड्यन्त्र के मुख और उद्गम-स्थान की दूरी मे न जाने कितने विषैले जन्तु छिपे रहते हैं। मस्तक की पीडा केवल मस्तक की व्याधि नही है, उसका उद्गम उदर-विकार मे है। उदर मे बीज है, उसका विष-फल मस्तक मे है। षड्यन्त्र भी व्याधि-विकार की भाँति बढने मे विश्वास रखता है।

वीर० तो महेन्द्रगज किस प्रकार षड्यन्त्र का केन्द्र हो सकता है ?

अधार० : महेन्द्रगज की भाँति सफेद हाथी विरले है। शक्ति, शोभा और स्वभाव मे वह अद्वितीय है। महारानी को वह अपने आत्म-सम्मान की भाँति प्रिय है।

वीर० · यह तो मैं जानता हूँ, महामात्य !

अधार० तो महारानी के आत्म-सम्मान की भाँति वह हाथी भी राजाओ और नवाबो की आँखो मे खटक रहा है ।

वीर० इसकी भी मुझे सूचना है ।

अधार किन्तु मेरा अनुमान है कि इस सूचना ने पड्यन्त्र का रूप ले लिया है ।

वीर० कैसे ?

अधार० कडा-मानिकपुर का पजहजारी सूबेदार आसफखाँ इसके पीछे है ।

वीर० सूबेदार आसफखाँ ?

अधार० हाँ, सूबेदार आसफखाँ । पिछले पद्रह वर्षो मे महारानी ने जिस योग्यता से गढामण्डले का शासन किया है उससे आसफखाँ के मन मे द्वेषाग्नि जल सकती है ।

वीर० यह द्वेषाग्नि ही उसे समाप्त करेगी, महामात्य !

अधार० महारानी ने अपने त्रैलोक्य-विश्रुत यश तथा हिमालय के समान उत्तुग स्वर्ण-मन्दिरो के निर्माण-द्वारा पृथ्वी का रूप ही परिवर्तित कर दिया है । हमारे राज्य मे रत्न-खानियो के समान बहुमूल्य रत्न जहाँ-तहाँ फैले हुए है और इन्द्र के ऐरावत की भाँति अनेक मत्त मतगज हमारे द्वार पर झूला करते है । नवाब आसफखाँ के लिए यह सब असह्य हो गया है ।

वीर० : तो इससे हम डरनेवाले नही है, महामात्य !

अधार० : ठीक है । आपकी ही बात मुझे याद आ रही है, कही काले बादलो से आकाश डर सकता है ? किन्तु इसकी पूर्ण व्यवस्था करनी आवश्यक है । आसफ-खाँ के विचार गढामण्डले के सम्बन्ध मे अत्यन्त कलुषित और पतित है । वह समझता है कि एक निस्सहाय नारी के हाथो से इतनी बडी सम्पदा आसानी से छीनी जा सकती है ।

वीर० वह आक्रमण करके देख क्यो नही लेता ?

अधार० उसी की यह भूमिका है कि आज महेन्द्रगज अन्य आठ हाथियो के साथ नही दीख पडा । नवाब आसफखाँ ने एक बार यह प्रस्ताव किया था कि महारानी महेन्द्रगज को भेट-स्वरूप भिजवाने की व्यवस्था करे ।

वीर० नवाब आसफखाँ कब से अपने को भेट का अधिकारी समझने लगा ?

अधार० जब से उसने इस सम्बन्ध मे मुगल-सम्राट् जलालुद्दीन अकबर की स्वीकृति प्राप्त कर ली है ।

वीर० अच्छा ! किन्तु मुगल-सम्राट् की स्वीकृति हमारे लिए मान्य नही हो सकती ।

अधार० नही हो सकती, राजकुमार ! हमारा राज्य सब प्रकार से स्वाधीन है और हम अपने राज्य के नियमो से ही शासित हो सकते है । बाहरी कोई नियम हमारे लिए आदेश का रूप नही ले सकते । इसीलिए महारानी ने इस प्रस्ताव पर कोई ध्यान नही दिया ।

वीर० : तो महेन्द्रगज कहाँ है ?

अधार० · गढामण्डले की सीमा पर कुछ उपद्रव हुए है। कुछ यवन सैनिक छद्मवेश मे हमारे राज्य मे अशान्ति मचा रहे है। कल मैने ऐसे सात षड्यन्त्रकारियो को बन्दी बनाकर उनके दण्ड की व्यवस्था दी है किन्तु अभी और भी छद्मवेशी यवन होगे। उनसे सम्भवत हमारे यहाँ के कुछ कर्मचारी भी मिले हो और उन्ही लोगो के षड्यन्त्र से महेन्द्रगज गायब कर दिया गया हो। मुझे चिन्ता इस बात की है कि कही महेन्द्रगज कडा-मानिकपुर न भेज दिया गया हो !

वीर० क्या इसकी सम्भावना हो सकती है ?

अधार० सम्भावना तो कम है किन्तु हमारी प्रजा के लोग अपनी सरलता मे दूसरे पर सहसा विश्वास कर लेते है। यह सरलता मनुष्य को जितना ऊपर उठाती है शत्रुओ को उतना ही अधिक उग्र बना देती है।

[नेपथ्य मे कोलाहल होता है—'आप कौन हैं ?'
—'आप कहाँ से आये है ?'
—'जनाब, मै दीवान साहब से मिलना चाहता हूँ।'
—आप दीवान साहब से क्यो मिलना चाहते है ?
आदि सम्मिलित बातें सुनायी पडती है।]

[एक सैनिक का प्रवेश]

सैनिक महाराज की जय हो ! एक दूत सेवा मे आने की आज्ञा चाहता है।

अधार० दूत ? कहाँ से आया है ?

सैनिक महाराज ! वह कडा-मानिकपुर से सेवा मे उपस्थित हुआ है।

वीर० कडा-मानिकपुर से ?

अधार० क्या नवाब आसफखाँ की ओर से आया है ?

सैनिक : हाँ, महाराज !

अधार० क्या चाहता है ?

सैनिक पूछने पर भी नही बतलाता। महाराज की सेवा मे आने की आज्ञा चाहता है।

अधार० : उसका नाम ?

सैनिक हैदर अली।

अधार० **(सोचते हुए)** हैदर अली !.. कडा-मानिकपुर से ! नवाब आसफखाँ ने भेजा है !

वीर० **(उग्रता से)** वह किसलिए यहाँ आ सकता है ?

अधार० शत्रुता का बहाना मोल लेने के लिए। **(सैनिक से)** सैनिक, उसे यहाँ भेजो।

सैनिक जो आज्ञा ! **[प्रस्थान]**

वीर० इसका सम्बन्ध भी षड्यन्त्र से हो सकता है।

अधार० · राजनीति मे सब कुछ सम्भव है ।

वीर० : तब तो हमे प्रत्येक क्षण प्रस्तुत रहना चाहिए ।

अधार० · पिछले कुछ दिनो से जैसी घटनाएँ सामने आ रही है उनसे तो यही ज्ञात होता है कि यह किसी भयानक भविष्य की भूमिका है । यह तो महारानी के राज्य की सुदृढता का प्रमाण है कि चिनगारी आग लगाने के पूर्व ही बुझा दी जाती है । चिनगारियो को फूंक मारकर लपट बनाने मे यवनो की साँसे निरन्तर उग्र बनती जा रही है, किन्तु (**दूत का प्रवेश । उसे देखकर**) अच्छा... तुम...?

दूत (**झुककर सलाम करता हुआ**) वजीरे-आजम की खिदमत मे हैदर अली आदाब बजा लाता है ।

अधार० : फरमाइये, आपने इधर का रुख कैसे किया ?

हैदर० आलीजाह, बन्दा कडा-मानिकपुर से हाजिर हुआ है । आला हज़रत नवाब आसफखाँ बहादुर ने हुजूर की खिदमत मे मुझे हाजिर होने का हुक्म दिया है ।

अधार० नवाब आसफखाँ बहादुर ने ? किसलिए ?

हैदर० हुजूर, शक करने की कोई बात नही है । नवाब साहब बहादुर के दिल मे हुजूर ने जो जगह हासिल की है वह शायद दुनिया के किसी इन्सान को मयस्सर नही हो सकी । सुबहो-शाम जब आपका चर्चा चलता है तो हुजूर ! मालूम होता है गोया सारी फिजा हुजूर के नाम से गूंज उठी है । नवाब साहब बहादुर फरमाते थे कि अगर हुजूर जैसे दीवान उनकी सल्तनत मे रौनक-अफरोज होते तो वो दुनिया के हर सिम्त मे हुकूमत का नक्कारा बजवा सकते थे ।

अधार० · यह आपके नवाब बहादुर की इज्जत-अफजाई है मगर हमारे राज्य का जो कुछ भी नाम है वह सब महारानी दुर्गावती का प्रताप है ।

हैदर० : आफरी ! सद आफरी ! क्या कहना है, हुजूर दुर्गावती महारानी का ! वो तो नूर की देवी है ! जिस वक्त हाथी पै सवार होके वो मैदाने-जग के लिए रवाना होती है तो क्या कहना है, हुजूर ! मालूम होता है कि गोया बिहिश्त है जो अपने हजार जल्वे से तमाम रूए-जमीन पर फैल गया है । हुजूर, अगर मुबालिगा न समझा जाये तो मै अर्ज करूँगा कि अगर दमकती हुई बिजली इन्सान की शक्ल अख्तियार करे तो शायद उसका नाम महारानी दुर्गावती हो सके !

अधार० (**मुस्कराकर**) सुन रहे है, राजकुमार ?

हैदर० (**राजकुमार को देखकर**) ओहो, राजकुमार साहब है ! आदाब बजा लाता हूँ । (**दीवान अधारसिंह को सम्बोधन करते हुए**) आलीजाह ! क्या कहने है, राजकुमार साहब के । राजकुमार साहब के तेवर ऐसे है गोया तेज कटार है जो मखमली म्यान मे पोशीदा है । मुस्कराते है गोया मौसमे-बहार मे हर शाख मे फूल खिल उठते है । मै तो सदके जाता हूँ जनाब राजकुमार साहब के ।

अधार० तुम बहुत अच्छी बाते करते हो, हैदर अली ! किसलिए तुमने यहाँ तक आने की तकलीफ गवारा की ?

हैदर० : अब हुजूर ! क्या अर्ज करूँ ! हुजूर के जाहोजलाल के आफताब के आगे किस्मत की तारीकी कभी ठहर सकती है ? हुजूर ! अच्छी तरह से यकीन रखे कि वह दिन जल्द आयेगा जब तमाम दुनिया मे हुजूर का नाम रौशन हो जायेगा। उसी रोशनी की एक किरन पाने के लिए बन्दा ख़िदमत मे हाज़िर हुआ है।

अधार० अच्छा ?

हैदर० हाँ, हुजूर ! कौन है जो बुलन्द-इकबाल महारानी की अजमत का जल्वा देखने का मुश्ताक नही है ? कौन है जो शहरयार वजीरे-आजम अधारसिंह की कदमबोसी करने मे अपनी खुश-किस्मती नही समझता ? बहादुरी, जाँनिसारी, वफादारी तो हुजूर मे तीन-तिरबेनी की शक्ल अख़्तियार कर रही है। कौन है हुजूर ! जो राजकुमार साहब के उरूज के लिए दुआएँ नही माँगता ?

अधार० ठीक है, हैदर अली ! हम तुम्हारी शीरी-जबानी से बहुत खुश हुए लेकिन साफ-साफ कहो कि तुम्हारे आने का क्या खास मकसद है ?

हैदर० (ख़ुशामदाना स्वर मे) हूँहूँहूँहूँ हुजूर ! क्या अर्ज करूँ ! यो तो हुजूर की दोस्ती का जिक्र हमारे दरबारे-मुबारक मे नवाब साहब बहादुर हमेशा ही करते रहते है और वो हर ख़ासोआम की जबान पर है लेकिन हुजूर ! दुनिया के लोग है कि सुनते है और भूल जाते है ! शायद इसलिए कि दरबारे-मुबारक मे नवाब साहब बहादुर को बार-बार हुजूर का जिक्रे-खैर करने का मौका मिले।

अधार० यह आपके नवाब साहब बहादुर की मेहरबानी है।

हैदर० हुजूर, यह आपका अख़लाक है लेकिन यह जो हुजूर मे और हमारे नवाब साहब बहादुर मे मुहब्बत है, एकदिली है, अगर दुनिया पर उसके रौशन होने का कोई जरिया होता तो क्या कहना है, हुजूर ! यह हुजूर और नवाब साहब बहादुर के लिए जरूरी नही है, यह हमारे दुश्मनो के लिए जरूरी है।

अधार० ठीक है, लेकिन यह तो बतलाइए कि वह जरिया क्या हो सकता है ?

हैदर० : निहायत बजा इरशाद है, हुजूरेवाला ! बिलकुल ठीक है, गरीब-परवर ! लेकिन ख़ता मुआफ हो। मै क्या अर्ज कर सकता हूँ ! लेकिन नवाब साहब बहादुर ने अपनी तरफ से यह तजवीज फरमायी है कि . . ..

अधार० हाँ, हाँ, कहिये। रुक क्यो गये ?

हैदर० हुजूर, नवाब साहब बहादुर ने यह फरमाया है कि अगर बुलन्द-इकबाल महारानी दुर्गावती अपना सुफेद हाथी महेन्दरगज अता फरमाने की मेहरबानी कर सके तो

वीर० : (उग्रता से कड़े स्वर मे) हैदर अली !

अधार० पूरी बात कहो, हैदर अली !

हैदर० · हुजूर ! अगर इस नादान की जबान से कोई गलत जुमला निकले तो उसे तराश देने का हुक्म फरमाये लेकिन मुझ नाचीज के जरिये नवाब साहब बहादुर ने महज दोस्ती को मुस्तहकम करने के लिए एक अदना-सा सवाल पेश किया है।

अधार० और कुछ ?

हैदर० हुजूर, शहशाहो की बात शहशाह ही जान सकते है। इस गरीब को तो इस मामले के बाबत गुजारिश करने का ही हक है। खता मुआफ हो, नवाब साहब बहादुर ने यह भी फरमाया है कि महेन्दरगज का इस्तकबाल करने के लिए वो खुद तीन दिन तक इन्तजार करने के बाद गढा मण्डले के बाहर जल्वाअफरोज़ होगे।

अधार० . अकेले या अपनी फौज के साथ ?

हैदर० : अब हुजूर ! जिस तरह आफताब के साथ रोशनी रहती है उसी तरह नवाब साहब बहादुर जिधर भी तशरीफ ले जायेगे उधर ही उनकी फौज जायेगी।

अधार० (**दृढता से**) हूँ ! तो इसके मानी यह है कि तुम्हारे नवाब साहब बहादुर को महेन्द्रगज भेट किया जाये और अगर तीन दिन के बाद यह नही हुआ तो नवाब साहब बहादुर खुद फौज लेकर गढामण्डले पर चढाई करेगे ?

हैदर० (**विनम्रता से**) अब हुजूर ! इसके मुतअल्लिक कुछ जियादह अर्ज़ करना इस नाचीज के लिए मुनासिब न होगा।

वीर० · बात बिलकुल साफ और सीधी है। यह एक धमकी और चुनौती है। यह लडाई लडने का एक बहाना है।

अधार० हैदर अली ! यह बात पहले भी नवाब साहब बहादुर की तरफ से कही जा चुकी है जब वो पजहजारी मनसबदार नही थे। पहले इसका सिर्फ इशारा किया गया था। अब बात साफ ढग से कही गयी है।

हैदर० तब तो हुजूर ! उस पर गौर करना लाजमी है। बजाते-खुद यह नाचीज सियासी मुआमलात मे इशारे को ना-काफी समझता है। हुजूर ने उस इशारे को नाकाबिले-गौर समझकर अपनी सियासत की बहुत ऊँची मिसाल पेश की है। लेकिन इस वक्त यह नाचीज अपने नवाब बहादुर की साफगोई की दाद का ख्वास्तगार है। जवाबे-मजमून यह नाचीज ही लिख लेगा।

अधार० हैदर अली ! तुम्हे और कुछ कहना है ?

हैदर० : और कुछ नही, हुजूर ! यह बन्दा हुजूर के अल्ताफो-करम का मुहताज है।

[**एक सैनिक का प्रवेश**]

सैनिक महाराज की जय हो ! कल महाराज ने जिस षड्यन्त्र को तोडा है उस सम्बन्ध मे महाध्यक्ष कर्णसिह आपकी सेवा मे कुछ निवेदन करने की आज्ञा चाहते है।

अधार० . उन्हे शीघ्र ही यहाँ भेजो।

हैदर० तो गरीबपरवर जो हुक्म फरमाये उसे ब-सरो-चश्म मैं नवाब साहब बहादुर

की खिदमत मे अर्ज करूँ।

अधार० तुम अभी ठहरोगे हैदर अली ! बात अभी पूरी नही हुई।

वीर० हैदर अली ! कल से महेन्दरगज का कही पता नही है। हमारे राज्य की व्यवस्था मे कही भी किसी प्रकार की शिथिलता नही रही है। कुछ दिनो से, जब से तुम लोग यहाँ आने लगे हो, हमारे यहाँ कभी-कभी ऐसी बाते हो जाया करती हैं जिन्हे हम कभी स्वप्न मे भी नही सोच सकते।

हैदर० इस नाचीज से तो कोई गुस्ताखी कभी नही हुई, गरीबपरवर।

[**महाध्यक्ष कर्णसिंह का प्रवेश**]

कर्णसिंह . महामात्य की जय हो !

अधार० महाध्यक्ष कर्णसिंह !

कर्णसिंह हाँ, महामात्य ! आपकी सेवा मे यह निवेदन करना चाहता हूँ कि कल आपने षड्यन्त्र के सात बन्दियो को दण्डित किया था। जब दुष्टसाध्य ने दण्ड देने की तैयारी की तो दण्डित व्यक्तियो मे से एक ने मृत्यु-भय से अपना दोष स्वीकार कर लिया।

अधार० दोष स्वीकार कर लिया ? इसीलिए मैने मृत्यु-दण्ड की व्यवस्था दी थी। ठीक है, कौन है वह ? उसका क्या नाम है ?

कर्णसिंह उसका नाम गण्डासेन है, महामात्य !

वीर० तुम कॉप क्यो उठे, हैदर अली ?

हैदर० (**सँभलते हुए**) अँअँअँअँअँ, कॉपता नही हूँ, गरीबपरवर ! मेरे जिस्म का एक-एक रोयाँ हुजूर का नाम ले रहा है।

अधार० (कुछ हँसकर) बहुत खूब ! उस रोये की जबान भी अभी खुल जायेगी। (**कर्णसिंह से**) हाँ तो महाध्यक्ष ! उसका नाम गण्डासेन है ?

कर्णसिंह हाँ, महामात्य !

अधार० अच्छा, वह कुछ समय तक कुबेरगज का महावत भी तो रह चुका है। उसने अपना दोष स्वीकार कर लिया ?

कर्णसिंह : हाँ, महामात्य !

अधार० विवरण दो।

कर्णसिंह · विवरण देने मे असमर्थ हूँ, महामात्य ! अनेक बार पूछने पर भी उसने अपना अपराध विस्तार से नही कहा। वह कहता है कि महामात्य के सामने ही वह अपना अपराध निवेदन करेगा।

अधार० उसे तुम अपने साथ लाये हो ?

कर्णसिंह हाँ, महामात्य ! वह यही द्वार पर उपस्थित है।

अधार उसे मेरे सामने उपस्थित करो।

कर्णसिंह जो आज्ञा ! [**प्रस्थान**]

अधार० : (**हैदर अली से**) तो हैदर अली ! तुम कॉप नही रहे थे ? तुम्हारे जिस्म

का एक-एक रोयाँ राजकुमार का नाम ले रहा था !

हैदर० हुजूर, दरख्त अपनी गिजा जमीन से जरूर लेता है मगर उसका सिर हमेशा आसमान के कदमो के नीचे रहता है, उसी तरह हुजूर ! मेरा आबो-दाना जनाब नवाब साहब बहादुर के हाथो मे जरूर है लेकिन मेरा सिर तो हुजूर के कदमो के नीचे है । हँहँहँहँहँहँ, हुजूर के कदमो के नीचे है !

वीर० : महामात्य ! इस षड्यन्त्र-उद्घाटन और अपराध-स्वीकार की सूचना मै शीघ्र ही माँ को देना चाहता हूँ ।

अधार० : हाँ, अवश्य ही दे देनी चाहिए । इस समय तक उनकी पूजा भी समाप्त हो गयी होगी ।

वीर० : मै जाता हूँ । प्रणाम ! [**प्रस्थान**]

अधार० . हाँ, जाइए । (**ठहरकर**) पर, हाँ, सुनिये राजकुमार ! महारानी की सेवा मे यह भी निवेदन कर देना कि यदि उन्हे कुछ अवकाश हो तो कुछ देर के लिए यहाँ भी आने का कष्ट करेगी ।

वीर० अवश्य ही निवेदन कर दूँगा । प्रणाम ! [**प्रस्थान**]

अधार० (**हैदर अली से**) हैदर अली, गण्डासेन को तुम जानते हो ?

हैदर० गरीबपरवर, हुजूर के खादिमो को जानना भी बायसे-फख्र है । यो तो यह नाचीज गण्डासेन की पहचान का हकदार नही ; ताहम उसका नाम बहुत बार सुना है और हुजूर नाम भी कितना अच्छा है । गण्डासेन ! गण्डासेन ! हजारो मे अच्छा नाम है, हुजूर, गण्डासेन !

[**महामात्य कर्णसिह का गण्डासेन के साथ प्रवेश । गण्डासेन के हाथ जंजीरो से कसे हुए है, अतः जब वह भावावेश मे बात करता है तो हाथ हिलने से जजीर का शब्द होता है । वह आते ही महामात्य के पैरो के पास गिर पडता है और उसकी जंजीरें झनझना उठती हैं ।**]

गण्डासेन · (**करुण स्वर से**) महाराज ! महाराज ! मुझे बचाइये ! मुझे पाप से बचाइये ! मै पापी हूँ, विश्वासघाती हूँ, मैंने आपका बहुत बडा अपराध किया है, मुझे नरक मे भी जगह नही मिलेगी ! नही मिलेगी ! मैं पापी हूँ ! मै पापी हूँ, महाराज ! [**सिसकने लगता है ।**]

अधार० गण्डासेन !

गण्डासेन : महाराज ! मैने महारानी दुर्गावती का नमक खाया, पर उस नमक का मैंने बडा अपमान किया । जिस माँ ने मेरी परवरिश की, उसी माँ की गोद मे मैने अगारे भर दिये । महाराज ! ऐसा पापी दुनिया मे कही न होगा । पूरब जनम के पापो से मेरी मति भ्रष्ट हो गयी । मुझे बचाइये ! मेरे पापो से मुझे बचाइये ! [**सिसकियाँ**]

अधार० . सावधान बनो, गण्डासेन ! (**गण्डासेन की सिसकियाँ बन्द होती है ।**)

स्पष्ट कण्ठ से अपनी बात कहो। (महाध्यक्ष कर्णसिंह से) इसे खडे होने के लिए कहो, महाध्यक्ष !

कर्णसिंह गण्डासेन ! खडे होकर महामात्य के सामने अपना अपराध स्वीकार करो।

[गण्डासेन खडा होता है। उसकी जजीरें बज उठती हैं।]

गण्डासेन . महाराज ! मैं माफी नही चाहता। मौत से थोडा भी नही डरता। आप चाहे तो इसी दम तलवार से मेरा गला कटवा दे। पर मैं आपके सामने अपना पाप कहकर मर जाना चाहता हूँ जिससे मेरा प्रायश्चित्त हो जाये और मेरा परलोक न विगडने पाये।

अधार० हाँ, बोलो, तुम क्या कहना चाहते हो ?

गण्डासेन महाराज ! आपके सामने अपना अपराध कह देना मुझे नरक से बचा देगा। दो दिनो तक लगातार जागने के बाद कल शाम को मुझे नीद आ गयी। मैंने सपने मे देखा कि महारानी दुर्गावती महेन्दरगज हाथी पर बैठ के जा रही है। रेशमी कपडे पहने है, सिर पर मुकुट, हाथ मे तलवार, माथे पर रक्त-चन्दन की खौर, उनके उजले शरीर पर बडी भली मालूम दे रही थी। आप भी महाराज ! उनके साथ-साथ घोडे पर सवार हो के जा रहे हैं।

अधार० अपनी बाते सक्षेप मे कहो।

गण्डासेन महाराज, सक्षेप ही मे कहूँगा। तो महारानी महेन्दरगज पर बैठकर आगे-आगे जा रही है। मैं महावत बनकर उनका हाथी चला रहा हूँ। महाराज, न जाने महेन्दरगज को क्या सूझा कि उसने अपनी सूँड से मुझे पकडकर आसमान मे फेक दिया और मैं सितारो मे उलझता हुआ जैसे ही जमीन पर गिरा तो मेरे हाथ-पैर टूट गये। मैं जोर से कराहने लगा। आप घोडे से उतर गये। महारानी भी महेन्दरगज से उतर पडी और उन्होने मुझे गोद मे ले लिया। फिर अपने माथे का रक्त-चन्दन अपनी हथेली मे लिया और मेरे टूटे हुए हाथ-पैरो पर अपना हाथ फेर दिया। मेरे हाथ-पैर बिलकुल अच्छे हो गये। महाराज ! उसी वक्त मेरी नीद खुल गयी। मैं रोने लगा और सोचने लगा कि जो महारानी अपनी प्रजा के साथ बच्चे की तरह ममता रखती है, उन्ही महारानी के साथ मैंने विश्वासघात किया। महारानी के सामने जाने की मेरी हिम्मत नही है। इसलिए महाराज ! आपके सामने ही अपने पाप का प्रायश्चित्त करना चाहता हूँ ! फिर चाहे आप मुझे मौत की सजा क्यो न दे दे।

अधार० अपने अपराध को साफ शब्दो मे कहो, गण्डासेन !

गण्डासेन महाराज ! वही बात कह रहा हूँ। मैंने घोर अपराध किया है। महेन्दरगज के गायब करने मे मेरा ही हाथ रहा है। आज जब मैं अपने चारो तरफ देखता हूँ तो मेरे सामने अँधेरा ही (उसकी नजर हैदर अली पर पडती है) ऐं ! क्या हैदर अली ? ये हैदर अली ? महाराज, ये हैदर अली हैदर अली ! तुम इधर पहुँच भी गये ? चोर ! दगाबाज ! तुमने मुझे बरगलाया और . . .

और. तुम मुझे नवाब आसफखाँ का सदर फीलवान बनवाओगे ?

हैदर० अरे, अरे, भाई गण्डासेन ! तुम. तुम.. वल्लाह क्या कह रहे हो ?... मै मै .

गण्डासेन : चुप रहो हैदर अली !

हैदर० अरे अरे...वह हैदर अली कोई दूसरा होगा। वह वह . कोई दूसरा हैदर अली होगा। ..मै मै तो तुम्हारा पुराना दोस्त.

गण्डासेन महाराज ! यही हैदर अली है। एक रोज रात मे चुपके-से आया और मुझ से कहने लगा कि कडा-मानिकपुर के नवाब आसफखाँ बहादुर को शहशाह अकबर बादशाह ने पजहजारी मनसबदार बनाया है। उनकी शानो-शौकत का नवाब दुनिया मे कही देखने को नही मिलता।

अधार० (**तीव्रता से**) उसके बाद क्या हुआ ?

गण्डासेन : महाराज ! हैदर अली ने मुझ से कहा कि महारानी जी के पास जो सफेद हाथी महेन्दरगज है वह नवाब आसफखाँ को बेहद पसन्द है। पजहजारी मनसबदार के पास वैसा हाथी रहना भी चाहिए, इसलिए तुम उस हाथी को गायब कर दो। तुम्हे नवाब साहब सदर फीलवान बनाकर हमेशा अपने साथ रखेगे।

अधार० नवाब साहब का सदर फीलवान ! फिर तुमने वह हाथी गायब कर दिया ?

गण्डासेन नही कर सका, महाराज ! हैदर अली चाहता था कि वह हाथी मैं रातोरात कडा-मानिकपुर ले जाऊँ लेकिन कोट के चारो दरवाज़ो पर कडा पहरा था इसलिए मैने सिगौरगढ के पच्छिम मे साल वन मे ले जाकर बाँध दिया है।

अधार० : (**कर्णसिह से**) महाध्यक्ष, अश्व-साधनिक के पास साल वन जाने की सूचना भिजवा दो।

कर्णसिह जो आज्ञा ! [**प्रस्थान**]

हैदर० (**गिडगिडाते हुए**) हुजूर के इकबाल से. .

अधार० तुम चुप रहो, हैदर अली ! गण्डासेन की बात पूरी होने दो।

हैदर० : हुजूर ! अगर आफताब को भी रोकना चाहेगे तो हुजूर ! वह भी रुक जायेगा। मै तो हुजूर की जूतियो की खाक

अधार० (**गण्डासेन से**) तो तुम इस तरह बहकाये गये, गण्डासेन ?

गण्डासेन हाँ, महाराज ! हैदर अली ने मुझ से यह भी कहा कि नवाब साहब बहादुर ने महेन्दरगज लेने का पक्का इरादा कर लिया है। पहले मै चापलूसी करता हुआ नवाब साहब बहादुर का इरादा जाहिर करूँगा। एक तो दीवान साहब महेन्दरगज आसानी से देगे नही, अगर उन्होने देने की बात कही भी तो महेन्दरगज के गायब हो जाने से वे अपना वायदा पूरा नही कर सकेगे। दोनो हालतो मे नवाब साहब बहादुर गढामण्डले पर चढाई करके न सिर्फ हाथी, बल्कि बहुत-सी

दौलत भी लूट सकेगे। मुझ से कहा कि उस लूट मे तुम्हारा भी हिस्सा होगा, नही तो गढामण्डले के साथ तुम भी धूल मे मिला दिये जाओगे। अपनी जान देने और सदर फीलवान होने के साथ भारी दौलत पाने के बीच अपना फैसला कर लो।

अधार० और तुम सदर फीलवान बनने के साथ भारी दौलत पाकर अपनी मातृ-भूमि को जलता हुआ देखते ?

गण्डासेन महाराज ! महारानी दुर्गावती और आपका सपना देखने के बाद मुझे घोर पछतावा हुआ और मैं सारे समय आँसू बहाता रहा। महाराज ! मैंने घोर पाप किया है मुझे इस पाप से बचाइये ! इस पाप से बचाइये ! नही तो मेरी आत्मा परलोक मे भी तडपती रहेगी ! मुझे बचाइये !

[महाध्यक्ष कर्णसिंह का प्रवेश]

कर्णसिंह महाराज, अश्व-साधनिक को साल वन जाने की सूचना भिजवा दी गयी।

अधार० महाध्यक्ष, गण्डासेन को इस समय बन्दीगृह भिजवाने की व्यवस्था करो। इसके दण्ड की उचित व्यवस्था बाद मे होगी।

कर्णसिंह : जो आज्ञा ! **(गण्डासेन से)** गण्डासेन, बन्दीगृह चलो।

गण्डासेन **(अधारसिंह से)** महाराज ! मैंने अपने मन का पाप आपसे कह दिया। अगर अब मौत की सजा भी मिले तो मै सुख से मर सकूंगा। महारानी जी की सेवा मे भी मेरा प्रणाम पहुँचे ! महाराज को प्रणाम ! अब मैं सुख से मर सकूंगा, मर सकूंगा।

[कर्णसिंह के साथ गण्डासेन का प्रस्थान]

अधार० **(सोचते हुए)** तो षड्यन्त्र यह था ! जिसमे मुख्य रूप से भाग लेने वाले है हैदर अली और गण्डासेन ! **(हैदर अली से)** तो हैदर अली ! यह तुम्हारा ही काम था कि तुमने गण्डासेन की स्वामि-भक्ति मे आग लगायी। तुमने ही उसे सुनहले सपने दिखलाये। उसे बहकाया और राजद्रोह किया और उसमे भाग लिया। तुम्हारे लिए बहुत भयानक दण्ड की व्यवस्था करनी होगी।

हैदर० हुजूर का फैसला सिर-आँखो पर होगा।

अधार० गण्डासेन को तो बन्दीगृह भेजा गया, तुम्हे कहाँ भेजा जाये ?

हैदर० जहाँ हुजूर के कदमो का साया पडे।

अधार० तुम्हे अपने बारे मे कुछ कहना है ?

हैदर० यह नाचीज हुजूर का वक्त ज़ाया नही करना चाहता। दुनिया के लोगो को जो कुछ अच्छा लगता है, हुजूर ! वो लोग वही कहते है। आजकल किसी की बात काटना खुद अपनी जबान कटवाना है।

अधार० : तो अपनी जबान कटवाने मे तुम्हे कोई एतराज नही है ?

हैदर० हुजूर के हाथो जबान क्या सिर भी कट जाये तो यह मेरी खुशकिस्मती का बायस होगा।

अधार० : जो कुछ गण्डासेन ने कहा उसके मुतल्लिक तुम्हे कुछ कहना है ?

हैदर० हुजूर ! नमक से बढकर जबान की कोई गिजा नही है ! जबान जो नमक खाती है उसी नमक की बात बोलती है हुजूर ! अगर इसे कुसूर समझते हैं तो बन्दा दुनिया का सबसे बड़ा कुसूरवार है।

अधार० लेकिन नमक खाने वाली जबान जो कुछ भी कहे सचाई से कहे, तलवार की काट न करे।

[अगरक्षिका पाण्डवी का प्रवेश]

पाण्डवी : महामात्य की जय हो !

अधार० : कौन ? अगरक्षिका पाण्डवी !

पाण्डवी हाँ महामात्य ! आपकी सेवा मे मुझे यह सूचना निवेदन करनी है कि महारानी अपनी पूजा समाप्त कर चुकी है। अन्तिम प्रार्थना शिव-ताण्डव-स्तोत्र सुन रही है। यहाँ शीघ्र ही आनेवाली है।

अधार० : इस समय की घटनाएं उनकी प्रतीक्षा भी कर रही है। हम महारानी का स्वागत करने के लिए प्रस्तुत हैं।

[पाण्डवी का प्रस्थान। नेपथ्य मे शिव-ताण्व-स्तोत्र नारी-कण्ठ के सम्मिलित स्वर मे सुन पडता है।]

जटाटवी-गलज्जल-प्रवाहपावितस्थले
गलेऽवलम्ब्य लम्बितां भुजङ्ग-तुङ्ग-मालिकाम्।
डमड्-डमड्-डमड्-डमन्निनादवड्डमर्वयं
चकार चण्डताण्डवं तनोतु नः शिवः शिवम्॥

... ...

प्रचण्ड-वाडवानल-प्रभा-शुभप्रचारिणी
महाऽष्टसिद्धिकामिनी-जनावहूत-जल्पनी।
विमुक्तवामलोचना विवाहकालिकध्वनि
शिवेति मन्त्रभूषणा जगज्जयाय जायताम्॥

[शख-ध्वनि होती है। सम्मिलित स्वर से]

म हा रा नी दु र्गा व ती की ज य !

[अगरक्षिका के साथ महारानी दुर्गावती का प्रवेश। पीछे वीर-नारायण है।]

अंग० : महारानी दुर्गावती की जय !

अधार० : राजरानी दुर्गावती की सेवा मे अधारसिंह का प्रणाम स्वीकार हो !

हैदर० : राजरानी दुर्गावती की सेवा मे हैदर अली का परणाम ईकार हो।

दुर्गावती महामात्य ! भगवान् भैरव को आज पचास नवीन हाथियो ने दुग्ध से अभिषेक किया है ! इन नवीन हाथियो का विवरण मै जानना चाहती हूँ।

अधार० : महारानी, यह आपके शासन की समृद्धि है कि जन-साधारण चाँदी के

सिक्को मे भूमि-कर न चुका कर सोने की मोहरो और हाथियो मे चुकाते हैं। कल तीन भूमिधरो ने अपना कर इन पचास हाथियो मे चुकाया है।

दुर्गावती इन हाथियो को भी सैनिक-शिक्षा दी जाये और भविष्य के युद्ध मे ये हाथी मेरे साथ महेन्द्रगज के सहायक बनकर रहेगे।

अधार० : जैसी आज्ञा !

दुर्गावती · किन्तु महेन्द्रगज के द्वारा आज भगवान् भैरव का अभिषेक नही हुआ ?

[महामात्य चुप हैं।]

दुर्गावती महामात्य ! आप चुप क्यो है ? महेन्द्रगज के द्वारा आज भगवान् भैरव का अभिषेक क्यो नही हुआ ?

अधार० महारानी ! महेन्द्रगज नही है।

दुर्गावती (तीव्रता से) महेन्द्रगज नही है ? मेरा प्रिय हाथी महेन्द्रगज नही है ? (वीरनारायण से) नारायण ! भगवान् भैरव के पूजन मे तुम आये थे। तुमने मुझे सूचना नही दी ?

वीर० आप पूजन मे व्यस्त थी, माँ ! मैने विघ्न डालना उचित नही समझा।

दुर्गावती यह कोई रहस्य तो नही है ? महामात्य ! जिस राज्य मे घटनाएँ रहस्य का अवगुण्ठन अपने मुख पर डाल लेती है, उस राज्य की दृष्टि अपने पैरो तक ही सीमित रह जाती है, अपने अग भी नही देख सकती। मेरी राजनीति मे रहस्य के लिए स्थान नही है। रहस्य कला के लिए वरदान हो सकता है, किन्तु राजनीति के लिए अभिशाप है।

अधार० महारानी, कल से मैं इसी रहस्य का उद्घाटन करने मे व्यस्त हूँ कि महेन्द्रगज कहाँ है।

दुर्गावती : कहाँ है ?

अधार० साल-वन मे।

दुर्गावती साल-वन मे ? क्यो ? दुर्गावती का सिंगौरगढ अन्न और वृक्षो से शून्य हो गया ?

अधार० : महारानी, यह सब एक भयानक भविष्य की भूमिका है। कडा-मानिकपुर का नवाब आसफख़ाँ जब से पजहजारी मनसबदार हुआ है तब से वह महेन्द्रगज को अपना हाथी समझना चाहता है।

दुर्गावती (बीच ही मे) महामात्य !

अधार० क्षमा करे, महारानी ! वह उस हाथी को पाने के लिए इतना प्रयत्नशील है कि उसने हमारे राज्य मे न केवल षड्यन्त्र करना प्रारम्भ किया वरन् हमारी प्रजा को भी पद-वृद्धि का लालच देकर बहकाना शुरू कर दिया है और उसी का यह परिणाम है कि महेन्द्रगज आज भगवान् भैरव का अभिषेक नही कर सका।

दुर्गावती आपने उस रहस्य का उद्घाटन किया ?

अधार० : हाँ, महारानी ! सात षड्यन्त्रकारी पकडे जा चुके हैं। एक षड्यन्त्रकारी ने

अपना अपराध स्वीकार कर लिया है। उसी से पता चला कि महेन्द्रगज को चोरी से कडा मानिकपुर ले जाने की योजना थी किन्तु वह योजना सफल नही हो सकी और इसीलिए महेन्द्रगज को साल-वन मे ही छिपा दिया गया।

दुर्गावती . षड्यन्त्रकारियो को प्राणदण्ड दिया जाये। अन्याय का दमन करने मे राजनीति को कोमल नही होना चाहिए। जहर का नाश करने के लिए ज़हर की ही आवश्यकता पडती है। हाँ, जिसने अपना अपराध स्वीकार किया है उसका निर्णय कुछ कोमलता से अवश्य किया जा सकता है और यह निर्णय आप करेंगे।

अधार० जैसी आज्ञा, महारानी!

दुर्गावती . और साल-वन की ओर किसी को भेजा गया?

अधार० : महाध्यक्ष कर्णसिह को आज्ञा दे दी गयी है कि वह अश्व-साधनिक को तुरन्त साल-वन भेजकर महेन्द्रगज को यहाँ ले आये।

दुर्गावती मै आज सध्या के पूर्व ही महेन्द्रगज को देखना चाहती हूँ।

अधार० वह इसके पहले ही आ जायेगा, महारानी! पर अभी एक बात का निर्णय करना शेष है।

दुर्गावती : निवेदन करो!

अधार० कडा-मानिकपुर के नवाब आसफखाँ की ओर से यह दूत आया है, हैदर-अली।

हैदर० बुलन्द इकबाल महारानी को परणाम!

दुर्गावती क्या फिर नवाब साहब की ओर से किसी बात का इशारा किया गया है?

अधार० : हाँ, महारानी! इस दूत के द्वारा यह कहलाया गया है कि यदि तीन दिन के भीतर महेन्द्रगज कडा-मानिकपुर नही भेज दिया गया तो नवाब साहब गढा-मण्डले पर चढाई कर देंगे।

दुर्गावती इस तरह का सन्देश तो शायद पहले भी भेजा गया था।

अधार० : सत्य है, महारानी! पर पहले केवल सकेत से यह बात कही गयी थी, प्रार्थना के ढग से प्रस्ताव किया गया था, अब समय की एक अवधि निश्चित कर दी गयी है और चढाई करने की धमकी भी दी गयी है।

दुर्गावती : क्या प्रस्ताव है?

अधार० . यदि तीन दिन के भीतर महेन्द्रगज मानिकपुर नही भेज दिया गया तो नवाब साहब *गढामण्डले* पर चढाई कर देंगे।

दुर्गावती : तीन दिन के भीतर?

अधार० : हाँ, महारानी!

दुर्गावती : (दोहराते हुए) यदि महेन्द्रगज कडा-मानिकपुर नही भेज दिया गया तो नवाब साहब चढाई कर देंगे।

अधार० हाँ, महारानी !

दुर्गावती इस सम्बन्ध मे हमारा रुख नवाब साहब को पहले ही समझ लेना चाहिए था लेकिन यदि वे न समझे हो तो यह कहला दीजिए महामात्य, कि नवाब साहब की शक्ति देखने की इच्छा हमारे मन मे भी है। वे महेन्द्रगज के रूप मे कोई बहाना खोजने की कोशिश न करे। वे बडी प्रसन्नता से गढामण्डले पर आक्रमण करे। हम उचित ढग से उनका स्वागत युद्ध-भूमि मे करेंगे।

अधार० : सत्य है, महारानी !

दुर्गावती और महेन्द्रगज दुर्गावती का ही महेन्द्रगज रहेगा, वह दुर्गावती के जीते-जी किसी दूसरे का नही हो सकता। नवाब साहब महेन्द्रगज के बहाने ही सही, सिंगौरगढ पर प्रसन्नतापूर्वक अपनी फौज लेकर चढाई करे। हम भी युद्ध के लिए तैयार रहेंगे।

अधार आपका आदेश सर्वमान्य है, महारानी ! आपने दर्जनो बार कवच धारण कर महेन्द्रगज पर बैठकर सेना के आगे भगवती दुर्गा की भाँति युद्ध किया है। आपका शुभ नाम महारानी दुर्गावती सार्थक है। (**हैदर अली से**) तुमने महारानी का आदेश सुना, हैदर अली ?

हैदर० बजाते खुद मैं अपने नवाब साहब बहादुर के इरादो से इत्तफाक नही रखता। सदरे आली ! लेकिन अपने मालिक के रूबरू यह नाचीज़ क्या अर्ज़ कर सकता है ? [**सिर खुजलाता है।**]

अधार० महारानी के सामने अपना सिर खुजलाने की बेअदबी न करो, हैदर अली !

हैदर० मुआफी का ख्वास्तगार हूँ, हुजूरे आली !

अधार (सहसा) अच्छा ! तुम्हारी टोपी से गिरा हुआ यह रगीन कागज कैसा ?

हैदर० कुछ नही, हुजूर !

अधार० . (**अगरक्षिका से**) अगरक्षिका पाण्डवी ! वह कागज़ उठाओ।

पाण्डवी जो आज्ञा ! यह लीजिये। [**कागज उठाकर महामात्य को देती है।**]

अधार० अच्छा, इस पर नवाब आसफखाँ बहादुर पजहजारी की मुहर भी है ?

दुर्गावती नवाब आसफखाँ पजहज़ारी की मुहर ?

अधार० हाँ, महारानी ! मैं पढकर अभी आपको सुनाता हूँ।

दुर्गावती अच्छा, तो सिर खुजलाने के बहाने यह पत्र हैदर अली द्वारा गिराया गया। राजनीतिक बातें स्पष्टता के साथ सामने क्यो नही लायी जाती ? क्या नर्तकी की भाँति राजनीति भी छल-छन्दो के साथ अपना शृगार करना आवश्यक समझती है ?

हैदर० मलकए-आलम ! हुजूर ! आपके तेवर देखकर इस नाचीज़ को नवाब साहब बहादुर का खत पेश करने की हिम्मत नही पडी। मेरे सिर के खुजलाते ही शायद वह खत भी काँप कर ज़मीन पर गिर पडा।

दुर्गावती काँपने की बात नही है, हैदर अली ! अपने नवाब साहब से जाकर कहो

कि दुर्गावती ने अपने शासन के पन्द्रह वर्षों मे केवल युद्ध मे लडना ही सीखा है। हमारे सैनिको को युद्ध का अभ्यास कराने की जो आवश्यकता पडती है उसके लिए नवाब साहब की चढाई हमारी चिन्ता का विषय नही है, हमारे उत्साह का विषय है।

अधार० · **(क्रोध से काँपते हुए)** नीच, दुष्ट, नारकी, तेरी यह हिम्मत ! **(हैदर अली से)** हैदर अली ! इस कागज के साथ हम तुम्हे भी जला देगे। **(महारानी से)** महारानी ! हम यह सहन नही कर सकेगे, सहन नही कर सकेगे। **[पत्र फेंक देते हैं।]**

दुर्गावती शान्त, शान्त, महामात्य ! यह कैसा कागज है ! पढकर सुनाओ।

अधार० · महारानी ! मुझे क्षमा करें। मै यह पत्र नही पढ सकूँगा। इसे पढना मेरे शरीर मे ज्वालामुखी की आग भडका देना है।

दुर्गावती पाण्डवी ! तुम यह पत्र पढो।

पाण्डवी जो आज्ञा ! **(पत्र उठाकर पढती है)** 'गढामण्डले की मलका महारानी दुर्गावती को आसफखाँ का सलाम कुबूल हो। अरसे से आपकी हुकूमत की शुहरत की रौशनी दूर-दूर तक फैली हुई है और उसे देखकर मुझे जो खुशी हो रही है उसका जिक्र बयान से बाहर है। आप जैसी मलका जिस मुल्क के तख्त पर रौनक अफरोज होगी आफताब भी उस मुल्क के जल्वे का मुहताज होगा। मुझे इस बात का अजहद रज है कि आपको खुद मुल्क का इन्तजाम करने मे इतनी जहमते गवारा करनी पडती है। अगर आप मुझे अपनी खिदमत करने का मौका दे तो मैं दिलोजान से हाजिर हूँ और आपके नूर से हमारे हरम को जो इज्जत मिलेगी उसकी मिसाल . . .'

दुर्गावती **(चीखकर बीच ही मे)** सावधान ! **(दाँत पीसते हुए)** लम्पट और विलासी यवन ! अपने हरम को हजारो सतियो के खून से नहलाकर अब उसे आग से रगना चाहता है ? महामात्य ! महाध्यक्ष को अभी सूचित करो कि युद्ध की तैयारी करे। सैनिको को अभी आज्ञा दो कि वे अपने शस्त्र सँभालकर तैयार हो जाये और. और

अधार० हम इस अपमान का बदला निश्चय ही लेगे, महारानी !

दुर्गावती : महामात्य ! सभी सैनिक महाकाल भैरव के समक्ष एकत्रित होकर युद्ध की शपथ ले और एक बार फिर रण-चण्डी का आवाहन हो !

अधार० . महारानी ! मैं आज अपने जीवन-भर की सेवाओ की शपथ लेकर आपके सामने यह प्रण करता हूँ कि महारानी के अपमान का प्रतिकार मैं अपने शरीर के रक्त की अन्तिम बूँद देकर भी करूँगा। अधारसिह के पीछे उसकी अटूट राजभक्ति का ही आधार रहा है। जिस दिन इस आधार पर आँच आयेगी उस दिन अधारसिंह इस ससार मे नही रहेगा। महारानी ! इस तलवार की साक्षी देकर **(तलवार निकाल लेता है)** मै यह घोषणा करता हूँ कि गढामण्डले के राज्य

की सीमा इसी तलवार की भाँति अखण्ड और अविभाजित रहेगी और जब तक यह तलवार मेरे हाथ मे है तब तक किसी भी आक्रमणकारी का प्रवेश महारानी के राज्य की सीमा मे न होगा। हैदर अली ! तुम्हारे नवाब साहब ने एक सिंहनी को युद्ध का निमन्त्रण दिया है जिसके पास साहस का कवच है और शक्ति की तलवार है।

हैदर० (घबराकर) मै मैं मैं इसकी ताईद करता हूँ, वजीरे-आजम !

[सैनिक का प्रवेश]

सैनिक (प्रणाम कर) महारानी जी की जय हो ! सेवा मे महाध्यक्ष उपस्थित होने की अनुमति चाहते है।

दुर्गावती : इस समय उनकी आवश्यकता भी है। उन्हे शीघ्र ही यहाँ भेजो !

सैनिक जो आज्ञा ! [प्रस्थान]

दुर्गावती हैदर अली ! तुम्हारे नवाब साहब यह समझते है कि वे एक अकेली नारी को युद्ध मे पराजित कर देगे, पर यह उनकी भूल है। मेरी एक बाहु कोटि बाहु है और एक कृपाण कोटि कृपाण है। मैं अपनी प्रजा की जननी हूँ और जननी की शक्ति ससार मे सबसे महान् है। तुम अपने नवाब साहब से कहो कि अपनी पज-हजारी शक्ति को वे जितनी भयानकता से एकत्रित कर सकते है, करे और युद्ध के मैदान मे आये और जो पत्र तुम लाये हो उसका उत्तर तलवार से दिया जायेगा, लेखनी से नही। तुम दूत हो, नही तो इस पत्र का सारा ज़हर तुम्हारे शरीर मे भर दिया जाता।

[महाध्यक्ष कर्णसिंह का प्रवेश]

कर्णसिंह : महारानी की जय हो ! महेन्द्रगज शीघ्र ही साल-वन से आपकी सेवा मे उपस्थित होगा।

दुर्गावती : उसे उपस्थित होना चाहिए। जैसे ही वह आये उसे युद्ध के लिए सुसज्जित करो। मैं इस बार फिर उसी पर बैठकर युद्ध करूँगी। मै इस बार अपने जीवन के अन्तिम क्षण तक युद्ध करना चाहती हूँ।

कर्णसिंह जो आज्ञा !

दुर्गावती सिंगौरगढ, मण्डला, चौरागढ और गढा की समस्त सेना अपने-अपने चतुर्व्यूह मे एकत्रित हो। मेरे पन्द्रह सौ हाथी, आठ हज़ार घुडसवार और बीस हज़ार सैनिक युद्ध-भूमि के लिए प्रस्तुत हो।

कर्णसिंह जैसी आज्ञा !

दुर्गावती जाओ ! सब प्रबन्ध पूर्ण हो और युद्ध-तूर्य की घोषणा हो !

कर्णसिंह : जो आज्ञा ! [प्रस्थान]

दुर्गावती : महामात्य ! मेरे विष के बुझे बाणो की पुन परीक्षा हो और मेरे कृपाण पर फिर से पानी चढाया जाये।

अधार० : यह शीघ्र ही होगा, महारानी !

दुर्गावती : हैदर अली ! तुमने षड्यन्त्र मे भाग लिया है और तुम कलक-पूर्ण पत्र लाये हो । तुम्हारे दण्ड की क्या व्यवस्था की जाये ?

हैदर० : मलकए-आलम की सजा बसरोचश्म मजूर होगी । यह नाचीज अपनी जान देकर भी महारानी का हुक्म बजा लाने मे अपनी खुशकिस्मती समझेगा ।

दुर्गावती : हैदर अली ! हम लोग मर्यादा-पालन मे विश्वास रखते है। तुम राजदूत हो इसलिए तुम्हे इस समय दण्ड नही दूंगी । तुम स्वतन्त्र हो । जाओ और अपने नवाब साहब को यही उत्तर देना कि नारी की शक्ति उसकी तपस्या मे है । दुर्गावती तपस्विनी है । उसे बहन समझोगे तो वह तुम्हे आशीर्वाद देगी, पर यदि अपनी दृष्टि मैली करोगे तो वह तपस्विनी अपनी आग मे तुम्हे जला देगी । और अगर वह नही जला सकी तो स्वय जलकर भस्म हो जायेगी । जाओ !

हैदर० : महारानी ! यह जल्वा हिन्दुस्तान का जल्वा है । मै नवाब साहब बहादुर से यही अर्ज करूँगा कि वह मल्कए-आलिया को अपनी हमशीरा ही समझे । आपके अदल और मेहरबानी का हजार-हज़ार शुक्रिया ! बन्दा खिदमत मे आदाब बजा लाता है । [प्रस्थान]

[नेपथ्य मे रण-वाद्य और तूर्य]

[वीरनारायण का प्रवेश]

वीर० माँ, महाध्यक्ष कर्णसिह ने आपकी युद्ध-घोषणा प्रचारित करने के लिए अश्व-साधनिक को नगर मे भेज दिया है । मैंने महेन्द्रगज और कुमारगज की रण-सज्जा के लिए आज्ञा दे दी है । युद्ध के मध्य मे आपका महेन्द्रगज रहेगा और दाहिने भाग मे मेरा कुमारगज ।

दुर्गावती नारायण ! महाकाल भैरव का अभिषेक हो । इस समय तुम्हारे पितामह और पिता नही हैं पर उनका सम्मिलित शौर्य तुम्हारे शरीर के प्रत्येक रोम मे समा जाये और वश की सारी मर्यादा तुम्हारे कृपाण की धार की तेजी बन जाये ।

वीर० : माँ ! आपका आशीर्वाद सफल हो !

दुर्गावती . महामात्य ! सैनिको को आज्ञा दो कि आज हम सब महाकाल भैरव की शक्ति का आवाहन करेगे और सिगौरगढ की रक्षा प्राण देकर भी होगी ।

[अधारसिंह और वीरनारायण का सम्मिलित स्वर]

म हा रा नी दु र्गा व ती की जय !

[नेपथ्य मे रण-वाद्य]

[यवनिका]

18

❖ दीने-इलाही ❖

[स्वोक्ति-रूपक]

•

पात्र-परिचय

सम्राट् अकबर

•

स्थान—फतेहपुर-सीकरी

दीने-इलाही

अकबर (सिंहासन से उठकर) रहमानुर्रहीम ! या हादी ! !

दसवीं हिजरी मे फतेहपुर सीकरी के इस इबादतखाने की पाक फिजा मे फैजी, अबुलफजल, अब्दुर्रहीम और बीरबल जैसे रतन ! अमीर, सैयद, उलमा और शेख की जमाअत। इन सबके रूबरू आज हम अपने दिल की मुराद रखना चाहते है—दिल की मुराद जिसने न जाने कितने दिनो से फलने और फूलने की इजाजत हमसे माँगी, लेकिन हम देने से इनकार करते रहे। सोचा, शायद उसमे कोई काँटा हो जो किसी के पाक दामन को चाक कर दे। लेकिन जब सुबह सूरज की किरन निकली तो हमने देखा कि हमारी मुराद चारो सिम्तो मे फैले हुए एक बडे फूल की शक्ल अख्तियार कर चुकी है। आप लोगो के सामने लहराता हुआ यह अनूप तालाब उस पर शबनम की तरह झूल रहा है। उस फूल मे काँटा नही है, उसमे खुशबू है—खुशबू जो चुभ सकती है लेकिन काँटे की तरह नही मुहब्बत की तरह, और वह सिर्फ दिल मे—दिमाग मे नही। और दिल मे जो चीज चुभती है, वह बुरी नही होती। बीरबल ! वह बुरी नही होती।

हमारी कोई बात अगर अच्छी न लगे तो उलमा और शेख हमे रोक सकते है, अमीर और सैयद उठकर जा सकते है, लेकिन हमे यकीन है कि इस तरह की कोई बात नही हो सकती, नही हो सकती। हमे किसी की जबी पर शिकन भी नही दीख पडती। तो हम अपने दिल की मुराद जाहिर करेगे।

यह इबादतखाना आखिर क्यो बना ? शेख अब्दुल्ला नियाजी की झोपडी इस जगह क्या बुरी थी ? लेकिन जिस तरह मिट्टी से रतन निकलता है, उसी तरह शेख अब्दुल्ला नियाजी की झोपडी से यह इबादतखाना उठ खडा हुआ। हमने इसे क्यो बनाया ? फैजी ने मशवरा दिया कि हर जुम्मे को हम आप सबसे मिलकर इबादत का राज समझे। बगाल का सुलेमान करारानी भी यही करता था—हमने उसे शिकस्त दी—खुदा करे उसे दायमुल वजूद हासिल हो। उसकी तरह हम भी इबादत का राज समझे।

अबुलफजल का कहना है कि हिन्दुस्तान मे पहले भी इस तरह की जमायते हुई है—अशोक, कनिष्क और हर्ष के जमाने मे। चीन मे ताइसिंग ने एक जमाअत मे मजहबी तसफिए किए है। हजरत कुबला खान ने भी, पेकिन मे सभी मजहबो के लोगो को इकट्ठा किया था और चीन के अँधेरे को दूर किया। सिकन्दर लोदी

श्रौर सुलेमान करारानी की जमाश्रतें तो ताज़ी मिसालें हैं जिनमे दीनी मसले हल किए गये । तब यह जरूरी है कि हमारे इतने बडे मुल्क मे जहाँ बहुत-सी मज़हबी गलतफ़हमियाँ फैली हुई है, ऐसी कोई जमाश्रत हो । उसी के लिए यह इबादतखाना श्रापके सामने है । इस इबादतखाने के मुबाहसे मे पहले सिर्फ सुन्नी शरीक होते थे, कुछ अर्से बाद शियाश्रो को भी शिरकत मिली श्रौर श्रब सुन्नी श्रौर शिया के साथ हिन्दू, पारसी, जैन, सिक्ख बौध, यहूदी श्रौर ईसाई भी यहाँ श्रपने मज़हब श्रौर धर्म का राज हमे समझाते है । कुछ सुन्नियो को यह पसन्द नही श्राया । क्यो बदायूनी ! तुम्हे भी शायद शिकायत होगी ? लेकिन इसे हम गलत समझते है । श्रब हिन्दुस्तान हमारा है, इसकी हरएक श्रच्छाई श्रौर बुराई हमारी है । श्रब इस मुल्क मे श्रम्नो-श्रमान है । जूद श्रौर करम हमारी श्राँखे है । बाहर से श्राने वाले कितने श्रक्लमन्द लोगो से इसे श्रपना वतन बनाया है । इसकी हर एक फिजा हमारे चैन-श्रो-सुकून के लिए है । यह ख़ुदा का नूर है । श्रौर बदायूनी ! हिन्दुस्तान ही क्यो, श्राप दुनिया पर नजर डाले । समन्दर-पार के इन्सान भी बेदार हो उट्ठे है । इस्लाम मे मेहदी फिरका भले ही गलत हो, लेकिन वह श्रपने पूरे जोर पर है, चीन मे पिंग की तरफ श्राप श्रपनी नजर उठायें । ईरान के सूफियो की जमाश्रत दुनिया-भर मे फैल गई है । तुर्किस्तान मे सुलेमान के नूर का जल्वा है । फारस मे शाह इस्माइल का क्या श्रसर है, श्रौर चीन मे युग लो ने नई दुनिया कायम कर दी है तो हिन्दुस्तान मे हजरते तैमूर का खानदान गफलत की नीद मे क्योकर सो सकता है ! हिन्दुस्तान की तवारीख़ भी सूरज की किरन से लिखी जानी चाहिए, तारीकी की स्याही से नही, श्रबुल-फज़ल हमारी 'श्राईन' लिखना चाहते हैं । वे भी इस बात को जानते है ।
इस बेदारी के श्रालम मे हम खानदाने-तैमूरिया की हस्ती दुनिया को दिखलाना चाहते है ।

श्रज़ पये हर गिरिया श्राख़िर खन्दा ईस्त ।
मर्द श्राखिर बी मुबारक बन्दा ईस्त ।

श्रपनी जिन्दगी की श्राख़िरी मजिल पर जो नज़र रख सकता है वही बन्दा मुबारिक है । इस ज़िन्दगी की श्राख़िरी मजिल क्या है ? हम कहते है, ज़िन्दगी की श्राखिरी मज़िल है ख़ुदा के करीब पहुँचना, जो दुनिया के हर जर्रे मे मौजूद है ।

सरा पर्दये चर्ख गर दन्दाँ बी ।
दरू शमहाए फरो जिन्दा बी ।

इस घूमते हुए श्रासमान के पर्दे के नीचे इस शमा को देख जो रौशन है । श्रगर हमे मुल्क के कामो से फ़ुरसत मिले श्रौर ख़ुदा हमे एक दूसरी जिन्दगी बख़्शे तो हमारी ख़्वाहिश है कि हम इस पर पूरे तौर से कह सके । तो यह शमा सब जगह रौशन है । इसी रौशनी की किरन बाँधने की कोशिश हर एक मज़हब ने

की है। मजिल एक है रास्ते जुदे-जुदे है। कोई सीधा है, कोई टेढा, कोई दाहिने है, कोई बाएँ। मजिले-मकसूद एक है। तो यह रास्ते का झगडा है, मजिल का नही। हमने देखा है कि चीज वही है, वन्दिश जुदी-जुदी है, और इसी वन्दिश ने इन्सान के सैकडो टुकडे कर दिए है। खुशबू को काट कर रख दिया है, किरन के हिस्से कर दिए है और फलक के दामन मे धब्बे लगा दिए है। हम कहेगे कि नफ्स के दायरे मे रूह को मिटा दिया है। हमारी इस बात से शेख फैजी के ओठो पर मुस्कराहट है। शायर है न! दुनिया के अजीबो-गरीब शायर। तो हम कह रहे थे कि दुनिया का वह सबसे बडा मजहब समझा जाना चाहिए जो इन रास्तो को नही देखता, मजिले-मकसूद को देखता है।

गर विसाले दोस्त मी दारी हवस।
नफ्स रा वा रूह गरदाँ हम नफ्स।

अगर तू अपने दोस्त से विसाल की हविस रखता है तो तू रूह पर नफ्स को लुटा दे। यही वजह है कि इस इबादतखाने मे आप सब अपने दोस्त से विसाल की हविस रखते है और नफ्स को रूह पर लुटाने के लिए आये है। जब रूह ही मुस्तकिल है तो नफ्स की कोई हस्ती नही। जो नफ्स को तरजीह देते है वो रूह को पहिचानते नही। इसीलिए हम दूसरे को शक की निगाह से देखते है। हमने इस शक को मिटाने की दवा ईजाद की है। हमने अपने दीन को इलाही के जल्वे से रौशन किया है जिसमे रूह की कोई हस्ती नही है और रूह की कोई किस्म नही है और रूह की हस्ती के सामने नफ्स की कोई हस्ती नही है। यह दीने-इलाही है। इलाही को पहिचानने का सबसे आसान रास्ता है।

बदायूनी! तुम समझते होगे, हमने इस्लाम के वसूलो के खिलाफ कुछ कहा। हरगिज नही। हम खुदा के बन्दे है लेकिन हम खुदा के नूर को रवायतो मे महदूद नही करते। हम समझते है कि खुदा के नूर ने इस दुनिया मे कितने खूबसूरत तरीको से अपने को रौशन किया है।

बजिल्ले रूह अज शौक ब हक्कोवसूल व हजरते करीम। शस्त और साफ नजर ही इस दीन की सबसे बडी सिफत है। अगर हम मरकज पर अपनी पाकीजा नजर कायम रक्खे तो हम कभी इधर-उधर नही भटक सकते। हमारा रास्ता सीधा और साफ है। जो सूफी है वह अपने सफ पर कायम है, वह चाहे सुफ पहिने या न पहिने।

हम कोई नई बात नही करना या कहना चाहते। जिस तरह बीरबल ने कहा—बिखरे हुए मनको को जोडकर एक खूबसूरत माला तैयार करना ही हमारा मकसद है। इसीलिए अपने इस दीने-इलाही के लिए न हम किसी खास किस्म की मस्जिद तैयार करना चाहते है, न कोई खास मुल्ला के मुजाहिद की जरूरत ही समझते है। कुरान हमारे लिए भी उतनी ही पाक है जितनी इस्लाम के सभी बन्दो के लिए। और यह भी हम कह देना चाहते है कि दीने-इलाही

क्या किसी भी दीन मे शामिल होने के लिए किसी भी शख्स के लिए जोरो-ज़बर्दस्ती की शर्त नही है। इस सिलसिले मे हम एक बार फिर वही बात दोहराना चाहते है जो हमने सलीम से कही थी कि कुरान की आयत है कि अगर खुदा चाहता तो सारी दुनिया इस्लाम को अपना दीन मानती, लेकिन जब खुदा न ऐसा नही चाहा तो बन्दे को क्या हक है कि वह लोगो को इस्लाम मे आने के लिए ज़बर्दस्ती मजबूर करे ? अक्ल और अदब से जो इस्लाम मे आना चाहता है, जरूर आये। आप इसे समझें कि इस दुनिया मे 100 मे 80 आदमी काफिर या हिन्दू है। अगर मै तलवार लेकर इन 80 आदमियो को कत्ल कर दूं तो यह खुदा का बन्दा अबुलफतह जलालुद्दीन मुहम्मद अकबर बादशाह गाजी क्या सिर्फ दुनिया के पाँचवे हिस्से को ही खुदा का नूर समझे और सारी खिलकत को जिसे खुदा ने इतनी खूबसूरती से रूह अता फरमाई है, हमेशा के लिए गारत कर दे ? इसीलिए दीने-इलाही की जरूरत है जिसमे किसी तरह की ज़ोर-ओ-ज़बर्दस्ती नही है। हमारे सीने मे इस दीने-इलाही की रौशनी इसी इबादतखाने के मुबाहिसो से आई है। जनाब मुबारक, फैजी और ताजुद्दीन ने इस रौशनी को तेज किया है और दिल से अँधेरा दूर किया है। अब हम बीरबल की नजर से भी खुदा देख सकते है, तानसेन के सुर मे भी कायनात के जौहर का निखार पा सकते है। विश्वनाथ की तसवीरो से भी ज़िन्दगी का राज समझ सकते है और शेख फैज़ी के योगवशिष्ठ के तरजुमे से भी खिलकत की खूबी देख सकते हैं। इनके सिवाय आप ज़ेद-अवेस्ता के जानकार दस्तूर महयर जी राना के जरिये आफताब और आतिश मे हक की परस्तिश कर सकते है। जैन जगद्गुरु हीर विजय और बौध 'समन' की अहिंसा मे हम खुदा की रहमत देख सकते हैं। सिख गुरु उमरदास के जप मे हम ज़िक्र का जल्वा महसूस करते है। दीने-इलाही मे खुदा की रहमत हमने दिल के कोने-कोने मे फूलती-फलती देखी है। हर दिल उसके लिए अजीज है, हर शै उसके लिए तसवीर है।

हमे एक बात याद आ गई। बदायूनी ने एक बार हमसे पूछा कि तसवीरो से हम नफरत क्यो नही करते ? हमने फौरन ही जवाब दिया कि मुसव्विर ने खुदा को पहचानने का एक नया तरीका ईजाद किया है। जब वह किसी की तसवीर खीचता है तो खूबसूरती का जाल बिछा देता है—आँख, नाक, मुँह बनते चले जाते है लेकिन खूबसूरत तसवीर बना कर भी वह उसमे जान नही डाल सकता। और खुदा छोटी-से-छोटी और बडी-से-बडी खूबसूरत या बदसूरत शकल मे जान डाल सकता है। तो मुसव्विर समझता है कि खुदा का जल्वा क्या है। बदायूनी चुप हो गये। हम बदायूनी की लियाकत की इज्जत करते हैं लेकिन हमे अफसोस है कि बदायूनी हँस नही सकते। खुदा के करीब पहुँचकर उनके लबो पर मुस्कुराहट के फूल क्यो नही खिलते ?

हम कहाँ से कहाँ पहुँच गये। हमे देर हो रही है। शायद आप लोग भी

जाना चाहते हो लेकिन ग्राज हम मुसर्रत महसूस करते है कि हमने अपने दिल मे उठने वाले जजबात का इज़हार किया। दीने-इलाही दुनिया का दीन है बशर्ते कि दुनिया खुदा की ज़ात और सिफत समझे। ग्राप पूछ सकते है कि दीने-इलाही का रास्ता क्या है ? रास्ता ग्राप अपने दिल से पूछिए और मुझे कामिल यकीन है कि हर एक इन्सान उस रास्ते को जानता है लेकिन उस पर ग्रमल नही करता। हर एक दीन और धर्म के मुबाहिसो से हमने सिर्फ दस बाते चुनी है। सुनिये —

पहली है, जूद और करम—दरियादिली और मेहरबानी। कुरान की हदीस है कि जब तक तुम अपनी सबसे प्यारी चीज कुर्बान नही कर सकते तब तक तुम हकीकत से वाकिफ नही हो सकते। इसीलिए हर एक को दरियादिल और मेहरबान होना जरूरी है।

दूसरी बात है, बुरे काम करने वाले को माफ कर देना और उसके गुस्से का जवाब शीरी जबान से देना—अगर तुझे कोई जहर दे तो तू उसे शक्कर दे।

कम म बाग ग्रज दरख़्त साया फगन।
हर कि सगत ज़नद समर ब बख़्शश।

तू साया देने वाले दरख़्त से कम न साबित हो। जो तुझे पत्थर मारे, उसे तू फल दे।

तीसरी बात है, दुनियावी ख़्वाहशात से तू परहेज कर। समझ ले कि दुनियावी ज़िन्दगी एक खेल और बाजी है।

अलहजर अज़ हुब्बे दुनिया अलहजर।
बहरे नानो जर मखुर खूंने जिगर।

मुहब्बते-दुनिया से तू परहेज कर। रोटी और दौलत की ख़ातिर तू अपने जिगर का ख़ून मत पी।

चौथी बात है, दायमुल वजूद के लिए तू इस दुनियावी जिन्दगी की कैद से नजात हासिल कर।

पाँचवी बात है, कामो को तू अक्ल और अदब से अजाम दे। इसका हम पहले जिक्र कर चुके है।

मर्द आख़िर बी मुबारक बन्दा ईस्त।

छठी बात है, दुनिया मे ख़ुदा का ऐजाज तू तभी देख सकता है जब तू होशियारी से काम ले। हमने पहले भी कहा कि—

सरापरदए चर्ख़ गर दन्दा बी।
दरू शमहाए फरो जिन्दा बी।

सातवी बात है, सबके लिए नर्म-जबान और ख़ुशकलाम रखना जरूरी है।
आठवी बात है, दूसरे की बात हमेशा अपनी बात से मुकद्दम समझो।

इबादत बजुज ख़िदमते-ख़ल्क नेस्त ।
तसबीहो सज्जादह व दल्क नेस्त ।

ख़ल्क की ख़िदमत से बढकर कोई इबादत नही है ।

नवी बात है, दीन के लिए तू दुनिया को तर्क कर दे और अपने को ख़ुदा पर छोड दे ।

दसवी और आख़िरी बात यह है कि ऐ बिरादर, अगर तू अपने दोस्त से वस्ल चाहता है तो तू रूह और नफ्स को एक मे मिला दे ।

बस, इन्ही दस बातो मे दीने-इलाही है ।

ख़ुदा ने हमे यह मुल्क दिया । इसे हम शीरी जबान दे, मुहब्बत दे, इबादत दे ।

अल्लाहो अकबर !

[परदा गिरता है ।]

19 ·

✣ शिवाजी ✣

•

पात्र-परिचय

शिवाजी महाराष्ट्र देश के अधिपति

आबाजी सोनदेव
मोरोपन्त
शभूजी कावजी
रघुनाथ बल्लाल
मीनाजी } शिवाजी के सेनापति और सहायक

गौहरबानू बीजापुर के सूबेदार मुल्ला अहमद की सुन्दर पुत्रवधू

काशीबाई : आबाजी सोनदेव की बहिन

सोना
गगा } काशीबाई की प्रधान परिचारिकाएँ

अजुमन गौहरबानू की सेवा मे नियुक्त परिचारिका

अन्य दो परिचारिकाएँ

•

काल

24 अक्तूबर, 1657 ई०

स्थान

उत्तर कोकरा का प्रदेश

शिवाजी

[सात बजे सध्या का समय। कल्याण के समीप मराठो का एक शिविर, पश्चिम मे सह्याद्रि पर्वत-श्रेणी की नीलिमा मे डूबी हुई चोटियाँ है, जो उसी ओर खुलने वाली खिडकी से दीख रही है। नीली चोटियो के समीप उठती हुई चन्द्र की वकिम कला, ज्ञात होती है जैसे किसी अवगुंठनमयी नववधू के केशपाश मे पीछे की ओर उठती हुई चूडामणि है। वायु मे शीतलता है। वातावरण शान्त है, किन्तु यह शान्ति जैसे अट्टहास के बाद की शान्ति है।

शिविर के खभो मे रूखापन है किन्तु सुनहले रंग से रगकर उन्हे सुन्दर बनाने का आयोजन किया गया है। पत्थर की दीवारो के ऊपर जरी का चदोवा है, जिसमे स्थान-स्थान पर मोतियो की लडियाँ झूल रही है। सामने तीन महराबें है और उनके समाप्त होने पर दीवाल पर रेशमी परदे है। उनके दोनो ओर दो बडी मछलियो के आकार बने हुए है। जमीन पर मखमल का फर्श बिछा हुआ है। बगल की दीवाल पर ढाल, तलवार, तीर और धनुष टँगे हुए है।

बीच मे एक ऊँचा मसनद है जिस पर एक आसन रखा हुआ है। बाघ के चमड़े पर मखमल की झालरदार गद्दी है, जिसकी बगल मे नीले मखमल की म्यान मे तलवार सजाई हुई है। उस आसन के दोनो ओर दो भालो पर भी दो मछलियो के चित्र झूल रहे हैं। सामने एक छोटे-से मृत्तिकास्तभ पर पच-प्रदीप जल रहे है। बीच के महराव के नीचे दरवाजे के दोनो ओर घोडो की पूँछ के चँवर है। दाई और बाई ओर जाने वाले दोनो मार्गो के द्वारो पर दोनो बाजुओ में आम्र-पल्लवो से सजाये गये जल से भरे हुए मगल-घट है, जिन पर स्वस्तिका के चिह्न बने हुए है। उनके समीप ही राजपताकाएँ हैं, एक जरी की और दूसरी भगवा वस्त्र की, जो स्वामी रामदास के गेरुए वस्त्र की स्मृति मे है।

कक्ष मे जगमगाहट है। स्थान-स्थान पर दीप-कमल जल रहे हैं जिनमे अनेक रंगो के प्रकाश की व्यवस्था है। एक ओर शीतनिवारणार्थ अग्नि-पात्र है, जिसमे कभी-कभी लपट उठ जाती है, जो मराठो की

तेजस्विता की परिचायिका ज्ञात होती है। थालियो मे लावा के चक्र मे धूप के धूम की लहरें उठ रही हैं। समस्त वातावरण मे एक पवित्रता है। मसनद के समीप ही नीचे दो आसन और भी हैं। वे मखमल के न होकर कीमखवाब के हैं। एक आसन पर गंगा (आयु 22 वर्ष) बैठी हुई एक फूल की माला गूँथ रही है। दूसरा आसन खाली है। सह्याद्रि की ओर खुलने वाली खिडकी के समीप ही सोना (आयु 20 वर्ष) खड़ी हुई चन्द्रकला को देख रही है।]

गगा : (फूल की माला उठाते हुए) दो .....तीन. .चार . बस, केवल चार फूल चाहिए। सोना! सुख के चार दिन की तरह चार फूल। फिर यह माला.........।

सोना : (खिड़की से चाँद की ओर देखते हुए) यह माला पूरी न हो सकेगी, गगा!

गगा : (माला गूँथते हुए) पूरी न हो सकेगी? इतने फूल गूँथ लूं तो माला पूरी हो जाय। बस, अन्त मे सिर्फ चार फूल चाहिए, उनका झुमका लगाना है।

सोना : (पूर्ववत् चाँद की ओर देखते हुए) यह माला पूरी न हो सकेगी। (गगा की ओर मुड़कर) हमारे देश के कितने लाल राज्य की माला बनाने मे बलि चढ़ गये, किन्तु आज तक राज्य की माला पूरी नही बन सकी। अभी और कितने ही फूल चढ़ेंगे।

गंगा तू तो हमेशा इन्ही बातो को सोचा करती है। खिडकी के पास खडी हुई रात-दिन प्रतीक्षा करती रहती है। सोना! तेरा भाई अवश्य लौट आयेगा; वह कितना वीर है, कितना साहसी है, कितना पराक्रमी!

सोना : वीर, साहसी, पराक्रमी! गगा! वीर और पराक्रमी की आयु बहुत थोडी होती है। (स्वप्न देखने की भाँति).. ...आधी रात थी, मेरा भाई सो रहा था। भोसले श्रीमत शिवाजी की आज्ञा मिली कि रात ही मे कल्याण पर आक्रमण हो। वह उठ खडा हुआ। तलवार ली और घोडे पर सवार हो गया। उसने बाग मोडी और काली दिशाओ मे तारे की भाँति डूब गया। गगा! मैं अपने भाई को अपने हाथो से तलवार भी नही दे सकी, मगल-तिलक भी नही कर सकी।

गंगा : (माला गूँथते हुए) सच्चे वीरो को तिलक की आवश्यकता नही होती।

सोना : मैंने इसी मे सन्तोष किया, गगा! किन्तु मैं डरती हूँ कि उसका मगल-तिलक न होने से कही कुछ अनिष्ट न हो। मेरे मगल-तिलक मे बडा बल है। मैं पिछली लडाइयो मे उसे अपने हाथ से तलवार और भाला देती थी। कहती थी कि महाराष्ट्र-जननी की लाज तुम्हारे हाथ मे है, भैया! कभी पीछे मत हटना। गगा! वह मेरी दी हुई तलवार को माथे से लगाकर कहता था, 'बहिन! तुम्हारी आज्ञा श्रीमत भोसले की आज्ञा है, महाराष्ट्र-जननी की आज्ञा है।' मैं आरती

उतारती और जब आरती-पात्र मे मेरा एक स्नेहाश्रु ढुलक कर गिर पडता तो गगा, वह मेरे नेत्रो मे उलझे हुए आँसू को पोछकर कहता था, 'बहिन ! इन आँसुओ से मेरा पथ गीला मत करो। मेरा घोडा आगे नही बढ सकेगा।' उन आँसुओ मे हँसने की चेष्टा करती हुई उसकी आरती उतारती थी। घूमती हुई आरती मे दीप का आलोक उसकी परिक्रमा करता-सा जान पडता था। मैं समझती थी कि यह आलोक-मडल भवानी का कवच है। लेकिन इस बार मैं अपने भाई की आरती नही कर सकी। इस बार यह नही हो सका, कुछ नही हो सका।

गगा सोना ! तू इतना दु ख क्यो करती है ? महाराष्ट्र की बहिने इतना दु ख कभी नही करती।

सोना नही करती, गगा ! किन्तु जब **(खिडकी से बाहर की ओर देखती हुई)** इस सह्याद्रि की चोटी पर रात आती है तो जैसे अँधेरे मे सारी भयानकता जाग उठती है, सग्राम मे मरे हुए वीरो की मौत जाग उठती है, आकाश जगमगाता है तब एक काली-काली छाया यहाँ से वहाँ . वहाँ से यहाँ घूमने लगती है पेड ककाल की तरह अकड जाते है हवा का एक शीत झोका तलवार की तरह घूमकर इस खिडकी के पास तक चला आता है। उसके साथ वह काली छाया भी बहकर चली आती और खिडकी के समीप ठिठक कर कहती है, 'बहिन ! मेरा मगल-तिलक करो, मेरा मगल-तिलक करो, बहिन ! तुमने मुझे तिलक नही किया मैं शत्रु के हाथो मारा गया .. ओह ! मेरा भाई ! . मेरा भाई !

[खिडकी पर सिर झुका लेती है। गगा उठकर शीघ्रता से सोना के समीप जाती है और उसके कधे पर हाथ रखती हुई सन्तोष देने की चेष्टा करती है।]

गगा : सोना, तू पागल तो नही हो गई ? कैसी-कैसी बाते करती है ? चल, इधर आ। रात-दिन खिडकी के पास खडी होकर न जाने क्या-क्या सोचा करती है। ऐसे भी कोई प्रतीक्षा करती है ? कितनो के भाई युद्ध मे लडने के लिए नही जाते ! कितनो के भाई लौटकर नही आते। वीर-कन्याएँ कही इस प्रकार दुखी हुआ करती है ? क्या वे इस तरह प्रतीक्षा किया करती है ? तेरा भाई आयेगा तो क्या वह खिडकी के उस पार ही रह जायगा ? **(दूसरे आसन पर बिठलाती है)** यहाँ बैठ। तू महाराष्ट्र की बहिनो को लज्जित करती है।

सोना : **(बैठते हुए)** मै लज्जित नही करती, बहिन ! यदि मै उसे अपने हाथो से विदा कर पाती, उसकी आरती उतार लेती तो मुझे फिर किसी बात की चिन्ता न रह जाती।

गगा (दृढता से) तो समझ ले महाराष्ट्र-जननी ने उसकी आरती उतारी है। महाराष्ट्र-जननी ने, जो सह्याद्रि के सिह पर बैठी है, कोकण मुकुट धारण किये हुए

है । वह सोना नदी की मेखला से सारी दिशाओ को प्रतिध्वनित कर रही है । उसके चरणो मे कृष्णा तरगित हो रही है । ऐसी जननी ने तेरे भाई का मगल-तिलक किया है । सोना ! महाराष्ट्र-जननी ने तेरे भाई की आरती उतारी है ।

सोना (शून्य दृष्टि से) महाराष्ट्र-जननी ने ..... मेरे भाई की...... ... आरती उतारी है ! मेरा भाई धन्य है, गगा !

गगा (पूर्ववत् दृढता से) फिर तू इतना दु ख क्यो करती है ? यदि तेरा भाई न लौटे तो वीरा बहिन की तरह अपने को धन्य समझ । उसकी कीर्ति मे पोवाडा गाया जायगा । गोन्धाली उसके चरित्र का गान करेगे । दक्षिण की समतल भूमि मे, सह्याद्रि की गहरी तराई मे, पहाडियो की ऊँची चोटियो पर तेरे भाई के गान होगे ।

सोना (सँभलकर) मेरा भाई अमर होगा ।

गगा (दृढता से) निश्चय ।

सोना . मेरा हृदय बहुत दुर्बल है । इसीलिए एक क्षण मे भाई की ममता जाग उठती है, नही तो बहिन के लिए भाई का युद्ध अभिमान की बात है ।

गगा यह बात तेरे ही योग्य है, सोना ! तेरे इस दु ख करने मे महाराष्ट्र की नारियो का अपमान होता है । अब तो तू इस तरह दु ख नही करेगी ?

सोना (सँभलकर) नही ।

गगा (प्यार से) तू बहुत अच्छी है, सोना ! (अपने आसन पर बैठती हुई) देख, मेरी माला अभी तक नही बन पाई । तेरे दु ख ने मेरी माला पूरी नही होने दी ।

सोना मैं सहायता करूँ, बहिन !

गगा रहने दे, मै पूरी कर लूँगी । सिर्फ थोडे से फूल और रह गये है । और काशी-बाई ने मुझे ही तो आज्ञा दी है कि मै माला गूँथूँ । (माला फिर गँथती है) उन्हे मेरी माला बहुत पसन्द आती है । तू जा, देख आबाजी सोनदेव के आने मे कितना विलम्ब है ।

सोना (अपने ही विचारो मे) तो क्या मै माला भी नही गूँथ सकती ?

गगा तू गूँथ क्यो नही सकती, किन्तु काशीबाई की रुचि इतनी सुकुमार है कि थोडी-सी भूल उनकी आँखो मे चुभ जाती है । शृगार की विशेषता तो महाराष्ट्र मे केवल वही जानती है । वे कली की आयु के दिन बतला सकती है, वे फूल की अवस्था बतला सकती है, फूलो के हलके और गहरे रगो के अनगिनत भेद बतला सकती हैं । स्नान करके वे आती ही होगी ।

सोना तब तो मै उन्हे प्रसन्न नही कर सकती ।

गगा तभी तो मैं कहती हूँ कि तू जा । तेरी सहायता मेरे काम न आ सकेगी । जा देख, आबाजी सोनदेव के आने मे कितनी देर है ।

सोना अच्छा बहिन, जाती हूँ । [प्रस्थान]

गगा बस, मेरी माला भी समाप्त हो गई । यह गाँठ लगा दूँ । (माला मे गाँठ

लगाती है) अब केवल झुमका रह गया है। **(नेत्र उठाकर सोना को न पाकर)** गई ! बेचारी सोना ! **(उठ खड़ी होती है)** युद्ध के सब सिपाही लौट आये, यदि नही लौटा तो उसका भाई, यादव रामचन्द्र ! **(स्वयं खिड़की के पास जाकर खड़ी होती है)** यादव.. ...रामचन्द्र...... ! **(ठंडी साँस लेकर)** शायद लौट आये ! **[फिर खिड़की के बाहर देखती है।]**

[काशीबाई (आयु 18 वर्ष) का प्रवेश। यौवन और सौन्दर्य की सम्पत्ति से परिपूर्ण। आँखो में सरसता और आकर्षण। माथे मे लाल बिन्दी, केशो में लाल फूलो का शृङ्गार, गौर वर्ण और शरीर में कमनीयता। शरीर में आभूषणो के स्थान पर रंग-बिरंगे पुष्पो का शृङ्गार किये हुए है। ओठो पर मुस्कराहट। वह शिविर मे प्रवेश करते ही एक नवीन वातावरण की सृष्टि करती है। हाथ मे फूल की एक माला है जो उँगलियो मे उलझी हुई है। सितार पर नाचती हुई रागिनी की भाँति वह रंगमंच पर प्रवेश करती है।]

काशी **(भाव-मुद्रा में)** सह्याद्रि की चोटी पर चन्द्रकला की शोभा किन आँखो का सपना है ? **(खिड़की के समीप जाकर और आकाश की ओर सकेत करते हुए)** गगा ! यह चन्द्रकला मेरे जीवन की ऐसी सहचरी है, जो मुझसे आँखमिचौनी खेलना जानती है।

गंगा · **(सिर झुकाकर)** सत्य है, देवी !

काशी : **(उसी स्वर मे)** और जब मै वीणा पर गीत गाती हूँ तो इस चन्द्रकला की किरणो मे मेरी वीणा के तार सगीत की धारा के गूँजते हुए निर्झर जैसे मालूम पडते है। ओह !. ....मै कितनी प्रसन्न हूँ इस चन्द्रकला को देखकर। तारो के बदनवारो के बीच से चलकर यह जैसे आकाश-गगा मे स्नान करने जा रही है।

गंगा · सत्य है, देवी ! अन्तर केवल यही है कि यह स्नान करने जा रही है और आप स्नान करके आ रही हैं। उसके लिए तारो के बदनवार है, आपके लिए स्वागत की मालाएँ।

काशी : **(हँसकर)** तू बहुत प्रियवादिनी है। तेरी माला बनी या नही ?

गंगा · माला तो तैयार है, केवल उसका झुमका नही बन सका, देवी !

काशी तो बिना झुमके के माला कही अच्छी लगेगी ? बिना झुमके के माला तो वैसी ही है जैसे बिना कुकुम की बेदी के मै। **(उत्तर की प्रतीक्षा)** ऊँ ? **[मुस्कान]**

गगा · ठीक कहती है, देवी। झुमके के लिए लाल फूल चाहिए, वे रात मे तोडे नही जा सकते।

काशी : क्यो, रात मे क्यो नही तोडे जा सकते ?

गंगा · कहते है, रात मे फूल तोडना ठीक नही होता।

काशी · **(शब्दों पर रुक-रुक कर)** रात मे......फूल......तोडना........ठीक

... नही . .. होता। (**सोचकर**) शायद अपनी सुगन्ध की चादर ओढकर जब फूल रात मे सपने देखते हैं तो उन्हे जगाना ठीक नही होता।

गगा . सत्य है, देवी !

काशी या चन्द्र की किरणो के रास्ते जब उनका मन कली के समीप जाकर लौट आता है तो उन्हे रास्ते से दूर करना ठीक नही है। क्यो गगा ?

गगा देवी, आप ठीक कहती हैं।

काशी गगा, मेरी मालाएँ देख ! ऐसी हैं जैसे फूल की चलती-फिरती क्यारियाँ, सुगध की रगरेलियाँ, सुन्दरता की आकाश-गगाएँ। ओह ! इन्हे कोई पहने तो चाँदनी खिल जाये। हाथ मे ले तो चन्द्रमा उतर आये और इन्हे यो भुलाये। (**मालाओं को झुलाती है**) तो महाराष्ट्र मे पराक्रम बरसाने वाली बूँदे बरस जाये।

गंगा · सच है, देवी !

काशी अच्छा देख गगा, आज मै बहुत प्रसन्न हूँ। मेरे भाई आबाजी सोनदेव जीतकर लौटे है। पराक्रमी, वीर, साहसी ! कहते है, वीर और पराक्रमी की आयु थोडी होती है। किन्तु मेरे भाई आबाजी चिरजीवी है। श्रीमत शिवाजी भोसले ने बीजा-पुर के हाथ से कल्याण और भिवडी नाम के शहर छीन लिये है न। महाराष्ट्र मे अपार सपदा आई है, और उस सपदा के लाने वाले मेरे भाई आबाजी हैं। उन्होने कल्याण का सारा खजाना लूट लिया है। उसी विजय के समारोह मे तो मैंने यह कक्ष इतना सुन्दर सजाने का आयोजन किया है।

गगा आबाजी सोनदेव बहुत बडे वीर है, देवी !

काशी निस्सन्देह, मैने उनके जाते समय आरती उतारी थी, उनके हाथ मे तलवार दी थी, उनके सिर पर शिरस्त्राण बाँधा था और उनके लिए बहुत मगल-कामनाएँ की थी।

गगा आपकी मगल-कामनाओ ने ही उन्हे विजयी बनाया, देवी !.. देवी...किन्तु...

काशी : कहो-कहो .. रुक कैसे गई ?

गगा : एक ऐसी भी बहिन है देवी, जो अपने भाई की आरती नही उतार सकी, उसके हाथो मे तलवार नही दे सकी। वह भाई भी वीर, साहसी और पराक्रमी है, किन्तु वह नही लौटा।

काशी वह कौन है... और ऐसी कौन बहिन है ?

गगा : सोना। बेचारी सोना बहुत दुखी है।

काशी : (**सोचकर**) हाँ, उसका भाई यादव रामचन्द्र लौटकर नही आया। मैने भी सुना है। वह मेरे भाई आबाजी का बडा विश्वासी सिपाही था, बहुत पराक्रमी।

गगा : सोना बहुत दुखी थी। मैने उसे अभी-अभी समझाया है। बडी कठिनता से उसके आँसू रुके और विजय के समारोह मे तो उसे अपने भाई की याद और भी अधिक हो जाती है।

काशी : स्वाभाविक हे। मैं उसे समझाऊँगी। महाराष्ट्र वीरो का युद्धक्षेत्र से न लौटना

कोई विशेष बात नही है। कोई तारा उदय होता है, कोई तारा डूब जाता है। फिर भी भाई-बहिन की ममता का मूल्य कम नही है। मै अपने भाई से कहूँगी कि वे यादव रामचन्द्र की खोज मे अश्वारोहियो को भेजे।

गंगा आपकी बडी कृपा होगी, देवी !

काशी शीघ्र ही पता लग जायगा। भाई आबाजी की आज्ञा मे सारी महाराष्ट्र सेना है। तभी वे बीजापुर का खजाना लूट सके।

गंगा सुनते है, उस खजाने मे अनेक बहुमूल्य रत्न है।

काशी **(प्रसन्नता से)** अनेक बहुमूल्य रत्न ! और गगा, जानती है तू, एक रत्न तो बहुत ही बहुमूल्य है।

गंगा वह कौन-सा देवी ?

काशी तू नही जानती। भाई आबाजी ने अरब जाति के रईस और कल्याण के सूबेदार मुल्ला अहमद की पुत्र-वधू को भी बन्दी कर लिया है। बडी सुन्दर है वह।

गंगा आपसे भी अधिक, देवी !

काशी : मुझसे ! **(हँसकर)** क्या कहूँ, तू ही देखकर निर्णय कर ले। किन्तु सारे दक्षिण मे उसके रूप की चर्चा है। मैने भूषण कवि से कहा, 'कवि ! गौहरबानू के सौन्दर्य मे कुछ छन्द लिखो।' कहने लगे, 'पढरपुर मे स्नान कर लूँ तब लिखूँगा।' जैसे गौहरबानू की प्रशसा करने के लिए धर्म-तीर्थ मे स्नान करना आवश्यक है। **(हँसती है)** गगा, ऐसी है वह गौहरबानू।

गंगा देवी, तब तो वह बहुत सुन्दर है।

काशी **(मुस्कान रोककर)** मुझसे भी अधिक ?

गंगा : आपसे अधिक नही हो सकती, देवी !

काशी मैं तेरी बातो से प्रसन्न हूँ गगा, किन्तु यह तब कह जब तू गौहरबानू को देख ले। **(उत्तर की प्रतीक्षा मे)** एँ ! अच्छा तो मेरी माला कब पूरी होगी ? यह माला मै गौहरबानू के लिए तैयार करा रही हूँ।

गगा देवी, मै तो समझती थी कि यह माला आपके कण्ठ की शोभा प्राप्त करेगी।

काशी नही, भाई आबाजी की इच्छा है कि आज गौहरबानू का शृगार पूरा हो। वह आज रात की रानी बन जाय। तू यह माला जल्दी ही पूरी कर।

गंगा **(अस्थिर होकर)** किन्तु झुमके के लिए लाल फूल नही है, देवी !

काशी लाल फूल चाहिए झुमके के लिए ?

गंगा जी हाँ।

काशी सफेद फूल काम नही दे सकते ?

गंगा आपकी आज्ञा से सफेद फूल भी काम दे सकते है।

काशी किन्तु सफेद फूल भी तो नही है।

गंगा : जी, आपके शृङ्गार मे सभी फूलो का सौभाग्य सजा दिया गया।

काशी थोडे से फूल भी नही है ?

गगा जी नही, सध्या होते हो शृगार की मालाएँ वन गईं। कुछ तो श्रीमत भोसले की सेवा मे भेज दी गई और कुछ आपकी सेवा मे। फूल भी आवाजी ने मँगवा लिये है। सभव है, श्रीमत के स्वागत मे उछालने के लिए।

काशी (टहलते हुए) और लताओ के फूल सो रहे है।

गगा जी।

काशी (कक्ष मे टहलते हुए खिडकी के समीप जाकर आकाश की ओर देखते हुए) इस चन्द्र का ही झुमका वना ले। यह जाग रहा है। माला के स्थान पर चन्द्रहार हो जायगा। (उत्तर की प्रतीक्षा मे) एँ!

गगा (किंचित् हँसकर) देवी, आप बहुत सुन्दर वाते करती है।

काशी गगा, तू मुझे वहुत प्रिय है। जहाँ जाऊँगी, अपने साथ तुझे भी ले जाऊँगी।

गगा कहाँ जायेगी आप, देवी ?

काशी (कुछ सकुचित होकर) अभी से सारी वाते वतला दूँ ? कुछ वाते तो मेरे मन मे रहने दे। किन्तु गगा, तुझे भी एकाकी न रहना पडेगा। तू वही जायगी जहाँ महाराष्ट्र का गौरव होगा।

गगा यानी आप श्रीमती काशीवाई

काशी अभी चाहे जो कह ले। और सुन! हम लोगो के साथ जायगी यह चन्द्रकला। (चन्द्रकला की ओर सकेत करती है) किन्तु गगा, यह चन्द्रकला बहुत भोली-भाली है। चाहो तो इसे निर्मल जल मे उतार लो, चाहो तो इसे द्राक्षासव मे उतार लो। इसे तो केवल नृत्य करना आता है, लहराना आता है। न वह जल पीती है, न द्राक्षासव।

गगा देवी, वह कुछ नही पीती।

काशी ओह! यदि यह चन्द्रकला एक-सी रहती तो शायद यौवन भी वुढापे मे कभी न बदलता। क्यो गगा ?

गगा सत्य है, देवी!

काशी (गहरी साँस लेकर) अच्छा, जाने दे इन वातो को। वह तो मै चन्द्रकला को देखकर उमग मे भर जाती हूँ, नही तो युद्ध के अवसरो पर ऐसी वाते कहाँ सूझती है। गगा, भाई आवाजी आने ही वाले है। गौहरावन् के सम्बन्ध मे शायद वे मुझसे कुछ कहे। गौहर का शृङ्गार तो होना ही है। तू यह माला जल्दी से तैयार कर ले। ले, मेरे केश-पाश से लाल फूल निकाल ले। दूसरे फूलो को क्यो जगाती है।

गंगा आपके केशो की शोभा विगड जायगी, देवी! [प्रशंसा का अभिनय]

काशी क्या चिन्ता है!

गगा इन फूलो को आपके केश सजाने का आज जो सौभाग्य मिला है, वह इन्हे फिर कभी नही मिलेगा, देवी!

काशी अधिकार के क्षणिक होने मे ही उसका सौदर्य है। ले, निकाल। [**गंगा की ओर पीठ देकर खड़ी हो जाती है।**]

गंगा जो आज्ञा! [**गगा काशी की केशराशि से फूल चुनती है।**]

काशी (**फूल चुनते हुए**) ये फूल भी कहते होगे, 'हम काशी और गौहर की तुलना करेंगे, कौन अच्छी है!' इन फूलो की माला आज गौहर के गले मे पडेगी, गगा!

गंगा (**फूल चुनते हुए**) गौहर के हृदय मे पडने पर ये फूल मुरझा जायेंगे, देवी!

काशी : क्यो?

गगा . स्वदेश का व्यक्ति विदेश मे जाकर उदास हो जाता है।

[**सोना का प्रवेश। उसकी मुखमुद्रा पूर्ववत् मलीन है।**]

सोना (**प्रणाम करते हुए**) देवी, श्रीमान् आबाजी सोनदेव आ रहे है।

काशी मैं भी उनकी प्रतीक्षा मे हूँ। शायद वे श्रीमत शिवाजी भोसले के दर्शन करके आ रहे है। किन्तु सोना! मैने सुना है, तू बहुत उदास है?

सोना · (**अवरुद्ध कण्ठ से**) देवी.. ..! [**रुक जाती है।**]

काशी मैं जानती हूँ कि यादव रामचन्द्र के न आने से तू उदास हो गई है। किन्तु महाराष्ट्र की अन्य बहिनो के सुख मे तेरी उदासी काँटा बनकर न कसक जाय, इस बात का ध्यान रखना। तू क्या महाराष्ट्र के लिए इतना भी उत्सर्ग नही कर सकती, सोना?

सोना मैं जीवन तक उत्सर्ग करने के लिए प्रस्तुत हूँ, देवी!

काशी . साधुवाद! मैं यह सुनकर प्रसन्न हूँ। किन्तु यह मत समझ कि मुझे यादव रामचन्द्र के न लौटने का दुख नही है। मैं तो महाराष्ट्र के प्रत्येक वीर के लिए दीर्घायु होने की कामना करती हूँ, जिससे वह महाराष्ट्र और श्रीमत शिवाजी भोसले की सेवा अधिक-से-अधिक दिनो तक कर सके। मै अभी भाई आबाजी से कहकर अश्वारोहियो को भिजवाऊँगी। वे देखे कि यादव कहाँ रह गया है।

सोना . आपकी बडी कृपा होगी।

काशी : कृपा की कोई बात नही है। गगा, तू सोना को सात्वना दे।

गंगा : जो आज्ञा, देवी!

काशी . सोना, तू जा। मै अब अपने भाई से बात करूँगी।

सोना : जो आज्ञा, देवी! [**प्रणाम कर प्रस्थान**]

काशी : गगा! भाई आबाजी आनेवाले है। यह लाल फूल मुझे दे दे, मैं स्वय झुमका बनाऊँगी। यह माला भी यहाँ सिंहासन पर छोड दे, जब तेरे पास झुमका बनाने का समय नही है। तू सोना को सात्वना दे।

गंगा . जो आज्ञा, देवी! [**लाल फूल की अञ्जलि सामने फैला देती है, काशी फूल ले लेती है। इसके बाद वह माला सिंहासन के कोने में टाँग देती है तथा प्रणाम कर चली जाती है।**]

काशी : (अञ्जलि के लाल फूल देखती हुई) स्वदेश का व्यक्ति विदेश मे जाकर उदास हो जाता है ! मेरे स्वदेश के व्यक्ति. . .

[नेपथ्य में, 'आबाजी सोनदेव की जय !' काशी सजग हो जाती है और नेपथ्य की ओर देखती है। (आबाजी का स्वर) "सब खीमा में रहने की व्यवस्था ठीक है ?"(एक स्वर)"सब ठीक है, श्रीमान् !" (आबाजी का स्वर) "सैनिक अपना भोजन समाप्त कर चुके ?" (दूसरा स्वर) "कर चुके, श्रीमान् !" (आबाजी का स्वर) "श्रीमत शिवाजी भोसले के दर्शन के लिए तैयार रहो।" (तीसरा स्वर) "जो आज्ञा !" (आबाजी का स्वर) "अच्छा, मैं शिविर मे चलता हूँ।" काशी ध्यान से सुनकर सिंहासन के समीप खडी हो जाती है। कुछ क्षणों में आबाजी सोनदेव(आयु 25 वर्ष)का प्रवेश। बलिष्ठ शरीर, चाल में गम्भीरता, महाराष्ट्र के गौरव-स्तभ, बडे-बडे नेत्र, शक्ति और साहस के प्रतीक, रेशमी वेश-भूषा। लाल रग का अँगरखा और नीले रंग का चूड़ीदार पैजामा। मराठी ढग की पगड़ी, जिसमे एक कलंगी लगी हुई है। गेहुँआ रंग। माथे मे त्रिपुण्ड और हाथ मे तलवार। कमर मे जरी की पेटी और वक्ष पर मोतियो की कुछ मालाएँ। साहस की गति की भाँति प्रवेश।]

आबाजी काशी, तुम यहाँ हो ?

काशी : (आगे बढ़कर) भाई को प्रणाम।

आबाजी (हाथ बढाकर) सुखी रहो, काशी ! तुम यहाँ हो ? मैं तुम्हे अन्त पुर के शिविर मे खोज रहा था। श्रीमत शिवाजी हमारी विजय-सपत्ति देखने की कृपा करेगे। उसके लिए सब तैयारियाँ हो चुकी। तुम्हारा यह कक्ष तो पूर्ण है ?

काशी मेरी सब तैयारियाँ पूरी हो गईं। यह देखिये, यह कक्ष पूर्ण हुआ है या नही ?

आबाजी . (कक्ष के चारो ओर दृष्टि डालते हुए) बहुत सुन्दर है। (एक-एक वस्तु का नाम लेकर प्रशंसात्मक शब्दो मे रुकते हुए) सिंहासन.. . दो बडी मछलियो के राजचिह्न . ... जरी और भगवा वस्त्र की पताकाएँ . . मगलघट...... लावा मे धूप का धूम . .मृत्तिका-स्तूप पर पच-प्रदीप...... भिन्न-भिन्न भाँति के शस्त्र. . चँवर..... .. सब ठीक है। (सिंहासन पर टंगी हुई माला को देखकर) अच्छा, यह सुन्दर माला भी है ? श्रीमत के लिए मालाओ का प्रबन्ध तो प्रथम शिविर ही मे है।

काशी यह माला श्रीमत के लिए नही है। यह माला है......

आबाजी : (बीच ही मे) गौहरबानू के लिए। हाँ, स्मरण आया। कार्य की व्यस्तता मे मैं इन बातो को भूल गया हूँ।

काशी · (किंचित् मुस्कराहट के साथ) किन्तु गौहरबानू तो नही भूली जा सकती।

आबाजी : नही भूली जा सकती, काशी ! उसी गौहरबानू के लिए तो मुझे यह सब प्रबन्ध करना पड़ा । यदि कल्याण-विजय मे गौहरबानू मेरे हाथ न लगती तो सैनिको के शिविरो मे तुम लोगो की क्या आवश्यकता थी ? श्रीमन्त की आज्ञा है कि सेना के साथ न स्त्रियाँ रह सकती है और न दासियाँ । किन्तु गौहरबानू की मर्यादा-रक्षण के लिए मुझे इस शिविर मे अन्त पुर का प्रबन्ध भी करना पडा । मैने श्रीमन्त से गौहरबानू के सम्बन्ध मे तो कुछ नही कहा, किन्तु मैने उनसे निवेदन किया कि कल्याण-विजय के समारोह मे महाराष्ट्र की स्त्रियो का भी भाग हो । इस बहाने मैने गौहरबानू के लिए पूरा वातावरण उपस्थित कर लिया ।

काशी (**प्रशसा के स्वरो मे**) भाई, यह सब आपकी कार्यकुशलता है । इसीलिए तो आप अपने आक्रमणो मे सदैव सफल होते है ।

आबाजी वह भवानी की कृपा और तुम्हारी मगल-कामना है, काशी !

काशी (**उल्लास से**) महाराष्ट्र की ललनाओ के मगल-तिलक मे बडा बल है, मेरी आरती निष्फल नही जा सकती ।

[**आबाजी मुस्करा देते है ।**]

काशी · इसीलिए इतना बडा आक्रमण करने के अनतर आप लौट सके ।

आबाजी निस्सन्देह ।

काशी किन्तु भाई ! इस शिविर मे एक बहिन ऐसी भी है जिसका भाई नही लौटा ।

आबाजी · कौन ? सोना ?

काशी . हाँ, भाई ! उसके भाई यादव की खोज होनी चाहिए ।

आबाजी काशी, मैने पहले ही दो अश्वारोहियो को यादव की खोज मे भेज दिया है । जिस दल मे यादव था वह दल का दल नही लौट सका । इसलिए यादव का विवरण ज्ञात नही हो सका । सोना के साथ अन्य बहिने भी तो दु खी होगी । सोना तुम्हारे पास है, अत तुम उसी का दु ख जानती हो ।

काशी भाई, यादव के साथ अन्य सैनिको की तुलना नही हो सकती ।

आबाजी इसीलिए कि वह तुम्हारी सोना का भाई है ?

काशी इसलिए भी कि वह एक पराक्रमी और साहसी योद्धा है ।

आबाजी यदि कोई सैनिक वीर और पराक्रमी नही है तो वह महाराष्ट्र का सैनिक नही है । मेरे लिए सब सैनिक समान है ।

काशी फिर तो उन सब का विवरण मिलना चाहिए ।

आबाजी वह विवरण मुझे श्रीमन्त की सेवा मे भी उपस्थित करना है ।

काशी ठीक है, मै सोना से कह दूँगी । इससे उसे अवश्य सन्तोष होगा ।

आबाजी : (**मुस्कराकर**) और तुम्हे तो सन्तोष है, काशी !

काशी मुझे ? आप कुबेर की सम्पत्ति लूटकर लाये सकुशल और सानन्द, और सन्तोष न हो ? मै तो फूली नही समाती । मेरे भाई ने महाराष्ट्र-गौरव को इतिहास मे अमर कर दिया है ।

आबाजी केवल इस विजय-यात्रा की सम्पत्ति से ?

काशी : नही, महाराष्ट्र मे जागरण उत्पन्न करने के कारण ।

आबाजी . उसका एकमात्र श्रेय श्रीमन्त शिवाजी महाराज को है । शक्ति के अवतार, भवानी के भक्त । काशी ! देश के पुण्य से ही श्रीमन्त उत्पन्न हुए है । महारानी जीजाबाई के वरदान से ही श्रीमन्त महाराष्ट्र के सचालक है । जावली जीतने के बाद जब श्रीमन्त ने रायगढ का किला मोरे के हाथ से छीना तभी ज्ञात हुआ कि देश के पच्छिम मे भी एक सूर्य उदय हो गया है ! काशी ! मै तो उस सूर्य की एक किरण-मात्र हूँ ।

काशी सत्य है, भाई ! उन्ही से महाराष्ट्र मे स्वाधीनता का प्रकाश फैला हुआ है । श्रीमन्त का यश हम लोगो के मगल-तिलक से भी अधिक शक्तिशाली है ।

आबाजी हॉ, काशी ! श्रीमन्त भोसले अवसर से लाभ उठाने वाले है । दो वर्षो से मुगल शहजादे दिल्ली के सिहासन के लिए युद्ध कर रहे है—दारा, शुजा, मुराद और औरगजेब । औरगजेब मीर जुम्ला को दक्षिण का कार्य-भार सौपकर उत्तर भारत चले गये है । उनकी ओर से श्रीमन्त भी पूर्ण रूप से नि शक है । इधर बीजापुर मुगलो की सेना से पराजित हो ही गया था । वहाँ राजनीतिक पराजय के साथ शासन की भी पराजय हो गई । बीजापुर के मन्त्री कहते थे कि सेनापतियो के दोष से बीजापुर का पतन हुआ और सेनापति कहते थे कि मन्त्री की अदूरदर्शिता से बीजापुर की सेना हार गई । बात यहाँ तक बढी कि सेनापतियो ने बीजापुर के प्रधान मन्त्री खान मुहम्मद का खून कर दिया । काशी खून कर दिया ! राजनीति रक्त मे डूब गई । ऐसा अवसर श्रीमन्त हाथ से कब जाने दे सकते थे । उन्होने सह्याद्रि पार कर उत्तर कोकण लूट लिया और कल्याण और भिवडी के दो शहर बीजापुर राज्य से छीन लिये । श्रीमन्त के इस आक्रमण मे मेरा बहुत हाथ है, काशी ! . ओह ! मै तुमसे राजनीति की बाते करने लगा ।

काशी नही, भाई ! महाराष्ट्र की स्त्रियॉ राजनीति को भी अपने जीवन का अग समझती है ।

आबाजी (सिर हिलाकर) हॉ, यह बात तो है । तो मैंने इस आक्रमण मे जो सम्पत्ति लूटी हे वह आज तक श्रीमन्त के किसी आक्रमण मे नही मिली । क्यो काशी, तुम्हे अपने भाई की इस वीरता पर अभिमान है ?

काशी अपार रत्नराशि, अनगिनत वस्त्राभूषण, इतनी सम्पत्ति कौन एकत्रित कर सका है ? मेरे भाई की वीरता शब्दो मे नही कही जा सकती । महाराष्ट्र की प्रत्येक स्त्री यह चाहती है कि उसे आबाजी सोनदेव जैसा भाई मिले । इस दृष्टि से मेरे भाग्य से अन्य बहिनो को ईर्ष्या हो सकती है ।

आबाजी काशी यदि अन्य स्त्रियॉ चाहे तो वे भी मुझे अपना भाई समझ सकती है ।

काशी कितनी स्त्रियॉ आपको अपना भाई नही समझती ?

आबाजी . यह उनकी उदारता है ।

काशी : एक बात पूछूं, भाई !

आबाजी : प्रसन्नता से ।

काशी आप अप्रसन्न तो नही होगे ?

आबाजी · बहिन से कोई भाई अप्रसन्न हो सकता है ?

काशी · यह गौहर. ....गौहरबानू कौन है ?

आबाजी एक बार और यह प्रश्न पूछ चुकी हो, काशी !

काशी · किन्तु आपने सन्तोषजनक उत्तर नही दिया ।

आबाजी : (तीक्ष्णता से) और मैं क्या उत्तर दूं ? वह कल्याण के सूबेदार मुल्ला अहमद की पुत्रवधू है ।

काशी . देखिये, आप अप्रसन्न हो रहे है । (बुरा मानकर) अब मैं आपसे कोई बात नही पूछूंगी ।

आबाजी · (हँसकर) बुरा मान गईं । अच्छा, पूछो क्या पूछना चाहती हो ?

काशी · अब मै कुछ नही पूछूंगी ।

आबाजी अच्छा, काशी, मुझे क्षमा करो । अब सचमुच अप्रसन्न नही होऊँगा ।

काशी : (स्वस्थ होकर) वह बहुत सुन्दर है ।

आबाजी : (मुस्करा कर) हाँ, वह बहुत सुन्दर है ।

काशी . (सीधा प्रश्न न पूछ सकने के संकोच में हकलाकर) तो. ...तो वह बहुत सुन्दर क्यो है ?

आबाजी (हँसकर) यह कौन-सा प्रश्न है ? मै जानता हूँ, तुम क्या पूछना चाहती हो ।

काशी (लज्जित होकर) अच्छा, तो बतलाइये कि आप उसे क्यो लाये है ? श्रीमत भोसले का तो कहना है कि केवल पुरुषो ही को कैद करो; स्त्रियो को कैद मत करो । क्या इस बात की आज्ञा भी आपने श्रीमत से ले ली है ?

आबाजी इस बात को आज्ञा तो नही ली, काशी ! किन्तु गौहर स्त्री नही, देवी है । उसकी सुन्दरता की कहानी समस्त दक्षिण भारत मे प्रसिद्ध है । यदि चाँदनी पृथ्वी पर अवतार लेकर आये तो उससे सुन्दर नही हो सकती । इसके साथ ही वह महान् विदुषी है । वह तुम्हारी भाषा भी अच्छी तरह जानती है ।

काशी : तो, मै भी तो उसकी भाषा जानती हूँ ।

आबाजी . तुमने उससे बाते की ?

काशी बाते करने का अवसर तो नही मिला । हाँ, उसे देखा अच्छी तरह से है । वह बहुत कम बोलती है । ऐसा मैने सुना है ; अजुमन कहती थी ।

आबाजी : वह सर्वगुण-सम्पन्ना है । मैने अजुमन को उसकी सेवा मे नियुक्त कर दिया है । उसे किसी प्रकार का कष्ट न हो ।

काशी : यह तो आपने ठीक किया । किन्तु उसे आपने बन्दी कैसे किया ?

आबाजी (हँसकर) बीजापुर के खजाने पर अधिकार कर चुकने के बाद मैने अश्वारोहियो को आज्ञा दी कि वे सूबेदार का महल घेर ले। एक सिपाही ने मुझे सूचना दी कि सूबेदार मुल्ला अहमद भाग निकला है और उसके पीछे उसके विश्वस्त सेवको के साथ उसका हरम है। मैंने खजाने पर कडा पहरा डालकर कुछ सैनिको के साथ मुल्ला अहमद का पीछा किया। आगे बढने पर हरम की डोलियाँ दीख पडी। जब मुल्ला अहमद के सिपाहियो को हम लोगो ने देखा तो कुछ तो भाग निकले और कुछ डोलियो की रक्षा मे खडे हो गये। हम लोगो ने उन्हे एक ही धावे मे समाप्त कर दिया। मैने अन्य स्त्रियो की ओर देखा भी नही गौहरबानू को बन्दी करने की आज्ञा देकर लौट आया।

काशी गौहरबानू को उसके घरवालो से छीन लेने मे बडी निष्ठुरता है, भाई!

आबाजी तुम स्त्री हो, इसलिए ऐसा कहती हो। ये तो राजनीतिक मामले है।

काशी : गौहरबानू को आप मुक्त नही कर सकते ?

आबाजी : नही, मुक्त करने के लिए उसे बन्दी नही बनाया गया।

काशी : तो अब मेरे प्रश्न का उत्तर दीजिए कि आपने उसे बन्दी क्यो बनाया है ?

आबाजी · इस प्रश्न का उत्तर मैं तुम्हे नही दे सकता।

काशी . मै स्वय इस प्रश्न का उत्तर दूँ ?

आबाजी क्या ?

काशी . उस उत्तर को प्रश्न बनाकर कहूँ ?

आबाजी कह सकती हो।

काशी मैं उसे अपनी भाभी पुकार सकती हूँ ?

आबाजी : (तीक्ष्णता से) काशी! कैसी बाते करती है। क्या तू अपने भाई को नही जानती ?

काशी : (डरकर) जानती हूँ, जानती हूँ, फिर .. . .फिर गौहरबानू का क्या होगा ?

आबाजी तू राजनीति नही जानती, काशी! अभी दो-चार वसतो को और बीत जाने दे, तब तू राजनीति की बातो को समझ सकेगी ?

काशी मैं राजनीति की बाते नही समझना चाहती, किन्तु नारी के अपमान को समझती हूँ। मुझे बानू का बन्दी होना अच्छा नही लगा। [मुख फेर लेती है।]

आबाजी : इसमे नारी का क्या अपमान हुआ ? अपने अन्त पुर के शिविर मे उसे सुख की कितनी सुविधाएँ प्रदान की गई है। पथ मे सुगधित फूल, स्नान मे गुलाबजल, भोजन मे स्वादिष्ट व्यजन, सेवा मे अजुमन-जैसी कुशल परिचारिका।

काशी : भाई! स्त्री का सुख इन सब सुविधाओ मे नही है।

आबाजी . वह मैं जानता हूँ, काशी! लेकिन मैं राजनीति की एक कुशल चाल खेलना चाहता हूँ। मै गौहरबानू का ऐसा उपयोग करूँगा कि राजनीति भी मुझ

से पराजित हो जाय।

काशी क्या आप बीजापुर को सदैव के लिए झुकाना चाहते है ?

आबाजी मै यदि तुम्हे सब बाते बतला दूँ तो राजनीति और साधारण वार्तालाप मे अन्तर ही क्या रहा ?

काशी मै स्वय आपकी ऐसी राजनीति नही सुनना चाहती।

[उदासीन मुखमुद्रा]

आबाजी (मनाते हुए) रुष्ट हो गई, काशी ! इस समारोह के अवसर पर तुम्हारा रुष्ट हो जाना मेरी सारी प्रसन्नता को नष्ट कर देगा। एक छोटी-सी बात पर तुम अपने भाई के सारे परिश्रम को धूल मे मिलाना चाहती हो, काशी ! मैं तुम्हे आज्ञा देता हूँ कि तुम मुस्कराओ।

काशी मै नही मुस्कराऊँगी।

आबाजी : न सही।

[किन्तु इसी समय दोनो की दृष्टि परस्पर मिलने पर दोनो ही हँस पडते है।]

आबाजी अच्छा काशी, गौहरबानू कहाँ है ?

काशी स्नान कर रही है।

आबाजी तो तुमने उसके लिए सुगन्धित फूलो की मालाएँ तो तैयार कराई ही है, आज उसका अच्छे-से-अच्छा शृगार होना चाहिए। ज्ञात हो कि वह वन की अनुपम देवी है। और काशी, मै तुम्हे वचन देता हूँ कि मेरी ओर से गौहर के प्रति कोई अन्याय न होगा।

काशी : अन्तत आप मेरे ही भाई है। ऐसा क्यो न कहेगे ! अब मै बहुत प्रसन्न हूँ।

आबाजी तो फिर गौहरबानू से कुछ बाते कर लो और उसके शृङ्गार की व्यवस्था भी कर लो।

काशी मैने अजुमन से कह दिया है कि जैसे ही वह स्नान कर ले, उसका फूलो से शृङ्गार हो। उसे अन्तिम माला पहनाने के लिए मैने स्वय गगा से एक अच्छी माला गुँथवाई है। देखिये, वह सिंहासन पर है।

आबाजी (माला देखकर) बहुत सुन्दर है। और तुम भी बहुत बुद्धिमती हो। अच्छा, तो अब मै चलूँगा। श्रीमत के आने मे अब अधिक देर नही है। मै इस बीच मे थोडा निरीक्षण और कर लूँ। गौहरबानू का उत्तरदायित्व अब तुम्हारे ऊपर है। अपने भाई के सम्मान की रक्षा करना।

काशी अच्छी बात है, आप जाइये।

आबाजी गौहर के शृङ्गार मे भी शीघ्रता करना। [प्रस्थान]

काशी (आबाजी के चले जाने पर) गौहर के शृङ्गार मे भी शीघ्रता करना.. भाई की राजनीति समझ मे नही आती। (पुकारकर) गगा !

गगा (प्रवेश कर) आज्ञा !

काशी गौहरबानू के स्नान हुए ?

गगा जी, स्नान कर चुकी।

काशी अजुमन ने उनका शृङ्गार किया ?

गंगा अजुमन ने उनका शृङ्गार करने की चेष्टा की, किन्तु गौहरबानू ने अपना शृङ्गार नही कराया।

काशी : क्यो ! क्या बहुत दु.खी है ?

गगा जी, अजुमन ने बहुत समझाया, किन्तु गौहरबानू ने अपना शृङ्गार नही कराया।

काशी : मैने अजुमन से कहा था कि शृङ्गार के बाद वह गौहरबानू को मेरे सामने लाये। मै उससे बाते करना चाहूँगी।

गगा मैं अभी जाकर देखती हूँ।

काशी देखो। [**गंगा का प्रस्थान**]

काशी (**सोचती हुई**) गौहर शृङ्गार करना नही चाहती..... क्यो करे ? फूल माला मे कैद होकर मुरझाने लगता है। (**टहलती हुई सिहासन के समीप आती है और धीरे से माला उठाती है**) इसका प्रत्येक फूल गौहरबानू की तरह है बन्द ... कैदी (**माला तोड डालती है**) मैं उन्हे मुक्ति देती हूँ. ओह ! यदि मैं गौहर को भी मुक्त कर सकती ? [**गगा का प्रवेश**]

गगा देवि, गौहरबानू को लेकर अजुमन इस ओर आने की आज्ञा चाहती है।

काशी आने दो !

गगा (**टूटी हुई माला को देखकर**) देवी, यह माला

काशी (**लापरवाही से**) हाँ, इसमे झुमका नही लग सका, तो मैने इसे तोड दिया। बिना झुमके के माला ठीक नही है। जाओ तुम .. (**गगा का प्रस्थान। काशी टहलते हुए**) क्या इसीलिए इस शृङ्गार की माला मे झुमका नही लग रहा था ? माला मे झुमका नही, गौहरबानू मे सुख और सौभाग्य नही।

[**अजुमन का प्रवेश**]

अजुमन (**प्रणाम कर**) देवी ! गौहरबानू इधर आ गई है।

काशी अजुमन, गौहरबानू इधर आ गई है, तो उन्हे यहाँ ले आओ।

अजुमन जो आज्ञा ! [**प्रस्थान**]

काशी भाई आबाजी की राजनीति, स्त्रियो की स्वतन्त्रता से खिलवाड करने वाली राजनीति इसका अन्त कहाँ जाकर होगा—मुल्ला अहमद की परतन्त्रता मे या श्रीमन्त भोसले शिवाजी की स्वतंत्रता मे ?

[**गौहरबानू (आयु 18 वर्ष) का धीरे-धीरे प्रवेश, जैसे चन्द्र बादलो मे से निकल रहा है। नीचे रेशम की सलवार और प्याजी रग की ओढनी, गले मे गुलाबी रग का दुपट्टा, पैरो मे जरी की जूतियाँ, मुख**

पर घूंघट, दुबला-पतला शरीर जैसे पुष्परहित लता हो, गौर वर्ण और शरीर का समस्त आकर्षण। पीछे अंजुमन है।]

काशी : (आगे बढ़कर) आओ, गोहरबानू !

[गोहरबानू दो कदम आगे बढ़ती है।]

काशी : बानू ! महाराष्ट्र मे स्त्रियाँ घूंघट नही डालती। लाओ, मै तुम्हारा मुख खोल दूं।

[काशी गोहर का घघट उलट देती है। गोहरबानू का सुन्दर मुख दीख पडता है। अत्यन्त सुन्दर विशाल नेत्र, नासिका उठी हुई, पतले ओठ, कपोलो मे सौन्दर्य-कूप, केशो मे केवल एक मुक्ता-माला, नाक मे मोती की छोटी-सी बेसर जो ओठो पर झूल रही है जैसे संध्याकाल मे एक तारा जगमगा रहा हो। सारे शरीर में लज्जा और संकोच, मुख पर उदासी छा रही है। घूंघट उलटते ही उसके नेत्र से दो आँसू ढुलक जाते हैं, जैसे स्मृतियाँ तरल होकर नेत्रो से बह गई हो।]

काशी (सहृदयता से) आह ! आँसू ?......बानू, तुम्हारी आँखो मे आँसू ? इन आँसुओ से तुम्हारी सुन्दरता धुलेगी नही और भी मैली हो जायगी......(रुककर अंजुमन से) गोहरबानू को कुछ कष्ट तो नही हुआ ?

अंजुमन (नत होकर) नही, देवी ! मैने इनकी इच्छानुसार ही काम किया है। आपकी आज्ञा से मैं इनका शृङ्गार करना चाहती थी। इन्होने मुझे रोक दिया, मैंने इनका शृङ्गार नही किया। मेरा तो कोई अपराध .. . !

काशी . अच्छा, तो तुम जाओ।

अंजुमन . जो आज्ञा ! [सिर झुकाकर प्रस्थान]

काशी : (गोहर की ओर देखकर उद्विग्नता से) तुम्हे उदास नही रहना चाहिए, बानू ! [बानू कुछ उत्तर नहीं देती।]

काशी (अस्थिरता से) मुझे यह अच्छा नही लगता, मै भी स्त्री हूँ, बानू ! तुम्हारे आँसुओ से मुझे दु ख होता है। चाहे तुम शत्रु-पक्ष ही की क्यो न हो, किन्तु जातीय सहानुभूति तो मेरे हृदय से नही जा सकती। तुम्हारे आँसू मुझे दु.ख पहुँचाते हैं।

[बानू की आंखो से अधिक वेग से आंसू निकलने लगते हैं। वह गुलाबी दुपट्टे मे अपना मुख छिपा लेती है। काशी उसके निकट चली जाती है।]

काशी (सात्वना के स्वरो में) बानू ! तुम्हे धैर्य रखना चाहिए। नारी की मर्यादा रोने मे नही है, दृढता से दु.ख को सुख बनाने मे है। हमारे इतिहास मे इसके अनेक उदाहरण है। हम लोगो ने अपना बलिदान कर दिया है, किन्तु आंखो मे आंसू नही आने दिये। तुम्हारे आंसू देखकर मुझे लज्जा और क्लेश दोनो ही

होते हैं। बोलो बानू, मैं तुम्हारी क्या सहायता कर सकता हूँ ? [बानू फिर भी मौन रहती है।]

काशी (सोचते हुए) आँसू बीजापुर के सूबेदार मुल्ला अहमद बडी कठिनता से कुछ मोती इकट्ठे करे और उनकी पुत्रवधू गौहरबानू उन्हे आँखो से बेमोल लुटा दे ? (**बानू की ओर आग्रह से देखकर**) बानू, ये आँखे बहुत कीमती है। इन आँसुओ से किसी भी सल्तनत की नीव बह सकती है, और तुम इन्हे यो ही गिरा रही हो जैसे इस सह्याद्रि की चोटी पर ओस गिरा करती है। (रुककर) इधर देखो ! (**खिडकी की ओर सकेत करते हुए**) कितना सुन्दर दृश्य है। ये लताएँ चाँदनी मे डूब गई है जैसे सारा वन-प्रात निर्मल जल से भरा हुआ एक हम्माम है और ये लताएँ हमारी-तुम्हारी तरह स्नान कर रही है। [**बानू फिर भी मौन है।**]

काशी (**उँगली से सकेत करते हुए**) और उधर देखो, वह तारिका तुम्हारी तरह अकेली खडी है लेकिन वह उदास नही है, हँस रही है। [**बानू अब भी मौन है।**]

काशी : तुम्हे ठड तो नही लग रही है ? आओ, अग्निपात्र के समीप आ जाओ।

[**बानू को अग्निपात्र के समीप लाती है। उसके वस्त्र ठीक करती है।**]

काशी बानू, तुम बोलती क्यो नही ? मैं तुमसे इतनी बाते कर रही हूँ और तुम चुप हो ? मै तुमसे सहानुभूति रखती हूँ, मेरा नाम काशी है, मै बहिन, महाराष्ट्र सेनापति आबाजी सोनदेव की . ।

बानू (**चौंककर, अस्फुट शब्दों मे**) आबा ..जी .?

काशी (**प्रसन्न होकर**) हाँ, हाँ महाराष्ट्र सेनापति आबाजी सोनदेव, वीर, साहसी, पराक्रमी। उन्होने ही आज तुम्हे फूलो से सजाने (**रुककर**) तुमने फूल-मालाएँ नही पहनी ?

बानू फूल-मालाओ से हथकडियाँ मुझे ज्यादा अच्छी मालूम देती, देवी !

काशी (**मुस्कराकर**) ये हाथ और हथकडियाँ ? बानू ! इन हाथो मे पडकर लोहा भी सोना हो जाता। चाँदनी को भी कोई अँधेरे की कडियो से बाँध सकता है ? चाँद भी कभी अँधेरे बादलो मे बाँधा गया है ?

बानू (**गहरी साँस लेकर**) मेरे दर्द को अफसाना न बनाओ, देवी ! एक गिरे हुए महल की ईट को ठोकर मारना ठीक नही है। मुझे मेरे घर के लोगो से जुदा कर तुम लोगो ने क्या पाया ? खुदा की खिलकत मे क्या औरत इतनी गई-बीती चीज हो गई कि वह पत्थरो और ककडो की भाँति लूट ली जाय ? बेजान चीजो के साथ इन्सान को बाँध लेना जिन्दगी की सब से बडी तौहीन नही है ?

काशी (**उसी स्वर मे**) सबसे बडी, लेकिन बेजान चीज़ो की कीमत कम नही है, कभी-कभी तो जानदार चीजो से भी अधिक। जब बेजान बिजली गिरती है तो

इन्सान भी जलकर खाक हो जाता है। जब बेजान पानी बढ आता है तो वह सैकडो इन्सानो को बहाकर ले जाता है। बेजान और इन्सान मे अन्तर यही है कि बेजान को कोई दोष नहीं लगा सकता और इन्सान को लोग दोष लगा सकते है। काम दोनो का एक ही-सा है, लेकिन इसके माने यह नही है कि मैं बेजान चीजो के साथ तुम्हे रख रही हूँ। हजारो गौहर एक गौहरबानू के मुकाबिले मे कुछ भी नही है।

बानू इसका तुम्हे क्या जवाब दूँ, देवी! लेकिन सोचो मै कितने बडे घर मे पैदा हुई और कितने बडे घर मे गई। अपने बाप के घर मे इशरत से सोई और शोहर के घर मे जागी। लेकिन जागकर भी मैने सुनहले सपने देखे, आबेहयात से सिंचे हुए और मोतियो से सँवारे हुए। चार दिन भी न हुए थे कि सुना कल्याण पर मराठो की घटा छा गई। श्रीमत शिवाजी का नाम सैकडो बार सुना। उनकी बलन्दखयाली की तारीफ सुनी लेकिन क्या वह कहर मेरे ही सिर पर गिरना था?

काशी भाग्य की बात।

बानू आबाजी सोनदेव ने हम लोगो का पीछा किया। मराठो का एक दस्ता उनके साथ था। **(काँपकर)** ओह! मराठे! रात के डरावने सपने है। तलवार लेकर टूट पडते है, जैसे आँधी के हाथ मे बिजली हो। हमारे सिपाहियो मे और मराठो मे जग छिड गई। आबाजी ने हमारे सिपाहियो को परास्त कर मुझे कैद करने का हुक्म दिया और दूसरी सिम्त चले गये। ओह! मै दो रोज मे अपनी माँ के पास जाने वाली थी।

काशी **(सोचते हुए)** हुआ तो बहुत बुरा।

बानू **(करुण स्वर में)** मेरी माँ बीमार है। सुना है, हर रोज सूरज निकलने पर वे मेरे आने के रास्ते पर आँखे बिछाये लेटी रहती है। खाना आता है तो यह कहकर लौटा देती है कि बानू आकर खिलाएगी तो बीमारी मे दुबारा कैसे खा सकूँगी। ओफ!... मेरी माँ! [**कपड़ो मे मुँह छिपा लेती है।**]

काशी : (सात्वना देते हुए) बानू, इन बातो से अपनी तबियत मत खराब करो। श्रीमत अवश्य तुम्हारी हालत पर ध्यान देगे।

बानू मुझे इसका भरोसा है, देवी! तभी तो मै अपने दर्द को इस तरह दबाये हूँ। लेकिन मै समझती थी कि मराठो के पास भी औरत की कीमत है। वे उसकी अस्मत को ईश्वर की सुन्दरता समझते है। लेकिन आबाजी सोन देव।

काशी : बानू, आबाजी सोनदेव को बुरा क्यो कहती हो? आपस की इस लडाई को बुरा क्यो नही कहती जिसने हिन्दू और मुसलमानो को आपस मे लडा दिया है। दक्खिन मे औरगजेब की नीति को बुरा क्यो नही कहती, जिसने हिन्दुओ और मुसलमानो मे भेद का बीज बो दिया है, दोनो को तलवार और ढाल की तरह लडा दिया है।

बानू वाकई यह बहुत बुरा है, लेकिन न तलवार टूट सकती है और न ढाल कट सकती है।

काशी दोनो ही न कटे, दोनो ही न टूटे, लेकिन वे दोनो चाँद और सूरज की तरह तो चमक सकते है। अगर मैं इस समय शाहशाह की जगह दिल्ली की सुलताना होती तो कहती, (**आगे बढकर गौरवपूर्ण स्वर मे**) 'हिन्दुओ और मुसलमानो, तुम हिन्दुस्तान मे न्याय की तराजू के दो पलडे हो, एक दूसरे को सँभाले रहो। इस तरह सधे रहो कि किसी के साथ किसी तरह का पक्षपात न हो। दोनो एक ही गीत के स्थायी और अन्तरा हो। इस तरह स्वर खीचो कि बेताल न हो सको। साँस के खीचने और छोडने की तरह तुम दोनो एक दूसरे से जुडे हुए हो, जिन्दगी मे कभी न रुकने वाले हमेशा साथ-ही-साथ चलने और रहने वाले ऐसे ही तुम दोनो हो।' (**बानू से**) क्यो बानू ?

बानू आप ठीक कहती है, देवी! लेकिन दिल्ली की यह किस्मत नही हो सकी कि आप सुलताना हो।

काशी तभी यह सब कुछ हो रहा है। मैंने अपनी परिस्थितियो पर विचार किया है और मुसलमानो की हालत पर गौर किया है।

बानू (**सोचकर**) मैं एक बात कहूँ, देवी ?

काशी अवश्य।

बानू आप मुझे आजाद नही करा सकती, देवी ?

काशी मुझे बहुत प्रसन्नता होती यदि मैं ऐसा कर सकती। लेकिन बानू मैं ऐसा नही कर सकती।

बानू आप आबाजी की बहिन है, देवी! बहिन होकर इतना भी नही कर सकती ?

काशी यदि कर सकती तो तुम्हे इतना कहने की आवश्यकता भी नही होती। बानू, तुम नही जानती कि मैं तुम्हारे कैद हो जाने से अपने भाई से सन्तुष्ट नही हूँ। किन्तु भाई की आज्ञा के बाहर भी तो नही जा सकती। फिर भाई ने तुम्हे किस लिए कैद किया है यह भी नही जानती।

बानू मैं जानती हूँ। खूबसूरत होना दुनिया मे सबसे बडा गुनाह है।

काशी और इसकी सजा क्या है।

बानू बदसूरत कर दिया जाना।

काशी : तुम ठीक कहती हो, बानू! फिर भी आबाजी की आज्ञा टालने मे मैं असमर्थ हूँ।

बानू अपने को इतना कमजोर समझती है आप ?

काशी कमजोर नही समझती, लेकिन परिवार और समाज की मर्यादा तोडी नही जा सकती और फिर यह तो राजनीति की बात है। राजनीति पुरुषो के हाथ मे सौप देना बुरा नही।

बानू : और अगर मेरी तरह कोई आपको भी कैद कर ले ?

काशी (**लापरवाही से**) तो मैं भी कैद हो जाऊँगी। मैं भी चली जाऊँगी। लेकिन मेरी ओर कोई देख नही सकता। देखती हो, (**कटार निकालती है**) यह अमर-जीवन देने वाली ? (**गौहरबानू की ओर देखती है**) अच्छा ! तुम्हारे पास भी है। [**बानू की कमर मे लटकती हुई कट र की ओर संकेत करती है।**]

बानू है तो, लेकिन चाहते हुए भी मैंने खुदकुशी नही की। मुझे कौन रोक सकता था ? लेकिन मैंने सुना है कि श्रीमत शिवाजी बहुत बहादुर है। उनके दर्शन करना चाहती हूँ और चाहती हूँ कि उनके सामने खुदकुशी करूँ।

काशी तो क्या तुम श्रीमत शिवाजी के सामने खुदकुशी करोगी ?

बानू जरूर। अगर श्रीमत शिवाजी ने मेरे साथ अच्छा बरताव नही किया तो उनके साथ लड़ूँगी। वे तो बहुत ताकतवर है, मैं उन पर क्या वार करूँगी खुद ही मरूँगी। देखूँगी कि मेरे कलेजे मे छुरी चुभने पर एक बहादुर के दिल पर क्या असर होता है।

काशी अच्छा बानू, तो तुम बहादुर भी हो ?

बानू क्यो ? क्या मैं कटार नही चला सकती ? कैद होने से पहले मैंने दो सिपाहियो को मौत के घाट उतारा था।

काशी . तो दो सिपाहियो को आप मार भी चुकी है ?

बानू : (**कटार निकालती हुई**) अभी शायद इस पर खून के दाग होगे भी। (**देखकर**) अभी तक दाग है, जैसे मराठो के तेज का सूरज मेरे खजर मे डूब रहा है।

काशी या मराठो के तेज का सूरज उदय हो रहा है। लाली दोनो मे बराबर है। (**सोचते हुए**) ओह ! तुम बडी बहादुर हो। जो लोग कहते है कि स्त्रियाँ कमजोर होती है वे भूल करते है। बानू जैसी देवियो के दर्शन करे। बानू, तुमसे मिलकर मुझे बडी प्रसन्नता हुई। अब मुझे मालूम हुआ कि आँसुओ के पीछे एक खजर भी छिपा हुआ था। मेरा ध्यान उस पर अभी तक नही गया था।

बानू इस कुसूर की माफी चाहती हूँ।

काशी कुसूर मेरा है या आपका ? खैर, इन बातो पर मैं अधिक ध्यान नही देती। आप भूल जाइये कि आप कैद मे है। मेरे साथ रहिए, मेरी बहिन की तरह। कोई आपकी ओर आँख उठाकर भी नही देख सकता।

बानू आपसे मुझे ऐसी ही उम्मीद है, देवी !

काशी देखिए यह चन्द्रकला काले पहाड से इस तरह निकलती है जैसे काले म्यान से खजर। देखूँ तुम्हारा खजर ! (**काशी पास जाकर कटार ले लेती है**) जिस तरह चाँदनी मे चन्द्रकला दीख पडती है उसी तरह गौहरबानू के हाथ मे यह खजर। बहुत अच्छा खजर है, बानू ! इतनी चमक इसमे कहाँ से आई ? [**बानू कुछ उत्तर नही देती।**]

काशी : बानू, मुझे माफ करना। यह खजर मुझे आपसे छीन लेना पडा। (**खजर को देखती है**) आप जैसी सुख-दु ख की मानने वाली स्त्रियो के हाथ मे खजर

रहना खतरे से खाली नही है। आवाजी ने कहा है कि आपकी जिम्मेदारी मुझ पर है।

बानू : स्त्री होकर आपने मुझे धोखा दिया है, देवी !

काशी बानू, तुम ऐसा क्यो सोचती हो ? मैं तुम्हे धोखा नही दे सकती, लेकिन बानू मैं यह नही चाहती कि भूल से भी तुमसे खुदकुशी हो जाय। मैं तुम्हे प्यार करने लगी हूँ। क्या यह ठीक है कि एक बहिन अपनी दूसरी बहिन के हाथ मे खजर इसलिए रहने दे कि वह दु:ख से पागल होकर आत्महत्या कर ले। मैं समझती हूँ कि बहुत बडी भूल करूँगी यदि तुम्हारी इस हालत मे तुम्हे मृत्यु की इस दूती के साथ छोड दूँ। यह जहर का काँटा असावधानी से शरीर मे चुभ सकता है।

बानू लेकिन देवी, मेरे पास जहर का एक काँटा और भी है। [कचुकी से दूसरी कटार निकलती है।]

काशी मैं जानती थी, बानू! इसलिए मैंने यह बात कही। हम लोग भी इसी तरह जहर के काँटो को अपने जिस्म मे छिपाये रहती हैं। (अपनी कंचुकी से एक कटार निकालती है) देखिए ! लेकिन यह काँटा दूसरो के बदन मे चुभाने के लिए है और सीने पर, पीठ पर नही। (रुककर) हाँ, तुमने तो दो सिपाहियो को कत्ल भी कर दिया है।

बानू हाँ, हसरत रह गई कि औरो को कत्ल नही कर सकी। लेकिन एक मराठा सिपाही बेकसूर मारा गया। वह मुझे बचाने आया, लेकिन धोखे से मैंने उस पर वार कर ही दिया, बेचारा यादव रामचन्द्र !

काशी (चौंककर) यादव. रामचन्द्र ?

बानू हाँ, यादव रामचन्द्र। क्यो ? चौक क्यो पडी ?

काशी . ओह ! सोना का भाई, यादव. . रामचन्द्र ।

बानू यह सोना कौन ?

काशी आप नही जानती, यह मेरी सहचरी है। बेचारी बहुत दुखी है अपने भाई के न लौट सकने के कारण।

बानू मुझे अजहद रज है, देवी ! मुझसे बहुत बडी गलती हुई है।

काशी लेकिन तुम उसका नाम कैसे जानती हो, बानू !

बानू उसके साथियो ने उसे यादव रामचन्द्र के नाम से पुकार कर ललकारा था। क्या वह कोई खास सिपाही था ?

काशी बहुत खास। वह तुम्हे बचाने आया और तुमने उसे मार डाला ?

बानू धोखा हुआ, देवी !

काशी आश्चर्य है, एक स्त्री ने असहाय होकर भी एक वीर सिपाही को मार डाला ?

बानू वह सिपाही असावधान था। वह क्या जानता था कि उस पर वार किया जायगा !

काशी कैसा हाथ था वह आपका, मुझे दिखला सकती हो ?

बानू : मुझे अधिक लज्जित न करो।

काशी लज्जित करने की बात नही है। मैं तुम्हारा वह हाथ देखना चाहती थी।

बानू : उसे तुम अपनी कटार पर रोक सकोगी ?

काशी हाँ, हाँ, तैयार हूँ। [**अपनी कटार सँभालती है। बानू शून्य मे कटार तानती है और प्रहार करती है। काशी उसे अपनी कटार पर रोकती है। इतने मे ही आबाजी सोनदेव की जय-ध्वनि। दोनो अपने को सँभालने की चेष्टा करती हैं, दूसरे ही क्षण आबाजी सोनदेव का प्रवेश।**]

आबाजी (**आश्चर्य से ठिठककर**) यह क्या.. काशी ? (**बानू को देखकर**) गौहरबानू ?

[**बानू अपने सिर पर वस्त्र सरका लेती है।**]

आबाजी काशी! तुम इस शिविर को ही क्या रणभूमि बना रही हो ? शिष्टता सीखो। मेहमान का स्वागत करो। श्रीमत शिवाजी आने वाले है।

काशी : (**हँसकर**) भाई, यह सचमुच का युद्ध नही। मै बानू का वह हाथ देख रही थी जो इन्होने यादव रामचन्द्र को मारने मे दिखलाया था।

आबाजी . हाँ, मुझे अभी सूचना मिली कि यादव रामचन्द्र स्वय गौहरबानू की कटार से मारा गया।

काशी और वह कटार इनके पास अभी तक है।

आबाजी . मै उस कटार को चाहता हूँ। श्रीमत अब आने ही वाले है। मुझे उनके सामने शस्त्रो का प्रदर्शन करना है। वे शस्त्र-पूजन करेंगे। (**काशी से**) काशी, तुम मुझे अपनी कटार दे सकती हो ?

काशी (**प्रसन्नता से**) यह मेरी और यह गौहरबानू की। [**दोनो कटारें देती है।**]

आबाजी (**कटारें लेते हुए**) क्या इनके अतिरिक्त गौहरबानू के पास और भी कटार है ?

काशी : हाँ, भाई! एक छोटी कटार और भी है।

आबाजी वह मुझे मिल सकेगी ? बानू! वह कटार भी मै चाहता हूँ। अब तो आपको उसकी कोई आवश्यकता नही। आपकी रक्षा करनेवाला यादव रामचन्द्र मर ही गया। श्रीमत शिवाजी उसका क्या निर्णय करते है यह तो स्वय श्रीमत जाने किन्तु आपने तो उसका निर्णय कर ही दिया। सम्भव है, शत्रु पक्ष की रक्षा करने के कारण श्रीमत भी उसे दडित करते। अब शायद सोना को दण्ड भुगतना पडे। अच्छा, जो हो। तो फिर वह कटार मुझे मिल सकेगी ? [**बानू मौन है।**]

काशी : कटार आपको मिल सकती है, किन्तु बानू के सम्मान पर किसी प्रकार की आँच नही आनी चाहिए।

आबाजी : नही आयेगी।

काशी और भाई, मैं यह बतला देना चाहती हूँ कि गौहरबानू का अपमान मेरा

अपमान होगा ।

आबाजी : वाह ! कुछ क्षणों के मेल-मिलाप मे ही यह नाता जुड गया ?

काशी सच्चे हृदयो के मिलने मे देर नही लगती।

आवाजी ठीक है, तब उनके और तुम्हारे सम्मान पर कोई आँच नही आयेगी, मैं वचन देता हूँ।

काशी (बानू से) बानू, अब अपनी कटार देने मे क्या आपत्ति है ? [बानू फिर भी मौन है।]

आबाजी (आगे बढकर) गौहरबानू, मैं आपके सम्मान की रक्षा करूँगा। मै वचन देता हूँ कि मैं आपके सम्मान को बढाऊँगा और अपनी ओर से मै आपको विश्वास दिलाना चाहता हूँ कि मैं आपका स्पर्श भी नही करूँगा। [बानू फिर भी चुप रहती है।]

आवाजी : गौहरबानू, अगर मैं चाहूँ तो आपसे कटार छीन सकता हूँ। आप इस वक्त मेरी कैद मे है, लेकिन महाराष्ट्र के लोग स्त्रियो की इज्जत करते है। वे आपके शरीर को हाथ भी लगाना नही चाहते। फिर आप किस बात से डरती है ? (टहलते हुए) आखिर आप अपने साथ कटार क्यो रखना चाहती है ? क्या मुझ पर या शिवाजी पर वार करेगी ? अगर पीछे से वार करेगी तो आपकी इज्जत नही बढ सकती और अगर सामने से वार करना चाहेगी तो आपके हाथ मे कटार दे दी जायगी। लेकिन ऐसा कोई मौका आपके सामने नही आयेगा। हम लोग स्त्रियो की इज्जत करते है। आपको कैद करने मे आपके अपमान की भावना मेरे सामने नही है। जो कुछ भी होगा आपकी स्वीकृति से होगा। आपको अब भी अपनी कटार देने मे कोई आपत्ति है ?

काशी बानू, अब तो कोई आपत्ति नही होनी चाहिए।

[बानू फिर भी अचल और मौन है।]

आवाजी : देखिए, गौहरबानू ! मै श्रीमत के शस्त्र-पूजन की व्यवस्था करने जा रहा हूँ। इस शिविर का प्रत्येक शस्त्र उनके हाथो से आज पूजित होना चाहिए। मैं आपसे थोडी देर के लिए आपकी कटार माँगता हूँ। मै आपके सामने भवानी की शपथ लेकर कहता हूँ कि आपके सम्मान की रक्षा होगी। मै श्रीमत शिवाजी का पूजन-विधान के नाते आपसे आपकी कटार चाहता हूँ।

[बानू अपनी कटार जमीन पर गिरा देती है।]

काशी (प्रसन्नता से) गौहर वास्तव मे गौहर है। [कटार उठाकर आबाजी को देती है।]

आवाजी (बढकर कटार लेते हुए) धन्यवाद, गौहरबानू। आप सचमुच ही एक आदर्श रमणी है, देवी है। मुख की सुन्दरता के साथ-ही-साथ आपके पास हृदय की सुन्दरता भी है। (कटार को देखते हुए) यह कटार .. (कटार को हाथ से ऊपर उठाते हुए) तू बानू जैसी वीर रमणी के हाथो मे रही, तू धन्य

है। अब तू श्रीमंत शिवाजी के हाथो मे जा। मृत्यु के दाँत की तरह टेढी होकर भी तू हृदय से लगाने योग्य है। (गौहरबानू से) गौहरबानू, आपको एक बार फिर धन्यवाद। अब आप जा सकती है। (पुकारकर) अंजुमन!

[अंजुमन का प्रवेश। वह आकर प्रणाम करती है।]

आबाजी अंजुमन! गौहरबानू अपने खेमे मे जाना चाहती है। इन्हे कोई कष्ट न हो।

अंजुमन जो आज्ञा। (गौहरबानू से) चलिए।

[अंजुमन के साथ गौहरबानू का प्रस्थान]

आबाजी (गौहरबानू को देखते हुए) श्रीमत शिवाजी के नाम पर इन्होने कटार दी।

काशी . श्रीमत शिवाजी के प्रति गौहर के हृदय मे बडी श्रद्धा है। कह रही थी कि वह श्रीमत के दर्शन करना चाहती है।

आबाजी फिर मै उनकी इच्छा पूरी करूँगा।

काशी किन्तु भाई, आपने एक भारी भूल की थी।

आबाजी · मैने! कौन-सी?

काशी · आपने गौहरबानू के पास एक नही दो-दो कटारे रहने दी। यदि वे अपने दु ख मे आत्महत्या कर बैठती तो आपकी राजनीति अधूरी रह जाती। मै आपके आने तक उन्हे बातो ही मे उलझाये रखना चाहती थी। मैं नही चाहती थी कि इतनी अच्छी स्त्री आत्महत्या करे।

आबाजी मै तुम्हारी बुद्धिमत्ता से प्रसन्न हूँ, लेकिन तुम शायद यह नही जानती कि अंजुमन को मैने गौहरबानू की सेवा मे क्यो रखा था। उसे मेरा पूरा आदेश है कि वह गौहरबानू की सेवा करते हुए भी उन्हे कभी अपनी कटार का उपयोग न करने दे। अंजुमन छाया की भाँति गौहर के पीछे है। अंजुमन के बाद मैने तुम पर सारा उत्तरदायित्व छोड दिया था। मुझे विश्वास था कि महाराष्ट्र की स्त्रियाँ अपना उत्तरदायित्व समझती है।

काशी प्रशसा के लिए धन्यवाद। किन्तु गौहरबानू ने मुझे वचन दिया है कि वे तब तक आत्महत्या नही करेगी जब तक कि उनके साथ अच्छे व्यवहार मे कमी नही आयेगी। उनके सम्मान पर किसी तरह की आँच नही आनी चाहिए, भाई!

आबाजी मै इस सम्बन्ध मे तुम्हे पूर्ण आश्वासन देना चाहता हूँ। (कुछ ठहरकर) अच्छा काशी, श्रीमत शिवाजी अब आने ही वाले है। मोरोपत पेशवा उनके साथ होगे। वे कल्याण की विजय-लक्ष्मी का निरीक्षण करेगे। मैने जितने भी रत्न इस विजय मे एकत्रित किए है उन्हे एक स्वर्ण-थाल मे सजाओ और श्रीमत के आने पर प्रस्तुत करो।

काशी बहुत अच्छा। [जाने को प्रस्तुत होती है।]

आबाजी सुनो, काशी! जब श्रीमत इस शिविर मे पदार्पण करे तो तुम्हे उनकी

आरती उतारने के लिए तैयार रहना चाहिए।

काशी और गौहरबानू की आरती कौन उतारेगा ?

आबाजी तू मुझ पर व्यंग्य करती है, काशी !

काशी फिर यह व्यवहार क्या है कि एक ओर तो भवानी की शपथ लेकर आपने उसे न छूने की प्रतिज्ञा की और दूसरी ओर उसकी कटार को माथे चढा लिया ?

आबाजी तेरे लिए राजनीति नही है, काशी ! तू आरती की व्यवस्था कर।

काशी बार-बार राजनीति का नाम लेकर आप मुझे मूर्ख बना देते है। अच्छी बात है, अब मैं महाराष्ट्र के योग्य ही नही हूँ। गौहर क्या आत्महत्या करेगी, मै आत्महत्या करूँगी। करा लीजिएगा आप गौहर से ही आरती श्रीमत शिवाजी की या अपनी . । [**बुरा मान जाती है।**]

आबाजी बुरा मान गई ? नहीं, काशी तू बहुत बुद्धिमती है। तुझे अपनी बहिन के रूप मे पाकर मै गौरवान्वित हुआ हूँ। अच्छा, सुन ले तू भी राजनीति। कोई यहाँ है तो नही ? (**नेपथ्य की ओर देखकर**) शरीर-रक्षक, तुम जाओ। इस समय तुम्हारी आवश्यकता नही है।

बाहर से स्वर जो आज्ञा। [**जाने की आवाज**]

आबाजी सुनो, काशी ! मै तुम्हे अपनी राजनीति सक्षेप मे समझा दूँ। किन्तु तुम किसी से कहोगी तो नहीं ?

[**काशी नकारात्मक सिर हिला देती है।**]

आबाजी वचन देती हो ?

काशी . हाँ।

आबाजी : मैं गौहरबानू को कल्याण-विजय की सबसे बडी विजयश्री के रूप मे श्रीमत शिवाजी की सेवा मे भेट करना चाहता हूँ।

काशी क्या आप श्रीमन्त शिवाजी के चरित्र को जानते नही है ? क्या वे स्वीकार करेगे ?

आबाजी मुझे विश्वास है।

काशी वे पर-स्त्री को बडी श्रद्धा की दृष्टि से देखते है।

आबाजी मैं यह जानता हूँ कि गौहरबानू का सौन्दर्य किसी भी आदर्श के विरोध मे खडा किया जा सकता है। मै यह भी जानता हूँ कि श्रीमन्त की आज्ञा स्त्रियो को कैद करने की नही है। किन्तु मै एक ऐसा पाँसा फेकना चाहता हूँ कि श्रीमन्त गौहरबानू के सौन्दर्य पर मोहित हो जाये और महाराष्ट्र मे एक सुन्दरता की देवी आ जाय।

काशी किन्तु भाई, इसका उद्देश्य क्या है ?

आबाजी वह भी सुनना चाहती हो ? इस दैवी उपहार को पाकर श्रीमन्त मुझसे बहुत प्रसन्न होगे और इसके फलस्वरूप जानती हो क्या होगा ?

काशी (**उत्सुकता से**) क्या होगा ?

आबाजी · आबाजी सोनदेव श्रीमन्त शिवाजी भोसले के पेशवा होंगे। मोरोपन्त के स्थान पर समस्त महाराष्ट्र के पेशवा आबाजी सोनदेव !

काशी : मै बहुत प्रसन्न होऊँगी, भाई ! पेशवा की बहिन कहलाऊँगी, किन्तु मुझे इस कार्य मे सन्देह है।

आबाजी · तुम अभी बालिका हो, क्या समझो इन बातो को। किन्तु यह रहस्य किसी पर प्रकट न होने पावे, काशी !

काशी फिर गौहरबानू के सम्मान की रक्षा ?

आबाजी श्रीमन्त सभी परिस्थितियो को सँभाल लेगे, मुझे आगे की चिंता नही है। गौहरबानू श्रीमन्त पर श्रद्धा रखती है ही, आगे चलकर वही श्रद्धा प्रेम का रूप ले सकती है। मुगल इतिहास मे नूरजहाँ का उदाहरण तुम्हारे सामने है लेकिन यह सब होगा गौहरबानू की सम्मति से ही। हाँ, जब तक गौहरबानू श्रीमन्त की सेवा मे उपस्थित नही की जाती तब तक उनके सम्मान की रक्षा का प्रश्न मेरा है और मै वचन देता हूँ कि मेरे सरक्षण मे उनके सम्मान की रक्षा अवश्य होगी। हाँ, एक बात और .काशी, उसे तुम्ही को पूरा करना है।

काशी वह क्या ?

आबाजी श्रीमन्त के सामने जिस समय मै 'भवानी की जय' कहूँ उस समय तुम्हे गौहरबानू को द्वार तक पहुँचाना होगा।

काशी जैसी महाराज पेशवा की आज्ञा।

आबाजी (**किंचित् बनावटी क्रोध के साथ**) चुप, काशी ! अभी ऐसा कहने का समय नही है। यह रहस्य गुप्त रखना चाहिए, जब तक कि अभीष्ट-सिद्धि न हो जावे।

[**काशी मौन स्वीकृति देती है।**]

आबाजी अच्छा, तो अब तुम जाओ। आरती-पात्र सुसज्जित रहे, साथ ही स्वर्ण-थाल मे चुने हुए रत्न भी। और देखो, गौहरबानू को भी तैयार रखना। अच्छा, अब तुम मीनाजी को मेरे पास भेजो। वे यही पास के शिविर मे होगे।

काशी बहुत अच्छा। [**चलने के लिए उद्यत होती है।**]

आबाजी देखो, शरीर-रक्षक से कहला दो कि वह द्वार पर अपना स्थान ले।

[**काशी सिर झुकाकर स्वीकार करती है और जाती है।**]

आबाजी (**एक क्षण काशी के जाने की दिशा मे देखते है फिर लौटकर टहलते हुए**) काशी को मैने अपने महान् उद्देश्य की सूचना दे दी। गुप्त तो रखेगी ही (**दृढता से सिर उठाकर**) ठीक समस्त महाराष्ट्र के पेशवा हो जाने का गौरव .. मेरा होगा . मोरोपत के स्थान पर आबाजी सोनदेव (**फिर टहलते हुए**) गौहरबानू . तू देवी है, तू मेरे गौरव-शिखर की सोपान थी यह स्वय मुल्ला अहमद नही जानता होगा महाराष्ट्र का भाग्य । [**टहलते है।**]

[**मीनाजी का प्रवेश। साधारण सरदार जैसा वेश-विन्यास**]

मीनाजी (**प्रणाम कर**) आज्ञा, श्रीमान् की ?

आबाजी मीनाजी ! श्रीमन्त भोसले के इस शिविर-कक्ष मे आने मे अब देर नही है। वे इस कक्ष मे आने के बाद विजय-सामग्री का निरीक्षण करेगे। तुमने विजय की समस्त सामग्रियो को सुसज्जित कर लिया ?

मीनाजी आज्ञानुसार सब सामग्री प्रस्तुत है, श्रीमान् !

आबाजी 551 घोडे अश्वारोहियो के निरीक्षण मे है ?

मीनाजी जी, श्रीमान् !

आबाजी . मखमली, रेशमी और जरदोजी कपडो का सग्रह रघुनाथ बल्लाल के निरीक्षण मे है ?

मीनाजी जी हॉ, उनकी सूची भी तैयार करा ली गई है।

आबाजी : और शस्त्रो का सग्रह ?

मीनाजी वह भी रघुनाथ बल्लाल के निरीक्षण मे है।

आबाजी और रत्नो का सग्रह ?

मीनाजी . वह शभूजी कावजी के पास है, किन्तु उन रत्नो मे से कुछ चुने हुए रत्न श्री कुमारी काशीबाई के समीप भेज दिए है।

आबाजी : हॉ, जैनी मैं आज्ञा दे चुका हूँ वे रत्न एक स्वर्ण-थाल मे सजाकर काशीबाई श्रीमन्त की सेवा मे प्रस्तुत करेगी (ठहरकर) और देखो, श्रीमन्त के आने के मार्ग मे वन्दनवार और पताकाएँ लगवा दो !

मीनाजी उसके लिए गगाबाई से कह दिया गया है।

आबाजी और प्रतापगढ के किले मे भवानी की पूजा की व्यवस्था सब ठीक है ?

मीनाजी जी, सोनाजी पडित वहाँ उपस्थित है और पडितराव से दान के लिए दो हजार होण भी निकलवा लिए है। ऐसी श्रीमन्त भोसले ने इच्छा प्रकट की थी।

आबाजी ठीक है। शिविर-द्वार पर मगल-दीप के साथ दो परिचारिकाओ को खडे होने की आज्ञा दो !

मीनाजी ये सब प्रस्तुत है, श्रीमान् !

आबाजी अब तुम जा सकते हो, सब बातो मे सतर्कता हो।

मीनाजी जो आज्ञा ! [जाने को उद्यत होते हैं।]

आबाजी नही, तुम मेरे ही साथ रहोगे। परिचारिकाओ को ले आओ।

मीनाजी जो आज्ञा ! [प्रस्थान]

[आबाजी सिहासन के समीप जाकर सब चीजो का निरीक्षण करते है और गौहर की कटार ध्यान से हाथ से लेकर देखने लगते है। मीनाजी आते है और अपने साथ दो परिचारिकाओ को मगल-दीप के साथ लाते हैं। परिचारिकाएँ दोनो द्वार पर खडी हो जाती है, आबाजी कटार को सिहासन के समीप रखकर मुडते हैं। इसी समय नेपथ्य मे 'श्रीमत भोसले शिवाजी महाराज की जय ! श्रीमंत भोसले शिवाजी महाराज की जय !' की ध्वनि और तोप की

सलामी। बाहर बातचीत और हल्की कठध्वनि।]

आबाजी (सजग होकर और म्यान से तलवार निकालकर) मीनाजी, तुम सिंहासन के समीप अपने स्थान पर खडे होओ।

[मीनाजी तलवार निकालकर सिंहासन की बायी ओर खड़े होते है। नेपथ्य मे फिर 'श्रीमंत भोसले शिवाजी महाराज की जय!']

आबाजी · (सोनदेव और मीनाजी जय के स्वर मे अपना कण्ठ मिला कर दक्षिण द्वार की ओर देखते हुए) स्वागत श्रीमन्त!

[नेपथ्य मे दक्षिण द्वार से फूल उछाले जाते है। श्रीमन्त शिवाजी (आयु 30 वर्ष) का प्रवेश। सब का नत-मस्तक होना। श्रीमन्त शिवाजी गौर वर्ण के है, उनका शरीर बलिष्ठ और गठीला है, यौवन और शक्ति का सम्पूर्ण सौंदर्य उनके अंग-अंग से फूट रहा है। वे मझोले कद के आदमी है। चलने-फिरने मे तेजी और स्फूर्ति है, मुख पर एक हल्की-सी मुस्कुराहट। विशाल नेत्र, जिनमे तीक्ष्णता और चंचलता है। उनके बाल कानो के समीप लम्बे होकर उनकी दाढी से मिले हुए है, जो नीचे जाकर नुकीली हो गई है, उनकी मूँछें भी पतली और गलगुच्छे के समीप तक आने वाली है। कानो मे दो बड़े-बडे मोती झूल रहे है। माथे पर हल्की रेखाओ का एक त्रिपुड लगा हु... गले मे अनेक मोतियो की मालाएँ है। शिवाजी मुगल ढग की पग... पहने हुए है, जिसके ऊपर मोतियो और रत्नो का सिरपेच चिह्न की है। ऊपर बडी सुन्दर कलंगी है, वे वक्षस्थल पर गुणित राशि राजी... ट्टियो का एक अँगरखा पहने हुए है, जिसमे रत्नो की ...इयो के पास ...ई है। अँगरखे की दोनो बाँहे फूली हुई है किंतु कला- ...बगल मे से हो... ...ाकर चुस्त हो गई है, जहाँ मखमल की पट्टियाँ है। ...की तलवार त... ...र जाने वाले एक नीले रेशम का दुपट्टा है जो कमर रत्नो से जडा हु... लटक रहा है। कमर मे जरी की पेटी है जिनका एक कटार सजी ... छोर घुटने तक झूल रहा है। जरी की पेटी मे जिसकी तलवार ... है और दूसरी ओर नीली म्यान लटक रही है सफेद रंग का चूड़ीद... समय श्रीमन्त शिवाजी के हाथ मे है। शिवाजी बहुत ऊ... पैजामा पहने हुए है और पैर मे एडियो से शिवाजी के पीछे र... तक खिचे हुए नुकीले जूते है।

शिवाजी के साथ पेशवा... ...ाथ बल्लाल और शम्भूजी कावजी है। सेनापतियो के ... ...ा मोरोपन्त है जिनका वेष-विन्यास महाराष्ट्र पहिने हुए ... ...मान है। वे सब रेशमी अँगरखे और चूडीदार पैजामे रही है, ... । सभी के हाथो मे तलवारें है और कमर से म्याने झूल ...दो कमर की पेटियो से कसी हुई है। सिरो पर साधारण

पगडियाँ और माथे पर त्रिपुण्ड है। एक-एक मोती की माला उनके गले मे है। मोरोपन्त की पगडी जरी की है और वे मोती की चार मालाएँ पहने हुए हैं। श्रीमन्त शिवाजी के प्रवेश करते ही उन पर जयघोष के साथ फूलों और अक्षत की वर्षा होती है। शिवाजी रंग-मंच के मध्य मे खडे हो जाते हैं और तीनो सरदार उनके समीप ही फैलती हुई किरण के रूप मे खड़े हो जाते हैं। मोरोपन्त शिवाजी की दाहिनी ओर हैं। उसी समय काशी आरती-पात्र लेकर प्रवेश करती है और आरती उतारकर प्रस्थान करती है।]

शिवाजी · (**चारो ओर दृष्टि डालकर गौरवपूर्ण शब्दो मे**) वीरो! महाराष्ट्र जननी जीजाबाई के आशीर्वाद को विजय-लक्ष्मी तुम्हे मगलमय हो। स्वाधीन राज्य की स्थापना करने वालो! तुम्हारी जाति का प्रण अमर हो। सैकडो बाधाओ और विपत्तियो को झेलकर फिर अपना सिर ऊँचा करने वाले वीरो! तुम्हारी शक्ति से महाराष्ट्र-जननी सन्तुष्ट है।

सब श्रीमन्त शिवाजी भोसले की जय!

शिवाजी (**मुस्कराकर**) नही, यो कहो, महाराष्ट्र सैनिको की जय!

सब (**उच्च स्वर से**) जय!

शिवाजी शिवा भवानी की तलवार की चिनगारियो से ही दक्षिण मे स्वतन्त्रता का प्रकाश हो रहा है। बन्धुओ! तुम्हारी वीरता का केन्द्रमडल तुम्हारी महाराष्ट्र जननी है, जिसने सह्याद्रि के पर्वत से अपनी शक्ति-धारा के प्रवाह मे तुम्हे आगे बढने का वेग और बल प्रदान किया है। मोरोपन्त, कल्याण और भिवडी नगरो को जीतने मे किसकी प्रशसा करनी चाहिए, जानते हो?

मोरोपन्त श्रीमत की।

शिवाजी नही। (**रघुनाथ की ओर देखकर**) रघुनाथ?

रघुनाथ बीजापुर की राजनीति की।

शिवाजी · नही। (**शम्भू की ओर देखकर**) शम्भूजी?

शम्भूजी आपके आक्रमण की नीति की।

शिवाजी · नही। (**आबाजी की ओर देखकर**) आबाजी?

आबाजी मुल्ला अहमद की व्यापार-लोलुपता की।

शिवाजी (**दृढता से**) नही, नही, नही। मै इस जीत की सारी प्रशसा देना चाहता हूँ औरगजेब को या मुगल सिहासन पर अधिकार करने की उसकी महत्त्वाकाक्षा को। शाहशाह शाहजहाँ बीमार है, शाही बुलन्द इकबाल दारा से लोहा लेने के लिए औरगजेब दक्षिण छोडकर उत्तर की ओर बढ गया है। वह नही जानता कि मीर जुमला सिर्फ खेत का धोखा है। औरगजेब का यहाँ से चला जाना मुगल सल्तनत का दक्षिण से चला जाना है और यह विजय उसका एक नमूना है।

[**सब स्वीकारात्मक सिर हिलाते हैं।**]

मोरोपन्त · यह आपकी दूरदर्शिता है।

आबाजी . यह आपकी नीति-निपुणता है।

शिवाजी · और इस अवसर से लाभ उठाने की दूर-दृष्टि हमारे वीरो की है। स्वय प्रकृति देवी ने दक्षिण मे हमारे लिए अनेक पहाडी किले तैयार कर दिये है, जिनमे अपनी शक्ति के व्यूह तैयार कर मराठे काल की तरह झपटकर शत्रुओ को तलवार के घाट उतार देते है। मै इससे प्रसन्न हूँ। पहाड़ियो के ऊपर से गिराये जाने वाले पत्थर लुढकते हुए काल की तरह शत्रुओ को अपने साथ घसीट ले जाते है।

मोरोपन्त और वे इस तरह घसीटते है कि उनका आकार ही बदल जाता है।

शिवाजी · उसी तरह जिस तरह प्रत्येक दिन सूरज उदय होकर देखता है कि कल जिस प्रान्त पर उसने प्रकाश डाला था उसका भी आकार बदल गया है। हमारे आक्रमण की शीघ्रता सूर्य की शीघ्रता से भी शीघ्र है। अँधेरी रातो मे जिस तरह चाँद बढता है उसी तरह तुम्हारे राज्य की सीमा बढती है।

आबाजी : और औरगज़ेब उस अँधेरे मे एक तारे की तरह काँप कर यह सब देखता है।

शिवाजी लेकिन आबाजी, यह तुम स्मरण रखो कि यह तारा किसी दिन मुगल सल्तनत पर पहुँचकर सूरज बन सकता है। इसलिए मैने औरगजेब से मित्रता करना बुरा नही समझा जब तक कि वह मेरे साथ विश्वासघात न करे। रघुनाथ बल्लाल को कोरडे भेजकर सम्मानपूर्ण सन्धि की तलवार से मैने औरगजेब के नाखून काट दिए है। रघुनाथ तो औरगजेब का रुख भी देख आये है।

रघुनाथ श्रीमत, मुगल सेनाओ से जब बीजापुर पराजित हुआ तो उसने औरगज़ेब से सन्धि कर ली। उसी समय मै उसके पास पहुँचा। औरगज़ेब बहुत चिढा हुआ था लेकिन आपके सन्देश से उसे सन्तोष मिला। उसने कहा कि शिवाजी के साथ दोस्ती करना एक ऐसे शेर के साथ दोस्ती करना है जो किसी वक्त भी पैतरा बदल सकता है, खून का प्यासा हो सकता है।

आबाजी लेकिन सारे मराठा-प्रदेश पर उसने श्रीमत का अधिकार तो स्वीकार कर लिया।

मोरोपन्त . हाँ, अधिकार तो स्वीकार कर लिया लेकिन उसने यह शर्त भी रखी कि श्रीमत मुगल सीमा की रक्षा करेगे।

शिवाजी : मुगल सीमा की ? दक्षिण मे मुगल सीमा पिघलती हुई पृथ्वी की सीमा है जो आज यहाँ बनती है, कल वहाँ बनती है। जब तक औरगज़ेब खुद न्यायी है, शिवाजी भवानी की तलवार लेकर पढरपुर मे शपथ ले चुका है कि वह भी न्यायी रहेगा। लेकिन जब औरगजेब विश्वासघात करेगा तो शिवाजी विश्वासघात का बदला देना भी जानता है। दादाजी कोडदेव की शिक्षा कभी अधूरी नही रही।

मोरोपन्त उसने आदिलशाह को दिल्ली जाते समय लिखा भी था कि शिवाजी ने कितने ही किलो पर अधिकार कर लिया है। उनको इन सबसे हटा दो और अगर श्रीमत शिवाजी से मित्रता करनी ही है तो उन्हे कर्नाटक मे जागीर दे दो जिससे वे बादशाही राज्य से अलग रहे और उपद्रव न मचावे।

शिवाजी क्या इस आज्ञा मे मेरे साथ सन्धि होते हुए भी विश्वासघात की दुर्गन्धि नही है ? फिर भी मोरोपन्त, कल औरगजेब को सूचना दो कि मैंने मुगल सल्तनत को न छूते हुए बीजापुर पर आक्रमण किया है और कल्याण और भिवडी के किले जीत लिये है। उसे मेरी विजय से किसी प्रकार की आपत्ति नही होनी चाहिए और यदि इस विजय को वह अपनी राज्य-तृष्णा मे बाधक समझता है तो मुझसे वह लोहा ले सकता है। मुगल सल्तनत का लालच छोडकर वह दक्षिण चला आये, हमे भी मुगल सेना से लडने मे आनन्द मिलता है। खुलकर लडने की इच्छा केवल औरगजेब से होती है।

मोरोपन्त इस समय औरगज़ेब नही आ सकता। दारा की बुलन्दी से वह नाराज है। डरता है कि शाहजहाँ के बाद दिल्ली का तख्त कही दारा के हाथ मे न पहुँच जाय। उसे दारा के भाग्य से ईर्ष्या है।

शिवाजी तो जो अपने भाई के ऐश्वर्य से जलता है वह मेरे ऐश्वर्य से क्यो न जले ? क्यो न वह नर्मदा से उत्तर मे अपनी सीमा बढाये और दक्षिण का राज्य हमारे हाथ सौप दे ? हम दोनो दोस्त की तरह रहे और जिस तरह लडाई मे हम लोग तलवारे बढाना जानते है उसी तरह सन्धि मे दोस्ती का हाथ बढाना भी जानते है। लेकिन इसे भविष्य पर छोडो। आबाजी ! कल्याण की लूट का पूरा विवरण तुम दे सकते हो। तुम्ही इस लूट के सेनापति थे, मै उसे सुनना चाहता हूँ। **[सिहासन पर बैठते हुए।]**

आबाजी **(सिर झुकाकर)** जो आज्ञा, श्रीमत ! आक्रमण-नीति तो आपने ही बनाई थी, मैने उसे कार्य-रूप मे परिणत करने की चेष्टा-मात्र की है। बीजापुर की राजधानी मे ही प्रधान मत्री खान मुहम्मद का खून होने से जो गडबडी फैल गई थी उससे सेनानायको मे कल्याण के लूटने का विचार एक दूसरे से होड ले रहा था। प्रजा भागना चाहती थी, लेकिन उसके लिए कोई मार्ग न था।

शिवाजी यह मै जानता था, इसीलिए मैने अपनी सेना के एक बडे भाग को उत्तर कोकण मे एकत्रित कर रखा था, जिससे भागने के लिए कोई मार्ग न मिल सके।

आबाजी सत्य है, श्रीमत ! आपके भय से प्रजा उस ओर भाग ही नही सकती थी। बीजापुर के सेनानायको को कल्याण के लूट लेने का अवसर न देकर मै पर्वत श्रेणी के बीच से ही निकलकर कल्याण के नगर मे घुस गया और मैने नगर के खजाने पर कब्जा कर लिया।

शिवाजी तुम बहुत बहादुर हो, आबाजी ! फिर क्या हुआ ?

आबाजी : प्रजा समझ रही थी कि बीजापुर का कोई सेनापति उन्हे लूट रहा है।

मोरोपन्त ऐसा क्यो ?

आबाजी बीजापुर के सेनापति मुस्तफा खाँ की फौज मे मुसलमान और मावले ही अधिक सख्या मे है, इसलिए मैने अपनी जिस सेना से आक्रमण किया था उसमे मावले और मुसलमान ही अधिक रखे थे। प्रजा को मुस्तफा खाँ की सेना का पूरा भ्रम हुआ। वे डटकर मेरा विरोध भी नही कर सके। चुपचाप घरो से भाग निकले।

शिवाजी : तुम्हारी बुद्धिमत्ता सराहनीय है, आबाजी !

आबाजी · श्रीमत ! फिर मैने कुनवी घुडसवारो की एक टुकडी लेकर कल्याण की सेना पर आक्रमण कर दिया। शम्भूजी कावजी मेरे साथ ही थे, सेना लापरवाह और बेखबर थी। शम्भूजी ने अस्त-व्यस्त सेना को ठिकाने लगाकर 551 घोडो पर घेरा डालकर उन्हे आपकी सेना के भीतर कर लिया। इस समय वे घोडे आपके अश्व-निरीक्षको के पास है।

शिवाजी मैं उन घोडो का निरीक्षण करूँगा। (**शम्भू की ओर**) शम्भूजी ! तुम वीर हो, मैं तुम्हे प्रतापगढ का दवीर (सामन्त) नियुक्त करता हूँ। (**शम्भूजी दोनो हाथो मे तलवार रखकर अभिवादन करते हैं**) और सुनो, उन 551 घोडो मे से दो घोडे अपने लिए चुनकर अपने वीर सिपाहियो मे वितरित कर दो।

शम्भूजी : जो आज्ञा, श्रीमत !

शिवाजी (**आबाजी की ओर**) अच्छा आबाजी, आगे ?

आबाजी : श्रीमत ! इसके बाद मैने रघुनाथ बल्लाल के साथ शाही पोशाकखाने पर आक्रमण किया। रघुनाथ बल्लाल ने अपने दोनो हाथो से छुरे चलाकर एक ही बार मे दोनो पहरेदारो को जमीन पर सुला दिया। रघुनाथ के छुरे चलाने की प्रवीणता सारे महाराष्ट्र मे किसी के पास नही है। उस समय मुझे याद आया कि रघुनाथ ने जावली का मैदान साफ करते समय इसी प्रकार छुरे चलाने की चतुराई से चन्द्रराव मोरे और सूर्यराव मोरे को खत्म किया होगा। शाही पोशाकखाने के सारे बेशकीमती कपडे और पगडियाँ इस समय हमारे कब्जे मे है।

शिवाजी (**रघुनाथ बल्लाल से**) रघुनाथ ! मै उन पोशाको को देखकर प्रसन्न होऊँगा। तुम जावली के शुरूनवीस (सचिव) नियुक्त किए गये। (**रघुनाथ दोनो हाथो मे तलवार लेकर अभिवादन करता है**) शाही वस्त्रो मे से दो पोशाके अपने लिए चुनकर तुम अपनी इच्छानुसार सब पोशाके बारगीरो मे वितरित कर दो। (**कुछ स्मरण करते हुए**) हाँ, भिश्तियो और नालबन्दो को भी पोशाको मे से कुछ भाग मिलना चाहिए।

रघुनाथ (**सिर झुकाकर**) जो आज्ञा !

आबाजी श्रीमत, इसके बाद मैने अपना रुख शस्त्रागार की ओर किया और जितने

बीजापुर के शाही हथियार थे वे सब अपने अधिकार मे कर लिये। उनमे अनेक भाले, शिरस्त्राण, तलवार, तीर और धनुष हैं। वे इस समय प्रतापगढ के किले मे रघुनाथ के सरक्षण मे है।

शिवाजी (प्रसन्न होकर) बहुत अच्छा! (मोरोपन्त से) मोरोपन्त! वे सब शस्त्र विजयादशमी के दिन तक सुरक्षित रखो और उस दिन सेना सगठन करते समय नेताओ के आधीन जितने भी 'पागादल' हो उनमे वितरित करने की घोषणा कर दो। जितने भी वर्गी, हवलदार, जुमलादार और एक हजारी हो उन सबका इस शस्त्र-सग्रह मे भाग होगा। इसकी सूचना 'सर-ए-नौबत' को दे दो। हाँ, एक बात और। शरीर-रक्षक मावले प्यादो को भी इन शस्त्रो के पाने का अधिकार होगा।

मोरोपन्त जो आज्ञा।

आबाजी : श्रीमत, आपकी शक्ति का सहारा पाकर मैंने इस बार लूट के सग्रह मे अतुल सम्पदा प्राप्त की है।

शिवाजी · आबाजी, मैंने तुम्हे अपना मजमुआदार अमात्य नियुक्त किया। मोरोपन्त! इस बात की घोषणा कल ही हो जानी चाहिए।

मोरोपन्त जो आज्ञा।

[आबाजी घुटने टेककर तलवार को दोनो हाथो मे रखकर अभिवादन करते हैं।]

आबाजी (उठकर) श्रीमत, मैं अपने को इस पद के योग्य सिद्ध करूँगा। आक्रमण मे मैंने जो अतुल सम्पदा प्राप्त की है वह मैंने कल्याण के शाही खजाने से प्राप्त की है। सदर और मुहतसिब का सिर धड से जुदा कर मैंने ऐसे-ऐसे रत्न और कीमती जवाहिरात पाये हैं जो अभी तक की लूट मे प्राप्त नही हो सके थे। श्रीमत, बडी-बडी पेटियो मे वे रत्न ऐसे बिखरे हुए थे जैसे आकाश मे तारे। मैंने उन्हे एकत्रित कर सूर्य के समान चमकती हुई सोने की पेटी मे डाल दिया है। उन रत्नो मे से चुने हुए रत्न मैं आपकी सेवा मे प्रस्तुत करना चाहता हूँ। (कुछ जोर से पुकारकर) काशी!

[स्वर्ण-थाल मे रत्न लेकर काशी का प्रवेश। वह श्रीमत शिवाजी के सामने घुटना टेककर उनके सामने स्वर्ण-थाल बढ़ाती है।]

शिवाजी (स्वर्ण-थाल की ओर देखकर, प्रसन्नता के स्वर मे) बहुत सुन्दर रत्न हैं। आबाजी! तुमने इन रत्नो का सग्रह कर महाराष्ट्र को बहुत सम्पन्न बना दिया है। अब वह अनेक वर्षो तक बडी-से-बडी शक्ति से मैदान ले सकता है। तुम्हे अनेक साधुवाद। काशी, उठो! इन रत्नो के पाने वाले अधिकारियो के नाम मैं लेना चाहता हूँ।

[काशी उठ खडी होती है।]

शिवाजी सबसे पहले काशीबाई, आबाजी सोनदेव की बहिन जिसकी मगल-कामना

से यह विजय पूर्ण हुई। [**एक रत्न चुनकर काशीबाई को देते हैं। काशीबाई बाएँ हाथ मे थाल लेकर दाहिने हाथ से लेती है और प्रणाम करती है।**]

काशी श्रीमत भोसले शिवाजी सदैव विजयी हो !

शिवाजी (**मुस्कराकर**) जिससे तुम्हे सदैव ऐसे रत्नो की प्राप्ति हो। मुझे विश्वास है, तुम्हे सदैव अच्छे-से-अच्छे रत्नो की प्राप्ति होगी। सबसे श्रेष्ठ रत्न तो अभी तुम्हे मिलना है। आबाजी उस रत्न का ध्यान तुम रखना।

[**काशी लज्जित होकर सकुचित होती है।**]

आबाजी : श्रीमत, मै ध्यान रखूँगा।

शिवाजी . इन रत्नो के दूसरे अधिकारी का नाम श्री आबाजी सोनदेव है। महाराष्ट्र सेना के नायक आबाजी, इसे पारितोषिक रूप मे स्वीकार करो !

आबाजी (**झुककर**) श्रीमत की कृपा। [**रत्न लेकर अभिवादन करते हैं।**]

शिवाजी (**दो रत्न लेकर**) इन दो रत्नो के अधिकारी पेशवा मोरोपन्त है।

मोरोपन्त : (**रत्नो को हाथ मे लेकर**) श्रीमत की कृपा। [**अभिवादन करते हैं।**]

शिवाजी · मोरोपन्त ! शेष रत्नो के दो भाग होगे। एक भाग मेरी पूज्य जननी श्रीमती जीजाबाई की सेवा मे प्रस्तुत किया जाय और दूसरा भाग राजकोष मे जमा हो।

मोरोपन्त जो आज्ञा, श्रीमत ! (**काशी से**) काशीबाई, यह रत्न-सग्रह पडितराव को देकर राज्य-भाडार मे जमा कर दो। शेष रत्न शम्भूजी कावजी जमा कर देगे।

शम्भूजी जो आज्ञा।

[**काशी पहले श्रीमत शिवाजी को और बाद मे अन्य सेनापतियो को प्रणाम करके जाती है।**]

शिवाजी मै इस आक्रमण के परिणाम से बहुत प्रसन्न हूँ। यह सब तुम लोगो की शक्ति से हुआ है। वीरो, सदैव शक्ति और साहस मे विश्वास रखो। आत्म-सम्मान भवानी का दिया हुआ सबसे बडा वरदान है। उस वरदान को प्राप्त करने की चेष्टा सदैव करते रहो। तुमसे महाराष्ट्र-जननी बहुत प्रसन्न है। तुम सब श्रीमती जीजाबाई के चरणो मे प्रणाम करने का यश प्राप्त करो। एक समय आवेगा जब मुगल सल्तनत को तुम लोगो के आतक से सिर झुकाना पडेगा। तुम्ही पर मेरी भावी आशाएँ निर्भर है। मेरे साथ कहो, "भवानी की जय।" (**भवानी की जय का नारा**) "श्रीमती जीजाबाई की जय।" (**जीजाबाई की जय का नारा**) मेरे साथ तुम सब लोग श्रीमती जीजाबाई के दर्शन करोगे और साथ-ही-साथ प्रतापगढ के किले मे चलकर शिवा-भवानी की पूजा मे उपस्थित रहोगे। मोरोपन्त ! साथ-ही-साथ मै शस्त्र-पूजा भी करूँगा। शस्त्रागार के समस्त शस्त्र उस समय मेरे सामने रहने चाहिए।

मोरोपन्त जैसी श्रीमत की आज्ञा।

शिवाजी अच्छा, अब हम चलेगे। आबाजी, तुमसे एक बात विशेष रूप से कहनी है। तुम मेरे साथ होगे। [**उठने के लिए प्रस्तुत**]

आवाजी श्रीमत, जो आज्ञा, किन्तु एक प्रार्थना और निवेदन करनी है। कल्याण के आक्रमण का एक उपहार और है।

शिवाजी . अच्छा, उसे भी उपस्थित करो। आबाजी, मैं तुम्हारी वीरता से बहुत प्रसन्न हूँ। मेरे हृदय मे तुमने वह स्थान बना लिया है जो आज तक किसी सैनिक ने नही बनाया। तुम्हे कल्याण का आक्रमण सौपकर मैने अपने युद्ध की नीति मे सर्वश्रेष्ठ कार्य किया है। मुझे प्रसन्नता है कि तुम मेरे सेनापति और मजमुआदार (अमात्य) हो। वह श्रेष्ठ उपहार कौन-सा है जो मेरे सामने अन्त मे प्रस्तुत करना चाहते हो ?

आबाजी · श्रीमत, इस आक्रमण मे जो वस्तुएँ प्राप्त हुई है वे सब आपने अपने सैनिको और सेनापतियो मे वितरित कर दी है। मैं 'भवानी की जय' घोष के साथ कह सकता हूँ कि आपके सदृश सेनापति किसी भी जाति के युद्ध-क्षेत्र मे नही मिला। आपने अपने से अधिक सैनिको का मान रखा है। स्वय अच्छी-से-अच्छी वस्तु अपने पास न रखकर आपने अपने सैनिको मे बाँट दी है। मेरी प्रार्थना है कि वह अन्तिम उपहार आप अपनी सेवा ही मे रहने दे।

शिवाजी वह कौन-सा उपहार है, आबाजी ? मुझे किसी उपहार की आवश्यकता नही है। मेरे लिए तो एकमात्र शिवा-भवानी की तलवार के अतिरिक्त और कोई उपहार ही नही। फिर भी हमे उस उपहार को देखने मे प्रसन्नता होगी।

आबाजी (**द्वार की ओर देखकर**) श्रीमत, कल्याण प्रदेश के सूबेदार अरब जाति के रईस मुल्ला अहमद की पुत्रवधू, गौहरबानू। (**शिवाजी गम्भीर हो जाते हैं**) अपनी सुन्दरता मे अद्वितीय और अपने शील मे अनुपम। आपकी सेवा करने के लिए मैंने उसे वन्दी किया है।

[**शिवाजी की मुस्कराहट ओठो मे डूब जाती है। वे अधिक गम्भीर हो जाते हैं।**]

शिवाजी मुझे इस बात की सूचना है। मैं अभी तुमसे यह सब सुनता। (**मोरोपन्त से**) मोरोपन्त ! क्या मेरे सेनापति मेरे युद्ध की नीति नही जानते ?

मोरोपन्त आश्चर्य ? आबाजी, आबाजी ? [**प्रश्नसूचक मुद्रा**]

आवाजी 'स्त्रियो और बच्चो को कैद मत करो', आपकी इस आज्ञा को मानकर मैने अपने आक्रमण मे किसी स्त्री और वच्चे को छुआ भी नही। मै सूबेदार मुल्ला अहमद के सव परिवार को वन्दी कर सकता था, किन्तु आपकी आज्ञा को समर्थ गुरु रामदास की आज्ञा की भाँति सिर-माथे चढाकर मैने किसी को वन्दी नही किया। किन्तु गौहरबानू स्त्री नही है, श्रीमत ! देवी है। वैसा रूप मनुष्य-जाति मे नही होता, जैसे आकाश से एक तारिका टूट आई हो और चाँदनी का शरीर वनाकर गौहरवानू हो गई हो।

शिवाजी · मोरोपन्त, यह वही गौहरबानू है जिसके सौंदर्य की कीर्ति समस्त दक्षिण में है ?

मोरोपन्त : जी हाँ, श्रीमत ! मुल्ला अहमद की पुत्रवधू गौहरबानू ।

शिवाजी सौन्दर्य एक दैवी वरदान है, उसके लिए शब्दो की आवश्यकता नही है। अच्छा, मै भी उसे देखूंगा । **(उठकर)** गौहरबानू.. ...!

आबाजी : **(प्रसन्नता से)** श्रीमत, मैने गौहरबानू की कटार भी हस्तगत कर सिंहासन के चरणो मे रख दी हैं। **(कटार उठाते हैं)** जिससे वे आप पर किसी अवसर पर आक्रमण न कर सके । कटार रहने से वे या तो आप पर आक्रमण कर सकती थी या आत्महत्या ।

शिवाजी : अच्छा, यह गौहरबानू की कटार है । मैं समझा कि यह कक्ष की सुन्दरता के लिए सिंहासन के नीचे सजा दी गई है । **(हाथ मे लेकर)** यह गौहरबानू की कटार है । वे मुझ पर आक्रमण कर सकती हैं या आत्महत्या **(सोचकर)** किन्तु श्रीमती जीजाबाई की कृपा से दोनो बाते नही हो सकती । **(फिर सोचते हुए)** हाँ, गौहरबानू की कटार से यादव रामचन्द्र मारा गया है । लेकिन शिवाजी यादव रामचन्द्र नही है. .. **(सोचते हुए)** पर वह यादव रामचन्द्र भी हो सकता है । **(कटार सावधानी से देखते हैं)** मुल्ला अहमद की पुत्रवधू गौहरबानू। सौंदर्य और शक्ति एक साथ ही शरीर मे एकत्रित है जैसे चन्द्र और सूर्य एक साथ मिल गये हो । अच्छा,......मैं गौहरबानू को देखूंगा ।

आबाजी : **(जोर से)** गौहरबानू श्रीमत की सेवा मे उपस्थित हो !

[सोना के साथ गौहरबानू का प्रवेश । शिवाजी सिंहासन से उतरकर एक ओर खड़े हो जाते हैं और सब चकित हो जाते हैं ।]

शिवाजी . **(गौहरबानू की तरफ देखते हुए विस्मित मुद्रा मे)** गौहरबानू ! यह दैवी वरदान.. ...**(आबाजी प्रसन्न होते हैं)** आबाजी ! तुम यहाँ से जाओ।

आबाजी : **(झुककर)** जो आज्ञा, श्रीमत ! **[अभिवादन कर प्रस्थान]**

शिवाजी . **(सोचते हुए)** शम्भूजी कावजी, तुम भी जाओ ।

शम्भूजी : **(झुककर)** जो आज्ञा, श्रीमत ! **[अभिवादन कर प्रस्थान]**

शिवाजी : रघुनाथ बल्लाल, तुम्हारी भी आवश्यकता नही ।

रघुनाथ : **(झुककर)** जो आज्ञा, श्रीमत ! **[अभिवादन कर प्रस्थान]**

शिवाजी · मीनाजी, तुम भी जा सकते हो।

मीनाजी **(झुककर)** जो आज्ञा, श्रीमत ! **[अभिवादन कर प्रस्थान]**

शिवाजी · अच्छा मोरोपन्त पेशवा, तुम भी मुझे एकाकी रहने दो।

मोरोपन्त · **(झुककर)** जो आज्ञा, श्रीमत ! **[अभिवादन कर प्रस्थान]**

[शिवाजी नीचा मस्तक कर टहलने लगते हैं । टहलते हुए सौम्य-भाव से सोना से कहते हैं ।]

शिवाजी : सोना, ससार मे बहुत-सी बाते ऐसी होती है जो अच्छी होकर भी बुरी है

श्रौर बुरी होकर भी अच्छी है। मैं अपने मराठा वीरो को इस आक्रमण के बहाने ये दोनो बाते समझाना चाहता हूँ। (ठहरकर) तुम्हारा भाई यादव रामचन्द्र लौटकर नही आया। यह बुरा हुआ। लेकिन अच्छा यह हुआ कि उसके प्राण एक स्त्री की रक्षा करने मे गये। उसने मेरे आदर्शों की रक्षा की। यदि वह जीवित रहता तो मैं उसे एक हजारी बनाता। उसका लौटकर न आना यदि तुम्हारे लिए बुरा हुआ तो सारे महाराष्ट्र के लिए अच्छा हुआ। यह आदर्श प्रत्येक महाराष्ट्र वीर के लिए आवश्यक है। तुम तो एक हजारी नही बन सकती, फिर भी तुम्हे प्रति वर्ष एक हजार होण मिलेंगे। एक बात और सोचो। एक हजार होण तुम्हारे भाई का स्थान नही ले सकते। इसलिए भाई की पूर्ति भी होना है। मैं इसका शीघ्र ही निर्णय कर दूंगा, तुम बाहर थोडी देर प्रतीक्षा करो।

सोना : (घुटने टेककर विह्वल स्वर मे) श्रीमत ! [आगे कुछ नही कह सकी।]

शिवाजी (आश्वासन के स्वर मे) उठो, सोना ! मुझे तुम्हारे दुःख के इतिहास की एक-एक बात मालूम हो गई। महाराष्ट्र की वीर-कन्या हो। मेरे निर्णय की शीघ्र प्रतीक्षा करो। तुम बाहर जाओ।

सोना (सिर झुकाकर) जैसी आज्ञा। [प्रस्थान]

[श्रीमत शिवाजी थोडी देर तक टहलते रहते हैं। कभी वे गौहर-वानू की ओर देख लेते है और कभी सिंहासन की ओर।]

शिवाजी (टहलते हुए) सुबह के वक्त जब कोई सितारा डूबता है तो आसमान बदरंग हो जाता है। सितारा आसमान से नही कहता कि तू बदरंग हो जा। क्यो ? इसलिए कि सितारा शाम को फिर निकलकर कहता है कि मेरी दुनिया फिर वैसे ही भरी-पूरी है। आसमान अगर जरा-सी बात पर बदरंग हो जाय तो तारे का कुछ बिगडता नही है। गौहरबानू, आपका कुछ नही बिगडा है। फर्क सिर्फ इतना ही है कि आप आसमान के एक कोने मे न होकर सिर्फ दूसरे कोने मे है। आपकी रोशनी मे कोई फर्क नही है और शिवाजी उस रोशनी से अपनी ज़िन्दगी मे उजेला करना चाहता है। (गौहर को देखते हैं। गौहर चुप है) आप चुप है तो मालूम होता है जैसे सुबह नही होना चाहती। आपके बदन पर फूलो की माला किस कदर हँस रही है और आप चुप हैं। आप अपनी सारी हँसी फूलो को दे देगी तो ये उसे सँभाल भी न सकेंगे, मुरझा जायेंगे। (ठहरकर) आप डरती है। जिस दिन हमारे मुल्क की औरतें डरना छोड देगी उसी दिन हमारे मुल्क की तरफ कोई देख भी नही सकेगा। (गौहरबानू की कटार हाथ मे लेते हुए) आपकी कटार इस वक्त मेरे हाथो मे है। मै उसे आपको वापस देना चाहता हूँ। आप अपनी कटार हाथ मे ले लें। मै स्त्री के हाथ मे शस्त्र देखकर प्रसन्न होता हूँ। और जब मैंने सुना कि आप इस कटार से शिवाजी पर वार करना चाहती है या खुदकुशी करना चाहती है तो मुझे खुशी और रंज

दोनो एक साथ हुए। खुशी इस बात से कि आप मे शिवाजी पर वार करने का हौसला है और रज इस बात से कि आप खुदकुशी कर सकती है। खुदकुशी तो वे करते है जो जिन्दगी को पहिचानते नही। जो जिन्दगी के फूल को कॉटा समझते है। आपसे मुझे ऐसी उम्मीद नही है। लीजिए अपनी कटार और मुझ पर वार कीजिए। (**गौहरबानू के समीप कटार रखते हैं। सिंहासन के समीप एक कटार और देखकर**) यह एक कटार और है? (**उठाकर गौहरबानू के समीप रखते हुए**) उसे भी लीजिए, जिससे आप यह कह सके कि मैने, शिवाजी ने, महाराष्ट्र की देवी जीजाबाई के पुत्र ने, आपके साथ कोई धोखा नही किया।

[शिवाजी सिंहासन से कटार उठाने के लिए झुकते हैं। इसी बीच गौहरबानू मुख का घूंघट उलटकर सामने देखती है। गौहरबानू के खुले हुए मुख पर दृष्टि पड़ते ही शिवाजी एक कदम पीछे हट जाते हैं।]

शिवाजी (**प्रशसा के स्वरो मे**) गौहर.... .बानू. ... देवी!

बानू : (**उसी स्वरो मे**) श्रीमत......!

शिवाजी : देवी, मेरे बगैर कहे तुमने अपने मुख से परदा उठा दिया?

बानू (**सँभलकर**) श्रीमत, बहुत दिनो से वीर शिवाजी को देखने की हसरत थी। जिस शिवाजी ने अपनी हिम्मत से मुगल सल्तनत से लोहा लिया, जिसने बीजापुर को कभी चैन न लेने दिया, जिसने अपनी अकेली ताकत से पुरन्दर के किले को जीता, जिसने चद्रराव मोरे से जावली छीन ली, जिसने रायगढ के किले पर अपना झण्डा फहराया, जिसने कोकण के मैदान को सर किया उस वीर शिवाजी को देखने की हसरत किसके दिल मे न होगी?

शिवाजी : (**मुस्कराकर**) देखा, देख लिया?

बानू जी हाँ, देखा और......समझा कि शिवाजी और रुस्तम मे कोई फर्क नही है।

शिवाजी गौहरबानू, आपकी नजर से शिवाजी अपनी फतह इतनी जल्दी नही चाहता और अपनी नज़र से वह इतनी आसानी से पराजित भी नही हो सकता। आपकी सुन्दरता दक्षिण के गोघालियो की कहानी बन रही है। सरदारो की नजरो मे आपकी सुन्दरता उनके हिर्सोहवस की आखिरी सीमा है। लेकिन शिवाजी इस सुन्दरता से हार नही मान सकता, यद्यपि वह इसकी पूजा करना चाहता है।

बानू . मेरी सुन्दरता की पूजा? मैं जानती हूँ सुन्दरता का परिणाम क्या होता है।

शिवाजी सुन्दरता का परिणाम होता है—आँखो का अपने सच्चे रास्ते पर आना। लेकिन ये आँखे इतनी हलकी होती है कि जरा से इशारे पर बहक जाती हैं। शिवाजी अपनी आँखो का रास्ता पहिचानता है। आपकी इस सुन्दरता मे मुझे अपनी माँ जीजाबाई का मुख दीख पडता है, अपनी माँ जीजाबाई की मुस्कान

दीख पडती है। आपके बोलने मे मुझे जीजाबाई का आशीर्वाद सुन पडता है।

बानू : (विह्वल होकर, आगे बढकर) श्रीमत ... !

शिवाजी मै सिर्फ यही सोचता हूँ कि अगर मेरी माँ जीजाबाई आपकी तरह खूबसूरत होती तो मै भी एक खूबसूरत सरदार होता।

बानू (आत्मविभोर होकर) श्रीमन्त, शिवाजी !

शिवाजी मुझे श्रीमत न कहे, शिवा कहे, जिस नाम से श्रीमती जीजाबाई मुझे पुकारती हैं।

बानू (मुख का वस्त्र पूरी तरह खोलकर) ओह ! श्रीमत शिवा !

शिवाजी आप कुछ देर के लिए मेरे यहाँ मेहमान हैं। फिर आपको इज्जत के साथ सूबेदार मुल्ला अहमद की खिदमत मे भेज दिया जायगा।

बानू (अस्फुट स्वर मे) ओह ! मैने गुनाह किया है। मैंने गुनाह किया है। श्रीमत शिवाजी के बारे मे गलत खयाल सोचकर मैंने गुनाह किया है। मुझे माफ करो। मैं माफी चाहती हूँ।

शिवाजी मेहमानो को यह कहना शोभा नही देता। आपने कोई कुसूर नही किया, कोई गुनाह नही किया। गुनाह तो मैंने किया कि पूजा के एक फूल को देवता के मस्तक से उठा लिया। मै उस फूल को वही रखना चाहता हूँ। और अपने अपराध के लिए सिर झुकाता हूँ।

[शिवाजी अपना मस्तक झुकाते हैं।]

बानू आपने अपराध कहाँ किया ? अपराध तो आपके सरदार ने किया।

शिवाजी मेरे सरदार का अपराध मेरा ही अपराध है। मैं उससे मुक्त नही हो सकता, देवी ! इस जीत मे मेरी हार छिपी हुई है।

बानू मैंने ऐसा बहादुर सिर्फ शिवाजी ही को देखा जो जीतकर भी नही जीतना चाहता, जो बन्दी को अपमान के बदले सम्मान देता है। जो कैदी को अपना मेहमान मानता है . ।

शिवाजी लेकिन बगैर मेहमान की खातिर किए मैं उसे यो ही नही जाने दे सकता। **(अपने अगरखे के नीचे से एक कागज निकालते है और उसे गौहर-बानू के सामने करते हुए)** आप जानती है यह क्या है ?

[गौहर कुछ नही बोलती। अवाक् होकर रह जाती है।]

बानू (देखकर) यह किसकी तसवीर है ?

शिवाजी : यह मैं आपको भेट करता हूँ।

[शिवाजी गौहर के हाथ मे वह कागज भेंट करते हैं।]

शिवाजी महारानी जीजाबाई की। मेरी माँ की तसवीर है। मेरी जिन्दगी मे मुझे यह सबसे प्यारी है। इस तसवीर की ताकत से ही मैने इतने किले फतह किये हैं। मेरी ताकत कुछ भी नही है। मैंने आपके सामने यह शीशा पेश किया है जिसमे आप इतनी खूबसूरत होकर अपना अक्स देख सके। मेरे सामने जीजाबाई

ग्रौर गौहरबानू मे कोई फर्क नही है।

बानू (**तसवीर अपने सीने से लगाकर**) शिवाजी ! मैने जैसा सुना था वैसा ही पाया।

शिवाजी : माँ, ग्राप इस सिहासन पर बैठे। [**सिंहासन की ग्रोर संकेत करते हैं।**]

बानू : मै इस ग्रासन के लायक नही हूँ।

शिवाजी . दरअसल ग्राप इस ग्रासन के लायक नही है। ग्रापके लिए तो इससे भी ग्रच्छा ग्रासन चाहिए। लेकिन कल्याण के खीमे मे कोई खास इन्तज़ाम न होने के कारण ग्राप शिवाजी को माफ करे। बैठिए, ग्राप इस सिंहासन पर बैठिए। (**शिवाजी गौहरबानू को सिंहासन पर बिठलाते हैं**) ग्राप देवी है। हमारे यहाँ देवी के हाथ मे शस्त्र होता है। ग्राप भी ग्रपने हाथ मे कटार ले। लीजिए अपनी कटार।

[**गौहर कटार ले लेती है।**]

शिवाजी (**घुटने टेककर प्रणाम करते हुए**) जीजाबाई के सदृश ग्रपनी माँ को शिवा प्रणाम करता है।

बानू श्रीमत शिवाजी का भाग्य हमेशा ऊँचा रहे। लेकिन शिवाजी उठो, मुझे इतने महापुरुष को झुकते देखकर शरम मालूम हो रही है ! मुझे. ...

शिवाजी : माँ ! ग्राप ग्रपने गौरव का ग्रनुभव कीजिए। सेनापति की गलती के लिए मै ग्रापसे माफी चाहता हूँ। (**पुकारकर**) ग्राबाजी !

[**आबाजी का प्रवेश। वह गौहरबानू को सिंहासन पर देखकर प्रसन्न हो जाता है।**]

शिवाजी . ग्राबाजी तुमने जीजाबाई को देखा है ?

ग्राबाजी : श्रीमत, मैंने ग्रनेक बार जननी के दर्शन किये है।

शिवाजी एक बार दर्शन ग्रौर करो !

[**आबाजी इधर-उधर देखते हैं, किन्तु जीजाबाई नहीं दीखती। वे शून्य दृष्टि से शिवाजी की ओर देखते हैं।**]

शिवाजी : ग्रासन पर शिवाजी की माता को देखकर भी नही पहिचान सकते ?

[**आबाजी डरकर घुटने टेककर अभिवादन करते हैं।**]

शिवाजी (**गौहर से**) माँ ! सेनापति ग्राबाजी को क्षमा कीजिए।

बानू : मैंने माफ किया। तुम हमेशा फतह हासिल करो। लेकिन (**रुककर**) कुछ सोच-समझकर।

शिवाजी : (**मुस्कराकर**) हाँ, सोच-समझकर, ग्राबाजी ! ग्राबाजी, ग्रन्य सेनापतियो को स्वय जाकर सूचना दो कि वे इसी समय ग्राकर शिवाजी की माता गौहरबानू को प्रणाम करे। सोना को भी सूचना दो कि वह मेरे समीप उपस्थित हो।

ग्राबाजी . (**सिर झुकाकर**) जो ग्राज्ञा ! [**प्रस्थान**]

शिवाजी : देवी ! सोना का भाई यादव रामचन्द्र ग्रापके हाथ से मारा गया।

बानू शिवाजी, मुझे इस बात का सख्त अफसोस है कि गलती से मेरी छुरी उसकी तरफ उठ गई। वह बेचारा खुद नहीं जानता था कि मैं उसके सीने मे कटार भोक दूंगी। इसी वजह से वह बिलकुल ही निश्चिंत था। वह तो मुझे बचाने आया था। उसे अपनी तरफ आते देखकर मैं समझी कि वह भी मुझे कैद करने की गरज़ से आ रहा है। भाई बहिन की रक्षा करने आ रहा था और बहिन ने भाई के सीने मे खजर भोक दिया। मुझे आप सज़ा दीजिए। कहिए, मैं इससे कैसे सुबुकदोश हो सकती हूँ ?

शिवाजी आप चिन्ता न करे। मैं इसका भी इन्तज़ाम कर दूंगा।

[आबाजी सोनदेव के साथ मोरोपन्त, रघुनाथ बल्लाल, शम्भूजी कावजी, मीनाजी और सोना का प्रवेश। सब यथास्थान खडे होकर शिवाजी को अभिवादन करते हैं।]

शिवाजी **(मोरोपन्त से)** मोरोपन्त, मेरी माँ को प्रणाम करो।

[मोरोपन्त घुटने टेककर प्रणाम करते हैं।]

शिवाजी **(गौहरबानू से)** देवी ! ये मेरे पेशवा मोरोपन्त हैं। **(और क्रमश सेनापतियो को संकेत करते हुए)** ये रघुनाथ बल्लाल, जावली के शुरूनवीस **(बल्लाल अभिवादन करते हैं)**। ये शम्भूजी कावजी, प्रतापगढ के दबीर **(शम्भूजी अभिवादन करते हैं)**। ये मीनाजी, आबाजी के सहायक सेनापति **(मीनाजी अभिवादन करते हैं)**। इन सब को आशीर्वाद दीजिये।

बानू **(हाथ उठाकर)** तुम सब फतह हासिल करो।

शिवाजी **(आबाजी की ओर सकेत कर)** और इन्हे तो आप जानती ही है।

बानू मैंने इनका कुसूर माफ किया।

शिवाजी आबाजी ! तुम जानते हो कि सेना के आक्रमण मे मेरा आदेश है कि शत्रुओ के देश की स्त्रियो का किसी तरह भी अपमान नही होना चाहिए—उन्हे माँ और बहिनो के समान आदरणीय और पूज्य समझकर उनकी इज्ज़त करनी चाहिए—बच्चो को कभी उनके माता-पिता से जुदा मत करो—गाय मत पकडो और ब्राह्मणो के ऊपर अत्याचार मत करो—आठ महीने बाद लौटकर छावनी मे चले आओ—कुरान की उतनी ही इज्ज़त होनी चाहिए जितनी भवानी की पूजा की या समर्थ गुरु रामदास की वाणी की—मस्जिद का दरवाजा उतना ही पवित्र है जितना तुम्हारे मन्दिर का कलश। शिवा के लिए इस्लाम धर्म उतना ही पूज्य है जितना हिन्दू धर्म। जमीन पर गिरा हुआ कुरान का एक-एक पन्ना शिवा ने अपनी तलवार से उठाकर मौलवियो के सिर पर रख दिया है। मेरे लिए धर्म के ख्याल से हिन्दू और मुसलमान मे कोई फर्क नही है। मैने हमेशा इस बात का ख्याल रखा है कि पहले मेरे कलेजे मे पडेगी बाद को मस्जिद की दीवाल मे। फिर मेरे सेनापति होकर तुमने मेरे सिद्धान्तो के विरुद्ध ऐसा काम क्यो किया ? तुमने मुझे सदाचार की कसौटी पर कसना चाहा, मेरी परीक्षा

ली या अपनी स्वार्थ-साधना का रास्ता तैयार करना चाहा ? तुमने समझा होगा कि गौहरबानू के सौन्दर्य के सामने शिवाजी का सिद्धान्त पानी हो जायगा। किन्तु भवानी का भक्त शिवाजी भवानी का भक्त होने की योग्यता रखता है। जीजाबाई का पुत्र शिवाजी शत्रु की स्त्री मे भी जीजाबाई की तसवीर देखता है। बोलो, इस अपराध के लिए तुम्हे क्या दण्ड मिलना चाहिए ? यदि यह अपराध किसी साधारण सिपाही द्वारा होता तो उसे प्राण-दण्ड दिया जाता, लेकिन तुम मेरे सेनापति हो। और तुम्हे मैंने अभी अपना मजमुआदार नियुक्त किया है। बोलो, स्वय तुम पसन्द करो कि तुम्हे किस प्रकार का दण्ड दिया जाय।

आबाजी : श्रीमान्, मुझे भी प्राण-दण्ड दीजिये।

शिवाजी . नही, तुम्हे प्राण-दण्ड नही मिलेगा। शिवाजी उपकारो को स्मरण रखता है। वह एक भूल पर अपने सेवक की सच्ची सेवाओ को तुच्छ नही मान सकता। फिर भी तुम्हे एक पवित्र दण्ड दूंगा।

आबाजी आज्ञा कीजिए, श्रीमत !

शिवाजी **(सोना की ओर संकेत कर)** सोना को तुम जानते हो ? यह बेचारी बहिन है जिसका भाई यादव रामचन्द्र लौटकर नही आया। यादव रामचन्द्र शिवा के आदेशो को स्मरण रखकर गौहरबानू की रक्षा मे अपने प्राण खो बैठा है। वह स्वर्गीय बन्धु शिवा का प्यारा सैनिक था। यदि वह जीवित रहता तो उसे एक हजारी पद दिया जाता। किन्तु वह अब इस ससार मे नही है। इसलिए सोना को प्रतिवर्ष एक हजार होण राज्य की ओर से प्रदान किए जावेगे।

मोरोपन्त बहुत सुन्दर निर्णय किया श्रीमत ने।

शिवाजी किन्तु इस वार्षिक पुरस्कार से सोना के भाई की पूर्ति नही हो जाती। इसलिए आबाजी, मै तुम्हे आज्ञा देता हूँ कि तुम जीवन-पर्यन्त सोना को अपनी बहिन मानकर उसका उत्तरदायित्व सभालोगे।

आबाजी श्रीमत शिवाजी महाराज की जय ! **(सोना से)** बहिन सोना ! तुम आज से मेरी और काशी की बहिन हो। **(शिवाजी से)** क़िन्तु यह दण्ड बहुत छोटा है, श्रीमत !

शिवाजी इससे भी अधिक दण्ड पाने की याचना देवी गौहरबानू से करो।

बानू मैने तो तुम्हे माफ कर ही दिया, आबाजी ! लेकिन श्रीमत के कहने से मै भी तुम्हे सजा दूंगी।

आबाजी आज्ञा कीजिए।

बानू वह यह कि तुम काशीबाई के साथ-ही-साथ सोनाबाई की शादी भी बराबर की हैसियत से करोगे। दोनो की शादी भी एक साथ होनी चाहिए।

आबाजी · जो आज्ञा। यह तो दण्ड नही मेरी प्रसन्नता का कारण है। मैं सोनाबाई का विवाह काशीबाई के विवाह के साथ ही करूँगा और अधिक समारोह से। जीवन-भर बहिन रहने वाली सोना के लिए जो कुछ भी मै कर सकूँगा,

करूँगा ।

शिवाजी : आबाजी, अब मैं तुमसे प्रसन्न हूँ । तुम्हे अभी एक कार्य और करना है ।

आबाजी आज्ञा, श्रीमत ! भविष्य मे मुझसे इस प्रकार का कोई अपराध न होगा इस बात का मैं आपको विश्वास दिलाता हूँ । आगे जो आप आज्ञा करे ।

शिवाजी देवी गौहरबानू ने आज रत्नो से तो शृङ्गार नही किया किन्तु जितनी फूलमालाओ से शृगार किया है उतने हीरे और मोतियो की मालाओ से उनका शृगार किया जाय और तुम सूबेदार मुल्ला अहमद की सेवा मे उन्हे सम्मान सहित पहुँचा दो ।

आवाजी (सिर झुकाकर) जो आज्ञा । ऐसा ही होगा ।

शिवाजी किन्तु इसके पूर्व कि देवी गौहरबानू यहाँ से जावे, वे मुझे क्या उपहार देंगी ? [**गौहरबानू की ओर दृष्टि डालते हैं ।**]

बानू (**सकुचित होकर**) जो आप कहे ।

शिवाजी (**मुस्कराकर**) माँ की एक हँसी ।

बानू : (**हँसकर**) लीजिए, मैने हँस दिया । लेकिन मैं अपनी तरफ से एक बात करूँगी ।

शिवाजी प्रसन्नता से ।

बानू : महाराष्ट्र माताओ और बहिनो की तरह मैं आपका तिलक करूँगी ।

शिवाजी : यह मेरा सौभाग्य है । (**सोना से**) सोना ! तिलक-सामग्री शीघ्र लाओ ।

सोना जो आज्ञा ! [**प्रस्थान**]

शिवाजी देवी, शिवा ने आज तक दुश्मन की स्त्री को अपनी माँ और बहिन की तरह सम्मानित किया है । उसकी यह बात उसकी आखिरी दम तक पूरी होगी । माँ जीजाबाई ने जो बात मेरे लिए आज्ञा के रूप मे कह दी है वह सूरज की किरण की तरह कभी धुँधली नही हो सकती । आप जब-जब यहाँ आये आपके लिए यह आसन ..(**आसन पर दृष्टि डालते समय काशीबाई द्वारा तोडी हुई माला दीख पडती है**) यह माला (**हाथ मे उठा लेते हैं**) अभी तक आपके हृदय की तरह ही टूटी है । इसे जुड जाना चाहिये । (**माला मे गाँठ देकर उसे झुलाते हैं**) किन्तु इसमे झुमका नही है । (**शिवाजी अपने कठ मे पडे हुए लाल रत्नो का हार लेकर झुमका के स्थान पर जोड़ते हैं**) यह प्रेम और अनुराग की सूचना देनेवाले लाल रत्नो से जुडी हुई माला शिवाजी की श्रद्धा-भेट समझे ।

[**माला गौहरबानू के गले मे पहिनाते हैं, उसी समय काशी, सोना और गगा तिलक-सामग्री लेकर प्रवेश करती हैं ।**]

काशी (**गौहर के गले मे माला देखकर**) श्रीमत, यह माला मैने गगा से गुँथवाकर गौहरबानू के गले के लिए तैयार कराई थी, सिर्फ इसमे झुमका नही था । आज आपके हाथो से गौहरबानू के गले मे माला पडकर धन्य हो गई ।

शिवाजी . ठीक है, काशी ! (**सोना से**) सोना ! आज से यादव रामचन्द्र के स्थान पर

आबाजी सोनदेव तुम्हारे भाई हुए। तुम्हारे समस्त जीवन का उत्तरदायित्व अब से इन पर होगा। काशी ! तुम अपनी बहिन से मिली ?

काशी : ओह, सोना ! मेरी बहिन। **[आबाजी के हाथों में तिलक-सामग्री देकर सोना से मिलती है।]**

आबाजी बहिन सोना ! श्रीमंत की आज्ञा से मैं तुम्हारे बिलकुल निकट आ गया हूँ। यादव के स्थान पर अब तुम मुझे समझो।

सोना : **(शिवाजी के सामने हाथ जोड़कर)** मै कृतार्थ हुई।

शिवाजी : और मै प्रसन्न हुआ।

बानू अब मेरी प्रसन्नता का अवसर आने दीजिए।

[गौहरबानू सिंहासन से उतरकर अपने हाथ में तिलक-सामग्री लेती है और श्रीमंत शिवाजी के सामने खड़ी होती है।]

बानू : सिर झुकाइए, मै आपका मंगल-तिलक करूँ ?

शिवाजी आपके सामने मैं हमेशा सिर झुकाने मे ही अपनी विजय समझूँगा।

[मन्द हास्य। श्रीमंत शिवाजी थोड़ा सिर झुकाते है और गौहरबानू उन्हे मंगल-तिलक करती है।]

बानू श्रीमन्त भोसले शिवाजी महाराज की जय !

सब सामन्त . श्रीमन्त भोसले शिवाजी महाराज की जय ! जीजाबाई की जय ! गौहरबानू की जय !

सोना · **(थाली गौहर के हाथों से लेकर थाल मे सजे हुए फूल श्रीमंत शिवाजी पर उछालकर)** श्री शिवा-भवानी की जय !

सब . श्री शिवा-भावनी की जय !

[इस समय श्रीमंत शिवाजी के मुख पर अलौकिक ज्योति-समूह है, जैसे उनके मुख पर शिवा-भवानी का वरदान आलोकित हो उठा है।]

[धीरे-धीरे परदा गिरता है।]

: 20 :

✥ ध्रुव-तारिका ✥

●

पात्र-परिचय

राठौर दुर्गादास—मारवाड के यशस्वी सेनापति
(आयु 47 वर्ष)

अजीतसिंह—मारवाड के उत्तराधिकारी राजकुमार
(आयु 18 वर्ष)

सफीयत-उन्-निसा—शाहजादा अकबर की पुत्री
(आयु 16 वर्ष)

आयशा—सफीयत-उन्-निसा की परिचारिका
(आयु 16 वर्ष)

●

काल—1679 ई०

स्थान—ध्रुवनगर

समय—रात के साढे तीन बजे

ध्रुव-तारिका

[*स्थिति*—लूनी नदी के किनारे ध्रुवनगर के दुर्ग का एक सुरम्य कक्ष। चद्रिका के प्रकाश में लूनी नदी के तट पर वह प्रकाशित कक्ष दूर से इस प्रकार ज्ञात होता है जैसे आकाश-गंगा के किनारे एक उज्ज्वल नक्षत्र हो। यह कक्ष राठौर वीर दुर्गादास के अधिकार में है। दुर्गादास ने इस दुर्ग मे औरगजेब के पुत्र अकबर की स्त्री और पुत्री के संरक्षण की व्यवस्था कर दी है। शाहजादे अकबर ने दुर्गादास से मिलकर औरंगजेब के विरुद्ध झडा उठाकर नवीन राज्य की कल्पना की थी, किन्तु औरगजेब की कुटिल नीति के कारण वह राजपूतो का विश्वासपात्र न बन सका। फिर भी दुर्गादास को अपनी आत्मीयता का परिचय देकर वह दक्षिण मे सभाजी के पास बहुत दिनो तक रहा। औरगजेब से उसे भय था। वह जानता था कि औरगजेब के हाथो मे पड़कर उसकी बडी दुर्दशा होगी। अत उसकी पहुँच से बाहर होने के लिए वह दुर्गादास की सम्मति से सितबर सन् 1686 ई० में एक जहाज लेकर ईरान चला गया और अपना परिवार दुर्गादास को सौंप गया। दुर्गादास ने अकबर की स्त्री और पुत्री के रहने की व्यवस्था इसी ध्रुवनगर के दुर्ग मे मदार योगिराज के निरीक्षण मे कर दी है।

अकबर की पुत्री का नाम सफीयत-उन्-निसा है—अत्यन्त सुन्दर और सुकुमार। इस समय वह पूर्ण षोडशी है। सोलह वसतो का प्रतिनिधित्व करने वाले सोलह कुसुम उसकी कुंचित केश-राशि मे सजे हुए है। उसका शरीर इतना कोमल है जैसे उन कुसुमो की सुगंधि से ही निर्मित है, विशाल नेत्र, जिनकी तरुण मादकता में सौन्दर्य अरुण हो गया है, सरलता के साथ चंचलता की साकार प्रतिमा मे जैसे प्रेम के प्राण स्पदित हो रहे है। वह नीली रेशमी साडी और फूलों के आभूषण धारण किये हुए है—माथे मे अरुण बिन्दी और सीमन्त मे मोतियो की रेखा, कटि मे किंकिणी और पैरो में नूपुर।

इस समय सफीयत अपने कक्ष मे बैठी हुई तुलसी की पूजा कर रही है। कक्ष मे सजावट अपनी चरम सीमा पर है। ज्ञात होता है जैसे यौवन

ने सौन्दर्य मे रग भर दिया है। विशाल कमरे के कोने मे एक कलामय श्वेत वेदिका मे तुलसी का हरा-भरा पौधा लगा हुआ है जिसके चारो ओर फूलो की मालाओ का बन्दनवार है। कमरे के वीचो-वीच मखमली कालीन बिछे हुए हैं और दाहिने-वायें दरवाजे पर रेशमी परदे हैं, जिन पर नाचते हुए मयूर की वडी आकृति काढी गई है। कमरे के वीच मे पीछे पश्चिम की ओर एक वडी खिडकी है जिससे लूनी नदी की उज्ज्वल धारा दिखलाई दे रही है। कमरे में दोनो ओर दो बडे दर्पण लगे हुए हैं। दर्पण के पार्श्व में कुछ तैल-चित्र हैं जिनमें राठौर दुर्गादास, अकबर, तेजकुँअरि (सफीयत की माँ) और सफीयत की आकृति अकित है। सफीयत का आकृति-चित्र सबसे वडा है। उस चित्र के समीप ही एक सद्य-प्रस्फुटित फूलो की सुगधित माला है।

पूजा करने के अनन्तर वह हाथ जोडकर आँखें वन्द कर लेती है। समीप ही उसकी सहचरी आयशा बैठी है। वह भी लगभग सफीयत की अवस्था की है, एक साधारण साडी पहने है जिसमें नीली लहरो की रेखायें वनी हैं। उसके हाथो में एक स्वर्ण-थाल है जिसमें चन्दन, अक्षत, पुष्प, माला, सिन्दूर, आरती और घटिका सजी हुई है। सफीयत एक हाथ से घंटिका वजाती हुई श्रद्धा भाव से आरती करती है, फिर हाथ जोड़कर प्रणाम करने के अनन्तर आयशा से कहती है।]

सफीयत० : आयशा! तुलसी की पूजा करने मे मुझे बहुत आनन्द आता है। तुझे भी आता है न ?

आयशा : जी, मुझे भी आता है।

सफीयत० मुसलमान होने से क्या हुआ, दिल तो नही वदल जाता।

आयशा : वह कैसे वदल सकता है, वानू!

सफीयत० . और आयशा! जब मैं तुलसी की पूजा करती हूँ तो मुझे मालूम होता है कि तुलसी मुझ पर प्रसन्न हैं। मजरियो मे रोमाच की तरह उठे हुए छोटे-छोटे फूल जैसे मुझे आशीर्वाद देने के लिए डठल से सिर निकाल कर वाहर झुक आये है। तूने इन्हे देखा ?

आयशा . देखा, वानू!

सफीयत० : आयशा! कोई देखे कि सफीयत्-उन-निसा वानू तुलसी की पूजा करती है, तो क्या कहे ? [दबी हुई हँसी।]

आयशा : कहेगा, वानू, कि शाहशाह आलमगीर औरगजेब की पोती और शाहज़ादा अकबर की लडकी सफीयत-उन्-निसा वानू इस्लाम और हिन्दू धर्म मे कोई भेद नही मानती और उसके सामने दुनिया के दो वडे मज़हब अपना भेद भूलकर दो

सितारो की तरह एक दूसरे को देख रहे है ।

सफ़ीयत० : दो सितारो की तरह ?

आयशा : और क्या । दोनो इतने पास हैं कि दोनो की किरनें आपस मे मिल रही हैं ।

सफीयत० या दो फूल है जो इतने पास खिले हुए हैं कि दोनो की खुशबू एक दूसरे को मस्त बना रही है ?

आयशा यह और भी सही है, बानू ! लेकिन .....

सफ़ीयत० : लेकिन क्या ?

आयशा . लेकिन...लेकिन...बानू . **(रुक-रुककर)** आलमगीर औरगज़ेब के ख़ानदान मे......

सफीयत० · **(बीच ही में)** आलमगीर औरगजेब का खानदान क्यो कहती है, जलालुद्दीन अकबर का खानदान कह । शाहशाह अकबर ने पहिचाना था कि इसान धर्म से ऊँचा है । हिन्दू और मुसलमान इसानियत के लिबास हैं, इंसानियत के टुकडे नही ।

आयशा : बात तो आपकी बहुत अच्छी मालूम देती है ।

सफीयत० : आयशा ! अगर पिताजी अकबर जान पाते कि सफीयत हिन्दू देवी-देवताओ की पूजा करती है तो वे शायद मुझे अपने साथ ईरान ले जाते ।

आयशा क्यो ले जाते, बानू ? आपकी माँ भी पूजा करती है । उन्हे तो वे अपने साथ ले नही गये । जल्दी मे वे कुछ कर ही नही सके । लेकिन बानू ! वे ईरान क्यो चले गये ?

सफीयत० अब मैं क्या बतलाऊँ कि वे ईरान क्यो चले गये । उस वक्त तो मै बहुत छोटी थी । कुछ समझ नही सकती थी । लेकिन योगिराज जी, जो मुझे पढाते है न, उन्होने मुझे बहुत कुछ बतला दिया है ।

आयशा मै वह बात सुन सकती हूँ बानू ?

सफीयत० तू जानती तो सब कुछ है, मुझ से कहलाना चाहती है ।

आयशा : नही, बानू ! मैं सचमुच कुछ नही जानती । मै तो पिछले साल ही सेनापति दुर्गादास के हुक्म से यहाँ आई । मैं क्या जानूँ ? फिर मुझे बतलायेगा ही कौन ? और . फिर एक बाँदी की हस्ती ही क्या ?

सफीयत० आयशा ! तू मेरे सामने बनने की आदत छोड दे । तू मेरी बाँदी है । मैं तो तुझे अपनी सखी समझती हूँ और तू बाँदी बनी चली जा रही है ।

आयशा · यह मेरी खुशकिस्मती है, बानू ! ऐसी खुशकिस्मती किसे नसीब होती है ?

सफीयत० **(हँसकर)** तुझे । अच्छा सुन । पिताजी अकबर सच्चे अर्थ मे जलालुद्दीन अकबर के खानदान के हैं । उन्होने नाडोल की लडाई मे देख लिया कि राजपूत कितने सच्चे है, कितने बहादुर है, अपने देश की रक्षा के लिए सिर अपनी हथेली पर लेकर लडना जानते है । इनके सामने मुगल सिपाही क्या लडेगे ? मुगल सिपाहियो के पीछे शाहशाह आलमगीर की ताकत है, शाही ख़जाना है, लेकिन

बेचारे राजपूतो के पीछे क्या है ? वे है कितने ? मुट्ठी भर ! लेकिन उनमे सचाई है, आत्म-गौरव है, देश की रक्षा के लिए बडे-से बडा बलिदान करने की शक्ति है। अगर आज राजपूत मुगल सल्तनत के साथ होते तो दुनिया की कोई ताकत मुगल सल्तनत को हिला भी न सकती। लेकिन आलमगीर ने इन सच्चे हिन्दुओ पर अत्याचार करके उन्हे अपना शत्रु बना लिया। मेरे पिता शहजादे अकबर ने इस सचाई को समझा और उन्होने अपने पिता आलमगीर को सच्चे रास्ते पर लाने के लिए समझाया। जब वे नही समझे तो तहव्वर खॉं को भेज-कर चाचा दुर्गादास से सधि कर ली।

आयशा तो सधि से क्या बुराई हुई ?

सफीयत० : चाचा दुर्गादास ने शहजादे अकबर को ही दिल्ली का बादशाह घोषित किया। लेकिन आलमगीर ने चाचा दुर्गादास और मेरे पिताजी मे भेद की कपट-नीति से उन्हे अजमेर की लडाई मे हरा दिया।

आयशा यह तो बुरा हुआ।

सफीयत० . पिताजी हम लोगो को लेकर जगल-जगल भटकते रहे। वे समझते थे कि अगर आलमगीर के हाथो मे पड गये तो पूरी दुर्गति होगी, इसलिए जल्दी मे मुझे और मेरी माँ को चाचा दुर्गादास के पास छोडकर जहाज से ईरान चले गये।

आयशा : तो आप लोगो को अपने साथ क्यो नही ले गये ?

सफीयत० (हँसकर) अब यह मै क्या जानूँ। लेकिन मै तो समझती हूँ कि अगर ले जाते तो चाचा दुर्गादास का प्रेम—यह सस्कृत और हिन्दी का ज्ञान, यह दर्शन, मुझे कैसे मिलता ?

आयशा . यह तो ठीक है, लेकिन अगर शहजादा अकबर यहाँ रहते तो आपको कुरान तो जरूर ही पढाते।

सफीयत० · तो क्या चाचा दुर्गादास ने मुझे कुरान पढने से रोक दिया है ? वे तो यही चाहते है कि मै हदीस और कुरान पढूँ, लेकिन मेरा मन ही नही लगता कुरान पढने मे। मै तो सस्कृत पढती हूँ और देवी-देवताओ को मानती हूँ। लेकिन यह सच है कि अगर मै शहशाह आलमगीर के पास रहती तो वे अपनी पोती को कुरान जरूर पढाते और

आयशा और. और क्या ?

सफीयत० (हँसकर) और शायद मुझसे टोपियाँ सिलवाते। सुनती हूँ, आलमगीर शरीयत के ख्याल से टोपियाँ सिया करते है, और इस तरह सच्चे मुसलमान बन कर अपनी रोजी कमाते है। फिर क्या वे मुझसे भी टोपियाँ न सिलवाते ?

आयशा (हँसकर) बानू ! अगर आलमगीर को मालूम हो कि आप उनके बारे मे ऐसी हँसी की बात करती है तो वे शहजादे से ज्यादा आपको सजा देते।

सफीयत० मुझे सजा देते ? तो फिर मुगलो के इतिहास मे यह भी लिखा जाता कि शहशाह अपनी पोती को महज हँसने पर सजा देते है। लेकिन खैर मुझे

इस सम्बन्ध मे कुछ नही कहना। मै तो जैसे चाहूँगी वैसे रहूँगी। कुरान की तबीयत होगी तो कुरान पढूँगी, नही तो भगवद्गीता और रामायण तो मेरी आत्मा के निकट है ही। तुर्की और फारसी की जगह सस्कृत पढती हूँ और पढूँगी।

आयशा आप जरूर पढती जाइये। आपके साथ रहते-रहते मैं सस्कृत के बहुत से शब्द बोलने और समझने लगी हूँ। लेकिन बानू, वजह क्या है कि आपका मन कुरान पढने मे नही लगता ?

सफीयत० इतनी-सी बात नही समझती ? मेरी माँ को जानती है, वे कौन हैं ?

आयशा कोटा के हाडावत वश की राजकुमारी।

सफीयत० इसीलिए मेरा रक्त मुझे हिन्दू देवी-देवताओ और तुलसी के पास खीच लाता है। (रुककर) ओह ! मैंने तुलसी की आरती तो की ही नही, तेरी बातो मे ऐसी उलझ गई।

आयशा माफ कीजिए, बानू ! आरती तो मैं इसी थाली मे सजाकर लाई थी।... यह है [**आरती-पात्र सामने बढाती है।**]

सफीयत० यह तो बुझने जा रही है। इतनी जल्दी बुझेगी यह ! (**आरती से**) अरे ! अभी तुझे बहुत देर तक जलना है, मेरी ही तरह। ले, अपना सिर उठा। (**बत्ती को लफड़ी की सींक से ऊपर उठाती है**) हाँ ! इसी तरह जल। (**आयशा से**) आयशा ! यह आरती कितनी पवित्र वस्तु है, लेकिन इसे भी जलना पडता है। क्यो आयशा, क्या पवित्र वस्तुएँ जलने के लिए ही होती है ?

आयशा यह बात तो आप ही समझ सकती हैं, बानू ! इतनी ऊँची बात मैं कैसे समझ सकती हूँ ?

सफीयत० : अच्छा, बतला, तू कभी जली है ?

आयशा चिराग गुल करते वक्त कई बार जली हूँ।

सफीयत० : छि: ! तू बात नही समझती। जाने दे। मै तो तुलसी को ही अपना सब कुछ मानती हूँ। उसी का ध्यान रखती हूँ।

आयशा : और बानू ! तुलसी के सिवाय.. ...

सफीयत० : तुलसी के सिवाय ? तुलसी के सिवाय क्या.. . ? (**आयशा मौन रहती है**) बोलती क्यो नही ? तुलसी के सिवाय मैं किसका ध्यान करती हूँ ?

आयशा : (**हिचकते हुए**) .....कुमार अजीत...

सफीयत० (**बीच ही मे तीव्र स्वर से**) आयशा .....

आयशा (**घबराकर**) जी, बानू !

सफीयत० . क्या कहा ? कुमार अजीतसिंह ?......तूने यह कैसे समझा कि मैं कुमार अजीतसिंह का ध्यान करती हूँ ?

आयशा : (**घबराकर**) तो ..तो ध्यान करना बुरी बात तो नही है. बानू ! मन को अच्छे लगने वाले आदमियो...यानी.. चीजो का सभी ध्यान करते हैं। (**अटकते हुए शब्दो मे**) हाँ, ध्यान ही तो करते है।

सफीयत० : तेरे मन को अच्छी लगने वाली चीजे कौन-सी है ? (**आयशा कुछ नहीं बोलती**) मैंने पूछा तेरे मन को अच्छी लगने वाली चीजे कौन-सी हैं, जिनका तू ध्यान करती है ?

आयशा मैं किसी का ध्यान नही करती।

सफीयत० अपनी आँखो से कभी पूछा है तूने ?

आयशा अभी तक नही पूछा, बानू !

सफीयत० · क्यो पूछेगी, वे स्वय तुझसे कह देगी। तो तू अभी किसी का ध्यान नही करती ?

आयशा आप कहती है, तो स्वीकार करती हूँ।

सफीयत० मेरे सामने तो सच बात स्वीकार करनी ही होगी। अब बतला, किसका ध्यान करती है ?

आयशा आपका।

सफीयत० मेरा ? (**मुस्कराकर**) मेरा ध्यान करने की आवश्यकता नही है। ..... यह सौभाग्य किसी और के लिए रहने दे। मैं पूछना चाहती थी...(**रुककर**) कुछ नही पूछना चाहती।

आयशा अगर आपको कष्ट हुआ, तो मुझे माफ करे। मैं समझी नही।

सफीयत० क्या नहीं समझी ?

आयशा (**भय और संकोच-मिश्रित**) मैं क्या बतलाऊँ ?

सफीयत० तो इस तरह पहेलियाँ क्यो बुझा रही है ?

आयशा मैं पहेलियाँ क्यो बुझाऊँगी, बानू ! मुमकिन है आप उनका ध्यान न करती हो, लेकिन मैं कुछ समझती नही, बानू ! इस ध्रुवनगर के किले मे आप पहले बिलकुल गुमसुम रहा करती थी, लेकिन जब कुमार अजीतसिंह आये थे तो आप

सफीयत० हाँ, तो मैं क्या हो गई ?

आयशा आप हर एक कमरे की सजावट खुद अपने हाथो से किया करती थी।

सफीयत० (**स्मिति-संयुक्त जिज्ञासा के साथ**) कैसी सजावट ?

आयशा यही कि फूलदानो मे फूल सजाना, रगीन शमादानो मे बत्तियो की कलियाँ खिलाना, चौकियो पर अगरबत्तियो के हलके बादल उठाना...और...और दरवाजो के परदो मे अदाज़ से सलवटे डालना...और फिर...और फिर...

सफीयत० और . फिर...और फिर क्या ?

आयशा मै कैसे कहूँ। डरती हूँ...आप नाराज न हो जायँ।

सफीयत० (**किंचित् हँसकर**) अच्छा, नाराज नही होऊँगी।

आयशा अच्छा तो कहती हूँ। लेकिन क्या कहूँ...कहते नही बनता।

सफीयत० (**तीव्र स्वर मे**) और अभी तक क्या कह रही थी ? पहले छेड देती है, बाद मे चुप हो जाती है।

आयशा : तो कहूँ ?

सफीयत० : **(उसी स्वर मे)** हाँ, हाँ, कहती क्यो नही ?

आयशा देखिये, परदे की सलवटे ठीक करना तो हम लोगो का काम है, जब कुमार अजीतसिंह आये थे तो आप खुद अपने हाथो से करने लगी ।

सफीयत० तो क्या हुआ, मेहमान की सेवा करनी ही चाहिए । वे आये और देखे कि हम उनके कमरे की सजावट नही करते, लापरवाही से परदे टेढे-सीधे पडे रहते है, वे क्या कहेगे, तू ही बतला ।

आयशा · मै बतलाती हूँ । आपने नाराज न होने का वचन दिया है, तो वतलाती हूँ । परदो की सलवटे ठीक करने का मतलब यह था कि आप...आप परदे के पास

सफीयत० : परदे के पास ? तो इससे क्या हुआ ?

आयशा : हुआ तो वहुत कुछ, बानू ! उस रोज रगमहल के परदे की सलवटे ठीक कर आप परदे के पीछे खडी थी । कुमार अजीतसिह वहाँ से निकले । आप आपने...अपने परदे की रेशमी डोरी...उनके हाथो मे उलझा दी । वे हँसे और उन्होने. .

सफीयत० **(तीव्रता से)** चुप, आयशा ! यह क्या कहती है...?

आयशा : **(घबराकर)** बानू ! मुझे माफ करे । मुमकिन है, मैने ख्वाब देखा हो ।

सफीयत० **(दुहराकर)** ख्वाब देखा हो ? **(कुछ हँसकर)** तू बहुत शैतान है । उस वक्त तू कहाँ थी ?

आयशा मै आप ही के कहने से तो कुमार अजीतसिंह को उसी कमरे से ला रही थी ।

सफीयत० : **(हाथो से माथा पकडकर)** ओह !...तो तूने देख लिया । **(दरवाजे की ओर देखती हुई)** कोई यहाँ है तो नही ?

आयशा · कोई नही है, बानू ! दो बाँदियाँ योगिराज के पास भोजन का सामान लेकर गई है ।

सफीयत० : क्या रात के बारह बज गये ?

आयशा : बानू ! इस समय तो रात के तीन बज रहे होगे ।

सफीयत० : तीन ? इसीलिए इतना सन्नाटा है । हवा भी रुकी हुई है, जैसे वह किसी की प्रतीक्षा कर रही है । ये तारो के सकेत.. ओह ! मै क्या कहने लगी ? तो ये दासियाँ योगिराज के पास भोजन का सामान पहुँचाकर अभी नही लौटी ?

आयशा जी नही । आपने ही तो..

सफीयत० तो तूने शाम को दासियो से कह दिया था कि आज रात वे योगिराज के सरक्षण मे रहने वाली स्त्रियो की सुविधाओ की जाँच करेगी ?

आयशा · जी, मैने उनसे कह दिया था कि वे वही रहेगी और रात मे भीतरी कमरो पर पहरा देने के लिए नही आवेगी ।

सफीयत० . ठीक है । माताजी कहाँ है ?

आयशा : वे शीशमहल मे है, सो रही होगी ।

सफीयत० · सिर्फ मैं ही जाग रही हूँ और साथ-साथ तू भी। लेकिन तू मेरे साथ कब तक जागेगी ? तू भी सो जा।

आयशा आप जब तक न सो जायेंगी तब तक मैं कैसे सो सकूँगी, बानू ! लेकिन क्या आप रात-भर जागेंगी ? (**सँभलकर**) याने...पूजा. .करेंगी . याने ध्यान . करेंगी ?

सफीयत० (**रूखेपन से**) तुझे इस तरह प्रश्न करने का कोई अधिकार नही है।

आयशा : मै माफी चाहती हूँ।

सफीयत० (**चिढाकर**) माफी चाहती हूँ। (**और फिर चिढाकर**) लेकिन क्या आप रात-भर जागेंगी. .याने पूजा करेंगी याने ध्यान करेंगी ? देख, आयशा ! ये बाते इस तरह से कहने की नही है। इन बातो से राज्य उजड जाते है, तलवारे म्यान छोड देती है और रूप और सौन्दर्य आग की लपटो मे तडपने लगता है। अगर चाचा दुर्गादास को यह बात मालूम हो .

आयशा (**सँभलकर**) कैसे मालूम होगी ? मैंने आज तक यह बात किसी से नही कही, बानू ! मेरे और आपके सिवाय और जानता ही कौन है यह बात ? ख्वाब मे भी यह बात मेरे मुँह तक नही आयेगी।

सफीयत० मुझे तुझसे ऐसी ही आशा है। भूल जा इन बातो को। दीवारे भी बातो की चोरी कर लेती है। तू समझती है कि मै कुमार अजीतसिंह की पूजा करती हूँ, लेकिन मेरे किसी काम से तो भूलकर भी यह नही मालूम होता।

आयशा सचमुच नही मालूम होता, कभी नही मालूम होता, लेकिन पूजा कहकर नही की जाती, बानू ! पलको के उठने और गिरने मे पूजा हो जाती है। साँसो के जाने की हलकी आवाज मे पूजा हो जाती है। लेकिन यह मै तभी से समझने लगी हूँ जब से मैने कुमार अजीतसिंह के हाथो मे रेशम की रस्सी. .

सफीयत० · तू चुप न रहेगी, आयशा ? यदि यह बात तूने जबान से बाहर निकाली तो तुझे इसी लूनी नदी मे डुबा दूँगी.. चाचा दुर्गादास से कहकर।

आयशा सेनापति जी को तकलीफ देने की जरूरत ही क्या है ? अगर आप कहे तो मै अभी जाकर डूब जाऊँ।

सफीयत० अच्छा जा, डूब जा। तुझसे पीछा छूटे।

आयशा बडी खुशी से जाऊँगी .डूब जाऊँगी। किसी तरह आपको खुश तो कर सकूँगी। अच्छा, मै जाती हूँ। जितने भी कुसूर मुझसे हुए हो, उन्हे माफ कीजियेगा। जाती हूँ, प्रणाम। [**जाने को उद्यत होती है।**]

सफीयत० अच्छा, सुन। (**खिडकी के पास जाते हुए**) यह लूनी नदी कितनी गहरी होगी ?

आयशा (**लौटते हुए**) चाहे जितनी गहरी हो, मेरे डूबने के लिए काफी है।

सफीयत० : और अगर तू नही डूबी तो ? चाचा दुर्गादास कल पूछ सकते हैं कि यह आधी रात को लूनी नदी के किनारे क्यो गई थी।

आयशा : कह दूँगी कि बानू ने ही मुझे भेजा था।

सफीयत० : क्यो भेजा था ?

आयशा : ऐसे ही...मैं क्या कहूँगी। कुछ नही कहूँगी।...कह दूँगी कि बानू का हार किनारे पर छूट गया था, उसी को खोजने के लिए...

सफ़ीयत० : आधी रात को ? तेरी आँखे क्या अँधेरे मे खूब देख सकती है ?

आयशा : (हँसकर) तो आप ही वतला दीजिये, क्या कहूँगी।

सफीयत० : कुछ न कहेगी। मैं तुझे डूबने के लिए भेजूँगी ही क्यो ? अपनी प्यारी सखी आयशा को ? तू हँसी भी नही समझती ?

आयशा : मैं आपके हुक्म के सिवाय कुछ भी नही समझती।

सफीयन० तो मै हुक्म देती हूँ कि तू नही डूबेगी।

आयशा : बहुत अच्छा, नही डूबूँगी।

सफीयत० · आयशा ! मै तुझसे बहुत प्रसन्न हूँ। एक तू ही तो है जिससे मैं अपने मन की बाते कह-सुन सकती हूँ। अपनी प्यारी आयशा को मै सचमुच डूबने को कहूँगी ? मैं खुद डूब जाऊँगी।

आयशा तब आपके पीछे और लोगो को भी डूबना पडेगा।

सफ़ीयत० · अच्छा, तब कोई भी न डूबे। आयशा, बात यह है कि मुझे नीद नही आ रही है। बतला, क्या करूँ ? कैसे समय काटूँ ? तुझे कोई कहानी आती है ?

आयशा : आती है।

सफीयत० : कह सकती है ?

आयशा आपकी आज्ञा भी टाल सकती हूँ ?

सफीयत० : अच्छा, तो सिर्फ घडी-भर की कहानी हो।

आयशा : अच्छा तो सुनिये। **(कहानी कहने के ढंग से)** बात पुरानी नही है, एक बहुत बडा राज्य था। उसके राजा एक बहुत बडे महापुरुष थे। उन्होने अपनी वीरता से सारे राजपूताने मे उत्साह की लहर दौडा दी थी। उन्होने बहुत-सी लडाइयाँ लडी। वे काबुल गये और एक लडाई मे विजय प्राप्त करने के बाद एक बुरे समाचार से उनका हृदय टूट गया। जिस समय वे मरे उस समय उनकी रानी माँ होने जा रही थी। कुछ दिनो के बाद एक सुन्दर पुत्र उत्पन्न हुआ। उसका नाम रखा गया, कुमार अजीतसिह।

सफीयत० : फिर वही बात ? तुझे इसके सिवाय कोई दूसरी कहानी नही आती ? रहने दे अपनी...कुछ नही आता-जाता तुझे। अगर कभी मन ऊबने लगे तो तू बहला भी नही सकती ? **(कमरे में इधर-उधर घूमने लगती है)** अच्छा, तू कोई गीत सुना सकती है ?

आयशा · जो आज्ञा। कौन-सी रागिनी सुनाऊँ ? विहाग ?

सफीयत० : अच्छा...विहाग ही सही।..। नही रहने दे। कुछ मत गा। सुनने की तबीयत नही हो रही है। **(टहलती है। दीवाल पर टँगे हुए चित्र को देखकर)**

इस चित्र का चित्रकार कौन है ?

आयशा . चित्रकार ? दिलीपराय।

सफीयत० : उससे कह दो कि मेरा चित्र उसने अच्छा नही बनाया।

आयशा : बनाया तो बहुत सुन्दर है, बानू ! आँखे तो ऐसी है कि उनसे सुन्दरता और प्रेम की रागिनी निकल रही है। हाँ, एक बात की कमी है। इस समय आपके केशो मे सोलह वर्षों के सोलह फूल सज रहे है जो इस चित्र मे नही हैं।

सफीयत० बस, रहने दे। यह चित्र कल मेरे कमरे से हट जाय। समझी !

आयशा · जो आज्ञा।

सफीयत० : तू किसी तरह मेरा मन स्थिर नही कर सकती। तू सस्कृत जानती है ? नही जानती। तू कुछ नही जानती। अच्छा जा, मेरी वीणा ले आ। वीणा बजाऊँगी। यही पास के कमरे मे रखी है।

आयशा जो आज्ञा। [जाती है।]

सफीयत० · (**खिडकी के समीप जाकर लूनी नदी की ओर देखती है**) यह नदी इसी तरह बह रही है ..और वे अभी तक नही आये . अभी तक नही आये...।

[**आयशा का वीणा लेकर प्रवेश**]

आयशा : यह वीणा उपस्थित है।

सफीयत० . ला। (**लापरवाही से**) क्या बजाऊँ ? (**तारो पर उँगलियाँ फेरती है। इतने मे ही दूर से घोडे के टापो की आवाज आती है। सफीयत प्रसन्नता-मिली चंचलता से खिड़की के पास जाती है और ध्यान से देखती है। उसके मुख से अनायास निकल पड़ता है**) ओह ! आ गये...आ गये...!

[**वीणा को शीघ्रता से कोने मे रख देती है।**]

आयशा बानू ! कौन आ गये ?

सफीयत० : क्या तूने सुन लिया ? तू क्या समझे, कौन आ गये !

आयशा : मैं बाहर जाकर देखूं ?

सफीयत० : तू क्या करेगी बाहर देखकर ? अच्छा जा, आरती सजा ला।

आयशा . अभी तो आप तुलसी की आरती कर चुकी है।

सफीयत० . तू मुझसे प्रश्न क्यो पूछती है ? जा, आरती सजा ला।

आयशा जो आज्ञा। [**शीघ्रता से प्रस्थान**]

सफीयत० . (**आनन्द से विह्वल होकर**) आज रात-भर आरती उतारूँगी। [**प्रसन्नता मे वीणा के तार झनझना देती है। फिर नाचने लगती है।**]

[**आरती का थाल लिए आयशा का प्रवेश**]

आयशा यह आरती का थाल।

सफीयत० : (**आयशा से लिपटकर**) आयशा ! तू बहुत अच्छी है। ओह ! तू बहुत अच्छी है। तू इतनी अच्छी है कि मैं तुझे इस दुर्ग की दीवाल से गिरा दूंगी।

आयशा : मैं आपकी बात समझी नही, बानू !

सफीयत० तूने कभी कोई बात समझी भी है ? तू कुछ मत समझ, सिर्फ मुझे ही समझने दे । मैं समझूं और कोई न समझे ।

आयशा : यह आरती कहाँ रख दूं ?

सफीयत० . यहाँ, वहाँ, प्राणों मे...हृदय मे...सब जगह । कही भी रख दे ।

आयशा : कहाँ आपका मन नही लग रहा था, और अब आप इतनी खुश है ?

सफीयत० . तू पूछेगी, कौन आ गया । बड़ी शैतान है न ? फिर पूजा वाली बात कहेगी? अब कहेगी तो सचमुच ही......

आयशा : (गहरी साँस लेकर) ओह ! बानू, तो यह बात है ! इसीलिए आप इतनी खुश है । तो सब रही आरती । अब मुझे नीद आ रही है । मै अब जाने की आज्ञा चाहती हूं । [आरती रखकर जाना चाहती है ।]

सफीयत० गुन-गुन, आगना !

आयशा : (जाती हुई) बानू ! मुझे नीद आ रही है। जाने की आज्ञा दे दीजिए। [जाना चाहती है ।]

सफीयत० : अच्छा तो जा...इसी समय चली जा !...चली गई ! अब ?

[आयशा विनम्रता के साथ हलकी मुस्कान लिये चली जाती है ।]

[दूसरे दरवाजे से अजीतसिंह का प्रवेश]

[अजीतसिंह लगभग अठारह वर्षों का नवयुवक है । केश घुंघराले और आँखें बडी; प्रशस्त वक्षस्थल जिस पर मोतियो की एक बडी माला झूल रही है । वह हलके पीले रंग का एक अंगरखा और हलके गुलाबी रंग का चूड़ीदार पंजामा पहने हुए है । कमर के वस्त्र मे तलवार बँधी है जिसे वह एक हाथ से सँभाले हुए है । पैर मे जयपुरी जूते । राजस्थान का ऐश्वर्य उसके विस्तीर्ण ललाट पर अंकित है । अपने पिता महाराणा जसवतसिंह की वीरता उसके भुजदडो मे सीमित है। उसकी चाल में मृगेन्द्र की मस्ती है । सफीयत को देखते ही वह हाथ उठा देता है ।]

अजीत : जय राजस्थान ! तुम अब तक जाग रही हो, सफीयत ?

सफीयत० (लज्जित स्वर मे) आपके स्वागत मे जीवन-भर जागूंगी ।

अजीत : और अगर मैं तुम्हारी आँखों मे नीद बनकर समा गया तो ? (हँसी) नही, राजपूत की गति नीद मे नही समा सकती । उसे भी ज़िंदगी-भर जागना पडता है ।...ओह ! थक गया । कुछ शीतल जल मिलेगा ?

सफीयत० : प्रेम के सरोवर का ?

अजीत : उससे तो कभी प्यास न बुझेगी । (हँसी) लाओ, अपने हाथो से जल को अमृत बनाकर पिला दो ।

[सफीयत पात्र मे शीतल जल भर कर देती है ।]

अजीत . ओह ! शरीर ही नही, मन, चेतना, प्राण सब शीतल हुए । यह क्या करती

हो ? आरती ? इन हाथो को विश्राम दो, सफीयत ! इन हाथो से तुम्हे मारवाड की राजनीति सँभालनी है । और जिसे तुम्हारे नेत्रो की आरती मिल चुकी है, उसे इस आरती की आवश्यकता नही । लाओ, इसे अलग रख दूँ । हमारे और तुम्हारे बीच मे यह जलने वाली चीज क्यो रहे ?

सफीयत० : जलने मे ही प्रकाश होता है, राजकुमार !

अजीत प्रकाश नहीं, आलोक । **(आरती-पात्र अलग रखता है)** मेरे चारो ओर तो तुम्हारी स्मृतियाँ ही आरती बनकर घूमा करती है । मै उन्ही आरतियो के आलोक मे तुम्हारा रूप देखता हूँ । जानती हो, वह रूप कैसा है ?

सफीयत० मै कैसे जानूँ ?

अजीत मेवाड की लक्ष्मी, जिसके मस्तक पर जौहर का पुनीत व्रत मगल-तारे की ज्योति लेकर चमक रहा है, जिसके नेत्रो मे गगा की पवित्रता है, जिसकी वाणी मे सरस्वती की कल्याणकारिणी वीणा है, जिसकी मुस्कान युद्ध मे विजय प्राप्त करने की प्रेरणा है, ऐसा तुम्हारा रूप है, सफीयत ! और उस रूप की मै पूजा करता हूँ ।

सफीयत० मै इस योग्य नही हूँ, राजकुमार !

अजीत : क्या इसलिए कि तुम मुसलमान वश मे उत्पन्न हुई हो ? लेकिन सफीयत ! सत्य और सौन्दर्य की कोई जाति नही होती । प्रेम और अनुराग किसी के वश की सपत्ति नही है । मै तुम्हे कैसे विश्वास दिलाऊँ कि तुम्हारे प्रति मेरा प्रेम छोटे-बडे उन नक्षत्रो की भाँति है जो एक दूसरे के स्वाभाविक आकर्षण मे घूमते रहते है और कभी थकते नही हैं । राजकुमारी ! हम और तुम उस अमर ग्रथि मे बंधेगे जो क्षितिज-रेखा की भाँति चारो ओर घूमकर सदैव के लिए आकाश और पृथ्वी को जोड देती है ।

सफीयत० मैं कृतार्थ हुई । आप विश्राम कीजिए, थक गये होगे ।

अजीत राजकुमारी ! कल ही अजमेर का युद्ध समाप्त हुआ है । शफीखाँ ने सधि कर ली । युद्ध का अवसर रहते हुए भी युद्ध नही हुआ । इस समय मारवाड के लोगो से शीघ्र मिलना है । मैंने सोचा, तुमसे भी मिलता चलूँ । मैंने चाचा दुर्गादास से प्रार्थना की थी, हम लोग मार्ग मे ध्रुवनगर होते हुए चले । चाचा ने यह बात मान ली । और राजकुमारी ! मैने तुम्हे चुपके से पत्र भेज दिया । मेरा पत्र तो तुम्हे मिल गया होगा ?

सफीयत० हाँ, मिल गया था, राजकुमार ! तभी तो आज इतनी रात तक प्रतीक्षा करती रही । किन्तु आपका इतने शीघ्र चले जाना मुझे बहुत कष्ट पहुँचाता है ।

अजीत : परिस्थितियो को देखते हुए कष्ट सहन कर लो, राजकुमारी ! फिर तो तुम मारवाड की साम्राज्ञी बनोगी । जब तुम और हम मारवाड के सिंहासन पर बैठेगे तो जैसे वसत मे भ्रमरो के गुंजार से कलियाँ फूल बन जायेगी, मलयाचल

से समीर अपना रास्ता भूलकर मारवाड तक चला आयेगा ।

सफ़ीयत० : **(गद्गद होकर)** तब तो भाग्य की लक्ष्मी बन जाऊँगी ।

अजीत : लक्ष्मी ही नही, सरस्वती भी । तुम्हारे प्रेम-सगीत से मेवाड की दिशाये गूंज कर कहेगी कि हम भी साम्राज्ञी सफीयत के कठ से कठ मिलाकर प्रेम-सगीत का स्वर भरेगे । मेवाड की सरस्वती ! कहाँ है तुम्हारी वीणा ? अभी से मगलाचरण का प्रारम्भ हो !

सफीयत० : वीणा सुनेगे आप ? इस समय ?

अजीत : अवश्य । तुम्हारी वीणा सुनने का सौभाग्य जीवन की स्मरणीय घटना है । फिर इस मिलन के मगलमय अवसर पर मैं अवश्य सुनना चाहूँगा । दूं तुम्हारे हाथो मे वीणा ? वह तो यही है । [**सकेत करता है ।**]

सफीयत० : नही, मैं उठा लूंगी । आपके स्वागत मे अभी से सगीत का बदनवार चारो ओर से लग जाय ।

[**वीणा हाथ मे लेती है ।**]

अजीत : तुम कवि भी हो गई ज्ञात होती हो । सस्कृत पढने का प्रभाव तुम्हारी वाणी मे कविता लाये तो कोई आश्चर्य की बात नही । मुझ पर कविता लिख सकती हो ?

सफीयत० · जीवन-भर प्रयत्न करूँ तब भी न लिख सकूं ।

अजीत : क्यो ?

सफीयत० **(मुस्कराकर)** क्योकि जीवन छोटा है और आप बहुत बडे है ।

अजीत : **(हँसकर)** एक क्षण मे मुझ पर कविता कह भी दी । मेवाड की साम्राज्ञी की यह प्रथम कविता है । अच्छा, कविता के बाद सगीत हो ।

सफीयत० : वीणा मे किस राग के स्वरो का सघटन हो ?

अजीत : मेरे लिए तो तुम्हारे स्वर जीवन-सगीत के अमर माधुर्य से परिपूर्ण है । फिर भी आज प्रेम की जय मे 'जयजयवती' का सधान हो ।

सफीयत० . **(उसी के स्वर सजाती हुई तारों को कसती हुई)** ये तार जब ढीले पडे रहते है तो एक दूसरे के समीप रहकर भी बेसुरे रहते हे । किन्तु जब कस जाते हैं तो एक ही स्वर से गूंजते हैं, जैसे वे एक दूसरे के कठ-से-कठ मिलाकर गाते हैं ।

अजीत : जब उनमे एक-सा आकर्षण रहता है तभी तो उनके कपन से सगीत का सचार होता है ।

सफ़ीयत० : या यह कहिये कि इन तारो के परस्पर आत्म-समर्पण मे ही सगीत है ।

अजीत . और राजकुमारी ! इन्ही तारो मे से कोई तार अजीत के हृदय का कपन लेकर गूंजेगा, और कोई तार सफीयत के हृदय का कपन लेकर नृत्य करेगा ।

सफीयत० : आपके चरणो मे समर्पित होनें वाली यह रागिनी सुनिये ।

[सफ़ीयत थोड़ी देर तक जय-जयवंती रागिनी बजाती है। सहसा एक तार टूट जाता है। सफ़ीयत हलकी-सी चीख भर उठती है।]

अजीत (**चौंककर**) क्यो, क्या हुआ ?

सफीयत० . (हताश स्वरो मे) यह तार टूट गया। मैंने तो उसे अधिक कसा नही था, न जाने कैसे टूट गया ?

अजीत · टूट भी जाने दो। इस तरह तो तार टूटा ही करते है।

सफीयत० · नही, मेरे हृदय मे आशका हो उठी है। कौन जाने यह तार किसके हृदय का कपन लेकर टूटा है, मेरे हृदय का या आपके हृदय का।

अजीत : (**हँसकर**) अरे, यह तो एक कल्पना थी। कल्पना के पखो से जीवन उड नही सकता।

सफीयत० नही, राजकुमार ! मेरे हृदय मे अमगल की भावना उठ गई। जयजय-वन्ती रागिनी पूरी नही बज सकी।

अजीत (**उमंग से**) वाह, राजकुमारी ! वीणा के तार के टूटने मे कौन-सी अमगल की बात है ? युद्ध मे मेरी तलवार टूट जाती है, आकाश का कोई तारा टूट जाता है, इस लूनी नदी की कोई लहर टूट जाती है, इन बातो मे अगर अमगल हो तो ससार मे अमगल के सिवाय कुछ रह ही न जाय। रख दो वीणा को इस ओर। इतनी सुन्दर चाँदनी मे अमगल हो ही नही सकता, विशेषकर जब तुम मेरे सामने हो।

[सफीयत अन्यमनस्कता से वीणा कोने में रख देती है। अजीत उसका हाथ पकड़कर वातायन की ओर ले जाता है।]

अजीत चिन्ता की बात नही है। इधर आओ। देखो, राजकुमारी ! कितनी सुन्दर चाँदनी है ! लूनी नदी की धारा पर यह चाँदनी ऐसी बिखर रही है जैसे हमारे-तुम्हारे जीवन पर प्रेम की ज्योति बरस रही है। और यह नदी ससार की उपेक्षा करती हुई अपने ही रास्ते चली जा रही है।

सफीयत० (सिर हिलाकर) हूँ...

अजीत और इन लहरो को देखो ! ये लहरे, जैसे हमारे और तुम्हारे मिलन की स्मृतियाँ है जो एक दूसरे मे अपना आत्म-समर्पण किये हुए है और भावावेश मे टेढी-तिरछी होकर अनन्त मिलन की पृष्ठभूमि पर बहती चली जा रही है।

सफीयत० : (**सोचती हुई**) हूँ...

अजीत और तुम्हे याद है, राजकुमारी ! उस रात जब हम लोग इस नदी के किनारे ठडी हवा मे झूमते हुए उस पेड की छाया के बीच कसमसाती हुई चाँदनी की चित्रशाला मे बैठे हुए थे तो तुमने कहा था कि जब छाया और प्रकाश तक मिल सकते है तो क्या हम और तुम नही मिल सकते ?

सफीयत० याद है, राजकुमार ! किन्तु आज वीणा का तार जो टूट गया।

अजीत फिर वही वीणा का तार । उसके टूटने से और हमारे मिलन से क्या सम्बन्ध ? यह तो वैसी ही बात है कि किसी फूल के टूटकर गिर जाने से वसत ऋतु ही न आये या किसी तारे के टूटने से पूर्णिमा की रात ही न हो ? तुम अपने भाग्य मे इतना सदेह करती हो, राजकुमारी ?

सफीयत० : जब आप मेरे पास है तो फिर मुझे कोई सदेह नही है।

अजीत : मै सुखी हुआ यह बात सुनकर । अच्छा, एक बात बतलाओ। इस ध्रुवनगर मे तुम्हे कोई कष्ट तो नही है ?

सफीयत० : कष्ट ? चाचा दुर्गादासजी ने ऐसी व्यवस्था कर रखी है कि इस किले की दीवालो तक को कोई कष्ट नही है ।

अजीत ठीक, उन पर कोई भी आक्रमण नही कर सकता । अच्छा, राजकुमारी, अब मुझे विदा दो । चाचा दुर्गादास के जागने का समय हो गया । मै चुपचाप अपने कक्ष से ही चला आया था ।

सफीयत० किस वाणी से कहूँ यह ? वर्ष मे मेरे भाग्य की केवल एक ही पूर्णिमा होती है, वह भी इतने थोडे समय के लिए ! ऐसा भाग्य अपनी स्मिति मे दुर्भाग्य से भी अधिक कष्टकर है ।

अजीत : ऐसा न कहो, राजकुमारी ! आगे चलकर तो हमारी प्रत्येक रात्रि पूर्णिमा की रात्रि होगी ।

सफीयत० : फिर आपके दर्शन कब होगे ?

अजीत . कल तो मुझे चले ही जाना है । फिर कभी मिलेगे।

सफीयत० . फिर कब ?

अजीत : इसे भाग्य-लक्ष्मी पर छोडो । आज तो तुमसे मिलने का कोई अवसर नही था, किन्तु भाग्य ने साथ दिया और आज मैं तुम्हारे साथ हूँ । राजकुमारी, भाग्य छिपकर आता है और चुपके से कान मे कह जाता है कि फूल की तरह खिलो और समुद्र की तरह आकाश तक चले जाओ ।

सफ़ीयत० (**विचारमग्न**) हूँ......

अजीत : मै तुमसे मिला और तुम मुझसे मिली, जैसे भाग्य ही दो लहरो की तरह उठा और फिर मिलकर एक हो गया । अजीत और सफीयत, और सफीयत और अजीत । बोलो, ठीक है न ?

सफ़ीयत० : ठीक है, राजकुमार !

अजीत : इस तरह नही, आँखे मिलाकर कहो सफीयत कि ठीक है ।

सफ़ीयत० : (**आँखें नीचे कर इठलाते स्वर मे**) मुझसे यह कुछ नही होता । यो तो कहे देती हूँ कि ठीक है ।

अजीत : आँखे नीची करके कहने मे इस बात की सचाई और भी अधिक स्पष्ट होती है । राजकुमारी ! कितना अच्छा होता कि कल दिन ही न होता । यह चद्रमा कल सूर्य से कह देता कि तुम्हारे चमकने की आवश्यकता नही है । कल दिन-भर

मै ध्रुवनगर मे चमकूँगा, तो यह हमारी प्रेम की रात दुगुनी हो जाती। हो जाती न ?

सफीयत० : लेकिन समय जितनी जल्दी बीतता है उसे देखते हुए तो वह रात आधी ही मालूम होती है।

अजीत : **(हँसकर)** तुम भी सच कहती हो, राजकुमारी ! तब तो विधाता को हमारे प्रेम-मिलन के लिए नई रात की सृष्टि करनी पडती। **(खिडकी की ओर देखकर)** प्रकृति कितनी शान्त है ! वृक्ष चुपचाप खडे है, चाँदनी भी जैसे उनमे बसकर चुपचाप हम लोगो के प्रेम-मिलन को सतोष की आँखो से देख रही है। चारो ओर सुनसान और यहाँ प्रेम के भावो का कितना आन्दोलन ! यह विषमता देखती हो, राजकुमारी ? **(इसी समय बाहर किले के घटे पर चार चोटें पडती हैं साथ ही गजर सुनाई देता है। अजीत और सफीयत चौंककर एक दूसरे को देखते हैं)** ओह ! चार बज गये ! समय इतनी जल्दी बीत गया।

सफीयत० : **(दीवाल पर टँगे हुए गजरे पर दृष्टि डालकर)** समय प्रेम नही करता, इसीलिए उसे ठहरने का अवकाश नही है। वह भागता चला जाता है।

अजीत हम लोगो का प्रेम देखकर शायद वह भी प्रेम करना सीख जाय।

सफीयत० **(गजरे की ओर देखकर)** फूल सबसे अधिक प्रेम करना जानते है। वे अधिकतर रात ही मे खिलना सीखते हैं।

अजीत : **(सफीयत के दृष्टि-पथ पर देखकर)** ओह ! यह फूलो का गजरा ! अभी तक इसका उपयोग नही हुआ ? **(शीघ्रता से फूल का गजरा उतारता है। हाथ से फूल छूकर)** कितने कोमल फूल है ये ! **(सूँघकर)** कितनी मनोहर सुगधि है इनमे ! मालूम होता है कि राजकुमारी सफीयत-उन्-निसा के कमरे मे पहुँचकर ये भी राजकुमारी के गुण सीख गये।

सफीयत० : यह मेरी प्रेम की माला है। इसे मैने ही न जाने कितनी बातो के साथ न जाने कितने आँसुओ के साथ गूँथा है। लाइये, इसे मै आपके गले मे पहना दूँ।

[फूलो का गजरा अजीत के हाथ से ले लेती है।]

अजीत ईश्वर करे, तुम्हारी माला ही क्षितिज-रेखा बनकर मेरे समस्त भाव-ससार को अपने मे समेट ले। राजकुमारी ! तुम इस समय माला लिए हुए ऐसी ज्ञात होती हो जैसे स्वयवरा हो। ठीक है, आज की रात ही हम लोगो के गधर्व-विवाह से धन्य बने। मेरे पास तो फूलो की माला नही है। **(गले से मोतियो की माला उतारकर)** यह मोतियो की माला है जो मेरे स्वर्गीय पिता महाराज जसवन्तसिह के कठ को सुशोभित कर चुकी है। उनका भी आशीर्वाद इस माला के साथ है। मेरी मोतियो की माला ही तुम्हारी फूलो की माला का प्रतिदान बने।

[बाहर फिर गजर बजता है।]

अजीत : हम लोगो के गधर्व-विवाह के इस पवित्र सस्कार मे यह मगल-वाद्य भी बज

रहा है। ब्राह्म मुहूर्त मे यह मगल-कार्य सम्पन्न हो। किन्तु शीघ्रता करो, राजकुमारी ! चाचा दुर्गादास जाग उठे होंगे। उनके कक्ष के बाहर निकलने से पहले ही मै लौट जाना चाहता हूँ। बढो, राजकुमारी ! तुम्हारी फूलो की माला मेरे हृदय मे हो और मेरी मोतियो की माला तुम्हारे हृदय मे भाग्यशालिनी बने, साथ ही साथ। शीघ्रता करो, राजकुमारी ! (**सफीयत एक कदम आगे बढकर रुक जाती है**) यह रहस्य अभी किसी पर प्रकट नही है। चाचा दुर्गादास भी इसे अभी नही जानते। हमारे तुम्हारे प्रेम की एकमात्र जानने वाली ये दो मालायें ही हो, जैसे दो आत्माएँ। आओ, ये मालायें साथ-साथ ही हमारे गले मे पड़ें।

[दोनो ही एक साथ मालायें उठाते हैं और एक दूसरे के गले में डालना ही चाहते हैं कि नेपथ्य से एक तलवार उठकर दोनो मालाओ के बीच से होकर उन्हे ऊपर ही सँभाल लेती है।

सफीयत और अजीतसिंह चौंककर ऊपर देखते हैं। राठौर दुर्गादास जी का प्रवेश।

दुर्गादास गभीर व्यक्तित्व के सेनापति हैं—तेजस्वी नेत्र और निश्चयात्मक मुख-मुद्रा। 'पुरुष-सिंह' शब्द से ही उनके व्यक्तित्व की अभिव्यक्ति हो सकती है। उभरा हुआ वक्षस्थल और सशक्त भुजदण्ड। इस समय वे केवल एक ढीला कुरता और चुस्त पैंजामा पहिने हुए हैं। पैर में जयपुरी जूते हैं। कुंचित केशराशि उनके कंधो पर फैल रही है। माथे पर त्रिपुण्ड है जिसकी रेखाएँ कुछ हलकी पड़ गई हैं। उनकी कमर मे छुरी कसी हुई है और हाथ मे तलवार है।]

दुर्गादास : (**तीक्ष्ण दृष्टि से देखते हुए गभीर स्वर में**) मेवाड के उत्तराधिकारी राजकुमार अजीतसिंह...(**एक क्षण बाद सफ़ीयत को देखकर**) अकबर की शहजादी सफीयत्-उन्-निसा !

[दोनों ही सिर झुकाये अपराधी की भाँति दुर्गादास के सामने खड़े हैं। दुर्गादास रोषपूर्ण नेत्रो से अजीत को देखते हैं।]

दुर्गादास : मेवाड के उत्तराधिकारी राजकुमार अजीतसिंह ! देश की परतन्त्रता मे तुम्हे प्रेम करने का अधिकार नही है और (**सफीयत से**) सफीयत ! युद्ध के दिनो मे वीरो की [illegible] होती है, प्रेमियो की नही।

अजीत [illegible] **[illegible]कये हुए**) चाचा दुर्गादास ! आपको इस स्थान पर नही आना चाहिए था।

दुर्गादास : राजकुमार [illegible] सैनिक दुर्गादास की गति सर्वत्र है। मैं यहाँ क्यो न आता ? अपने मित्र अव[illegible] के परिवार की रक्षा का मुझे वैसा ही ध्यान है जैसा तुम्हारी रक्षा का, और [illegible] उस विश्वास मे—यशस्वी राजपूती रक्त मे—अपनी वासना का विष घोल [illegible] फिर भी मुझे यहाँ नही आना चाहिए था ?

अजीत चाचा दुर्गादास ! आप मेरा अपमान कर रहे है।

दुर्गादास अपमान नही, राजकुमार ! राजपूती परम्परा का स्मरण दिला रहा हूँ। बेटी सफीयत ! तुम दूसरे कक्ष मे जाओ। राजकुमार अपने अपमान का अनुभव कर रहे है। जब बुलाऊँ, तब आना।

[सफीयत चुपचाप चली जाती है।]

दुर्गादास : मैने तुम्हारा अपमान नही किया, राजकुमार ! तुमने मेरा अपमान किया है और इस पवित्र मोती की माला का भी। यह माला, महाराणा जसवतसिंह की स्वतत्र साँसो से आन्दोलित होने वाली यह माला, आज प्रेम का उपहार बन रही है ? मेवाड की स्वच्छद विजयलक्ष्मी अप्सरा की भाँति वासना के कुजो मे

अजीत : (तडपकर) सेनापति ! अपने अधिकार की सीमा का ज्ञान हो।

दुर्गादास अच्छा ! चाचा दुर्गादास से अब मैं केवल सेनापति ही रह गया ? ठीक है, राजकुमार ! इस सेनापति को अपने अधिकारो की सीमा का ज्ञान है। जिस समय तुम्हारा जन्म भी नही हुआ था, तबसे दुर्गादास के अधिकारो को रक्त का अभिषेक मिला है। घटनाओ ने भैरवी नृत्य करके मेरे अधिकारो की सीमाये निर्धारित की है। राजकुमार ! स्वर्गीय महाराणा जसवतसिंह की मृत्यु-शैया के समीप मैंने तलवार लेकर उनके सामने प्रतिज्ञा की थी कि मारवाड की मर्यादा और स्वतत्रता मेरे जीवन की प्रथम आकाक्षाये होगी और तब से हजारो वीरो की बलि देकर, युद्ध मे मृत्यु को पराजित कर, जौहर व्रतो मे अपनी माताओ, बहिनो और पुत्रियो को चिताओ पर चढाकर इस मारवाड के सेवक ने मारवाड की रक्षा की है। यही मेरा अधिकार है, यही मेरे अधिकार की सीमा है। मैंने आज तक अपने अधिकार माँगे नही है, बलपूर्वक लिये हैं। अधिकार भिक्षापात्रो मे नही लिये जाते।

अजीत : किन्तु सेनापति दुर्गादास ! मारवाड की स्वतत्रता की रक्षा करनेवाला मारवाड के राजकुमार की स्वतत्रता का अपहरण नही कर सकता, यह तुम जानते हो ?

दुर्गादास : जानता हूँ, और यह भी जानता हूँ कि तुम्हारे बडे भाई कुमार पृथ्वीसिंह को अजमेर का विद्रोह शान्त करने पर औरगजेब से विष-भरी शाही खिलअत के रूप मे मृत्यु का पुरस्कार मिला था। यह भी जानता हूँ कि उस मृत्यु से तुम्हारे पिता महाराणा जसवन्तसिंह अधिक दिनो जीवित नही रहे। यह भी जानता हूँ कि उनकी मृत्यु-शैया आँसुओ से भीग उठी थी यह सोचकर कि मारवाड का क्या भविष्य होगा। तुम उस समय महारानी के गर्भ मे थे। तब मैंने तुम्हारे सरक्षण की प्रतिज्ञा कर मारवाड की रक्षा मे रक्त-स्नान का व्रत लिया था। इसके अतिरिक्त और मुझे क्या जानना है, मैं जानना चाहता हूँ ?

अजीत : यही कि राजनीति को जानने वाला चतुर सेनापति अपने प्राणो पर खेलकर

युद्ध कर सकता है, नीति और कूटनीति की क्रियाएँ और प्रतिक्रियाएँ पहचान सकता है, किन्तु प्रेम और वासना मे अन्तर नही पहचान सकता । महाराणा जसवन्तसिह का पुत्र वासना का कीडा नही हो सकता। वह पवित्र प्रेम का समर्थक है, जिसमे जाति और वर्ग का भेद नही है । मानवता मे ईर्ष्या-द्वेष की जो अग्नि लगी हुई है, वह इस भुवन-व्यापिनी प्रेम की मदाकिनी से शीतल हो जायगी ।

दुर्गादास : राजकुमार ! अभी थोडा और ज्ञानार्जन करो । जाति और वर्ग के भेद को मिटाने वाली प्रेम की यह मदाकिनी क्या गधर्व विवाह की लहरो मे ही बह सकती है ? प्रेम के क्या अन्य रूप नही हो सकते ? और फिर यह मन्दाकिनी केवल रात मे ही छिपकर क्यो बहा करती है, वह भी ध्रुवनगर के दुर्ग के चरणो पर ? मेवाड के राजकुमार ! यह विश्वव्यापी प्रेम सूर्य बनकर दिन मे समस्त वासनाओ को जला देता है और चन्द्र बनकर समस्त प्राणियो पर समान रूप से स्नेह, शीतलता और अमृत की वर्षा करता है और समस्त विश्व इस पर्व की पवित्रता मे धन्य होता है । इस सूर्य के प्रकाश मे और चन्द्र की ज्योत्स्ना मे सभी को जाने का अधिकार है । वहाँ चाहे सेनापति हो या चाचा दुर्गादास हो, स्वतत्रता से जा सकता है । उसके जाने पर प्रश्न-चिह्न नही लगाया जा सकता।

अजीत किन्तु राजपूती सिह के पुत्र को आप उसकी क्रीडा से नहीं रोक सकते। यह मेरा जन्म-सिद्ध अधिकार है, यह मेरा स्वभाव-सिद्ध अधिकार है, और वह अक्षुण्ण है । क्रीडा अक्षुण्ण है, उसे आप नही रोक सकेगे, कोई नही रोक सकेगा ।

दुर्गादास : राजकुमार ! नही रोकूंगा । किन्तु राजपूती सिह के पुत्र की यह क्रीडा युद्धभूमि मे हो, लूनी नदी के किनारे न हो । वह राज-सिहासन पर बैठे, ध्रुवनगर के दुर्ग मे प्रेम के सोपान पर नही । वह अपने गले पर तलवार को चक्राकार घूमने दे, फूलो की मालाओ को अपने गले मे न पडने दे ।

अजीत : किन्तु सेनापति ! सफीयत-उन्-निसा से मेरा सम्बन्ध एक राजकुमार की व्यक्तिगत रुचि का प्रश्न है । यह प्राकृतिक है, नैसर्गिक है । ससार मे कोई शक्ति नही है जो मेरी व्यक्तिगत रुचि मे बाधा दे सके ।

दुर्गादास : किन्तु अजीतसिह का, तुम्हारी व्यक्तिगत रुचि का सम्बन्ध समस्त राजस्थान से है, राजस्थान के राजवशो से है । तुम्हे ज्ञात है अजीतसिह, राजपूतो ने अपने रक्त की पवित्रता के लिए कितने भयानक युद्ध किये है ? कितनी बार जौहर की ज्वालाएँ जली है ? आज तुम कहते हो कि तुम्हारी व्यक्तिगत रुचि का प्रश्न केवल तुम्हारे अधिकार की बात है । मारवाड के रक्त को तुम कलुषित नही कर सकते, राजकुमार !

अजीत : तब सुनो सेनापति ! आज से मै समस्त राजस्थान को चुनौती देता हूँ कि वह मेरे अधिकार की ओर देखे और उस पर प्रश्न-चिह्न लगाने की धृष्टता करे।

जो धृष्टता करेगा उसे मेरी तलवार की पैनी धार पर चलना होगा। तुम भी तैयारी करो, सेनापति दुर्गादास ! देखूँगा, मारवाड किसका साथ देता है, मेरा या तुम्हारा।

दुर्गादास : तैयार हूँ, राजकुमार ! दुर्गादास ने युद्धो को सदैव महाशक्ति का वरदान माना है। अभी तक मैंने तुम्हारी रक्षा मे युद्ध किये थे, अब महाराणा जसवत-सिह के तथा राजवशो के आदर्शो के लिए युद्ध करूँगा। राजपूतो को निमत्रण दो, राजकुमार, कि वे अपने आदर्श की विजय मे आदर्श राजपूत वश का विनाश देखे। राजस्थान-भर मे प्रचार करो कि तुम्हारे गधर्व-विवाह की सध्या मे मार-वाड की परतत्रता की काली रात घिर आये और मारवाड के मर्यादा-रक्षण की जो प्रतिज्ञा मैंने स्वर्गीय महाराणा जसवतसिह के सामने की है वह अब अपने ही रक्त से पूरी हो।

अजीत : **(क्रोध से)** मैं सबसे प्रथम तुम्हे द्वद्व-युद्ध का निमत्रण देता हूँ, सेनापति !

दुर्गादास मै राजपूतो के आदर्श से गिरे हुए व्यक्ति का निमत्रण अस्वीकार करता हूँ। मारवाड के सैनिक तुमसे युद्ध करेगे।

अजीत सेनापति ! तुम मारवाड से निर्वासित हुए।

दुर्गादास मैं नही, राज्य-परिषद् तुम्हे निर्वासित करेगी, राजकुमार ! मारवाड भूमि के रजकणो से निर्मित राज्यवश के खिलौने ! तुम्हे इस राज्यवश को मर्यादा का इतना भी ध्यान नही आया कि तुम इस प्रसग पर मौन रह जाते ? क्या तुम्हारे लिए वीर राजपूतो का जो रक्त बहा है वह केवल बालको की क्रीडा थी ? विदेशियो द्वारा मारवाड के विनाश का जो ताडव हुआ है क्या वह केवल अभिनय-मात्र था ? आज फिर राजस्थान मे पारस्परिक विद्रोह की ज्वाला धधके जिसमे सारी मर्यादा और समस्त गौरव फिर भस्म हो जाय ?

सफीयत० **(नेपथ्य से)** यह नही होगा, यह नही होगा, यह नही होगा। चाचा दुर्गादास ! तुम्हारे रहते भारतीय गौरव कभी नष्ट न होगा। यदि ऐसा होगा तो मैं ससार मे नही रहूँगी। [**अश्रुपूर्ण नेत्र**]

दुर्गादास सुखी रहो, बेटी ! मुझे तुमसे ऐसी ही आशा थी। किन्तु राजकुमार यही देखना चाहते हैं। उठो, राजकुमार ! तलवार लो और मुझ पर वार करो।

सफीयत० नही, चाचा ! यह वार पहले मुझ पर होगा। उठो, राजकुमार ! मैंने समस्त बाते दूसरे कक्ष से सुनी है। मैं राजस्थान की रक्षा मे अपना रक्त बहा-ऊँगी। तुम्हारी तलवार से मरने मे मेरा सौभाग्य है। मेरे पिताजी ने चाचा दुर्गादास पर जो विश्वास किया था वह विश्वास ससार मे अटल रहेगा।

दुर्गादास बेटी, मैं सुखी हुआ। आज तुम्हारा चाचा बनने मे मैं अपने गौरव का अनुभव कर रहा हूँ। तो तुम मेरा साथ देने के लिए तैयार हो ?

सफीयत० आप जो कहेगे वही करूँगी। आप आज्ञा दीजिये।

दुर्गादास : राजपूती वश के गौरव के लिए, देश के गौरव के लिए, मानवता के गौरव,

के लिए मैं चाहता हूँ कि तुम मेरा साथ दो।

सफीयत० दूँगी। स्वतत्रता-प्रिय अकबर की पुत्री, मैं वचन देती हूँ।

दुर्गादास : खूब सोच-समझ कर वचन दो, बेटी!

सफीयत० आपको क्या मेरे वचन मे विश्वास नही है?

दुर्गादास हृदय मे आग लगानी पडेगी, बेटी! राजस्थान मे शरीर के जौहर अनेक बार हुए है, यह मन का जौहर होगा, प्राणो का जौहर होगा।

सफीयत० : आप मुझे आतकित न कीजिये, चाचा दुर्गादास! अपने प्राण भी दे सकती हूँ।

दुर्गादास मुझे तुम्हारे प्राण नही चाहिएँ। मैं चाहता हूँ कि आज से तुम्हारा और राजकुमार अजीतसिह का सम्बन्ध भाई-बहिन का हो।

[तीव्र वाद्य का एक स्वर]

सफीयत० : **(स्तब्ध रहकर)** भाई बहिन भाई बहिन ओह! **(चीखकर)** सफीयत! तू कहाँ है? **(क्षण-भर सिसकती है, फिर सँभलकर)** राजस्थान की मर्यादा के लिए, राजवश की पवित्रता के लिए, आपकी आज्ञा के लिए, **(अटकते हुए शब्दो से)** मै. .राजकुमार के ..मार्ग से सदैव के लिए ..हट जाऊँगी!

दुर्गादास : **(आनन्द-विह्वल होकर)** हट जाओगी? ओह, धन्य हो, सफीयत, तुम्हारी जय! सफीयत की जय! जय! जय! अनेक वर्षो तक तुम राजस्थान ही नही, देश के गौरव के लिए जीवित रहो। सफीयत, तुम तुम पर राजस्थान को गर्व होगा। तुम सदैव राजस्थान के क्षितिज पर ध्रुव-तारिका बनकर अटल रहो। राजकुमार! तुम स्तब्ध होकर देख रहे हो? नारी के जौहर की ज्योति देखो। राजपुत्र! इस पूजा की शोभा देखो और इस शोभा की पूजा करो। वीर राजपूत! महाराज जसवतसिह के फौलादी रक्त! इस पविञता के पुण्य पर्व मे अपने मन से लडो और विजय प्राप्त करो। यह जौहर देखो! ऐसा जौहर अभी तक राजस्थान मे नही हुआ। मानवता मे यह स्वर्गीय ज्योति देखो! बोलो, बोलो, देवी सफीयत की जय!

सफीयत० : नही, आप बोलिए वीरवर अजीतसिह की जय!

अजीत . **(सँभलते हुए शब्दो में)** मेरी नही, देवी! **(जोर से)** देवी सफीयत की जय!

दुर्गादास · **(प्रचड ध्वनि से)** राजस्थान के जौहर की जय!

[वाद्य-संगीत]

[परदा गिरता है।]

: 21 .

❖ औरंगज़ेब की आख़िरी रात ❖

•

पात्र-परिचय

आलमगीर औरंगजेब—मुगल सम्राट्
जीनत-उन्निसा बेगम—आलमगीर औरंगजेब की पुत्री
करीम—सिपाही
हकीम
कातिब

•

काल—18 फरवरी, 1707 ई०
स्थान—अहमदनगर का किला
समय—रात्रि के तीन बजे

औरंगज़ेब की आख़िरी रात

[बीजापुर और गोलकुण्डा की शिया रियासतो पर विजय प्राप्त करने के बाद जब औरगजेब ने मराठो का अन्त करने का निश्चय किया तो उन्हे अपनी असफलता स्पष्ट दीख पडने लगी। उन्होने जब छत्रपति शिवाजी के पुत्र शम्भाजी को सपरिवार बन्दी कर लिया और उनके सामने इस्लाम धर्म मे दीक्षित होने का प्रस्ताव रखा, तो शम्भाजी ने घृणा के साथ प्रस्ताव को ठुकराते हुए औरंगजेब के प्रति अत्यन्त कटु शब्दो का व्यवहार किया। फलस्वरूप शम्भाजी बडी निर्दयता के साथ कत्ल किये गये। उनके कत्ल होते ही मराठो मे क्रान्ति की ज्वाला भडक उठी। सत्रह वर्षों तक भयकर सघर्ष होता रहा। इधर मुगल सेना दिनो-दिन विलासी बन रही थी। फलस्वरूप प्रत्येक लडाई मे उसे बहुत अधिक हानि उठानी पडती थी। सन् 1706 मे औरगजेब ने देखा कि उनकी सेना अब अत्यन्त विश्रृंखलित और आलसी हो गयी है। राज्य की आर्थिक दशा भी चिन्ताजनक हो रही है। लडाई की हानि 'जज़िया' कर से भी पूरी नही हो रही है। जलालुद्दीन अकबर के समय से संचित आगरा और दिल्ली के किलो की समस्त सम्पत्ति दक्षिण की लड़ाइयो मे समाप्त हो चुकी है, तीन-तीन महीनो से सिपाहियो और सिपहसालारो का वेतन नहीं दिया गया है। राज्य की इस दुर्व्यवस्था के साथ वे अब वृद्ध हो गये है। पहले-जैसी शक्ति अब उनके शरीर मे नही रही। उनका विजय-स्वप्न निराशा मे तिरोहित हो चला है। उनकी चिन्ताएँ उन्हे चैन नहीं लेने देती। अन्त मे हताश होकर वे अहमदनगर लौट आये हैं। इस समय वे अहमदनगर के किले में बीमार पडे हुए है। उनका शरीर टूट चुका है। उन्हे ज्वर और खाँसी है। इस समय उनकी अवस्था नवासी वर्ष की है। एक साधारण से पलग पर लेटे हुए है। सिरहाने सफेद रेशम का तकिया है, जिसके दोनो बाजुओ मे जरी की हलकी पट्टियाँ है। वे एक सफेद रेशम की चादर कमर तक ओढे हुए

है। दुबला-पतला शरीर। कटी-छटी सफेद दाढ़ी। नाक लम्बी किन्तु वृद्धावस्था के कारण कुछ झुकी हुई। वे सफेद लम्बा कुरता पहने हुए है, जो रेशमी तनी से दाहिने कन्धे पर कसा हुआ है। गले मे मोतियो की एक बडी माला पडी हुई है जिसके मध्य मे एक बड़ा नीलम जडा है। हाथ मे तसबीह है। आलमगीर की मुख-मुद्रा अत्यन्त मलीन और पश्चात्ताप से परिपूर्ण है। उनकी दाहिनी ओर एक सुसज्जित पीठिका पर उनकी पुत्री जीनत-उन्निसा बेगम बैठी हुई है। उसकी आयु चालीस वर्ष के लगभग है। देखने मे सौम्य और आकर्षक। वह नीले रग की रेशमी शलवार और प्याज़ी रग की ओढनी से सुसज्जित है। गले मे रत्नो की माला है और कमर मे मोतियो की पेटी कसी हुई है। उसके मुख पर भी भय और आशका की रेखाएँ अंकित हैं। कमरे मे कोई विशेष सजावट नहीं है, किन्तु सारे वायुमण्डल मे एक पवित्रता है। पलग के सिरहाने दो शमादान जल रही हैं। दूसरी ओर केवल एक है, जिससे आलमगीर की आँखो मे चकाचौंध न हो। पलग के दाहिने ओर ज़ीनत-उन्निसा की पीठिका के समीप ही एक बडी खिडकी है, जिससे हवा का मन्द झोका आ रहा है। उससे घने अन्धकार के बीच मे आकाश के तारे दिखाई पड रहे हैं। आलमगीर के सामने कोने की ओर सोने के पिंजडे मे एक पक्षी बैठा हुआ है जो कभी-कभी अपने पख फडफडा देता है। पलग से कुछ हटकर सिरहाने की ओर एक तिपाई है, जिस पर दवा की शीशियाँ रखी हुई हैं। उसके समीप एक ऊँचे स्टैण्ड पर लम्बे मुँह वाली सोने की सुराही है, उसमे गुलाब जल रखा हुआ है। उसके पास ही एक सोने का प्याला एक रेशमी कपडे से ढका हुआ है। परदा उठने पर आलमगीर कुछ क्षणो तक बेचैनी से खाँसते हैं, फिर एक गहरी और भारी साँस लेकर शून्य की ओर देखते हुए ज़ीनत से कहते हैं]

आलम० . खाँसी! एक लमहे के लिए नही रुकती कोई दवा उसे नही रोक सकती, ज़ीनत! कोई दवा उसे नही रोक सकती .यह मौत की आवाज है। इसे कौन रोक सकता है ? (**फिर खाँसते हैं**) मौत की आवाज़!

ज़ीनत० (**धैर्य के स्वरो मे**) नही, जहाँपनाह! आपकी खाँसी बहुत जल्द अच्छी हो जायेगी। हकीमो ने .. .

आलम० (**बीच ही मे**) हकीमो ने हकीमो ने कुछ नही समझा। कुछ नही समझा, उन्होने। यह खाँसी कोई मर्ज़ नही है, बेटी! यह खाँसी सल्तनत के उखडने की आवाज़ है जो हमारे दम के साथ उखडना चाहती है। (**मुँह बिगाड़कर**) उखडे! कहाँ तक रोकेंगे हम ? (**खाँसते हैं**) कितने बलवाइयो को नेस्तनाबूद किया,

कितने गदर रोके, लेकिन . लेकिन यह खाँसी नहीं रुकती, बेटी ! रुके भी कैसे ? **(शिथिल स्वरों में)** अब आलमगीर आलमगीर नहीं हैं।

जीनत० · नहीं, जहाँपनाह ! आज भी हिन्दुस्तान और दकन आपके इशारे पर बनता और बिगड़ता है। आपके तेवर देखकर अफगानिस्तान भी घुटने टेकता है। राजपूत, जाट, मराठे और सिक्ख आज भी आपसे लोहा नहीं ले सकते।

आलम० · लेकिन शिवाजी ले सकता था। हमारी थोड़ी-सी लापरवाही से वह हाथ से निकल गया। उसकी वजह से ज़िन्दगी-भर परेशान रहा। लेकिन था बहादुर और दिलेर.. । ख़ैर, 'काफिर ब जहन्नुम रफ़्त' **(खाँसते हैं)** उसका बेटा शम्भाजी.. **[रुक जाते हैं और गहरी साँस लेते हैं।]**

जीनत० · छोड़िए इन बातों को, जहाँपनाह ! ये बातें इस वक्त दिल और दिमाग दोनों को खराब करने वाली हैं। आप जैसे ही अच्छे होंगे . .

आलम० **(बीच ही में)** अब अच्छे नहीं हो सकते, ज़ीनत ! चन्द घड़ियों की ज़िन्दगी ! कौन जाने कब ख़ामोशी आ जाये ? लेकिन बेटी ! हमने एक दिन भी आराम नहीं किया, **(खाँसते हैं)** एक दिन भी नहीं। राजपूत-जैसी कौम पर हुकूमत करना जिन्दगी का आराम नहीं है, सबसे बड़ी मेहनत है। मराठों की हिम्मत पस्त करना जिन्दगी का सबसे बड़ा करिश्मा है—वह हमने किया, बेटी ! वह हमने किया। *लेकिन अब...अब हम कमज़ोर हो गये हैं। अब कुछ नहीं कर* सकेंगे। **(ठण्डी साँस लेकर कलमा पढ़ते हैं)** ला इलाह इललिल्लाह मुहम्मदुर रसूलिल्लाह ...

जीनत० आप सब कुछ कर सकेंगे, जहाँपनाह ! अच्छा, अब आप यह खाँसी की दवा खा लीजिए। **(दवा देने के लिए उठती है)** हकीम साहब दे गये हैं।

आलम० **(तीव्र स्वर में)** क्या हकीम साहब खुद नहीं आये ?

जीनत० आये थे। बड़ी देर तक आपका इन्तज़ार करते रहे। आप होश में नहीं थे। वे थोड़ी देर के लिए बाहर चले गये हैं। उन्होंने अभी फिर आने को कहा है।

आलम० जो दवा वह दे गये हैं, वह उन्हें चखायी गयी थी ? **[खाँसते हैं।]**

जीनत० जी, मैंने भी चखी थी। दवा में किसी तरह का शक नहीं है।

आलम० यह अहमदनगर है, बेटी ! शिया रियासत बीजापुर और गोलकुण्डा के करीब। दुश्मनी दोस्ती में छुपकर आती है, जिन्दगी में यह हमेशा याद रखो।

जीनत० आपका कहना सही है, जहाँपनाह ! लेकिन दवा मैंने खुद चखकर देख ली है।

आलम० हमारे सामने नहीं चखी गयी, जीनत ! लेकिन ख़ैर, कोई बात नहीं। दवा खायेंगे ..लेकिन थोड़ी देर के लिए आराम, फिर वही तकलीफ। क्या करें दवा खाकर ! **(ज़ोर से खाँसी आती है)**...अच्छा लाओ, खायें तुम्हारी दवा।

आवे हयात से बढकर।

[आलमगीर हाथ बढाते हैं। जीनत प्याले मे दवा डालकर देती है। आलमगीर उसे हाथ मे लेकर देखते हैं। सोचते हुए एक बार रुकते हैं फिर थोडी-सी पीते हैं।]

आलम० (गला साफ कर) पी ली तुम्हारी दवा, बेटी! इस दवा मे जायके के साथ तुर्शी भी है। हुकूमत का प्याला भी ऐसा ही होता है।

जीनत० . लेकिन आपने सब तुर्शी जायके मे तबदील कर ली है।

आलम० नही, जीनत! मराठो ने ऐसा नही होने दिया। हम कुराने पाक की कसम खाकर कहते हे कि हम मराठो का नामोनिशान मिटाने मे अपनी सारी सल्तनत की बाजी लगा देते, लेकिन.. लेकिन अब वह हौसला नही रह गया। कमज़ोरी और बुढापे ने हमे बेबस कर दिया है। (ठहरकर) हमारे बहुत-से काम अधूरे पडे है। काश, हमारी जिन्दगी के दिन अभी.. खत्म न . होते!

जीनत० : (उत्साह से) अभी आप बहुत दिनो तक सलामत रहेगे, आलमपनाह!

आलम० (विह्वल होकर) अह, फिर एक बार कहो, जीनत! हम यह बात फिर से सुनना चाहते है। ओफ् अगर हमारी जिन्दगी के दिन अभी खत्म न होते, हम एक बार फिर शमशीर लेकर मैदानेजग मे जाते, बागियो से कहते, कम्बख्तो! आलमगीर कमज़ोर नही है। उनकी तलवार मे अब भी चिनगारियाँ है। घुटने टेककर गुनाहो की माफी माँगो! नही, काफिरो! दोजख का रास्ता खून की नहर से है। हमारी शमशीर से कटो और दोजख मे दाखिल.. (आवेश मे खाँसी रुकने पर भारी साँस लेते हैं) दोजख...मे दाखिल. हो.!

जीनत० · आप आराम करे, जहाँपनाह! नही तो आपकी तबीयत और भी खराब हो जायेगी।

आलम० इससे ज़्यादा और क्या खराब होगी, जीनत! जब हम मौत के दरवाजे पर खडे होकर दस्तक दे रहे है, चाहे जब खुल जाये। और आलमगीर के लिए जल्दी ही खुलेगा। देर नही हो सकती। मौत भी डरती होगी कि देर हो जाने से कही आलमगीर सजा न दे। (खाँसी) जिन्दगी-भर सजा! सजा! (रुकते हुए) अब्बाजान को .भी आजहानी शाहजहाँ को [सोचते हैं।]

जीनत० आलमपनाह! तजकिरे न उठाये।

आलम० (भौंहो मे बल देकर) क्यो न उठाये? जिन्दगी-भर गुनाहो का बोझ उठाया है तो मरते वक़्त उसका तज़किरा भी न उठाये? लेकिन, जीनत! हमने सैकडो बार अपने दिल को दिलासा देने की कोशिश की। हमने गुनाह कहाँ किये? कुराने पाक की रूह से, शरअ से इस्लाम का नाम दुनिया मे बुलन्द करने के लिए— जिहाद के लिए, जो काम हमने किये क्या उनका नाम गुनाह है? काफिरो को जहन्नुम रसीद किया क्या यह गुनाह है? उपनिषद् पढने वाले दारा से सल्तनत छीनी.. क्या यह गुनाह है? नमूना-ए-दरबार-ए-इलाही मे क्या मुझसे

गुनाह हुए ? आलमगीर—जिन्दापीर. ! लेकिन कोई आवाज कानो मे कहती है कि आलमगीर ! तूने इस्लाम का नाम लेकर दुनिया को धोखा दिया है । तूने इस्लाम की हिदायतो को नही समझा । जीनत ! तू (**तू पर जोर**) बतला, यह आवाज ठीक है ? क्या हमने इस्लाम के उसूलो को गलत समझा ?

जीनत० : (**शान्ति से**) आपसे कोई गलती नही हुई, जहाँपनाह !

आलम० : (**शून्य मे देखते हुए**) हजारो सतनामियो को कत्ल किया दारा, शुजा, मुराद को तख्ते-ताऊस का हक नही दिया और बाप को सात बरस तक लम्बे सात बरस तक. . !

जीनत० : लेकिन आलमपनाह ! अगर गौर से देखा जाये तो शहशाह शाहजहाँ को नजरबन्द करना गलत नही कहा जा सकता । अपनी पीरी मे वे अपनी आँखो से अपने बेटो का मजार देखते, क्या उन्हे तकलीफ न होती ? आपने उन्हे उस तकलीफ से बचा लिया ।

आलम० : लेकिन उस तकलीफ के पैदा करने का जिम्मा किसका है ? हमारा । हमने ही लाहौर मे दारा की कब्र बनवायी । हमने ही आगरे मे मुहम्मद को भेजकर अब्बाजान का महल कैदखाने मे तब्दील कराया.. ! उस दास्तान को तुम जानती हो ?

जीनत० जहाँपनाह ! मुझसे वह दर्दनाक दास्तान क्यो दोहरवाना चाहते है ? आप आराम कीजिए । आपकी तबीयत ठीक नही है ।

आलम० तो हम ही वह दास्तान कहेगे जो हमने मुहम्मद से सुनी है । (**शून्य मे देखते हुए**) आधी रात थी कमरे मे सिर्फ एक शमा जल रही थी दूसरी शमा शहशाह शाहजहाँ की आँखो मे झिलमिला रही थी । वह चारपाई पर तसवीरे-संग की तरह लेटे हुए थे । उनकी पथराई आँखे दूर पर दिखाई देने वाले ताजमहल पर जमी हुई थी हलकी चाँदनी थी । शहशाह ने जहाँनारा से कहा, जहाँनारा ! आलमगीर से पूछो, वह हमारी तरह ताजमहल को तो कैद नही करेगा .?

जीनत० : (**आग्रह के स्वरो मे**) जहाँपनाह . !

आलम० : (**उसी स्वप्न मे**) बादशाह की जबान तालू से सट गयी थी गला सूख रहा था । गहरी और सर्द साँस लेकर उन्होने फरमाया, 'मुमताज ! हमारी बेगम ! ताज हमे पत्थरो से नही, आँसुओ से बनवाना चाहिए था काश, यह मुमकिन हो सकता !'

जीनत० (**सहानुभूति के साथ**) उन्हे बहुत तकलीफ थी, आलमपनाह ! लेकिन इस वक्त यह सब सोचना बेकार है । रात ज्यादा बीत रही है ।

आलम० (**चौंककर तसबीह फेरते हुए**) क्या कहा ? रात ज्यादा बीत रही है ? आज हमारे लिए भी शायद वही मौत की रात है । लेकिन हमारे सामने कोई ताजमहल नही है । (**ठहरकर**) हम इस लायक है भी नही, जीनत ! जिन्दगी

मे हमने कुछ नही किया, सिर्फ लडाइयाँ ही लडी है। उनमे हमने फतह हासिल की है, लेकिन आज...आज जिन्दगी मे हमे शिकस्त ही मिली भारी शिकस्त। हमने अब्बाजान को कैद नही किया, इस आखिर वक्त मे अपने चैनो-सुकून को ही कैद किया। आज इतने बरसो के बाद अब्बाजान की चीख हमारे कानो मे आ रही है . प्यास से उनका गला सूख रहा है। उनकी आवाज मे कितना दर्द है तुम सुन रही हो ? नही ? उनकी हसरत-भरी निगाहो की टक्कर से ताजमहल जैसे चूर-चूर होने जा रहा है।

जीनत० : (अत्यन्त सात्वना के स्वरो मे) जहाँपनाह ! कही कुछ नही है। आप सोने की कोशिश कीजिए। जो कुछ हुआ उसे भूल ..

आलम० : (बीच ही मे) नही भूल सकते, जीनत ! हमने अपनी रूह नीव मे दफन कर सल्तनत की इमारत खडी की है। आज रूह तडपकर करवट लेना चाहती है। वह चीख रही है। तुम उसकी आवाज भी नही सुनना चाहती ?

जीनत० जहाँपनाह! खुदा को याद कीजिए। सोने की कोशिश कीजिए। रात आधी से ज्यादा बीत चुकी है।

आलम० जिन्दगी उससे ज्यादा बीत चुकी है। (नेपथ्य की ओर उँगली उठाकर) देखती हो यह अँधेरा ? कितना डरावना ! कितना खौफनाक ! दुनिया को अपने स्याह परदे मे लपेटे हुए है। गोया यह हमारी जिन्दगी हो। इसमे कभी सुबह नही होगी, जीनत ! अगर होगी भी तो वह इसके काले समुन्दर मे डूब जायेगी। इस अँधेरे मे सूरज भी निकले तो वह स्याह हो जायेगा। (रुककर) ओह... कितना अँधेरा है, खुदा ! हमने तेरा नाम लेकर सल्तनत पर कब्जा किया, तेरा नाम लेकर औरतो और बच्चो को कैद किया, वे सब तेरे बच्चे ! तेरे बन्दो पर एतबार नही किया। तेरा नाम लेकर. .कुरान की कसम खाकर मुराद . भाई मुराद से सुलह की और फिर और फिर उसका खून ..

[खाँसी आती है और फिर निश्चेष्ट हो जाते हैं।]

जीनत० (घबराहट के स्वरो मे) जहाँपनाह ! जहाँपनाह ! (फिर पुकारकर) करीम ! करीम !

[सिपाही करीम का प्रवेश। वह अदब से सलाम करता है।]

जीनत० (आदेश के स्वरो मे) हकीम साहब को फौरन यहाँ आने की इत्तला करो। बादशाह सलामत की तबीयत खराब होती जा रही है। फौरन जाओ। हकीम साहब अमीरो के दूसरे कमरे मे होगे। फौरन..

क़रीम० जो हुक्म। [अदब के साथ सलाम कर प्रस्थान]

[जीनत के मुख पर घबराहट के चिह्न और स्पष्ट हो जाते हैं। वह एक पंखे से हवा करती है। आलमगीर होश में आते हैं। धीरे-धीरे अपनी आँखें खोलकर जीनत को घूरकर देखते हैं।]

आलम० (काँपते हुए स्वरो मे) कौन ? अब्बाजान ! (आँखें फाड़कर) तुम...

तुम जीनत हो ? अब्बाजान कहाँ गये ? अभी तो यहाँ आये थे। **(सोचते हुए)** ...था उनका चेहरा . आँखो मे आँसू थे। **(ठण्डी साँस लेकर)** इतने बडे शहन्शाह की आँखो मे आँसू ? उन्होने हमारे सामने घुटने टेक दिये और कहा, शहन्शाह आलमगीर ! हमे हमारा बेटा औरगजेब वापस कर दो ! बादशाही लिबास मे हमारा बेटा खो गया है । उसे हमे वापस कर दो . ! **(कुछ ठहरकर)** लेकिन जीनत ! वह बेटा कहाँ है ? उसने तो अपने अब्बाजान को कैद किया है। **(इसी समय कमरे मे टँगा हुआ पक्षी अपने पख फड़फड़ा उठता है। आलमगीर उसकी तरफ चौंककर देखते हैं)**...और यह परिन्दा अपने पर फैलाकर हमसे कुछ कह रहा है . ? क्या कहेगा ? इसे भी तो हमने सोने के पिंजडे मे कैद किया है। **(जीनत की ओर आग्रह से)** जीनत ! इस पिंजडे का दरवाजा खोल दो। **(जीनत पिंजड़े का दरवाजा खोलती है)** उसे निकालो । **(जीनत परिन्दा पकडकर निकालती है)** उडा दो उसे। **(जीनत उसे खिड़की से बाहर उडा देती है। आलमगीर उसके उडने की दिशा मे कुछ देर देखकर सन्तोष की गहरी साँस लेते हैं)** आ.. जा. द ! **(कुछ रुककर)** हम अब्बाजान को इस तरह आजाद नही कर सके ! हिन्दुस्तान के बादशाह को इस परिन्दे की किस्मत भी नसीब नही हुई !

जीनत० लेकिन आलमपनाह ! बादशाह तो न जाने कब के दुनिया की कैद से निकल कर आजाद हो गये। अब किस बात का मलाल है ? आप अपनी तबीयत सँभालिए। मैने हकीम साहब को बुलवाया है। वे आते ही होगे।

आलम० : **(जीनत की बात जैसे उन्होने सुनी ही नहीं)** परिन्दे की किस्मत बादशाह की किस्मत नही हो सकी ..! इस अँधेरे मे उस परिन्दे की किस्मत जागी है। वह खुश होकर शोर कर रहा है। बचपन मे दारा भी इसी तरह शोर करता था। **(रुककर)** कुछ वैसी ही आवाज आ रही है। **(सुनते हुए)** वह देखो ! वह आ रही है। **(रुककर)** लेकिन यह आवाज़ कैसी है ? इस खौफनाक अँधेरे मे यह आवाज जैसे मुँह फाडकर खाने को दौड रही है। यह आयी ! जीनत ! यह आवाज सुनती हो ?

जीनत० **(आश्चर्य से)** कैसी आवाज ? कौन-सी आवाज़, जहाँपनाह ?

आलम० **(आँखें फाड़कर)** अरे, इतने जोर से आवाज आ रही है और तुम्हे सुनायी नही पडती ? यह देखो। **(सुनते हुए)** फिर आयी। यह हर लमहे तेज़ होती जा रही है। जीनत ! **(पुकारकर)** जीनत ! यह आवाज ! **(चीखकर)** यह खौफनाक...आवाज़ !

जीनत० **(धैर्य के स्वरो मे)** कोई आवाज़ नही, जहाँपनाह ! आपकी तबीयत मे घबराहट है। इसी वजह से ऐसा ख़याल पैदा हो रहा है। **(विश्वासपूर्वक)** कही कोई आवाज़ नही है। आप अपने को सँभालने की कोशिश करे।

आलम० . **(घबराहट से कुछ उठकर)** नही, नही, यह आवाज बराबर आ रही है। कोई

चीख रहा है। (संकेत कर) यह देखो! अँधेरे मे यह कौन झाँक रहा है? कौन? (जोर से) कौन? (पुकारकर) सिपहसालार?

जीनत० · (समीप होकर) कोई नही है, जहाँपनाह! सिपहसालारकी जरूरत नही है।

आलम० (घबराहट से भर्राये हुए स्वर मे) यह खिडकी के पास कौन है। (संकेत करते हुए) कराहता हुआ, चीखता हुआ? ओह! उसने फिर चीख भरी, अरे दारा! (कांपते हुए) दारा! तुम हो? हमने तुम्हारा खून नही किया। हमने नही किया, दारा! हुसेनखाँ जबरदस्ती तुम्हारे कमरे मे घुस गया। हमने उसे हुक्म नही दिया था। और.. और (काँपकर) तुम्हारा सिर कहाँ है, दारा! तुम्हारा सिर किधर गया? (आलमगीर उठ खडे होते हैं। फिर लडखड़ाते हुए) हम खोजकर लायेंगे। हम अभी खोजकर लायेंगे। (हाथ फैलाते हुए) तुम्हारा इतना खूबसूरत सिर..! [जीनत उन्हे रोककर फिर पलग पर लिटा देती है। आलमगीर अचेत हो जाते हैं।]

जीनत० (अपने आँचल से अपने माथे का पसीना पोछती हुई) जहाँपनाह......

[करीम का प्रवेश]

करीम (अदब से सलाम करके) शहजादी! हकीम साहब तशरीफ लाये हैं।

जीनत० · (शीघ्रता से) फौरन उन्हे अन्दर भेजो, इसी वक्त।

करीम . (सलाम कर) जो हुक्म। [शीघ्रता से प्रस्थान]

जीनत० (कम्पित स्वर मे, आँखो मे आँसू भरकर) क्या जानती थी कि अहमदनगर मे यह सब होगा! या खुदा! [आलमगीर को चादर उढाती है।]

[हकीम साहब का प्रवेश। लम्बी दाढी, काला चोगा, सिर पर अमामा, सफेद पैंजामा और जरी के जूते। साथ मे दवाओ का एक सन्दूकचा]

हकीम . (बादशाह को अदब से सलाम करने के बाद जीनत को सलाम करते हैं) आदाब!

जीनत० · (कम्पित स्वर में) आलमपनाह को होश नही है, हकीम साहब! (उठकर हकीम साहब के पास आती है) आज रात को आलमपनाह की तबीयत बहुत ही खराब रही। जाने, उन्हें क्या हो गया है? जागते हुए ख्वाब देखते है और चीख उठते हैं। एक लमहा उन्हे चैन नही है। (करुण स्वर मे) अब आप ही मेरे नाखुदा है। तबीयत घबराती है। जहाँपनाह को अच्छा कर दीजिए, जल्द अच्छा कर दीजिए।

हकीम . जहाँपनाह को होश नही है? (गम्भीर और सात्वना के स्वरो मे) घबराइए नहे, घबराइए नही, शहजादी! खुदा पर भरोसा रखिए। वह चाहेगा तो इंशा-अल्लाह, बादशाह सलामत बहुत जल्द अच्छे हो जायेंगे। देखिए, मै दवा देता हूँ। बादशाह सलामत अभी होश मे आये जाते है। घबराने की कोई बात नही।

जीनत० (विकृत स्वर मे) मेरी समझ मे कुछ नही आता कि मै क्या करूँ !

हकीम : इतमीनान के साथ आप बादशाह सलामत को पखा झले । मै उन्हे होश मे आने की दवा देता हूँ ।

[हकीम अपने सन्दूकचे मे से एक टिकिया निकालते है । जीनत पखा झलती है ।]

हकीम : (डिबिया का ढक्कन खोलते हुए) अब बादशाह सलामत की खांसी कैसी है ?

जीनत० . खाँसी मे बहुत आराम है । पहले तो वे हर बात कहने मे खाँसते थे । आप की दवा से उनकी खाँसी बहुत कुछ रुक गयी, लेकिन घबराहट बहुत जियादह बढ गयी है । [पखा झलती है ।]

हकीम : घबराहट भी दूर हो जायेगी । (आलमगीर की नाक के समीप बहुत आहिस्ते से डिबिया ले जाते है) अभी जहाँपनाह को होश आता है । आप सब्र करे ।

जीनत० उनकी बेचैनी देखकर तो मै बिलकुल ही घबरा गयी थी । मैंने बडी मुश्किल से अपने को काबू मे रखा । अगर मै भी घबरा जाती तो फिर इधर था ही कौन ?

हकीम · जहाँपनाह की खिदमत करना मेरा पहला फर्ज है ।

जीनत० इसीलिए तो मैंने आपके पास फौरन खबर भेजी ।

हकीम मै खबर पाते ही हाजिर हुआ । (आलमगीर पर गहरी नजर डालकर) देखिए, देखिए ! बादशाह सलामत को होश आ रहा है । पखा जरा धीमा करे ।

[आलमगीर के ओठो मे कुछ स्पन्दन होता है, जैसे वे कुछ कहना चाहते है । फिर हलकी अँगडाई लेकर आँखें खोलते है । जीनत और हकीम के मुख पर प्रसन्नता की झलक ।]

जीनत० (उत्साह से) होश आ गया ! होश आ गया !

हकीम . बादशाह सलामत को आदाब अर्ज करता हूँ । [दरबारी ढग से सलाम करता है ।]

आलम० : (धीमे स्वर मे) पा नी.. !

[जीनत शीघ्रतः से सुराही मे से गुलाबजल निकालकर आगे बढाती है ।]

जीनत : जहाँपनाह, यह पानी .....

[आलमगीर उठने की कोशिश करते है । हकीम उन्हे उठने मे सहारा देता है । आलमगीर पानी पीने के लिए झुकते है । लेकिन दूसरे ही क्षण रुक जाते है ।]

आलम० (प्रश्नसूचक स्वर) यह कौन-सा पानी है ?

जीनत० (नम्रता से) वही गुलाबजल है जा ग्रापके लिए खास तौर से तैयार किया गया है।

ग्रालम० (सन्तोष से) लाग्रो। एक घूँट पीकर . (घबराकर) हमारी तसबीह कहाँ है ?

जीनत० · (पलंग से तसबीह उठाकर) यह है, जहाँपनाह !

ग्रालम० (लेते हुए) हमेशा मेरी जिन्दगी के साथ रहने वाली...! (फिर एक घूँट पानी पीकर हकीम साहब को घूरते हुए) तुम कौन.. हो ? (एक क्षण बाद जैसे स्मरण करते हुए) शायद हकीम साहब ?

हकीम (सलाम करते हुए) जी, जहाँपनाह !

ग्रालम० (कातर स्वर मे) हमारी हालत बहुत खराब है, हकीम साहब ! ग्रब शायद हम न बचेगे। [ठण्डी साँस लेते हैं।]

हकीम ऐसी बात न फरमाये, जहाँपनाह ! बुखार ग्रापका ग्रब दूर हो ही गया, सिर्फ कमजोरी ग्रौर खाँसी हे। खाँसी भी ग्रब ग्रच्छी हो चली है, ग्रौर कमजोरी भी, इन्शाग्रल्लाह, दूर हो जायेगी।

ग्रालम० तो जिन्दगी भी दूर हो जायेगी, हकीम साहब ! इस वक्त हमारे लिए कमजोरी ग्रौर जिन्दगी दो ग्रलग-ग्रलग चीजे नही हैं। एक दूर होगी तो दूसरी भी दूर हो जायेगी। ग्रौर ग्रालमगीर कमजोर होकर जिन्दा नही रहेगे।

हकीम (अदब से) ग्रालमपनाह ! ग्राप बजा फरमाते है। (हकीम यह बात ग्रादत से कह देते है लेकिन अपनी गलती महसूस करने पर घबराकर) लेकिन इसे सही नही मानना चाहिए, ग्रालमपनाह ! (यह सोचकर कि उन्हे यह भी नहीं कहना चाहिए वे और घबराकर कहते हैं) मै क्या ग्रर्ज करूँ कुछ जवाब नही दे सकता। [हाथ मलते हुए सिर झुका लेते हैं]

ग्रालम० (गम्भीरता से) ज़ीनत, हकीम साहब से कहो कि वे हमे बेहोशी की दवा दे।

जीनत० : (बात बदलने के विचार से) इन्ही की दवा से तो ग्राप होश मे ग्राये हैं, जहाँपनाह !

ग्रालम० . (गम्भीर किन्तु रुकते हुए स्वरो में) लेकिन, जीनत ! इस होश से हमारी बेहोशी ग्रच्छी है। गुनाहो की याद ग्रब बरदाश्त (रुककर, चौंककर, ग्रपनी बात पलटते हुए) हकीम साहब, कमजोरी की हालत ग्रब बरदाश्त नही होती। ऐसी दवा दीजिए कि बेहोशी का ग्रालम रहे। (रुककर) ग्रापके पास—शराब को छोडकर—कोई ऐसी दवा है ?

हकीम जहाँपनाह ! ग्रापकी कमजोरी बहुत जल्द रफा हो जायेगी।

ग्रालम० (तीव्रता से) हमारे सवाल का जवाब दीजिए, हकीम साहब ! ग्रापके पास शराब को छोडकर कोई ऐसी दवा है ?

हकीम (घबराकर हकलाते हुए) जी, ऐसी दवाएँ तो बहुत है, ग्रालमपनाह !

लेकिन आपको—अपने जहाँपनाह को कैसे दे सकता हूँ ? ये दवाएँ आपके लिए नही है, आलमपनाह !

आलम० . **(आँखें फाड़कर)** आलमपनाह के लिए नही है ? कौन-सी दौलत है जो आलमगीर के लिए नही है ? इस वक्त बेहोश हो जाने की दवा हमारे लिए सब से बडी दौलत है । हकीम साहब ! हम इस वक्त वही चाहते है ।

ज़ीनत० **(भृकुटि-संचालन के साथ)** हकीम साहब ! आपके पास एक ऐसी दवा भी तो है जिसमे थोडी देर की बेहोशी के बाद सारी कमजोरी दूर होकर तबीयत मे ताज़गी आती है ? **[घूरकर देखती है ।]**

हकीम **(सँभलकर)** हाँ, हाँ, एक ऐसी दवा मेरे पास है । मेरे वालिद साहब ने वह नुसखा देकर कहा था कि जब सब दवाएँ बेकार साबित हो तब उसका इस्तेमाल किया जाये । **(हिचकते हुए)** मै अभी उसका इस्तेमाल नही करना चाहता था ।

ज़ीनत० **(आलमगीर से)** और जहाँपनाह, इस वक्त वह दवा न खायी जाये तो बेहतर होगा । सुबह होने मे ज्यादा देर नही है । और अज़ान का वक्त करीब आ रहा है । आप खुदा की इबादत न कर सकेगे । अभी वह दवा रहने दे ।

आलम० : यह बात ठीक कह रही हो, बेटी ! अच्छा, अभी वह दवा रहने दीजिए, हकीम साहब ! आप अजान होने के वक्त तक दूसरी दवा दे सकते हैं ।

हकीम : बसरोचश्म । **(शहज़ादी से)** शहज़ादी, आप मुझे एक प्याला इनायत फरमाये, मै कमज़ोरी दूर करने की दवा अभी पेश करूँ ।

ज़ीनत० : **(प्याला उठाकर)** यह लीजिए ।

हकीम **(अपने सन्दूकचे में से एक दवा निकालते हुए)** खुदा चाहेगा तो आपको फौरन आराम होगा । सितारो की नहूसत दफा होगी । **(प्याले मे दवा डालते हुए)** आलमपनाह ! हमीदुद्दीनखाँ ने तो सितारो की नहूसत दूर करने के लिए चार हज़ार रुपये का एक हाथी आलमपनाह पर तसद्दुक कर दिया होगा ?

आलम० **(गम्भीर स्वर मे)** नही । जुमेरात को हमीदुद्दीनखाँ ने नुजूमियो के कहने के मुताबिक तसद्दुक करने के बारे मे एक दरख्वास्त जरूर पेश की थी, लेकिन हमने उस दरख्वास्त मे यह बढा दिया कि यह तो अंजुमपरिस्तो का रिवाज है । इसके बजाय चार हजार रुपये काजी को गुरबा मे तकसीम करने के लिए दे दिया जाये ।

हकीम · **(उत्साह से आँखें चमकाकर)** आलमपनाह ने क्या बात कही है ! अब तो सितारो की नहूसत दूर होने मे कोई अन्देशा भी नही रह गया और मुझे भी यह कामिल यकीन है कि यह अर्क आपको ऐसी ताकत देगा कि आप तन्दुरुस्त होकर अपनी रिआया के दर्दोगम को दूर करते हुए सौ साल तक सलामत रहेगे ।

आलम० **(सोचते हुए)** सौ साल तक ! यानी ग्यारह बरस और । लेकिन हकीम साहब, हम ग्यारह दिन भी जिन्दा नही रहेगे । बेटो को भी तो बादशाहत करने का मौका मिले । हमारे बेटे **(सोचते हुए)** मुअज्जम आजम . कामबख्श...

हकीम . (दवा का प्याला सामने करते हुए) यह सही है, आलमपनाह! लेकिन मुझे भी अपनी खिदमत करने का मौका दे। मैंने अपनी हिकमत की बेहतरीन दवा आलमपनाह के रूबरू पेश की है।

आलम० (ज़ीनत से) अच्छा ज़ीनत, यह दवा रख लो। इसे हम नमाज़ के बाद पियेगे। अब आप तशरीफ ले जा सकते है। [**ज़ीनत दवा का प्याला ले लेती है।**]

हकीम (सिर झुकाकर) जो जहाँपनाह का हुक्म। लेकिन एक गुजारिश है।

आलम० क्या ?

हकीम · (हाथ जोडकर) आलमपनाह कुछ न सोचे, कोई गुफ्तगू न करे। इस वक्त आराम करना खुद एक मुफीद दवा होगी। सुबह होते ही आलमपनाह की तबीयत अच्छी मालूम होगी।

आलम० अच्छी बात है, हम कुछ न सोचेगे। कुछ गुफ्तगू न करेगे। लेकिन हम अपने बेटो को खत तो लिखवा सकते है ?. (**सोचकर**) वही करेगे। हकीम साहब! अब आप तशरीफ ले जाइए। हमे अपने बेटो की याद आ रही है।

हकीम जो हुक्म।

[**बादशाही अदब के अनुसार सलाम करके प्रस्थान**]

आलम० (**सोचते हुए**) हकीम साहब कहते है कि हम कुछ न सोचे, कोई गुफ्तगू न करे, सुबह होते ही तबीयत अच्छी मालूम होगी। . लेकिन ज़ीनत! हम जानते है कि हमारी तबीयत अच्छी नही होगी। हमने अपनी किश्ती समुन्दर मे छोड दी है। अब साहिल दूर होता जा रहा है।

ज़ीनत० · तबीयत मे घबराहट होने की वजह से आलमपनाह ऐसा फरमा रहे है। अब आपकी तबीयत अच्छी होने जा रही है। हकीम साहब की दवा बहुत मुफीद साबित हुई है। देखिए, आपकी खाँसी को कितना फायदा पहुँचा है!

आलम० (**जोर देकर**) तुम नही समझी, जीनत! जिस तरह सुबह होने से पहले रात और भी सुनसान और खामोश हो जाती है, उसी तरह मौत से पहले हमारी सारी शिकायतो का शोर खामोश हो गया है। अब हमारा आखिरी वक़्त करीब है।

ज़ीनत० (**आँखो में आँसू भरकर**) ऐसा न कहे, आलमपनाह!

आलम० (**गहरी साँस लेकर**) और ज़ीनत! हमारी बेटी! आज इस आखिरी वक्त मे हमारे बिस्तर के नजदीक हमारा एक भी बेटा नही है। ऐसे बाप को तुम क्या कहोगी जिसने बादशाहत मे खलल पडने के वहम से अपने कलेजे के टुकडो को सजा देकर हमेशा कैदखाने मे रखा ? अपने नज़दीक आने भी नही दिया। (**सोचते हुए**) हमारे कैदी बच्चो! तुम बदकिस्मत हो कि आलमगीर तुम्हारा बाप है। तुमने और कोई गुनाह नही किया। तुम लोगो का सिर्फ यही गुनाह है कि तुम औरगज़ेब के बेटे हो। आज तुम्हारा बाप मौत के दरवाज़े पर पहुँच

कर तुम्हारी याद कर रहा है !.. मुअज्जम...आजम...कामबख्श !

जीनत० (आग्रह से) जहाँपनाह, मैं उन लोगो तक आपके ये मुहब्बत-भरे अल्फाज जरूर पहुँचा दूँगी ।

आलम० (सन्तोष से) हम अपनी कब्र से भी तुम्हे दुआ देगे, बेटी ! हम खुद अपने बच्चो को खत लिखाना चाहते है । इस आखिरी वक्त मे हमारी ख्वाहिश पूरी होने दो । कातिबो को बुलाओ । [ठण्डी साँस लेते हैं ।]

जीनत० आपका हुक्म पूरा होगा, अब्बाजान ! (पुकारकर) करीम !

[करीम का प्रवेश । वह सलाम करता है ।]

जीनत० शाही कातिब को इसी वक्त हाजिर किया जाये !

करीम . जो हुक्म । [सलाम कर शीघ्रता से प्रस्थान]

आलम० (मन्द स्वर से) हम खुश हुए, बेटी ! हमारी दुआएँ तुम्हारे साथ रहे । आज तक हमने शायद किसी की ख्वाहिश पूरी नही की, हमे कोई हक नही कि किसी से भी अपनी ख्वाहिश पूरी करने के लिए कहे । लेकिन तुमने हमारी ख्वाहिश पूरी की । बहुत दिनो तक जियो ।

जीनत० जहाँपनाह ! शहजादी जहाँनारा ने अब्बाजान की कैद मे सात साल तक खिदमत की तो क्या मैं आपकी खिदमत कुछ दिनो तक भी न करूँ ?

आलम० हमे भी कैद मे समझो, बेटी ! हमारे गुनाहो ने हमे चारो तरफ से घेर रखा है । जमीर की जजीरो ने भी हमारे हाथ-पैर बाँध लिए हैं । हम अब इस दुनिया को आँख उठाकर भी नही देख सकते । जिस सल्तनत को खून से सीच-सीचकर हमने इतना बडा किया है उसे अगर अब आँसुओ से भी सीचना चाहे तो हमे एक पूरी जिन्दगी चाहिए । वह हमारे पास कहाँ है ? (गला सूख जाता है । ठहरकर) बेटी ! पानी. पानी . गला सूख रहा है ।

[जीनत प्याले मे गुलाबजल लेकर पिलाती है ।]

जीनत० : आप थक गये है, जहाँपनाह ! सारी रात आपको बहुत बेचैनी रही ।

आलम० उस बेचैनी के खत्म होने का वक्त भी आ रहा है । (खिड़की की ओर सकेत करते हुए) देखो, ये तारे ढल रहे है । रात-भर इन्होने रोशनी की और अब से वे अपनी आखिरी घड़ियाँ गिन रहे है । हम भी गिन रहे है, लेकिन हमने उम्र-भर अँधेरा ही फैलाया । उजाले की कोई किरन नही रही । हम मौत को ही उजाला दे सके तो अपने को खुश-किस्मत समझेगे । (स्तब्धता । एकबारगी चौंककर) सुबह हो गयी क्या ? [खिडकी की ओर देखते हैं ।]

जीनत० (उसी ओर देखती हुई) हाँ, जहाँपनाह ! आसमान पर सफेदी छाने लगी है ।

आलम० (गहरी साँस लेकर) खुदा की इबादत का वक्त आ रहा है । (तसबीह फेरते हैं) जीनत, हमने जिन्दगी-भर इबादत का ढिंढोरा पीटा, लेकिन खुदा के पास तक नही पहुँच सके । अगर पहुँच पाते तो चलते वक्त इतने गुनाहो का

बोझ हमारे सिर पर न होता। चलने का वक्त करीब आ रहा है। मुझे ख़ुशी है कि आज जुमा है। हमने जिन्दगी-भर इबादत कर यही चाहा कि जुमा हमारा आखिरी दिन हो। (**अस्थिर होकर**) कातिब अभी नही आया ?

ज़ीनत० आ रहा होगा, जहाँपनाह ! करीमबख्श फौरन ही उसे लेकर हाज़िर होगा।

आलम० : (ठण्डी साँस लेकर) ज़ीनत, जब हम पैदा हुए थे तब हमारे चारो तरफ हजारो लोग थे, लेकिन लेकिन इस वक्त हम अकेले जा रहे है। हम इस दुनिया मे आये ही क्यो ? हमसे किसी की भलाई नही हो सकी। हम वतन और रैयत दोनो के गुनाह अपने सिर पर लिए जा रहे है।

ज़ीनत० · आलमपनाह ! आपने तो वतन और रैयत की भलाई की है, और...

आलम० : (बीच ही मे रोककर) इस आखिरी वक्त मे ऐसी बात मत कहो, ज़ीनत ! ये बातें बहुत बार सुनी है। लेकिन अब इन बातो से रूह काँपती है, दिल डूबता है। काश ! ये बाते सच होती ! [**गहरी साँस लेते हैं।**]

ज़ीनत० : नही, आलमपनाह ! खानदाने तैमूरी मे आपसे बढकर अद्ल करने वाला कोई नही हुआ।

आलम० : और उस अद्ल मे हमने अपनी मुराद पूरी की।.. मुराद (**मुराद शब्द से मुरादबख्श का स्मरण आने पर**) और हमारे मुरादबख्श ने सामूगढ की लडाई मे हमारे कहने पर दारा से लोहा लिया। कितनी हैरतअगेज जग थी वह ? (**सोचते हुए**) राजा रामसिंह ने तलवार का ऐसा हाथ चलाया कि हम मय हाथी के जमीदोज़ हो जाते, लेकिन मुरादबख्श मुरादबख्श ने अपनी ढाल पर तलवार रोक राजा रामसिंह पर ऐसा वार किया कि वह हाथी के पैरो पर आ गिरा। उसका केशरिया बाना खून से लथपथ होकर ज़मीन पर फैल गया, और बस इस सबका बदला मुरादबख्श को क्या मिला ? ओह पा नी

[**ज़ीनत फिर पानी पिलाती है।**]

ज़ीनत० : हुज़ूरेआली ! आपसे दस्तबस्ता अर्ज़ है कि आप अब कुछ न फरमाये। ऐसी बाते करके आप अपनी हालत और ख़राब कर लेते है।

आलम० : (उतावली से) इस वक्त हमे मत रोको, ज़ीनत-उन्निसा ! हमे मत रोको। हम कहेगे, जरूर कहेगे। बुझने से पहले शमा की लौ भडक उठती है। हमारी याददाश्त भी ताज़ी हो रही है। एक-एक तसवीर आँखो के सामने आ रही है। हम हाथी पर बैठकर सैरगाह जा रहे है। आगे-पीछे हिन्दुओ का बेशुमार मजमा है। वे चीख़-चीख़ कर कह रहे हैं कि आलमपनाह ! जज़िया माफ कर दीजिए। लेकिन हम माफ कैसे कर सकते है ? दकन की लडाइयो का खर्च कहाँ से आयेगा ? हम कहते है तुम काफिर हो। जजिया नही हटेगा। वे लोग हमारे रास्ते पर लेट जाते है। हमारा हाथी आगे नही बढ रहा है। हम गुस्से मे आकर फीलवान को हुक्म देते है, इन कम्बख्तो पर हाथी चला दो। हाथी आगे

बढता है और सैंकडो चीखे हमारे कान मे पडती है।.. हम हँसकर कहते है—काफिरो, तुम्हारी यही सजा है। जजिया माफ नही हो सकता. ... ...नही हो सकता......।

जीनत० : **(आँखो में आँसू भरकर)** आलमपनाह !

आलम० : **(उसी स्वर मे)** आज वह हाथी हमारे सामने झूम रहा है। मालूम होता है, वह हमारे कलेजे को चूर-चूर करता हुआ जा रहा है। जीनत ! हमारा कलेजा टुकडे-टुकडे हुआ जा रहा है...। इसकी दवा तुम्हारे हकीम साहब के पास नही है ?

जीनत० : **(कातर स्वर मे)** आलमपनाह ! आप यह दवा पी लीजिए। इस दवा से आपको बहुत फायदा होगा।

[**दवा का प्याला आगे बढ़ाती है।**]

आलम० : **(भारी साँस लेकर)** जिसने सारी जिन्दगी खून का जाम पिया है, उसे दवा का जाम क्या फायदा करेगा ? इसे फेक दो, जीनत ! उस खिडकी की राह फेक दो।

जीनत० : आलमपनाह ! यह दवा.. [**हिचकती है।**]

आलम० : **(तीव्र स्वर मे)** जीनत ! हम अब भी हिन्दुस्तान के बादशाह है। हमारे हुक्म की शमशीर अब भी तेज है। फेको, वह दवा !

[**जीनत खिडकी की राह से वह दवा फेक देती है।**]

आलम० **(सन्तोष से)** हम खुश हुए। **(ठहरकर)** सोचो, जो दवा हकीम ने नही चखी, वह दवा हमारे काम की नही है। अहमदनगर का हकीम आगरा और दिल्ली का हकीम नही है।

जीनत० तो, जहाँपनाह, वह दवा मै चख लेती।

आलम० · जीनत, जिन्दगी-भर हमने अपने ही मकान मे आग लगायी है। मरते वक्त अपनी बेटी को भी मौत का जाम चखने देते...? क्या हम हकीम को दवा चखने का हुक्म नही दे सकते थे ? लेकिन अब दवा पर हमारा भरोसा नही है, जीनत, दुआ पर भरोसा है। हमारे लिए दुआ करो !...हमारे लिए दुआ करो...!

जीनत० : **(हाथ बाँधकर ऊपर देखती हुई)** जहाँपनाह सलामत रहे ! जहाँपनाह सलामत रहे ! आ . मी...न...[**आँखें बन्द कर लेती है।**]

[**करीम का प्रवेश**]

करीम : **(सलाम करके)** शहजादी, कातिब हाजिर है।

आलम० **(चौककर खुशी के स्वर में)** क्या कातिब आ गया ? आ गया ? इसी वक्त उसे हमारे रूबरू हाजिर करो। हमारे पास ज्यादा वक्त नही है।

करीम : **(सलाम कर)** जो हुक्म ! [**शीघ्रता से प्रस्थान**]

आलम० **(सन्तोष की साँस लेकर)** कातिब आ गया, बेटी ! काश, यह हमारी सारी जिन्दगी की दास्तान बडे हरफो मे दर्ज करता ! हमारे बेटो के लिए यह बहुत

वडी नसीहत होती। आलमगीर के आखिरी वक्त मे सच्ची जिन्दगी पैदा होती। (तसबीह फेरकर कलमा पढते हैं) ला इलाह इल-लिल्लाह मुहम्मदुर रसूलिल्लाह...

जीनत० : (आँखो मे आँसू भर) अव्वाजान! [उसका गला रुँध जाता है।]

आलम० : रोओ मत, वेटी! हम खुश हैं कि तुम हमारे पास हो। आखिरी वक्त मे अपनी वेटी की आवाज से हमारी कब्र मे फूल विछ जायेगे, उसके आँसुओ के कतरो से हमारे गुनाह धुल जायेगे। हमारी वेटी जीनत! [उसका हाथ अपने हाथ मे लेते हैं।]

[कातिव का प्रवेश। ढीला-ढाला इवा (चोगा), कमर में कमरवन्द, सिर पर साफा, सफेद पैजामा, कामदार जूता। वह आकर शाही सलाम करता है।]

आलम० : (शीघ्रता से) कातिव! तुम आ गये। हम अपने वेटो को खत लिखाना चाहते है। जल्द लिखो। हमारे पास वक्त वहुत थोडा है। लिखना शुरू करो।

[आलमगीर आँखें वन्द कर लेते हैं।]

कातिव (सिर झुकाकर) जो इरशाद!

[कातिव वैठकर लिखने की मुद्रा धारण करता है। कुछ देर तक स्तब्धता रहती है। फिर आलमगीर मन्द किन्तु व्यथित स्वरों में वोलते हैं। कातिव लिखता जा रहा है।]

आलम० (धीरे-धीरे) सलाम अलेकुम आजम, हमारे वेटे, हम जा रहे है.! हम जिन्दगी मे अपने साथ कुछ नही लाये, लेकिन अपने साथ गुनाहो का कारवाँ लिए जा रहे है। तुम उखूवत, अम्न व ऐतमाद पर खयाल रखना..। यह माले दुनिया हेच है। हमारी आँखो ने खुदा का नूर नही देखा...जिस्म से गरमी निकल गयी है, अव कोयलो का ढेर वाकी है! हाथ-पैर सूखे दरख्त की शाखो की तरह सख्त हो रहे हे और कलेजे पर मायूसी की चट्टान रखी हुई है खुदा से दूर हूँ और दिल मे कोई सुकून नही है हमारे लिए कौन-सी सजा होगी... यह सोचा भी नही जा सकता खुदा की रहमत पर हमारा पूरा यकीन है, लेकिन हम अपने गुनाहो का वोझ कहाँ ले जाये? अव हमने समन्दर मे अपनी किश्ती डाल दी है खुदा हाफिज!

जीनत० (आँखो में आँसू भरे हुए) अव्वाजान!

आलम० (आँख वन्द किये हुए) कामवख्श, हमारे वेटे

जीनत० (कातिव की ओर इशारा करके) लिखो। [कातिव लिखता है।]

आलम० हम अकेले जा रहे हैं.. तुम वेसहारे हो, इसका हमे मलाल है..! लेकिन इससे क्या फायदा..? जो सजाएँ हमने दी है. जो गुनाह हमने किए है. .जो वेइन्साफियाँ हमने की है.. इन सबका अजाव हम अपने आगोश मे लिए है... हम तुम्हे खुदा पर छोडते है। अपनी माँ उदयपुरी को तकलीफ मत देना...! मैं

रुखसत होता हूँ...अलविदा...! [थोड़ी देर तक स्तब्धता रहती है ।]

जीनत० : (करुण स्वर में) अब्बाजान ! आप ऐसा खत क्यो लिखा रहे है ?

आलम० : (जीनत की बात पर कुछ ध्यान न देकर) ज़ीनत ! मेरी बेटी ! इस ज़िन्दगी के चिराग मे अब तेल बाकी नहीं रहा...! इस खाक के पुतले को कफन और ताबूत की जेबाइश की जरूरत नही. ! इस बदनसीब को ज़मीन मे यो ही दफ्न कर देना...इस मुश्तेखाक को पहली ही मजिल पर सिपुर्द-खाक कर दिया जाये...हमे खुशी होगी अगर हमारी कब्र पर कुदरती सब्ज मखमल की चादर बिछी होगी...(कुछ देर ठहरकर) ऑं जहानी हमारे गुनाहो को बख्श दीजिए...! दारा...! शुजा...! मुराद...!

[इसी समय बाहर 'अल्लाहो अकबर' की ध्वनि में अज़ान होती है । आलमगीर ध्यान से सुनते हैं । उनके ओठो मे कुछ स्पन्दन होता है, फिर एक झटके के साथ सिर उठाकर अज़ान आने की दिशा मे नेपथ्य की ओर देखते हैं ।]

आलम० (तसबीह फेरते हुए नेपथ्य की ओर देखकर रुकते किन्तु स्पष्ट स्वरों मे) अल्ला...हो ..अक...

['अकबर' का अन्तिम अंश 'बर' ओठो ही में रह जाता है और तकिये पर आलमगीर का सिर झटके से गिर पड़ता है ।]

जीनत० : (शीघ्रता से आलमगीर के सिर के समीप जाकर रुँधे हुए कण्ठ से) आलमपनाह ! अब्बा...जान...!

[कोई जवाब नही मिलता । बाहर अज़ान होती रहती है । ज़ीनत अपने आँचल से आँसू पोछती हुई आलमगीर का मुँह सिरहाने पड़े हुए रेशमी कपड़े से ढाँप देती है । कातिब घुटने टेककर दोनो हथेलियाँ जोड़कर मन-ही-मन कुछ पढ़ने लगता है ।]

[परदा गिरता है ।]

22 .

पानीपत की हार

•

पात्र-परिचय

बालाजी बाजीराव—पेशवा
जनकोजी भोसले—सेनापति
भास्कर राव—नायक
स्त्री—पाडुरग नैंने की माँ
क़ासिद—पानीपत के साहूकार द्वारा भेजा गया
नाना फड़नवीस—राज्य के आय-व्यय लेखक—सदेश-वाहक
राजगुरु—पेशवा-वश के कुलगुरु
द्वारपाल

•

काल—20 जनवरी, 1761 ई०
समय—सध्याकाल
स्थान—ताप्ती नदी के समीप बुरहानपुर

पानीपत की हार

[बुरहानपुर में बालाजी बाजीराव का शिविर। पानीपत के भीषण युद्ध की आशंका में वे पूना से चलकर ताप्ती के किनारे बुरहानपुर तक आ गये हैं। एक ऊँचा और विस्तृत तम्बू है, जिसमे रेशम और सोने के तारो की झालरें लगी हैं। रंग-बिरंगे परदे। फर्श पर रेशमी बिछावन जिन पर सोने का काम किया गया है।

मध्य में एक ऊँचा सिंहासन है। उससे हटकर छोटे-छोटे आसन हैं किन्तु इस समय जनकोजी भोसले और भास्कर राव अपने आसनो के समीप खड़े हुए हैं। बालाजी बाजीराव अशान्त होकर टहल रहे हैं।

चारों ओर एक निस्तब्धता छाई है। पश्चिम के सूर्य की हलकी सुनहरी किरणें बाईं ओर से शिविर मे प्रवेश कर रही हैं। बालाजी बाजीराव एक क्षण ठहरकर जनकोजी भोसले को संबोधित करते हैं।]

बालाजी . (अशान्ति से टहलते हुए एक क्षण रुककर) राज्यश्री का अपमान ! क्या यह सत्य नही है कि सदाशिव राव भाऊ ने दिल्ली मे राज्यश्री का अपमान किया ?

जनकोजी : समाचार तो यही है, श्रीमन्त !

बालाजी · जैसे कोई पागल दर्पण मे अपना मुख देखकर उस दर्पण को चूर-चूर कर दे, कोई मतवाला हाथी अपने ही महावत को पैरो से कुचल दे, कोई मूर्ख सुगन्धि फैलाने के लिए फूलो की माला हाथो मे मसल दे, यह किस बुद्धि का वैभव है ? कल के समाचार का एक-एक शब्द एक भटकी हुई चिनगारी है जिससे महाराष्ट्र के वैभव मे आग लग सकती है।

भास्कर शान्त हो, श्रीमन्त ! आपकी राजनीति का सागर किसी भी अग्नि को बुझा सकता है।

बालाजी : भास्कर ! वास्तविकता समझो—यह बलिपशु का सतोष है जिसके भविष्य मे एक नगी तलवार है। सदाशिव राव भाऊ ने दिल्ली पर विजय प्राप्त की। राजधानी मे प्रवेश करते ही उनकी धन की तृष्णा इतनी बढ गयी कि उन्होने राजसिंहासन के स्वर्ण शृंगार को गलवा डाला। चाँदी की छत उखाडकर

उसके सिक्के ढलवा डाले। मेरे राजकोष से वे दो करोड सिक्के ले गये थे। वे सब क्या हुए ?

जनकोजी · यह भी समाचार है, श्रीमन्त, कि उन्होने राजस्थान के नरेशो से तीन करोड सिक्के और भी प्राप्त कर लिए थे।

बालाजी इतनी धनराशि के होते हुए फिर राजसिंहासन की मर्यादा नष्ट करने की क्या आवश्यकता थी ? जनकोजी ! क्या तुम नही देखते कि दिल्ली की राजलक्ष्मी नेत्रो मे आँसू भरकर हमारे सामने खडी है—वह सिसकते हुए शब्दो से कह रही है कि मैं महाराष्ट्र के हाथो मे नही, उन लुटेरो के हाथो मे पड गयी हूँ जो राजमर्यादा नही जानते। जिस सिंहासन पर महाराष्ट्र का साहसी सैनिक हमारा बेटा विश्वास राव बैठता उसका सोना उखाड लिया जाय, राजभवन की रुपहली छत तोड दी जाय, यह कौन-सी राजमर्यादा है ? राजधानी की राजलक्ष्मी की यह वाणी क्या सत्य नही है ?

जनकोजी सत्य है, श्रीमान् !

बालाजी . तो फिर महाराष्ट्र को इसका क्या प्रायश्चित भोगना होगा ? भगवान गजानन से पूछो। उदगेर के युद्ध मे सदाशिव राव भाऊ ने निज़ाम अली को पराजित कर दौलताबाद, असीरगढ और बीजापुर के दुर्ग लिए और 62 लाख की वार्षिक आय प्राप्त की। इसी विजय का यह अहकार है, जिससे भाऊ उत्तर भारत की राजनीति को खिलौने की भाँति तोड रहा है और महाराष्ट्र की मर्यादा कलकित हो रही है।

जनकोजी : श्रीमन्त ! मुझे आज्ञा दे कि मैं अपनी सेना लेकर उत्तर भारत की ओर बढ़ूं। श्रीमन्त भाऊ के अमर्यादित कार्य से भरतपुर के महाराज सूरजमल अपनी तीस हजार सेना लेकर भरतपुर लौट गये और इन्दौर के होल्कर तटस्थ हो गये।

बालाजी . और भाऊ ने उन्हे रोकने का प्रयत्न नही किया ?

भास्कर श्रीमन्त ! भाऊ ने ही तो दोनो का अपमान किया। जब हमारी सेना राजसी वैभव के साथ—बडे-बडे तोपखानो, खेमो और सैनिको की स्त्रियो और बच्चो के साथ धीरे-धीरे आगे बढ रही थी तो महाराज सूरजमल और महाराज होल्कर ने श्रीमन्त भाऊ को सलाह दी थी कि सैनिको के परिवारो और भारी खेमो को ग्वालियर या झाँसी मे छोड दिए जावे और हलके सामान के साथ सेना फुर्ती से आगे बढे, तब श्रीमन्त भाऊ ने दोनो नरेशो का अपमान कर दिया।

बालाजी . अपमान कर दिया ? किस भाँति ?

भास्कर : श्रीमन्त, भाऊ ने होल्कर नरेश से कहा कि तुम्हारे पूर्वज बकरी भेड चराते रहे है तो यह सेना गडरियो की नही है जो बनजारो की भाँति चले। भरतपुर नरेश से कहा कि तुम जाट हो। जाटो मे इतनी बुद्धि कहाँ कि वे राजनीति और वैभव की बात समझ सके। यह बात सुनकर दोनो ही रुष्ट हो गये।

भरतपुर नरेश तो रणक्षेत्र से अपनी सेनाएँ भी हटा ले गये।

बालाजी घोर अदूरदर्शिता। यह सब ऐसे अवसर पर हुआ जब हम पानीपत की युद्धभूमि पर अहमदशाह अब्दाली की शक्ति को सदैव के लिए आगे बढ रहे है। सदाशिव राव भाऊ से मुझे पहले से ही आशका थी किन्तु उनका अहकार इस सीमा तक बढ जायगा इसकी कल्पना नही थी। नाना फडनवीस को भी साथ ले गये है, कही उस बेचारे ब्राह्मणपुत्र पर भी सकट न आ जाय।

भास्कर एक बात पर और भी विचार करे, श्रीमन्त ! दिल्ली जीतने पर श्रीमन्त भाऊ ने दिल्ली के शाह आलमगीर को हटाकर महाराष्ट्र के चिरजीव विश्वास राव को दिल्ली का सम्राट् घोषित कर दिया। चिरजीव तो सम्राट् होते ही किन्तु इतने शीघ्र घोषणा करना ठीक नही हुआ। इस घोषणा से अवध के नवाब शुजाउद्दौला और दूसरे मुसलमान सरदार जो हमारे सहायक रहे है, वे सब मन-ही-मन असतुष्ट हो गये है। इस समय तो हमे मुसलमानो की सहानुभूति भी चाहिए।

जनकोजी किन्तु, भास्कर राव ! अधिक चिन्ता की बात नही है। श्रीमन्त भाऊ के साथ बीस हजार सवार, दस हजार पैदल और इब्राहीम गारदी का तोपखाना भी है। सिंधिया की फौजे भी हैं।

बालाजी · किन्तु साथ मे अहकार और अदूरदर्शिता भी तो है। यह महाराष्ट्र का स्वभाव नही है, जनकोजी ! छत्रपति शिवाजी ने भी आलमगीर औरगज़ेब से लोहा लिया। बडी से बडी फौज़ो के मुकाबले मे उन्होने जैसी दूरदर्शिता दिखलायी, वैसी इतिहास मे कहाँ है ? अफजल खाँ जैसे चालाक और कूटनीतिज्ञ सरदार को एक क्षण मे समाप्त कर देना छत्रपति का ही काम था। औरगज़ेब के चक्रव्यूह से निकल आना इतिहास की अद्वितीय घटना है। लेकिन भाऊ सदाशिव राव छत्रपति शिवाजी का उदाहरण नही समझ सके।

जनकोजी : अधिक चिन्ता न करे, श्रीमन्त ! पानीपत के युद्ध मे हमारी ही विजय होगी। त्र्यम्बक सदाशिव पुरन्दरे हमारी सेना के बडे कुशल सेनापति है। साथ विट्ठल शिविदेव, नरूशकर, शमशेर बहादुर, बलवन्त गजानन मेहन्दले एक-से-एक चुने हुए वीर सेना के साथ है। महाराष्ट्र की शक्ति बडे-से-बडे अहकार से नष्ट नही हो सकती। फिर साथ मे श्रीमन्त के चिरजीव विश्वास राव भी है। यद्यपि वे केवल उन्नीस वर्ष के है किन्तु उनके सामने बडे-से-बडे वीर के भी पैर उखड जाते है।

भास्कर . वे तो मेरे बचपन के साथी रहे है, श्रीमन्त ! उनकी वीरता तो ऐसी है कि वे एक साथ दस सैनिको से लड सकते हैं।

बालाजी · **(गहरी साँस लेकर)** विश्वास राव—महाराष्ट्र के आदर्शों की रक्षा करने मे समर्थ। इसी विश्वास से उसका नाम राजगुरु ने विश्वास राव रखा। भाऊ सदाशिव राव चाहते थे कि पानीपत के युद्ध मे उसे न भेजा जाय। वह बालक

है । किन्तु मैंने ही उसे जाने का आदेश दिया । मैंने कहा कि महाराष्ट्र के बालक युद्धभूमि मे ही बडे होते है । उनकी तलवार रणक्षेत्र मे ही भवानी के कृपाण से शक्ति प्राप्त करती है । उनका रक्त तभी सार्थक होता है जब वह अपने रग से रणभूमि का अभिषेक करे ।

जनकोजी · वे तो, श्रीमन्त, शत्रुओ के रक्त से रणभूमि का अभिषेक करेगे । फिर आपके आदेश से राजस्थान के सभी नरेश श्रीमन्त भाऊ की सहायता कर रहे है । जैसे ही श्रीमन्त भाऊ चम्बल पार कर आगे बढे कि जनकोजी सिन्धिया दामाजी गायकवाड, जसवन्त राव पोवार, अप्पाजी आठावले, अन्ताजी मनकेश्वर और गोविन्दराव बुनेले अपनी-अपनी सेना लेकर उनसे मिले है । हमारी सैन्य-शक्ति अपार है, श्रीमन्त !

बालाजी यह पानीपत का युद्ध है, जनकोजी ! इसी मे महाराष्ट्र के भाग्य का निर्णय है । अफगानिस्तान का अहमदशाह अब्दाली महाराष्ट्र का उत्कर्ष सहन नही कर सकता । इसीलिए वह अवसर देखकर आता है । और मै कहता हूँ कि शत्रु को अवसर देना ही राजनीति की सबसे बडी भूल है । तुम जानते हो, जनकोजी, शत्रु के आने का अवसर क्या है ? अवसर है हमारी परस्पर की फूट । जब हम छोटी-छोटी बातो पर राष्ट्र की इकाई भूल जाते हैं, तब हम जगली जानवरो की तरह अपनी-अपनी माँदे अलग बनाते है और व्याघ्र हमे एक-एक कर समाप्त कर देता है ।

जनकोजी · सत्य है, श्रीमन्त !

बालाजी सदाशिव राव भाऊ यही भूल करते हैं । उन्होने अपनी ही पक्ति मे फूट कर दी और अहमदशाह अब्दाली व्याघ्र की तरह महाराष्ट्र पर टूटना चाहता है ।

भास्कर · मुझे विश्वास है, वह घेर कर मारा जायगा, श्रीमन्त !

बालाजी युद्ध और वर्षा के बादलो पर विश्वास कैसा ? आग और पानी कब किस ओर बरस जाय कौन जानता है, भास्कर ! यद्यपि हमारी सैन्य-शक्ति महान् है, किन्तु हृदय मे अनेक प्रकार की शकाएँ सर्प की भाँति चल रही हैं । पानीपत का नाम एक फूत्कार की भाँति हृदय मे गूंज रहा है । आज भगवान् गजानन की आरती दो बार बुझी । कही महाराष्ट्र की आरती के दो दीप न बुझ गये हो ?

जनकोजी शत्रुओ के दो वीर मारे गये होगे, श्रीमन्त ! आप आज्ञा दे तो दस हजार सैनिक लेकर मैं भी पानीपत की ओर प्रस्थान कर दूं ।

बालाजी . तुम नही, मैं जाऊँगा, जनकोजी ! समाचार जानने की उत्सुकता मे पूना से यहाँ बुरहानपुर तक आ ही गया हूँ, नर्मदा पाट कर शीघ्र ही दिल्ली पहुँचना चाहता हूँ । नाना फडनवीस मे भी मेरा मन लगा हुआ है । उसका न जाने क्या हाल होगा । उसके प्राणो का दायित्व भी हम पर है ।

भास्कर आपका स्वास्थ्य ठीक नही है, श्रीमन्त ! जनकोजी को ही जाने की अनुमति प्रदान करे । वे वहाँ से शीघ्र ही विजय का समाचार लावेंगे ।

बालाजी **(सोचते हुए)** विजय...विजय...राज्यश्री के अपमान पर विजय...पक्ति मे फूट होने पर भी विजय...

[बाहर किसी के क्रन्दन की ध्वनि। सिसकियाँ क्रमश अधिक जोर से सुनाई पड़ती है।]

बालाजी : (चौंककर) यह कैसा क्रन्दन ? **(भास्कर राव से)** भास्कर राव बाहर जा के देखो !

भास्कर **(सिर झुकाकर)** जैसी आज्ञा, श्रीमन्त ! **[शीघ्रता से प्रस्थान]**

बालाजी आज प्रात काल जब भगवान् गजानन की आरती हवा के तीव्र झोके से बुझ गई तभी शका का विष मेरे हृदय मे फैलने लगा था कि पानीपत से आया हुआ समाचार भी कही मेरी आशा की आरती न बुझा दे। **(सिसकियाँ तीव्रता से सुनाई देती हैं)** यह कौन स्त्री है ?

[शिविर के बाहरी दरवाजे से एक स्त्री शीघ्रता से भास्कर राव के साथ आती है। वह विह्वलता मे बालाजी बाजीराव के चरण पकड़ लेती है।]

स्त्री : (सिसकियाँ लेते हुए) पाडुरग . पाडुरग चला गया, श्रीमन्त ! युद्ध मे युद्ध मे मारा गया...मेरा पाडुरग. **(सिसकियाँ लेकर)** मेरा अकेला लाल पाडुरग... मुझे छोडकर.. चला गया। **[सिसकियाँ जोर-जोर से लेती है।]**

बालाजी · (सन्तोष के स्वरो में) पाडुरग चला गया ? मातृभूमि पर रक्त की बूँदे भी चढती है, देवि ! आँसू की बूँदे नही। उठो ! **(भास्कर से)** भास्कर ! यह कौन स्त्री है ?

भास्कर : सेनानायक पाडुरग सदाशिव नैने की माँ है। श्रीमन्त ! यह अभी पानीपत के गाँव से आयी है।

बालाजी तो पाडुरग की मृत्यु हुई ! कोई बात नही, देवि ! महाराष्ट्र मे हजारो माँओ ने अपने पुत्रो की बलि दी है। यदि उनके नेत्रो से अश्रु-धारा बहती तो महाराष्ट्र मे प्रलय की बाढ आ- जाती। नही, नही, उनके अश्रु पानी बनकर नही बहे। उनके अश्रु प्रतिशोध के स्फुलिंग बन गये। तभी तो महाराष्ट्र मे इतना प्रकाश है, इतनी उष्णता है। तुम भी अपने आँसुओ को सचित रखो। दुर्दिन मे महाराष्ट्र के काम आवेगे। **(स्त्री बालाजी राव के पैर छोड़कर उठती है। उसकी सिसकियाँ बन्द होती हैं)** आज महाराष्ट्र धैर्य की कसौटी पर कसा जा रहा है। सही सूचना जान-बूझकर छिपायी जा रही है। और महाराष्ट्र की तीखी तलवार म्यान से निकली है। बोलो, देवि ! पानीपत के युद्ध मे सैनिको की विजय कब तक निश्चित हो जायगी। तुम तो पानीपत से ही आ रही हो।

स्त्री **(सँभलकर)** समाचार अच्छे नही है, श्रीमन्त ! हमारी सेना का कार्यक्रम निश्चित ढग से नही चलता। जब आक्रमण का अवसर नही था, तभी श्रीमन्त भाऊ ने आक्रमण करने की आज्ञा दी और उसी मे हमारी सेना के चार हजार व्यक्ति कट गये। उन्ही मे आपका पाडुरग भी था, सेना मे सबसे आगे। उसकी तलवार की

गति जैसे भवानी की तलवार की गति थी। 'हर-हर महादेव' कहकर शत्रु पर बाज की तरह टूटा। जब शत्रु उसकी तलवार के सामने आते थे तो गाजर-मूली की तरह कट जाते थे। कितनो का उसने रक्त बहाया। लेकिन उसका भी रक्त बहा, वीर सैनिक शत्रुओ का रक्त बहाकर जीवित भी तो लौटते है। मेरा पाडुरग जीवित नही लौट सका। मुझसे कहता था, श्रीमन्त, कि मै तुम्हे लेकर श्रीमन्त को विजय की सूचना दूँगा। आज मै ही उसकी मृत्यु की सूचना लेकर आई हूँ। **(सिसकियाँ)** मैं उसके बिना जीवित नही रहूँगी, श्रीमन्त !

बालाजी धैर्य रखो, देवि ! तुम मेरे दु ख का अनुमान क्यो नही करती, तुम्हारा तो केवल एक ही पुत्र रणभूमि की बलि हुआ है, मेरे चार हजार पुत्र मारे गये। विश्वास राव कहाँ है ? वह भी तो सेना के सामने युद्ध करता है ?

स्त्री श्रीमन्त ! विश्वास राव जी के सम्बन्ध मे मै कुछ नही जानती। मैं तो पहले ही युद्ध मे अपने पुत्र को खोकर चली आई हूँ। **[हलकी सिसकी]**

बालाजी विश्वास राव भी रणकुशल है। उसने हजारो शत्रुओ को मारा होगा ? वह हाथी पर सवार होकर युद्ध करना अच्छी तरह जानता है। उसने तो हाथी पर से ही युद्ध किया होगा ?

स्त्री : मै नही जानती, श्रीमन्त !

बालाजी तुम नही जानती किन्तु सेना का प्रत्येक वीर उसे जानता है। जब दोनो हाथो से वह तलवार चलाता है तो ज्ञात होता है जैसे एक ही तलवार दस तलवारें बन गई है। अच्छा होता यदि पाडुरग उसके साथ ही रहता। वह कवच की भाँति पाडुरग की रक्षा करता।

स्त्री . मेरे पाडुरग का ऐसा भाग्य कहाँ था, श्रीमन्त ! वह वीरता से लडा और रण-भूमि मे सो गया।

बालाजी वह रणभूमि मे नही, युद्ध की शैय्या पर सोया है। पुत्र की कीर्ति ही माता के हृदय को सतोप दे सकती है। विपत्ति से विवाद नही किया जा सकता, देवि ! यदि शोक को उत्तर देना है तो साहस का कवच धारण करो। तूफान और काली घटाओ मे इन्द्रधनुष बनो। तुम्हारे पुत्र का बलिदान तो ऐसा है कि मृत्यु की भी आँखो मे आँसू आ जायँ, किन्तु तुम हँसो इसलिए कि तुम माता हो। तुमने ऐसे पुत्र को जन्म देकर अपना मातृत्व अमर कर दिया है।

स्त्री · श्रीमन्त के वचनो से मुझे जीवन-दान मिला है, नही तो पुत्र के बिना मैं जीवित नही रह सकती थी।

बालाजी · तुम्हारा पुत्र तो जीवित है, देवि ! महाराष्ट्र के कण-कण मे जीवित है। पहले वह सीमित था, अब असीम हो गया। प्रभु ने सबसे सुन्दर देह फूल की बनायी। किन्तु उन देहो मे वह प्राण की प्रतिष्ठा करना भूल गया। तुम्हारे पुत्र ने उन देहो मे प्राण की प्रतिष्ठा की है और आज प्रत्येक फूल रक्त को मुस्कान मे बदल कर आशा और उल्लास का सदेश दे रहा है।

स्त्री : मैं धन्य हुई, श्रीमन्त !

बालाजी : कोई भी विपत्ति लम्बी नही है, देवि ! यदि तुम उसे देश-प्रेम और राष्ट्रीयता से नापो। सूर्य की भाँति परिस्थितियो के उज्ज्वल पक्ष को ही देखो। (भास्कर राव से) भास्कर राव ! वीर जननी के विश्राम की व्यवस्था राजकीय शिविर मे हो !

भास्कर : जो आज्ञा, श्रीमन्त !

बालाजी : (स्त्री से) जाओ, देवि ! विश्राम करो !

स्त्री : श्रीमन्त इसी प्रकार दीन-दुखिया की चिन्ता करे ! [प्रणाम करती है।]

[भास्कर के साथ स्त्री का प्रस्थान]

बालाजी : जनकोजी ! जननी का हृदय देखा। सृष्टि की किसी भी वस्तु से महान् पाडुरग ने मातृभूमि पर जीवन निछावर किया। और माता ऐसे पुत्र पर ही जीवन निछावर करना चाहती है।

जनकोजी : श्रीमन्त ! मुझे तो कुछ बोलने का साहस ही नही हुआ। जितना उसके करुण-क्रन्दन से हृदय द्रवित हो रहा था, उतना ही आपके उत्साहमय वाक्यो के प्रवाह से उमग और उत्साह की किरणे फूट रही थी। श्रीमन्त ही उसे धैर्य दे सकते थे, अन्यथा वह अपना जीवन तो समाप्त ही करने जा रही थी। मैं अवाक् होकर निराशा और आशा के द्वन्द्व को देखता ही रहा। अन्त मे आपका आशा का सन्देश ही विजयी हुआ।

बालाजी : जनकोजी ! माता अपने पाडुरग की ममता मे इतनी अधिक लीन हो गई कि वह यह नही सोच सकी कि महाराष्ट्र के जो चार हजार वीर कट गये हैं उनकी माताएँ भी तो उसी की भाँति दुखी होगी। फिर हमारा विश्वास राव भी तो युद्ध मे गया है। और पाडुरग की भाँति वह भी सेना के आगे युद्ध करता है। वह महाराष्ट्र की नीव मे शत्रुओ का रक्त भर रहा है जिससे नीव और भी सुदृढ हो जाय।

जनकोजी : सचमुच, श्रीमन्त ! महाराष्ट्र की नीव की सुदृढता श्रीमन्त विश्वास राव की वीरता की तलवार के सहारे है। फिर यह तो भवानी की इच्छा है कि वे किसे रणभूमि मे अमरत्व का वरदान देती है। राज्य तो बनते-बिगडते रहते हैं।

[द्वारपाल का प्रवेश]

द्वारपाल : श्रीमन्त की जय !

बालाजी : आज्ञा है।

द्वारपाल : श्रीमन्त ! पानीपत के साहूकार ने जो कासिद भेजा है, वह द्वार पर उपस्थित है।

बालाजी : शीघ्र ही उसे भेजो ! बहुत दिनो से उसकी प्रतीक्षा थी।

द्वारपाल : जो आज्ञा। [प्रस्थान]

बालाजी : पानीपत के साहूकार से सच्ची सूचनाएँ मिल सकेंगी। हम आज भी

पानीपत के युद्ध का परिणाम नही जान सके है।

जनकोजी श्रीमन्त ! पानीपत का साहूकार आपका सेवक है। उसने प्रत्येक महत्व-पूर्ण घटना के समाचार भेजने का वचन दिया था। अवश्य महाराष्ट्र की विजय की सूचना होगी।

[**कासिद का प्रवेश**]

क़ासिद : (**हाथ जोड़कर**) श्रीमन्त की जय !

बालाजी स्वस्ति ! तुम पानीपत से आये हो, कासिद ?

कासिद : हाँ, श्रीमन्त !

बालाजी साहूकार जी सानन्द है ?

कासिद · सानन्द नही है, श्रीमन्त ! बहुत चिन्तित है।

बालाजी : हम भी बहुत चिन्तित है। पानीपत के युद्ध मे महाराष्ट्र के भाग्य का क्या निर्णय हुआ ? भाऊ विश्वास राव और नाना फडनवीस तो कुशल से है ?

कासिद · यह पत्र भेजा है उन्होने, श्रीमन्त ! [**पत्र आगे बढाता है।**]

बालाजी : जनकोजी ! पत्र पढो।

जनकोजी जो आज्ञा। (**कासिद के हाथ से पत्र लेकर पढ़ते हुए**) राजमान राजे श्री पत प्रधान पेशवा बालाजी बाजीराव की सेवा मे साहूकार केशव का दण्ड-प्रणाम स्वीकार हो। आगे समाचार ये है कि पानीपत के युद्ध की ज्वाला मे हमारे दो मोती घुल गये।

बालाजी (**चीखकर बीच ही में**) जनकोजी !

जनकोजी . श्रीमन्त ! सभवत पत्र के अत मे कोई सतोषप्रद समाचार हो। पूरा सुनने की कृपा करे। (**पुन. पढते हुए**) हमारे दो मोती घुल गये, सत्ताईस मोहरे खो गयी और चादी और ताबे के खोए हुए सिक्को की गणना भी नही की जा सकती। सामन्तो के साथ न देने के कारण पानीपत की लडाई मे हार......

बालाजी : (**बीच ही मे**) पानीपत की लडाई मे हार ? (**करुण स्वर**) पानीपत की लडाई मे...हार. .

जनकोजी श्रीमन्त अपने को सँभाले . ।

बालाजी : जनकोजी ! यह क्या हो गया ? पानीपत के युद्ध मे इतनी अधिक सेना के होते हुए हार ? यह असम्भव है, यह समाचार झूठ है।

कासिद · श्रीमन्त ! क्षमा करे। पानीपत की हार मैने इन्ही आँखो से देखी है। भगवान की कृपा होती अगर मेरी आँखो की ज्योति उसी समय नष्ट हो जाती। हजारो महाराष्ट्र वीर अफगानियो और पठानो की तलवारो से कट गये। उनके रक्त की धार से सारा पानीपत लाल हो गया।

बालाजी पानीपत लाल हो गया ? कासिद ! क्या अहमदशाह अब्दाली की तलवार इतनी तेज़ थी ? ओह ! (**सिर पकड़कर**) यह क्या हो गया ?

कासिद श्रीमन्त ! अहमदशाह अब्दाली के पैर तो उखड चुके थे। उसकी सेना

भाग रही थी। उसी समय श्रीमन्त होल्कर की फौज ने मैदान छोड दिया। उनके सिपाही जान-बूझ कर पीछे हटते हुए रणक्षेत्र से भाग उठे। तभी अहमदशाह अब्दाली की फौज आगे बढी और उसकी हार जीत मे बदल गयी।

बालाजी · (**विह्वलता मे**) तो. तो होल्कर ही इस हार का उत्तरदायी है ? भाऊ ने उसकी बात नही मानी इसीलिए उसने मौके पर धोखा दिया ? भाऊ और विश्वास राव ने कुछ नही किया ?

कासिद : श्रीमन्त ! जैसे ही श्रीमन्त होल्कर की सेना भागी कि श्रीमन्त विश्वास राव ने अपना हाथी शत्रुओ की मार-काट के बीच मे बढा दिया। सैकडो शत्रुओ को हाथी के पैरो के नीचे दबाते हुए उन्होने अपने बाएँ हाथ के भाले से घुडसवारो की छाती छेद दी और दाहिने हाथ की तलवार से शत्रुओ के सिर उडा दिए।

बालाजी : विश्वास राव ! . मैं जानता था कि तुम शत्रुओ से महाराष्ट्र के मरे हुए वीरो का बदला लोगे। हाँ, फिर क्या हुआ ?

क़ासिद : जब श्रीमन्त विश्वास राव इस तरह शत्रुओ के सिर उडा रहे थे उसी समय, श्रीमन्त, उसी समय उनके पेट मे गोली लगी।

बालाजी : (**करुणा से**) गोली !. क्या.. क्या...वे घायल हो गये ?

कासिद . वे हाथी पर ही निढाल होकर बैठ गये। श्रीमन्त ! यह ख़बर फैलते ही श्रीमन्त भाऊ घोडा दौडा कर उनके पास पहुँचे। श्रीमन्त विश्वास राव को आहत देखकर उनकी आँखो से आँसू गिरने लगे। तभी श्रीमन्त विश्वास राव ने कहा, काका ! आँसू बहाने का समय नहीं है। हारते हुए युद्ध को जीत मे बदलिए। एक-एक क्षण रक्त की बून्द बन कर बह रहा है। शत्रु को मारिए...

बालाजी : (**गहरी साँस लेकर**) धन्य हो, विश्वास ! तुम महाराष्ट्र के सच्चे सपूत हो। (**उत्सुकता से**) फिर ?

कासिद श्रीमन्त विश्वास राव की ललकार सुनकर भाऊ शत्रुओ के बीच मे घुस गये। और फिर उनका पता नही चला कि वे कहाँ गये। दोनो ही वीर पानीपत की भेट हो गये।

बालाजी (**करुणा से**) भेट हो गये ? आह ! (**सिर पकड़ लेते हैं**) दो मोती घुल गये—तभी साहूकार ने ऐसा लिखा। भगवान् गजानन ! यह तुमने क्या किया ? ये दोनो रत्न—अपनी ऋद्धि-सिद्धि का कोष इन्ही से भरना था तुम्हे ? हाय, भाऊ ! हाय, विश्वास !

जनकोजी श्रीमन्त ! चलिए, शयनकक्ष मे चलिए। आपका स्वास्थ्य पहले से ही ख़राब है।

बालाजी . (**तीव्रता से**) मेरे सम्बन्ध मे क्यो बात कर रहे हो ? भाऊ और विश्वास के विषय मे बाते करो। दोनो वीर मेरे सिंहासन को अपने रक्त से अभिषिक्त कर चले गये और मैं अस्वस्थ होकर उसी सिहासन पर बैठा हूँ। क्या मैं धिक्कार के योग्य नही हूँ ?

जनकोजी · श्रीमन्त ! आप तो युद्ध मे जाने के लिए प्रस्तुत ही थे। आपकी दुर्बलता देखकर ही श्रीमन्त भाऊ ने आपसे रुक जाने की प्रार्थना की थी।

बालाजी और मै रुक गया, जनकोजी ! मै समर-भूमि मे जाने से रुक गया और वे दोनो चले गये। युद्ध-यात्रा पर जाने से पहिले भाऊ और विश्वास राव मेरे पास आये थे। दोनो वीर वेश मे सजे हुए थे। दोनो ने मेरे चरण स्पर्श किए और जाने की आज्ञा माँगी। मैने भगवान् गजानन के चरणो के फूल उन दोनो के मस्तक पर रखे। उस वीर-वेश मे मेरा विश्वास राव कितना सुन्दर लग रहा था, जैसे स्वामी कार्तिकेय युद्ध के लिए सजे हो। बडी-बडी आँखो मे युद्ध का अनुराग। हँसकर उसने मुझे पिता नही कहा—पन्त प्रधान श्रीमन्त पेशवा कहा और एक सैनिक की भाँति सिर उठाया। मैने देखा, उसके माथे पर टीका नही त्रिपुण्ड है। मैने भी हँसी मे पूछा—सैनिक ! तुम्हारे मस्तक पर त्रिपुण्ड ? उस ने कहा—सेवक को रणक्षेत्र मे रौद्र रूप धारण करना है, इसीलिए मस्तक पर त्रिपुण्ड अकित किया है। मैने कहा—भगवान् शकर तुम्हारी रक्षा करे (**शिथिल स्वर से**) किन्तु रक्षा नही हो सकी।

जनकोजी . यह एकमात्र सयोग की बात है, श्रीमन्त, कि उन्हे गोली लग गई।

बालाजी वह गोली मुझे लगनी चाहिए थी। यदि मैं वहाँ होता तो विश्वास को पीछे कर मै अपने वक्षस्थल पर गोली खाता। लेकिन मै वहाँ नही पहुँच सका। लेकिन इस गोली का पूरा बदला लिया जायगा। (**कासिद से**) कासिद ! चलो पानीपत मेरे साथ। मै अहमदशाह से युद्ध करूँगा। कहूँगा, तुमने मेरे बच्चे के साथ युद्ध कर क्या वीरता दिखलायी ! मुझसे युद्ध करो। मुझसे युद्ध .. [**शब्द गले में उलझ जाते हैं।**]

कासिद धैर्य रखे, श्रीमन्त ! आपका प्रताप तो देश मे चारो ओर फैला है। अहमदशाह पानीपत का युद्ध जीतकर भी पानीपत मे नही है। वह अफगानिस्तान की तरफ चला गया। जीतकर भी जैसे वह हार गया है। श्रीमन्त ! उसकी इतनी हार हुई है कि वह उसे जीत कर भी पूरा नही कर सकता।

बालाजी लेकिन मेरी कितनी हानि हुई है, कासिद, यह कौन जान सकेगा। मैं दुखी हूँ। तुमसे फिर बात करूँगा। तुम जाओ।

क़ासिद : जो आज्ञा। [**प्रस्थान**]

बालाजी पाडुरग नैने की माँ से कहना, जनकोजी, कि मैंने भी अपना प्यारा पुत्र खो दिया है और मेरी आँखो मे आँसू नही है। कहना कि पाडुरंग अकेला नही गया है। उसके साथ मेरा विश्वास राव भी है और साथ मे लक्षाधिक महाराष्ट्र के सैनिक। मेरा सूर्य प्रकाश की अनन्त किरणो के साथ डूबा है। अब अन्धेरी रात है और मैं हूँ।

[**अपना सिर हथेली से टेक लेते हैं। निस्तब्धता। एक क्षण बाद घन्टे की ध्वनि सुनायी पडती है।**]

जनकोजी : श्रीमन्त ! राजगुरु का आगमन हो रहा है ।

बालाजी : नदी की बाढ ने जब किनारो को तोड़ दिया तब शरद ऋतु की निर्मलता आ रही है । जब नेत्रो की ज्योति समाप्त हो गयी तब अंजन की रेखा का क्या उपयोग होगा ?

[राजगुरु का प्रवेश]

राजगुरु · (आते ही) धर्मासाठी मरावे । मरोनि अवध्यासी भारावे । भारिता भारिता ध्यावे । राज्य आपले ।

बालाजी : राजगुरु के चरणो मे बाजीराव का प्रणाम !

जनकोजी चरणो मे जनकोजी का प्रणाम !

राजगुरु . स्वस्ति ! पत प्रधान ! शोक से अपने जीवन को कुरूप मत बनाओ। पानीपत की हार केवल परिस्थितियो की हार है, वीरो की हार नही । और जब वीरो की हार नही तब तुम्हारा निरुत्साह और शोक अनुचित है । यदि तुम्हारे हृदय मे निरुत्साह और शोक आ गये तो मैं समझूँगा कि ये दोनो अहमदशाह अब्दाली के गुप्तचर है जो तुम्हारे हृदय से आरम्भ कर सारे महाराष्ट्र को कत्ल करने आये है । इन गुप्तचरो को दूर करो, नही तो ये तुम्हारे हृदय को ही दूसरा पानीपत बना देगे, जिससे जीत का कोई अकुर नही उग सकेगा ।

बालाजी : राजगुरु ! मेरे हृदय मे जिज्ञासा है कि महाराष्ट्र ने ऐसा कौन-सा पाप किया जिसका परिणाम इतना भयावह हुआ । पानीपत ने हमारा पानी उतार लिया, हमारी पत नष्ट कर दी । भाऊ और विश्वास राव भी चले गये, राजगुरु ! यह किस महापाप का दण्ड है ?

राजगुरु : पत प्रधान ! न यह महापाप है, न महादण्ड । राज्य मे महापाप तो तब होता है जब राजा निरकुश और अत्याचारी हो, जनता की सुख-सुविधा छीन ली जाय, उस पर अनेकानेक कर लगाये जायँ, जब दीन प्रजा को खाने-पीने और रहने की सुविधा न हो । ऐसा तो तुम्हारे राज्य मे नही है । तुम तो प्रजा को अपनी सतान समझते हो । पानीपत की हार महादण्ड भी नही है । महादण्ड तो तब होता जब राज्य आततायियो के हाथ मे चला जाता । जनता की सभ्यता और सस्कृति समाप्त हो जाती । जनता का नैतिक बल और धर्म नष्ट कर दिया जाता । यह तो कुछ भी नही हुआ । केवल सुन्दर रणक्षेत्र मे हमारी थोडी-सी सेना वीरगति को प्राप्त हुई । मै देखता हूँ कि इस थोडी-सी पराजय की प्रतिक्रिया होगी । समस्त महाराष्ट्र फिर से ऐक्य के सूत्र मे बँधेगा और पानीपत का बदला शत्रुओ के प्रचण्ड ऐश्वर्य और वैभव से लिया जायगा । समर्थ स्वामी रामदास ने कहा है—

आहे तितुके जतन करावे । पुटे आणिक मेलवावे ।
महाराष्ट्र राज्यचि करावे । जिकडे तिकडे ।

बालाजी : आपके कथन से शान्ति मिली, राजगुरु !

राजगुरु : आज रात मे भगवान् गजानन की आरती होगी। उसमे पत प्रधान आने का कष्ट करे।

बालाजी : अवश्य उपस्थित होऊँगा। एक बात और बतलाएँ, राजगुरु! पानीपत से कोई सूचना मिली कि नानाफडन वीस कहाँ है? वह युद्ध मे तो नही मारा गया? दुबला-पतला बीमार लडका विश्वास राव की भाँति प्रिय! वह कैसे बचा होगा?

राजगुरु : नाना फडनवीस सुरक्षित है।

बालाजी : (उल्लास से) सुरक्षित है! धन्य, गजानन! धन्य, राजगुरु! वह कहाँ है?

राजगुरु : वह पानीपत से दो घटे पूर्व लौटा। मेरे ही साथ यहाँ आया है। द्वार पर है।

बालाजी : (विह्वलता से) द्वार पर है? जनकोजी! तुम जाकर देखो और उसे शीघ्र ही मेरे पास लाओ।

जनकोजी : जो आज्ञा, श्रीमन्त! [प्रस्थान]

बालाजी : राजगुरु! नाना फडनवीस बच गया! भगवान् गजानन तुमने मेरे नाना को बचा लिया। मुझे तो ऐसा लगता है, राजगुरु, जैसे मेरा विश्वास राव ही आ गया। भाऊ के साथ गया था, काशी और वृन्दावन की तीर्थयात्रा करने, रण-यात्रा भी कर ली उसने।

राजगुरु : अच्छा! अब आप नाना फडनवीस से मिले किन्तु किसी कारण से आप दुखित न हो। मैं चलूँगा, मुझे पूजा के लिए देर हो रही है।

बालाजी : प्रणाम करता हूँ। भगवान् गजानन से प्रार्थना करे कि महाराष्ट्र के भविष्य पर आँच न आने पावे।

राजगुरु : (हाथ उठाकर) स्वस्ति! [प्रस्थान]

[उनके प्रस्थान पर फिर घटा बजता है।]

बालाजी : (सोचते हुए) ओह, नाना! तुम बच गये, नही तो मेरे दुर्भाग्य ने मेरे सभी रत्न मुझ से छीन लिये। तुम्हारा बच कर आ जाना तो वैसा ही है जैसे किसी को उसकी खोई हुई दृष्टि फिर से प्राप्त हो जाय।

[जनकोजी के साथ नाना फडनवीस का प्रवेश]

बालाजी : ओह! नाना तुम आ गये। (उठकर) देखूँ, कही तुम्हे तो कोई घाव नही लगे। नही...नही...तुम स्वस्थ और सकुशल हो।

नाना० : श्रीमत की जय!

बालाजी : नाना! मेरी जय बोलते हो? जय ..जय ..(व्यंग्य की हँसी हँसते हैं) मेरा परिहास न करो, नाना! अहमदशाह अब्दाली की जय बोलो। पानीपत मे उसने मेरी दोनो भुजाएँ काट ली—भाऊ और विश्वास। उनका रक्त देखा था तुमने? कितना लाल था? (जनकोजी से) जनकोजी! तुम अब मुझे अकेला रहने दो नाना के साथ। इस समय मुझे किसी सेनापति की आवश्यकता नही है। तुम जाओ।

जनकोजी · जो आज्ञा, श्रीमन्त ! [प्रस्थान]

बालाजी : अभी राजगुरु आये थे, नाना। उन्होने समर्थ गुरु रामदास की वाणी सुनायी। मैंने उनसे बडी शक्ति पाई। बडी कठिनाई से मैंने अपने आँसू तो रोक लिए किन्तु भाऊ और विश्वास राव के रक्त की बूंदे मेरी आँखो के भीतर ही भीतर बह रही हैं, नाना ! जो किसी के हाथो से नही पोछी जा सकती।

नाना० : श्रीमत ! दोनो वीरो का रक्त इतिहास भी नही पोछ सकता। बहने दीजिए उसे। महाराष्ट्र की फूट की सधियाँ शायद उसी रक्त से भरेगी। मैं लज्जित हूँ कि अपना रक्त बहाने का अवसर न पा सका। श्रीमन्त भाऊ ने शपथ देकर मुझे रणभूमि से लौटा दिया।

बालाजी वे तीर्थयात्री को रण-यात्री कैसे बना सकते थे। भाऊ ने ठीक किया कि मेरे सहारे के लिए उन्होने तुम्हे वापस लौटा दिया। लेकिन तुम बतलाओ, नाना ! जो तुम्हे भाई के समान प्रिय था उस विश्वास राव को खोकर मैंने क्या नही खो दिया ?

नाना० श्रीमन्त ने ऐसे वीर पुत्र के पिता होने का गौरव प्राप्त किया है। इस पानीपत के युद्ध मे हार कर भी महाराष्ट्र ने युद्ध-वीरो को उत्पन्न करने का गौरव घोषित कर दिया है। वह पराजय पाने पर भी विजयी है।

बालाजी : तुम सत्य कहते हो, नाना ! हमारे महाराष्ट्र के वीर यदि विजयी नही हो सके तो शत्रु को मार कर मरने का साहस तो दिखला सके।

नाना० . यदि यही साहस भविष्य मे परस्पर की फूट की जड उखाड सका तो सत्य ही हिन्दू पद पादशाही की राजनीति अखण्ड राजनीति होगी, श्रीमन्त !

बालाजी : किन्तु पानीपत की हार..

नाना० : (बीच ही मे) श्रीमन्त क्षमा करे। मैं बीच ही मे बोल रहा हूँ। पानीपत की हार की बात जल्दी-से-जल्दी भूलने की बात है। हम विपत्तियो के पक्षियो को सिर पर उडने से नही रोक सकते, किन्तु उन्हे राज्य मे घोसले बनाने से रोक सकते हैं।

बालाजी . लेकिन यह कैसे भूला जा सकता है कि आज महाराष्ट्र के दो परम वीर सदाशिव राव भाऊ और विश्वास राव नही हैं।

नाना० श्रीमन्त ! यदि हमारी पूर्व दिशा की खिडकियाँ टूट जायँ तो क्या सूर्योदय का प्रकाश हमे नही मिलेगा ? प्रकाश तो सब तरफ से आने का रास्ता खोजता है। श्रीमन्त ! हम कपडो को उलट कर नही पहिनते लेकिन यदि हम बादलो को उलट कर देखे तो हमे प्रकाश-ही-प्रकाश दिखलायी देगा। इस समय तो धैर्य ही हमारा राज्य है और साहस ही हमारा मुकुट है। हमारा दुःख हमारी वीरता की ही छाया है क्योकि हम प्रकाश मे खडे हैं। छाया का महत्त्व नही है, श्रीमन्त ! प्रकाश का महत्त्व है।

बालाजी . तुम्हारी वाणी से प्रकाश मिलता है, नाना ! यद्यपि तुम मेरे बच्चे के

समान हो किन्तु समस्त जीवन की गतिविधि मे तुम्हारी दृष्टि है। भगवान् गजानन तुम्हे शक्ति दे कि भविष्य मे भी तुम प्रकाश दे सको।

नाना० : श्रीमन्त ! आपका आशीर्वाद अमर रहे। जिस प्रकार आकाश को अपनी नीलिमा पर और धरती को अपनी हरीतिमा पर विश्वास है, उसी प्रकार मानव को अपने साहस पर विश्वास होना चाहिए। हमारे श्रीमत विश्वास राव ने इसी सत्य की घोषणा की है। जब मुझे अपने इस भाई पर इतना गर्व है तो आपको अपने पुत्र पर कितना न गर्व होगा।

बालाजी विश्वास राव के विश्वासी नाना ! आज मैंने तुम्हें अपने पुत्र का महत्त्व दिया।

नाना० मैं कृतार्थ हुआ, श्रीमन्त ! आपके पुत्र को बहुत कडी परीक्षाएँ देनी पडती हैं। महाराष्ट्र मे मै अपनी वही परीक्षा दूँगा। महाराष्ट्र उसका भगवा झडा फिर से लहरायेगा। भगवान् गजानन की कृपा हो। आप महाराष्ट्र के बिखरे वीरो को फिर से एकत्र करे। लोग कहते हैं कि गुलाब चाहे जहाँ उगे, अपने साथ काँटे भी उत्पन्न करता है। मैं कहता हूँ, ठीक है, किन्तु जहाँ काँटा है, वहाँ कुछ समय बाद गुलाब भी होगा।

बालाजी मुझे भी विश्वास है, नाना, कि हमारी हार ही विजय की दुदुभी बनेगी।

नाना० मैं धन्य हूँ, श्रीमन्त, कि आपके शोक ने साहस का रूप ले लिया। साहस तो आप मे है ही, कुछ क्षणो के लिए शोक-समाचार से दब गया था। यह निश्चय माने, श्रीमन्त, कि उत्साह की गति पृथ्वी की सबसे सुन्दर लकीर है और प्रसन्नता की ध्वनि पृथ्वी की सबसे मधुर ध्वनि है।

बालाजी : तुम महाराष्ट्र मे ही नही, सारे भारतवर्ष मे अमर रहोगे, नाना ! चलो मेरे साथ विश्राम-कक्ष मे चलो।

नाना० : चलिए, श्रीमन्त ! आप स्वस्थ हो। मैं पानीपत की हार को जीत मे बदलने का प्रण करता हूँ। महाराष्ट्र का मगलाचरण विजय से आरम्भ हुआ था, उसका भरतवाक्य भी मेरे जीते-जी विजय से समाप्त होगा।

बालाजी तथास्तु ! चलो मेरे साथ।

[प्रस्थान]

· 23 :

⌖ नाना फड़नवीस ⌖

●

पात्र-परिचय

गंगा—कैलासवासी नारायण राव पेशवा की पत्नी (आयु 17 वर्ष)
पार्वती—कैलासवासी सदाशिव राव भाऊ की पत्नी (आयु 26 वर्ष)
महादेव } रघुनाथ राव राघोवा के गुप्तचर (आयु 24 वर्ष)
मामा } (आयु 30 वर्ष)
नाना फड़नवीस—श्रीमती गगाबाई का सरक्षक और पेशवा का आय-व्यय लेखक (आयु 32 वर्ष)
राघोवा—नारायण राव पेशवा का काका और पेशवा पद का अपहर्ता (आयु 45 वर्ष)
हरिपन्त—कैलासवासी माधव राव पेशवा का कारकुन (आयु 30 वर्ष)
सौदामिनी—प्रतिहारी (आयु 18 वर्ष)
सैनिक आदि
नेपथ्य मे जय-जयकार बोलने वाले व्यक्ति

●

काल—27 सितम्बर, 1773 ई०
समय—सध्या, 5 बजे
स्थान—पुरन्दर-स्थित नाना फडनवीस का प्रासाद

नाना फड़नवीस

[वर्षाकालीन संध्या का सूर्य अधिक अरुण होकर इस प्रासाद की खिड़की से अपनी स्वर्ण-रश्मियो का स्वप्न-जाल कक्ष में बिछा रहा है, जो समीपवर्ती पेड़ की पत्तियो के हिलने से एक क्षण मे सिमिट कर फैल जाता है। खिडकी से दूर-दूर के वन-प्रान्त की सोभा दृष्टिगत होती है। कक्ष मे हलके बैंजनी रग के परदे पड़े हुए है। कक्ष में मयूराकृत कुर्सियाँ और तख्त मखमल से सजे हुए हैं, उन पर जरी का काम भी किया गया है। स्थान-स्थान पर प्राकृतिक दृश्यो के चित्र लगे हुए है। दीवाल के मध्य में पेशवा नारायण राव का चित्र है, जिसमे वे मखमली मसनद पर तकिये के सहारे बैठे हुए है। मराठी पगड़ी, माथे पर त्रिपुण्ड, कानो मे बड़े कुण्डल, गले मे मोतियो की माला, हाथ मे एक फरसान। चित्र के दोनो ओर ढाल और तलवार सुन्दर आकृति मे सजे हुए है। वाहर जाने के लिए जो द्वार है, उस पर रेशमी परदा पड़ा हुआ है। खिड़की के नीचे से अन्तरंग कक्ष मे जाने का मार्ग है। खिड़की के पीछे बाहरी मार्ग पर दो सैनिक है जो पहरा देने के क्रम मे बारी-बारी से दीख पड़ते है।

कक्ष मे तख्त के ऊपर मृत नारायण राव पेशवा की पत्नी श्रीमती गंगा बाई अत्यन्त तन्मयता से चित्र बना रही है। वह कभी-कभी कक्ष मे लगे हुए पेशवा नारायण राव के चित्र की ओर देखकर फिर चित्र बनाने लगती है। उसके मुख पर करुणा और उत्सुकता की विचित्र भाव-मुद्रा है। उसकी अवस्था लगभग 17 वर्ष की है। दूर से किसी भिखारी के कण्ठ से एक नाथ के अभग का आलाप सुन पड़ता है।

एक क्षण बाद एक दूसरी स्त्री प्रवेश करती है। वह मृत सदाशिव राव की पत्नी है। अवस्था लगभग 26 वर्ष की होगी। उसके मुख पर दु:ख का आवेग अपेक्षाकृत कम है। उसका नाम पार्वती बाई है। वह अभग का आलाप सुनने की मुद्रा मे खिड़की तक बढ़ती चली जाती है।]

पार्वती · **(खिडकी के बाहर देखते हुए)** सध्या के इस मनोरम समय मे कितना मधुर अलाप है, गगा ! पुरन्दर के इस दुर्ग मे रहते हुए हमे कितने दिन बीत गये, ऐसा सगीत नही सुना। मालूम होता है जैसे किसी ने करुणा के धागे मे आनन्द के फूल गूँथ दिये है।

गंगा **(चित्र बनाते हुए)** करुणा ..के...धागे मे ..आनन्द के फूल ! **[उसका गला भर जाता है।]**

पार्वती हाँ, गगा ! महाराष्ट्र की भूमि ही ऐसी है। चाहे जितने काँटे बो दिए जायँ, आनन्द के फूल कही-न-कही से निकल ही आते है। **(समीप आते हुए)** अरे ! तुम भी तो अपने चित्र मे बहुत से फूल बना रही हो। देखूँ, तुम्हारा चित्र ? अरे ! तुम्हारी आँखो मे आँसू ?

गंगा **(चित्र छिपाते हुए करुण स्वर से)** नही, पार्वती बाई ! मेरा चित्र मत देखो।

पार्वती क्यो, ऐसी क्या बात है ?

गगा · मुझे लज्जा लगती है।

पार्वती लज्जा लगती है ? किस बात की लज्जा ? चित्र दिखलाने मे लज्जा ? चित्रकार को यदि चित्र दिखलाने मे लज्जा आये तो फिर वह चित्र बनाना ही छोड दे। चित्रकार तो चाहता है कि अधिक-से-अधिक आँखे उसके चित्र की रूप-माधुरी का पान करे, उसकी सराहना करे।

गंगा · पर मैं अपना चित्र किसी को नही दिखलाऊँगी।

पार्वती : श्रीमन्त नाना फडनवीस को भी नही ?

गगा नही, उन्हे भी नही।

पार्वती तो फिर चित्र बना ही क्यो रही हो ?

गंगा . करुणा के धागे मे कोई आनन्द का फूल गुँथ जाय इसलिए।

पार्वती : तुमने तो मेरी ही बात दुहरा दी, गगा !

गंगा हाँ, ताई, तुमने मेरे हृदय मे उठने वाले क्रन्दन को वाणी दे दी। रोते-रोते मेरी आँखो मे आँसू नही रहे, ताई ! **(सिसकियाँ लेते हुए)** दुर्भाग्य ने मुझे कितना रुलाया है, तुम जानती हो। मेरे सुहाग की रेखा रक्त मे डूब गई। मेरा रोम-रोम रोता रहा है। फिर भी मै मर नही सकी। मै कितनी अभागिनी हूँ। [सिसकियाँ]

पार्वती : तुम्हारी सिसकियो की पुकार से पेशवा नारायण राव लौटकर तो नही आ जायेंगे ! आँसू न बहाओ, गगा ! ये आँसू अब मुझसे देखे नही जाते। काका राघोवा और आनन्दी बाई को मैंने कितना समझाया। क्या नही कहा। लेकिन कुछ नही। दुर्भाग्य की जो ज्वाला जलती थी, वह जल कर ही रही।

गंगा : उसी ज्वाला मे मै भी जलना चाहती थी, ताई ! उनकी हत्या के बाद मैंने आनन्दो बाई से कहा—मेरी हत्या भी कर दो, काकी ! मुझे क्यो आग मे जलने के लिए छोड रही हो ? मेरे पति की हत्या के लिए आपको हत्यारे खोजने

पडे । मेरी हत्या आपके ही हाथो हो जायगी । पर उन्होने मेरी प्रार्थना नहीं सुनी ।

पार्वती . पिशाचिनी भा कभी प्रार्थना सुनती है । रक्त-पान करने वाली रक्त ही चाहती है, अमृत नही । किन्तु, गगा, यही रक्त अग्नि-कुण्ड बनकर उनका नाश करेगा । उस अग्नि-कुण्ड का नाम जानती हो ? (**एक-एक अक्षर पर जोर देकर**) श्रीमन्त.. नाना...फड...नवीस ।

गंगा : सचमुच कितने नीतिज्ञ और दूरदर्शी हैं नाना । यदि वे न होते तो मैंने आत्महत्या कर ली होती ।

पार्वती उनके रहते कोई आत्महत्या नही कर सकता, गगा ! पानीपत के युद्ध की बात तो पुरानी हो गई, किन्तु उसमे काम आने वाले तुम्हारे भाऊ कैलास-वासी होकर भी न जाने कितनी बार मेरी आँखो के सामने आ जाते है । कहते है—पार्वती ! पानीपत की हार को कौन जीत मे बदल सकता है ? और तब ध्यानावस्थित होकर मैं कह देती हूँ—नाना फडनवीस ।

गंगा : मुझे भी विश्वास है कि वे पानीपत की हार का कलक अवश्य ही दूर कर देगे । अब तो वे आते ही होगे । किसी आवश्यक कार्य से बाहर गये है । शीघ्र ही आने को कह गये थे । अपनी सहज बुद्धि से कैसे-कैसे कार्य कर लेते हैं वे !

पार्वती : यह तो मैं भी जानती हूँ । चित्र बनाने मे तुम्हारी रुचि देखकर उन्होने चित्र निर्माण की सामग्री तुम्हारे लिए क्यो ला दी, इसका कारण तुम जानती हो ?

गगा नही जानती, ताई ! मै तो यही समझती हूँ कि वे मुझे बहुत चाहते हूँ ।

पार्वती · नही, चित्र की सामग्री इसलिए ला दी है कि तुम चित्र बनाने मे तन्मय रह कर अपना दुःख भूल सको ।

गंगा ओह, यह बात है । सचमुच चित्र खीचते समय मेरी कल्पना न जाने कहाँ-कहाँ चली जाती है । इसी चित्र ने न जाने कितनी देर से मुझे उलझा रखा है ।

पार्वती . और यह चित्र तुमने मुझे दिखलाया भी नही ।

गंगा क्या करोगी यह चित्र देखकर । मेरे हृदय की ज्वाला मे कभी-कभी एक फूल झाँक उठता है—उसी का यह चित्र है । कल्पना ही तो है ।

पार्वती वह कौन-सा फूल है ?

गंगा · उसे देखकर तुम मेरी हँसी तो नही उडाओगी ?

पार्वती हँसी ? हँसी उडाने की क्या बात है ? फूलो का चित्र देखकर कोई हँसी उडाता है ?

गंगा : वह जीवित फूल है, मेरी गोद मे जल्द ही आयेगा ।

पार्वती : यह बात है ? (**मुस्कराकर**) ओहो ! तो अब अपने आँसुओ को सुखा डालो, गगा ! अब तो सुख के दिन आने को है । पेशवा नारायण राव की सजीव स्मृति लेकर तुम जीवन से सघर्ष ले सकती हो । नाना फडनवीस इस बात को जानते हैं ?

गंगा · जानते हैं, इसीलिए तो वे मुझे तुम्हारे साथ पूना से यहाँ पुरन्दर के दुर्ग में ले आये हैं, नही तो राघोवा काका न जाने क्या षड्यत्र करते ।

पार्वती : वे तो षड्यन्त्र करने मे निपुण है । और गगा, मैं तुम्हे बतलाऊँ, मैं यह बात जानती थी, यद्यपि तुमने इसे छिपाने के बहुत प्रयत्न किये । सच है आँसुओ की धारा मे बहते हुए फूल की ओर किसे ध्यान होता । अच्छा, देखूँ तुम्हारा चित्र !

गंगा · मुझे लज्जा लगती है । ऐसा लगता है जैसे मेरा शोक झूठा है, मेरे आँसुओ की धारा का प्रवाह उलटा बहने लगा है, मेरी विपत्ति विदूषक बन गई है ।

पार्वती · ऐसी बात नही है, गगा ! एक फूल मुरझाता है, उसका स्थान दूसरा फूल ग्रहण कर लेता है । क्या पहले फूल के मुरझाने से दूसरे फूल की सुगधि कम हो जानी चाहिए ? दूसरे फूल को तो अधिक उमग के साथ खिलना चाहिए । देखूँ, तुम्हारे होने वाले शिशु का चित्र ! (**चित्र हाथ मे ले लेती है**) ओहो ! बिलकुल पेशवा नारायण राव की ही आकृति है ।...गोरा गुलाबी फूल-सा मुख...नई खिली हुई कलियो-सी आँखे । कनेर के फूल की तरह कान । अब मालूम हुआ कि तुम इस कक्ष मे ही आकर क्यो चित्र खीचा करती थी । इस कक्ष मे पेशवा नारायण राव का यह चित्र लगा है न । [**संकेत करती है ।**]

गंगा : इनके दर्शनो से आँसू बहने लगते है, पर हृदय को एक शान्ति मिलती है । जब मैं एकटक उनके चित्र की ओर देखती हूँ तो उनके ओठ हिलते हुए ज्ञात होते हैं । वे होने वाले शिशु की बात मुस्करा कर कहने लगते हैं ।

पार्वती भगवान करे शीघ्र ही तुम माता बनो । तुम्हारा शिशु फूलो की मुस्कान लेकर आवे ।

गंगा · बहुत मत कहो, ताई ! कभी-कभी मुझे अपने आप से भय लगने लगता है । ऐसा दुर्भाग्य लेकर आई हूँ कि अपने पति को तो खो ही चुकी हूँ कही अपने शिशु... [**गला भर आता है ।**]

पार्वती · (**बीच मे ही**) बडा प्रतापशाली होगा वह, गगा ! तुम्हारे दु ख की कालिमा को दूर कर चन्द्र की भाँति उदित होगा ।

गगा इसीलिए मैं अपनी कल्पना मे डूबकर न जाने कैसे-कैसे चित्र बनाती रहती हूँ । यही चित्र कभी रुलाते हे, कभी हँसाते है . (**एक क्षण रुककर**) तुम से एक प्रार्थना करूँ, ताई ?

पार्वती मुझसे, कौन-सी प्रार्थना ?

गगा मानोगी ? मान लोगी ? नही, मुझसे कहते नही बनेगा ।

पार्वती कहो न । मानूंगी तुम्हारी बात ।

गगा . मैं यही चाहती हूँ कि.. कि...[**रुक जाती है ।**]

पार्वती हाँ, हां कहो न ।

गगा कहते नही बनता...मै यही चाहती हूँ कि आप भगवान् गजानन से प्रार्थना

करें . भगवान् गजानन से प्रार्थना करे कि...वह खिलने वाला फूल...पुत्र-रूप मे खिले...पुत्र अर्थात् पुत्र हो । (अपने को सँभालकर) मैंने अनुचित बात तो नही कही ? ताई, मैं बहुत मूर्ख हूँ ।

पार्वती · नही, गगा ! इसमे मूर्खता की बात क्या । यह तो माता की ममता है । मैं भगवान् गजानन से अवश्य प्रार्थना करूँगी कि तुम्हारा मातृत्व वीर पुत्र से ही धन्य बने । वीर छत्रपति शिवाजी की भाँति ही तुम्हारा पुत्र महाराष्ट्र-जननी की सेवा करे ।

गंगा : तुम बहुत अच्छी हो, ताई ! तुम्हारी प्रार्थना भगवान् गजानन अवश्य सुनेगे ।

[बाहर तुरही का नाद]

पार्वती . देखो, भगवान् गजानन ने मेरी और तुम्हारी प्रार्थना सुन ली । चलो, पूजा का समय हो गया । भगवान् गजानन के मन्दिर मे जाने की सूचना हो गई ।

[परिचारिका का प्रवेश]

परि० : स्वामिनी की जय हो ! पूजा का समय हो गया ।

गंगा : ताई के साथ मै आ रही हूँ । पूजा की सब सामग्री प्रस्तुत है, सौदामिनी ?

सौदामिनी : प्रस्तुत है, स्वामिनी ! सतारा से दो श्रीमन्त आये है । वे अपने को आपका सम्बन्धी बतलाते है । आपसे भेट करना चाहते है । मैंने उन्हे अतरग कक्ष मे बिठला दिया है ।

गंगा : श्रीमन्त नाना जी आये ?

सौदामिनी . अभी नही आये ।

गंगा · नही आये ?

सौदामिनी . सतारा के श्रीमन्तो से क्या कहूँ ?

गंगा : उन लोगो को इस बाहरी कक्ष मे आने को कह दो । हम लोग जा रहे हैं । मैं पूजा के बाद ही उनसे भेट कर सकूँगी । श्रीमन्त नाना को इस बात की सूचना होनी चाहिए ।

सौदामिनी जैसी आज्ञा ।

गंगा : ताई ! ये सतारा के श्रीमन्त कौन होगे ? किसलिए भेट करना चाहते हैं ?

पार्वती · सतारा मे तो तुम्हारे कुछ सम्बन्धी भी हैं । शायद उन्हीं मे से कोई हो ।

गंगा : हो सकते है । भेंट करने मे कोई आपत्ति तो नही है ?

पार्वती : आपत्ति क्या हो सकती है, पर पहले पूजा-भवन मे चले ।

गंगा : अच्छा । चलो, ताई !

[दोनो का प्रस्थान]

[कुछ देर तक शान्ति रहती है । फिर भीतर के द्वार से एक व्यक्ति सशकित दृष्टि से देखते हुए धीरे-धीरे प्रवेश करता है । उसके हाथ में एक काष्ठपेटिका है । दो-तीन कदम चलकर वह फिर चारो ओर देखता है और फिर नेपथ्य से दूसरे व्यक्ति को पुकारता है ।]

पहला . आ जाओ, मामा ! कोई नही है ।

[पहला व्यक्ति बढता है, उसके पीछे दूसरा व्यक्ति भी प्रवेश करता है । वह अपेक्षाकृत वृद्ध है ।]

पहला गजानन की पूजा ? सौदामिनी ने कहा कि गगा बाई पूजा के लिए गई हैं । **(व्यंग्य की मुस्कान)** गजानन की पूजा के लिए ।

दूसरा : महादेव ! सुनते है आजकल गगा बाई चित्र बहुत बनाती है और उसके बाद पार्वती के साथ गजानन की पूजा करती है ।

महादेव : इस पूजा का क्या फल होगा, मामा, जब मै महादेव होकर मारा मारा फिर रहा हूँ । आज से मैं अपना नाम बदल दूँगा, मामा !

मामा : बदलो या न बदलो, यह तुम्हारी इच्छा । पर पहले देख लो आसपास कोई है तो नही ।

महादेव . अभी देख लेता हूँ । **(दोनों ओर दबे पांव देखता है)** कोई नही है । जब नाना यहाँ नही होते तो कोई नही होता ।

मामा : अच्छा, यह बतलाओ वह तुम्हारी काष्ठपेटिका कहाँ है ? सतारा मे तो नही भूल आये ?

महादेव : अरे, उसे कैसे भूल सकता हूँ, मामा ! उसी मे तो मेरा दिमाग रखा है । आजकल मेरे दो दिमाग है । एक कधे के नीचे, एक कधे के ऊपर । यह काष्ठपेटिका, मेरा असली दिमाग तो इसी काष्ठपेटिका मे है ।

मामा मेरा ख्याल तो है कि तुम्हारे दो दिमागो मे से एक भी काम न आयेगा । तुम्हारा यह दाँव भी खाली गया, महादेव !

महादेव : दाँव खाली नही जा सकता, मामा ! गगा बाई हमे मिली नही कि हमने उन्हे यह पेटिका पकडाई और बस काम तमाम ।

मामा : काम तमाम ? इतने जहरीले कपडे है ये ?

महादेव . राघोबा काका ने दिये है । आनन्दी काकी ने इन कपडो को ज़हर मे डुबाया है । आनन्दी काकी कच्चा खेल कभी नही खलती, मामा !

मामा : धीरे बोलो, महादेव, धीरे बोलो । यह नाना फडनवीस का मकान है । यहाँ दीवारो के भी कान होगे ।

महादेव . अरे, इस बाहरी कक्ष मे कोई नही आता । बाहर सतरी पहरा दे रहा है । यहाँ कौन आयेगा ?

[सौदामिनी का प्रवेश]

सौदामिनी : मैं आ सकती हूँ ? श्रीमती गगा बाई ने कहलाया है कि उन्हे पूजन मे शायद कुछ देर लग जाय तो आप क्षमा कीजियेगा । आप यही विश्राम करे । वे पूजन के बाद ही आपके कपडो की भेंट स्वीकार करेगी ।

महादेव **(हर्षातिरेक से गद्गद् कठ से)** धन्यवाद ! धन्यवाद ! सौदामिनी जी, हम लोग किस योग्य हैं कि श्रीमती गगा बाई को कुछ भेट कर सके लेकिन सुना

है कि वे जल्दी ही माता बनने वाली हैं तो सतारा से उनके कुछ सम्बन्धियो ने उन्हे अच्छे-अच्छे रेशमी वस्त्र भिजवाये है। वे पूजन के पहले उन्हे धारण करती तो अच्छा होता, सौदामिनी जी !

सौदामिनी : इस समय तो वे पूजन-गृह मे हैं—आ नही सकेंगी।

मामा : कोई बात नही, कोई बात नही। इन वस्त्रो को धारण कर पूजन तो दुबारा भी हो सकता है।

महादेव : हम लोग भेट देकर ही जायेगे। उनसे कह दीजिये कि हम लोग इसी बाहरी कक्ष मे उनकी प्रतीक्षा कर रहे हैं।

सौदामिनी · बहुत अच्छा ! यही मैं उनसे कह दूंगी। [प्रस्थान]

महादेव : देखा, मामा ! कैसी बाते करता हूँ मैं। बडी-बडी राजनीति एक तरफ और मेरे छोटे से नाटक का लटका दूसरी तरफ। जानते हो नाना फडनवीस क्या सोचते हैं ?

मामा : क्या सोचते हैं ?

महादेव : मामा ! तुम पूरे सुदामा हो। अरे, यह बात सारे सतारा और पुरन्दर के लोग जानते हैं और तुम नही जानते ? नाना फडनवीस सोचते हैं कि जैसे ही गगा बाई के लडका हुआ कि वह नारायण राव पेशवा के बाद नया पेशवा हुआ।

मामा : और अगर गगा बाई के लडकी हुई तो ?

महादेव उसका भी प्रबन्ध नाना ने किया है। इस समय पुरन्दर के किले मे छः गर्भवती ब्राह्मणियाँ हैं। जिस किसी के पुत्र होगा, उसी को गगा बाई का पुत्र कह कर पेशवा घोषित किया जायगा।

मामा : यह बात है। आर्य तुम तो पूरे राजकाजी हो। तो बेचारे राघोवा काका की पेशवा होने की सब आशाएँ धूल मे मिल जायेगी ?

महादेव : आनन्दी काकी के रहते कभी आशाएँ धूल मे मिल सकती हैं, मामा ! इसी-लिये तो यह कपडे की पोटली है। न गगा बाई जीवित रहेगी न नया पेशवा होगा। समझा, मामा ! और फिर आत्म-रक्षा के लिये यह कटार !

[कटार निकालता है।]

मामा यह तो राघोवा काका की कटार है।

महादेव . उन्होने ही मुझे दी। कहा, समय पडने पर हमे उपयोग मे लाना। देखो, कितनी तेज़ धार है। बिलकुल आनन्दी काकी की जबान है।

[बाहर आहट होती है।]

मामा . देखो ! कोई आ रहा है। अपनी कटार सँभालो।

महादेव (जल्दी में पैर के नीचे डाल कर) यह रही पैर के नीचे।

[एक सैनिक का प्रवेश]

सैनिक : जय हो !

महादेव . क्या बात है ?

सैनिक . श्रीमती गगा बाई की सेवा मे निवेदन है।

महादेव गगा बाई यहाँ नही है। क्या निवेदन है ?

सैनिक . पेशवाई के लिए विद्रोह करने वाले रघुनाथ राव जी राघोवा बन्दी हो गये है। नाना जी उन्हे साथ ला रहे है।

महादेव क्या राघोवा काका बन्दी हो गये ?

मामा · बन्दी हो गये ?

सैनिक . श्रीमती गगा बाई को यह सूचना देने की मुझे आज्ञा है।

महादेव . अच्छा .., मैं ..मै ..श्रीमती गगा बाई ..को यह सूचना...यह सूचना दे दूंगा।

सैनिक जय हो ! [प्रस्थान]

महादेव (**क्रन्दन स्वर में**) मामा !

मामा : महादेव !

महादेव यह क्या हो गया ?

मामा : यह दॉव भी खाली गया।

महादेव जिन राघोवा काका के बल पर हम लोग राजनीति खेलने आये थे वे ही बदी हो गये। . अब क्या होगा ?

मामा . घबराओ मत, महादेव ! आनन्दी काकी तो बदी नही हुईं ? वे राघोवा काका को छुडाने की चाल अगरेज टोपी वालो से मिलकर जरूर निकाल लेंगी।

महादेव · पर नाना तो अगरेज टोपी वालो की सब चाले जानते हैं।

मामा : आनन्दी काकी की चाल तो नही जानते।

महादेव : अरे, जो ब्रह्मा भी नही जानते वह नाना जानता है। हाय ! अब क्या होगा ?

[**बाहर कोलाहल होता है।**]

मामा देखो, खिडकी से, यह कैसा कोलाहल है ?

महादेव देखता हूँ। (**खिड़की के समीप जाकर**) आगे बहुत से सैनिक चल रहे हैं। बीच मे राघोवा मुंह लटकाये जा रहे हैं। लोहे की साँकलो से उनके हाथ बँधे हैं।

मामा लोहे की साँकलो से ?

महादेव हॉ, लोहे की साँकलें चलने से शब्द कर रही है। पीछे भी बहुत से सैनिक है। उनके पीछे घोडे पर नाना फडनवीस हैं। लोग उनका जय-जयकार करते हुए चल रहे हैं।

मामा नाना फडनवीस ने सतारा और पुरन्दर के लोगो का सगठन कर लिया है। उन्ही की सहायता से शायद राघोवा काका को पकडा होगा। सखाराय बापू, त्रिम्बक राव और हरिपत फडके की गुप्त सभा इसीलिए हुई थी।

महादेव (घबराकर) तो अब क्या होगा, मामा !
मामा घबराओ मत, घबराओ मत, महादेव ! राघोवा खुद एक अच्छे योद्धा हैं। वे अपनी रक्षा की युक्ति सोच निकालेंगे।
महादेव नही, मामा ! अब हम लोग भी बन्दी हुए। अब हम बचने के नही।
मामा . महादेव ! तुम तो अपने को राजनीति का आचार्य समझते थे। यह बात मालूम भी कैसे होगी कि हम राघोवा काका के षड्यन्त्र मे सम्मिलित हैं। हम लोग तो गगा बाई के सबधियो की ओर से वस्त्रो की भेट लाये है।
महादेव : हाँ, यही बात है, यही बात है। मैं झूठ-मूठ घबरा गया था। तुम इसे सच मान गये ? अरे, मै तो नाटक कर रहा था।
मामा नाटक ही सही। लेकिन अब सोचो कि नाना फडनवीस के आने पर हमे क्या करना चाहिये।
महादेव : तुम मत घबराना, मैं भी नही घबराऊँगा, जिससे उन्हे सन्देह न हो। खूब हँस-हँसकर बाते करेगे, मामा !
मामा हमे तो बस राघोवा काका के लिए पेशवाई चाहिए। चाहे अभी मिले, चाहे बाद मे।
महादेव : वह तो होगा ही।

[बाहर कोलाहल पास आता सुनाई पड़ता है—"कहो, काका राघोवा ! पेशवाई चाहते थे ?" "जल्दी-जल्दी चलो, काका ! अभी बन्दीखाना दूर है।" "नाना फड़नवीस की जय" "अरे भाई, कभी-कभी काका की भी जय बोल दो।" "नाना फड़नवीस की जय !"

मामा : नाना फडनवीस की जय पास ही सुन पडती है। वे आने वाले ही हैं।
महादेव हम लोग अतरग कक्ष मे चले चले। हम लोग श्रीमतो की तरह अपने आने की सूचना देगे। यहाँ बैठे रहेगे तो हमारी उतनी इज्जत नही होगी।
मामा · तुमने अच्छा सोचा। अच्छा, चलो हम लोग जल्दी ही चले। **[दोनों का भीतरी द्वार से प्रस्थान]**

[एक क्षण बाद नाना फड़नवीस बाहरी द्वार से आते हैं। वे दुबले-पतले शरीर के हैं, पर गंभीर। अपने शब्दों को तौलकर बोलते हैं। उनकी चाल ऐसी है जैसे एक सिंह अपनी गिरि गुहा में लौटता है।]

नाना० : **(पेशवा नारायण राव के चित्र को देखकर)** कैलासवासी पेशवा नारायण राव ! नाना फडनवीस भी तुम्हे प्रणाम करता है। तुम्हारी हत्या की गई। आज उस हत्या का प्रतिशोध महाराष्ट्र की जनता ने लिया। कैलास मे तुम सुखी हो ! **(पुकारकर)** सौदामिनी !
सौदामिनी : (नेपथ्य से) श्रीमत !
नाना० : इस समय तो श्रीमती गगा बाई पूजन-गृह मे होगी ?

सौदामिनी हाँ, श्रीमत !

नाना० उनकी पूजा कब तक समाप्त होगी ?

सौदामिनी आरती हो चुकी है।

नाना० आरती के बाद यहाँ आने का कष्ट करे।

सौदामिनी जैसी आज्ञा, श्रीमत ! **[जाना चाहती है।]**

नाना० सुनो !

सौदामिनी **(लौटकर)** आज्ञा, श्रीमत !

नाना० जब उनके आने की आवश्यकता होगी, मैं सूचित करूँगा। जाओ।

सौदामिनी जैसी आज्ञा, श्रीमत !

नाना० थक गया हूँ। विश्राम करूँगा।

[कुर्सी पर लेटते हुए उनकी दृष्टि फर्श पर पडी हुई कटार पर पड़ती है।]

नाना० **(उठाते हुए)** यह कटार !.. ...किसकी कटार है...यहाँ कैसे **(उठाकर देखते हैं)** इस कटार पर किसी का नाम भी खोदा गया है। **(पढते हुए)** पेशवा रघुनाथ राव...राघोवा. राघोवा ? यह राघोवा की कटार है ? ... यहाँ कैसे . ? राघोवा तो अभी नियन्त्रण मे लाये गये है। फिर उनकी कटार यहाँ कैसे हो सकती है ? कोई षड्यन्त्र रचा जा रहा है। **(पुकारकर)** सौदामिनी !

सौदामिनी **(नेपथ्य से)** श्रीमत !

नाना० . राघोवा की कटार...

सौदामिनी . आज्ञा, श्रीमत !

नाना० : इस कटार को तुम पहिचानती हो ?

सौदामिनी : (देखकर) नही, श्रीमत !

नाना० : यह इस कक्ष मे कैसे आई ?

सौदामिनी · मैं नही जानती, श्रीमत !

नाना० . यह कटार काका राघोवा की है।

सौदामिनी काका राघोवा की ? रहस्यपूर्ण है।

नाना० यह तुम्हारी सम्पत्ति तो नही है ?

सौदामिनी . नही, श्रीमत ! आपके द्वारा दिये गये शस्त्र पर्याप्त हैं। उनके रहते अन्य शस्त्रो की आवश्यकता नही है।

नाना० · तुम कांप रही हो ? यह किसी षड्यन्त्र की भूमिका ज्ञात होती है। मेरे आने के पूर्व इस कक्ष मे कोई था ?

सौदामिनी हाँ, श्रीमान ! श्रीमती गगा बाई के दो सम्बन्धी हैं। वे श्रीमती गगा बाई से भेट करने के लिए सतारा से आये है। कुछ भेट भी लाये है। वही इस कक्ष मे बैठे थे।

नाना० : श्रीमती गगा बाई से उनकी भेट हुई ?
सौदामिनी : नही, श्रीमत ! श्रीमती पूजन के लिए चली गई थी।
नाना० : इस समय वे सम्बन्धी कहाँ है ?
सौदामिनी : अन्तरग कक्ष मे श्रीमती को प्रतीक्षा कर रहे है।
नाना० : उन्हे इस स्थान पर भेजो !
सौदामिनी : जो आज्ञा। [प्रस्थान]
नाना० (सोचते हुए) श्रीमती गगाबाई के सम्बन्धी......सतारा..... से......क्या भेंट लाये है ? भेट के लिए .....मेरी अनुपस्थिति......का......समय ही... क्यो चुना......गया......।
सौदामिनी सतारा के श्रीमत उपस्थित हैं ?
नाना० : आने दो।

[महादेव और उसके मामा का प्रवेश]

महादेव : श्रीमत नाना की जय ! सतारा से महादेव प्रणाम करता है।
मामा : महादेव का मामा भी प्रणाम करता है।
नाना० : भूमि से अपना सिर उठाओ, महादेव ! जिससे मैं तुम्हारा मुख देख सकूं। और महादेव के मामा ! तुम्हारा नाम क्या है ?
मामा : नाम . .. मेरा नाम......सब लोग मुझे मामा ही कहते हैं।
नाना० मामा...! किस लिए आप लोगो ने कष्ट किया ?
महादेव . श्रीमत का यश चारो ओर फैला हुआ है। जैसे...जैसे...खेत मे हरियाली फैली होती है।...नही मैं ठीक नही कह सका . जैसे तलवार की धार फैली रहती है। ..नही, श्रीमत . मैं ठीक तरह से नही कह सकता। (मामा से) मामा ! तुम बोलो।
मामा : श्रीमत ! आप के यश को सुनकर हम लोग यहाँ आये जैसे सूरज को देखकर किरणे आ जाती हैं।
नाना० · जैसे सूरज को देखकर किरणे...आप लोग सतारा से आये है।
महादेव : हाँ, श्रीमत, सतारा से। वहाँ हम सब ने आपके दर्शन किए थे, आपके दर्शन। आप कितने सुन्दर हैं। (मामा से) मामा ! तुम बोलो।
मामा श्रीमत ! सतारा से हम लोग आपके लिए वस्त्र लाये है।
नाना० : मेरे लिए वस्त्र ? क्यो ? मैंने सुना कि आप लोग श्रीमती गगा बाई से भेंट करने आये है।
मामा : हाँ, श्रीमत ! श्रीमती गगा बाई से भेट करने आये थे, बिना भेंट किए ही चले जावेगे।
नाना० : भेट करने के लिए आये और बिना भेट किए ही चले जायेंगे ?
महादेव नही, श्रीमत ! मामा आपके सामने ठीक बाते कह नही पाते। हम लोग श्रीमती गगा बाई के लिए वस्त्र लाये थे।

नाना० वस्त्र, कैसे वस्त्र ?

महादेव सतारा मे उनके बहुत से सम्बन्वी हैं, उन्होंने सुना कि गगाबाई शीघ्र ही माता होने वाली हैं, इस अवसर पर प्राचीन रीति के अनुसार उनके सम्बन्धियो ने उनके लिए रेशमी वस्त्र भेजे है।

नाना० : उनके सम्बन्धियो के प्रति हम लोग कृतज्ञ हैं। कहाँ है वे वस्त्र ?

महादेव : चन्दन की इस पेटिका मे हैं।

नाना० · मैं इन वस्त्रो को देखना चाहूँगा।

महादेव : वे इस पेटिका मे ही है।

नाना० · राज्य-शिष्टाचार के अनुसार तो वस्त्र चाँदी के थालो मे सजाकर प्रस्तुत किए जाते हैं।

महादेव : हमे चाँदी के थालो मे सजाने की आज्ञा नही है।

नाना० . किसकी आज्ञा नही है ? (पुकारकर) सौदामिनी !

सौदामिनी (नेपथ्य से) श्रीमत !

महादेव · नही, श्रीमत ! सौदामिनी देवी को क्यो कष्ट देते है। इस चन्दन की पेटी मे ही वस्त्र रहेगे।

[सौदामिनी का प्रवेश]

सौदामिनी . श्रीमत !

नाना० · चाँदी का एक थाल शीघ्र लाया जाय !

सौदामिनी · जो आज्ञा।

महादेव · तब तो हम विना वस्त्र दिए ही चले जावेगे।

नाना० आपके वाक्य सदेह उत्पन्न करते हैं। आप हमारे अतिथि हैं। हमारे यहाँ सम्मान सहित विश्राम कीजिए। दो-एक दिन हमारे यहाँ रहकर भेट लेकर जाइये।

मामा श्रीमत ! हमे शीघ्र ही जाने की आज्ञा दीजिये।

नाना० ऐसा सभव नही हो सकेगा। आप हमारा आतिथ्य ग्रहण किए बिना यहाँ से नही जा सकेंगे।

[सौदामिनी का चाँदी का थाल लिए हुए प्रवेश]

सौदामिनी : यह चाँदी का थाल प्रस्तुत है।

नाना० : इस चाँदी के थाल मे ये वस्त्र सजाइये।

महादेव · ये राजसी वस्त्र हैं, श्रीमंत ! हम लोग इनका स्पर्श नही कर सकते ?

नाना० : स्पर्श नही कर सकते ? अच्छी बात है। इन्हे इस पेटी मे ही रहने दीजिये। एक बात और जानना चाहता हूँ। इन वस्त्रो के साथ कोई कटार भी भेजी गई है ?

मामा · कटार ? नही, श्रीमत ! कोई कटार नही भेजी गई।

महादेव . (धीरे से) मेरी कटार कहाँ है ?

नाना० यह है ! यह कटार इसी कक्ष मे आप लोग छोड गये थे ।
महादेव जी हाँ, यह मेरी कटार है । मैं इसे देख रहा था । उसकी यहाँ आवश्यकता नही थी इसलिए मैंने उसे पैर के नीचे ही दवा दिया था । जल्दी मे उठाना भूल गया ।
नाना० : काका राघोवा आप पर वहुत प्रसन्न है ?
महादेव : नही, नही, श्रीमत ! हम लोग तो आपके पक्ष के है, काका राघोवा मे हमारा कोई सम्बन्ध नही है ।
नाना० आपका कोई सवध नही, फिर भी वे अपनी कटार आपको रखने के लिए देते है ।
महादेव . नही, यह तो मेरी अपनी कटार है ।
नाना० इस कटार पर लिखा हुआ है—रघुनाथ राव राघोवा ।
महादेव हम लोग पढना नही जानते, श्रीमत !
नाना० · इसीलिए आप इसे अपनी कटार कहते है । यह कटार काका राघोवा की है । (जोर से) वोलिए, यह कटार काका राघोवा की है ?
महादेव : (घवराकर) हाँ, श्रीमत !
नाना० . यह उन्होने आपको किस लिए दी ?
मामा हमारे गाँव मे गन्ने की खेती वहुत होती है तो...तो...ग...ग...गन्ना गन्ना छील कर खाने के लिए, श्रीमत, हमे कटार दी गई ।
महादेव (मामा से) मामा ! तुम चुप रहो । (नाना से) श्रीमत ! मामा मूर्ख है । उसे उत्तर देना नही आता । श्रीमत ! काका राघोवा एक वार सतारा आये थे । मै उस समय वहुत दुखी था । आत्महत्या करना चाहता था । उन्होने आत्म-हत्या करने के लिए मुझे यह कटार दी थी ।
नाना० . फिर आपने आत्महत्या नही की ?
महादेव जी...मैंने आत्महत्या नही की ।
नाना० आप लोग काका राघोवा के षड्यन्त्र मे हैं ?
महादेव नही, श्रीमत ! हम लोग किसी षड्यन्त्र मे नही ।
नाना० (पुकारकर) सैनिक !
मामा मैं तो विलकुल ही निरपराव हूँ, श्रीमत ! मेरे पास कोई कटार नही है ।
नाना० काका राघोवा के सामने ही इसका निर्णय होगा ।

[सैनिक का प्रवेश]

सैनिक श्रीमत की जय !
नाना० : इन दोनो 'वार' भाइयो को नियन्त्रण मे ले लो । और काका राघोवा को यहाँ लाओ ।
सैनिक . जैसी आज्ञा ।
महादेव : मामा ! मैं कहता था कि हम लोग गये ।

ामा   अच्छा होता कि जब राघोवा काका ने तुम्हे कटार दी थी, तभी आत्महत्या कर लेते ।

महादेव : (करुण स्वर मे) आत्महत्या तो हो ही रही है, मामा ! (नाना से) श्रीमत ! यह कपडो की पेटी अपने नियत्रण मे ले जाऊँ ?

नाना०   नही, यह यही रहेगी । सैनिक ! इन्हे ले जाओ । इन्हे बाहर ही रखना । अभी इनकी आवश्यकता होगी ।

सैनिक   जो आज्ञा ! (दोनो से) चलिए, वार भाई !

मामा   (जाते-जाते) श्रीमत नाना की जय बोलो, महादेव !

महादेव   मुझसे बोला नही जाता । मेरा गला ही बैठ गया है, मामा !

[सैनिक के साथ दोनो का प्रस्थान]

नाना०   सतारा मे कपडो की भेट—चन्दन की पेटी मे और वे थाल मे सजाये नही जा सकते, छुए नही जा सकते । (चित्र की ओर देखकर) पेशवा नर नारायण राव ! यह देखा—चित्र मे से देख सकते हो राघोवा का यह षड्यत्र ? तुम्हारी हत्या के बाद श्रीमती गगाबाई की हत्या का षड्यत्र । उसके लिए विष मे बुझे हुए वस्त्रो की भेट ! धारण करते ही उनकी मृत्यु हो जाय । अन्यथा काका राघोवा की कटार का उपयोग । ब्रह्मघाती काका राघोवा ! तुम्हे नर्क मे भी स्थान नही मिलेगा । अच्छा ही हुआ कि खम्बात भागने के पहले ही तुम बदी कर लिए गये । नही तो कम्पनी के वकील मास्टिन और गोविन्द राव गायकवाड से सधि कर तुम अपने को पूरा पेशवा समझ लेते । पेशवा रघुनाथ राव हत्यारा, देशद्रोही ?

सैनिक   नाना की जय ! काका रघुनाथ राव द्वार पर है ।

नाना०   उन्हे भीतर लाओ ! हरिपन्त फडके साथ हैं ?

सैनिक   हाँ, श्रीमत !

नाना०   दोनो ही भीतर आये ।

सैनिक   जो आज्ञा । [प्रस्थान]

नाना०   राजसत्ता का मोह, पेशवा बनने का स्वप्न, यह सब क्या इतना भयानक है कि काका अपने भतीजे की हत्या करे ? विदेशी कम्पनी से सधि कर देश के प्रति विद्रोह किया जाय ? विद्रोह भयानक विद्रोह. .

[हरिपन्त फडके के साथ राघोवा का प्रवेश । राघोवा बन्दी-वेश में है ।]

हरिपन्त   श्रीमत नाना जी की जय !

नाना०   स्वागत, हरिपन्त ! काका राघोवा को कोई कष्ट तो नही हुआ ?

हरिपन्त : नाना ! श्रीमन्त भोसले से युद्ध मे पराजित होकर जब राघोवा भाग कर जगलो मे भटक रहे थे, तब मैंने उन्हे शीतल जल देकर उनकी प्यास बुझाई थी ।

नाना० . जिस व्यक्ति की प्यास रक्त से नही बुझी, उसकी प्यास शीतल जल से कैसे बुझ सकती है, हरिपन्त !

राघोवा : नाना ! मैं पेशवा का काका हूँ। तुम्हारे व्यग्य के शब्द मेरे लिए अपमान-जनक है। पेशवा का काका सम्मान मे पेशवा से भी महान् है।

नाना० : पेशवा का काका—सचमुच अगर पेशवा का काका अपने सम्मान की मर्यादा समझता। यदि पेशवा नारायण राव की हत्या के बाद पेशवा का काका स्वय पेशवा बनना चाहता था तो उसका सम्मान इसी मे था कि वह महाराष्ट्र की शक्ति के बल पर ही पेशवा बनता। राज्य के प्रमुख सरदारो की सहायता और जनता की सहानुभूति से ही पेशवा बनता। पेशवा बनने का यह मार्ग नही था कि विदेशी कम्पनी के वकील मास्टिन के चरणो पर पेशवा का काका अपना मस्तक झुकाता। आज पेशवा के काका से समस्त महाराष्ट्र और समस्त देश का अपमान हुआ है।

राघोवा : यह स्मरण रखो, नाना, कि तुम केवल फणनवीस हो, राज्य के आय-व्यय के लेखक हो। राज्यवश के अधिकारी से इस तरह बात नही कर सकते। नारायण राव के बाद मै ही पेशवा पद का अधिकारी हूँ।

हरिपन्त : काका ! अधिकारी तो आप उसी समय से अपने को मानने लगे थे जब से मेरे स्वामी माधव राव पेशवा की मृत्यु हुई थी।

राघोवा : चुप रहो, हरिपन्त ! माधव राव का साधारण-सा कारकुन यदि अच्छा सैनिक होकर छोटी-सी लडाई जीत ले, तो वह मुझसे बात करने का अधिकारी नही हो सकता। तुम्हे मेरी आलोचना करने का क्या अधिकार है ?

नाना० : पूरा अधिकार है, काका ! प्रजा का सामान्य व्यक्ति भी राजा की आलोचना करने का अधिकार रखता है। हिन्दू पद पाद-शाही जनता की मगल-कामना से ही स्थिर है।

हरिपन्त : कैलासवासी माधव राव ने भी काका से यही कहा था।

नाना० : अट्ठारह वर्ष की छोटी-सी आयु मे ही माधव राव की मृत्यु हुई।

हरिपन्त : मृत्यु नही हुई, नाना ! उनकी भी हत्या की गई।

राघोवा : हरिपन्त ! नीच ! नारकी ! यदि मैं इस समय स्वतत्र होता तो तेरी जीभ काट कर फेक देता। व्यर्थ का कलक लगाने वाला हरिपन्त आज ससार मे जीवित नही रहता।

नाना० : तुम्हारे दुर्भाग्य से वह जीवित है, काका ! वास्तव मे माधव राव की हत्या की गई है। सत्य का उद्घाटन भले ही सुनने मे अच्छा न लगे, पर इतिहास मे उसे अकित रहना चाहिए।

हरिपन्त : काका ! आप चाहे मुझ पर कितना ही क्रोध करे, पर शान्त हृदय से आप सोचिए कि हिन्दू पद पादशाही पर शस्त्र चलाने के लिए जब आप तैयार हुए तो क्या आप समस्त राष्ट्र के शत्रु नही हुए ? क्या आपने पेशवा माधव राव के विरोध मे सरदारो को अपनी ओर नही फोडा ? मेरे सामने ही पेशवा माधव राव ने कहा था—काका ! यदि हम आप ही लडेगे तो शत्रुओ की मस्ती कौन दूर

करेगा ? पानीपत के सहार का बदला किस प्रकार लिया जायगा ? हमारे कैलासवासी पूर्वज हमे क्या कहेगे ? राज्य आपका है, मैं आपका हूँ। आप ही राज्य सँभाले और शत्रुओ का विनाश करे। इतने पर भी आपने पेशवा माधव राव का साथ नही दिया और विदेशी वकील मास्टिन की सहायता से उनका सर्वनाश किया।

राघोवा · यह बात झूठ है। नाना फडनवीस ! तुम राज्य के अधिकारी हो। मेरा अपमान करने के कारण हरिपन्त फडके को दड दो।

नाना० मेरे न्याय पर आपने विश्वास किया, काका, इसके लिए आपको साधुवाद ! इस पर विचार किया जायगा। किन्तु, हरिपन्त, तुम जाओ। काका इस समय क्रोध मे है। फिर बात करना।

हरिपन्त जैसी आज्ञा। [**प्रणाम करता है।**]

नाना० हरिपन्त गये। अब आपको क्रोध नही आयेगा। अब आप शान्त हृदय से सत्य स्वीकार करने का साहस दिखला सकेंगे। सम्भव है, पेशवा माधव राव की हत्या न की गई हो किन्तु पेशवा नारायण राव की तो हत्या की गई, यह आप स्वीकार करेंगे ?

राघोवा हाँ, हत्या हुई। किन्तु यह हत्या मैंने नही की। मैं यह हत्या करना भी नही चाहता था।

नाना० किसने हत्या की ?

राघोवा बधिको ने।

नाना० किसकी आज्ञा से ?

राघोवा : आनन्दी बाई—मेरी पत्नी की आज्ञा से। मैंने तो केवल पेशवा नारायण राव के लिए 'धरावा' यानी 'पकड लो' की आज्ञा दी थी, आनन्दी बाई ने 'ध' का 'म' करके 'मरावा' अर्थात् 'मार डालो' लिखकर मेरी आज्ञा मे परिवर्तन कर दिया और नारायण राव की हत्या हुई।

नाना० : काकी आनन्दी बाई को क्या कहूँ, किन्तु जिस समय पेशवा नारायण राव को मारने के लिए बधिक झपटे उस समय वे दौडकर आपसे लिपट गये और उन्होने क्रन्दन-स्वर मे कहा—"काका ! मेरा राज्य ले लो, पर मुझे जीवन दान दो। यदि आप मुझे मरवाना ही चाहते है तो किसी वीर के लिए जो मृत्यु उचित है, उसी मृत्यु से मुझे मरने दो।" किन्तु आपने नारायण राव पेशवा का वह क्रन्दन सुना ही नही।

राघोवा मैं लाचार था, नाना !

नाना० लाचार इसलिए थे कि आप स्वय पेशवा होना चाहते थे। आपको पेशवा नारायण राव को नव-वधू के निरन्तर बहने वाले आँसुओ पर दया नही आई ? उसके जीवन-भर होने वाले चीत्कार और क्रन्दन से आपका हृदय द्रवित नही हुआ ?

राघोवा : स्त्रियो के आँसुओ मे राजनीति द्रवित नही होती, नाना ! और भी उज्ज्वल होती है । युद्ध-भूमि मे हज़ारो वीर कट जाते है, उनकी स्त्रियो के आँसुओ से न राज्य बनते है, न बिगडते है ।

नाना० काका ! तुम्हारी राजनीति की परिभाषा पर मुझे दु ख है । युद्ध-भूमि मे वीरो की मृत्यु अभिमान और गौरव की वस्तु है, किन्तु क्रूरता से, छल से वीर की हत्या करना राजा और उसके राज्य के लिए कलक की बात है । आपका यह कलक मानव-जाति के इतिहास मे काला धब्बा बनकर रहेगा ।

राघोवा · नाना ! सावधान हो । अपने वाक्यो को मर्यादा मे रहने दो । कोई समय आयेगा जब मैं तुम्हारे स्थान पर होऊँगा और तुम बेडियो से जकडे हुए मेरे सामने खडे होगे ।

नाना० मैने ब्रह्महत्या नही की, मैने गोत्रजहत्या नही की मैने पुत्र-वध नही किया जो तुमने किया है, काका ! मेरी राजनीति स्वार्थ के पैरो नही चलती, जनता के पैरो चलती है । यदि मै पेशवा होना चाहता तो तुमसे पहले पेशवा होता, किन्तु पेशवाई उसे मिलनी चाहिए जो जनता की सेवा से पेशवाई का अधिकारी है । मै पहले भी फडनवीस था, आज भी हूँ और कल भी यही रहूँगा । काका ! अनुचित राज्य-लिप्सा के गले मे सोने की जजीर नही लोहे की जजीरे होती है । अनुचित नीति-मत्ता राजद्रोह है, राष्ट्रद्रोह है ।

राघोवा **(तीव्रता से)** राष्ट्रद्रोही तुम हो । हूँ ऽऽऽ, तुमने मेरा साथ नही दिया । पेशवाओ का रक्त मेरे शरीर मे अभी तक प्रवाहित है । पेशवा नारायण राव की मृत्यु के बाद—मृत्यु भले ही हत्या से ही क्यो न हुई हो—उस वश मे मेरे सिवाय कौन पुरुष था जो पेशवाई का अधिकारी होता । केवल मै था, शेष स्त्रियाँ थी, किन्तु तुमने मेरा साथ—राज्य का साथ नही दिया और मृतक पेशवा नारायण राव की पत्नी गगाबाई का पक्ष लेकर नई पेशवाई खडी कर ली । गगाबाई राज्य की स्वामिनी, सखाराम बापू और तुम मत्री, और राघोवा विद्रोही है, उसका राज्य पर कोई अधिकार नही है, ऐसी तुमने शहर-शहर मे दुहाई फिरवा दी । नागपुर के भोसले को अपने पक्ष मे कर लिया और मुझे बदी करने के लिए भोसले की सेनाएँ चल पडी । हरिपन्त जैसे तुच्छ कारकुन को सेनापति बनाकर मुझे अपमानित कराया । राष्ट्रद्रोही कौन है ? परिस्थितियो से पूछो—मैं हूँ या तुम हो । नाना ! मेरी पेशवाई मे तुम्हारा स्वार्थ सिद्ध न होता, इसलिए अपने स्वार्थ के लिए तुमने गगाबाई को स्वामिनी बनाया है । स्वार्थी नाना ! राष्ट्रद्रोही तुम हो, तुम ।

नाना० काका ! राष्ट्रद्रोही मै हूँ ? यदि तुम किसी ईश्वर को मानते हो तो उससे पूछो । तुम मनुष्य की हत्या कर सकते हो, सत्य की हत्या नही कर सकते । कैलासवासी पेशवा नारायण राव की पत्नी श्रीमती गगाबाई मातृत्व के पथ पर है । उनका पुत्र ही पेशवा-पद का अधिकारी होगा । उस पुत्र के अधिकारो की रक्षा करने मे ही मेरी राज-सेवा है । और तुम्हारी राज्य-सेवा ? योग्य-पेशवा की

हत्या कर उसकी पेशवाई छीनना तुम्हारी राज्य-सेवा है। मैं हत्यारे का साथ नही दे सका—इसमे मेरा स्वार्थ है ? नागपुर के भोसले साथ नही दे सके, भोसले का क्या स्वार्थ है ? जो अपने पाप को पुण्य का रूप दे सकता है, वह ससार मे कौन-सा पाप नही कर सकता ? काका ! अपने पाप का नग्न रूप देखो। तुम केवल पुरुष ही की हत्या नही कर सकते, स्त्री की भी हत्या कर सकते हो।

राघोवा स्त्री की हत्या ? मैंने किस स्त्री की हत्या का प्रयत्न किया है ?

नाना० गगाबाई की। पेशवा नारायण राव की हत्या करने के बाद उनकी पत्नी गगाबाई की हत्या के लिए प्रयत्न ?

राघोवा . यह झूठ है।

नाना० इस चन्दन की पेटी मे जो वस्त्र रखे हुए हैं वे झूठ नही बोलते। ये वस्त्र हाथ से नही छुए जा सकते। घोर हलाहल मे बसे हुए है। ये वस्त्र श्रीमती गगाबाई को धारण करने के लिए भेजे गये है। काका ! क्या मैं यह भी कहूँ कि इन्हे किसने भेजा है ?

राघोवा किसने भेजा है ?

नाना० जिसकी यह कटार है। **(कटार फेंकता है)** इस पर जो नाम खोदा गया है, वह है रघुनाथ राव राघोवा।

राघोवा यह तुम कैसे कह सकते हो कि इन्हे मैने ही भेजा है ?

नाना० इसका भी प्रमाण दिया जा सकता है। **(पुकारकर)** सैनिक ! काका, तुम्हारा देशद्रोह अनेक जिह्वाएँ लेकर बोलता है।

सैनिक श्रीमन्त की जय हो ! आज्ञा ?

नाना० अतिथि-कक्ष मे बैठे हुए महादेव और उसके मामा को उपस्थित करो।

राघोवा **(सोचता हुआ)** महादेव और उसका मामा ?

नाना० यही आदमी थे, काका, जिन्हे तुमने अपनी कटार देकर विष के बुझे हुए वस्त्र चदन की पेटी मे भेजे थे। चदन की पेटी मे विष से भरे हुए वस्त्र ! ठीक है, काका ! चन्दन के वृक्ष मे विषधर ही लिपटे रहते है, आपने इस सत्य को प्रमाणित कर दिया।

राघोवा **(क्षोभ से धीरे)** तो ये दोनो व्यक्ति पकडे गये।

[सैनिक के साथ महादेव और उसके मामा का प्रवेश]

महादेव श्रीमत काका और नाना की जय !

मामा श्रीमत नाना और काका की जय !

नाना० महादेव ! तुम जो विष से भरे हुए वस्त्र श्रीमती गगावाई के लिए लाये वे किसने भेजे थे ?

महादेव वे...वे...सतारा ने भेजे थे ?

नाना० सतारा ने भेजे थे ? सतारा से किस व्यक्ति ने भेजे थे ?

महादेव सतारा से गगावाई के सम्बन्धियो ने भेजे थे।

नाना० : उनका क्या नाम है ?

मामा · मैं बतलाऊँ, नाना ! जिस व्यक्ति ने भेजे थे, उसका नाम हम नही ले सकने।

नाना० · मैं यह निर्णय देता हूँ कि यदि भेजे जाने वाले का नाम इसी समय नही बतलाया गया तो दोनो व्यक्तियो को प्राणदण्ड दिया जायगा।

महादेव : प्राणदण्ड ?

मामा · (अधिक डरे हुए शब्दों से) प्राणदण्ड ? (राघोवा से) काका ! अब तुम्ही हमारी रक्षा कर सकते हो।

नाना० जो व्यक्ति स्वय बदी है, वह कैसे रक्षा कर सकता है ?

महादेव : तो हम लोगो को क्षमा कीजिए, श्रीमन्त नाना फडनवीस !

नाना० . क्षमा किसी प्रकार नही मिल सकेगी। नाम प्रकट किया जाय, नहीं तो तुम दोनो प्राणदण्ड के भागी होगे।

महादेव (राघोवा से) काका ! एक हजार स्वर्ण-मुद्राएँ वापस ले लीजिए और हम दोनो के प्राण बचा लीजिए।

नाना० . सुना, काका ! एक हजार स्वर्ण-मुद्राएँ वापस ले लीजिए। एक हजार स्वर्ण-मुद्राओ से तुम श्रीमती गगाबाई के प्राण लेना चाहते थे। सोचा होगा कि श्रीमती गगाबाई को मार डालने के बाद नये पेशवा का पुश्त ही नही उठेगा। और तुम सरलता से पेशवा हो सकोगे।

राघोवा : मैं लज्जित हूँ, नाना फडनवीस !

नाना० : सैनिक ! इन दोनो को ले जाओ और बन्दीगृह मे डाल दो।

मामा अब हमे प्राणदड तो नही मिलेगा ?

महादेव : अब तो आपको काका का नाम भी मालूम हो गया।

नाना० : इसका निर्णय बाद मे किया जायगा। (सैनिक से) ले जाओ इन्हे !

सैनिक · जो आज्ञा। [दोनो के साथ सैनिक का प्रस्थान]

नाना० काका राघोवा को बन्दीगृह मे अकेले रहने से कष्ट होगा। ये दोनो व्यक्ति साथ रहेगे नो आगे के षड्यत्र बनाने मे सरलता होगी।

राघोवा नाना फडनवीस ! अब मुझे अधिक अपमानित न करो।

नाना० : मै आपको अपमानित नही कर रहा राघोवा काका, आपके कार्य ही आपको अपमानित कर रहे है, किन्तु अब आपसे मेरी प्रार्थना है कि अपनी जननी जन्मभूमि के प्रति आप विश्वासघाती न बने। ये टोपी वाले अगरेज़ यहाँ व्यापार की सुविधा माँगने के लिए आये थे, पर अब ये हमारे देश पर अधिकार करना चाहते है। ये चाहते है कि हम लोग आपस मे हमेशा लडते रहे जिससे ये कभी आपके साथ, कभी हमारे साथ सधि कर अपने राज्य की जडे जमाते जायँ।

राघोवा : ऐसी बात नही है, नाना ! अग्रेज़ो का वकील मास्टिन तो बहुत ही सच्चा और ईमानदार है। वह हमारा मित्र भी है।

नाना० : वह मित्र इसीलिए है कि तुम उसके हाथ की कठपुतली बने रहो। जानते हो,

बबई की कौंसिल ने मास्टिन को पत्र मे क्या लिखा है ? यह लिखा है कि मराठो को घर-ही-घर मे एक-दूसरे से लडा कर या जिस तरह हो सके इस बात की कोशिश करो कि मराठे हैदर के साथ या निज़ाम के साथ मिलने न पावे। मास्टिन इस बात के लिए कोशिश कर रहा है और उसे आप मित्र समझते हैं ?

राघोवा : क्या यह सच है ?

नाना० : मेरे गुप्तचरो ने मुझे इस पत्र की प्रतिलिपि दी है। एक दूसरे पत्र मे फिर मास्टिन को लिखा गया है कि इस अवसर पर साप्टीं और वसीन प्राप्त करने मे जितनी परिस्थितियाँ हमारी सहायता कर सके उन्हे तुम खूब परिश्रम के साथ बढाना और चाहे कुछ भी क्यो न हो, पूजा छोडकर कही न जाना। इस पत्र की प्रतिलिपि भी मेरे पास है।

राघोवा . आपके गुप्तचर पत्र की झूठी नकल भी दे सकते हैं।

नाना० मेरे गुप्तचर आपके महादेव और उसके मामा की भाँति नही है जो प्राणदण्ड के भय से स्वामी का नाम ले सकते है। पर आपके अविश्वास की कोई दवा मेरे पास नही है। आप देशद्रोही है और सदैव रहेगे। अपने घर की आग से आप शत्रुओ के घर मे दीपक जलायेगे। मास्टिन इस समय भी पूना मे है और वह हम लोगो मे अविश्वास के बीज बो रहा है। आप उसे जल से सींचेगे।

राघोवा · अब अच्छा नाना ! यदि तुम मुझे पेशवा मान लो तो मै मास्टिन को छोड दूँ। जहाँ तुम कहो वहाँ रहूँ—पूना मे, पुरन्दर मे, सतारा मे। तुम्हे मैं फड़नवीस नही, मत्री बनाऊँगा। तब महाराष्ट्र मे कोई अविश्वास के बीज नही बो सकेगा और न उन्हे कोई सीच सकेगा।

नाना० : सुनो, राघोवा ! तुम्हारी तरह मैं व्यापार नही करता। राष्ट्र-सेवा रुपयो से या मत्री पद से नही तौली जाती। तुम पेशवा के पद के अधिकारी नही हो सकते। पेशवा होगे श्रीमती गगाबाई के पुत्र। मैंने अभी से उनका नामकरण कर दिया है, सवाई माधव राव।

राघोवा · और यदि गगाबाई के पुत्र न होकर पुत्री हुई तो ?

नाना तो गगाबाई दत्तक पुत्र स्वीकार करेगी और उसी पुत्र का नाम होगा सवाई माधव राव। किन्तु कैलासवासी पेशवा नारायण राव के वश मे ही पेशवाई रहेगी।

राघोवा , यह तुम्हारा अतिम निर्णय है ?

नाना० · मेरा ही नही समस्त महाराष्ट्र का यह निर्णय है। महाराष्ट्र का कोई भी सावधान व्यक्ति तुम्हारा साथ नही दे सकता। यदि कोई तुम्हे स्वार्थ के जाल मे फँसाकर मार सकता है तो वह कम्पनी का वकील मास्टिन है। मैं फिर एक बार कहना चाहता हूँ, काका, कि मास्टिन से सावधान रहो। हम सब मिलकर इन कूटनीतिज्ञ अग्रेज़ो को सारे देश से बाहर निकाल देगे। भोसले, निजाम और हैदर अली हमारे साथ है। हम सब मिलकर इन विदेशियो की चालाकी को समझें। तुम श्रीमती गगाबाई के होने वाले पुत्र सवाई माधव सिंह के सरक्षक बनो और

अपने काका के नाम को सार्थक करो ।

राघोवा : सोचूँगा, नाना ! इन बातो पर विचार करूँगा ।

नाना० भगवान् गजानन तुम्हे महाराष्ट्र का महापुरुष बनाये । श्रीमती गगाबाई को आशीर्वाद दोगे ? वे भगवान् गजानन की पूजा समाप्त कर चुकी है ।

राघोवा : जब तुम मुझे हत्यारा कहते हो तो हत्या करने वाला आशीर्वाद कैसे दे सकता है ?

नाना० दे सकता है, यदि वह हत्या का प्रायश्चित करे और यह राष्ट्रसेवा ही प्रायश्चित है । किन्तु तुम्हारा कहना भी ठीक है । महाराष्ट्र की पवित्र देवी पर कोई अपवित्र छाया भी नही पडनी चाहिए । काका ! आपने कहा है कि आप मेरी बातो पर विचार करेगे । बन्दीगृह मे आपको विचार करने का पर्याप्त अवकाश मिलेगा । (पुकारकर) सैनिक !

[सैनिक का प्रवेश]

सैनिक श्रीमन्त की जय !

नाना० सैनिक ! हरिपन्त बाहर होगे । उनसे कहो कि काका राघोवा विश्राम करना चाहते हैं ।

सैनिक जो आज्ञा । [प्रस्थान]

नाना० . (पुकारकर) सौदामिनी !

[सौदामिनी का प्रवेश]

सौदामिनी श्रीमन्त की जय !

नाना० सौदामिनी ! श्रीमती गगाबाई से कहो कि वे इस कक्ष मे आने का कष्ट करे ।

सौदामिनी जो आज्ञा । [प्रस्थान]

नाना० काका ! पानीपत के युद्ध मे महाराष्ट्र का भयानक पराभव हुआ । परस्पर की फूट से हमने अपना देश और धन तो खोया ही, न जाने कितने वीरो के रक्त से देश की शस्य श्यामला भूमि लाल कर दी । और विदेशी हमे खिलौनो की भाँति खिलाकर हम पर हँसते है और एक-दूसरे के ऊपर उछालकर तोड रहे है । सोचो, समझो, काका ! परस्पर की फूट भारत के लिए अभिशाप बनी है । इस अभिशाप को सदैव के लिए समाप्त कर दो ।

[हरिपन्त का प्रवेश]

हरिपन्त : श्रीमन्त की जय !

नाना० हरिपन्त तुम आ गये । काका राघोवा ने कहा है कि वे मेरी बातो पर विचार करेगे । इनके बन्धन खोल दो । इन्हे विश्रामगृह मे ले जाकर इनके विश्राम की व्यवस्था करो जिससे इन्हे सोचने की सुविधा मिले ।

हरिपन्त काका यो तो भले आदमी है, किन्तु काकी आनन्दी बाई .

राघोवा : (चीखकर) हरिपन्त ! अपनी जिह्वा पर नियत्रण रखो ।

नाना० : हरिपन्त ! काका की बात का बुरा मत मानना । नियत्रण अवश्य रखना ।

राघोवा काका के बन्धन तो खुल जायेगे किन्तु इनकी गतिविधि पर नियन्त्रण रखना ।

हरिपन्त जैसी आज्ञा ।

नाना० और सुनो ! चन्दन की इस पेटिका को जिसमे विष भरे वस्त्र है, अग्नि-देव को समर्पण कर देना । इसके वस्त्रो को कोई व्यक्ति स्पर्श न करे । काका राघोवा के राजसूय की अग्नि को ही यह समर्पित हो ।

हरिपन्त जो आज्ञा ।

नाना० (गहरी साँस लेकर) अच्छा ! काका राघोवा यह फणनवीस भट्ट वशी काका रघुनाथ राव को प्रणाम करता है । भविष्य मे ऐसे काम न करना कि महाराष्ट्र तुम्हे काका कहने मे लज्जा का अनुभव करे ।

राघोवा . नाना फडनवीस ! तुम भी मेरे और अपने भविष्य पर एक बार फिर सोचना ।

नाना० सत्य का सशोधन नही होता, काका ! जाओ ।

हरिपन्त : चलो, काका ! [दोनो का प्रस्थान]

नाना० : महाराष्ट्र के सौभाग्य की चन्द्रकला कब राहु के मुख से मुक्त होगी, यह भगवान् गजानन जाने ।

[सौदामिनी का प्रवेश]

सौदामिनी श्रीमत की जय ! श्रीमती गगाबाई आ गई है ।

नाना० . आने के लिए उनसे निवेदन हो ।

सौदामिनी : जैसी आज्ञा । [प्रस्थान]

नाना० (सोचते हुए) महाराष्ट्र के सौभाग्य की चन्द्रकला—श्रीमती गगाबाई ! बडे सुन्दर चित्र खीचती है । महाराष्ट्र के स्वर्णिम भविष्य का भी कोई चित्र खिचे !

[गगाबाई का प्रवेश]

नाना० . फडनवीस का श्रीमती को नमस्कार !

गगा . नमस्कार, नाना ! आज आपने मुझे बहुत देर के बाद स्मरण किया ।

नाना० श्रीमती ! आज बडे-बडे काण्ड घटित हुए । सतारा से वस्त्रो की भेंट लेकर दो भद्र पुरुष आये थे ।

गंगा . हाँ, मैंने सुना । वे मेरी प्रतीक्षा भी कर रहे थे । मै भगवान् गजानन की पूजा के लिए चली गई थी । वे चले गये ?

नाना० चले गये, वन्दीगृह मे ।

गगा वन्दीगृह मे ?

नाना० हाँ, वन्दीगृह मे । तुम्हारे लिये वस्त्रो की भेंट लाये थे । काका राघोवा ने पूना मे रहते हुए सतारा से यह भेंट भेजी थी विष मे डुबाकर जिससे उन वस्त्रो को धारण करते ही तुम ससार से चली जाओ और उनकी पेशवाई का

रास्ता साफ हो जाय।

गंगा : नाना ! यह तो बहुत अच्छा होता। इन भीषण कष्टो से मैं मुक्ति पा जाती। जिस रास्ते मेरे स्वामी गये है, उसी रास्ते मैं भी चली जाती। [एक अश्रु]

नाना० : अरे, तुम्हारी आँखो मे आँसू ? तुम तो वीर-पत्नी हो और अब वीर-जननी भी होने वाली हो। क्या तुम चाहती हो कि चन्द्र की कला डूब जाय जिससे अन्धकार मे चोरो को चोरी करने का अवसर मिले ?

गंगा : आप सबकी रक्षा कर लेगे, नाना ! आप बहुत बडे नीतिज्ञ और दूरदर्शी हैं।

[यवनिका]

24 :

कलंक-रेखा

•

पात्र-परिचय

महाराणा भीमसिंह—उदयपुर के महाराणा
महारानी चावड़ी—महाराणा भीमसिंह की पत्नी
कृष्णाकुमारी—महाराणा की पुत्री
देवला—कृष्णाकुमारी की सखी
जवानसिंह—महाराणा भीमसिंह के भाई
संग्रामसिंह—शक्तावत सरदार
सँपेरा और अन्य चार व्यक्ति

काल—21 जुलाई, 1810 ई०
समय—सन्ध्या के 5 बजे
स्थान—उदयपुर

कलंक-रेखा

[राजमहल के समीप एक उपवन। जवानसिंह और देवला मे बात-चीत हो रही है। देवला फूल चुन रही है।]

जवान० . (विह्वल स्वर मे) एक बात पूछूं, देवला ?

देवला : हाँ, कुँवर चाचा ! लेकिन. .

जवान० : लेकिन क्या ?

देवला मुझे राजकुमारी के लिए फूल चुनकर पूजा की सामग्री सजानी है। पहले उनके लिए फूल चुन लूं।

जवान० (अप्रतिभ शब्दो मे) फूल-सी राजकुमारी के लिए फूल ? (सँभलकर) बहुत अच्छा। मैं सोच रहा था कि फूल के स्थान पर कही राजकुमारी ही पूजा की सामग्री न बन जाये।

देवला यह तो सच है, कुँवर चाचा ! जब राजकुमारी कृष्णा देव-प्रतिमा के सामने नत-मस्तक होती हैं, तो ज्ञात होता है जैसे देव-प्रतिमा के चरणो पर एक सजीव फूल चढा हुआ है।

जवान० · (सोचते हुए) सजीव फूल ..सजीव फूल ! (सहसा) एक बात पूछूं, देवला ?

देवला हाँ, कुँवर चाचा ! लेकिन .

जवान० फिर लेकिन ?

देवला · हाँ, आजकल राजमन्दिर के विषय मे बात पूछी नही जाती या तो कही जाती है या सुनी जाती है।

जवान० · आजकल ऐसा क्यो, देवला ?

देवला इसलिए कि प्रश्न का चिह्न बिच्छू के डक की तरह टेढा है, जिसमे जहर भरा रहता है। जब तक प्रश्न का उत्तर न मिल जाये तब तक तो सन्देह के जहर मे मन डूबा ही रहता है।

जवान० ठीक है, तो मैं सन्देह नही करूँगा, देवला, मै सन्देह नही करूँगा। मैं यही पूछना चाहता...मैं यही सुनना चाहता था कि कृष्णाकुमारी का विवाह .

देवला : (बीच ही में) बस, कुँवर चाचा ! आगे नहीं। आप कुँवर हैं, फिर भी राजपूती रक्त इस वाक्य को पूरा करने की शक्ति नही रखता ? राजपूतो की आँखो की लाली कुसुम्मा-पात्र मे तैर रही है। विदेशियो के लिए हमारे शस्त्र मखमली म्यानो मे गहरी नीद ले रहे हैं। ये प्रश्न रक्त से पूरे किये जाते हैं, शब्दो से नही।

जवान० · (टूटते स्वर मे) देवला ! तुम ठीक कह रही हो, तुम ठीक कह रही हो लेकिन...लेकिन.

देवला : कुँवर चाचा ! आप इतने घबराये हुए क्यो है ? आपके मुख से शब्द ठीक-ठीक निकलते भी नही । (गहरी नजर से देखते हुए) अच्छा ! और यह कटार यह कटार आपने क्यो खोल रखी है ?

जवान० . (घबराकर) यह कटार ? नही तो . नही तो अच्छा । यह कटार यह कटार, जो मेरी कमर मे है ? अरे, इसका मखमली म्यान खराब हो गया था । मैंने उसे निकाल दिया । तुम्ही ने तो अभी कहा था कि विदेशियो के लिए हमारे शस्त्र मखमली म्यानो मे गहरी नीद ले रहे है । इसलिए मैंने पहले से ही इस कटार का म्यान निकालकर फेक दिया । और तुम्हारी सखी तो यही कही होगी । मुझे मिली नही ।

देवला राजकुमारी पूजा के वस्त्र धारण करने गयी हैं । उन्होने मुझसे फूल चुनने के लिए कहा और

[लोगो की बातचीत का सम्मिलित स्वर, जो दूर से धीरे-धीरे पास आता जा रहा है । एक स्वर—"क्यो, यह कैसे हुआ ?" दूसरा स्वर—"वह कहाँ थी ?" तीसरा स्वर—"क्या मर गयी ?" चौथा स्वर—"नहीं, अभी जीवित होगी ?"]

[सँपेरे की बीन सुन पडती है ।]

जवान० (घबराये स्वर मे) कुछ लोग आ रहे है । अच्छा, देवला ! अब मैं जाता हूँ ।

देवला : ठहरिए, ठहरिए । देखिए, बाहर कौन है ? क्या दुर्घटना हो गयी, किसी को सर्प ने काट लिया ?

जवान० (विह्वल स्वर मे) नही, नही ..कोई दुर्घटना नही हो सकी । कोई दुर्घटना नही हुई । कृष्णा को कृष्णा को यह मालूम न हो कि मै...मै यहाँ आया था...। (दूर जाता हुआ स्वर) मैं यहाँ आया था । [प्रस्थान]

देवला (दोहराते हुए) कृष्णा को मालूम न हो कि मैं यहाँ आया था ? (सोचते हुए) कुछ समझ मे नही आता । कुँवर चाचा जवानसिंह कटार लेकर आये और चले गये ? .और...और कृष्णा को मालूम न होने पाये ? [बीन बन्द हो जाती है ।]

[नेपथ्य मे एक स्वर—"जहर तो सारे शरीर मे फैल गया !" दूसरा स्वर—"अब तो वह हमेशा के लिए सो गयी !" तीसरी स्वर—"बीन बजाने से क्या होगा ?" पहला स्वर—"बीन बजाने से सर्प आ जायगा और काटी हुई जगह से जहर खींच लेगा ।" तीसरा स्वर—"न जाने साँप कहाँ होगा !" दूसरा स्वर—"अरे, ये सब कहने की बातें हैं । कहाँ का जहर खींचना ।" तीसरा स्वर—"हाय, बेचारी मर गयी ! अभी उमर ही क्या थी ?" पहला स्वर—"भाग्य की बात !"]

[बीन थोड़ी देर तक बजती है ।]

देवला . (**पुकारकर**) ए, बीन वाले ! (**बीन रुक जाती है**) क्या इसे साँप ने काट लिया ?

बीन० . हाँ, अन्नदाता ! जहर चढ गया है ।

देवला तो इसका जहर नही उतार सकते ?

बीन० . अच्छा, अन्नदाता ! बीन बजाकर सर्प को बुला रहा हूँ । वही सारा ज़हर खीच लेगा ।

देवला : ठीक है । पर इसे यहाँ से दूर ले जाओ । यहाँ राजकुमारी के घूमने की जगह है । इस बेचारी स्त्री को देखकर राजकुमारी को दु ख होगा ।

बीन० अच्छा, अन्नदाता ! (**अपने साथियों से**) चलो जी, उठाओ । दूर ले चलो इसे ।

[बीन बजती है । धीरे-धीरे उसका स्वर दूर होता जाता है ।]

देवला : (**गहरी सांस लेकर**) बेचारी स्त्री ! दो घण्टे पहले हँस रही होगी, इस समय जमीन पर पडी है । ओह ! कितना भयानक ज़हर है ?

[राजकुमारी कृष्णा का प्रवेश]

कृष्णा : देवला !

देवला राजकुमारी !

कृष्णा : देवला ! तू फूल चुनने के लिए आयी थी, यही रुक गयी ?

देवला : (**अपराधी के-से स्वर में**) राजकुमारी ! मैं ..

कृष्णा : (**बीच ही में**) बीन सुन रही थी । तेरा बचपन अभी तक नही गया । कौन था वह बीन वाला ?

देवला · कोई नही, राजकुमारी ! सांपो का खेल दिखलाता था । थोडी देर देखने लगी ।

कृष्णा · पूजा के समय सांपो का खेल ? ठीक है, साँप भी तो भगवान् एकलिंग के मस्तक के आभूषण है ।

देवला : और राजकुमारी ! कुँवर चाचा भी आये थे ।

कृष्णा : कुँवर चाचा ? जवानसिंह ? यहाँ ? किसलिए ?

देवला · मै क्या जानूं । उनकी कमर मे खुली हुई कटार थी ।

कृष्णा : खुली हुई कटार ? अपनो के लिए या दूसरो के लिए ?

देवला · दूसरो के लिए तो शक्ति ही नही रह गयी, अपनो के लिए ही होगी । और जाते समय मुझ से कह गये कि राजकुमारी को मालूम न हो कि मैं यहाँ आया था ।

कृष्णा अच्छा, तो तूने यह बात मुझ से क्यो कह दी ?

देवला : (**हँसकर**) मै राजकुमारी की सखी हूँ, कुछ उनकी सखी तो हूँ नही ।

कृष्णा सच है, मेरी सखी मुझ से कोई बात नही छिपा सकती । लेकिन देवला, कुँवर चाचा और कुछ कह रहे थे ?

देवला बातो-ही-बातो मे वे आपके विवाह की बात पूछना ही चाहते थे कि मैने दूसरी बात छेड दी।

कृष्णा (**अस्फुट स्वर मे**) मेरे विवाह की बात ?

देवला हाँ, मैने कहा कि कुँवर चाचा ! आजकल राजमन्दिर के विषय मे बात पूछी नही जाती, कही या सुनी जाती है।

कृष्णा सच, देवला ! आज हमारे राजमन्दिर की स्थिति ही ऐसी है, जिसमे विवाह की बात मखमली म्यान की गहराई है, जिसमे कटार या तलवार छिपी रहती है। मुझे तो इसमे कोई रुचि नही है।

देवला ऐसा क्यो, राजकुमारी ?

कृष्णा देवला ! मै चारो ओर एक विचित्र उदासी का अनुभव कर रही हूँ। पिता जी के मस्तक पर चिन्ता की रेखाएँ प्रतिदिन लम्बी होती जा रही है। माता जी मुझे देखकर न जाने क्यो आँसुओ से आँखे भर लेती है। मै कारण जानना चाहती हूँ, तो मुझे कोई ठीक ढग से उत्तर ही नही देता। राजमन्दिर का सारा वातावरण जैसे सर्प की तरह कुण्डली मारकर बैठा है। कही मुझे डस न ले ? तू जानती है, ऐसा क्यो है ?

देवला मै नही जानती, राजकुमारी !

कृष्णा यदि तू नही जानेगी, तो कौन जानेगा, देवला ! यह आकाश की निर्मलता जैसे किसी सन्यासी की साधना है, जो ससार से ऊपर उठ चुकी है। यह ठण्डी वायु जैसे किसी तपस्विनी का आशीर्वाद है, जिससे ससार से विराग उत्पन्न होता है। और मेरे मन मे उदासी ऐसी बैठ गयी है, जैसे किसी का घर जल गया हो और वह किसी पेड़ के नीचे सिर झुकाये बैठा हो।

देवला राजकुमारी ! क्षमा करे। यदि समय का चक्र कभी उदासी की तरफ घूम जाये, तो क्या ऐसी बाते भी सोची जानी चाहिए, जैसी आप सोच रही हे ? यह तो एक बादल है, जो चन्द्रमा के ऊपर आ गया है। अभी आया है, अभी चला जायगा।

कृष्णा . नही, देवला ! यह वह बादल नही है, जो चन्द्रमा के ऊपर से चला जाये। यह तो चन्द्रमा के भीतर का कलक है, जो उसके हृदय मे समाकर बैठा है सदैव के लिए। इससे उसे मुक्ति नही है।

देवला : राजकुमारी ! छोडिए इन बातो को। देखिए, मैने आपके लिए कितने सुन्दर फूल चुने है ! यह जूही का फूल देखिए, जो सुगन्धि की साधना मे इतना छोटा हो गया है। ऐसा ही तो आपका जी छोटा हो रहा है। लेकिन इसकी सुगन्धि आपके रूप की तरह चारो दिशाओ मे फैली है।

कृष्णा पर, देवला ! जूही के कितने फूल धूल मे गिरे हुए हे ? मिट्टी मे मिलने के लिए ही तो यह रूप नही है ?

देवला राजकुमारी ! यह फूल तो किसी के कण्ठ की श्री और शोभा बढायेगा,

और देखिए यह चम्पक, जिसके प्राणों की सुगन्धि उसके हृदय की पीत आभा मे साकार हो उठी है। पर यह आपके चरणों की कान्ति भी नही पा सका. बेचारा चम्पक...

कृष्णा : इसके हृदय के पीले रग मे जैसे मेरा सुख-सूर्य अस्त हो रहा है।

देवला · नही, राजकुमारी ! इसका यह पीत वर्ण आपके विवाह के हरिद्रा रग का निमन्त्रण है।

कृष्णा · (ग्लानि से) विवाह ? सभी लोग इसकी कामना करते है। मेरे मन मे न जाने क्यो इसकी चाह नही है। माली एक पौदे को अपने बाग मे बडे प्यार से इसलिए लगाये कि फूल निकलने के समय वह उस पौदे को किसी अपरिचित माली को सौंप दे ?

देवला . ससार की परम्परा तो यही है, राजकुमारी !

कृष्णा यह परम्परा मुझे नही चाहिए, देवला ! जा, देर हो रही है। इन फूलो की एक सुन्दर-सी माला गूँथ दे। आज भगवान् एकलिंग का कण्ठ इससे सजाऊँगी।

देवला : राजकुमारी ! कण्ठ सजाने का ध्यान तो आपको आया। (**दबी हुई हँसी**) जाती हूँ। [**प्रस्थान**]

कृष्णा (**उदास हँसी हँसकर**) कण्ठ सजाने का ध्यान ! विवाह !...परम्परा ! यह सब कुछ नही। (देखकर) अरे, पिता जी आ रहे है और माता जी भी साथ हैं। मैं अलग हट जाऊँ।

[**अलग हट जाती है। महाराणा भीमसिंह और महारानी का प्रवेश**]

महाराणा . यह एकान्त ठीक है। यही अपने प्राणो का क्रन्दन तुम्हे सुनाऊँगा, महारानी !

महारानी महाराणा ! जिस राज्य की नारियो ने क्रन्दन नही किया, वहाँ महाराणा के प्राणो का क्रन्दन एक अनहोनी घटना है।

महाराणा : सचमुच, महारानी ! आज बाप्पा रावल के सिंहासन का भार शृगालो के कन्धो पर है। सूर्य ने चमकने के लिए जुगनुओ से प्रकाश माँगा है और समुद्र अपने गर्जन के लिए झीगुरो के स्वरो का भिक्षुक है। तभी तो महाराणा का हृदय आज क्रन्दन करता है, जिसे शब्द भी अगीकार करने मे अपना अपमान समझते हैं। वह क्रन्दन प्राणो मे ही सिमट गया है और राजनीति की कगारो से पिस रहा है।

महारानी तब महाराणा जी, मै उन कगारो को काटूँगी। मै क्षत्राणी हूँ, प्रलय की घटा बनकर ऐसी बरसूँगी कि उसमे कगारे ही नही, प्राणो के क्रन्दन भी डूब जायेगे। और यदि वे नही डूबे, तो जौहर की लपटो से उनमे चिनगारियाँ भर दूँगी। किन्तु मेवाड के मस्तक को मलिन न होने दूँगी।

महाराणा : तुम धन्य हो, महारानी ! किन्तु राजनीति जौहर से भी अधिक भयानक

है। इस राजनीति की बाढ मे चित्तौड की तीन चिताएँ डूब चुकी है, अब...अब मारा उदयपुर डूबने को है।

महारानी किन्तु, महाराणा! जो अग्नि कभी शीतल नही हुई, वह जल की धारा मे कैसे डूब सकती है?

महाराणा कृष्णा के विवाह के प्रसग मे।

महारानी कृष्णा के विवाह के प्रसग मे?

महाराणा हाँ, महारानी! अमीरखाँ एक बडी सेना लेकर उदयपुर की सीमा पर लोहे की दीवार बनकर खडा हुआ है। उसने चूडावत अजीतसिंह के द्वारा कहलाया है कि यदि आप अपनी कन्या का विवाह जोधपुर के महाराजा मानसिंह से नही करेंगे, तो मैं आपके राज्य को बरबाद कर दूँगा।

महारानी किन्तु जब हम कृष्णा का टीका जयपुर के महाराज जगतसिंह को भेज चुके है, तब जोधपुर के महाराज मानसिंह से हम सम्बन्ध की बात ही कैसे कर सकते है? और फिर अमीरखाँ को हमारे आपसी सम्बन्ध से क्या मतलब?

महाराणा महारानी! राजनीति आग की ज्वाला है, जो चाहे जिस दिशा मे जल सकती है। जो आग पाकशाला का शृगार है, वह सारे घर को जला भी सकती है।

महारानी लेकिन अमीरखाँ तो पहले उदयपुर-नरेश का सहायक था?

महाराणा अब जोधपुर-नरेश का मित्र है। महाराज मानसिंह ने अमीरखाँ को घूस देकर अपनी तरफ मिला लिया है।

महारानी तो अमीरखाँ से कहला दीजिए कि कृष्णा का सम्बन्ध जयपुर मे स्थिर हो चुका है, अब जोधपुर से किसी प्रकार की बात नही हो सकती।

महाराणा तो अमीरखाँ उदयपुर मे आग लगा देगा। हमारी समस्त मातृभूमि ही जौहर की चिता बन जायगी।

महारानी तो क्या जयपुर-नरेश, जो हमारे सम्बन्धी होने जा रहे है, हमारी रक्षा न करेंगे? युद्ध की छाया मे ही हम अपनी बेटी का विवाह करेंगे।

महाराणा यह कैसे होगा, महारानी! जयपुर-नरेश के सरदारो मे पहले से ही फूट है। वे जोधपुर के युद्ध से वापस चले आये है। हमारे सरदारो मे भी फूट है। अब उदयपूर और जोधपुर की सम्मिलित सेना भी अमीरखाँ का कुछ नही विगाड सकती।

महारानी अमीरखाँ इतना प्रचण्ड है?

महाराणा हाँ, और एक दूसरी कठिनाई भी है। यदि हम जयपुर के जगतसिंह जी के यहाँ से टीका वापस माँगते है, तो वे अपना अपमान समझकर हम पर आक्रमण कर बैठेगे। इस प्रकार जयपुर और जोधपुर दोनो ही हमारे शत्रु होगे और अमीरखा कभी इस ओर और कभी उस ओर से हमारे ऊपर मौत और आग वरसाने मे पीछे नही रहेगा।

महारानी तब क्या होगा ?

महाराणा : हमारी मातृभूमि श्मशान बनने की प्रतीक्षा मे है । सिन्धिया ने सदाशिव राव के द्वारा मेवाड से सोलह लाख वसूल कर हमारा कोप समाप्त कर दिया है । उदयपुर के पास शक्ति नहीं है कि वह युद्ध करे ।

महारानी : तब उदयपुर प्राण देकर युद्ध करेगा ।

महाराणा किन्तु, महारानी ! क्या एक कन्या के पीछे मेवाड, अम्बर और मारवाड के हजारो वीरो को रक्त मे डूब जाने दूँ ? जिन सरदारो ने वशानुगत मेवाड की सेवा मे अपना जीवन व्यतीत किया है क्या उनके पवित्र रक्त को पानी की तरह बह जाने दूँ ? एक ओर कृष्णा का विवाह, दूसरी ओर सहस्रो वीरो के पवित्र रक्त के व्यर्थ बहाने का प्रश्न है ।

महारानी तो महाराणा ! आप अपने वीरो को बचाइए, राजस्थान की नारियाँ अपनी तलवार उठायेगी ।

महाराणा भावुक मत बनो, महारानी ! राज्य की दृष्टि से सोचो कि क्या राजा अपने परिवार के एक व्यक्ति की रक्षा के लिए अपनी निरपराध प्रजा के सहस्रो वीरो का बलिदान कर दे ? अपनी कन्या की रक्षा मे यदि अपनी मातृभूमि के विनाश के बीज बो दे, तो क्या भविष्य का इतिहास भीमसिंह के नाम पर नही थूकेगा ? कन्या के छोटे-से जीवन की हलकी साँस के लिए एक तूफान को निमन्त्रण दूँ, जो बाप्पा रावल और महाराणा प्रताप की मातृभूमि के अग-अग क्षत-विक्षत कर दे ? एक सुकुमार शरीर की रक्षा के लिए लाखो शक्तिशाली शरीर युद्ध की अग्नि मे जलाये जाये ? सहस्रो सिसोदियो की वीरता की ज्योति एक फूँक से बुझ जाने दी जाये ? एक लहराती हुई चिनगारी से सारे नगर मे आग लग जाने दी जाये ?

महारानी . तो फिर आपने क्या उपाय सोचा है ?

महाराणा . उपाय ? मेरे लिए कोई उपाय नही है, महारानी ! मेरा राजमुकुट आज वह धूमकेतु है, जो उदास आकाश के मस्तक पर रखा हुआ है और जिसके उदय होने पर अमगल और भय की आशका होने लगती है । यह राजमुकुट, जो मुगलो की तलवार के वेग से भी अपने स्थान से नही हटा, जो राजपूतो के रक्त की नदियो पर सदैव तैरता रहा, एक क्षण को भी न डूबा, आज मेरे आँसू की एक बूँद मे डूबना चाहता है । महारानी, बचाओ ! **(चीखकर)** मुझे इस कलक से बचाओ !

महारानी महाराणा ..

महाराणा . **(बीच ही से)** आज चित्तौड के जौहर की ज्वाला मेरे रोम-रोम मे जल रही है । सिसोदियो की वश-मर्यादा आकाश का हृदय चीरते हुए वज्र की तरह मेरे मस्तक पर गिरने जा रही है । **(चीखकर)** बाप्पा रावल ! इस वश को कलकित करने वाले भीमसिंह को देख रहे हो ? उसके जीवन को मृत्यु का

शृगार दो, उसके कष्ट को प्रलय की अग्नि बना दो, जिससे वह एक क्षण मे भस्म हो जाये।

महारानी महाराणा, ऐसे अशुभ वाक्य मै नही सुन सकूँगी। मै स्वय इसका उपाय खोजूँगी।

महाराणा तुम किस प्रकार उपाय खोजोगी, महारानी ? एक ओर अमीरखाँ यम-राज की तरह मृत्यु का जाल खोले खडा है, दूसरी ओर हमारे सरदारो की आपसी द्वेष-भावना ने एक-दूसरे का रक्त पीने का व्रत लिया है। हमारी शक्ति की तलवार टूट गयी है, केवल मूठ हाथ मे है। आज बाप्पा रावल की भूमि अपने सम्मान के लिए सतृष्ण नेत्रो से हमारे बाहुबल की ओर देख रही है और हम अपनी निर्बलता मे अपनी मातृभूमि की ओर देख भी नही सकते। सिसोदिया-वश की ऐसी दशा इतिहास मे पहले कभी नही हुई।

महारानी तो क्या हम अपनी मातृभूमि की रक्षा कर ही न सकेगे ?

महाराणा चूडावत सरदार अजीतसिंह ने मातृभूमि की रक्षा का एक उपाय प्रस्तुत किया है।

महारानी कौन-सा ? **(उतावली से)** शीघ्र बतलाइए, शीघ्र बतलाइए।

महाराणा . मैने वह प्रस्ताव स्वीकार न करते हुए कहा, अजीतसिंह ! तुम तुम अपनी तलवार उठाओ और अपने महाराणा का कलक रक्त से धो दो। अजीत-सिह ने कहा ..अजीतसिंह ने कहा, उदयपुर के महाराणा को कर्तव्य-वेदी पर अपना हृदय काटना पडता है। महाराणा लाखा ने मेवाड की बलि-माला मे अपने पुत्रो के सिर फूलो की तरह गूँथे थे, महारानियो ने अपने पुत्रो को सुसज्जित कर रण-भूमि मे भेजा था। आप एक पुत्री के लिए ही दु खी है ?

महारानी एक पुत्री के लिए ?

महाराणा : हाँ, सभी सरदार कहते है कि इसके अतिरिक्त मेवाड का मान किसी प्रकार भी नही बचाया जा सकता।

महारानी चूडावत अजीतसिंह का क्या प्रस्ताव था ? मै शीघ्र सुनना चाहती हूँ, मैं शीघ्र सुनना चाहती हूँ।

महाराणा ओह ! मै उसे कैसे कहूँ ? महारानी ! मेरे कण्ठ से उसकी ध्वनि नही निकल सकेगी।

महारानी मातृभूमि की रक्षा के लिए प्रत्येक बात कही और सुनी जा सकती है।

महाराणा तो सुनो. अपना हृदय पत्थर का बनाकर सुनो। अजीतसिंह ने यह प्रस्ताव किया कि अम्बर, मारवाड और मेवाड के सहस्रो सैनिको के रक्त से मेवाड को नहलाने की अपेक्षा यह उचित होगा कि युद्ध का कारण ही दूर कर दिया जाये।

महारानी : कारण ही दूर कर दिया जाये ? मै कुछ समझी नही।

महाराणा · बात यह है कि व्यर्थ के युद्ध की अपेक्षा यह अच्छा होगा कि कृष्णा को मृत्युदण्ड...

महारानी · (**बीच ही मे**) ओह, महाराणा ! यह आप क्या...यह आप क्या कह रहे है ? बेचारी कृष्णा, मेरी कृष्णा को ..मेरी कृष्णा को यह दण्ड ! ऐसा नही हो सकता. ऐसा नही हो सकता.... .

[जवानसिंह का प्रवेश]

महाराणा · कौन ? कुँवर जवानसिंह ! तुम यहाँ हो ? तुम्हारी कमर मे खुली हुई कटार है, पर उस पर रक्त का कोई धब्बा नही है ? अब उस कटार पर मेरे रक्त का धब्बा लगेगा।

जवान० : महाराणा ! मुझे क्षमा करे। मै कृष्णा के कक्ष मे कटार लेकर गया था, लेकिन कृष्णा मुझे मिली नही। देवला ने कहा कि वे स्नानागार मे है। मै वही से वापस लौट रहा हूँ।

महारानी (**करुण स्वर मे**) मेरी कृष्णा, मेरी कृष्णा ! मै कृष्णा पर यह दण्ड होते हुए नही देखूंगी। मै कृष्णा के पास जाऊँगी, अभी जाऊँगी। मेरी कृष्णा (**चीखते हुए**) मेरी कृष्णा . कृष्णा [**प्रस्थान**]

महाराणा (**विह्वल कण्ठ से**) गयी ! माँ का हृदय ! माँ की ममता ! कुँवर जवानसिंह ! अब इसके अतिरिक्त और कोई उपाय नही है कि मै अपने प्राण दे दूं। न तो मातृभूमि की दुर्दशा ही देखूंगा और न अपनी कृष्णा का प्राण-दण्ड ही।

[कृष्णाकुमारी का प्रवेश]

कृष्णा (**संयत स्वर में**) यह तो बहुत सरल है, पिताजी ! आपकी कृष्णा हँसते-हँसते इस दण्ड को स्वीकार करेगी।

महाराणा (**चीखकर**) ओह, कृष्णा ! तू यहाँ कहाँ ? मेरी बेटी ! तूने कुछ सुना तो नही ?

कृष्णा मैने सब सुन लिया है, पिताजी !

महाराणा (**विह्वल स्वर में**) नही बेटी ! यह झूठ है, बिलकुल झूठ है। जो अपनी शक्ति का लोहा शत्रु से नही मनवा सकते, वे ही ऐसी बाते कह सकते हे।

कृष्णा · नही, पिताजी ! चूडावत अजीतसिह ने जो प्रस्ताव किया है, वह अपनी मातृभूमि की रक्षा के लिए है। मैं उस प्रस्ताव से सहमत हूँ। आप मुझे प्राण-दण्ड दीजिए।

महाराणा : किस अपराध पर दूं, बेटी ! तू मेरे हृदय से पूछ कि मैं ससार की सारी सम्पदा प्राप्त कर भी तुझे नही खोना चाहता।

कृष्णा : किन्तु, पिताजी, मातृभूमि सारे ससार की सम्पदा से भी अधिक मूल्यवान है और उसकी रक्षा मुझे प्राण देकर भी करनी चाहिए।

महाराणा कृष्णा ! तेरे प्राणो का मूल्य जानती है क्या है ? समस्त राजपूतो की

कायरता का ज्वलन्त उदाहरण। क्या तू राजपूतो को सदैव के लिए कलकित करना चाहती है ?

कृष्णा पिताजी ! राजपूतो के मस्तक पर कलक तो इस बात से लगेगा कि उन्होने एक पुत्री के मोह मे अपनी मातृभूमि के पवित्र मस्तक पर शत्रुओ के पैरो के चिह्न लग जाने दिये। क्या एक फूल को बचाने के लिए माली अपने सारे बाग मे आग लगा दे ?

महाराणा बेटी, तू मेवाड की शोभा है। तेरे बिना मेवाड श्मशान की भाँति हो जायगा। और तब वीरो की वाणी शृगालो के कोलाहल से अधिक नही रहेगी। उनकी तलवार बच्चो के खिलवाड की वस्तु बन जायगी।

कृष्णा पिताजी, मेवाड की रही-सही जो शोभा है, उसे मेरे कारण नष्ट न होने दीजिए। महारानी पद्मिनी के कारण मेवाड मे मृत्यु नाची थी। उस इतिहास के दोहराने का अवसर न आने दीजिए, पिताजी ! ये सच्चे स्वामिभक्त मेवाड-निवासी, जिन्होने वर्षों युद्ध और विपत्ति मे मेवाड का साथ दिया है, मेरे अकेले जीवन के लिए युद्ध की बलि बनें—मेरी सुन्दरता के पीछे—जो आज है, कल नही। फिर यह आज ही समाप्त क्यो न हो जाये ? **(कुँवर जवानसिंह से)** कुँवर चाचा, निकालो अपनी कटार और सुन्दरता के छद्मवेश मे छिपे इस जीवन को समाप्त कर दो ..

महाराणा **(क्रन्दन के स्वर में)** ओह ! मुझ से यह देखा नही जायगा, नही देखा जायगा। महारानी कहाँ हैं, कहाँ हैं महारानी ? **(पुकारकर)** महारानी . **(जाते हुए)** महारानी महारानी . **[प्रस्थान]**

कृष्णा . **(दृढ़ता से)** कुँवर चाचा, मैंने सब बातें सुन ली हैं। अच्छा होता, यदि मैं तुम्हे पहले ही मिल जाती और तुम अपना काम पूरा कर लेते। कुँवर चाचा, मातृभूमि की रक्षा के लिए राजस्थान की नारियो ने क्या नही किया ?

जवान० **(करुण स्वर मे)** कृष्णा. !

कृष्णा कुँवर चाचा, यदि मै पुत्री न होकर पुत्र होती, तो क्या आप मुझे मातृभूमि की रक्षा के लिए तलवार लेकर युद्ध मे जाने की आज्ञा न देते ? मै दुर्भाग्य से पुत्री हूँ, तो क्या मुझे अपनी मातृभूमि के लिए मरने की आज्ञा न मिलेगी ? मेरे कारण उदयपुर की भूमि अपवित्र हो, यह मै सहन नही कर सकूँगी।

जवान० **(शान्त स्वर मे)** कृष्णा ! तू धन्य है। तेरी-जैसी बालिकाओ से ही मेवाड की कीर्ति ससार मे जागती रहेगी।

कृष्णा तो कुँवर चाचा ! आप अपनी कटार उठाइए और रक्त के अमृत से मुझे अमर कर दीजिए।

जवान० बेटी ! मैं क्या कहूँ ? चूडावत अजीतसिंह की इच्छा से और महाराणा की मौन स्वीकृति से ही मुझे यह क्रूर कार्य सौंपा गया है। बतला, मैं क्या करूँ ?

कृष्णा . जो प्रत्येक राजपूत को करना चाहिए । जब जयपुर और जोधपुर दोनो ही उदयपुर के रक्त-पान का व्रत ले चुके है, तो उन्हे ऐसा रक्त देना चाहिए, जो उनके कण्ठ मे आग की लपट बनकर उनकी तृष्णा सदैव के लिए शान्त कर दे।

जवान० : तू ठीक कह रही है, बेटी ! पर मुझसे यह न होगा. .यह न होगा ।

कृष्णा : कुँवर चाचा ! आप राजाज्ञा की अवहेलना कर रहे है । मातृभूमि के अपमान के साथ-ही-साथ आप अपने महाराणा की भी अवज्ञा कर रहे है ।

जवान० मै इस अवज्ञा का दण्ड सहन कर लूँगा ।

कृष्णा पर कुँवर चाचा, मेवाड की जन्मभूमि आपको कभी क्षमा नही कर सकेगी। अमीरखॉ की सहायता से जोधपुर और जयपुर हमारे नगर पर टूट पडेगे और हमारी मातृभूमि श्मशान बन जायगी । मै कहती हूँ, कुँवर चाचा ! मेरी मृत्यु से जयपुर और जोधपुर दोनो राजवशो का क्रोध समाप्त हो जायगा और शत्रुओ का हृदय ऐसी करुणा से भर जायगा कि उदयपुर पर आनेवाली और विपत्तियाँ भी दूर हो जायँगी ।

जवान० ऐसी बात है ! तब कृष्णा, मै यह राजाज्ञा पूरी करूँगा । झुकाओ अपना सिर, मै एक ही प्रहार मे इसे काटकर मेवाड-भूमि को समर्पित कर दूँ ।

कृष्णा (हर्ष से गद्‌गद होकर) आप धन्य है, चाचा ! ओह, आप कितने धन्य है ! अपने चाचा के हाथो से मै मृत्यु का सुख पाऊँगी, इससे बढकर मेरा सौभाग्य और क्या होगा ! कुँवर चाचा ! आप कितने महान् है !

जवान० पर बेटी, मेरा हृदय कॉप रहा है । अपने ही हाथ से अपनी इतनी सुन्दर बेटी को इस निर्दयता.

कृष्णा कुँवर चाचा, आप भी तो तेजस्वी राजपूत है । आपको यह निर्बलता शोभा नही देती ।

जवान० कृष्णा बेटी ! फिर हमारा इतिहास भी यह लिखेगा कि कुँवर जवानसिह ने, निष्ठुर और कायर जवानसिह ने, निरपराध कृष्णा के रक्त से अपने हाथ कलकित किये । नही, कृष्णा ! यह नही होगा ।

कृष्णा पर आप चूडावत अजीतसिह के सामने इस कार्य को पूरा करने का वचन दे चुके है । राजपूत को अपने वचनो का पालन करना चाहिए ।

जवान० . मैने वचन अवश्य दिया था, पर कृष्णा ! तुझे देखकर उस वचन के प्रति मेरे मन मे अपने-आप से घृणा होती है । और जब तूने कोई विरोध नही किया, क्रोध नही किया और भोली हरिणी के समान आत्म-समर्पण कर दिया, तो मै किस शक्ति से तेरे कोमल शरीर को शिकारी की भाँति शस्त्र से बेध दूँ ? अमृत के कुण्ड मे हलाहल की वर्षा कर दूँ ? और कपूर के समान तेरे सुन्दर शरीर मे लपकती हुई ज्वाला भर दूँ ? इन हाथो को कलकित करने

कृष्णा : कुँवर चाचा, आप नारियो की करुणा लेकर मेवाड का उद्धार नही कर सकेगे । और चाचा वीरो के हाथ से कलक भी साका बन जाता है । फिर यह

तो बलिदान है। बलिदान से हाथ पवित्र होता है, कलंकित नहीं। यह बलिदान है—कुल-लक्ष्मी की पूजा है।

जवान० · कुल-लक्ष्मी की पूजा ?

कृष्णा निस्सन्देह, कुँवर चाचा ! यह कुल-लक्ष्मी की पूजा है, अर्चना है।

जवान० तो फिर, तो फिर उठाऊँ अपनी कटार ?

कृष्णा कुँवर चाचा, आप धन्य है ! मातृभूमि की रक्षा के लिए आपका उत्साह ही कसौटी पर कसा गया है। मन की निर्बलता पर आपके राजपूती हृदय ने विजय प्राप्त की।

जवान० तब यह रही कटार। इसे आज ससार के सबसे कोमल शरीर मे प्रवेश पाने का सौभाग्य मिलेगा। मेरी कटार ! तू धन्य है कि आज राजस्थान मे एक अमर बलिदान की विधातृ बन रही है। तेरी हलकी-सी गति से कठोर-से कठोर चीज कटकर टुकडे-टुकडे हो सकती है। अब तू कृष्णा के शरीर की कोमलता का स्पर्श कर। उसका शरीर ही तेरा नवीन म्यान बन जाये।

कृष्णा चाचा ! आपके हृदय की दृढता अमर हो।

जवान० . कृष्णा ! तू मेवाड की स्त्रियो मे धन्य है। इतिहास तेरे चरित्र से अनन्त काल तक प्रकाशित रहेगा। राजस्थान की नारियाँ तेरे यश के गीत गायेगी। तेरा मरण राजस्थान का त्योहार होगा, पर्व होगा।

कृष्णा . चाचा, मै मातृभूमि की वन्दना कर लूँ। मेरी मेवाड जननी ! मेरा शरीर धन्य है कि उसका रक्त तुम्हारे चरणो का प्रक्षालन करेगा। मुझे अपनी गोद ही मे जन्म देना, जिससे मै तुम्हारी रक्षा मे अपने प्राणो की बलि फिर दे सकूँ। जननी-जन्मभूमि ! तुम्हे मेरा प्रणाम है।

जवान० · कृष्णा !

कृष्णा कुँवर चाचा ! आपका हाथ क्यो काँप रहा है ?

जवान० नही, कृष्णा ! मेरा हाथ भाग्य की तरह कठिन है। झुकाओ अपना सिर !

कृष्णा मेरे सिर झुकाने से मेरे मेवाड का सिर ऊँचा हो ! [**सिर झुकाती है।**]

जवान० तो फिर यह उठी कटार ! (**अपने हाथ के कडे पर शब्द करता हुआ कटार ऊपर उठाता है**) जय एकलिंग ! (**करुण स्वर में**) ओह ! मेरा हाथ काँप रहा है। यह कटार मुझसे सँभल नही सकती। (**कटार के गिरने की आवाज**) मैं हत्या नही कर सकता। इतने कोमल शरीर पर यह क्रूरता ? नही, नही।

कृष्णा कुँवर चाचा !

जवान० . बेटी कृष्णा ! कुँवर चाचा को क्षमा करो। उससे यह काम नही होगा .. (**प्रस्थान करते हुए**) नही होगा. नही होगा नही होगा। [**प्रस्थान**]

कृष्णा चले गये ? कहते है, मुझसे यह काम नही होगा...नही होगा, तो किससे होगा ?

[**देवला का प्रवेश**]

देवला राजकुमारी ! कुँवर चाचा भागते हुए क्यो चले गये ? 'नही होगा', 'नही होगा' कहते हुए निकल गये।

कृष्णा क्या बताऊँ, क्यो निकल गये ? देवला ! मेरा दुर्भाग्य सब जगह मेरा रास्ता रोक लेता है।

देवला अब तक आपकी उदासी नही गयी, राजकुमारी ?

कृष्णा उदासी ? उदासी नही, देवला ! यह तो जीवन का महान् पर्व है।

देवला : तो राजकुमारी ! मैंने भी इस महान् पर्व पर आपकी इच्छानुसार एक बहुत सुन्दर माला गूँथी है। उससे भगवान् एकलिंग की पूजा मे शोभा आ जायगी।

कृष्णा : बहुत बडी शोभा आ जायगी ! तू बहुत अच्छी है, देवला ! तूने माला तो गूँथ ही ली, बस एक काम और कर।

देवला वह क्या, राजकुमारी ?

कृष्णा . भगवान् एकलिंग के लिए विष का एक पात्र।

देवला (चौंककर) विष का पात्र ?

कृष्णा हाँ, देवला ! भगवान् ने विश्व-कल्याण के लिए कितनी उमग से मुस्कान के साथ विष-पान किया था। इसीलिए उनका एक नाम नीलकण्ठ भी है। आज मै भगवान् को उन्ही का प्रिय नैवेद्य लगाऊँगी—हलाहल विष।

देवला राजकुमारी ! क्या हलाहल विष भी नैवेद्य की सामग्री है ?

कृष्णा नैवेद्य की सामग्री तो भक्ति-भावना पर निर्भर रहती है। आज मेरी भक्ति उस सीमा पर पहुँच गयी है, देवला, जहाँ हलाहल भी नैवेद्य की सामग्री बन जाता है।

देवला किन्तु, राजकुमारी ! विष को नैवेद्य की सामग्री बनाकर आदर न दीजिए।

कृष्णा क्यो ?

देवला इसलिए, राजकुमारी, कि नैवेद्य की सामग्री भगवान् को अर्पित करने के बाद व्यर्थ नहीं जायगी। उसे महाप्रसाद मानकर ग्रहण करने की आवश्यकता होगी।

कृष्णा तुझे इसकी चिन्ता नही करनी चाहिए।

देवला फिर उस नैवेद्य के प्रसाद को ग्रहण कौन करेगा ?

कृष्णा मैं।

देवला आप ?

कृष्णा हाँ, देवला ! महाप्रसाद को ग्रहण करने में सकोच कैसा ? मैं उस महाप्रसाद को ग्रहण कर अमर हो जाऊँगी।

देवला · किन्तु, राजकुमारी ! मेरी प्रार्थना है कि इस प्रसाद को आप ग्रहण न करें। यदि ग्रहण करने की आवश्यकता होगी, तो मैं ग्रहण कर लूँगी। देवला के रहते राजकुमारी के लिए यह अवसर न आयेगा।

कृष्णा तब तो तू स्वार्थी है, देवला ! महापुण्य की भागिनी तू ही होना चाहती है और अपनी राजकुमारी के महापुण्य को तू छीनना चाहती है। स्वार्थी ! [दबी हुई हँसी]

देवला तब, राजकुमारी, हलाहल के पात्र की आज्ञा न दीजिए।

कृष्णा मेरी भक्ति-भावना पर कोई प्रश्न-चिह्न नही लगा सकता, देवला ! तू स्वय जानती है कि राजमन्दिर के विषय मे बात पूछी नही जाती, या तो कही जाती है, या सुनी जाती है।

देवला मैं जानती हूँ, राजकुमारी ! इसीलिए प्रार्थना करना चाहती हूँ।

कृष्णा कौन-सी प्रार्थना ?

देवला : यही कि यदि हलाहल विष को आप नैवेद्य की सामग्री बनाना ही चाहती है, तो उस महाप्रसाद का अभिसिंचन उस स्थान पर कर दिया जाये, जहाँ मेवाड की नारियो ने अपनी आत्मरक्षा के लिए जौहर की ज्वाला जलायी थी। इस महाप्रसाद के पाने का अधिकार उन्ही नारियो को हो, जिन्होने मेवाड के लिए अपने जीवन का उत्सर्ग किया हो।

कृष्णा . (**दोहराते हुए**) इस महाप्रसाद के पाने का अधिकार उन्ही नारियो को हो, जिन्होने मेवाड के लिए अपने जीवन का उत्सर्ग किया हो !

देवला हाँ, राजकुमारी !

कृष्णा मैं तुझसे सहमत हूँ। तू जा, हलाहल प्रस्तुत कर।

देवला · जो राजकुमारी की इच्छा। [*प्रस्थान*]

कृष्णा : देवला ! बेचारी देवला ! महाप्रसाद के नाम से सशकित हो उठी। कही मैं पान कर लूं। किन्तु उसके कथनानुसार मै भी तो उसे पान करने की अधिकारिणी हो सकती हूँ, जब मैंने अपने मेवाड के लिए जीवन उत्सर्ग करने का निश्चय कर लिया है।

[महाराणा और महारानी का प्रवेश]

महाराणा महारानी !

महारानी महाराणा ! आपकी बातो से मुझे सन्तोष नही होता। मै यह सब अपनी आँखो से कैसे देख सकूंगी ?

महाराणा (**धीरे से**) कुँवर जवानसिंह यदि असफल न होते, तो यह बात ही नही होती।

महारानी जवानसिंह मनुष्य है। वह पशु नही हो गया है।

कृष्णा किन्तु माँ ! इतने मोह, इतनी ममता से भी कही राजपूत अपने जीवन का आदर्श पा सकता है ? कुँवर चाचा ने मुझे निराश कर दिया। उन्होंने मुझे अपने कर्तव्य के पालन मे सहायता नही दी। कही तुम भी ममता के वशीभूत हो मुझे कर्तव्य-मार्ग से विचलित न कर दो ?

महारानी कृष्णा ! क्या तूने इसीलिए जन्म लिया था कि मै अपनी आँखो के
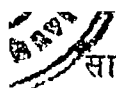
सामने यह भयानक काण्ड होते देखूँ ?

कृष्णा . माँ ! तुम वीर माता हो और मै वीर कन्या हूँ । मै भी तो अपनी मातृ-भूमि की रक्षा का अधिकार रखती हूँ । मै तुम्हारे अमृत को लज्जित नही करूँगी ।

महारानी . बेटी ! तू धन्य है । पर तेरा अपराध ही क्या है ?

कृष्णा माँ ! बलिदान अपराध पर निर्भर नही है । मेवाड की रक्षा के लिए राजस्थान की नारियो ने क्या नहीं किया, माँ ! तुम ऐसा आदर्श उपस्थित करो कि प्रत्येक माँ अपने मातृत्व मे गौरव का अनुभव करे । माँ ! तुम यह घोपणा कर दो कि माँ अपने शिशु को अमृतमय दूध पिलाकर बडा करती है केवल इसलिए कि वह अपनी मातृभूमि की रक्षा मे विप-पान कर सके । तुम मुझे एक विष का पात्र दे दो, माँ !

महारानी नही, बेटी ! यह मै कभी नही कर सकूँगी । [**सिसकती है ।**]

कृष्णा माँ ! क्या जौहर की ज्वाला मे जलने से पहले माताओ ने अपने गोद के बच्चो को चूमकर अग्नि मे होम नही दिया ? तुम भी मुझे विप का प्याला देकर इस जौहर की परम्परा पर आँच न आने दो।

महारानी बेटी, यह तू क्या कह रही है ? कहाँ मै सोच रही थी कि कुछ दिनो मे अपनी कृष्णा के विवाह का उत्सव मनाऊँगी । सारे राजस्थान की नारियो को निमन्त्रण दूँगी कि वे कृष्णा को सुहाग का आशीर्वाद दे । नगर की स्त्रियाँ धवल मगल करके झरोखो से चढ-चढ कर गाती, पट-मण्डप छाये जाते, मगलकलश बाँधे जाते, कृष्णा का रत्नो से सिंगार होता, मोतियो से माँग सँवारी जाती, मै महलो की जाली से सब उत्सव देखती । हाय, मेरी कृष्णा ! [**सिसकने लगती है ।**]

कृष्णा : (**सांत्वना के स्वर मे**) माँ ! सिसोदिया-वश मे सन्तान का मोह कलक है । यह कलक अपने ऊपर मत आने दो ।

महारानी (**करुण स्वर में**) बेटी, तुझसे मै क्या कहूँ । किन्तु क्या माँ भी अपनी बेटी को विष दे सकती है ?

कृष्णा माँ ! आज मै तुम से अन्तिम वरदान माँगती हूँ, जो एक राजपूत रमणी अपनी पुत्री को उस समय देती है, जब उसका और उसकी मातृभूमि का सम्मान सकट मे है । माँ ! मेरी याचना स्वीकार करो ।

महारानी (**सिसकते हुए**) यह मुझ से कैसे होगा, बेटी ?

कृष्णा माँ ! विष तो मै स्वय भी पी सकती हूँ, किन्तु माता के हाथ से पीने मे वह विष भी अमृत हो जायगा । (**आग्रह के स्वर मे**) माँ ! मेरी प्रार्थना मान लो । जिस शरीर की रक्षा नौ मास तक तुमने अपने उदर मे इतनी सावधानी से की, क्या उसकी सम्मान-रक्षा अब तुम नही करोगी ? तुम माँ हो, बेटी की प्रत्येक प्रकार की रक्षा तुम्हे ही करनी है ।

महारानी (**रोते हुए**) मै इसे कैसे अस्वीकार करूँ, वेटी ! मै अपनी कृष्णा को विप कैसे दे सकूँगी ? [**रोते हुए प्रस्थान**]

कृष्णा : (**महाराणा से**) पिताजी ! आप इतने उदास न हो। आपने मेवाड की रक्षा कर ली है। आपने इस समय अपने विवेक का परिचय दिया है।

महाराणा कृष्णा ! तू नही जानती कि इस समय मेरा हृदय कितना हा-हाकार कर रहा है।

कृष्णा नही, पिताजी ! राजस्थान मे कन्याएँ तो जन्म से ही मृत्यु को सौप दी जाती है। आपने मुझे इतने वर्षो का वरदान देकर मुझ पर कितना उपकार किया है ! यह आपका दिया जीवन यदि आपके चरणो मे ही समर्पित कर दूँ, तो यह मेरा कर्तव्य ही होगा।

महाराणा (**करुण स्वर मे**) कृष्णा !

कृष्णा और पिताजी ! आज तक राजस्थान मे नारियो ने न जाने कितने सम्मिलित जौहर किये है, यदि आज मै अकेली ही जौहर करूँ, तो क्या आपको सुख और सन्तोप नही होगा ? मै अपने पिता की (**महारानी एक भरा हुआ पात्र लेकर आती है**) ओह, तुम कितनी महान् हो, माँ ! यह विप का प्याला लेकर तुम आ गयी ! तुमने राजपूतो की माताओ के सामने ही नही, समस्त ससार की माताओ के सामने आत्म-सम्मान का उज्ज्वल आदर्श रखा है, माँ ! तुम धन्य हो। (**पात्र हाथ मे लेती है**) मेरा प्रणाम स्वीकार करो, पिताजी ! आपको मेरा प्रणाम है। प्राणो से अधिक प्यारी अपनी मेवाड-भूमि के प्रति और प्रत्येक राजपूत नारी के प्रति मेरी मगल-कामना स्वीकार हो ! जय एकलिंग ! [**भरा हुआ पात्र ओठो से लगाकर पी जाती है।**]

महाराणा : (**चीखकर**) कृष्णा ! मेरी बेटी कृष्णा !

कृष्णा (**एक क्षण के बाद**) माँ ! तुमने मुझे धोखा दिया है। विष के प्याले के स्थान पर तुमने कुसुम्मा का मधुर पात्र दे दिया-। हाय री माँ की ममता ! तुम्हारे इस प्रेम को मै क्या कहूँ !

महाराणा क्या यह विप का पात्र नही है ?

कृष्णा नही, पिताजी ! विष-पात्र भी हो, तो वह स्नेहमयी जननी के हाथो से अमृत-पात्र हो जायगा। अब भगवान् एकलिग को मैं जिस विप का नैवेद्य लगाऊँगी, वही महाप्रसाद मै ग्रहण करूँगी। वही मेरे भाग्य का सबसे बडा वरदान होगा। माँ ! अन्तिम विदा लेती हूँ। तुम्हे और पिताजी को प्रणाम ! जय मेवाड ! [**प्रस्थान**]

महारानी (**क्रन्दन के स्वर मे**) वेटी ! वेटी ! कृष्णा ! [**पीछे-पीछे शीघ्रता से जाती है।**]

[**नेपथ्य मे—"बेटी, बेटी, कृष्णा !"**]

महाराणा (**शिथिल स्वर मे**) मेवाड को इस सुकुमार वलि की भी आवश्यकता

श्री !...यह राजपूतो के जीवन की सबसे बडी हार है। सबसे बडा कलक है।

[नेपथ्य में बडी हलचल होती है। शक्तावत सरदार संग्रामसिंह कहते हैं—"मुझे मत रोको। मै महाराणा से मिलकर ही रहूँगा।"]

[लडखड़ाहट के साथ सग्रामसिंह प्रवेश करते हैं।]

संग्राम० : महाराणा !

महाराणा . कौन, शक्तावत सग्रामसिंह ?

सग्राम० महाराणा ! क्या यह सच है कि चूडावत अजीतसिंह के कहने से आपने जवानसिंह को कृष्णाकुमारी की हत्या के लिए नियुक्त किया और वह सफल नहीं हुआ ?

महाराणा मैं इसका उत्तर नही दे सकूंगा।

संग्राम० क्योकि यह सच है। और क्या यह भी सच नही है कि कृष्णाकुमारी ने राजपूतो को वीरता पर कलक लगाने वाले कायरो और नपुसको की तरह समझा है और स्वय विष-पान करने का जौहर अपने ऊपर लिया है ? क्या देवला का यह कथन सत्य नही है कि राजकुमारी ने आपकी चिन्ता दूर करने के लिए एकलिंग को हलाहल का नैवेद्य चढाकर स्वय उसे पीने का प्रण किया है ?

महाराणा · (शिथिल स्वर में) सत्य है, सग्रामसिंह ! अमीरखाँ से रक्षा पाने का और कोई उपाय जो नही था।

संग्राम० . (आवेश से) तो यह कहिए कि राजपूत की तलवार का पानी उतर चुका। मेवाड की राजकुमारी अपने आत्म-सम्मान के लिए मृत्यु से सहायता माँगे और जोक की तरह जीवन से चिपटे हुए राजपूत मातृभूमि का रक्त चूसते रहे ? और जब कृष्णा को मृत्यु-दण्ड दिया गया, तो आपने मेवाड के सैनिको को आत्म-हत्या की आज्ञा नही दी ? आपकी कमर से यह तलवार लटकती रही और आपने इसके टुकडे-टुकडे नही किये ? असमर्थता का राग अलापने वाला पिता क्या कन्या से पहले विष-पान नही कर सकता था ?

महाराणा (चौंककर) सग्रामसिंह !

सग्राम० . मुझे किसी बात का भय नही है। मैंने महाराज शक्तसिंह के वश मे जन्म लिया है, जिन्होने विपत्ति मे महाराणा प्रताप की रक्षा की। मुझे विलम्ब से सूचना मिली, नही तो कृष्णा का जीवन घरौंदे की तरह नष्ट न किया जा सकता। और उस कायर-कलकी अजीतसिंह का प्रस्ताव आपने माना ही क्यो ? क्या इससे सारी राजपूत-जाति हमेशा के लिए लाछित नही हुई ? क्या अमीरखाँ पठान ने मेवाड को नष्ट कर दिया ? और क्या बेचारी कृष्णा के मरने से उदयपुर हमेशा के लिए सुरक्षित हो गया ? अमीरखाँ अगर सामने था, तो क्या अजीतसिंह अपने पूर्वजो की तरह मर नही सकता था ? मरने की चुनौती पर मैं सग्रामसिंह सबसे पहले पूर्वजो का ऋण चुकाता। लेकिन यह बात मुझ से छिपा कर रखी गयी। अजीतसिंह ही आपका सर्वस्व था, जो तलवार लेकर शत्रुओ पर कूदना नही

जानता, जानता है एक अबोध कन्या की हत्या से शत्रु के अट्टहास मे अपनी निर्लज्ज हँसी मिलाना।

महाराणा सग्रामसिंह, तुम सुनो !

संग्राम० नही सुनूँगा, महाराणा ! राजनीति की बातें सुनने का अवकाश नही है। जो राज्य अपनी राजपुत्री की रक्षा नही कर सका, उसे नष्ट हो जाना चाहिए। जो पिता अपनी पुत्री की हत्या के षड्यन्त्र मे शामिल हो, वह पिता.

महाराणा · खामोश, सग्रामसिंह !

संग्राम० : यह लीजिए तलवार ! इसे वापस लौटाता हूँ। (**तलवार फेंकता है**) युगो से यह तलवार हमारे वश मे रही है। इसने उदयपुर की सेवा मे सहस्रो मस्तको को काटा है। हमारे पूर्वजो ने इसी से इस राजवश की सेवा की है। कृष्णा की इस लज्जाजनक मृत्यु के बाद यह तलवार हमारे वश मे नही रहेगी। आज से हमारी तलवार इस राज्य से बिदा हुई। इस गिरी हुई तलवार को तोड डालिए या अपनी कन्या के मृत शरीर पर इस तलवार से फिर प्रहार कीजिए। जय एकलिंग !

महाराणा सग्रामसिंह, सग्रामसिंह

[**महारानी का देवला के साथ सिसकते हुए प्रवेश**]

महारानी . (**करुण कण्ठ से सिसकियाँ लेती हुई**) मेरी कृष्णा, मेरी कृष्णा...अब इस ससार मे. नही रही. !

महाराणा (**विह्वल स्वर से**) कृष्णा !

देवला · (**सिसकते हुए**) महारानी मूर्च्छित हो गयी थी। मेरे रोकने पर भी राजकुमारी ने तीन बार विष-पान किया। तीनो बार वमन के द्वारा वह निकल गया। अन्त मे उन्होने गहरी अफीम के कुसुम्मा को हँसते हुए पान किया। महाराज एकलिंग को प्रणाम कर वे सदा के लिए गहरी नीद मे सो गयी।

महारानी (**चीखकर**) मेरी कृष्णा !

महाराणा . (**कातर होकर**) मुझे धिक्कार है।

महारानी काला जहर उसके सारे शरीर मे फैल गया। क्या कोई उस जहर को नही उतार सकता ?

[**दूर पर सँपेरे की बीन सुनायी पडती है।**]

देवला : साँप के ज़हर की तरह इसका ज़हर भी नही उतरेगा।

महाराणा : वह ज़हर अब नही उतर सकेगा, महारानी ! उसका ज़हर और मेरी कलक-रेखा सदा के लिए अमर हो गयी।

[**रानी की एक गहरी सिसकी। दूर से आती हुई सँपेरे की बीन सुनायी पड रही है।**]

[**यवनिका**]

25

❖ बापू ❖

●

पात्र-परिचय

निर्देशक	संकटाप्रसाद
उमेश	शान्ता
संतोष	नरेश
इन्सपैक्टर	हिन्दू
शकूर	मुसलमान
दयाराम	सिख

●

बापू

निर्देशक . बापू ! तुम युग-पुरुष हो। इस युग का इतिहास तुम्हारे पद-चिह्नो की रेखाओ से लिखा जायगा। भय और कष्टो को कुचलते हुए जब तुम्हारे चरण बढे तो कोई शक्ति उनकी गति नही रोक सकी और वे चरण वहाँ जाकर रुके जहाँ स्वाधीनता का सिंहद्वार था।

बापू ! तुमने हमे स्वाधीनता दी। दासता की कालिमा मे हमारा जीवन धुँधला हो गया था—तुम सत्य के ऐसे सूर्य थे जिसके उदय से हमारे जीवन मे प्रकाश छा गया।

तुमने जीवन मे क्रान्ति उपस्थित कर दी—पश्चिमी सभ्यता ने वस्तुवाद के प्रभाव स्वार्थो का जो सघर्ष हमारे मन मे उत्पन्न किया था वह तुमने वस्तुओ के यथार्थ मूल्याकन मे सहज ही दूर कर दिया—इस यत्र-युग मे तुमने चरखे का महत्त्व समझाया। चरखे के पीछे स्वावलबन और श्रम के रहस्य मे तुमने ससार के अर्थशास्त्र को लज्जित कर दिया। भौतिकवाद के कठोर सघर्ष मे तुमने अध्यात्मवाद से प्रेरित आत्म-परिष्कार और हृदय-परिवर्तन के सत्य को स्पष्ट कर दिया। पशु-बल के सामने तुमने सत्याग्रह की विजय दिखलाकर ससार को चकित कर दिया और शताब्दियो से पराधीन देश को स्वतत्रता का प्रकाश दिखाया। विज्ञान के समक्ष तुमने विश्वास को अधिक शक्तिशाली प्रमाणित किया। जीवन की परिस्थितियो को सुलझाने के लिए बहस हो रही थी।

[**उमेश और सतोष मे बातें हो रही हैं।**]

उमेश . भाई सतोष ! आज बात क्या है ? बिस्तर पर लेटे हुए हो।

संतोष : (**गिरे स्वर में**) आओ, उमेश ! बैठो।

उमेश : बैठ तो जाऊँगा ही, लेकिन और दिनो तो तुम सेमसन की तरह उमग और उत्साह से भरे नजर आते थे, लेकिन आज

सतोष : क्या पिक्चर देखकर लौट रहे हो ?

उमेश : पिक्चर तो रोज ही देखता हूँ। तुम्हारी सूरत की ही एक पिक्चर देख रहा हूँ—लेकिन—ये सिर पर बाल बिखरे है और सूरत ये बनी गम की।

संतोष : तुम तो अपनी जबान ही मुझ पर माँजने लगे—जरा बीमार क्या पड गया।

उमेश : बीमार ? अच्छा ! बीमार पड गये ? कैसे ?

संतोष : यो ही जरा सर्दी लग गई—हलका बुखार हो आया और कुछ खाँसी उठ

खडी हुई ।

उमेश : वह बैठ नही सकती ।

सतोष : इसीलिए तो लेट गया हूँ कि खाँसी बैठ जाय ।

उमेश : देखो, यह उठना-बैठना ठीक नही—यह इन्फ्लूएजा है—बिगड जाय तो महीनो तुम्हे बिस्तर पर रखे। इसकी अभी से फिक्र रखनी चाहिये—पेन्सिलिन का इजैक्शन लेना चाहिये ।

सतोष : पेन्सिलिन का इजैक्शन ?

उमेश : हाँ, किसी डाक्टर को दिखाओ, उससे इजैक्शन लो ।

संतोष : मैं डाक्टरो के चगुल मे नही फँसता । एक बार उनके चगुल मे फँसा कि बीमारी न रहने पर भी महीनो बिस्तर पर रहना पडेगा ।

उमेश : ऐसी बात नही—अच्छे डाक्टर का इलाज थोडी ही देर मे बीमारी को ऐसा गायब कर देता है जैसे कभी-कभी तुम्हारे दिमाग से अक्ल गायब हो जाती है। [हँसी]

सतोष अच्छा, तुम तो डाक्टरो के एजेण्ट मालूम होते हो । मैं तो समझता हूँ कि बीमारी मे आराम करना बहुत जरूरी है ..और...एक बात और...

उमेश वह क्या ?

संतोष वह यह कि मन की शक्ति से बीमारी को दूर किया जाय ।

उमेश (हँसकर) ओफ-हो ! मन की शक्ति से ? ऐसी मन की शक्ति होती तो आज दुनिया के बादशाह होते ।

सतोष हो सकते हो । राम बादशाह ही तो थे स्वामी रामतीर्थ ।

उमेश अच्छा, तो रामतीर्थ ही राम बादशाह बने ? यह किसकी शक्ति थी ?

संतोष राम की ।

उमेश राम की शक्ति से बीमारी भी दूर हो सकती है ?

संतोष अवश्य ! अगर राम की शक्ति मे विश्वास हो, तो ।

[दूर से शोर होता है, ये वाक्य सुन पड़ते हैं 'कम्बख्त आंखो मे धूल झोककर भागना चाहता था', 'खूनी तो नहीं है ? हां, हां इसी ने खून किया है' 'इसके कपडो मे खून के छींटे देख लीजिये ।']

इन्सपैक्टर हाँ, तो यही है वह बदमाश ! क्यो जी, समझता हूँ कानून तो तुम्हारे बाप की मिलकियत है चाहा और खून कर दिया । (**शकूर से**) क्यो शकूर ! इसे कहाँ पाया ?

शकूर गली से हटकर वहाँ झाडी मे छुपा हुआ था ।

इन्सपैक्टर : जहन्नुम मे भी छिपना चाहे तो वहाँ पकड लिया जायगा—कानून की आँखो मे धूल नही झोक सकता । क्यो जी, खून करना आसान समझ लिया ? खून न हुआ लाल पानी हुआ, जब चाहा बहा दिया ।

कैदी हुजूर ! हमने लाल पानी समझा तभी तो हमे काला पानी मिलेगा ।

इन्सपैक्टर . काला पानी नही, इसे फाँसी पर चढाऊँगा, फाँसी पर ! क्या नाम है तुम्हारा ?

क़ैदी दयाराम, सरकार ।

इन्सपैक्टर : (**हँसकर**) दयाराम ! नाम तो दयाराम और काम खून करना, क्या कहना है ! नाम के ही लायक तुम्हारा काम है ! क्यो जी, उस बूढे चाचा पर दया नही आई ?

दयाराम सरकार ! पहले तो मैने उसे बहुत समझाया, पर वह गाली पर गाली बकता गया । सरकार ! मै कहाँ तक गम खाता । मुझे भी गुस्सा आ गया—मै अन्धा हो गया । मै नही जानता, सरकार ! कब मेरे हाथो मे लाठी आ गई ।

इन्सपैक्टर और तुम्हे यह मालूम हुआ कि नही कि लाठी के साथ तुम्हारे हाथो मे हथकडी आ गई ? (**शकूर से**) शकूर, ले चलो इसे थाने मे ।

शकूर : हुजूर ! इसके गाँव के एक साहब कौसिल के मेम्बर भी है । देखिये, साहब आ गये ।

[**कौंसिल के मेम्बर का प्रवेश**]

कौं० मे० आखआह ! इन्सपैक्टर साहब ! जैरामजी की ! आखिर यह कौनसी बात है कि आप इस गाँव मे तशरीफ लावे और खबर तक न दे । कुछ चाय और नाश्ता तो करते ? आखिर मै जो इस गाँव मे पडा हुआ हूँ वह केवल आप लोगो की खातिर तो पडा हुआ हूँ । आप आये तो ढग से कुछ खाना-पीना हो । नही तो इस गाँव मे तो आप लोगो के लायक कुछ दूध-पानी भी मिलना मुश्किल है । (**पुकार कर**) अरे रामहरख ! दौडकर एक कुरसी तो ले आ । इन्सपैक्टर साहब इतनी देर से खडे है, कम्बख़्त कहाँ मर गया ?

इन्सपैक्टर . कोई बात नही, ड्यूटी पर सब कुछ करना पडता है, यह तो एक मामूली बात है । लेकिन माफ कीजिये, मै आपको पहचान नही सका ।

कौं० मे० . (**हँसते हुए**) ह्-ह्-ह्-ह्...कोई बात नही । आप मुझे नही पहचानते, कोई मुजायका नही ! मै तो आपको पहचानता हूँ तेजबहादुर साहब ! वाह नाम के लायक ही आपकी शान है । तेज भी और बहादुर भी । ऐसा नाम और ऐसा ज्ञान सब लोगो को नही मिलता, क्या कहना है ! और इन्सपैक्टर साहब, मैं डिप्टी साहब को भी जानता हूँ और कोतवाल साहब की तो मुझ पर खास मेहर-बानी है । जब कभी इस गाँव मे तशरीफ लाते है तो सबसे पहले मेरे ही गरीब-खाने पर तशरीफ फरमाते है ।

इन्सपैक्टर : अच्छा !

कौं० मे० : जी हाँ, आप बडे आदमी है । आप लोग इतना काम करते है तो आराम भी लाजमी है । क्यो शकूर मियाँ ?

शकूर : हुजूर सही फरमाते है ।

कौं० मे० . देखिये साहब, मियाँ शकूर भी यही कहते है । मैं तो आप लोगो से बरसो

से मिलता आ रहा हूँ। आप मेरा नाम भी जानते होगे, सकटाप्रसाद एम० एल० सी०। मै कौंसिल का मेम्बर हूँ।

इन्सपैक्टर · अच्छा, आप ही मिस्टर सकटाप्रसाद है।

संकटा० जी, जी, मुझे ही लोग सकटाप्रसाद कहते है। कई बार शहर आया-गया हूँ, मैंने आपको वहाँ भी देखा है और आपके बारे मे कोतवाल साहब से भी बाते हुई है। वाह ! क्या कहना है, आपकी मुस्तैदी और होशियारी से तो हमारे शहर की रौनक है। आप जैसा अफसर आना तो हमारे शहर की खुश-किस्मती है। अच्छा, तो चलिये, कुछ नाश्ता-पानी कर लीजिये।

इन्सपैक्टर जी नही। मैं नाश्ता तो कर चुका हूँ, मुझे शहर भी जल्दी लौट जाना है।

सकटा० तो आपका काम तो पूरा हो ही चुका है, साहब ! आप चाहे तो दो रोज ठहर कर शहर जा सकते है—आप थक भी गये होगे—कुछ देर आराम कर लीजिये।

इन्सपैक्टर बहुत-बहुत धन्यवाद ! मुझे जाने ही दीजिये।

संकटा० मुझे एक चिट्ठी कोतवाल साहब के पास पहुँचानी है, कुछ देर तो रुक जाइये।

इन्सपैक्टर (शकूर से) अच्छा शकूर, तुम मुलजिम को लेकर थाने चलो, मै अभी आता हूँ।

शकूर जो हुकुम ! चलो जी, दयाराम !

[दयाराम के साथ बाहर जाता है।]

संकटा० आप बहुत मेहरबान है, इन्सपैक्टर साहब ! हाँ, तो बात सिर्फ यही है कि जो यह खून का मामला है न, यह बहुत बढा-चढा कर बताया गया है। दयाराम के चाचा कमजोर तो थे ही, उन्हे गुस्सा आया और वे दयाराम को मारने के लिए उठे तो लडखडा कर गिर गये, उनका सिर फूट गया। दुश्मनो ने कह दिया कि दयाराम ने खून किया है।

इन्सपैक्टर : जो भी हो, अब तो यह तहकीकात से मालूम हो जायगा।

सकटा० हाँ, वह तो मालूम ही हो जायगा, लेकिन आजकल दोस्तो से ज्यादा दुश्मनो की तादाद है। वे उल्टी-सीधी बाते ही कहेगे।

इन्सपैक्टर मेरे चलाये हुए केस मे उल्टी-सीधी बाते नही चलतीं।

संकटा० वह तो मैं जानता हूँ इन्सपैक्टर साहब, लेकिन मै चाहता था कि यह मामला ऐसा है जिसमे आपको ज्यादा तकलीफ उठाने की ज़रूरत नही है। जब खून ही नही हुआ तो खूनी कैसा ?

इन्सपैक्टर जी !

सकटा० : जी हाँ, मै कोतवाल साहब के पास जा रहा हूँ, उनके सामने आपकी तारीफ और सिफारिश भी तो करनी है।

इन्सपैक्टर आप यह तकलीफ न उठाये, मैं यह केस छोडूंगा नही।

संकटा० . छोडने मे तो कोई हर्ज नही है, आगे आपकी मर्जी ! अब आप इतनी तकलीफ उठा कर आये है तो भेट दिये बिना मै आपको अपने गाँव से कैसे जाने दे सकता

हूँ, यह रही आपकी भेट—यह रही !

इन्सपैक्टर : (चौककर) यह क्या ? मै ऐसा आदमी नही हूँ, मिस्टर सकटाप्रसाद ! आप इन बातो से मुझे मोल नही ले सकते । मै अब यहाँ एक मिनट नही ठहर सकता ।

संकटा० : अरे, क्या नाराज हो गये ? यह तो हमारे गाँव का दस्तूर है, साहब ! खैर, कोई बात नही—कोतवाल साहब को चिट्ठी लिख देता हूँ ।

इन्सपैक्टर : जी नही, या तो आप अपनी चिट्ठी डाक से भेजे या उनसे खुद मिले। मैं पोस्टमैन नही हूँ । दयाराम ने खून किया है उसकी सजा उसे मिलनी चाहिये ।

संकटा० : अब मैं आपको कैसे समझाऊँ, इन्सपैक्टर साहब !

इन्सपैक्टर : समझाने की जरूरत नही है । आप काउसिल के मेम्बर है तो मेम्बर की शान के मुताबिक काम कीजिये—महात्मा गान्धी जी के देश मे रह कर अब ये बाते नही हो सकती ।

निर्देशक : बापू ने इस यत्र-युग मे चरखे का सगीत अपनाया । करोडो हाथो से उत्पन्न होकर चरखे की सगीत-लहरी मिलो के शोर के ऊपर छा गई—और उससे स्वा-वलबन और सतोष की भावना जाग उठी । चरखा ही हमारी स्वतत्रता का प्रतीक बना, उससे हमने स्वतत्रता ही नही प्राप्त की, वरन् अहिंसा की भावना रखकर हमने जितना अधिक धन विदेशो मे जाने से बचाया, उतना ही आत्मनिर्भरता के कोष मे वृद्धि की।

[चरखा चलने की ध्वनि]

[नरेश और शान्ता मे बातें हो रही हैं ।]

नरेश यह क्या, फिर वही चरखा ? शान्ता ! तुम तो चलते-फिरते भी चरखे को हाथ पर सुदर्शन-चक्र की भाँति घुमाया करो । चरखा न हुआ, तुम्हारा पति हुआ जो उँगली के इशारे पर नाचता फिरे ।

शान्ता तो चरखे से तुम्हे इतनी चिढ क्यो है ?

नरेश चिढ क्यो ? इस बीसवी सदी मे चरखा ? मिलो के युग मे चरखा ? एरोप्लेन होते हुए बैलगाडी मे चढने का शौक ? अरे, जहाँ मिलो से हजारो गज सूत पलक मारते निकल आता है वहाँ धी रे धी. रे...टूटे हुए सूत को जोडते हुए चरखे को माला की तरह फेरना—यह तो लँगडाते हुए सैकडो मील का सफर करने जैसा है ।

शान्ता : तुम भी खूब सुनी-सुनाई बाते कहते हो । जरा देश को देखो, देश की उस सख्या को देखो, बेकारी को देखो, फिजूल समय खो देने को देखो ! अगर बेकार आदमी, वक्त बरबाद करने वाला आदमी चरखा चला ले तो उसमे उसकी कौन-सी हानि है ? वह सिगरेट के धुएँ की तरह अपना कीमती समय भी हवा मे उडा देता है ।

नरेश : अच्छा, तो यह बात है—यह बेकारी का नुस्खा है, लेकिन तुम तो बेकार नही

हो—घर मे हजारो काम है, लेकिन आप है कि चरखा

शान्ता तो तुम्हे चरखे से इतनी चिढ क्यो है ? मै चरखा चलाती हूँ तो अपने हाथो से ही तो चलाती हूँ, तुम्हारे हाथो को तो तकलीफ नही पहुँचाती !

नरेश मेरे हाथो को नही, मेरे दिमाग को तकलीफ होती है। अब तुम्हे दुनिया मे कोई काम ही नही रह गया सिवाय चरखे के ?

शान्ता काम तो सबसे बडा यही है अगर पूछा जाय। तुम यही सोचो कि अगर हमारे देश की सोलह करोड स्त्रियाँ एक दिन मे पचास गज सूत ही काते तो प्रति दिन ८ अरब गज सूत निकल सकता है, मरदो की बात जाने दो।

नरेश ओ हो ! तुम तो हिसाब मे भी जोरदार हो। ठीक है, ठीक है, लेकिन सब स्त्रियो को तो तुम्हारे जैसा शौक नही है।

शान्ता यह शौक की बात नही है—यह उस लगाव और तपस्या की बात है जिससे हमारी जनता की तकलीफ कम हो। आज उसके पास तन ढकने के लिए कपडा तक नही है, चरखा चलाये तो जनता अच्छी तरह कपडा पहन सकती है।

नरेश तो आपने सारे देश को कपडा पहनाने की शपथ ली है ?

शान्ता आपको भी लेनी चाहिये। आप तो तरह-तरह के कपडे पहने और देश की आधी से ज्यादा जनता एक गज कपडे के लिए तरस जाय—यह कौन-सी बात है ?

नरेश मेरे पास पैसे है तो कपडा खरीदता हूँ, और लोग भी तो कपडा खरीद सकते है।

शान्ता लेकिन और लोगो के पास कपडा खरीदने के लिए पैसे नही है। उनके पास समय है, वे उस समय चरखा चलाकर सूत तैयार कर सकते है और उसके बदले कपडे ले सकते है।

नरेश आज तो बडे ज्ञान की बाते कर रही हो। अच्छी बात है, आज से नौकरी छोड-कर चरखा कातूँगा।

शान्ता नौकरी क्यो छोडियेगा, नौकरी कीजिए और उसके बाद जितना समय आप इधर-उधर की बातो मे बिता देते हैं, उस समय मे चरखा कातिए।

नरेश . इससे क्या होगा ?

शान्ता . इससे यह होगा कि हमारे देश को बाहर से कपडा मँगवाने की जरूरत ही नही पडेगी। अभी तो जो थोडा-बहुत कपडा हमारे देश मे होता है वह सब देश के लिए पूरा ही नही होता।

नरेश अब तुम चरखा चलाने लगी हो तो पूरा हो जायगा ?

शान्ता नही, पूरा तो तब होगा जब तुम भी चलाने लगो। पूरा न होने की बात पर एक घटना याद हो आई।

नरेश · अच्छा, कौन-सी ?

शान्ता : एक बार एक पगडीधारी सेठजी बापू से मिलने आये। बातचीत के सिलसिले मे सेठजी ने बापू से प्रश्न किया—बापू ! आपके नाम की टोपी देश-भर मे चल

निकली है । तमाम लोग गाधी-टोपी पहनते हैं, पर आप न जाने क्यो टोपी नही पहनते ?

नरेश : बात तो उसने ठीक पूछी । फिर ?

शान्ता : बापू हँसे और बोले कि बीस टोपियो के बराबर का कपडा तो आप अपनी पगडी मे पहने हुए हैं, बाकी १६ व्यक्तियो को नगे सिर रहना पडेगा—शायद मैं उन्ही मे से एक हूँ। [हँसी]

नरेश : बापू ने बडा सुन्दर उत्तर दिया ।

शान्ता : हाँ, बापू हँसना और हँसाना दोनो ही जानते थे । उनका हृदय पवित्र था, इसलिए उनके मन मे हिंसा नही थी । इसी चरखे को वे अहिंसा का मूल-मत्र मानते थे । बिना बाहरी देशो पर आक्रमण किये, चरखे के द्वारा अपने ही देश मे वस्त्र तैयार कर वे अन्य देशो से वस्त्र-आयात खत्म कर देना चाहते थे ।

नरेश : यह बात तो सच है—मैंने कभी इतना सोचा ही नही—नौकरी करने से फुरसत नही मिली—रात-दिन एक ही चक्की मे पिसता हूँ । ये बाते मुझे कहाँ सूझे ! लेकिन तुम बडे पते की बातें करती हो । मालूम होता है आजकल तुम प्रार्थना-सभा मे रोज जाती हो । बडे ढग की बाते करने लगी हो ।

शान्ता हाँ, प्रार्थना-सभा मे तो रोज जाती हूँ ।

निर्देशक : और बापू ने जातीय एकता का शखनाद किया । उसी का यह फल है कि इतने बडे देश का सगठन हो सका और इस देश मे हिन्दू, मुसलमान, ईसाई और सिख भाई-भाई बनकर रह सके । हमारे देश मे सब धर्मो के मानने वाले पूर्ण अधिकार और स्वतत्रता से एक साथ रहकर देश की उन्नति मे समान रूप से भाग ले सके । विदेशियो के शासन ने हम मे भेदभाव के बीज बो दिये ।

[**अनेक स्थानो पर सभाएँ हो रही है । एक वक्ता सभा में बोल रहे है ।**]

हिन्दू भाइयो और बहिनो ! इस देश मे हमारी सख्या सबसे अधिक है, इसलिए राज्य का अधिकार हम लोगो को ही मिलना चाहिए । हिन्दू और मुस्लिम दगो मे मुसलमानो का ही पक्ष लिया जाता है, बेचारे हिन्दू व्यर्थ मे ही मारे जाते है । हिन्दू धर्म सबसे पुराना धर्म है, सबसे बडा धर्म है । इसमे वर्णाश्रम धर्म है, यह आर्यावर्त्त हमारा है, इसे कोई हमसे छीन नही सकता । हमारा अखड हिन्दुस्तान है, हमारा सनातन धर्म है, राष्ट्रीय स्वय-सेवक सघ हमारा है, हिन्दू महासभा हमारी है, हम मुसलमानो को यहाँ नही रहने देगे । बोलो, हिन्दू महासभा की जय !

निर्देशक : और दूसरी ओर—

मुसलमान . मेरे प्यारे दोस्तो ! कदीम जमाने से हमारी सल्तनत इस मुल्क मे रही है । यह लाल किला, यह ताजमहल, यह फतेहपुर सीकरी, यह कुतुब मीनार हमारी इमारतें हैं । आज इस्लाम खतरे मे है । हम अपनी सारी कुव्वत लगा देगे लेकिन अपनी हुकूमत अपने हाथो से न जाने देगे । अगर हमारे इस्लाम पर कोई

हमला होगा तो खून का दरिया वहा देगे, काफिरो को जहन्नुम-रसीद करेगे और देखेगे कि इस मुल्क पर हमारी ही हुकूमत रहती है। कायदे-आजम जिन्ना—जिन्दावाद !

निर्देशक : और तीसरी ओर—

सिख सत सिरी अकाल ! भाइयो दे विच एलान करदा हूँ कै जै हिन्दुस्तान को जीतने मे अगर कोई फौज लड्डी ए तो वो सिक्खो दी फौज ए। दिल्ली शैर ते पिशौर नूं हमारी फौज ने दुश्मनो दे छक्के छुडाये, अग्र मुसलमान लोग पाकिस्तान दे नारे वुलन्द करते है तो हमारा सिक्खिस्तान वनेगा।

निर्देशक और इस तरह देश मे भेद के जो बीज वो दिये गये थे उनका विष-वृक्ष शीघ्र ही फलता, लेकिन बापू ने जातीय एकता की भावना पर विशेष वल दिया। बापू ! तुमने हमारे देश की सभी विपत्तियाँ दूर कर दी और उसे स्वतत्रता प्रदान की। तुम आज हमारे बीच मे नही हो, पर शरीर से मुक्त होकर साहस और तेज के रूप मे तुम प्रत्येक देशवासी के मन मे समाये हुए हो। कौन कहता है कि तुम ससार मे नही रहे, तुम जन-मन मे मुखरित होकर अजर हो, अमर हो। बापू ! देश का प्रत्येक जन तुम्हे 'बापू' नाम से पुकारता है, इस तरह तुम सच्चे अर्थ मे राष्ट्रपिता हो।

राष्ट्रपिता ! आज तुम हमारा और मारे देश का प्रणाम स्वीकार करो !

[यवनिका]

●